ओ३म्

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में भी श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० म० १० सू० १५१, मं० ५)
सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! यहां (इस संसार में) हमको श्रद्धायुक्त करो।

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | १२ वैशाख सं० १९७७ वि० ; दयानन्दाब्द ३७ ; ता० २३ अप्रैल सन् १९२० ई० | संख्या १ भाग १

ओ३म्

श्रद्धाञ्जलिः

व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणया श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ॥ यजु० १९। ३० ॥
श्रद्धयाग्निः समिध्यते श्रद्धया हूयते हविः।
श्रद्धां भगस्य मूर्धनि, वचसा वेदयामसि ॥ ऋग्वेद। मं० १०। सूक्त १५१ ॥

व्रत को धारण कर होते हैं नर दीक्षा के अधिकारी।
दीक्षित होने से मिलती है पुण्य दक्षिणा सुखकारी।
वही दक्षिणा मन में श्रद्धा का अंकुर उपजाती है।
जो असत्य को दूर हटा कर सत्य प्राप्त करवाती है ॥ १ ॥
यज्ञ कुण्ड में श्रद्धा से ही अग्नि दीप्त की जाती है।
श्रद्धा ही उस दीप्त अग्नि में आहुति भी दिलवाती है।
श्रद्धा ही बन मुकुट धर्म के सिर पर शोभा पाती है।
श्रद्धा की यह अद्भुत महिमा श्रुति स्वयं बतलाती है ॥ २ ॥
उड़ते २ जहां तर्क के पंख मंद होजाते हैं।
जहां विकल हो प्रतिभा के भी नेत्र बंद होजाते हैं।
दिव्य भाव से जहां कि तारे झिलमिल २ करते हैं।
श्रद्धारूढ़ हृदय अति उन्नत, वहां स्वतन्त्र विचरते हैं ॥ ३ ॥
जहां प्रेम की विमल कला से हृदय कुमुद खिलजाता है।
और शान्ति कंरम्य राग में सुख अनुपम मिलजाता है।
सांसारिक विक्षोभ जहां से नीचे ही रह जाते हैं।
श्रद्धा के शुभ हाथ वहां पर अपनी कला दिखाते हैं ॥ ४ ॥
हटा तिमिर, आलोकमयी शुभ उषा मनोहर आती है।
खिली लतायें झूम रही हैं कोकिल कूक सुनाती हैं।
श्रद्धा की यह कुसुमाञ्जलि है वसन्त का नव उपहार।
प्रिय पाठक! स्वीकार कीजिये गुण गुम्फित निज सुरभित हार ॥ ५ ॥

"यात्री"

श्रद्धा

हे! भीम झञ्झावात! बस तेरी कुटिल चालें रहें,
उन कंटीली झाड़ियों में वेग से जा कर बहें।
देख, श्रद्धा-कुसुम का होता यहां उल्लास है,
स्वर्गीय—पावन-रम्य ओह! कैसा मधुरतम हास है ॥ १ ॥
इस की मनोहर क्यारि में कैसी अनूठी गन्ध है,
सारा महकता बाग है रुकतीं सभी दुर्गन्ध हैं।
प्रेममय-अमृत-जलों से एक इस को सींचते,
स्वच्छन्द हो, निर्भीक हो, भौंरे यहां हैं गूंजते ॥ २ ॥
विषमय पवन इसके मृदुलतम देह का बस स्पर्श कर,
होता सुरभिमय छोड़ देता एकदम अपनी जहर।
संसार के सब रूप हैं इसकी मनोहर कान्ति में,
रहता सदा इस से ही यह सारा जगत् सुख शान्ति में ॥ ३ ॥
सच्चे हृदय का एक ये ही शुद्ध तम आगार है,
जुड़ता यहीं—पर बस निराला एकता का [illegible] है।
क्या रङ्क क्या राजा सभी हैं एक सम सु[illegible] में,
डर नहीं, ईर्षा नहीं आकर यहां उस [illegible] में ॥ ४ ॥

"आनन्द"

साप्ताहिक पत्र के नियम

निश्चय यह किया गया है कि प्रथम ८ पृष्ठ का समाचार पत्र प्रत्येक शुक्रवार को छप कर गुरुकुल भूमि से चल दिया करे। इस में यह लाभ रहेगा कि अंग्रेज़ी राज में जहां आदित्यवार को साप्ताहिक छुट्टी होती है उन में से बहुत से नगरों तथा उपनगरों में आदित्यवार को ही जिज्ञासु श्रद्धा का सन्देश सुन लिया करेंगे। भारत वर्ष में पत्र का मूल्य ३॥) वार्षिक रक्खा गया है, परन्तु भारत भिन्न देशों के लिए इस का मूल्य ५) वार्षिक होगा। कारण यह कि उन देशों में भेजने के लिए डाक व्यय तिगुना लगता है। जिस क्रम से लेख होंगे उन का क्रियात्मक उपयोग प्रथम अंक में नहीं हो सका। दूसरे अंक से सब पृष्ठ विशेष विषयों के लिए बांट दिए जायंगे और उसी के अनुसार यथाशक्ति, कार्य हुआ करेगा।

एक विशेषता इस पत्र में होगी जिस को सुनकर आश्चर्य नहीं होना चाहिए। गृहस्थ होते हुए जब मैं सद्धर्म प्रचारक का स्वयं सम्पादन करता था तब भी मैंने विज्ञापनों की छपाई बन्द करदी थी, अब भी विज्ञापनों को स्थान न दिया जायगा। कहा जा सकता है कि अश्लील वा अनुचित विज्ञापन न दिए जायं, परन्तु अच्छे विज्ञापन तो दिए ही जाने चाहिए। परन्तु विज्ञापन देने वालों की बुद्धि ऐसी तीव्र है कि लोहे के नियम रूपी बन्धनों में भी घुस कर पार हो जाती है। विज्ञापन देने वालों की चालबाज़ियों की जांच के लिए योग्यता सम्पादन करने में जो समय नष्ट होगा उसे अपने उद्देश्य की पूर्त्ति में ही व्यय करना उत्तम है।

अन्तिम एक नियम समझना चाहिए कि जो लेख मेरी लेखनी से निकलेगा उस के नीचे मेरे हस्ताक्षर रहेंगे। शेष लेख उपसम्पादक तथा अन्य लेखकों के होंगे जिन की [illegible] उत्तरदायिता मैं ही स्वीकार करता हूं। [illegible] यह आगामी अंक से श्रद्धा लेख शुरू होंगे।

श्रद्धानन्द सन्यासी

श्रद्धा के देर से क्यों दर्शन हुए?

विज्ञापनों तथा समाचार पत्रों द्वारा हमने यह उद्घोषित कर दिया था कि प्रथम वैशाख को श्रद्धा का प्रथम अंक निकल आवेगा। उस दिन तक हमने सब सामग्री तैयार कर ली थी पर उसे प्रकाशित करने में एक ही अड़चन थी और वही सब से बड़ी अड़चन थी। वह क्या थी—यह आप को नीचे की सच्ची कहानी से विदित हो जावेगा।

आज से लगभग दो मास पूर्व अर्थात् २५ फ़रवरी १९२० के दिन सम्पादक जी ने डिक्लेरेशन लेने के लिये एक पत्र मेजिस्ट्रेट ज़िला बिजनौर के पास भेजा था। पत्र का हिन्दी अनुवाद यह है—

महाशय!

कांगड़ी के गुरुकुल-प्रेस से हिन्दी का एक साप्ताहिक-पत्र निकालने की मेरी इच्छा है। उपर्युक्त प्रेस के मैनेजर म० शादीराम को मैं इसके साथ भेजता हूं। वह इस पत्र के "डिक्लेरेशन" के लिये प्रार्थनापत्र फाईल करवा देगा। पत्र का नाम "श्रद्धा" होगा और वह गुरुकुल संस्था का पत्र होता हुआ उस की सेवा करेगा।

आज से तीन वर्ष पूर्व, जब मैं गुरुकुल में था, मैं "सद्धर्मप्रचारक" नाम का एक हिन्दी साप्ताहिक पत्र निकाला करता था। उस समय, उस पत्र से, कभी कोई ज़मानत नहीं मांगी गई थी।

मैं आशा करता हूं कि, सम्राट् की उदार घोषणा के कारण अवस्थाओं में जो यह परिवर्तन हो गया है, उसके कारण आप, बिना किसी प्रकार की ज़मानत मांगे, डिक्लेरेशन स्वीकृत कर लेंगे। चूंकि मैं स्वयं इस पत्र का सम्पादन करूंगा, इस लिए इस बात की मैं गारन्टी लेता हूं कि इस की आवाज़ और इसका प्रभाव भलाई के लिए ही होगा।"

कुछ दिन तक प्रतीक्षा करने के बाद जब कोई उत्तर न आया तब २४ मार्च को एक चेतावनी (Reminder) भेजी गयी पर उसका कोई उत्तर न आता देख कर ३१ मार्च को एक और पत्र भेजा गया।

उस का हिन्दी अनुवाद यह है:—

"महाशय!

२४ मार्च १९२० की तिथि वाले पिछले पत्र में मैंने हिन्दी के साप्ताहिक पत्र "श्रद्धा" को चलाने की आज्ञा मांगी थी। गुरुकुल प्रेस के मैनेजर म० शादीराम द्वारा डिक्लेरेशन फाईल कर वाया गया था। मामला बहुत जल्दी का है ……………………………………

इस लिए, मैं आपका बड़ा कृतज्ञ होऊंगा, यदि आप इस के लिए अत्यन्त शीघ्र आज्ञा भेज देंगे।"

शोक से कहना पड़ता है कि इन दो चेतावनियों के दिये जाने के बाद भी कोई उत्तर नहीं आया। तब ६ अप्रैल १९२० को डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट बिजनौर के नाम एक तार भेजा गया जिस में, पुरानी दो चेतावनियों को याद दिलाते हुए, डिक्लेरेशन को शीघ्र स्वीकार करने की प्रार्थना की गई थी।

हमारी इतनी चेतावनियों के बाद ९ अप्रैल को डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट का एक पत्र आया जिस में फिर मामले को टालमटोल ही किया गया था। उस में लिखा था—"……………the matter is pending with the Commissioner" (अर्थात् फैसले के लिए मामला कमिश्नर के पास गया है)

अब हम कमिश्नर साहब के उत्तर की प्रतीक्षा करने लगे। कई दिन तक कोई उत्तर आते न देखकर २० अप्रैल को एक तार बरेली डिविज़न के कमिश्नर के नाम भेजी गई।

उसका हिन्दी अनुवाद यह है कि—

"डिस्ट्रिक्ट—मैजिस्ट्रेट बिजनौर के पास सप्ताहिक पत्र 'श्रद्धा' का डिक्लेरेशन स्वीकृत करने के लिए प्रार्थना-पत्र भेजा गया। दो चेतावनियों और एक तार के बाद उत्तर आया कि मामला अनिर्णीत है। १३ अप्रैल को पत्र प्रकाशित होने की सूचना दी गई थी; परन्तु प्रार्थना-पत्र एक मास से भी अधिक समय से अनिर्णीत है। कृपया तार द्वारा अपने फैसले की आज्ञा दें।"

बहुत दिनों के बाद आज ११ वैशाख तदनुसार २२ अप्रैल को कमिश्नर का यह उत्तर आया है कि सारा मामला प्रान्तिक लाट के पास भेजा गया है। देखते हैं, लाट साहब कितने दिनों में उत्तर देने की कृपा करते हैं? यही कारण है कि यह अंक छपाकर रक्खा है, जब अन्तिम आज्ञा सरकार के यहां से आ जावेगी तो ग्राहकों की सेवा में भेजा जावेगा।

—:o:—

गुरुकुल में

पं० व्यंकटेश नारायण जी तिवारी

एम० ए०

३१. १२. ७६ शनिवार की रात को साहित्य परिषद् की ओर से एक विशेष अधिवेशन किया गया। इसमें श्री पं० वैंकटेश नारायण जी तिवारी भारत सेवा समिति का "समाज सेवा" विषय पर उपयोगी और शिक्षाप्रद व्याख्यान हुआ। व्याख्यान का सार इस प्रकार है।

सेवा समितियां निःसहाय निर्बल और निर्धन संस्थायें हैं परन्तु जिस भाव को लेकर ये काम करती हैं वह बड़ा प्रबल है। हिंदू समाज व आर्यसमाज में समाज सेवा के भाव के बीज का वपन स्वामी दयानन्द ने किया था। १८६९ में आर्यसमाज ने दुर्भिक्ष में बड़ा काम किया। १९०७ में श्री लाजपतराय जी ने युक्त प्रान्तीय दुर्भिक्ष में काम किया।

परन्तु उस समय जमीन तैयार न थी अतः बहुत सफलता न हुई। १९०७ में दुर्भिक्ष के कार्य को समाप्त कर जब मि० देवधर जी बम्बई लौटे तो वहां उन्होंने होलि ज़ोल्स में काम किया। इसी समय वहां Bombay social service league की स्थापना की गई। इसके अनन्तर क्रमश १९१६ १९१७, १९१८ में प्रयाग पंजाब और मद्रास में भी Social service Leagues की स्थापना की गयी। १९१५ और १९१८ के कुम्भों में आये हुए आदमियों के हृदयों पर संगठित सेवा समिति के कार्य का बहुत प्रभाव पड़ा। इसी का यह परिणाम है कि आज युक्त प्रान्त में ८० से अधिक और पंजाब में ४० से अधिक संगठित सेवा समितियां हैं। देश में समाज सेवा के भाव का प्रचार इन सेवा समितियों के कारण ही फैला है। सेवा समितियों का इतिहास और उद्देश्य क्या है? ये नित्य नयी स्थान हो क्यों स्थापित होती जा रही हैं? इत्यादि प्रश्नों पर कुछ कहने से पूर्व एक गलतफ़हमी को दूर कर देना आवश्यक है।

क्रिश्चियन लोगों का कहना है कि भारत में समाज सेवा का भाव हमारे ही कारण आया है पर यह बात ठीक नहीं है। पुराने साहित्य के अनुशीलन करने से मालुम होता है कि हमारे देश में इस भाव का देर से प्रचार था।

उदाहरणार्थ रामानुजाचार्य की दो घटनायें बताई गयीं। जब रामानुजाचार्य के गुरु यामुनाचार्य मृत्यु शय्या पर पड़े हुए थे तो उन्होंने अन्तिम समय में रामानुजाचार्य को मन्त्र दीक्षा दी और साथ ही यह कहा कि यह मन्त्र किसी अयोग्य को मत देना। रामानुजाचार्य ने मन्त्र-दीक्षा लेने के बाद मन्दिर के उच्च शिखर पर चढ़ कर सबको उस मन्त्र का उपदेश दिया। यामुनाचार्य को जब यह बात पता लगी तो उन्होंने रामानुजाचार्य को बुला कर कहा कि तुम को गुरु आज्ञा भंग करने के अपराध के कारण रौरव नरक में जाना पड़ेगा। रामानुज ने कहा कि यदि उस मन्त्र का श्रवण कर सब नगर वासी स्वर्ग में चले जायं तो मैं रौरव नरक में जाने को भी तैयार हूं। इसी प्रकार एक और घटना से बताया कि रामानुज ने किस प्रकार एक अन्त्यज को अपने घर में निमन्त्रण देकर भोजन कराया। एवं यद्यपि हमारे देश में समाज सेवा का भाव बहुत प्राचीन काल से है परन्तु संगठित रूप में समाज सेवा का भाव पिछले १०० वर्षों से ही प्रचलित हुआ। इसी प्रकार यूरोप में भी पिछले ५० वर्षों से ही संगठित रूप में समाज सेवा का कार्य होने लगा है। मिसेस् फ्लोरेन्स नाइटिंगेल ने दाइयों द्वारा इस कार्य को आरम्भ किया था।

सेवा समितियों के सिद्धान्त बताने से पूर्व उसके असली स्वरूप को प्रकट करने के लिए उसका निषेधात्मक स्वरूप दिखलाना आवश्यक है।

प्रथम—सेवासमितियां राजनैतिक [illegible] नहीं हैं। इन का राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं है। इस का यह अभिप्रायः नहीं कि सेवासमिति के सभ्यों को देश की राजनीति में भाग ही न लेना चाहिये। सेवासमिति के सदस्य धोके से बिल्ले लगाकर वहां काम कर सकते हैं। परन्तु सेवासमिति के निश्चित वेष धारण किए हुये सभ्य सेवासमिति के कार्य के अतिरिक्त अन्य कार्य नहीं कर सकते। सेवासमितियों का किसी पार्टी विशेष से भी सम्बन्ध नहीं है।

द्वितीय-सेवा समितियां असाम्प्रदायिक हैं। इन का किसी सम्प्रदाय विशेष से सम्बन्ध नहीं होना चाहिये। सेवा समितियों को क्या ईसाई और क्या मुसलमान सब की सहायता करनी चाहिये। वहां धर्म विशेष व सम्प्रदाय विशेष का क्या मतलब?।

तृतीय-सेवा समितियां पुराने ढंग के दान बांटने के हक में नहीं है। सेवा समितियां स्वावलम्बन के व्यापक सिद्धान्त का प्रचार करती है। वे इस बुरी प्रथा के द्वारा कहारों को कङ्गाल रहने के लिए उत्तेजित नहीं करती। सेवा समितियां सामाजिक रोगों के व्यापक कारणों को दूर करने में लगी हुई हैं। इस के लिए वे परोपकार के सिद्धान्त का प्रचार करती हैं। सेवा समितियों का दृढ़ विश्वास है कि यदि मनुष्य पुष्पों को फलने फूलने के लिये अच्छी परिस्थिति में रक्खा जाये तो ये अवश्य ही संसार को चमका सकेंगे। सेवासमितियों का कार्यक्षेत्र सामाजिक है। वे Poor laws, House problem आदि पर ही मुख्यतया ध्यान देंगी। सेवा समिति के तत्व को समझने के लिए मिसकोकरे विधोदिल और जनरल बूथ से समाज सेवकों के जीवन चरित्र पढ़ने चाहिये। इस समय हम अपने सामाजिक और नैतिक दायित्व को भूल कर स्वत्वों को मांगने में व्यग्र हैं। परन्तु इतना स्पष्ट है कि यदि हमने अपने दायित्व को बिना समझे स्वत्व पा भी लिये तो भी हम उन्हें सम्भाल नहीं सकेंगे। हमें अपने अधिकारों को पांच अक्षरों (Right) में न मांग कर चार अक्षरों में (Duty) ही मांगना चाहिए। हमारा कर्तव्य होना चाहिए कि जो कुछ हम ज्ञान प्राप्त करें उसे दूसरों तक अवश्य ही पहुंचाये।

प्रत्येक देशवासी का जाति निर्माण के लिये अपनी समाज के गढ़ों को, अपने आप को न्योछावर कर, भरने का यत्न करना चाहिए। बिना इस के जाति का निर्माण नहीं हो सकता। यूरोपीयन स्वस्थ जातियों का मुकाबला करने के लिये अपने देश में सामाजिक स्वस्थता को बढ़ाने का यत्न करना चाहिये। तभी हम सभ्य संसार में अभिमान पूर्वक सिर उठाने के योग्य हो सकेंगे।

सेवासमितियां क्या काम करती हैं इसके लिये बोम्बे सोशियल सर्विस लीग के कार्य का संक्षिप्त विवरण रक्खा जा सकता है।

१. गश्ती पुस्तकालय— (Circulating library)

इनके द्वारा नगरनिवासियों में उच्च कोटि के साहित्य पढ़ने की रुचि उत्पन्न की जाती है।

२. बम्बई के मज़दूरों की बहुत बुरी हालत थी। मि० देवधर ने Family Budgets तैय्यार कर बुरी हालत के मूल कारण पता लगाये। साथ ही इन बुराइयों को दूर करने के लिये Debt redemption society (जिन के द्वारा पुराने ऋण अदा किये जाते थे) Medical Insurence आदि समितियां स्थापित की। इसके अलावा विवाहित स्त्रियों और विधवाओं की शिक्षा के लिये भी उचित प्रबन्ध किया गया। इस प्रकार के परोपकार के कार्य प्रत्येक नगर निवासी अपने नगर में चला सकता है परन्तु इसके लिये केवल उत्साह या सहानुभूति की ही आवश्यकता नहीं अपितु स्वाध्याय और अनुभव की भी बड़ी भारी आवश्यकता है। अन्त में व्याख्याता महोदय ने कुल वासियों से इस पवित्र कार्य में सहयोग देने की आशा प्रकट की। साथ ही कहा कि हमारी जाति सदा से जङ्गलों से नवजीवन लेती आई है। हमारे पूज्य ऋषियों ने जंगलों में ही बैठकर आध्यात्मिक तत्वों को ढूंढा था। जिस प्रकार उन ऋषियों ने इन तत्वों को निःस्वार्थ भाव से सारे संसार के लिये प्रकट किया, उसी प्रकार इस पवित्र तपोवन के निवासियों को भी यहां से प्राप्त विद्या और धर्म के तत्वों को मनुष्यमात्र के लिये लाभदायक बनाने के यत्न में लगना चाहिये। यही आर्य जाति की विशेषता है। आशा है और निश्चय है कि इस पवित्र तपो भूमि और तपोवन के निवासी इस भूमि से प्राप्त पवित्र ज्ञान को निःस्वार्थ [illegible] से मनुष्य मात्र में प्रचारित करने का य[illegible]। तदनन्तर मान्य व्याख्याता मह[illegible] धन्यवाद दिया गया और शान्ति पाठ [illegible] सभा विसर्जित की गई।

मन्त्री
साहित्य परिषद्

कांग्रेस सबकमेटी के मार्शलला रिपोर्ट की समालोचना

(ठाकुर छेदीलाल, एम०ए० (Oxon) बार-एट ला लिखित)

भारतीय जनता का अंग्रेज़ी जाति की न्याय प्रियता पर विश्वास था। यद्यपि कई स्थानों पर इन के साथ अंग्रेज़ों ने उचित बर्ताव नहीं किया तथापि इस विश्वास पर विशेष आघात नहीं हुआ था। इसी कारण जिस समय यह विदित हुआ कि पंजाब में मार्शलला जारी कर दिया गया है, लोगों को भय होते हुवे भी यह विश्वास कदापि न था कि पञ्जाब निवासियों पर अकथनीय अत्याचार किये जावेंगे। यह तो सब जानते ही थे कि फौजी कानून के समय थोड़ी बहुत ज़्यादती हो ही जाया करती है किन्तु यह किसी ने भी नहीं सोचा था कि सभ्य कहाने वाली और दूसरों का सभ्य बनाने का दम भरने वाली ब्रिटिश जाति अपनी असहाय प्रजा के प्रति उन उपायों को उपयोग में लावेगी जिसे उपयोग में लाने से ही एक असभ्य जाति को भी लज्जा से सिर झुकाना पड़े। इस लिये जिस समय पंडित मदनमोहन मालवीय ने पञ्जाब की घटना के सम्बन्ध में प्रश्नों की सूची बना कर व्यवस्थापक सभा में पेश की और सरकार ने उनका उचित उत्तर नहीं दिया, उस समय भारतीय जनता को विदित हुआ कि उनके असहाय पञ्जाबी भाई घोर यातना के शिकार बनाये गये। पञ्जाब पर से ज्यों ज्यों फौजी कानून का चंगुल ढीला पड़ने लगा, पञ्जाब की व्यथा की कथा भारत में चारों ओर फैलने लगी। परिणाम यह हुआ कि जनता में आन्दोलन होने लगा कि पंजाब के अत्याचारों के विषय में जांच करने के लिये एक कमेटी नियत की जावे। जनता में असन्तोष की मात्रा बढ़ते देख सरकार ने इस की जांच के लिये एक कमीशन नियत किया जिसके सभापति लार्ड हन्टर बनाये गये।

माननीय पंडित मालवीय जी तथा पंडित मोतीलाल नेहरू ने मार्शलला के अन्त होते ही बहुत से लोगों से पंजाब की दुर्घटनाओं का पूरा वर्णन प्राप्त किया था। इसी कथन के आधार पर उन्होंने व्यवस्थापिका सभा वाले अपने प्रश्न तैयार किये थे। जिस समय हन्टर कमेटी ने सरकारी गवाहों का इज़हार सरकारी पक्ष के समर्थन में लेना आरम्भ किया कांग्रेस कमेटी ने भी विचार किया कि वह भी अपनी शहादत पेश करे किन्तु ऐसा करने के पूर्व उन्हों ने हन्टर कमेटी से निवेदन किया कि जिन पंजाबी नेताओं के विरुद्ध उनकी अनुपस्थिति में सरकारी पक्ष से गवाही दिलाई जा रही है कमेटी के सन्मुख वे नेता भी उपस्थित रहें ताकि वे उचित रीति से सरकारी गवाहों का खंडन कर सकें। कमेटी ने तथा सरकार ने कमेटी के इस उचित अनुरोध का भी स्वीकार न किया। ऐसी दशा में कांग्रेस कमेटी का विवश हो यही निश्चय करना पड़ा कि वह हन्टर कमेटी के सामने जनता के पक्ष का समर्थन नहीं करे। किन्तु उस के साथ २ यह भी निश्चय किया गया कि पंजाब के अत्याचारों की जांच जो कमेटी ने की थी वह निरर्थक न हो इस लिए कांग्रेस कमेटी की ओर से एक कमीशन इस की जांच करने के लिए महात्मा गांधी, सी० आर० दास, अब्बास तय्यब जी तथा जयकर का नियत किया गया। प्रस्तुत रिपोर्ट इसी कमीशन के प्रयत्न का फल है।

जिस समय कांग्रेस कमेटी की ओर से इस कमीशन की नियुक्ति हुई थी उस समय ऐंग्लो इंडियन अखबारों ने मज़ाक उड़ाना शुरू किया था कि रिपोर्ट निष्पक्ष नहीं हो सकती किन्तु उन की रिपोर्ट के प्रकाशित होने से यह प्रत्यक्ष हो गया कि उन की धारणा कितनी अशुद्ध थी। रिपोर्ट के पढ़ने से कमिश्नरों की निष्पक्षता का पता चलता है। प्रत्येक स्थान में, जनता द्वारा आग लगाने तथा हत्या करने का जो अपराध हुआ उसका कड़े से कड़े शब्दों में कमिश्नरों ने प्रतिवाद किया है। यह उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कह दिया है कि जनता का अमृतसर में गिरजाघर तथा बैंक का जलाना, निरपराध अंग्रेज़ों को मारना अत्यन्त निन्दनीय था। कमेटी ने कसूर की लोगों ने जो इन निरपराध अंग्रेज़ी सिपाहियों को मारा इस की भी बड़े तीव्र शब्दों में समालोचना की है। यद्यपि इन के सन्मुख १७०० गवाहों के बयान पेश किए गये किन्तु इन्होंने केवल ६५० गवाहों के ही कथन का स्वीकार किया। किसी भी गवाह के बयान में किंचित्‌मात्र सन्देह होने पर भी उन्होंने उसे अलग कर दिया। इस कार्य में जिस तरह की निष्पक्षता का परिचय कमेटी ने दिया है वह आदर्श बनाने के योग्य है।

रिपोर्ट के पहिले परिच्छेद में पंजाब का संक्षिप्त भौगोलिक वर्णन कर दूसरे परिच्छेद में सर माइकेल ओडायर के शासन काल का विवरण दिया गया है। उस में सर माइकेल के ही वक्तव्यों द्वारा यह सिद्ध कर दिया गया है कि पढ़े लिखे भारतवासियों को वह कितनी घृणा की दृष्टि से देखता था और किस तरह हिन्दुस्तानियों की बढ़ती हुई राजनैतिक आकांक्षाओं को दबाने का वह पक्षपाती था। एक बार ही नहीं कई बार उसने शिक्षित भारतवासियों का घोर अपमान किया। भारतीय नेताओं का पंजाब पर प्रभाव तथा पंजाब में राजनैतिक जागृति दोनों बातें उसे असह्य थीं। जब कभी इसे अवसर मिला इस ने पंजाबी नेताओं को बुलाकर डांटने में कभी कसर नहीं की। कमीशन की राय है कि लोगों में वैमनस्य फैलाने के लिये इस ने कई बार अपने वक्तव्यों में झूठी बातों का भी प्रयोग किया। केवल वह शिक्षित जनता से चिढ़ा हुआ नहीं था किन्तु उसने युद्ध के समय सैनिक भरती कराने तथा युद्ध ऋण उगाहने में भी कई अनुचित उपायों का प्रयोग किया। मजिस्ट्रेट अपने क़ानूनी अधिकारों का भरती कराने के लिये दुरुपयोग करते थे। ख़ान अहमद हुसैन ख़ां रेवेन्यू असिस्टेन्ट ने शाहपुर के तहसीलदार के क़त्ल के मुकद्दमे में साफ़ २ इज़हार दिया है कि लोगों को फ़ौज में भरती कराने के लिये कौराकोट आदि स्थानों में स्त्रियों के साथ भी ज़्यादती की गई। इसी गवाह का बयान है कि पुल्लापुर में भी दो स्त्रियों के साथ अत्याचार किया गया था। कांग्रेस कमेटी का कथन है कि इस विषय

में उसके पास और भी कई शहादतें मौजूद हैं। तात्पर्य यह है कि सेना भरती करने में अत्याचार, शिक्षितों के प्रति घृणा, तथा भारतीयों के उठती हुई आकांक्षाओं को दबाने में हर समय तत्पर रहने के कारण सर माइकेल ओड्वायर ने पंजाब में एक बड़ी बेचैनी फैला दी थी। कांग्रेस कमेटी की यह राय है कि माइकेल ने जान बूझ कर लोगों से ऐसा बर्ताव किया जिससे उन को गुस्सा आ जावे और गुस्से में वे कुछ कर बैठें ताकि इसे उन्हें कुचल डालने का मनमाना मौका मिल जावे। पंजाब में जो कुछ हुआ उसका आदि कारण कमेटी ने ओड्वायर को माना है और उनका यह कथन बिल्कुल ठीक है।

कमेटी की एक युक्ति किसी भी हद्द तक ठीक नहीं है। भरती के सम्बन्ध में कमेटी ने यह लिखा है—

"We have collected some evidence of a direct nature, which being of a perilous character, we have refrained from publishing" इसका अर्थ यह है हमको कुछ प्रत्यक्ष सबूत इस विषय में मिले हैं जिसे हम इस लिये नहीं छापते कि वे सरकार पर बड़ा भारी आक्षेप लाते हैं। कमेटी को ऐसी शहादतों को अवश्य छाप देना चाहिये था विशेष कर जब कि कमेटी का कथन है कि गवाही विश्वास के योग्य है। केवल सरकार के ऊपर भारी आक्षेप यह कोई ऐसा कारण नहीं है जिस के लिये यह शहादत छपाई न जा सके। जनता का यह अधिकार है कि वह इस विषय में कमेटी से पूछ सके कि वह शहादत कहां है।

रिपोर्ट के तीसरे और चौथे परिच्छेद में रौलट एक्ट तथा सत्याग्रह पर विचार किया गया है। सरकार का कथन है कि इस एक्ट के सम्बन्ध में लोगों में झूठी बातें फैलाई गई हैं किन्तु इस विषय में कमेटी का मन्तव्य है कि जो कुछ इस के विषय में जनता की ओर से कहा गया वह ग़लत नहीं है बल्कि सरकार ने ही इस बिल का जान बूझ कर अनुचित तथा अशुद्ध कथन द्वारा लोगों में प्रचार किया। सत्याग्रह की मीमांसा म० गांधी ने बड़ी उत्तमता से की है। उनका कथन है कि सत्याग्रह से किसी को हानि नहीं हो सकती। सत्य पर निर्भर होने के कारण और विश्वप्रेम उसका शस्त्र होने की वजह से सत्याग्रह किसी को हानि नहीं पहुंचा सका। यह करने वाले का और जिसके ऊपर इसका प्रयोग किया जाता है उसका भी कल्याण कारक है। सरकार का कथन था कि पंजाब में जो कुछ गड़बड़ हुई वह सत्याग्रह ही के कारण हुई। इसके प्रतिकूल कमेटी की सम्मति है कि यदि सत्याग्रह का प्रचार उस समय न किया जाता तो पंजाब में और अधिक गड़बड़ मचती। इसी के कारण पंजाब का असंतोष बहुत कुछ शान्त होगया।

पांचवे परिच्छेद में जितने स्थानों में फौजी कानून जारी था उसका पूर्ण विवरण दिया गया है। अमृतसर के सम्बन्ध में कमीशन की राय है कि यहां फौजी कानून की कोई आवश्यकता नहीं थी और इसका उपयोग अत्यन्त अन्याय पूर्ण था। कमीशन का कथन है कि यदि अधिकारी वर्ग कुछ भी बुद्धिमानी से काम लेता तो जनता पर पहिली बार गोली चलाने की कुछ भी आवश्यकता न होती और जो कुछ अमृतसर में इसके बाद हुआ वह भी न होता। बहादुर डायर ने जो २ अत्याचार अमृतसर वालों पर किये उतने तो बेलजियम पर भी जर्मनों ने नहीं किये। स्वयं जनरल डायर ने लोगों से कहा कि हमारे वास्ते मैदाने जंग फ्रांस और अमृतसर एक सा है। तीन या चार दिन तक पानी का नल तथा बिजली सब शहर वालों के लिए बन्द कर दी गयी थी। लोगों को कितनी तकलीफ हुई होगी यह केवल विचारा ही जा सकता है। जलियांवाला बाग के हत्या के विषय में कमेटी की राय है कि जानबूझ कर लगभग १००० आदमी तथा लगभग २४०० मारे गये या ज़ख़्मी किए गये। निरीह प्रजा के इस तरह घात करने का कोई कारण न था। यह बड़ा भारी अत्याचार अमृतसर वालों पर किया गया है। जनरल डायर ने स्वयं स्वीकार किया है कि वह बिना गोली चलाये ही सब को भगा सका था। उसने यह भी माना है कि भागते हुवे लोगों पर भी मैंने गोली चलवाई और उस २ स्थान में गोली चलवाई जहां भीड़ अधिक थी। कमेटी का कथन है कि इस अत्याचार के पक्ष में डायर के पास कोई भी कारण नहीं है और बिना कारण ही उसने इतनी प्रजा का नाश किया। ४ अंग्रेज़ मारे गये थे और उन्हीं के बदला लेने के लिए इतने हिन्दुस्तानी मारे गये, मुहम्मद सादीक गवाह नम्बर १९ के बयान से यह स्पष्ट होजाता है। डिप्टी कमिश्नर माइल्स इरविंग ने लोगों को सुनाते हुये कहा "तुमने अंग्रेजों को मार बुरा किया है। इसका बदला तुमसे और तुम्हारे बच्चों से लिया जावेगा" इस से भी यही ध्वनि निकलती है कि जलियांवाला की हत्या के लिये कोई कारण न था। केवल जनता पर बदला लेने के लिए डायर का मन उत्सुक हो रहा था। सर्वसाधारण के सामने सभ्य लोगों के नंगे चूतड़ों पर कोड़े लगाना, प्रत्येक श्वेत वर्ण वाले को सलाम करना, कूचा कौरिहान वाले में पेट के बल चलना, सब वकील और बैरिस्टरों को कान्स्टेबिल बनाना, डायर साहब के नियमानुसार सब के लिये अनिवार्य हो गया था। झूठी २ गवाही बनाने का प्रयत्न करना तथा लोगों को फंसाना यही पुलिस का काम था। अदालतें भी ऐसी बनाई गई थीं जहां से इन्साफ़ सौ २ कोस दूर भागता था। पेट के बल चलने वाली सज़ा के विषय में कमेटी की सम्मति है कि मनुष्य को पतित बनाने वाली इस सज़ा के आविष्कर्ता के दिमाग़ का ठीक स्वरूप वर्णन करना कठिन ही है। अन्धे, मरीज़ को दे[illegible]ाने वाले डाक्टर तथा मंदिर [illegible] सभी को इस कूचे में बिना अपरा[illegible]ट के बल चलना पड़ा। लड़कों को कोड़े लगाये जाते थे।

बेहोश हो जाने पर कोड़ा मारना बंद कर वे होश में फिर लाये जाते थे जिसके बाद फिर उनको बेंत की सज़ा दी जाती थी। झूठी गवाही बनाने में तो पुलिस ने हद्द कर दी थी। लोगों को गवाही बोलने के लिये किस तरह धमकी दी जाति थी और डर बताया जाता था यह मकबूल महम्मद गवाह नम्बर ५ के कथन से स्पष्ट हो जाता है। इसका कथन है कि सुखासिंह डिप्टी सुपरिनटेनडेन्ट पुलिस ने मुझे झूठी शहादत देने के लिये कहा। मेरे इन्कार करने पर उसने जवाब दिया कि आज कल इन्साफ किसी का नहीं है और जिस का है उसे कष्ट भोगना पड़ेगा। डा० किदारनाथ गवाह न० १ के कथन से भी यही बात मालूम होती है। केवल इतना ही नहीं किन्तु जो लोग गिरफ्तार किये जाते थे उन्हें बहुत तकलीफ़ दी जाती थी। उदाहरणार्थ, दिनरात हथकड़ी लगाये रखना, ३६ घंटे तक भोजन न देना, मैले और बिना फर्श की ज़मीन पर सुलाना, शौच इत्यादि के समय कष्ट देना। झूठी गवाही तय्यार करने के लिये लोगों को बड़ी यन्त्रणा दी जाती थी, जैसे कि उंगली को खाट के पाये में दबा कर उस पर आठ आदमी का बैठना, गुदा में लकड़ी डालना इत्यादि। ऐसे २ पैशाचिक कृत्य किये गये जिन के वर्णन करने में लज्जा आती है। शहर में ऐसा आतंक छा गया था कि सब अपने जान के लिये डर रहे थे। अमृतसर के फौजी कानून के संबन्ध में कमेटी की यह राय कि यह किसी भी सभ्य सरकार के योग्य भ्रा-सर्व मानमनीय है।

जो कुछ डायर के हाथ से अमृतसर को भोगना पड़ा जानसन के हाथ लाहौर की भी वही दशा हुई। हड़ताल के कारण ... माइकेल ओडायर इतने कुपित होगये ... उन्होंने निश्चय कर लिया था ... नेताओं से वे उस का बदला लेंगे। लाहौर में विद्यार्थियों को भी अत्यन्त कष्ट उठाना पड़ा। अकारण दुख दिलाने के लिए धूप में प्रत्येक दिन १६ मील चलाना अत्यन्त अनुचित था। लाहौर-लीडर केस में तो न्याय की पूर्ण हत्या की गई। सरकारी गवाहों को खुले अदालत जिरह से बचाना, बाहर से वकील या बैरिस्टर न आने देना सफाई के गवाहों को न लेना, मुलजिम के वकीलों का अपमान करना, ये मामूली घटनायें थी।

कसूर गुजरांवाला तथा मनियांवाला में भी लोगों को फ़ौजी क़ानून द्वारा बहुत कष्ट उठाना पड़ा। कमेटी ने डायर, ... राम, ओब्रायन, बासवर्थ स्मिथ, ... साहिबखां तथा राय साहब श्रीराम सूद के अत्याचारों का पूर्ण विवरण दिया है। यहां उसके दोहराने की आवश्यकता नहीं। हां बासवर्थ स्मिथ के नीचता का परिचय देने के लिए मनियांवाला की एक घटना का उल्लेख आवश्यक है। निरीह दुःखित अबलाओं के प्रति इस नरपिशाच का बर्ताव यथार्थ में अत्यन्त घृणित है। मनियांवाला की सब स्त्रियां बुलवाली गईं। उनके मुंह खोल दिए गये और उन्हें मारा भी। उनसे इस नीच ने ऐसे वचन कहे जिनके लिखने में भी लज्जा आती है "Flies, litches, she-asses, your skirts will be examined by the police constables. When you were sleeping with your husbands why did you allow them to get up and go?" इस कथन की पुष्टि तेजासिंह गवाह नम्बर ५८० तथा गुरुदेवी गवाह नम्बर ५८२ के बयान से हो जाती है। इन घटनाओं से यह समझा जा सकता है कि पंजाब के वीर पुरुष तथा देवियों को इन दो महीनों में कितना घोर अपमान जनक जीवन व्यतीत करना पड़ा।

कमेटी ने इन सब बातों पर पूर्ण रूप से विचार कर यह सिफारिश की है।

१. रोलेट एक्ट का रद्द करना।

२. सरमाइकेल ओडायर को हर किस्म की सरकारी नौकरी से अलग करना।

३. जनरल डायर, कर्नेल जानसन, ओब्रायन, बासवर्थ स्मिथ, श्रीराम सूद तथा मालिक साहिब खान को नौकरी से माकूफ़ करना।

४. जिन लोगों के खिलाफ़, अत्याचार करने के प्रमाण मिले हैं उनका जांच करना और सबूत होने पर उन्हें भी नौकरी से निकालना।

५, लार्डचेम्सफोर्ड को वापिस बुलाना।

६. जो कुछ जुर्माना स्पेशल ट्राइबुनल या समरीकोर्ट ने वसूल किया हो वह वापिस देना।

यदि जो कुछ प्रमाण कमेटी के सामने था सत्यमान लिया जावे तो निःसंदेह कमेटी की सिफारिश अत्यन्त न्याय पूर्ण है। जिन लोगों ने प्रजा को सताया है उनको सजा दिलाने का यत्न करना बदला लेने की इच्छा से नहीं है। मुख्य कारण इसका यह है कि यदि इन्हें इनके अत्याचार का दंड मिल जावेगा तो भविष्य में इस तरह के अत्याचार होने की बिलकुल आशंका नहीं रहेगी। इसमें संदेह नहीं कि जो गवाहियां कमेटी के सामने पेश की गईं उनका जिरह दूसरी ओर से नहीं हुआ जिससे उनके बयान का बहुत महत्त्व चला जाता है किन्तु कांग्रेस कमेटी ने हन्टर कमेटी के सामने होने वाले इन अफसरों के इज़हार पर भी अपनी राय कायम की है, इस लिये कमेटी के कार्य को हम एक तर्फा नहीं कह सके। हां, इसके विरुद्ध हन्टर कमेटी को कार्य को एकतरफा कहा जा सकता है क्योंकि जनता के पक्ष का समर्थन उनके सन्मुख नहीं किया गया। यही नहीं बल्कि कमेटी ने नेताओं के छूटने के बाद भी उनका इज़हार लेना अस्वीकार किया। इस दृष्टि से इस कमेटी के रिपोर्ट का महत्त्व हन्टर कमेटी के रिपोर्ट से कई गुणा अधिक है और जिस निष्पक्षता तथा न्याय की दृष्टि से यह लिखा गया है उसके कारण यह और भी विशेष आदरणीय है।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिये छपा।

ओ३म्

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि ।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल भी श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः ।
(ऋ० म० १० सू० १५१, मं० ५)
'सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे ! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।'

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | १६ वैशाख सं० १९७७ वि० | दयानन्दाब्द ३७ | ता० ३० अप्रैल सन् १९२० ई० | संख्या २ भाग १

हृदयोद्गार

"दुःख"

क्यों डरता है इन दुःखों से ऐ ! निराश जीवन वाले !
जब हैं ये ही एक मात्र बस सुख के दिन लाने वाले ॥ १ ॥
देख, उठा कर तुझे नींद से वे ही काम कराते हैं,
तेरे आगे मधुमय जीवन का शुभ चित्र बनाते हैं ॥ २ ॥
दूर, कल्पनामय वह आशा धीरे धीरे आती है,
अपनी दिव्य छटा को तेरे ओठों पर झलकाती हैं ॥ ३ ॥
कुचले हुये दुःख ही उस को तेरे पास बुलाते हैं,
उसके आते ही फिर वे भी झट सुखमय हो जाते हैं ॥ ४ ॥
मनोमयी सुखदा वीणा की जब उठती हैं सारी तार,
उसी राग में बह कर होता है कैसा आनन्द अपार ॥ ५ ॥
वही आंधियां जो थीं पहिले तन को झुलसाने वालीं,
शीतल होकर बहतीं छूकर होतीं सुख देने वाली ॥ ६ ॥
सारे विकट दृश्य तब सुन्दर रूप धरे मुसकाते हैं,
गुज़रे हुये समय की तुझको झांकी एक दिखाते हैं ॥ ७ ॥
वही दुःख ही तेरे अन्दर सुख-अंकुर उपजाते हैं,
सावधान कर के वे तुझ को आप नष्ट हो जाते हैं ॥ ८ ॥
इस भीषण जग जलधि बीच तू हे नर ! है इक सीप समान,
इन उत्तुंग मचलती लहरों पर मत देना डर कर ध्यान ॥ ९ ॥
स्वाती जल की बूंद पड़ेगी तू मोती हो जावेगा,
तभी समझ, यह सागर तुझ को चुन कर भीतर रख लेगा ॥ १० ॥

"आनन्द"

मातृभूमि की प्रदर्शनी

कैसी अनोखी प्रदर्शनी ये तुमने इस भूमि में नाथ ! लगाई ॥ ध्रुव ॥
इसे बीत चुकीं सदियां कितनी, इस बात का कौन हिसाब लगावे।
हर जन्म मे पाया नवीन इसे, तुमने चतुराई अनूठी दिखाई ॥ २ ॥
हिमशैल से पर्वत ऊंचे खड़े, जिमि सौंदर्य स्वर्ग की रम्य बनी हों।
कहीं सुन्दर ये बन बाग़ खड़े, तुमनें नदियां कहीं मीठी बहाई ॥ २ ॥
हर किस्म के पंछी विहार करें, हर किस्म के जीव यहां रहते।
हर किस्म के लोग प्रमोद करें, तुमने यह जादू की भूमि बनाई ॥ ३ ॥
ऋतुएं क्रम से यहां आके रहें, इस भूमि का नूतन साज सजावें।
मीठे फलों से हैं वृक्ष लदे, कहुं सुन्दर फूलों से भूमि सजाई ॥ ४ ॥
नाज की कौन कहे हरसाल, हमें वसुधा भर झोली है देती।
करते हम भोग, किसी ने हमें, यदि भोग की रीति भी होती सिखाई ५
सात समुद्रों को लांघ कभी, इसे देखने आते थे धर्म पिपासू।
जब देखा इसे, झट शीस झुका, उनमें इस भूमि की भक्ति समाई ॥ ६ ॥
धन्य है भूमि ! तुम्हारी कथा जिसको सुननें इस विश्व के त्यागी।
इन मोहित योगि जनों ने इसी शुभ गोद में हैं कुटियायें बनाई ॥ ७ ॥
लूटने लाखों लुटेरे चले थे पठान मुग़ल थे महामद गोरे।
तेरे सुपूतों नें माता ! यहां, बस तेरे लिये निज जान गंवाई ॥ ८ ॥
माता ! करो मत शोक कि गोद में [illegible] रखवाला है कोई।
सागर के तट पै प्रभु नें इक मूरति [illegible] में बनाई ॥ ९ ॥
आरती तेरी उतार रहे मिलके नभ [illegible] चन्द्र औ तारे।
जग नाच रहा हर ताल के साथ ये देख के [illegible] इन झांकी दिखाई ॥ १० ॥

निधिः

ब्रह्मचर्य्य सूक्त की

व्याख्या।

अथर्व० काण्ड ११, अ० ३, सूक्त ५॥ ओ३म् । ब्रह्मचारीष्णंश्चरति रोदसी उभे तस्मिन् देवाः संमनसो भवन्ति। स दाधार पृथिवीं दिवं च स आचार्यं तपसा पिपर्ति । १ ।

"(ब्रह्मचारी) परमेश्वर और उसकी बड़ी विद्या वेद को प्राप्त करने में है शील जिस का, वह ब्रह्मचारी (रोदसी उभे) द्यावा पृथिवी रूपी दोनों लोकों का (इष्णन् चरति) हिलाता हुआ चलता है, (तस्मिन् देवाः समनसः भवन्ति) उस में ही सब देव समान मन वाले होते हैं। (सः दाधार पृथिवीम् दिवम् च) वह पृथिवी और द्यौ (ज़मीन और आसमान) को दृढ़ता से धारण करता है—(सः आचार्यं तपसा पिपर्ति) वह आचार्य को तप से प्रसन्नता अर्थात् सन्तुष्ट करता है ।" ब्रह्म परमेश्वर को कहते हैं। उस अनाद्यनन्त की आदि विद्या "वेद" भी ब्रह्म ही है। क्योंकि दोनों ही सर्वोपरि, बड़े हैं। "चर" धातु "गति" और "भक्षण" दो अर्थों में प्रयुक्त होता है। पहले "गति" अर्थ में चर को लेंगे । वह "गति" शब्द भी तीन अर्थों में लगता है—अर्थात् ज्ञान, गमन और प्राप्ति । तब ब्रह्मचारी वह है जो परमेश्वर और उस की पतित पावनी विद्या का पहले ज्ञान प्राप्त करे। वह निश्चयात्मिक ज्ञान किस मुख्य साधन से प्राप्त होता है ? जिस अनिर्वचनीय को आंख देख नहीं सकी, कान सुन नहीं सके और अन्य इन्द्रियां भी जिस का प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं दे सकी- उस व्यापक पुरुष को कहां देखें ? निस्सन्देह उस का ज्ञान वहां ही प्राप्त हो सकता है जहां वह विद्यमान है। और ब्रह्माण्ड के प्रकाशमान और अप्रकाश्य, प्राण और रयि, द्यौ और पृथिवी-किस लोक में वह मौजूद नहीं है। "हर जगह मौजूद है पर वह नज़र आता नहीं" तब उस का ज्ञान द्यौः और पृथिवी इत्यादि द्वन्द्वों में तत्व की दृष्टि डालने से ही मिलेगा; और इस दृष्टि के लिए आवश्यक है कि द्रष्टा में बल हो । ज़मीन और आसमान के अन्दर जो छिपा हुआ राज़ (रहस्य) है उस को खोलना ब्रह्मचारी का उद्देश्य है, इस लिए वह ज़मीन और अस्मान को हिलाता हुआ विचरता है। वह प्रकृति को मजबूर करता है कि अपने अन्दर के रहस्यों को उस (ब्रह्मचारी) के लिए खोल कर रखदे ।

जब ब्रह्मचारी को ब्रह्म का ज्ञान हुआ तो वह उस में गमन करना आरम्भ करता है। संसार के सब प्रकाश- (ज्ञान, जो उस प्रकाश्य स्वरूप की ज्योति के द्योतक होने से देव हैं।) इस में उस ब्रह्मचारी के सहायक होते हैं। जहां पहले भिन्नता दिखाई देती थी वहां समानता दिखाई देती है । सब में वह उसी प्रकाश स्वरूप की ज्योति को देखता है और अन्ततः वह उसी में स्थिरता को प्राप्त होता है । दर्शन तो, किसी न किसी समय, प्रत्येक व्यक्ति को होते हैं परन्तु ब्रह्मचारी को यह बल प्राप्त होता है कि जब एक बार उस परम ज्योतिः के दर्शन होजायें तो वह उस से अलग नहीं होता। तभी तो वेद भगवान् ने कहा है कि ब्रह्मचारी द्यौ और पृथिवी को दृढ़ता से धारण कर लेता है अर्थात्, उन के तत्व को समझ कर फिर उस का हृदय डांवाडोल नहीं होता।

बड़े का ज्ञान प्राप्त करने, उस में गमन करने और फिर उस की प्राप्ति से स्थिर होकर दृढ़ व्रती होने का साधन क्या है ? वही साधन ब्रह्मचारी को आचार्य बतलाता है। बड़े की प्राप्ति के लिये साधन भी बड़ा ही होना चाहिए। हाथी मशीनों से दोस्ती गांठने वालों को ऊंचे दर्वाजे रखने पड़ते हैं। सर्वोपरि परमात्मा और उस के वेद की प्राप्ति के लिए साधन भी ऊंचा चाहिए। वह बड़ा क्या है जिसके सहारे से मन से भी बड़े ब्रह्म का पता लग जाय ? तैत्तिरीयोपनिषत् की भृगु वल्ली में भृगु ने गुरुवरुण से ब्रह्म का पता पूछा है। वरुण ने उत्तर में कहा-"अन्नं, प्राणं, चक्षुः, श्रोत्रं, मनो वाचमिति।" "अन्न" ब्रह्म है। तब ब्रह्मचारी कौन है ? इस प्रश्न के उत्तर के लिए "चर" धातु के दूसरे अर्थ पर विचार करना चाहिए। "चर" भक्षण अर्थ में भी आता है । जो अन्न को भक्षण करने की शक्ति रखता है, वह ब्रह्मचारी है। भक्षण किसे कहते हैं ? क्या खाद्य पदार्थ को पेट में रख लेना ही भक्षण है ? वाचस्पत्य शब्दकोश के पृ० ४६२० पर लिखा है—"भक्ष-भावे-ल्युट् । कठिन द्रव्यस्य गलाधः करण व्यापारे। भक्षण प्रकारः सुश्रुतोक्तः" मनुष्य योनि में यह मानवी शरीर, इन्द्रिय, मन और आत्मा युक्त बनावट ही ब्रह्मप्राप्ति का साधन है। उन में से शरीर में रह कर ही इन्द्रिय मन और आत्मा का व्यापार चल रहा है; इस लिए शरीर के स्वास्थ्य पर ही अन्य सब के स्वास्थ्य का निर्भर है । परन्तु शरीर के परमाणु क्षण क्षण में क्षीण होते रहते हैं। उन की स्थानपूर्ति के लिए केवल खाने पीने की ही आवश्यकता नहीं अपितु उस खाए पिए को पचाने की भी आवश्यकता है। स्वादिष्ठ और चटपटे भोजन के प्रलोभन में न फंसना और चबाते हुए उसे पीस डालकर अन्दर ले जाना-यह तपस्या का ही काम है। इसी तप की शिक्षा आचार्य ब्रह्मचारी को देता है और जब शिष्य आचार्य की शिक्षा के अनुकूल आचरण करता हुआ तपस्वी बनता है तभी आचार्य्य का आत्मा सन्तुष्ट होता है। इसी को लक्ष्य में रख कर उपनिषद् में अन्ते वासी के लिए उपदेश है कि आचार्य के प्रिय धन की भेंट उस के आगे रक्खे। धन्य हैं वे शिष्य वर्ग जो आचार्य्य की शिक्षा को शिरोधार्य समझ कर तप का जीवन व्यतीत करते हैं; क्योंकि उस अवस्था की प्राप्ति का-जिस में आनन्द का ही राज है—यही एक साधन है। भूयिस्योऽम् ॥

श्रद्धानन्द सन्यासी

श्रद्धा

स्वाध्याय के बाह्य नियम

यजुर्वेद के तैत्तिरीयोपनिषद् के द्वितीय अनुवाक में शिक्षा की व्याख्या की है। "ओम्-शिक्षांव्याख्यास्यामः। वर्णः स्वरः। मात्रा बलम्। साम सन्तानः। इत्युक्तः शिक्षाध्यायः" अर्थ—"परमात्मा का निजनाम लेकर शिक्षा हम कहेंगे (हे शिष्य सुनो!)—अकारादि वर्ण उदात्तादि स्वर इत्यादि मात्रा आभ्यन्तर और बाह्य प्रयत्न शान्ति पूर्वक मध्यमवृत्ति से वर्णों का उच्चारण और परस्पर वर्णों का मेल (संहिता)—इस प्रकार से शिक्षाध्याय कहा है।"

गुरु के वाक्यों को सुन कर शिष्य शिक्षा लेना आरम्भ करता है। तब आरम्भ में ओम् का ध्यान कर के ही मंगलाचरण करता है। "सहनौ यशः सहनौब्रह्मवर्चसम्"॥ "हम दोनों—शिष्य और गुरु—का यश साथ ही प्रचरित रहे और हम दोनों का ब्रह्म तेज (वेद से प्राप्त हुआ तेज) साथ ही हो।" अर्थात् स्वाध्याय का आरम्भ करने से पहिले शिष्य को श्रद्धापूर्वक ये वाक्य बोलने चाहिए।

अब देखना चाहिए कि यजुर्वेद के प्रातिशाख्य में (कात्यायन ऋषि ने) क्या उपदेश दिया है। प्रातिशाख्य के प्रथमाध्याय में पहिले शब्द, रूप, प्रयत्न स्थानादि का वर्णन कर के सोलहवें सूत्र में कहते हैं—

ओङ्कार स्वाध्यायादौ।

स्वाध्याय का आरम्भ ओंकार पूर्वक करना चाहिये, यह सूत्र का तात्पर्य है। मनु महाराज ने भी कहा है—

ब्राह्मणः प्रणवं कुर्य्यादादावन्ते च सर्वदा।
स्रवत्यनोङ्कृतं पूर्वं परस्ताच्च विशीर्यते अ० २। श्लो० ७४॥

"वेद पढ़ने के प्रारम्भ में सदा प्रणव (ओ३म्) का उच्चारण करे और अन्त में भी यदि पूर्व में और अन्त में प्रणव का उच्चारण न करे तो उस का पढ़ा हुआ धीरे धीरे नष्ट हो जाता है।" यह ठीक ही है। जो पाठ श्रद्धा के बिना किया जाता है उसका स्मरण चिरस्थाई नहीं होता। परन्तु प्रश्न उपस्थित होता है—

ओङ्काराथकारौ॥ १७॥

स्वाध्याय के आदि में जो ओंकार के उच्चारण की प्रतिज्ञा है वह अलङ्घ्य नहीं क्योंकि उस के तुल्य ही फल अथ शब्द का भी तो है मनु ने भी कहा है—

ओंकारश्चाथकारश्च द्वावेतौ ब्रह्मणः पुरा।
कण्ठंभित्वा विनिर्यातौ तेनेमौ मंगलावुभौ॥

यह ठीक है परन्तु इन में से—.

ओङ्कारं वेदेषु॥ १८॥

ओंकार का उच्चारण वेद के स्वाध्याय के आदि में करने की ही विधि है और—

अथकारं भाष्येषु॥ १९॥

भाष्य के स्वाध्याय की आदि में "अथ" शब्द के प्रयोग की विधि है। चार संहिता मूल वेद के अतिरिक्त जितने भी (ब्राह्मण, उपनिषद्, वेदाङ्ग, उपाङ्गादि) ग्रन्थ हैं वे सब वेद के भाष्य रूप हैं।

अब स्वाध्याय की तय्यारी का वर्णन है—

प्रयतः॥ २०॥

स्वाध्याय में प्रयत के बाह्य साधन क्या है! इस पर भाष्यकार "उव्वट कहते हैं—प्रयतः शुचिरुच्यते; पादशौचाचमनादिना शुचिरधीयीतेत्यर्थः" ॥ स्वाध्याय का आरम्भ करने से पहिले हाथ पैरादि धोकर आचमन से कण्ठ शुद्धि कर लेनी चाहिए। फिर—

शुचौ॥ २१॥

शुद्ध अर्थात् एकान्त देश में अध्ययन करना चाहिये। न केवल अकेले विद्यार्थी के लिये एकान्त देश में अध्ययन करने की विधि है प्रत्युत गुरुकुल तथा अन्य विश्वविद्यालय भी स्वच्छ एकान्त देश में होने चाहिए। इसका फल आत्मा की शुद्धी होगा और बिना आत्मा शुद्धी के स्वाध्याय का उद्देश्य ही प्राप्त नहीं होता। इसी लिए कहा है—

द्वावेवबर्जयेन्नित्यमनध्यायौ प्रयत्नतः। स्वाध्यायभूमिं चाशुद्धामात्मानं चाशुचिं द्विजः॥

जब आत्मा को स्थिर कर लिया और शुद्ध, एकान्त स्थान भी प्राप्त होगया तब आसन की विधि कही जाती है—

इष्टम्॥ २२॥

जिस आसन (अर्थात् बैठने का प्रकार) बैठ कर स्वाध्याय में विघ्न न पड़े उसी आसन का अभ्यास चाहिये। औंधे लेट कर कोई पुरुष सूक्ष्म विचारों को अपने अन्दर स्थान नहीं दे सकता, जैसे आराम चौकी पर बैठ कर व्यायाम करने की चेष्टा निष्फल है। इस लिए ऐसे आसन पर बैठ कर स्वाध्याय करना चाहिये जिस से स्वाध्याय में विघ्न न हो कर पूरी सफलता प्राप्त हो।

परन्तु क्या सब ऋतुओं में एकसा स्वाध्याय हो सकता है? नहीं, ऋतु भेद से स्वाध्याय के समय में भी परिवर्तन होगा। दृष्टान्त के लिए सूत्रकार कहते हैं—

ऋतु प्राप्य॥ २३॥

भाष्य—"हेमन्तमृतुं प्राप्य रात्र्याश्चतुर्थप्रहरेऽधीयीत—हेमन्त (बहुत जाड़े की) ऋतु में रात के चौथे पहर उठकर पढ़े।" इस से स्पष्ट विदित होता है कि हेमन्त ऋतु के अतिरिक्त अन्य सब ऋतुओं में रात को पढ़ना मने है, और उस ऋतु में भी पहिली रात पढ़न के लिए वर्जित है। फिर पढ़ने में विशेष नियम का पालन—

योजनान्न परम्॥ २४॥

भाष्य—"अधीयानो योजनात् परमध्वानं न गच्छेत्"—अर्थात् पढ़ते हुए एक योजन से आगे न जावे।" यह विधि विचित्र प्रतीत होगी, परन्तु जब नियम यह है कि गुरुकुल नगर से एक योजन की दूरी पर होना चाहिये तब समझ में आजाता है कि जहां भ्रमण करता हुआ पाठ पर विचार करता रहे, वहां विचारते विचारते सीमा से बाहिर न निकल जाय। विद्यार्थी जीवन में भोजन कैसा करना चाहिये?

भोजनं मधुरं स्निग्धम्॥२५॥

भाष्य—"मधुररसप्रायं घृतप्रायं चान्नंभुञ्जीत" अर्थात् मधुर रस प्रधान और घृत प्रधान अन्न का भोजन करना चाहिए।" रूखा, तीखा, खट्टा आदि भोजन का तो मधुर शब्द से ही खन्डन होगया। फिर भी जहां मस्तिष्क को ठीक रखने तथा शारीरिक बल की स्थिरता के लिए घृत की आवश्यकता है वहां रस प्रधान भाजी दालादि के सेवन से गरिष्ठ भोजन का [illegible] होगया। ब्रह्मचारी के लिये सर्व प्रकार [illegible] निकारक तथा काम, क्रोधादि को उत्ते[illegible] वाले भोजन मना हैं।

श्रद्धानन्द सन्यासी

सन्यासी का सन्देश

अब प्रति सप्ताह जनता तक पहुंचा करेगा। "श्रद्धा" का पहला अंक छपवाकर इस लिए रख लिया गया था कि ज़मानत के विषय में कोई आज्ञा गवर्नमेन्ट की ओर से, उस समय तक, नहीं आई थी। परन्तु इधर पहला अंक छपवा कर रक्खा और उधर मजिस्ट्रेट ने समाचार भेजा कि बिना ज़मानत के "श्रद्धा" मुद्रित होसकती है। संयुक्त प्रान्त के लाट महोदय (सर हार्कोटबटलर) की उदार नीति से यही आशा थी, अब प्रथम और द्वितीय (दोनों) अंक इकट्ठे ग्राहक महाशयों की सेवा में भेजे जाते हैं। दूसरा अंक रजिस्टरी के लिए पोस्टमास्टर जनरल के पास भेज दिया गया है। वहां से स्वीकृति आने पर तीसरा अंक डाक में डाल दिया जायगा। यदि उस अंक के पहुंचने में कुछ देर हो तो समझना चाहिये कि पोस्टमास्टर जनरल के यहां से उत्तर आने में देर हुई है।

जलयांवाला बाग़ वा अमरवाटिका

इस समय यह प्रश्न बड़े ज़ोर से भारत जनता के सामने आरहा है कि, जलयांवाले बाग़ में जो निरपराध वृद्ध, युवा और बाल मारे गए थे उनका स्मारक क्या बने। वह स्थान सबका सब जाति के हाथ में आजायगा, यह निश्चय हो चुका है। साढ़े पांच लाख भूमि का मूल्य देने को तो मिल ही चुके होंगे, शेष साढ़े चार लाख भी शीघ्र ही इकट्ठे होने वाले हैं। देश के कुछ राजनैतिक नेता, जिन्होंने बुद्धि और नीति का ठेका ले रक्खा है, लिख रहे हैं कि स्मारक चाहे कैसा भी हो उस से जातियों में परस्पर घृणा उत्पन्न होगी, इस लिए कोई स्मारक ही न बनाना चाहिए। दूसरी ओर से महात्मा गांधी आदि महानुभाव कह रहे हैं कि यह स्मारक [illegible] उत्पन्न करने के लिए नहीं, प्रत्युत [illegible] भाव से प्रेरित होकर बनाया [illegible] रहा है। बहुत से भाई ऐसे भी होंगे जो चाहते हैं कि यह स्मारक सदा "अमरल डायर" के भीषण पैशाचिक कार्य को याद दिलाता रहे। मेरी सम्मति में स्मारक को प्रत्येक व्यक्ति भिन्न भिन्न दृष्टि से देखेगा। परन्तु क्या यदि कोई स्मारक न बनाया जावे तब भी जिनकी रुचि बदला लेने की ओर अधिक है क्या वह जनरल डायरादि की करतूतों को भूल जायगे। कांग्रेस कमेटी की रिपोर्ट को जाने दें—उसका तो शायद बहिष्कार भी किया जासके, किन्तु हन्टर कमेटी की प्रामाणिक रिपोर्ट भी इस ख़ून ख़राबे के इतिहास को अमर बना जायगी। तब स्मारक को रोकने से तो कुछ लाभ नहीं।

निर्भर इस पर है कि स्मारक कैसा बने। जो लोग इस रक्त से पवित्र हुए [illegible] शहीदों के चित्र पूर्वक कोई [illegible] बनाने की सम्मति देते हैं या उस स्तम्भ पर वैसाखी के दिन के खून की कहानी लिखवाना चाहते हैं वे बड़ी भूल में पड़े हैं। विरोध भाव को बढ़ाने से मानवी स्वतन्त्रता पर आघात हो सकता है—उस से स्वतन्त्रता मिल नहीं सकती। स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए तप, सचाई और प्रेम का पाठ पढ़ने और उन्हें साधन में लाने की आवश्यकता है—अर्थात् जीवन ही पलट देने की ज़रूरत है।

मैंने भी पंजाब की घटनाओं का यथार्थ रूप दिखाने और पंजाबी जनता की सेवा में कुछ भाग लिया है, इस लिए मैं भी अपनी सम्मति सर्वसाधारण के सामने रख देता हूं। सब से पहला काम तो यह है कि इस स्थान का नाम ही बदल दिया जाय। अमृतसर की गत जातीय महासभा में खड़े हो कर भारत पुत्रियों तथा पुत्रों का स्वागत करते हुए मैंने कहा था—"इस वृक्ष-पुष्प-फल—हीन वाटिका में युवा पुरुषों को ही नहीं, बल्कि बूढ़ों और बालकों तक ने सत्य आरूढ़ हो कर घातक गोली की वर्षा को फूलों की वर्षा समझा। इस स्थान की 'जजन' को हिन्दू मुसलमान और सिक्ख वीर शहीदों के लहू ने मिल कर शान्त कर दिया है। यह भूमि अब *अमर वाटिका* के नाम से प्रसिद्ध होगी क्योंकि इस पवित्र भूमि पर जो मरे वे स्वयं अमर हो गए और आने वाली नसलों को अमृत-नगर में पहुंचने का सीधा रास्ता दिखा गए।"

दूसरा प्रस्ताव मैंने कांग्रेस अधिवेशन के समाप्त होते ही कर दिया था। उसे यहां फिर दोहरा देता हूं।

(१) सारा मैदान एकसार कराके उसमें घास और फुलवारी लग जाय जिस पर सर्वमतों, सर्व जातियों के काले, गोरे, पीले बालक और बालिकाएं निडर हो कर विचर सकें।

(२) जिस मार्ग से ख़ूनी फौजी दाखिल होकर जनता को भून रहे थे, उस ओर एक बड़ा चिकित्सालय तथा औषधालय बने जिस का द्वार दिन रात दीन रोगियों की चिकित्सा के लिए खुला रहे। यहां बिना मूल्य के औषध दी जाय और दयालु वैद्य मुफ्त इलाज करें। यही नहीं, शारीरिक स्वास्थ्य की रक्षा की विधि का भी यहां से प्रचार हो।

(३) जो सामने की ओर माने जाते देश भक्तों के रक्त से, भूमि लाल हो गई थी, जहां मरे और घायल वीरों की लाशों के ढेर लग गए थे, उस ओर एक बड़ा जातीय सभा-भवन बने जिस में एक उत्तम राजनैतिक तथा ऐतिहासिक पुस्तकालय भी रक्खा जाय।

तीनों स्मारकों के अन्दर जाति, रूप और मत का कोई भी भेद न रक्खा जावे और प्रयत्न किया जाय कि यहां गोरे और काले, राजा और प्रजा का कोई भेद नहीं है।

श्रद्धानन्द सन्यासी

सन्यासी की आवाज़ सुनो:— श्री० स्वामी श्रद्धानन्द जी ने गत–अमृतसर–कांग्रेस में देशवासियों का ध्यान जिस ओर बल पूर्वक आकर्षित किया था, उसे यदि आप भूल गये हैं तो हम फिर आपका ध्यान उधर आकर्षित करते हैं:—

"स्वराज्य प्राप्त करके उसे पचाने के लिये पहिली ज़रूरत यह है कि क़ौम का एक २ बच्चा ऐसी तालीम हासिल कर सके जिससे उसका आत्मा दृढ़ होकर उसके अपने शरीर, इन्द्रियों और मन का मालिक—उनको वश में करने वाला—बन सके। यह तब हो सकेगा जब एक ओर जातीय-शिक्षा-पद्धति बना कर क़ौम की तालीम क़ौम के हाथों में हो जाय और दूसरी ओर, जाति के माता और पिता अपने शरीरों, इन्द्रियों और मनों को शुद्ध करके अपनी सन्तान के सामने पेश करने के लिए उत्तम मिसाल रक्खें।"

गुरुकुल-जगत्

ऋतु बहुत उत्तम है। गर्मी मामूली पड़ती है। कुलवासी जिसके दर्शन के लिए बहुत लालायित हो रहे थे और जिसे सत्सव पर लाने के लिये बहुत प्रयत्न करने पर भी सफलता नहीं हुई थी, वह भागीरथी की निर्मल धारा १२ वैशाख को प्रातः आप से आप आगई। इतने दिनों के बाद, इस ग्रीष्म ऋतु में गंगा के मधुर-कलरव को फिर सुनकर सब कुलवासी अत्यन्त आनन्दित हो रहे हैं।

२. विद्यालय तथा महाविद्यालय की पढ़ाई प्रथम वैशाख से ही नियम-पूर्वक प्रारम्भ हो गई थी। शिक्षक-वर्ग में से सिवाय अर्थशास्त्रोपाध्याय छेदीलाल जी बैरिस्टर के अतिरिक्त और कोई अनुपस्थित नहीं है। कुछ अत्यन्त आवश्यक कार्य आजाने के कारण बैरिस्टर जी को जाना पड़ा, अब शीघ्र ही लौटने की आशा है। सब ब्रह्मचारी और शिक्षक वर्ग दृढ़ता और प्रसन्नता पूर्वक अपना काम कर रहे हैं। आर्य जनता को यह सुन कर भी प्रसन्नता होगी कि महाविद्यालय में आयुर्वेद की पढ़ाई जहां गत वर्ष से ही नियम पूर्वक प्रारम्भ हो गई थी, वहां इस वर्ष से, उसके साथ २ पाश्चात्य चिकित्साशास्त्र का भी अध्ययन प्रारम्भ करवा दिया गया है। यह काम हमारे सुयोग्य और प्रसिद्ध डाक्टर सुखदेव जी करेंगे। इसके साथ २ औद्योगिक-विभाग की शिक्षा भी प्रारम्भ होने वाली है। करघे (hand looms) मंगवा लिए गये हैं और पाठविधि भी तय्यार होरही है।

३. महाविद्यालय तथा विद्यालय-आश्रम की वाग्वर्धिनी, संस्कृत साहित्योत्साहिनी, विज्ञान परिषद्, साहित्य संजीवनी, साहित्य संवर्द्धिनी, साहित्य परिषद्, इत्यादि सभाओं के अधिवेशन नियम पूर्वक आरम्भ होगये हैं। विद्यालय के ब्रह्मचारियों को संस्कृत और अंग्रेज़ी बोलने तथा श्लोक कण्ठस्थ करवाने का अभ्यास प्रतिदिन रात के समय करवाया जाता है।

४. १२ वैशाख को यहां पर आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेता ला० देवराज जी पधारे थे। आश्रम आदि देखने के बाद उन्हें ब्रह्मचारियों ने और विशेषतया ब्र० महेन्द्रनाथ (१५ श्रे०) ने अपने धनुर्वाण के खेल दिखाये जिस पर उन्होंने अत्यन्त प्रसन्नता प्रकट की। अगले दिन प्रातःकाल सम्पूर्ण ब्रह्मचारियों की ओर से उन्हें एक अभिनन्दन पत्र दिया गया जिस में आर्य्य कन्याओं में शिक्षा प्रचार, आर्यसमाज की निस्वार्थ सेवा आदि गुणों का वर्णन करते हुये उन से समय २ पर यहां पधारने की प्रार्थना की गई थी। लाला जी ने अपने यहां आने का प्रयोजन बताते हुए और ब्रह्मचारि[illegible] स्त्री शिक्षा की आवश्यकता [illegible] लेते हुए निष्काम कर्म करने [illegible] सदा प्रसन्न रहने का उपदेश दिया। उसी दिन प्रातःकाल वे यहां से विदा हुए।

५. ब्रह्मचारियों का स्वास्थ्य उत्तम है। औषधालय में ऋतु ज्वर के कारण कुछ एक रोगियों के अतिरिक्त और कोई विशेष रोगी नहीं है।

चातक का वैराग्य

(लेखक—श्रीयुत "शर्मन्")

रमणीय सलिलवाहिनी नदियां कल्लोलें करती हुई स्वच्छन्द बहें। बड़े २ महासागर इस पृथ्वी पर जल से भरपूर पड़े रहें। किन्तु चातक को इन से कोई प्रयोजन नहीं। इस भूलोक के जलों में अब उस की तृष्णा नहीं रही है। उसने तो आकाश की तरफ मुंह फेर लिया है; वहीं से आती हुई दिव्य धारायें अब उस के कण्ठ को शान्ति दे सकती हैं।

× × ×

निःसन्देह यह भूतल जल से प्लावित है; सब कहीं पीने के लिए सुगमता से पानी मिल सकता है। परन्तु उसे तो यहां के जलों की—यहां के मधुर से मधुर और शीतल से शीतल जलों की—अनुपादेयता का पूरा २ ज्ञान हो चुका है; यहां के सभी जल इसी प्रकार के हैं। अन्य प्राणी मस्त हो इन्हें पीयें—भरपेट पीयें—; उन के लिए ये खुले छोड़े पड़े हैं। किन्तु चातक इन से दूर रहेगा। वह इन्हें जानता है। इन में उसका ज़रा भी राग नहीं है। प्यासा रहना कोई बड़ी बात नहीं है किन्तु त्यागे हुए का ग्रहण कदापि न होगा। यदि ज़रूरत होगी तो कभी स्वर्ग से सुधासम सलिल स्वयमेव गिरेगा।

वस्तुतः व्रत बड़ा कठिन है। कौन है जो जलों को सामने बहता देख प्यासा रह सकता है?

× × × × ×

इस महाव्रत को धारण किए पर्याप्त समय हो चुका है। धीरे २ कहीं जाकर वर्षा ऋतु आयी है और कभी २ मेघमालायें भी दिखलायी देकर कुछ आशा बंधाती है; किन्तु अभी तक चातक का कण्ठ सूखा का सूखा पड़ा है। दूर से आती हुई ठंडी पवन कभी कभी शीतल जल पूर्ण मेघों के शुभागमन का सन्देश लाती है और बदन हृष्ट कर देती है, परन्तु यह सब भी आशा ही आशा रह जाती है और कोई भी मेघ दो बूंदें नहीं देजाता। तथापि महाव्रती चातक सब कुछ त्यागकर दृढ़ विश्वास में चुपचाप ऊपर मुख किए बैठा है। पूर्वदिशा से काले मेघ जलभार से उमड़ते-उमड़ते आते हैं किन्तु देखते ही देखते सीधे पश्चिम की ओर चले जाते हैं—डाक गाड़ी की तरह एक क्षण भी इस स्टेशन के ऊपर नहीं ठहरते जाते? क्या ही, अद्भुत कौतुक है। पर वैरागी अपना मगन बैठा है।

× × ×

तब क्या चातक प्यासा ही रह जायगा? क्या अब उसे अपने प्राण त्यागने होंगे या इस अन्त समय की व्यथा में वैराग्य छोड़ फिर संसारी बन कर अपनी रक्षा करनी होगी?। ये सब आशंकायें निरर्थक और निर्मूल हैं। चातक निश्चिन्त है कि वह प्यास के मारे यदि धरणीतल पर मूर्छित हो गिर भी पड़ेगा [illegible] भी उसे चेतना में लाने के लिए [illegible] आयगा तो स्वयं इन्द्र स्वर्गीय [illegible] लेकर आयगें और चैतन्य करेंगे। सांसारिक जलों के छींटे उसे [illegible] पर [illegible] भी [illegible]

की सदा जागृत आत्मा इन तुच्छ जालों की उपेक्षा ही करेगी—इन के स्पर्श का असर अनुभव न करेगी। सच है, क्योंकि सांसारिक वस्तुयें तो अपने सौन्दर्य और माधुर्य से लोगों को सदैव मोहित ही कर सकती हैं, इन में मोहमूर्छा से लोगों को जगाने की शक्ति कहां से आवे?।

× × × × ×

भाई घबराओ नहीं, संतोष रखो, परीक्षा में उत्तीर्ण होओ, जो त्याज्य है उसे त्यागे ही रखो तो सब कुछ मिल जायगा। मिलने का नियम तो अटल है। केवल कठिन परीक्षा में दृढ़ निकलने की देर है। भला जिसने (विजातीय) सांसारिकता बिलकुल दूर करदी है, उसे (आत्मीय) दिव्यता कैसे न मिलेगी—आज न मिलेगी तो दो दिन बाद मिलेगी, पर मिलेगी। और फिर उसे क्या नहीं मिलेगा? पर त्यागोतो सही। एक बार तृष्णा को त्यागो, व्यासमुनि पर विश्वास करो कि:—

"यच्च कामसुखं लोके, यच्च दिव्यं महत्सुखम्।
तृष्णाक्षयसुखस्यैते नार्हतः षोडशीं कलाम्॥"

इन बिजली भरे वाक्यों से भर कर एकबार त्याग कर देखो तो

× × × × ×

तुम ज़रा सा त्यागते हुये व्यथा से व्याकुल हो जाते हो, कलेजा निकला सा जाता है। 'हाय मैं मरा, हाय मैं गया'। किन्तु एक बार अपने को जाने तो दो और देखो।

× × ×

अरे नादान! तू किस घबराहट के चक्कर में पड़ा है, किस मोह में फंसा है; तुम्हें ज्ञान नहीं कि जिस ने तृष्णा को जीत लिया है उसे प्यास कहां सताती है, उसे मूर्छा कहां अचेतन कर सकती है। उस अमृत को मारने के लिए मौत कहां से आयगी। अरे, त्यागने में भय कहां है। केवल तृष्णा को छोड़ो, एक बार अपना सब कुछ अर्पण कर दो और [illegible] बन कर अटल विश्वास में बैठ जाओ। देखो कि तुम्हें लेने के लिये [illegible] प्रभु अपने सिंहासन से उतरते हैं कि नहीं।

× × ×

पुस्तक समालोचना

भारत वर्ष में जातीय शिक्षा:—लेखक पं० जयचन्द्र विद्यालंकार, उपाध्याय गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी; मूल्य प्रतिपुस्तक ॥)। ९५ पृष्ठ की इस पुस्तक में ग्रन्थ कर्त्ता ने उस विषय पर विचार किया है, जिस पर जाति का भविष्य निर्भर है। ५ सहस्र वर्ष पूर्व भारत वर्ष में जिस शिक्षा पद्धति का खुला प्रचार था, उस विचार तक पश्चिमीय शिक्षक कहीं अब पहुंचने लगे हैं। शिक्षा के सार्वभौम आदर्श का जातीय शिक्षा के साथ मेल विशेष ढंग से दिखलाया गया है। शिक्षा के माध्यम [illegible] जहां अच्छी दृष्टि डाली है, [illegible] इस विचार से हम सहमत न [illegible] गुरुकुल में संस्कृत की शिक्षा उचित से अधिक है।" यह ठीक है कि जातीय शिक्षा वह है जो जाति के स्वभाव का उस के विकास की वर्तमान अवस्थाओं का ध्यान रखे'; परन्तु जब भारतवर्ष की कोई भी भाषा (यहां तक कि उर्दू भी) नहीं जो विपत् समय में संस्कृत का आश्रय न लेती हो, तो कोई भी जातीय शिक्षा भारतवर्ष में लाभ दायक नहीं हो सकेगी, जिस का प्रधानांग संस्कृत साहित्य पर न हो, और यह तब हो सकता है, जब कि आरम्भ से संस्कृत पढ़ाई जावे।

लेखक की एक दो अन्य सम्मतियों के साथ मतभेद होते हुए भी हम इस ग्रन्थ को अपूर्व समझते हैं; और आशा रखते हैं कि इस ग्रन्थ की पूर्ति के लिए कोई दूसरा भाग प० जयचन्द्र जी शीघ्र प्रकाशित करेंगे।

नवजीवन निबन्ध माला सं, ३, ४,

(क) ट्रांसवाल में भारतवासी:— मूल्य ।≡) डाक व्यय पृथक्, मिलने का पता सरस्वती सदन इन्दौर।

(ख) शिक्षित और किसान—मूल्य ।।=) मिलने का पता सरस्वती सदन इन्दौर।

उपरोक्त दोनों लघु पुस्तकों के निर्माता हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक अफ़रीका निवासी श्रीयुत भवानी दयालजी हैं। प्रथम ग्रन्थ में संक्षेप से दक्षिण अफ्रीका में प्रवासी भारतवासियों की जो स्थिति है, उसका आरम्भ से इतिहास दिया है। जहां विषय के चुनाव तथा उसे सर्वसाधारण के समझने के योग्य बनाने में बड़ी बुद्धिमत्ता से काम लिया गया है वहां महात्मा गांधी जी की, लेखक की सम्मति में, त्रुटियां अनुचित कटाक्ष के शब्दों में दिखलाई गई हैं। शब्दों के अनौचित्य को यदि छोड़ दिया जावे, तो महात्मा गांधी जी की ऐसी २ भूलें अवश्य हुई हैं, जिन पर महात्मा जी को प्रकाश डालना चाहिये।

दूसरे ग्रन्थ में एक बैरिस्टर और किसान की कल्पित बात चीत द्वारा, बड़े मनोरञ्जक ढग से अंग्रेज़ी पढ़े हुओं की भूल दर्शा कर उन्हें ठीक रस्ते पर चलाने का यत्न किया गया है।

—:०:—

गोरस और गो-वर्धन शास्त्र:—अनुवादक—प्यारेलाल गर्ग और गणेश सदाशिव फाटक। मूल पुस्तक मराठी में है जिसके लेखक कानपुर-कृषि-कालेज के प्रोफेसर भास्कर काशीनाथ घारे हैं। श्रीयुत घारे जी को हम अच्छी तरह से जानते हैं। आप गुरुकुल-विश्वविद्यालय में ६ मास से अधिक कृषि के उपाध्याय रहे थे। आप बड़े ही विद्या व्यसनी, परिश्रमी और सब से बढ़ कर स्वयं परीक्षण करके सचाई तक पहुंचते हैं। आपकी इस पुस्तक के एक २ पृष्ठ से भी ये ही भाव टपक रहे हैं।

आज कल घी दूध की जो मंहगी है और गौओं की जो बुरी दशा है और जितना थोड़ा दूध वे देती हैं—वह किसी भी पढ़े लिखे से छिपा हुआ नहीं है। इस दशा में पुस्तक की उपयोगिता और उपादेयता बहुत बढ़ जाती है। अब तक जो सज्जन, हिन्दी में कोई उत्तम पुस्तक न होने के कारण, 'डेअरी फार्म' जैसे लाभदायक विषय के ज्ञान से वंचित रहते थे, वे तथा अन्य सज्जन भी जो कि राशि में अधिक और उत्तम दूध प्राप्त करना चाहते हैं, आशा है इस पुस्तक को ख़रीद कर अवश्य लाभ उठावेंगे। पुस्तक के अन्त में १३ चित्र भी दिये हुए हैं, जिस से इसका महत्व और भी अधिक बढ़ गया है। पुस्तक का आकार मझोला; पृ० २८९; मूल्य २) है जो कि बहुत नहीं है। छपाई उत्तम है। भाषा सरल है। मुद्रक—स्नातक भूदेव विद्यालंकार, राजहंस-प्रेस, लाटूश रोड, कानपुर और उन्हीं से प्राप्य है।

संसार समाचार पर

टिप्पणी

पूर्वीय-आफ्रिका के विषय में डेपुटेशन और मि० मान्टेगू

लार्ड इस्लिङ्गटन, जनरल वेजवुड, भावनगरी, के. जी. गुप्ता, सर जे. रीस-इत्यादि महानुभावों का बना हुआ एक डेपुटेशन, गत १६ अप्रैल को, मि० मान्टेगू के पास गया था। ईस्ट-अफ्रिका में भारतीयों के साथ असम-व्यवहार और अन्य कई बाधाओं को दूर करवाना तथा एक निष्पक्षपात कमीशन को नियुक्त करवाना—इस डेपुटेशन का उद्देश्य था। मि० मान्टेगू ने अत्यन्त सहानुभूति-पूर्ण उत्तर दिया। ठीक है। पर वस्तुतः बात यह है कि सहानुभूति-पूर्ण उत्तर तो हमें कई वर्षों से मिल रहे हैं पर अवस्था फिर भी वही है। इस लिए, अब ऐसे उत्तरों की अपेक्षा कुछ वास्तविक काम भी होना चाहिये।

रूमानिया के राजकुमार का भारत में स्वागत—

गत-सप्ताह हमने रूमानिया के जिस राजकुमार के भारत में आने की सूचना दी थी वे बम्बई में इस सप्ताह पधार गये हैं। बन्दरगाह पर उनका, राजकीय प्रतिनिधियों द्वारा, स्वागत हुआ। हम भी उनका हार्दिक स्वागत करते हैं। पर यह आश्चर्य की बात है कि जनता की ओर से कोई स्वागत नहीं हुआ और उस पार्टी में भी जनता का कोई प्रतिनिधि नहीं था। इस का क्या कारण है? खैर, तो भी हम यह आशा करते हैं कि राजकुमार जितने दिन तक भारत में रहेंगे वे, यहां की ऊपर की पोचापाची को ही नहीं देखेंगे किन्तु जनता की वास्तविक अवस्था और देश की ठीक स्थिति का चित्र भी अपने साथ ले जावेंगे।

जनरल डायर का बकुलैस के लिए प्रस्थान और अभिनन्दन पत्रः—

२० अप्रैल को जनरल डायर और लेडी डायर ने पंजाब से बम्बई द्वारा इङ्गलैण्ड के लिए प्रस्थान किया। जालन्धर स्टेशन पर उन्हें, प्रान्त की १०० लेडियों द्वारा, एक अभिनन्दन पत्र दिया गया। यद्यपि अभिनन्दन पत्र में जनरल डायर के अमृतसर वाले नृशंस कर्म के साथ सहयोगिता और सहमति दिखाई गई थी पर उस में एक पंक्ति ऐसी है जिस से सारे अभिनन्दन पत्र की पोल खुल जाती है। वह यह है "जो जीवन नाश हुआ, उसके लिए हम दुख प्रकाशित करती हैं......।" हम नहीं समझते कि जब "पंजाब की १०० लेडियों" को जनरल डायर के काम के साथ पूर्ण सहमति है, तब उन्हें इस जीवन नाश के लिए क्यों दुख है? इस के लिए तो उन्हें प्रसन्न ही होना चाहिए। परन्तु क्या ही अच्छा होता यदि अमृतसर की वे सब स्त्रियां जिनके पति पुत्र वा भाई जनरल साहब की ही "पंजाब को बचाने वाली गोलियों से मारे गये हैं"—उन्हें इस "शुभ अवसर" पर एक उचित अभिनन्दन पत्र ......

विवाह सहभोज और खिलाफतः—

जब धार्मिक कट्टरपन अपनी उचित सीमा का भी उल्लंघन कर देता है, तभी ऐसी घटनायें होती हैं जैसी कि माननीय मि० फ़ाजलहक्क की लड़की के विवाह के उपलक्ष्य में दिये हुये सहभोज में, २० अप्रैल के दिन कलकत्ते में, हुई है। उस सहभोज में कुछ ऐसे महानुभाव भी उपस्थित थे जिन्हों ने गत शान्ति—महोत्सव में भाग लिया था। इस पर खिलाफत—आन्दोलन के कुछ नेताओं ने अशङ्का उठाई और उन्हें उस सहभोज में भाग न लेने देने के लिए मि० हक्क से कहा। मि० हक्क ने कहा कि "शान्ति-महोत्सव में भाग लेने वाले ग़ैर सरकारी मेम्बरों को मैंने निमंत्रण नहीं दिया" इस पर वे लोग सन्तुष्ट हो गये। हम समझते हैं कि ऐसी बातें साधारण शिष्टाचार के सर्वथा प्रतिकूल हैं।

ब्रिटिश साम्राज्य में रंग जर्मनी सेः

समाचार आया है कि जर्मनी से २ हजार और ३ हजार टन के बीच में रंग का सामान ब्रिटिश साम्राज्य में आवेगा जिसमें से लग भग १५ % भारत के हिस्से में आवेगा। वस्तुतः, यह बात बड़ी विचित्र प्रतीत होती है कि यद्यपि मित्र दलने जर्मनी को सन्धि की शर्तों से बिल्कुल कुचल डाला है, और उस के रंग के कई कारखानों पर कब्जा भी कर लिया था पर तो भी इस व्यापार में जहां वह युद्ध से पूर्व भी सब देशों से आगे बढ़ा हुआ था, उसका स्थान वहां से अब भी नहीं पा सके हैं? क्या यह जर्मनी की, व्यापार संसार में, क्रियात्मक विजय नहीं है।

लो० मा० तिलक का घोषणा-पत्र

लोकमान्य तिलक ने हाल ही में एक उद्घोषणापत्र प्रकाशित किया है जिस में उन्होंने, नई सुधार स्कीम के अनुसार बनने वाली कौन्सिलों के लिए, कांग्रेस डेमोक्रेटिक-पार्टी का भावी-कार्य्यविभाग दर्शाया है। "शिक्षा, आन्दोलन और सङ्गठन" ये तीन आदर्श उन्होंने पार्टी के सम्मुख रक्खे हैं। पार्टी जिन सिद्धान्तों का अनुमोदन करेगी उन में, औरों के अतिरिक्त, खिलाफत-प्रश्न स्वदेशी प्रचार, एक राष्ट्र-भाषा और हिन्दू मुसलमान-एकता की वृद्धि—ये भी हैं। यह बड़ी विचित्र बात है कि इस प्रोग्राम में बाल विवाह आदि—सामाजिक प्रश्नों का कोई ज़िक्र नहीं है। वस्तुतः ये ही तो दोष हैं जिनके कारण हमारी समाज की जड़ें खोखली हो रही हैं। यदि अपनी कौन्सिलों द्वारा भी हम ये दोष दूर न कर सके, तो कब होंगे?

"लीडर" और देशी भाषायें

इलाहाबाद के दैनिक पत्र "लीडर" ने अपने २३ अप्रैल के अङ्क में डाक्टर रवीन्द्र के बम्बई वाले भाषण पर टिप्पणी करते हुए देशी भाषाओं के प्रति अपनी बड़ी नाराजगी प्रकट की है। वह युक्ति यह देता है कि चूंकि देशी भाषाओं में उत्तम साहित्य नहीं है, इस लिए वे शिक्षा का माध्यम होने के योग्य नहीं हैं। यह कोई नई युक्ति नहीं है किन्तु कई बार खण्डित हो चुकी है। "लीडर" के सम्पादक मि० चिन्तामणि महोदय यदि एंग्लो-इण्डियन की इस युक्ति को ठीक मान लें कि "भारतवासियों को स्वराज्य नहीं मिलना चाहिए क्योंकि वे उसके लिए सर्वथा अयोग्य हैं" तो हम भी उनकी देशी भाषाओं के विरुद्ध दी हुई उपर्युक्त युक्ति की वास्तविकता को सहर्ष स्वीकार कर लेंगे? क्या आनरेबल चिन्तामणि इसके लिए तैयार हैं? लीडर के सम्पादक की यह कोई आज की सम्मति नहीं है। वे कई बार अपने अग्रलेखों में देशी भाषाओं के प्रति अपनी अश्रद्धा और विरोध प्रकट कर चुके हैं। परन्तु इस अंक में उनकी सम्मति में कुछ शुभ परिवर्तन मालूम होता है। अपनी टिप्पणी के अन्त में वे लिखते हैं कि "भारतीय आत्मा विदेशी भाषा में कभी

प्रकट नहीं हो सकती। जल्दी वा देर में जातीय जीवन को प्रकट करने के लिए कोई उत्तम माध्यम अवश्य मिल ही जावेगा।" 'लीडर' के सम्पादक महोदय से हम एक और प्रार्थना करेंगे और वह यह कि वे कृपा करके कभी गुरुकुल आवें तो उन्हें प्रतीत होगा कि मातृभाषा के माध्यम द्वारा दी हुई शिक्षा का कितना उत्तम परिणाम होता है। जो उन्हें वा उन जैसे अन्यों को असम्भव प्रतीत होता है, वही यहां सम्भव हो रहा है। आनरेबल मि० शास्त्री के भी पहिले ऐसे ही विचार थे, पर यहां की शिक्षा प्रणालि को देखकर उन्हें शिक्षा में मातृभाषा के माध्यम होने के महत्व को स्वीकार करना पड़ा।

गो-संरक्षिणी सभा—

देश में अब गो-रक्षा विषयक आन्दोलन हो रहा है, यह प्रसन्नता की बात है। गो-रक्षा-प्रेमियों को यह सुनकर प्रसन्नता होगी कि, इसी विषय पर विचार करने के लिए सेलम (मद्रास) में एक 'गो-सभा' होने वाली है जिसका विज्ञापन हमें मि० एन-रामराव प्लीडर सेलम द्वारा प्राप्त हुआ है। हमें याद है कि आज से कुछ वर्ष पूर्व जब श्री पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी तथा मि० जयसवालने इस विषय में आन्दोलन किया था तब जनता ने कोई विशेष ध्यान नहीं दिया था। घी-दूध की महगी से होने वाले कष्टों को जनता ने आज अनुभव किया है और उस के लिए, आन्दोलन हो रहा है—यह हर्ष की बात है। सेलम वालों का यह उद्योग सराहनीय है।

डिप्टीकलेक्टर को क़ैद

रांची (पटना) के एक डिपुटी कलैक्टर को २ वर्ष की क़ैद इस लिए हुई है क्योंकि फ़ौजी सिपाहियों के परिवारों के लिए दिए गये धन का उसने अनुचित उपयोग किया था। हाईकोर्ट ने उसकी अपील बर्खास्त करदी है।

हिन्दू संस्कार के अनुसार ईसाई कन्या से विवाह

कटक निवासी एक हिन्दू सज्जन ने जो वहां की लैजिस्लेटिव-कौन्सिल के मेम्बर भी हैं, अपनी पहिली [illegible] दू स्त्री को त्यागते हुये एक ईसा[illegible] से विवाह किया। यह विवाह [illegible] संस्कार के अनुसार हुआ था।

समाचार-संग्रह

जर्मनी की सेना वृद्धि के लिए अपील

'सानरेमो' में होने वाली सुप्रीम कौन्सिल में जर्मनी ने, अपने एक नोट द्वारा, सन्धि की शर्तों द्वारा सेना को कम करने वाले प्रस्ताव का स्थगित करने के लिए प्रार्थना करते हुये सेना-वृद्धि की आज्ञा मांगी है। फ्रान्स ने इसका कड़ा विरोध किया है।

जेरुसेलम में जांच के लिए कमीशन

जेरुसेलम में, पिछले दिनों में जो गड़बड़ हुई है, उस की जांच के लिए एक कमीशन बिठाया गया है जिस में ३ फ़ौजी और ३ ब्रिटिश सिविलियन होंगे।

लपीवा वकार

'सानरेमो' की सुप्रीम कौन्सिल में टर्की की सन्धि की शर्तों पर विचार करते हुए उस की जल सीमा-पर अधिकार करने की आज्ञा देदी है।

एनिमैल्ज़ फ्रेंड्ज़-सोसाइटी

फ़िरोज़पुर में इस नाम की एक सभा स्थापित हुई है जिस के मंत्री ला० भगतराम जी हैं। हमें इस सभा के उद्देश्यों की एक प्रति प्राप्त हुई है। इस सभा के ६ उद्देश्य हैं जिस में से मुख्य "प्राणियों की ओर मैत्री भाव और सुवर्ताव को बढ़ाना है।" ये भाव और यह उद्योग प्रशंसनीय है।

खिलाफ़त डेपुटेशन के प्रति फ्रान्स की पूर्ण सहायता

सेन्ट्रल-खिलाफत कमेटी बम्बई के सभापति मि० छोटानी के नाम मि० मुहम्मद-अली ने फ्रान्स से एक तार भेजा है जिस से पता लगता है कि वहां की जनता खिलाफ़त के मामले में, मुसलमानों और भारतीयों के साथ पूर्णतया सहमत है। वहां के कई सुप्रसिद्ध सज्जनों ने, अपने भाषणों में, कहा है कि "सम्पूर्ण संसार भारत का ऋणी है" और 'युद्ध में भारत ने जो सहायता फ्रान्स को दी है, उसी के लिए यह देश इतना कृतज्ञ है कि उसे और अपील करना व्यर्थ है।" फ्रान्स के प्रसिद्ध लेखक—'क्लाड फारिरि' तथा एक अन्य सज्जन ने भी भारत की आजन्म सेवा करने की प्रतिज्ञा की है। वस्तुतः, ये लक्षण शुभ हैं। यह डेपुटेशन अब फ्रान्स से लण्डन वापिस आ-गया है।

मि० हार्नीमेन का देश निकाला और मि० मान्टेगू

हाउस आव कामन्स में मि० स्पूर, कर्नल वेज़वुड आदि ने बिना परीक्षा के मि० हार्नीमेन को देश निकाला दे देने के विषय में एक प्रश्न पूछा, जिसका उत्तर देते हुये मि० मान्टेगू ने कहा कि "यह सारा मामला बम्बई के गवर्नर सर आर्जीलायड पर ही निर्भर करता है।" पायोनीयर भारत सचिव के इस उत्तर पर बड़ा प्रसन्न है। पर क्यों?

अमेरिका का टर्की के प्रति भाव

फ्रान्स ने टर्की की मांगों का जहां इतना हार्दिक स्वागत किया, वहां अमेरिका का भाव इस से सर्वथा विरुद्ध है। न्यूयार्क की २७ मार्च की यह ख़बर है कि राष्ट्रपति विल्सन ने टर्की विषयक पत्र में मित्र दल को यह लिखा है कि—"टर्की को यूरुप में रहने देना अनार्किको वहां रखने के बराबर है। सुल्तान को कान्सटेन्टिनोपल से अवश्य बाहर कर देना चाहिए।" क्या ये वही प्रेज़िडेन्ट विल्सन हैं जो प्रसिद्ध १४ बातों के लिए शान्ति-परिषद् में खड़े हुये थे?

शिमले में सिक्खों का डेपुटेशन

सर्दार सुन्दरसिंह मजीठिया, सर्दार योगेन्द्रसिंह आदि सिक्ख सज्जनों का बना हुआ एक डेपुटेशन गत २४ अप्रैल को सरविलियम मैरिस के पास गया। इसका उद्देश्य नई सुधार स्कीम के अनुसार बनने वाली कौन्सिल में सिक्खों के लिये पंजाब में अधिक स्थान प्राप्त करवाना था। डेपुटेशन ने अपनी चार मांगें सरविलियम के सन्मुख रक्खी। विलियम मैरिसने वायसराय तक उन्हें पहुंचाने का वचन दिया।

शिमले में छावनी डेपुटेशन

इसी सप्ताह जंगी-लाट के सम्मुख, नई अवस्थाओं के अनुसार, छावनियों में आवश्यक सुधार करवाने के लिए भारतीय सज्जनों का एक डेपुटेशन उपस्थित हुआ। डेपुटेशन ने ८ सुधार उपस्थित किये। जंगी-लाट-महोदय ने, सुधारों के साथ पूर्ण सहानुभूति-दिखाते हुये, उचित ध्यान देने का वचन दिया।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मन्दूलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिये छपा।

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल भी श्रद्धा को बुलाते हैं।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | २६ बैशाख सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० ७ मई सन् १९२० ई० | संख्या ३ भाग १

हृदयोद्गार

ईश-विनय

आ आंख की पट्टी को मेरी खोलदे,
मैं थक गया तू ही कहां खुद बोलदे।
बस हो चुका यह खेल मैं हारा सही,
अब तो निकल आ छिप रहा है क्यों कहीं ॥
मैं ढूंढता सब ओर हूं तुझको फिरा,
दर दर भटकता और गढ़ों में गिरा।
पर ऐ! खिलाड़ी कुछ पता तेरा नहीं,
मैं ढूंढ लूं यह हौसला मेरा नहीं ॥
मैंने सुना था तू खिलाड़ी है बड़ा,
पर आज ही तुझ से प्रथम पाला पड़ा।
कब तक करेगा और ये खिलवाड़ तू,
आ जल्द आ पर्दा पड़ा ये फाड़ तू ॥
जिससे कि मैं भी भर नज़र देखूं तुझे,
बस चाह बाकी है नहीं कोई मुझे।
आ आंख की पट्टी को मेरी खोलदे,
आनन्द की मिश्री मधुर सी घोलदे ॥

बागीश्वर

आनन्द—गीत

आनन्द घन! सदा हम आनन्द गीत गावें ॥
शिक्षा सुरम्य जल से, गुरुकुल पवित्र थल से,
आनन्दमयी को धोकर सच्चा प्रकाश पावें ॥ १ ॥
ब्रह्मचर्य उच्च पथ को—सुख शान्ति के सुरथ को,
पा कर के सम्पुनम्र प्रेम हमेश मद बहावें ॥ २ ॥
श्रद्धा सरस्वती में—गुरुजन चरन रती में,
उज्ज्वल सुमन सुमन को भगवन् सदा बहावें ॥ ३ ॥
धृति-शान्ति-सत्य-बल से विद्याविनीति दल से,
ज्ञान प्रकाश लेकर—अज्ञानतम भगावें ॥ ४ ॥
त्रैलोक्य से जो न्यारा हो वह स्वदेश प्यारा
श्री हरि, सदा उसी की सेवा में ध्यान लावें ॥ ५ ॥

पं० गयाप्रसाद (श्रीहरि)

विधाता विधना के अनुसार

सचेतन किया अचेतन चित्त, मिलाता अनमेलों से मित्त।
न अपने थे सो अपने मित्र, पाप बन जावे परम पवित्र !!
सभी में है सौन्दर्य अपार!
विधाता! विधना के अनुसार!
कौंपड़ी कभी हुई बरबाद, मिला बदले में ये महराब।
एक ही लेकिन चाल मनाब, नई बोतल में वही शराब !!
मान है दिल ही का दिलदार!
विधाता! विधना के अनुसार!
नयों में मिला पुराना तार, सभों को यद्यपि अलग कतार।
दिया तू ने मुझको टंकार, एक स्वर सब बोले झंकार !!
गुरू जी! वाह! वाह! बलिहारि!
विधाता! विधना के अनुसार!
नाव अब पहुंच गयी मँझधार, दृष्टि [illegible] है परली पार।
निहारे हम ज्योंही इस पार, वही [illegible] कि जो उस पार !!
वही नौका का खेवनहार,
विधाता! विधना के अनु[illegible]! *

नयन।

* अप्रकाशित "अर्चना" से उद्धृत।

चल रहे हैं। (*त्रयस्त्रिंशत् त्रिशताः षट् सहस्राः, सर्वान् देवान् स तपसा पिपर्ति*) सब— ३३+३३३+६३३३–देवों को वह (ब्रह्मचारी) तप से पूर्ण करता है।"

देव कौन हैं। "देवो दानाद्वा, दीपनाद्वा, द्योतनाद्वा, द्युस्थानो भवतीतिवा" दान देने से, प्रकाश करने से, उपदेश देने से (दूसरे के अन्दर चांदना करने से) और सब प्रकाशों की स्थिति का स्थान होने से देव कहाता है। पहिले दान देने वाले देव, दूसरे प्रकाश करने वाले सूर्यादि देव, तीसरे उपदेश में अन्दर चांदना देने वाले माता पिता और आचार्य देव और चौथे प्रकाशको की भी स्थिति का स्थान परमात्मा परमदेव है। देव समूह में अग्नि पृथिवी, वायु, अन्तरिक्ष, आदित्य, द्यौः, चन्द्रमा और नक्षत्र, आठ वसु कहलाते हैं क्योंकि सब पदार्थ इन्हीं में निवास करते हैं। दश प्राण और ११ वां जीवात्मा इस लिए रुद्र कहलाते है क्योंकि जब ये शरीर से निकलते हैं तो मृत के सम्बन्धियों को रुलाते हैं। संवत्सर के बारह महीने आदित्य कहलाते हैं क्योंकि ये आयु को क्षीण करते चले जाते हैं। ३१ ये और व्यापक विद्युत तथा यज्ञ सब मिला कर तैतीस देव समूह हैं। इन्हीं का विस्तार ३३३ और ६३३३ त[illegible] होता है। ये सब देव समूह और [illegible] देव, सब ब्रह्मचारी के पीछे [illegible] हैं—अर्थात् ब्रह्मचारी के स्वभावतः अनुकूल ये शक्तियां हो जाती हैं। उस के मार्ग में ये शक्तियां बाधक नहीं होती। और ब्रह्मचर्य

[illegible] लिए। जिस का बाय सुरक्षित [illegible] साथे की तेजमय अग्नि को मन्द कर देता है, जिस का शरीर तप से शुद्ध नहीं वह मल मूत्र के अनुचित त्याग से पृथिवी को गन्दा कर देता है, जिस का मन वश में नहीं वह वायु और अन्तरिक्ष को निर्मल करने की चेष्टा करता है और जो अविद्या का दास है उस से उठे हुए बादल सब प्रकाशमान पदार्थों को मन्द कर देते हैं।

अब्रह्मचारी से रुद्र पीड़ित और आदित्य दुखी रहते हैं। विद्वान और यज्ञ उस की जान को रोते हैं। परन्तु ब्रह्मचारी अपने तप से इन सब को उत्तेजित करता है। ब्रह्मचारी का क्रियात्मक उपदेश इन सब देवों को शान्त करके भरपूर कर देता है। दिन रात उलटे चलने के स्थान में सीधे चलने लगते हैं। ब्रह्मचारी का जीवन जगत की काया पलट देता है। ज्ञान गोष्ठी तो और भी महापुरुष करते थे परन्तु बुद्धदेव ने क्यों वाममार्ग के घोर बादलों को छिन्न भिन्न करके चिरस्थाई प्रभाव संसार पर छोड़ा। ईसा ने क्यों मसीह की पदवी पाई और उस के उपदेश ने क्यों सदियों तक करोड़ों को शान्ति का पाठ पढ़ाया। परन्तु इन सब से बढ़ कर प्राचीन काल में रामचन्द्र तथा सीता के जीवन ने क्यों ऐसा उच्च पद प्राप्त किया कि उन के जीवन की कथा के पाठ मात्र से अब तक जो पुरुष पवित्र जीवन लाभ करते हैं? और इस समय ऋषि

[illegible] कर के क्यों [illegible] कर शान्ति [illegible] ही है कि वे [illegible] शान्तियो३म्
[illegible] सन्यासी
[illegible] यता
[illegible] मनुष्यों को [illegible] भता सके उन्हें [illegible] लिए। श्रद्धा [illegible] की सेवा में तो [illegible] अग्रिम मूल्य [illegible] परन्तु जिन्हों ने [illegible] द्वारा पोछला अंक मांगा था उन को भी वी. पी. कर दिए गए थे। उस वेल्यूपेबल द्वारा भेजे हुए पत्रों में से कुछ इनकारी हाकर लौट आए हैं। कारण यह प्रतीत होता है कि कुछ मनुष्य ऐसे भी हैं जो अखबार वालों से छेड़ खानी करने के लिए ही वी. पी. की आज्ञा लिख भेजते हैं। ऐसे ठठोल बिगड़े दिलों को विशेष त्रास से बचाने के लिए, श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी की आज्ञानुसार, निश्चय कर लिया गया है कि आगे के लिए एक वर्ष या छः मास के लिए अगाऊ मूल्य पहुंच जाने पर नए ग्राहकों के नाम "श्रद्धा" का प्रवास हुआ करे, वी. पी. द्वारा पत्र किसी को भी न भेजा जाय।

श्रद्धा के नियम

भारत वर्ष के लिए

एक वर्ष के	३॥)
६ मास के	२)

६ मास से कम के लिए भेजने का नियम नहीं—

भारत भिन्न देशों से

एक वर्ष के लिए—	५)

विज्ञापन कोई भी नहीं लिया जायगा। केवल गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी की बिकाऊ पुस्तकों का सूचीपत्र अधिक से अधिक वर्ष में तीन बार दिया जासकेगा।

प्रबन्धकर्त्ता श्रद्धा
P. O. गुरुकुल कांगड़ी
(जिला बिजनौर)

श्रद्धा

ख़लाफ़त का प्रश्न

मातृ पूजा या हिजरत ?

ख़लाफ़त का प्रश्न इस समय सर्वोपरि प्रश्न हो रहा है। इस के नीचे और सब प्रश्न इस समय दब गए हैं। पंजाब के भीषण अत्याचार का तीव्र आन्दोलन भी इस के सामने मन्द पड़ गया है। यही अब भारत सन्तान के लिए सर्वोपरि प्रश्न बन रहा है।

महम्मदी मुसलमानों के लिए यह मज़हबी सवाल है। उन के विश्वास के अनुसार इसलाम का कोई ख़लीफ़ा अवश्य होना चाहिए। वह ख़लीफ़ा वर्तमान समय में सुलतान रूम हैं। मुसलमानों के पवित्र स्थान उसी ख़लीफ़ा की आधीनता में रहने चाहिए और उस की शक्ति ऐसी स्वतन्त्र होनी चाहिए कि विरोधी आक्रमणों से हाफ़ज़-अमान की रक्षा कर सके। जब युद्ध आरम्भ हुआ तो टर्की के, जर्मन दल के साथ, मिलने पर बृटिश सरकार की मुसलमान सेना ने उन के विरुद्ध लड़ने में पसोपेश किया। भारत के विचारशील तथा निडर मुसलमानों ने यह भी कहा था कि स्वभावतः उनकी सहानुभूति अपने हममज़हबों और अपने ख़लीफ़ा के साथ होगी। बृटिश प्रधान सचिव (मिस्टर लाइड जार्ज) ने अपनी वक्तृता द्वारा स्पष्ट शब्दों में कहा कि यह धर्म युद्ध नहीं। टर्की हमारे शत्रुओं के साथ बिना कारण मिल गया है इस लिए हम उसके साथ लड़ने के लिए बाधित हैं, अन्यथा मुसलमानों के पवित्र स्थान सुरक्षित रहेंगे और सुलतान रूम (टर्की) की वर्तमान राजसत्ता में कुछ भी भेद नहीं आवेगा।

मुसलमान सेना दिल खोल कर लड़ी। मिश्र की रक्षा और मिसेपोटामिया तथा पेलस्टाइन के विजय में उन्होंने बड़ा भाग लिया। बृटिश सरकार के मित्र दल का विजय हुआ और विजय की लूट के हिस्से बखरे का समय आया। उस समय भारत के ८ करोड़ मुसलमानों ने अपने प्रधान सचिव को उन की प्रतिज्ञा का स्मरण दिलाया। भारत सचिव (मिस्टर मांटेगू) महाराज बीकानेर, लार्ड सिंहा तथा सर आग़ा-ख़ां इत्यादि को लेकर पेरिस गए और मुसलमानों को निश्चय दिलाया कि इस सम्बन्ध में उन के साथ विश्वासघात न होगा। परन्तु ज्यों ज्यों दिन बीतते गए त्यों त्यों तौर बदलते गए। और अब जो निश्चय मित्र दल ने रोम में बैठ कर किया है और जहां तक उसका गंध बाहर निकला है उससे ज्ञात होता है कि बृटिश सरकार के दूसरे मित्र बृटिश प्रधान सचिव को प्रतिज्ञा हानि के लिए बाधित करके ही छोड़ेंगे।

इधर भी चिन्ता हुई कि अपने प्रधान सचिव को बाधित करना चाहिए कि वह अपनी प्रतिज्ञा का अवश्य पालन करें। इस के लिए निखिल भारत ख़लाफ़त कमिटि स्थापित हुई। इस की बुनियाद तो १७ अक्टूबर १९१[illegible] चुकी थी। दिल्ली में राज विद्रोह [illegible] के विरुद्ध क़ानून १७ अप्रैल को जारी हुआ [illegible] उसकी अवधि १६ अक्टूबर तक थी। १७ को ख़लाफ़त सभा का अधिवेशन दिल्ली के मलिकावाले बाग़ में बुलाया गया। बाग़ का आज्ञा लेने वाले डाक्टर अनसारी महाशय चाहते थे कि हड़ताल न हो। परन्तु जनता के अंदर जो लहर उमड़ आई हो उसे कौन रोक सकता है। सारे शहर में बेमिसाल हड़ताल हुई। हिंदू मुसलमान सब इस हड़ताल में शरीक थे। और शान्ति भी अनिर्वचनीय रही। शाम की सभा में ५० हज़ार की भीड़ थी। उस बड़े हजूम में मैने अपने मुसलमान भाइयों की वक्तृताएं सुनी उन के दोहराने की ज़रूरत नहीं। मैं स्वयं किसी स्थान विशेष की पवित्रता मानने वाला नहीं और न धर्म मार्ग में किसी ख़लीफ़ा की ज़रूरत समझता हूं। परन्तु प्रत्येक मनुष्य का अधिकार है कि धार्मिक विश्वासों की उसे स्वतन्त्रता मिले। मैने देखा कि मेरे मुसलमान भाइयों को इस मामले में दुःख है। मैने यही सोचा कि जब मेरे भाई दुखी हैं तो मैं उनके साथ रहता हुआ सुख कैसे भोग सकता हूं। यह एक बात थी। दूसरी बात यह थी कि बृटिश प्रधान सचिव की प्रतिज्ञा स्पष्ट थी। जब वह स्पष्ट प्रतिज्ञा टूट सकती है तो फिर किसी किस बात पर विश्वास किया जा सकेगा। तब तो पग पग पर विश्वासघात होंगे। इन विचारों से प्रेरित होकर मैंने सभा में बोलने की आज्ञा मांगी और कह दिया कि इस मामले में अपने शासकों को नौ करोड़ मुसलमान प्रजा का ही ध्यान नहीं रखना प्रत्युत २२ करोड़ हिन्दुओं को भी इनके साथ ही समझना होगा।

इसके पश्चात् आन्दोलन बढ़ता गया। महात्मा गांधी ने इस प्रश्न को अपने हाथ में लिया। दिल्ली में ख़लाफ़त कान्फ्रेंस हुई। महात्मा गांधी के साथ मैं भी दिल्ली में था। बहुत से और हिन्दू नेता शामिल थे। सर्व साधारण तो कोई बाहर न था। उस के पश्चात् ख़लाफ़त कमेटी और उसकी शाखाओं के बहुत जलसे हुए और सिवाय थोड़े से बाल की खाल उतारने वाले मुसलमानों और हिन्दुओं के भारत की सारी प्रजा एक ही स्वर अलापती रही। फिर मौलवी शौक़तअली और मुहम्मदअली छूट कर अमृतसर में आए और ख़लाफ़त कान्फ्रेंस में शरीक हुए। उन के आने पर यह जद्दोजहद ख़ूब जारी रहा—और अन्त को ख़लाफ़त डेपुटेशन इंगलिस्तान गया। बृटिश प्रधान सचिव ने उन से भेंट की परन्तु उत्तर संतोषजनक न दिया और अब जो मित्रदल की इटली वाली कान्फ्रेंस में फ़ैसला हुआ वह बड़ा ही असंतोषजनक और भयानक है। Mandate का मतलब क्या है? यह कि एक देश और उस में रहने वाली जाति एक दूसरी जाति के अधीन करदी गई। इनका छुटकारा चार जन्म में भी नहीं हुआ करता। "मिश्र" कहां गया और ऐसे ही अन्य देश कहां! फ्रांस सीरिया (Syria) को संभालेगा, बृटिश सरकार मेसोपटामिया, मौसल और पैलेस्टाइन पर अधिकार जमाए रक्खेगी। और आरमीनिया का कोई वाली वारिस नहीं बनता। इस के अतिरिक्त टर्की के साथ जो सलूक होगा वह तो देखा जायगा परन्तु यह सब तो साफ़ है। तुर्कों को यह उत्तर दिया जाता था कि तुर्क ज़ालिम थे इस लिए अरबों के अधीन मुसलमानों के पवित्र स्थान रक्खे जायगे। अब अरब वाले कहते हैं कि हमें भी स्वतन्त्रता चाहिए—हम आप के अधीन नहीं रहना चाहते। जब फ़ैसला विरुद्ध हो गया तो उस के पीछे जिस कार्यक्रम की घोषणा महात्मा गांधी की सम्मत्यानुसार हमारे मुसलमान भाइयों ने दी थी वह आरम्भ होना ही था। हिंदू—मुसलमान की एकता जान श्री हकीम अजमलखां साहब ने सरकार की दी हुई उपाधियां लौटा दी और भी लौटा रहे हैं। शायद आनरेरी [illegible] दों को भी ओहदेदार मुसलमान दूर ही से सलाम [illegible]। उसके पीछे यदि फिर भी बृटिश गवर्नमेन्ट [illegible] दल को सीधे रास्ते पर न लावेगी तो सिविल और मिलिटरी की नौकरियां भी क्रमशः छोड़ते जाय। इन कामों में शायद मुसलमान सब न शरीक हों, बहुत से रह भी जावें।

और इसी पर बृटिश गवर्नमेंट ने तकिया लगाया है। परन्तु एक बात तो निश्चित है कि यदि मुसलमानों के साथ विश्वासघात पक्का रहा तो फिर कोई मुसलमान भी सरकारी सेना में भरती होकर अपने सहधर्मियों के साथ लड़ने को तय्यार न होगा।

अवस्था भयानक है, परन्तु कर्त्तव्य भी कुछ वस्तु है। गुरुकुल के काम के बोझ के कारण मैं यहां से हिल नहीं सकता, इस लिये खिलाफत कमेटी के उप सभापति पद से त्यागपत्र दे दिया। परन्तु मेरी पूर्व प्रतिज्ञा तो वैसी ही बनी हुई है। प्रश्न होता है कि इस अवसर पर हिन्दू भाइयों को क्या करना चाहिये। मैं नहीं कह सकता वे क्या करेंगे परन्तु यह कह सकता हूं कि मैं क्या करूंगा जब मिस्टर महम्मदअली भी निराश होकर पेरिस से फ्रेंच गवर्नमेंट की सहानुभूति सुन कर आशाजनक समाचार भेजने बंद कर देंगे। परमेश्वर की कृपा से मैंने कोई ऐसा काम ही नहीं किया कि बृटिश गवर्नमेंट की ओर से मुझे कोई उपाधि मिलती — यदि मुझे कोई उपाधि मिली होती तो यह लिख कर लौटा देता कि जहां विश्वासघात है वहां की दी हुई उपाधि धारण करना आत्मा का अपमान करना है। यदि मुझे कोई आनरेरी चाकरी मिली होती तो उस से भी मुक्त होजाता—उसके मैं कभी योग्य ही नहीं समझा गया। सरकारी चाकरी का मुझे गौरव ही प्राप्त नहीं हुआ, नहीं तो उस दासता की सांकल को भी तोड़ डालता। हां मेरे वश में इतना ही है कि मैं इन दासताओं में भविष्य के लिए भी न फसूं। यहां तक तो मैं अपने मुसलमान भाइयों के साथ चलने को तय्यार था। परन्तु अब "हिजरत" का मामला जोश से सामने आरहा है। मौलाना शौकतअली और अन्य मुसलमान बुजुर्गों ने फतवा दिया है कि जब मजहब खतरे में हो तो उसकी हिफाज़त के दो ही तरीके हैं। अगर ताकत हो तो "जिहाद" नहीं तो "हिजरत"। सो जिहाद की ताकत नहीं इस लिए हिजरत। यहां मेरे लिए विचारणीय विषय हो जाता है। मैं जिहाद को सांसारिक हथियार और हिंसा रूपी अधर्म का सहायक समझकर धर्म नहीं समझता, परंतु उसका तो मौका ही नहीं। परन्तु क्या "हिजरत" ठीक भी है? संस्कृत कवि ने जो पैरों के मर्म को जानता था, कहा है—"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" और उस शायर ने [illegible] के मुसलमानों से कम देशदार न था, [illegible]—"हुब्बे वतन अज़ मुल्के सुलैमां खुशतर। खारे वतन अज़ सम्बुले रैहां खुशतर ॥ यूसुफ़ कि बमिस्र पादशाही मी कर्द मी गुफ्त गदा बूदने कनआं खुशतर ॥" मिश्र देश का सम्राट होते हुए जब यूसुफ़ अपनी जन्म भूमि में भिखारी बनकर रहना उससे उत्तम समझता है तो इसमें कुछ रहस्य अवश्य है। मैं अपने मुसलमान भाइयों से विनय तथा प्रेम-पूर्वक निवेदन करता हूं कि वह अपने इस फैसले में जलदी न करें। मैं जानता हूं कि सब मुसलमान और हिन्दू एक दम सरकारी नौकरी न छोड़ देंगे, और जो छोड़ना चाहेंगे उन्हें भी शायद कष्ट दिया जाय, परन्तु इसमें संदेह नहीं कि आगे के लिए तो भरती बन्द होगी। यदि फिर भी बृटिश गवर्नमेंट की आंखें न खुलें तो क्या करना चाहिये? क्या यहां से बाहर जाकर हम कुछ भी कर सकेंगे? सच है और साहब [illegible] दे रहे हैं परंतु यदि नेताओं [illegible] न करोड़ मनुष्य उठ दौड़े तो उनका पालन पोषण कौन करेगा। और जब भारतमाता के सुपुत्र बाहर गए तो उसके आंसू पोंछने वाला कौन रहेगा? मेरे भाइयो! भागना कायरों का काम है। हम यहां ही रहेंगे, यहां ही जिएंगे और इसी पवित्र भूमि में माता की सेवा करते हुए प्राण त्यागेंगे। यहां से "हिजरत" के स्थान में यहां ही शहीद बनेंगे और अपने सहन और अपने तप से गोरी जातियों के कठोर हृदयों को भी ऐसा पिघला देंगे, कि उन्हें भारत के एक एक बच्चे से दीन प्रार्थना करनी पड़े, और बृटिश गवर्नमेंट के प्रतिनिधि यह कहने के लिये मजबूर रहें कि—'उठो भारत के सच्चे पुत्रो और उस की सच्ची पुत्रियो! अपनी अमानत को संभालो क्योंकि हम अब अमानत में खयानत नहीं करना चाहते!'

महात्मा गांधी स्वराज्य सभा में

यह समाचार मैंने बड़ी प्रसन्नता से सुना है कि महात्मा गांधी जी ने निखिल भारतीय-स्वराज्य सभा का प्रधान पद स्वीकार कर लिया है। यह संतोष की बात है कि जो मित्र उन्हें इस महत्व के काम से रोकते थे उनको कृतकार्यता नहीं हुई। इसी में देश का कल्याण है। महात्मा गांधी ने अब तक किसी संगठन में मिलकर काम नहीं किया। सत्याग्रह सभा में तो मानो वह प्रजातंत्र सत्ता (Democracy) में अकेले अधीश्वर (Despot) थे। आज इंडिया होमरूल-लीग में उन्हें अपनी सभा के सभ्यों का बहुपक्ष अपने साथ लेना होगा। अमृतसर में जब एक प्रस्ताव का संशोधन अन्तरङ्ग सभा में स्वीकार होने पर महात्मा जी ने कांग्रेस से अलग होकर अपने मत के प्रचार का संकल्प किया था, उसी समय मैंने उन से स्पष्ट कह दिया था कि संस्था में रहकर सुधार का प्रयत्न करना और यदि अपना संशोधन गिर जाय तो बहुपक्ष के आगे शिर झुकाना प्रत्येक नेता का कर्त्तव्य है। हां, यदि ऐसा बहुपक्ष उसके माने हुए किसी मूल सिद्धान्त का बाधक होकर आत्मा के विरुद्ध हो तो उस सभा का विरोध न करते हुए उस से अलग होजाना चाहिये। अब मुझे संतोष है कि महात्मा जी संघटन के साथ होने के कारण बिना अपनी सभा की सम्मति के किसी प्रकार के भी घोषणा पत्र न निकाला करेंगे।

भारत में महात्मा गांधी पहिले नेता हैं जिन पर सारी प्रजा का विश्वास है। अन्य समयों और देशों में भी कोई विरले ही ऐसे उच्च आत्मा हुए हैं। नेता का काम सचाई और धर्म की ओर जाति को ले चलना है और इस के लिए गांधी जी का जीवन है। मुझे विश्वास है कि अपनी लीग को सीधे मार्ग पर ले चलने में वह कामियाब होंगे। परन्तु यदि किसी मुख्य विषय पर उन्हें आत्म-साक्षी न मिलेगी तो भारत के कुछेक वर्तमान नेताओं की तरह प्रधान पद से चिमटे नेतृत्व को स्थिर रखने के लिए वह आत्म घात न करेंगे प्रत्युत प्रसन्नता के साथ संस्था से जुदा होकर के [illegible] की आंखें खोल देंगे।

और इस विषय में महात्मा गांधी जी को उस ऋषि के जीवन से उपदेश मिल सकता है जिसे उन्होंने (Intolarant) असहिष्णु की उपाधि दी है। जम्मू के महाराजा ने ऋषि दयानन्द को अपने राज में धर्म प्रचार के लिए निमन्त्रण देते हुए यह शर्त लगाई कि मूर्त्ति पूजा का खण्डन न करें। उत्तर मिला कि महाराजा चाहे मुझे न बुलावें परन्तु यदि मैं गया तो पहला व्याख्यान मूर्त्तिपूजा के खण्डन पर ही होगा क्योंकि मैं भारत की गिरावट का एक बड़ा कारण इसे समझता हूं। महाराणा उदयपुर ने निवेदन किया कि मूर्त्तिपूजन का राजनीत्यानुसार खण्डन न कीजिए। आप एकलिङ्गेश्वर के मन्दिर के महन्त बन जाइए, सारी रियासत वहां के ही अधीन है। उत्तर मिला—'तुम मुझे तुच्छ लालच देकर महान् ईश्वर की आज्ञा भङ्ग कराना चाहते हो। यह छोटी सी रियासत (और उसके मन्दिर) जिस से मैं एक दौड़ लगा कर बाहर जा सकता हूं मुझे कभी भी वेद और ईश्वर की आज्ञा तोड़ने के लिए बाधित नहीं कर सकती।" मुझे विश्वास है कि महात्मा गांधी के शासन में जातीय स्वराज्य-

सभा कुटिल राजनीति का उलंघन करके सत्य और धर्म को ही देश और जाति का कवच बनाने में कृतकार्य होगी।

दिल्ली में फिर निरोध की तय्यारी

राज विद्रोही सभाओं के विरुद्ध फिर दिल्ली में घोषणा पत्र निकला है। क्या चलते चलते यह ठोंकर आनरेबल मिस्टर बैरन लगा गए हैं। गत वर्ष के विप्लव में बैरन साहब ने [मेरी सम्मति में] बड़ी उत्तम नीति से काम लिया था। ओडवायर के साथी [illegible] सब इसी लिए उनसे अप्रसन्न थे; विशेषतः इस लिए कि मैंने मिस्टर बैरन की प्रशंसा की थी। बैरन साहब हैं बहुत अच्छे परंतु अच्छाई के साथ जो निर्बलता का सम्बन्ध है वह उन में भी है। राजनैतिक नेता चाहे कुछ कहें परंतु मैं जानता हूं और लिखूंगा कि लार्ड चेम्सफोर्ड का दिल भी बुरा नहीं; अच्छा है। परतु जिस प्रकार अन्य शक्तियां उन्हें स्वतंत्रता से काम नहीं करने देतीं उसी प्रकार बैरन साहब को भी गोरेशाही विरोध ने दबा लिया था। इसी लिए पिछले दिनों वह मुझ से मिलते घबराते थे। मेरी शुभ इच्छा यह है कि मिस्टर बैरन जहां शारीरिक स्वास्थ्य को ठीक कर के लौटें वहां अपने आत्मा को भी दृढ़ करें। अपने पद पर आवें जिस से अपने आत्मा के अनुकूल काम करते हुए उनका हृदय डांवाडोल न हो।

श्रद्धानन्द सन्यासी

पुस्तक समालोचना

कविता कुसुमांजलि (द्वितीयांजलि)—गुरुकुल वाग्वर्धिनी सभा की ओर से प्रतिवर्ष, इस कुल के वार्षिकोत्सव पर, उन सब कविताओं का पुन पुस्तक रूप में मुद्रित किया जाता है जो गुरुकुल के ब्रह्मचारियों की साल भर की कल्पनाओं का परिणाम हो। गुरुकुल के गत वार्षिकोत्सव के समय ऊपर लिखित पुस्तक मुद्रित हुई थी। इस बार आने की पुस्तक में ईश प्रार्थना, सत्याग्रह, त्योहार, हिन्दी भाषा, गुरुकुल जन्मोत्सव, प्रकृति वर्णन, महा पुरुषों के गुणगान—सभी विषयों पर मन लगाया है। नमूने के लिए *ओस* का वर्णन लीजिए—"दिन रात अनन्त में वास करे, नभ से इस भूतल को निहारा। निरखे सब और सदागति में सत कर्म किये अपवर्ग क्यों पाया। जब शीत बड़ी वसुधातल में इस का निज को इक हेतु बनाया। पर आज धरा पर आ उतरा चक के तब *ओस* का बिन्दु कहाया" फिर महात्मा गांधी की प्रशंसा में से एक पद—"हे तुम्हारी प्रेम बीन, हुआ यश उसी में लीन, तुम्हारे राग में ही बस दिया सभी भुलायो। तोरि सेवा करन मातु एक वीर आयो॥" विशेष उद्धरण देने से फिर पुस्तक खरीदने का चाव ही दूर हो जायगा इस लिए इतने पर ही बस है। मिलने का पता—प्रबन्धकर्ता कार्यालय गुरुकुल-कांगड़ी जिला बिजनौर

प्राचीन भारत में स्वराज्य—श्री धर्मदत्त विद्यालंकार सिद्धान्त [illegible] मूल्य १॥)—गुरुकुलीय साहित्य परिषद् की ओर से प्रकाशित—मिलने का पता—कार्यालय गुरुकुल—कांगड़ी पोस्ट (जिला बिजनौर)।

इस पुस्तक में विस्तार पूर्वक यह सिद्ध किया गया है कि प्राचीन भारत में प्रजातन्त्रराज्य के मर्म से लोग अभिज्ञ थे। वेद, ब्राह्मण, चाणक्यनीति, महाभारत और अन्य प्रमाणों से सिद्ध किया है कि प्राचीन भारत में राजा के अधिकार ज़ार रूस और जर्मन कैसर की तरह के न थे। राजा के कर्त्तव्यों पर अधिक बल था, अधिकारों पर नहीं। राजा और राजसभा के सभ्यों को धर्म के शासन में ही रहना पड़ता था। राजा स्वेच्छाचारी न हो सकता था। आज कल जो खुशामदियों ने यह सिद्ध करना शुरू किया है कि प्राचीन भारत में राजा परमेश्वर का अवतार माना जाता था, इस अन्धी दन्त-कथा का खण्डन बड़ी उत्तम रीति से किया गया है और दिखलाया है कि वास्तव में राजा वही है जो प्रजा का पितावत् पालन करे। अन्यथा धर्मात्मा ब्राह्मणों और संन्यासियों के आगे राजा को झुकना पड़ता था। अपने धर्म से गिरने पर राजा गद्दी से उतार दिया जाता था—यथा नहुष, सुदास, यवन, सुमुख, निमि आदि। राजा प्रजा की सेवा के लिए होता था और यदि उस के राज में अधर्म होता था तो वही उत्तरदाता समझा जाता था। प्राचीन आर्यग्रन्थों के अतिरिक्त पश्चिमीय विचारकों के ग्रन्थों के भी प्रमाण दिए हैं और मद्रास में रहते हुए ग्रन्थकर्ता ने वहां इस विषय में स्वतन्त्र खोज की है।

यह पुस्तक बड़े महत्व की तय्यार हुई है। हमारे इस समय आर्यभाषा (हिन्दी) में इस विषय की ऐसी खोज पूर्ण पुस्तक नहीं लिखी गई। प्रत्येक भारत निवासी के गृह में ऐसी पुस्तक रहनी चाहिए। गुरुकुलीय साहित्य परिषद् ने ऐसे ग्रन्थ छपवा कर देश का बड़ा उपकार आरम्भ किया है।

बीहड़ मार्ग

(लेखक श्रीयुत-शर्मन्)

(१)

तुम यहां कहां? तुम इस जंगल में कहा आ भटके? तुम ठण्डी सड़क पर सैर करने वाले, सदा मोटरकार पर चढ़े रहने की इच्छा रखने वाले, तुम इस कीचकन्टकाकीर्ण मार्ग पर पैदल फिर रहे हो?। यहां तो रास्ते के दोनों ओर चाट की दुकानें नहीं लगी हैं, तुम्हारा जी बहलाने को एक भी मानव प्राणी दृष्टिगोचर नहीं है, यहां क्या खाओगे? किस सेज पर सोओगे? तुम से यहां कैसे रहते बनेगा। यहां तो वन्य जीवों की चिंघाड़ तुम्हें भयाकुल कर देगी। जाओ भाई, प्यारे भाई! उसी अपने स्थान पर लौट जाओ। इस मुसीबत में कहां आफंसे हो।

× × × × ×

यह सच है कि तुम्हारा चैन का रास्ता कभी कभी अपने छिपे हुए दांतों से तुम्हें डस लेता है और तब तुम झुंझला कर सब छोड़ इस 'बेहड़ मार्ग' पर चलने की जी में ठान कर यहां आजाते हो। परन्तु इस मार्ग की कठिन चढ़ाई में शायद अब तुम उस डसने की सब पीड़ा भूल चुके होगे और अब वहां के आनन्द बार २ याद आते होंगे। [illegible] लिए अपने को अब अधिक कष्ट न [illegible] जाओ और चैन करो। अभी तुम्हें [illegible] राह पर चलने का समय नहीं आया है। अभी बहुत देर है। अन्त में जब जब कि ये विष भरे दंश तुम्हें हर समय डसते हुए मालूम होने लगेंगे,

जब कि वहां के भरे हुवे बाजार तुम्हें सुनसान श्मशान की न्याई दीखने लगेंगे, जब कि वहां की मधुर तानें तुम्हारे कान को चुभने लगेंगी और वहां का हर-एक भोजन कड़वा लगने लगेगा, उस समय इस मार्ग को स्मरण करना। तुम्हारे उस विचित्र दुःख के समय में यह मार्ग तुम्हें अपनी शरण में लेगा और तुम्हें एक अननुभूत पूर्व आनन्द की ओर लेजायगा। अभी वह समय दूर है।

(२)

लोगों को पेरचार कर यहां मत लाओ। यह उचित नहीं। इस से कुछ फ़ायदा नहीं। क्षण भर के लिये कुछ समझा कर उन की आन्तरिक इच्छा के विरुद्ध उन्हें अपने आनन्दों से वियुक्त मत कर डालो। यह पाप है। जिसने आना है, वह स्वयं आजायगा—वह टोकने से भी रुक नहीं सकता।

× × × × ×

तुम लोगों को क्यों पेरचार कर लाते हो? शायद तुम इस मार्ग की शुष्कता से अब तक आजाते हो तो यह सोचकर कि "नीचे से साथिओं को लाकर आनन्द से यह रास्ता काटेंगे" नीचे चले जाते हो। यह भूल जाते हो कि यह मार्ग मित्रों से गप्पें मारते हुवे तय करने का नहीं है। यह तो बड़े ध्यान पूर्वक, जप तप करते हुए, बिलकुल अकेले चुप चाप चलने का मार्ग है। यदि चढ़ाई से थक गये हो तो अच्छा है कि यहीं बैठ जाओ और विश्राम करलो, न कि किसी बहाने से नीचे उतर आओ। यहीं पर नवजीवन भरने वाले ठंडी पवन के झोंके तुम्हें थकावट रहित करेंगे और शीघ्र ही आगे बढ़ने को तरोताज़ा बनादेंगे।

× × × × ×

अब तुम स्वयं आगे नहीं चल सकते, तो नये साथियों को [illegible] चलाओगे। इस लिए भाई! लो[illegible] पेरचार कर मत लाओ—उन्हें सु[illegible] दुःख में मत डालो। इस से क्या कोई फायदा है। इस स्थान पर जन संख्या बढ़ने से उन्नति नहीं होती है। जिसने आना है वह ज़रा से इशारे से ही आजायगा—वह कष्ट के भय दिखाने से भी रुक नहीं सकता।

(३)

जिन्हें भूख सता रही है उन्हें तुम कहते हो कि वे भोजन त्याग दें और ईश्वर भजन करें। जो प्यास से व्याकुल हैं उन्हें तुम विरक्त होने का उपदेश देते हो। तब यदि वे तुम्हारी बात नहीं समझते इस में आश्चर्य ही क्या है? तब वे तुम्हें Idealistic या पागल कह के तुम्हारी बात का तिरस्कार करते हैं इस में विस्मय क्या?

× × × × ×

[illegible]न्हें स्वयं भोजन की ज़रूरत [illegible] है तो अपनी थाली भी उन्हीं के आगे रख दो।

इसी में दोनों का—वस्तुतः दोनों का—कल्याण है। जिसने तुम्हारा कल्याण किया है वही उनका भी कल्याण कर रहा है और करेगा। वही उन्हें राह दिखायगा। उसे सब की समान फ़िकर है।

भला शहर की गली को बिना समाप्त किये कोई जंगल की पगडंडी पर कैसे पहुंच सकता है।

(४)

जब कभी मैं इस बीहड़ मार्ग की तरफ़ आता हूं तो वहां के लोग "आओ-कमाने" कह कर कोई मेरा स्वागत नहीं करते और नाहीं आक्षेप करने के लिये दौड़े आते हैं—किन्तु वे सब अलग अलग अपने २ ध्यान में निरपेक्ष हो बैठे रहते हैं।

उन्हें मेरी अपेक्षा नहीं है। सच तो यह है कि इस 'उच्चपथ' ने हमारा स्वागत नहीं करना—किन्तु हमें ही इस के चरणों में सिर झुकाना और पूजा करनी है।

यहां पर नये आगन्तुक को रिझाने के लिये उसकी शुरू में कोई ख़ातिर तवज्जो नहीं की जाती, और नाहीं कुछ दिनों उस से आनन्द लेने के बाद उसे कूड़ा कर त्याग दिया जाता है। किन्तु यहां प्रविष्ट आत्मा ज्यों ज्यों इस नीरस शून्य स्थान में रहता है त्यों त्यों उसका पवित्र माधुर्यमय रूप उस के लिये दिनों दिन अधिक २ प्रकट होता जाता है। उसे अपनाता जाता है।

× × × × ×

इस लिए मेरे भाई लोगो! स्मरण रखना कि यह दुर्गम पथ कभी हमें बुलाने के लिये नहीं आयेगा किन्तु हमें ही स्वयं वह जाना होगा तो इस के मूल्य को समझ कर चिर शान्ति पाने के लिए सत्कार पूर्वक इस के आश्रम में जाना होगा।

—:०:—

गुरुकुल जगत्

गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ

समाचार

ऋतु

यहां की ऋतु गुण कर्म से क्षत्रिय है। गर्मियों में खूब गर्मी, सर्दियों में खूब सर्दी शरीर को तप से सिद्ध करने वाली ऋतु यही है। इन दिनों गर्मी यौवन पर है। ज़ोर की लूएं अभी प्रारम्भ नहीं हुईं पर आकाश खूब तपता है।

पानी

ऐसे गर्म दिनों और गर्म स्थान में पानी ही अमृत और पानी ही जीवन है। बावड़ी चश्मा दोनों ही इस समय खूब पानी दे रहे हैं। ब्रह्मचारियों को दोनों समय स्नान का अवसर खूब मिलता है। पीने का पानी भी पर्याप्त राशि में आता रहता है। जल का किसी प्रकार का कष्ट आज कल नहीं है।

कुआ

इस प्रसंग में यह समाचार सुन कर गुरुकुल प्रेमी प्रसन्न होंगे कि एक नया कुआ क्रीडाक्षेत्रों के पास तय्यार हो रहा है। यह कुआ जब तय्यार हो जायगा तो जहां पीने के लिए पानी की कमी कभी न होगी, वहां शाक भाजी की क्यारियें लगाने में भी बड़ी मदद मिलेगी। कुए का काम जारी है। पथरीली जगह होने के कारण पता नहीं कितना रुपया लग जाए, और कितने समय में बने, पर यह निश्चित है कि यथा सम्भव शीघ्र ही इसके पूरा करने का यत्न किया जायगा।

पढ़ाई

पठन पाठन का समय बदल दिया गया है। पढ़ाई प्रातःकाल प्रारम्भ होकर दोपहर तक समाप्त होजाती है- शाम को पढ़ाई नहीं होती। १२ बजे से शाम के ४ बजे तक छोटे ब्रह्मचारियों को धूप से रक्षा करने के लिए यह परिवर्तन आवश्यक था। अब उन्हें कमरों से बाहिर नहीं आना पड़ता।

स्वास्थ्य

साधारणतया स्वास्थ्य उत्तम है -केवल अधिक गर्मी होने से वह ब्रह्मचारी जो नये होने के कारण यहां की जल वायु के अभ्यस्त नहीं हैं, कुछ घबराहट अनुभव करते हैं—और कभी २ रोगी हो जाते हैं। नये जल वायु का इतना प्रभाव अवश्य ही होता है। एक साल में जल वायु और ऋतु शरीर को अपने ढंग पर ढाल लेते हैं। यही कारण है कि पहले वर्ष ब्रह्मचारियों को कुछ अधिक शारीरिक कष्ट होता है।

इमारत का काम

आस पास के ग्रामों में आज कल शादियां इस प्रकार हो रही हैं, मानो फिर दो चार सदी तक विवाह का अवसर ही न आयगा। इस कारण मजदूर नहीं मिलते। अभी दस बारह रोज़ तक यही चक्कर जारी रहेगा। आशा है कि उसके पीछे इमारत का काम अच्छी प्रकार जारी हो सकेगा।

गुरुकुल-गोशाला

गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ में सब से असन्तोष जनक चीज़ गोशाला है। गोशाला में इस समय लगभग तीस जानवर हैं, परन्तु न उन के बांधने का स्थान है और न चारों ओर कोई बाड़ है। एक आर्य संस्था में गोशाला एक दर्शनीय और आदर्श योग्य मकान होना चाहिये, पर अभी तक गोशाला के लिए कोई विशेष दान न मिलने से टूटी फूटी झोंपड़ी में पशुओं को बांधना पड़ता है। थोड़े से थोड़ा धन व्यय करें तो गोशाला के लिए ५०००) की आवश्यकता है। यों तो गोशाला के लिए एक दानी ही इतनी रकम दे सकता है, पर यह कोई आवश्यक नहीं कि उस दानी का मुंह देखा जाय। उचित है कि सब आर्यपुरुष अपने दान का थोड़ा २ हिस्सा गोशाला के विशेष चन्दे के लिए जुदा कर छोड़ें और एक साल भर में गुरुकुल के अधिकारियों से यह कहने के योग्य तो हो जांय कि हमने ५०००) पूरा कर दिया है गोशाला की इमारत दिखाओ।

इन्द्र

संसार समाचार पर
टिप्पणी

आयरलैण्ड के प्रति ब्रिटिश नीति में परिवर्तन

लण्डन का 'क्रोनिकल' कहता है कि ब्रिटेन ने आयरलैण्ड के प्रति नई नीति का अवलम्बन निश्चित किया है। जिस के अनुसार अब वहां पर केवल हत्या के अपराध में ही पकड़ हुआ करेगी तथा और भी कई छोटी २ अड़चनें दूर कर दी जावेंगी। पिछले दिनों ब्रिटेन ने जिस दमन नीति का आयरलैण्ड में प्रयोग किया था और जिस के कारण वहां घोर अशान्ति और उपद्रव हुआ था उस से प्रतीत होता है, सरकार को उ[illegible] विश्वास नहीं रहा। यह भूल स[illegible] अब मालूम हुई है। परन्तु क्या "मोर्ले सरकार" वर्तमान आन्दोलन से, कोई शिक्षा न लेगी? सरकार को यह भूल मान लेनी चाहिये कि ब्रिटिश सम्मान Prestige दमन नीति पर अवलम्बन है!

रेलवे दुर्घटना

गत २७ अप्रैल को मुरादाबाद स्टेशन से आगे, 'कन्ध और सेना सिवादा' के बीच में इलाहाबाद से देहरादून एक्सप्रेस का एक मालगाड़ी से भयंकर टाकरा होगया। जिस से, कहते हैं कि बहुत नर हत्या हुई है इसी गाड़ी में तीन बरातें भी जा रही थीं जिन में से केवल ७ आदमी बचे हैं। लीडर में प्रकाशित एक मुरादाबाद के संवाददाता के अनुसार कम से कम ५०० मरे और १०० घायल हुए हैं। परन्तु यह बड़ी विचित्र बात है। अपनी विजय और अपना सम्मान रखने के लिए युद्ध में मरे हुए और घायलों की संख्या को कम प्रकाशित करना, यदि आज कल की सभ्यता के अनुसार, हम क्षन्तव्य भी मान लें परन्तु जहां मामला घर का है और जहां प्रतिपक्षी कोई ऐसा शत्रु नहीं है जिसे अपनी विजय दिखानी हो। वहां पर भी चुप रहना और मृत्यु संख्या को कम करके प्रकाशित करना—किसी भी प्रकार से संगत नहीं है। हमारा आश्चर्य और भी अधिक बढ़ जाता है जब कि हम यह सुनते हैं कि रेलवे अधिकारियों की ओर से घायलों की सेवा का कोई विशेष प्रबन्ध नहीं था और यात्रियों से उनका अत्यन्त असहानुभूति पूर्ण व्यवहार था।

चीन के विद्यार्थियों की हड़ताल सरकार का विरोध

जो लोग यह समझते हैं कि चीन सोया हुआ है, उन्हें अब अपना यह भ्रम दूर कर देना चाहिए क्योंकि वहां पर भी वे सब चिन्ह अब प्रकट हो रहे हैं जिन्हें वर्तमान-सभ्यता के अनुसार, जागृति के चिन्ह कहा जाता है। समाचार आया है कि "शांघाई" के 'नैशनल स्टूडैन्ट्स फैडरेशन' ने अपनी सरकार को धमकी देते हुए आखिरी बात कह दी है कि यदि वह जापान से "शांतुङ्ग" के विषय में जितनी गुप्त सन्धियां की हैं उन्हें प्रकाशित नहीं करेगी तो वे सब हड़ताल कर देंगे। परिणाम यह है कि २० हज़ार विद्यार्थियों ने हड़ताल कर दी है। इतना ही नहीं, फौज से इनकी मुठभेड़ भी हो गई जिस से बारूद घर के ५ हज़ार आदमियों ने हड़ताल कर दी। हम तो यह समझते हैं कि अन्ध-कोश में फंसे हुए नवयुवकों का, अपने विद्याध्ययन की ओर ध्यान न देते हुए, इस प्रकार देश में उत्पात मचाना अत्यन्त हानिकारक है।

पंजाब में मृत्यु संख्या

१० अप्रैल को समाप्त होने वाले सप्ताह के अन्दर पंजाब के ३२ बड़े २ म्युनिसिपल शहरों में कुल जन्म संख्या ८२० और मृत्यु संख्या ८२८ थी जिसका स्पष्ट अभिप्राय यह है कि जन्म की अपेक्षा मौत अधिक होती है। ये चिन्ह अच्छे नहीं हैं। पंजाबियों को अपनी उस वीरता और स्वास्थ्य का ख्याल करना चाहिए जिस के कारण वे इस देश में प्रसिद्ध हैं। यह दशा ब्रह्मचर्य के अभाव की ही द्योतक है।

कौंसिलों में स्नातकों के प्रतिनिधि सरकार का विरोध

गत १९ वैशाख या ३० अप्रैल को महाविद्यालय आश्रम में, श्री० पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी अध्यक्षता में स्नातकों तथा उप स्नातकों की एक सभा हुई जिस में, सर्व सम्मति से, निम्नलिखित प्रस्ताव पास हुआ—

"गुरुकुलों और अन्य जातीय संस्थाओं में चरित्र गठन पर जो बल दिया जाता है, उसे दृष्टि [illegible] रखती हुई स्नातकों और उप स्ना[illegible] यह सभा सरकार के इस कार्य पर [illegible] और असन्तोष प्रकट करती है कि उसने जातीय संस्थाओं के स्नातकों को नई कौन्सिलों के सभासद चुनने के लिये सम्मति का अधिकार नहीं दिया है।

सभा, *भारत मन्त्री* से इस अन्याय को दूर करने की प्रार्थना करती हुई, माननीय मि० *पटेल* से इस मांग को भारत जनता तथा पार्लियामेण्ट के सन्मुख रखने के लिए निवेदन करती है। प० सत्यदेव जी विद्यालंकार ने इस प्रस्ताव को उपस्थित किया, पं० दीनानाथ जी सिद्धान्तालंकार ने अनुमोदन तथा प्र० धर्मदेव और रामगोपाल ने समर्थन किया हम आशा करते हैं कि गुरुकुल का स्नातक मण्डल तथा आर्यजनता इस विषय में उचित आन्दोलन करने में कोई कसर नहीं छोड़ेगी।

'सेनरिमो' कान्फ्रेंस में भारतीयों का निबटारा

मि० लायडजार्ज ने, हाउस आफ कामन्स में, व्याख्यान देते हुए कहा है कि सोरिया, पर शासनाधिकार (Mandate) फ्रान्स को; मेसोपोटामिया, मोसुल और पैलेस्टाईन पर ब्रिटेन को दिया गया है और आरमीनिया लेने के लिए अमेरिका से विशेष प्रार्थना की जावेगी। हम समझते हैं कि मित्र दल में स्वार्थ का भाव बहुत ज़ोर से काम कर रहा है। उनका यह काम किसी भी अंश में न्याय सगत नहीं है। मित्र दल ने सदा अपने आप को "अधिकार, स्वाधीनता और स्वतन्त्रता" के लिए लड़ने वाला कहा है। इतना ही नहीं। युद्ध के बाद भी, "लीग आफ़ नेशन" को स्थापित करते समय, इसी प्रकार उद्घोषणायें दी गई थीं परन्तु हम देखते हैं कि "शासनाधिकार" (Mandate) की आड़ में मित्र दल अपना स्वार्थ सिद्ध कर रहा है। हम नहीं समझते कि फ्रान्स, ब्रिटेन इटली और अमेरिका को क्या अधिकार है कि वह वहां के निवासियों की बिना सहमति के उनके भाग्यों के वारे न्यारे कर दे। पर सच तो यह है कि "कुरी कस्यास्ति वो इदम्"।

बा० ज्योतिस्वरूप का स्वर्गवास

हमें यह समाचार सुन कर हार्दिक खेद हुआ है कि देहरादून के वकील और प्रसिद्ध आर्य सामाजिक नेता श्री० बा० ज्योतिस्वरूप जी १९६५(?) का १ मई के दिन स्वर्गवास हो गया। आपने अपने प्रबन्ध से देहरादून में एक 'आर्य्य-पुत्री पाठशाला' खुलवाई हुई थी और आप समाज के अन्य कामों में भी हिस्सा लेते थे। आप बहुत दिन तक आनरेरी मैजि[illegible] भी रहे थे। हम आप के सम्बन्धियों [illegible] हार्दिक सहानुभूति प्रकट करते [illegible] परमात्मा बाबू साहब की आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

समाचार-संग्रह

अमेरिका में कागज़ की कमी

केवल भारत में नहीं अपितु सारे संसार में कागज़ की कमी हो रही है। अभी हाल ही में, "इवनिङ्ग्स[illegible]" नाम के एक प्रसिद्ध अमेरिकन दैनिक पत्र को इसी कमी के कारण एक दिन का अंक बन्द करना पड़ा। हिसाब लगाया गया है कि इस के कारण उसे एक मिलियन डालर का घाटा हुआ जो कि केवल इश्तिहारों से ही आता था।

१३० वर्ष की आयु का एक साधु

पानीपत के एक संवाददाता ने कलकत्ते की बाज़ार पत्रिका को यह समाचार भेजा है कि—"स्वामी सच्चिदानन्द, जो कि "कालाकम्बली-बाबा" [illegible] से हिमालय में प्रसिद्ध है, यहां [illegible] से आया हुआ है। उसकी [illegible] ३० से भी कुछ अधिक है। नेपाल के राजा का वह ११ वर्ष तक धार्मिक गुरु रहा है। यद्यपि वह मराठा है परन्तु बात चीत हिन्दी में करता है। लोगों के झुण्डों के झुण्ड उसके पास दर्शन करने को जाते हैं। वह जाति-पांति का कुछ भेद न करता हुआ सिवाय मांस-मदिरा के सब कुछ खा सकता है। वह कहता है कि उसे १५२६ की पानीपत वाली लड़ाई अभी तक अच्छी तरह से याद है और पलासी की लड़ाई तो उसे कल की घटना प्रतीत होती है। वह प्रसिद्ध ईसाई-साधु "सुन्दरसिंह" से कई बार मिल चुका है।"

श्रीमती सरोजनी नायडू इङ्गलैण्ड में वापस

"ब्रिटेन एण्ड इण्डिया" नाम का समाचार पत्र कहता है कि श्रीमती सरोजनी, नारवे और स्वीडन की यात्रा करके फिर इंगलैण्ड वापिस आगई हैं। उन्होंने वहां भिन्न २ सभाओं की ओर सामाजिक और राजनैतिक विषयों पर और विशेषतया भारत और भारत के आदर्शों पर व्याख्यान दिये। राजवंश, से लेकर गाड़ी हांकने वाले तक—सभी उनके व्याख्यान को सुनने आते और आनन्द लेते थे।

हड़तालें

अभी तक जारी हैं। नार्थ-वेस्टर्न- रेलवे के ५ हज़ार आदमियों ने, २७ अप्रैल को, इस लिए हड़ताल करदी क्यों कि उनके ७ आदमियों को निकाल दिया गया था। इस हड़ताल के विषय में सिविलमिलिटरी गज़ट में एक लेख प्रकाशित हुआ जिस से नाराज़ होकर प्रेस के कम्पोजिटरों ने बिना सूचना दिये हड़ताल करदी थी पर अब वह समाप्त होगई है और सुलहनामा होगया है। इधर बेगार(?) मिल में, कई सप्ताह से हड़ताल जारी है। मजदूर अपनी बात पर पक्के हैं। वहीं के सेठ हित-लाल जी नाम के एक सज्जन मजदूरों को भोजन खिलाते हैं। यदि शीघ्र ही कोई उचित फ़ैसला न हुआ तो मजदूर किसी और शहर में चले जाने की सोच रहे हैं।

जर्मनी से रुपया

'डेली एक्सप्रेस' कहता है कि मित्र दल ने जर्मनी से युद्ध हानि के बदले के रुपये में पहिली बड़ी किश्त ५० हज़ार मिलियन मार्क की मांगी है जिस पर फ्रान्स और अधिक धन लेने के लिए ज़ोर दे रहा है। ठीक २ राशि निश्चित करने के लिए हाल ही में ब्रूसलर में कान्फ्रेन्स होगी जिस में जर्मनी को भी बुलाया गया है। हम समझते हैं कि मित्र दल को इस समय शुद्ध भावों से ही काम करना चाहिए अन्य स्वार्थों से नहीं।

कांगड़ी-आर्य्य समाज का चुनाव

२१ वैशाख या २ मई की रात को ८ बजे आर्य्य समाज गुरुकुल कांगड़ी के समाज मन्दिर में निम्नलिखित अधिकारी—निर्वाचन हुआ—

प्रधान, श्री० पं० विष्णुमित्र जी; उप प्रधान श्री० गोपाल जी बी० ए०; मन्त्री, मास्टर विष्णुमित्र जी; उप मंत्री पं० दीनानाथ जी सिद्धान्तालंकार; कोषाध्यक्ष डा० बीरबर जी पुस्तकालयाध्यक्ष, श्री ला० नन्दलाल जी बी. ए. एल. एल. बी, प्रतिष्ठित सभासद, प्रो० सुधाकर जी एम. ए. और पं० विश्वनाथ जी विद्यालंकार। अन्तरग के सभासद श्री प्रो० सक्सेना जी। श्री पं० विश्वनाथ जी और प्रो० सुधाकर जी प्रतिनिधि सभा के लिए इस समाज के प्रतिनिधि चुने गये।

शिक्षा-समिति के मंत्री पं० दीनानाथ जी सिद्धांतालंकार हैं। श्री० डा० सुखदेव जी, प्रो० सुखराम जी, पं० चन्द्रमणि, जी प्रो० रामशरणदास सक्सेना जी, श्री० गोपाल जी और श्री मा० विष्णुमित्र जी उस समिति के सभासद चुने गये।

रूस के साथ व्यापार प्रारम्भ

यद्यपि रूस में बोल्शेविज़म का राज्य है पर तो भी मित्रदल ने सेन रेमो कान्फ्रेन्स में उसके साथ व्यापार-सन्धि कर लेने का निश्चय किया है। अमेरिका से एक कमीशन इसी बात की जांच के लिए यूरुप में आवेगा कि किस प्रकार रूस और अमेरिका में व्यापार पुनः प्रारम्भ हो सकता है।

गुरुकुल मुद्रणालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से मुद्रक प्रिन्टर और पब्लिशर आशीराम के लिये छपा।

ब्रह्मचर्य सूक्त

आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः। तं रात्रीस्तिस्र उदरे बिभर्ति तं जातं द्रष्टुमभिसंयन्ति देवाः ॥ ३ ॥

"आचार्य (ब्रह्म प्राप्ति की इच्छा करने वाले) ब्रह्मचारी को समीप कर के उसे (*विद्या शरीरस्य मध्ये गर्भं करोति* विद्या रूपी माता के शरीर के अन्दर) गर्भ रूप से धारण करता है। उस (गर्भस्थ ब्र०) को तीन रातों तक उसी (गुरुकुल रूपी) गर्भ में रखता है। तब उस के उत्पन्न होने पर उस को देखने के लिए विद्वान आते हैं।"

यहां *रात्रीः तिस्रः* के भावार्थ को ही स्पष्ट करना है। रात अन्धकार का समय है। यद्यपि तारागण तथा अर्ध मास तक चन्द्रमा भी प्रकाश देते हैं परन्तु वह प्रकाश सारे अन्धेरे को दूर नहीं कर देता। सारा अन्धकार तब दूर होता है जब आदित्य भगवान अपने यौवन समेत दर्शन देते हैं। यहां तीन रातों से साधारण तीन रात्री से तात्पर्य नहीं है, प्रत्युत ब्रह्मचर्य के तीन दर्जों से मतलब मालूम होता है। प्रथम २४ वर्ष तक का ब्रह्मचर्य व्रत है जिसे पूरा कर के ब्रह्मचारी वसु (अर्थात् उत्तम गुणों का अपने अन्दर वास कराने वाला) बनता है। परन्तु यह निकृष्ट ब्रह्मचर्य है। जब वसु ब्रह्मचारी को घर जाने की आज्ञा आचार्य देता है तो श्रद्धादेवी उसे प्रेरित कर के उस से कहलाती है—"भगवन्! अभी तो मैं उत्तम गुणों का वास कराने वाला ही बना हूं। अभी प्रलोभन मुझे गिरा सके हैं। मुझे विशेष साधन का समय दीजिए।" शिष्य की योग्यता को देख आचार्य फिर आज्ञा देते हैं। तब ४४ वर्ष की आयु तक तप पूर्वक विद्याभ्यास करता हुआ ब्रह्मचारी रुद्र संज्ञा का अधिकारी बनता है। उसकी वह प्रार्थना स्वीकार होती है जहां उस ने आश्रम में प्रविष्ट होते ही [illegible] ं से की थी—"मातनु अश्म भवतु—" [illegible] नावट [शरीर और मन] चट्टान की [illegible] ढ़ हो जावे।" तब वह ऐसा बलिष्ठ हो जाता है कि विषय और पाप उसकी बनावट से टकरा टकरा कर छिन्न भिन्न हो जाते और रोते हैं। उन्हें रुलाने का हेतु होने से ब्रह्मचारी रुद्र बन जाता है।

फिर भी और पूर्ण प्रकाश नहीं हुआ। जब विषय और पाप समीप आते रहें, जब अन्धेरा आसपास घूम सके; तब आ गिरने का भय बना ही रहता है। इसी लिए ऐसे सुबोध ब्रह्मचारी को जब गुरु समावर्तन की आज्ञा देते हैं, तब वह फिर हाथ जोड़ कर विनय करता है—"भगवन्! अभी अन्धकार ने घेरे रहना नहीं छोड़ा। आत्मा निश्चिन्त नहीं हुआ। इस पवित्र आश्रम द्वारा सावित्री माता के गर्भ में सुरक्षित कुछ काल और निवास करने की आज्ञा प्रदान कीजिए।"

गुरु की आज्ञा से शिष्य तीसरी रात [अन्धकार से घिरी हुई अवस्था] भी गर्भ में बिताता है। तब उस के दृढ़ तप से अन्धेरा दूर हो जाता है और वह सावित्री के गर्भ से बाहर आकर आचार्य को प्रणाम करता है। तब आचार्य उस ब्रह्मचारी के मस्तिष्क को सूर्य की भांति देदीप्यमान देख कर आशीर्वाद देता है—"तू अब आदित्य है। तेरा प्रकाश स्थिर होगा। अन्धकार का सामर्थ्य ही न पड़ेगा कि तेरे समीप पहुंच सके।" बस तीसरी रात भी व्यतीत हो गई और ब्रह्मचारी का दिव्य तेज फैल गया और तब वह द्विज बन कर देव पुरुषों से सम्मानित हो कर उन में शामिल हो जाता है।

इसी वेद मंत्र की व्याख्या में मनुभगवान ने कहा है:—मातुरग्रेऽधिजननं द्वितीयं मौञ्जिबन्धने। तृतीयं यज्ञदीक्षायां द्विजस्य श्रुतिचोदनात् ॥ तत्र यद् ब्रह्मजन्मास्य मौञ्जिबंधन चिन्हितम्। तत्रास्य माता सावित्री पिता त्वाचार्य उच्यते ॥

"श्रुति की आज्ञा से द्विज के प्रथम माता से जन्म दूसरे उपनयन वा व्रत बन्ध और तीसरे यज्ञ की दीक्षा में—ये तीन जन्म होते हैं। उन पूर्वोक्त तीनों जन्मों में वेद ग्रहणार्थ, उपनयन संस्कार रूप जो जन्म है, उस जन्म में उस (ब्रह्मचारी) की माता सावित्री और पिता आचार्य कहाते हैं।"

आपस्तम्ब सूत्र में लिखा है—"स हि विद्यातस्तं जनयति। तच्छ्रेष्ठं जन्म। शरीरमेव माता पितरौ जनयतः।" इसी भाव को लक्ष में रख कर वर्तमान मनुस्मृति के कर्ता ने लिखा है:—

कामान्माता पिता चैनं यदुत्पादयतो मिथः।
संभूतिं तस्य तां विद्याद्यद्योनावभिजायते ॥
आचार्यस्त्वस्य यां जातिं विधिवद्वेदपारगः।
उत्पादयति सावित्र्या सा सत्या साऽजरामरा ॥

माता पिता तो, जीवन विद्या के ज्ञान से अनभिज्ञ होने के कारण काम वश हो कर भी सन्तान उत्पन्न करते, परन्तु वह जन्म अजर और अमर है जो ब्रह्मचारी को विद्या के गर्भ में रख कर आचार्य देता है। धन्य है वह देश और धन्य वह जाति जिस में आदित्य आचार्य ब्रह्मचारियों को अमर जीवन का दान देते हैं।

आचार्य कौन हो सकता है? जो शिष्य को अमर जीवन प्रदान करने की शक्ति रखता हो; परन्तु जिसने स्वयम् अमर जीवन प्राप्त नहीं किया, जो स्वयम् इन्द्रियों का दास और कमज़ोरियों का शिकार है उसे पवित्र आचार्य पद ग्रहण करने के लिए तय्यार नहीं होना चाहिए। एक बड़े विदेशी अनुभवी विद्वान् की उक्ति प्रसिद्ध है कि कवि की तरह अध्यापक भी घड़े नहीं जा सकते वे जन्म से ही शक्ति लेकर आते हैं। अनेक जन्मों के साधनों से बुरे संस्कार धुलते हैं, यह ऋषियों के आदेश का सार है और आत्माओं के कुसंस्कारों को धो कर उन में उत्तम संस्कारों के प्रवेश कराने के लिए उस तप की ज़रूरत है।

तब कैसी गिरी हुई दशा उस देश और उस काल की समझी जाए जिस में आचार्य का काम एक पेशा बना लिया जाता है और उसे टका कमाने का साधन समझा जाता है। वेद का उपदेश यह है कि जो शरीर आत्मा और मन की शक्ति से शिष्य को सुरक्षित करके उसे देव बना का समावर्तन करा सके वही आचार्य पद का अधिकारी है।

श्रद्धानन्द सन्यासी

—:o:—

श्रद्धा

खिलाफ़त और भारत

प्रजा का कर्तव्य

(१)

क्रियात्मक प्रश्न

खिलाफ़त का प्रश्न अब बातों का सवाल नहीं रहा। अब कर्तव्य का समय समीप आरहा है। तुर्की राज प्रतिनिधि फ्रान्स में पहुंच गए हैं और शीघ्र ही पता लगेगा कि मित्र दल क्या फैसला देता है। गताङ्क में अपनी सम्मति मैं दे चुका हूं। मेरी दशा तो ऐसी है कि मैं सहज में परीक्षोत्तीर्ण समझता हूं। यही दशा महात्मा गांधी जी तथा उन सब महानुभावों की है जो न तो उपाधि धारी है, न किसी अंग्रेजी ओहदे पर है और न सिविल या मिलिटरी महकमों के नौकर हैं। परन्तु जनता के लिए यह जीवन और मृत्यु का प्रश्न है। महात्मा गांधी जी वास्तव में इस आन्दोलन के नेता हैं। मुझे कई मुसलमान नेताओं ने स्वयं कहा है कि यदि गांधी जी खिलाफत के प्रश्न में जान न डालते तो मुसलमानों के वश का यह आन्दोलन न था। इस प्रश्न की जान गांधी जी हैं। इसी पर क्या बस है इस समय का कोई भी भारतीय प्रश्न ऐसा नहीं जिस की जान गांधी जी न हों इस लिए मैंने अपने संदेह की निवृत्ति के लिये महात्मा जी को एक पत्र लिखा न तो मैं ही दो प्रकार के (अन्तरीय और बाह्य) जुदे जुदे धर्म रखता हूं और नाही महात्मा गांधी जी। इस लिए वह पत्रव्यवहार ज्यों का त्यों ही यहां देता हूं।

(२)

मेरा पत्र

श्रीमान् महात्मा गांधी जी !

मुझे ठीक पता नहीं है कि आप सिंहगढ़ में हैं वा और कहीं, इस लिए आश्रम के पते से ही पत्र भेजता हूं। आशा है कि जहां कहीं आप होंगे मेरा पत्र वहां पहुंच जावेगा।

मैं समाचार पत्रों में खिलाफत के सम्बन्ध में आप के सम्भाषणों का सारांश और मिस्टर शौकतअली के व्याख्यानों का हाल पढ़ता रहा हूं। अपने मुसलमान भाइयों की जो न्यायानुकूल मांग है उस के न पूरा होने पर आपने अपनी गवर्नमेन्ट के साथ सहयोगिता का क्रमशः त्याग बतलाया है। यहां तक तो मैं आप के साथ सहमत हूं कि हिन्दु मुसल्मानों को न्यायानुकूल निपटारा न होने पर उपाधियां त्याग देनी चाहियें, औनरेरी कामों से भी फिर किनारा करना चाहिये, परन्तु प्रश्न यह है कि यदि आप लाखों सिविल और मिलिटरी के सरकारी नौकरों को उन की नौकरी से अलग कर देंगे, और उनकी आजीविका का कोई प्रबन्ध न कर सकेंगे तो जनता ... [illegible] कितनी अराजकता फैलेगी। इस से तो रोग और बढ़ेगा, घटेगा नहीं। मैं इस के विरुद्ध नहीं हूं कि मुसल्मानों और हिन्दुओं के सुशिक्षित उच्च पदाधिकारी अपने पदों को छोड़ दें, मेरा मतलब लाखों Civil और Military चाकरों से है जिनको आजीविका से जुदा करके सत्याग्रह की उच्च मर्यादा पर स्थिर रखना कठिन होगा। मुझे डर यह है कि जिन मुसल्मानों की धार्मिक इच्छाओं को पूरा करने के लिए आप उन के पथ-दर्शक बन रहे हैं, कहीं वे ही न कष्ट अनुभव करने लग जावें।

परमेश्वर की कृपा से मुझे कोई उपाधि प्राप्त नहीं, इस लिए उसके त्याग का प्रमाण नहीं दे सकता। कभी चाकरी भी नहीं की, इस लिए उस प्रकार की सहानुभूति भी नहीं दिखला सकता, परन्तु एक ही प्रकार का सत्याग्रह है जिस में मैं सम्मिलित हो सकता हूं, अर्थात्—यदि जनता के उपाधि तथा नौकरी त्याग करने पर भी गवर्नमेन्ट की आंखें न खुलें, तो मुसलमान भाइयों के साथ स्वयं भी ब्रिटिश साम्राज्य का त्याग कर दिया जावे। यदि आप अगुआ बनें तो कौन न चाहेगा कि आप के पीछे चल कर अपनी आत्मा को सन्तोष दे लेवे। परन्तु प्रश्न यह है कि ब्रिटिश साम्राज्य को छोड़ कर किस राष्ट्र की शरण ली जावे; जहां धर्मानुसार जीवन व्यतीत करने का आश्रय मिल सकेगा। समाचार पत्रों में इशारा देखा है कि क़ाबुल इस सत्र को खुला रहा है, परन्तु वहां जाकर ब्रिटिश सरकार पर क्या दबाव पड़ सकेगा और सिवाय ब्रिटिश सरकार के साथ भौतिक युद्ध किए कैसे अभीष्ट की प्राप्ति होगी यह समझ में नहीं आता। और यदि भारतवर्ष के हिन्दू-मुसल्मान भौतिक शस्त्रों का आश्रय लेकर ब्रिटिश गवर्नमेन्ट से लड़ने को ही बाधित हुए तो वे सब कहां तक सत्याग्रही रह सकेंगे, यह आप ही विचार कर लेवें।

मैं चाहता हूं कि इस विषय में आप के मन्तव्य का स्पष्ट ज्ञान मुझे हो जावे जिससे मैं अपने मन्तव्य के साथ कर्तव्य को बराबर मिलाये रखूं। जब आप आराम कर रहे हैं, तब यह कष्ट देना अनुचित है, परन्तु जहां सारी जाति के भविष्य का प्रश्न हो वहां ऐसा कष्ट देना अनिवार्य भी हो जाता है।

आप का उत्तराभिलाषी
श्रद्धानन्द

(३)

महात्मा जी का उत्तर

भाई साहेब !

आप का पत्र मिला। सरकारी नौकरों को नौकरी छोड़ने को तब ही कहा जायगा जब उन के लिए खाने पीने का प्रबन्ध करने की ठीक योजना बन जायगी। इस बारे में मुसलमान भाइयों के साथ मैं मशलत कर रहा हूं।

देश त्याग करने की सलाह मैं तो कोई को भी नहीं दी, न मैं दे सका हूं। कितनेक मुसलमान भाइयों का हिजरत करने का अवश्य अभिप्राय है, उन को हम नहीं रोक सके हैं। उन से भी हिजरत का नतीजा अच्छा नहीं आसकता है ऐसा बता रहा हूं। यदि सत्याग्रह दृष्टि से हम हिन्दुस्तान का त्याग करें तब उस में सरकार पर कुछ भी दबाव पड़ने का ख़याल नहीं [illegible] है। मगर मेरी राय से हिन्दुओं [illegible] हिन्दुस्तान छोड़ने का मौक़ा तो तब आ सकता है जब कोई हिन्दू राजा होना और प्रजा उस के साथ मिलकर हिंदू धर्म का पालन ही अशक्य कर

देगी। यदि सरकार का असहकार करने में इस समय हम असमर्थ होंगे तो उस का अर्थ मैं ऐसा ही निकालूंगा कि मुसलमानों की धर्मवृत्ति क्षीण हो गई है। हर कोई भी देख सकता है कि इस ख़िलाफ़त के प्रश्न में इसलाम को बड़ा धक्का पहुंचाने की बात है। यदि ऐसे समय पर भी मुसलमान जान माल की कुरबानी करने के लिए तय्यार नहीं होंगे तब तो धार्मिकता का लोप हो गया ऐसा ही कह सकते हैं। यदि ऐसा बुरा परिणाम आजायगा तो भी मुझे आश्चर्य नहीं होगा क्योंकि मैं संसार में भ्रमण करता हुआ कलिकाल की महिमा को देख रहा हूं। धर्म की भावना हरेक जगह बहुत ही मन्द हो गई है और अनेक कार्य जो धर्म के नाम से होते हैं उन में भी मैं तो अधर्म ही देख रहा हूं। यदि मैंने जो लिखा है वह स्पष्ट नहीं होगा तो आप मुझे फिर भी पूछेंगे।

गुरुकुल का कार्य अब अच्छी तरह से चलता होगा। मैं आज चार दिन से इस एकान्त स्थान में आया हूं।

आपका

मोहनदास गांधी

(४)

करना क्या है ?

महात्मा गांधी जी का पत्र स्पष्ट है। हिजरत के वह स्वयम् पक्ष में नहीं। परन्तु यदि हमारे कुछ मुसलमान भाई हिजरत को भी अपने धर्म का अंग समझते हैं तो वह उस में दख़ल न देंगे और न कोई अन्य दख़ल दे सकता है। इस पत्र व्यवहार तथा अख़बारों के लेखों से मैंने जो सम्मति स्थिर की है उसे प्रकाशित करना अपना क[र्तव्य स]मझता हूं।

(क) जब हिन्दू त[था मु]सलमान ख़िलाफ़त के सवाल पर अपने मुसलमान भाइयों के साथ हैं तो शिया साहेबान तथा अन्य मुसलमानों को भी (जो सुलतान रूम को ख़लीफ़ा नहीं मानते) अपनी क़ौम का साथ देना चाहिए क्योंकि यह प्रतिज्ञा पालन या विश्वास घात का सवाल है।

(ख) उपाधियां तथा आनरेरी ओहदे जितने ही अधिक मुसलमान भाई त्याग करेंगे उतना ही ब्रिटिश गवर्नमेन्ट को निश्चय होगा कि वे लोग अपने मतालबे पर दृढ़ हैं। यदि मुसलमान ही पीछे रह गए तो हिन्दुओं से क्या आशा हो सकती है। परन्तु यदि उन में जोश बढ़ा तो हिन्दू भी अवश्य साथ देंगे।

(ग) मुसलमान उच्च पदाधिकारी यदि सिविल मिलिटरी कामों से त्याग पत्र देदें—यथा आनरेबल मियां महम्मद शफ़ी, मुसलमान हाईकोर्ट जज साहेबान् और अन्य मुसलमान सिविलियन तथा मिलिटरी आफ़िसर—तो हिन्दू भी कुछ उनके साथ शरीक हो जायगे।

[घ] फिर भी यदि कुछ त्याग न किये तो कम वेतन वाले मुलाज़िम त्याग पत्र दें तो पहले उनके परिवारों के निर्वाह का प्रबन्ध कर लिया जाय। इनको हिजरत के लिए न पीछे चलाया जावे प्रत्युत इन से जातीय [क़ौमी] पुलिस का काम लिया जाय। गतवर्ष के अप्रैल में जैसा रामराज्य १६ दिनों तक रहा फिर बहुत स्थानों में लाया जा सकता है, परंतु यह तब हो सकेगा जब दौलतमन्द आदमी भी और काम छोड़कर इस पुलिस की अफसरी में लग जायं। यदि यह क्रियात्मक दौर चल जाय तो मुझे निश्चय है कि बृटिश गवर्नमेंट स्वयम् मित्र दल को हमारे पक्ष का बनाने में कृतकार्य हो सकेगी। यह स्पष्ट है कि बृटिश सरकार को अपनी प्रतिज्ञा पालन का ख़याल तो है, परन्तु दूसरी और भी फंस चुकी है। यदि यह ठीक हो तो उन्हें भारत प्रजा की दृढ़ता से मित्र दल की काउन्सिल में बल मिलेगा।

———

आर्य्य-समाज और राजनीति

पंजाब मे आर्य्यसमाज का अधिक प्रचार है। वहां ही इस का अधिक बल है। और पंजाब ने ही अपनी उत्तम से उत्तम सन्तान आर्य-समाज की भेंट की हुई है। इस लिए जब पंजाब पर मार्शल-ला (अर्थात् नौकरशाही की अराजकता के राज्य) की चढ़ाई हुई उस समय भी आर्य-समाजियों का ही कर्त्तव्य था कि वे आई हुई आपत्ति को धैर्य और शान्ति से अंगीकार करके जनता के सामने दृष्टान्त रूप से खड़े हो जावें। उनकी परीक्षा का वही समय था। जब जलती हुई आग बीच में हो और स्वधर्म पालन के लिए दूसरे पार जाना हो, उसी समय धर्मध्वजियों की परीक्षा होती है। कवि ने क्या पते की कही है:—"धीरज, धर्म, मित्र अरु-नारी। आपत-काल परखिए चारी।" उस समय पंजाब के आर्य-समाजियों के धर्म तथा धैर्य की परीक्षा हुई। यद्यपि उस परीक्षा में बहुत से आर्य उत्तीर्ण हुए, परन्तु उन आर्य्य नाम धारियों की सख्या भी उपेक्षा से देखी जाने योग्य नहीं, जो उस समय में धर्म के उच्चासन से गिर गए, और ऐसे आर्य समाजियों ने इसी गिरावट को अपना शृंगार सिद्ध करना आरम्भ कर दिया। वह यह कह कर अपनी पीठ ठोकते रहे कि "जब सब राजनैतिक लहर में बह गए तो आर्य्य समाज को राजनीति से पृथक् सिद्ध करने के यत्न तथा अन्य साधनों से उन्होंने आर्य-समाज की रक्षा की और लहर मे नहीं बह निकले।"

परन्तु परिणाम क्या हुआ? जिन्होंने अपनी चमड़ी बचाने के लिए अपने आप को नौन-पुलिटिकल सिद्ध करने का यत्न किया, नौकरशाही की दृष्टि में वह भी इस सम्बन्ध से जुदे न समझे गए। हां, उन्हें एक अधिक उपाधि मिली। जैसा कि एक मित्र ने दिखलाया—पंजाब गवर्नमेन्ट ने उन्हें कातर (Coward) की उपाधि अवश्य दी। मेरी सम्मति यह है कि पंजाब के गत विप्लव मे जिन्होंने जनता का साथ दिया उन आर्यसमाजियों ने पालिटिक्स में भाग नहीं लिया, उन्होंने मनुष्य अर्थात् आर्य-धर्म का ही पालन किया। अब बैठे बालों की खाल उतारते जाओ तो उनकी स्थिति में भेद नहीं आता। मै प्रति सप्ताह आदित्यवार को व्रत पूर्वक राउलेट एक्ट से स्वदेश की मुक्ति के लिए परमात्मा से प्रार्थना करता हुआ यह भी बल पूर्वक इच्छा किया करता हू कि जब जब भी किसी मनुष्य समूह पर

अन्याय और अत्याचार का आक्रमण हो उसे रोकने के लिए आर्य सामाजिक पुरुष सब से पहिले आगे बढ़ा करें।

नई कौंसिलें
और
आर्य समाज का कर्तव्य

उपरोक्त विषय पर विचार करते हुए 'प्रकाश' लाहौर के योग्य सम्पादक लिखते हैं कि यतः सामाजिक सुधार के प्रश्न भी काउन्सलों के सामने अवश्य आवेंगे और इन प्रश्नों के साथ आर्य समाजियों का सम्बन्ध कम नहीं—"इस लिए" उनकी सम्मति है कि "योग्य आर्य समाजियों को—*उन आर्य समाजियों को जो स्वतंत्र में पड़ कर भी लोकहित को निजहित पर तर्जीह देने को तय्यार हों*-क्या इम्पीरियल काउन्सल और क्या प्राविन्शल काउन्सलों में जरूर जाना चाहिये" परन्तु साथ ही एक शर्त भी लगाते हैं-"*इन लोगों को काउन्सलों में न जाना चाहिए जो अपना सर्वस्व आर्य-समाज को दे चुके हैं और जिनका सारा समय और सारी शक्ति आर्य-समाज के काम में लगती है।*" मुझे इस लेख में व्याघात दोष दीखता है। जान जोखों में डाल कर जो स्वहित पर लोकहित को तरजीह दे सके हैं वे ही पुरुष तो हैं जो अपना सब कुछ आर्य-समाज पर न्यौछावर कर चुके हैं। यदि ऐसे सच्चे ब्राह्मण आर्य-समाज काउंसिलों में भेज सके तब तो धार्मिक कानून बनने में सहायता दे सकेगा। यदि आर्यसमाज भी सामाजिक सम्पत्ति के मद में उन्मत्तों को ही भेजेगा तो उस से लाभ क्या होगा।

परन्तु क्या जो दो चार सच्चे त्यागी आर्य समाज में कहीं हैं उन्हें काउन्सलों में भेज देना चाहिए? मेरी सम्मति में क्षणिक लाभ के लिए स्थिर लाभ को गंवाना बुद्धिमत्ता का काम नहीं है। आर्य समाज में जो सदाचारी त्यागी विद्वान् हैं उन्हें काउंसिलों के योग्य साधन सम्पन्न जवान तय्यार करने के काम में ही लगना वा लगे रहना चाहिए। यदि आर्य समाजियों से कुछ हो सकता है तो उन्हें ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि आगामी दस वर्षों के पीछे सदाचारी, ब्रह्मचारी, त्यागी, साधन सम्पन्न ब्राह्मण ही इम्पीरियल तथा प्रान्तिक काउन्सिलों में सभासदों के आसनों की शोभा बने हुए दिखाई दें।

एक पहेली का सुलझाव

पंजाब में मारशललॉ के दिनों जो अत्याचार हुआ उस में जेनरल डायर की पिशाच लीला सब से बढ़ चढ़ कर समझी गई है। जलियां वाले बाग में जो भयंकर आसुरी लीला उसने रची उसके सम्बन्ध में लाला हरिकृष्णलाल जी ने जालन्धर की पोलिटिकल कान्फ्रेन्स के जलसे में एक भाव प्रकट किया था। उन्होंने कहा था कि जनरलडायरादि ने जान बूझ कर सर्व साधारण को हजारों की तादाद में इस लिए जमा किया कि आसानी से बहुत बेगुनाहों को भून डालें। इस कल्पना का trap theory की उपाधि दी गई है। कांग्रेस कमिटी की रिपोर्ट में इस पर बल नहीं दिया गया। मैं एक घटना पेश करता हूं जिससे इस प्रश्न पर कुछ प्रकाश पड़ सकता है और शायद उस प्रकाश में यह पहेली बूझी जासके।

९ अप्रैल की रात को महात्मा गांधी जी गिरफ्तार हुए। ११ अप्रैल के मध्यान्होत्तर वह बम्बई पहुंचे, जहां से मुझे नीचे लिखी तार दी "अभी बम्बई पहुंचा और छोड़ दिया गया हूं। मुझे फिर गिरफ्तारी दूढ़नी होगी। लाहौर और अमृतसर में सूचना दे दीजिए कि कोई दुराग्रह (Violence) न हो" यह तार ११ की शाम को मेरे पास पहुंचा। उसी रात को मैंने लाहौर लाला दुनीचन्द बैरिस्टर को तार दिया कि Violence से लोगों को रोकें। अमृतसर से डाक्टर सत्यपाल और डा० किचलु डिपोर्ट हो चुके थे, इस लिए लाला कन्हैयालाल के नाम महात्मा गांधी का सन्देश भेजा। श्री लाला कन्हैयालाल जी को वह तार १२ अप्रैल को किसी समय पहुंचा। वह सिविल लाइन में शहर से बाहिर रहते थे। उनके पास न कोई गया और न उन्होंने किसी से इसका जिक्र किया। फिर हंसराज (सरकारी गवाह) ने कैसे मुनादी कराई कि लाला कन्हैयालाल जी का व्याख्यान होगा। उस तार खबर का पता सिवाय जनरल डायर और सी० आई० डी० के और किस को लग सकता था? मुझ से देवी रतनकौर ने रोकर कहा कि यदि लाला कन्हैयालाल का नाम न सुनाया जाता तो उन के पति न जलयां वाले बाग जाते और न गोली से भूने जाते। और भी कइयों ने मुझ से कहा कि चिरकाल से जो लाला कन्हैयालाल सर्वसाधारण की सेवा से अलग हो गए थे, इस लिए उनका नाम सुन कर बहुत से वृद्ध पुरुष १३ अप्रैल की शाम को जलियांवाले बाग में इकट्ठे हो कर मौत के शिकार हुए। निश्चय पूर्वक तो कहना कठिन है क्योंकि यह तो हंसराज ही बता सकता और वह न जाने किस ओहदे पर मेसोपोटानिया में भोग का जीवन व्यतीत कर रहा है, परन्तु इस घटना से यदि कुछ पहेली के सुलझाने में सहायता मिल सके तो गवर्नमेंट और प्रजा के नेता दोनों को ही उस पर अवश्य विचार करना चाहिए।

देहरादून के पं० ज्योतिःस्वरूप जी

के देहान्त का समाचार गतांक में उपसम्पादक जी ने दिया था। मेरे लिए ऐसी मौतें विशेष प्रकार से शिक्षा-दायक सिद्ध होती हैं। मौत बतला रही है कि इस संसार में जो पैदा हुआ है वह मरेगा। मौत का कोई समय नहीं, इस लिए हर समय उस के लिए तय्यार रहना चाहिये। पंडित ज्योतिःस्वरूप क्या क्या परोपकार के काम करना चाहते थे, मैं जानता हूं। परन्तु कितने काम है जिन्हें वह पूरा कर सके? अधर्म के कामों में खिंचते समय तो सोचते ही जाना चाहिये परन्तु धर्म कार्यों के लिए कवि का यह वचन ही ठीक है—"काल करे सो आज कर आज करे सो अब। पल में परलो होत है फेर करेगे कब।" जो धर्म कार्य अपने से हो जाय वही गनीमत है क्योंकि कवि के कथनानुसार—"को विजानीति कस्याद्यः मृत्युकालो भविष्यति"

श्रद्धा के नियम

भारत वर्ष के लिए

एक वर्ष के	३॥)
६ मास के	२)

६ मास से कम के लिए भेजने का नियम नहीं—

भारत भिन्न देशों से

एक वर्ष के लिए— ५)

वी. पी. भेजने का नियम नहीं। रोक मूल्य आने पर जारी होगा—

विज्ञापन कोई भी नहीं दिया जायगा। केवल गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी की बिकाऊ पुस्तकों का सूचीपत्र अधिक से अधिक वर्ष में तीन बार दिया जासकेगा।

प्रबन्धकर्त्ता श्रद्धा
पो. गुरुकुल कांगड़ी
(जिला बिजनौर)

विचार-तरंग

प्रतिष्ठा

(१)

ऐ उच्च मार्ग के पथिको ! सावधान ! इस प्रतिष्ठा पिशाचिनी से सावधान ! यह पापिनी अपना पाश फैलाकर जगह जगह पर हमारे राह में आकर बैठती है, उस से बच बच कर आगे पग धरना। यह अपने फंदे में हाथ पैर बांध कर सहज में निम्न भूमि पर उतार देगी।

जब फूलों का बरसना, अखबारों में मोटे अक्षरों में नाम लिखा जाना, बड़े जन संघ से घिरे हुये उच्चासन पर बैठाया जाना आदि दृश्य उपस्थित हों तो जान लेना कि प्रतिष्ठा की रपटन आगयी है, इस चिकने चमकते से स्थल पर संभल कर पैर रखना कि कहीं फिसल कर औंधे मुंह न गिरना हो।

(२)

एक सन्त को जब सत्कार पूर्वक भोजन खिलाने ले जाने लगे तो उन्होंने अस्वीकार किया कि मुझे तो तिरस्कार से मिला भोजन चाहिये। यह क्यों ? ! मनु महाराज ने ब्राह्मण के लिये अपमानामृत के पिपासु रहने का क्यों आदेश किया है?! "प्रतिष्ठा शुकरीति विष्ठा" इत्यादि वचन किस लिये हैं ? । सच बात यह है कि इस (प्रतिष्ठा) सर्पिणी से काटा जन मनुष्य बचता नहीं है। बहुत से लोग जिनके नाश करने के सब उपाय विफल हुवे—कारावास और मौत का भय जिन्हें न रोक सका, जब उन्हें सम्मान का हलाहल रस चपक २ कर पिला दिया गया तो वे ऐसे सुख में जा सोये कि फिर कभी न उठ सके।

(३)

मेरे बल के करतबों को देखकर जो मेरी प्रशंसा करता है क्या वह मेरी प्रशंसा करता है ? । हा, उस अखिलरूप प्रभु के सिवाय और किसकी स्तुति हो सकती है कि जिस के प्रदान किए सामर्थ के बिना संसार में एक पत्ता भी नहीं हिल सकता।

जो मेरे सौन्दर्य पर मुग्ध हो ललित शब्दों में मेरी प्रशंसा के गीत गाता है वह मूर्ख नहीं जानता कि यह तो (मेरे और उसके) उस दिव्य कारीगर का स्तोत्र पाठ हो रहा है जिसने अपने सौन्दर्य से इस ब्रह्माण्डोद्यान में सुन्दरतम फूलों को रंगा है।

और मेरे बुद्धि के चमत्कारों की जब कोई स्तुति करता है, हे स्वयं भास्वन् भगवन् ! उसे मैं अपनी स्तुति कैसे समझूं ? मेरे वह सूर्य तो आप हैं जिस से फैलती हुई असंख्यातों किरणों से मैं कुछ हमारे इन क्षुद्र मानवीय मस्तिष्कों में प्रतिबिम्बित होती हूं।

(४)

मुझे यह क्या होगया है ? । इस मालकिन की पुकार मुझे जहां सुन पड़ती है मैं उसके पालतू कुत्ते की तरह वहीं जा पहुंचता हूं और पूंछ हिलाने लगता हूं। इस पिशाचिन की उंगली जिधर उठती है उधर ही नाचने लगता हूं। उसके बाजे की खड़क कान में पड़ते ही मेरे अंग फड़क उठते हैं, मैं खड़ा हो जाता हूं और बेबस उधर ही खिंचा चला जाता हूं, वह स्थान गहन से गहन और देश के किसी भी कोने में क्यों न हो।

"आप बड़े महात्मा हैं" "आपके बिना यह कौन कर सकता था" इन टेकों के गीत जी चाहता है कि दिन और रात कान में पड़ते रहें तभी मैं जीवित रह सकता हूं। जो मुझे प्रणाम कर जाते हैं या "धन्य हो महाराज" बोल जाते हैं मैं इस विस्तृत दुनिया में केवल उन्हें ही कुछ समझदार मान सकता हूं। केवल ज़रा प्रशंसा कर दो, फिर चाहे मेरा सब कुछ लूट ले जाओ। मैं सच बताता हूं कि मुझे "कामिनी और कांचन" की कुछ इच्छा नहीं है, परन्तु यह लोकैषणा का भूत है जो कि मुझ पर पूरे बल से सवार है। मैं इस से अब अवश्य छूटना चाहता हूं किन्तु—इस के साज-समान जहां दिखाई दे जाते हैं तो रहा नहीं जाता।

(८)

आओ श्रद्धा से उन महर्षियों की चरण धूलि सिर माथे पर चढ़ावें जिन्हें कि ऐसे तुच्छातितुच्छ प्रणामों की त्रिकाल में अपेक्षा नहीं; क्योंकि वे मनुष्य देव हैं जिन का हृदयाधिष्ठित परमदेव—जिन का विमल अन्तरात्मा हर समय उन के हर एक कृत्य की स्तुति करता है—फिर उन्हें क्या चिन्ता कि कोई और भी उन्हें पूंछता है कि नहीं—जब अन्दर उन की स्तुति का स्वर्गीय नाद निरन्तर हो रहा है तो क्या परवाह कि बाहर भी कोई (अन्यथा सिद्ध) शामिल बाजे उन की प्रशंसा में बज रहे हैं कि नहीं।

वे उस अचल पद पर प्रतिष्ठित होते हैं कि यदि संसार के सब महाराजाधिराजे मिल कर उन के पैरों पर अपने मुकुट रखने के लिए झुकते हुए हाथ जोड़ कर सामने उपस्थित हों तो उन का कुछ सम्मान नहीं बढ़ता अथवा यदि संसार के सब सभ्य पुरुष उन्हें 'जंगली' कहें या निन्दा का प्रस्ताव पास करें या कोई और हरकत करें तो उन का कुछ मान नहीं घटता।

वे अपने अन्तर्यामी देव से अनवरत मिलने वाली प्रतिष्ठा में ऐसे मगन हैं कि उन्हें कुछ मालूम ही नहीं होता कि उनके सिर पर फूल बरस रहे हैं या जूते, पैरों में सम्पूर्ण जनता पड़ी है या बेड़ी, लोग धन्य धन्य पुकार रहे हैं या धिक् २।

वे अपने विशाल हृदयप्रासाद के भीतर राजाओं के राजा के समान ऐसी परिपूर्णता में विराजमान हैं कि कुछ अनुभव नहीं करते कि उनकी बाहिरी दीवारों पर प्रकृति क्या कौतुक खेल खेल रही है।

जब कभी ऐसे द्वन्द्वातीत महात्मा से एक बार साक्षात् हो जाता है तो समझ में आ जाता है कि अनमोल मोती समुद्र के अथाह तलों में क्यों छिपे पड़े हैं—जिन्हें संसार के किसी भी मनुष्य से द्वेष नहीं (किसी तरह के प्राणी से भय नहीं) वे निर्जन प्रदेशों में क्यों भागे जाते हैं—जिन्हें बड़ी २ सिद्धियां प्राप्त हैं वे उन्हें दिखला कर यश क्यों नहीं लूटते फिरते—जहां कोई परिचित, सराहने वाले, या

बहुत सत्कार करने वाले लोगों के मिलने की आशंका होती है वहां से लोग क्यों बच २ कर अपना रास्ता ते करते हैं ?। इस का एक उत्तर है कि वे स्वयमेव इतने तुच्छ हैं कि हम द्वारा और ढूंढे जाने से डरते हैं, क्योंकि हम (उन्हें अपने जैसा खाली समझने के कारण) सचमुच ऐसा ही करना चाहते हैं।

(६)

जब तू ज़रा से सन्मान से इतना हर्षोत्फुल्ल हो जाता है तो इतनी ज़रा सी निन्दा के होने पर कैसे न कुम्हला जायगा।

जब कोई तेरे नाम के अन्त में 'जी' नहीं लगाता या अभिवादन करना भूल जाता है तो तेरे सिर पर अपमान के घोर बादल मडलाने लगते हैं। और यदि सहभोज के निमन्त्रण पत्र में तुझे भी याद कर लिया जाता है तो सारी दुनिया तुझे उजली दिखाई देने लगती है और तू संसार में अपने को 'कुछ चीज़' समझने लगता है।

ऐ मेरे मन ! तू इतना छोटा है कि (क्षुद्र नदी की तरह) ज़रा से पद प्रसाद से भरपूर हो जाता है और स्वल्प से अभाव से सूख जाता है। मैं तुझे साथ लेकर इस संसार में क्या काम कर सकूंगा। हे त्रिभुवन विधाता ! मेरे हृदय को विशाल बनादे। हे कृष्ण भगवान् और महात्मा सुकरात के हृदयों के बनाने वाले ! मेरे हृदय को समुद्र के समान अपार, गंभीर बनादे, जिस में कि प्रशंसा के रूप में हज़ारों नदी नद आ आकर गिरें किन्तु कुछ भी उत्कर्ष न मालूम हो और सहस्रों निन्दक रवि किरणें अपनी पूरी तीक्ष्णता से दिन भर काम करें किन्तु ज़रा भी अपकर्ष न ला सकें। नहीं तो, हे प्रभो, इस क्षुद्र हृदय को लेकर मैं इस तेरे बड़े भारी संसार में किस काम आ सकूंगा। धर्मेन्द्र

गुरुकुल जगत्

गुरुकुल भूमि कांगड़ी की पश्चिम ओर अब भागीरथी का छोटा प्रवाह बह रहा है। ऋतु गिरगिट की तरह रङ्ग बदलती है परन्तु कुल वासियों का स्वास्थ्य अच्छा ही है। निकट के ग्रामों में बीमारी फैली होते हुए भी गुरुकुल में सर्वथा कुशल है। ऋतु इतनी गरम हो चुकी है कि गर्मी का पारा १०८ दर्जे तक चढ़ गया था, परन्तु गंगा की शीतल धारा से स्पर्श कर के जो वायु गुरुकुल की ओर आता है वह जीवन ही प्रदान करता है।

क्रीड़ा क्षेत्र खाली हो गए हैं, इसलिए हाकी आदि सब खेलें बन्द कर के कुलपति जी ने व्यायाम का अपना पुराना ढङ्ग ही फिर से प्रचारित किया है। महाविद्यालयआश्रम के पूर्व की छाया में उस आश्रम के ब्रह्मचारियों का अखाड़ा और वाटिका में बड़े कूप के पास विद्यालय के ब्रह्मचारियों का विस्तृत अखाड़ा बन गया है। दोनों अखाड़ों में नित्य प्रातः कुश्ती होती है। उपाध्याय तथा अधिष्ठाता केवल दर्शक ही नहीं होते कुछ उन में से अखाड़े में उतर भी पड़ते हैं जिस से ब्रह्मचारियों का उत्साह बढ़ता है। कुछ ब्रह्मचारी इन अखाड़ों में बराबर पानी डाल कर और कुछ अखाड़े को खोद कर अपना व्यायाम पूरा कर लेते हैं। इस समय फ़सल की कटाई और विवाहों के कारण भृत्य और मजदूर नहीं मिलते। जिस खेत को नलाई के लिए माली चाहता है ब्रह्मचारी तत्काल कर देते हैं। महाविद्यालय के एक और विद्यालय के दो दलों के सुपुर्द फलों के वृक्ष कर दिये गए हैं। वे उनके पालन पोषण में लगे रहते हैं और साथ की भूमि में भी बोते रहते हैं। इस प्रकार सभी काम में लगे रहते हैं। साथ ही व्यायाम शाला का काम भी सर्दार फतेहसिंह जी के अधीन ठीक चल रहा है। सायंकाल को वाटिका और अखाड़ों में बड़ी चहल पहल रहती है।

आयुर्वेद के उपाध्याय वैद्य धरणीधर जी बीमारी से उठे थे तब उनका छोटा लड़का काल का ग्रास हुआ जिससे वैद्य जी ने फिर छुट्टी मांगली। उनकी अनुपस्थिति में पण्डित सूर्यदेव जी वैद्यक भी पढ़ा रहे हैं। आयुर्वेद के विद्यार्थियों को डाक्टरी की शिक्षा भी साथ के साथ दी जाती है। आज कल डाक्टर सुखदेव जी शरीर शास्त्र (Anatomy) पर व्याख्यान देते हैं जिस में कुछ उपाध्याय भी शरीक होते हैं। आयुर्वेद के विद्यार्थियों के पिछले दो साल क्रियात्मक शिक्षा के लिए किसी ऐसे स्थान में लगने चाहिएं जहां इलाज के लिए रोगी पर्याप्त संख्या में मिल सकें। गुरुकुल के आचार्य जी से मालूम हुआ कि उसकी इमारत वह मायापुर [कनखल और हरद्वार के मध्य] में बनवाना चाहते हैं। जहां सरकारी मेडिकल कालिजों की इमारतों पर लाखों रुपये लगते हैं वहां इस स्थान में केवल ५० हज़ार में सब प्रकार की इमारत बन जायगी। पांच पांच हज़ार रुपयों में एक एक ब्लाक बनेगा। यदि इस दानी सज्जन धन जमा करदें तो इमारत से निश्चिन्तता हो सकती है, परन्तु जहां शहर में बड़ी बुरी संस्थाओं को लाखों दान में मिलते हैं वहां इस वास्तविक जातीय शिक्षणालय को धन की सहायता कम मिलती है।

शाखा गुरुकुल कुरुक्षेत्र के मुख्याध्यापक पण्डित शशिभूषण जी ने अपना स्वास्थ्य ठीक करने के लिए ६ मास का अवकाश लिया है। उन के स्थान में काम करने के लिए मास्टर काशीराम जी यहां से भेजे गए हैं। कुरुक्षेत्र गुरुकुल की पढ़ाई को उन्नत करने के लिए हमारे नए स्नातक राजेन्द्रबल विद्यालङ्कार निर्वाहमात्र पर काम करने गए हैं। इस समय लाला जीवनराय प्रबन्धकर्ता को यदि अनाज इकट्ठा करने में कृतकार्यता हो गई तो आर्थिक चिन्ता भी कुछ दूर जायगी।

शाखा गुरुकुल मटींडू का काम भी दो स्नातक [पं० पूर्णदेव तथा पं० निरंजनदेव विद्यालंकार] ही उत्तम रीति से चला रहे हैं। चौधरी पीरूसिंह और उन के साथी भी अनाज इकट्ठा करने में लगे हुए हैं। मुख्याध्यापक पं० पूर्णदेव जी ने निश्चय कर लिया है कि शाखा के गत वर्षों की आय का पूरा दशांश इस वर्ष विश्वविद्यालय के कोष में पहुंचा दें जिस से शाखा का सम्बन्ध मुख्य गुरुकुल के साथ स्थिर हो जावे।

निर्वाह मात्र पर काम करने का बीड़ा इस वर्ष ७ में से ५ नए स्नातकों ने उठाया है। शेष दो [illegible] केवल भोजन करते हुए ही सेवा करने को तय्यार हैं। हम परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं कि कुल पुत्र हर समय अपनी आत्मिक माता की सेवा के लिए तय्यार रहें।

संसार समाचार पर

टिप्पणी

[तु]र्की राज प्रति[नि]धि एक मास विचार करें

मित्र दल ने संधि की शर्तें तुर्की राज प्रतिनिधियों को दे दीं और उन्हें उत्तर देने लिए एक मास का अवकाश दिया है। [इ]स का मतलब यह है कि टर्की का वक्तव्य जो [ह]ो उसे भी सुनने के लिए मित्र दल तय्यार [है]। अब सारा निर्भर टर्की की दृढ़ता पर [है]। हमारे वाइसराय को चाहिए कि यहां [क]ी मुसलमान प्रजा की ओर उचित मांग [उ]स से बृटिश महा मन्त्री को सूचित [क]रें और बतलादें कि यदि इस ओर ध्यान न [द]िया गया तो भारत का शासन एक कठिन [स]मस्या का रूप धारण करेगी।

ओडवायर और जनरल डायर को पारितोषिक

हन्टर कमिटी ने क्या सम्मति दी है यह अभी मालूम नहीं परन्तु जनरल डायर [औ]र भूत पूर्व लाट ओडवायर की करतूत [प]र सारा संसार धिक! धिक! पुकार [र]हा है। जनरल डायर को पदच्युत करके [इ]ङ्गलैन्ड बुला लिया गया है। इस पर यहां [क]े गोरे शाही चिल्ला उठे हैं। ऐसी ऐंग[्ल]ो इन्डियन स्त्री औरतें भी निकल आईं [ज]िन्होंने डायर को हस्ताक्षर कर के एक [प्र]शंसा-पत्र दिया। परन्तु बहुत से [ध]र्मात्मा अंग्रेज़ों ने विशेषतः टाइम्स [आ]व इन्डिया के सम्पादक ने लिखा कि [ड]ायर की करतूत पर सब अंग्रेज स्त्री [प]ुरुषों के सिर लज्जा से झुके हुए हैं। अब [न]ौकरशाही खूनी पत्रों का सरदार प्रयाग [क]ा दैनिक पायोनियर न केवल स्वयम् [य]ह लिखता है कि अंग्रेजों में कोई स्त्री [य]ा पुरुष ऐसा नहीं जो ओडवायर और [ड]ायर की जोड़ी को अपनी जाति का [र]क्षक समझ कर पूजनीय न समझता हो, [प्र]त्युत् एक गुमनाम सम्वाद दाता से यह [प्र]स्ताव कराया है कि चन्दा जमा करके [इ]स-युगल को मान असी (Swords of [H]onour) भेंट की जायं। यदि सचमुच [च]न्दा जमा कर के ऐसा किया गया तो [व]हां चन्दा देने वाले [illegible] जाति के [घ]ातक सिद्ध होंगे; वहां [illegible]त के गरम (extremist) राजनैतिकों के धन्यवाद के [प]ात्र बनेंगे।

राज की मानहानि इस से बढ़ कर नहीं हो सकती

प्रयाग के दैनिक पत्र का एक सम्वाददाता सूचना देता है अफगानिस्तान के प्रतिनिधियों को अब मगन के लिए ४००) रुपये दैनिक पुरस्कार पर दो वेश्यायें मसूरी भेजी गई हैं। जिन दिनों युद्ध के लिए भरती हो रही थी उन दिनों सुना जाता था कि पंजाब के अहलकार वेश्याओं का नाच कराते थे और जो युवक नाच देखने आते उन्हें यह कह कर भरती किया जाता कि युद्ध क्षेत्र में नित्य नाच देखना मिलेगा। भारत के किसानों की गाढ़ी कमाई का पैसा अफ़गानों की विशाल कमाई को पूरा करने के लिए व्यय करने में राज की शान क्या रसातल को न जायगी?

इस जाति से निराश नहीं होना चाहिए

बृटिश जाति ने यदि ओडवायर, डायर, ओब्रायन बास्वर्थ और स्मिथ पैदा किए तो उसी बृटिश जाति ने ब्रेडला, काटन, वेडर्बर्न से लेकर ऐन्ड्रूज़ तक से भारत पर न्योछावर होने वालों को जन्म दिया। अभी कल की बात है कि महाशय फ्रेज़र ने न केवल समाचार पत्रों में जनरल डायरादि की करतूत से घृणा प्रकट की प्रत्युत अमृतसर में जलियांवाले बाग को देखकर वहां के स्मारक के लिए दस पाउन्ड चन्दा भी दिया। बृटिश जाति यदि इस समय भी खड़ी है तो ऐसे धार्मिक उदार व्यक्तियों के कन्धों पर। अभी सुना है कि इङ्गलैन्ड के लिबरल दल ने मिस्टर लाईड ज्यार्ज से किनारा कर लिया है और इने गिने लिबरल ही उनके साथ रह गए हैं। आश्चर्य न होगा यदि लिबरल और मजदूर दल एक हो कर राजकाज को हाथ में लें और फिर से इङ्गलैन्ड की राजनीति में सच्ची उदारता का भाव जाग उठे।

देवियों ने सत्याग्रह किया

बम्बई के G. I. P. लाइन की ट्रेन में दो देवियां सवार थीं। उन्हें घटकोपर रेलवे स्टेशन पर उतरना था। उनका दर्जा स्टेशन प्लेटफार्म से दूर खड़ा हुआ। उन्हों ने उतरने से इनकार कर दिया। उन्हें बहुत कहा गया परन्तु उन्हों ने यही उत्तर दिया कि प्लेटफार्म पर गाड़ी जायगी, तभी उतरेंगी। जब गाड़ी चलती थे भय-सूचक घंटी (alarem-bell) की ज़ंजीर खींच देतीं। अन्त को गार्ड हार गया और ट्रेन को प्लेटफार्म पर ले गया तब वे देवियां उतर गईं। यदि पंजाब और अवध रुहेलखन्ड के गार्डों को भी यह शिक्षा दी जाय तो अत्युत्तम हो।

गार्ड मिलर भी अमर हो जायगा

गार्ड मिलर ने नार्थ वेस्टर्न रेलवे की लाइन के बड़े भाग पर हड़ताल करवादी है। मिस्टर मिलर में शासन और सङ्गठन शक्ति भी अपूर्व मालूम होती है। १५ हज़ार से अधिक ने काम छोड़ कर उस का साथ दिया परन्तु अब एक भी गड़बड़ नहीं हुई जिस में पुलिस को दख़ल देने का मौक़ा मिले। रेलवे वालों का ऊंचा सिंहासन भी हिल गया है और व अपने नौकरों की बात सुनने को तय्यार हो गए हैं। अब उपज को नहीं लेते। जिस बात को फ़ौकूफ़ किया था उसको भी बहाल कर दिया। उनका दुख सुख भी सुनेंगे। लोग कहते हैं कि यह सब इस लिए है कि मिलर अंग्रेज़ नहीं, आइरिश है। हम उत्तर देते हैं कि ओडवायर भी तो आइरिश था और मिस्टर ऐन्ड्रूज़ इंगलिशमैन हैं। कोई जाति न सारी बुरी और न सारी भली होती है। पुरानी लोकोक्ति में बड़ी गहराई है कि—"आदमी आदमी अन्तर। कोई हीरा कोई कंकर"।

इस हड़ताल का अन्त कैसे हो?

सुनते हैं कि रेलवे की हड़ताल बढ़ती जा रही है। रेलवे की पहिली घोषणा थी कि लोग बिना शर्त काम में आ लगें फिर उनकी शिकायतें सहानुभूति पूर्ण हृदयों से सुनी जायगी। अब रेलवे वाले कुछ ढीले पड़े हैं और शिकायतें दूर करने का निश्चय दिलाते हैं। कर्मचारी लोग शिकायतें दूर होने पर ही कार्य में लगने को तय्यार हैं पैसे नहीं। लाहौर के भारतीय संघ एवं लाला लाजपतराय ने प्रान्तीय लाट को हस्तक्षेप करने और एक कमेटी नियुक्त करने की सलाह दी है। मामला तब तय हो सकता है यदि कर्मचारियों की शिकायतें सुन ली जाय और सामयिक मंहगी आदि को दृष्टि में रखते हुए उनकी भृत्तियें काफ़ी मात्रा में बढ़ा दी जाय। पर यह कैसे हो? यदि रेलवे के मालिकों में त्याग का भाव और सच्ची हितैषिता हो।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मन्त्रराम के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शालिग्राम के लिये छपा।

ओ३म्

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि ।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः ।
(ऋ० मं० [illegible] सू० १५१, म० ५)
'सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! यहां इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | ६ ज्येष्ठ सं० १९७७ वि० (दयानन्दाब्द ३७) ता० २१ मई सन् १९२० ई० | संख्या ५ भाग १

हृदयोद्गार

"दिव्य घड़ी"

श्रीयुत देवभिक्षु

भारत देश ! कहां हो सोये, उठो उठो अब देर हुई ।
भौतिक बन्धन काटि खड़े हो, रात गयी अब भोर हुई ॥ १ ॥
पूर्व दिशा में भानु उदय है, पश्चिम में शशि मन्द भयो ।
मुक्ति धाम का द्वार खुला है, मोह बन्ध अब नाश भयो ॥ २ ॥
जब रात भयी तुम शान्त हुये, देश अन्य तब जाग गये ।
माया बल से बांधि तुझे तब, लूट लूट धन वान भये ॥ ३ ॥
काल चक्र ने पलटा खाया, आयी अब है "दिव्य घड़ी" ।
माया टूटी बन्धन टूटे, ज्ञान भानु की ज्योति बढ़ी ॥ ४ ॥
अमर नाम है जग में तेरा, तू ही अमृत का इक धाम ।
मुक्त हुवों ने तुझ में रम कर, भारत ! पाया था आराम ॥ ५ ॥

आकांक्षा

श्रीयुत आनन्द

धधकती प्रेम की वह आग मेरे दिल में लग जावे ।
जुबानें हूंस के पानी भी वे बढ़ती चली जावे ॥ १ ॥
पड़ी हों और जो रक्त मेरे दिल देह पर आकर ।
बदल कर आंच से इसकी उसी रक्त में मिल जावें ॥ २ ॥
मैं तपता हूं, तपाती हों इसी की लपट बढ़ बढ़ कर ।
ये सारा ही जिस्म मेरा इसी से पाक हो जावे ॥ ३ ॥
कहां इक नाम की इच्छा कहां ईमान होना है ।
मेरा जलकर सभी कुछ एक दम से राख बन जावे ॥ ४ ॥

धर्म का खून

पण्डित वागीश्वर जी विद्यालङ्कार

अगर मुंह बन्द कर दोगे तो मैं भी बढ़ के बोलूंगा ।
गिरा दोगे मुझे नीचे तो सर पर चढ़ के बोलूंगा ॥ १ ॥
उलट दूंगा मैं दुनियां को ये फन्दा सख्त खोलूंगा ।
कड़क जावेगी बिजली सी कि मुंह जिस वक्त खोलूंगा ॥ २ ॥
मिला दोगे मुझे मिट्टी में, मैं चुप चाप डोलूंगा ।
मगर दिन आयगा कोई कि जब मैं सांप हो लूंगा ॥ ३ ॥
तुम्हारी लोटना छाती पै देखा ज़हर घोलूंगा ।
करोगे याद, दिल ही दिल तुम्हें हर पहर घोलूंगा ॥ ४ ॥
करो जैसे बड़ो मैं भी कभी सब काम तो लूंगा ।
मिटा दूंगा तुम्हारा नाम दम का नाम तोलूंगा ॥ ५ ॥
जहां क़तरा गिरा मेरा मैं जिन बन कर टटोलूंगा ।
बचोगे फिर कहां मुझ से हवा के पर टटोलूंगा ॥ ६ ॥
कोई हो आयगा पागल बना मैं भूत होलूंगा ।
करेगा खुदकुशी कोई, हुआ मज़बूत होलूंगा ॥ ७ ॥
मैं आख़िर 'खून' हूं कब तक पड़ा बेकार सोलूंगा ।
किसी दिन कर चुके जो कुछ चुका इक बार धोलूंगा ॥ ८ ॥
भले ही दर्द हो आखं मगर जब हाथ धोलूंगा ।
मैं कहता हूं तुम्हारे खून से मुंह [illegible] धोलूंगा ॥ ९ ॥
क़यामत को बुला लेगी गरम मैं आह जो लूंगा ।
ज़रा तो सब्र कर देखो कि अब मैं राह जो लूंगा ॥ १० ॥

ब्रह्मचर्य्य सूक्त की व्याख्या

ओ३म्—इयं समित् पृथिवी द्यौर्द्वितीयोतान्तरिक्षं समिधा पृणाति। ब्रह्मचारी समिधा मेखलया श्रमेण लोकांस्तपसा पिपर्ति ॥ ४ ॥

"*इयम्—पृथिवी-समित्* पृथिवी लोक पहिली समिधा-*द्यौः द्वितीया* दूसरी प्रकाशमान् लोक और तीसरी-*अन्तरिक्षं समिधा* अन्तरिक्ष-(इन तीनों से यज्ञ को पूर्ण करता है। *ब्रह्मचारी समिधा, मेखलया श्रमेण तपसा लोकान् पिपर्ति*—ब्रह्मचारी (१) समिधा से (२) मेखला से (३) श्रम से (४) तप से लोकों को तृप्त करता है।" ब्रह्मविद्या के जिज्ञासु को गुरु के पास हाथ में समिधा लेकर जाना चाहिए खाली हाथ जाना मने है। याचक को अभिमान दूर रख देना चाहिए। वेद में भी कहा है कि श्रद्धा की समिधा लेकर प्रभु पूजा में प्रवृत्त होना चाहिए। ब्रह्मचारी की सम्पत्ति समिधा ही है क्योंकि ब्रह्मचर्य तप रूपी यज्ञ ही है। ब्रह्मचर्य का उद्देश्य वेद विद्या द्वारा ईश्वर प्राप्ति है, वह प्राप्ति ही इस ब्रह्मयज्ञ का फल है।

ब्रह्मचारी तीन स्थूल समिधाओं को तो नित्य प्रदीप्त अग्नि में डालता ही है परन्तु ज्ञानाग्नि को प्रदीप्त करने के लिए भी उसे तीन समिधाओं की ही आवश्यकता है। वह तीन समिधा कौनसी हैं? प्रथम पृथिवी, द्वितीय द्यौः और तीसरी अन्तरिक्ष। इन्हीं के ज्ञान में सारा ज्ञान आजाता है। तैत्तिरीयोपनिषद् के शिक्षाध्याय में पहिले गुरु शिष्य को, वर्ण, स्वर, मात्रा, प्रयत्न, उच्चारण और सन्धि का ज्ञान देकर उस शब्द शिक्षा के पश्चात् अर्थ शिक्षा आरम्भ करता है। अर्थ शिक्षा में पांच अधिकरण बतलाकर उनमें पहिला अधिलोक प्रकरण है। इस दृश्य कार्य जगत का नाम ही अधिलोक है। उस में "पृथिवी पूर्वरूपं, द्यौरुत्तररूपम्। आकाश सन्धिः। वायुः सन्धानम्। इत्यधिलोकम् ॥" भूमि ही इस आत्मिक यज्ञ की कार्य सिद्धि में आधार स्वरूप होने से मुख्य साधन है उस सर्व-इन्द्रियों [illegible] पृथिवी और उसकी रचना से उठ [illegible]र सूर्यादि प्रकाशक लोकों का ज्ञान संभव है। वहां बाह्य इन्द्रियों में से केवल एक चक्षु इन्द्रिय की ही गम्यता है। यद्यपि वह प्रकाश गौण साधन है तथापि उस दूर स्थित प्रकाश के बिना निकटस्थ पृथिवी के प्रत्यक्ष दर्शन कठिन क्या असम्भव है। द्यौ इस लिए उत्तर रूप है। परन्तु पृथिवी और द्यौः—इन दोनों का मेल कहां होता है? यदि अन्तरिक्ष न हो तो सूर्य का प्रकाश ब्रह्मचारी तक कौन पहुंचावे? इस लिए अन्तरिक्ष ही उन दोनों के मेल का स्थान है। पृथिवी और द्यौलोक की विद्या की प्राप्ति असम्भव है जब तक कि अन्तरिक्ष उन्हें परस्पर मिलाने वाला न हो। तब अन्तरिक्ष की विद्या से ही पहिली दोनों विद्याओं का निश्चय होता है। ये तीनों इस शिक्षा रूपी आत्मा यज्ञ की तीन समिधा हैं। इन्हीं तीनों का ज्ञान नित्य प्राप्त करने से आत्म-यज्ञ की अग्नि प्रदीप्त रहती है। ये तीनों समिधा हैं परन्तु इनको यज्ञ-कुण्ड में डालने का हाथ रूपी मुख्य साधन वायु है—यह उपनिषद् ने स्पष्टी करण के लिए विशेष व्याख्या की है। प्रकाश भले ही अन्तरिक्ष में रहो परन्तु उसकी किरणें वायु के बल से ही पृथिवी तक पहुंचती हैं।

संसार के प्रलोभन ब्रह्मचारी को चारों ओर से घेरते हैं। विषयों की प्रबल शक्तियां उस पर सारे बल से प्रहार करती हैं। उन का मुकाबला अल्प जीव कैसे करे? उनका मुकाबिला नहीं हो सकता; उन शक्तियों को तृप्त करने से ही वे ब्रह्मचारी का पीछा छोड़ती हैं। क्या भोग से उनकी तृप्ती होती है? मनुष्य अज्ञानवश समझता है कि वह विषयों को भोग रहा है; उलटा विषय उसका भुक्तान करदेते हैं। तब उनकी चुंगल से कैसे छूटे? इस बात का जिक्र करते हुए कि जो मनुष्य काम भोग नहीं करता और ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत करता है उस में वीर्य स्खलित होने का सर्वथा अभाव असम्भव है। अमेरिका के डाक्टर विलियम् जे. एक्टिन्सन एम. डी. लिखते हैं—"There is only one exception to this statement, men engrossed in an all-absorbing mental task may, even while living continent life,(g) for months and years without an omission" अनुवाद—इस कथन में केवल एक ही अपवाद हो सकता है अर्थात् (यह कि) जो लोग लगन से किसी मानसिक काम में लगे हुए हैं वे ब्रह्मचर्य का जीवन करते हुए भी महीनों और वर्षों तक भी बिना वीर्य स्खलन के रह सके हैं। डाक्टर एक्टिन्सन से बहुत पहिले ऋषि दयानन्द ने इस विषय पर लिखा था—"जिस पुरुष ने विषय के दोष और वीर्य रक्षा के गुण जाने हैं वह विषयासक्त कभी नहीं होता, उसका वीर्य विचाराग्नि के ईंधन यत् है अर्थात् उसी में व्यय हो जाता है।"

ब्रह्मचारी सांसारिक विरोधी शक्तियों को कैसे दूर करता है? पृथिवी प्रकाश और अन्तरिक्ष से जो आक्रमण उस पर होते हैं उनको कैसे निवारण करता है? वह इन्हीं तीन को समिधा बनाता है और उन्हें ज्ञानाग्नि में आहुति दे कर भस्म कर देता है। भस्म का तात्पर्य यह नहीं कि उनका अत्यन्ताभाव हो जाता है प्रत्युत मतलब इतना ही है कि रूपान्तर में आकर वे उस ब्रह्मचारी को अपने धर्म से व्यवचलित नहीं कर सकें।

परन्तु इन तीन समिधाओं से आत्मयज्ञ प्रदीप्त कैसे किया जाय? उसके लिये (३) श्रम की आवश्यकता है। उस श्रम रूपी बल की प्राप्ति के लिए (२) मेखला ही एक मात्र साधन है। कर्मेन्द्रिय को स्वाद के प्रलोभन से बचाने के लिए ब्रह्मचारी मेखला धारण करता है। बिना समिधा धारण के मेखलाधारण करने के योग्य (अर्थात् लंगोट का सच्चा, यति) नहीं हो सका और बिना मेखला (तगड़ी) धारण किए अर्थात् लंगोट—बन्द हुए श्रमी नहीं हो सकता। और उस "श्रम" से ही अन्त में तप की प्राप्ति होती है। तब सब लोकों को तृप्त करने का साधन तप ही सिद्ध होता है।

उपनिषत् की भाषा में इस लिए कह सकते हैं कि "समिधा पूर्वरूपम्, मेखला उत्तररूपम्। श्रमः सन्धिः। तपः सन्धानम् ॥" यदि ब्रह्मचारी तप द्वारा श्रमी बन कर वीर्य रक्षा द्वारा उस बल को दृढ़ करले और फिर अपनी सारी शक्तियों को पृथिवी लोक, द्युलोक और अन्तरिक्षलोक की विद्या के प्राप्त करने में एक चित्त हो कर लगा दे तो फिर तप में दृढ़ता प्राप्त कर लेता है और तपस्वी बन कर वह सर्व बाह्य शक्तियों को ऐसा बदल कर देता है कि वे उसको गिराने का साधन करने के स्थान में उस की सहायक होती हैं।

[illegible]

श्रद्धा

शिक्षाका सार्वभौम आदर्श

जो सार्वभौम शिक्षा का आदर्श है वही जातीय शिक्षा का आदर्श भी हो सकता है। भारत वर्ष में सदा से सार्वभौम शिक्षा के नियम पर ही काम होता रहा है। गुरु और शिष्य का वैयक्तिक सम्बन्ध ही सार्वभौम शिक्षा का मूल है। आचार्य रूपी पिता ही विद्या रूपी माता के गर्भ में ब्रह्मचारी को धारण कराके उसकी रक्षा करता और जब वह ब्रह्मचारी दूसरा जन्म प्राप्त कर के देव श्रेणी में दाख़िल होता तब आचार्य ही उसका समावर्तन संस्कार कराने में समर्थ होता था। भारत वर्ष में वैयक्तिक शिक्षा का स्थान सामूहिक शिक्षा ने तब लिया जब विदेशी मतवादियों ने यहां राजशासन करना आरम्भ किया। परन्तु अब तक भी विद्या के केन्द्रों (काशी, नदिया आदि) में वह प्रथा (चाहे कैसी भी गिरी हालत में क्यों न हो) चली आती है। भारत विभिन्न देशों में वैयक्तिक शिक्षा के गौरव को शिक्षक जन कहीं अब समझने लगे हैं। एक रस्सी में बांधने के यत्न में युरोपियन देशों को कृतकार्यता नहीं हुई। इसी लिये वे पुरानी भारतीय वैदिक मर्यादा की शरण में फिर से आ रहे हैं। युरोप और अमेरिका में शिक्षा सम्बन्धी बड़े परिवर्तनों के हो जाने पर भी भारत वर्ष में अब तक "मैकाले" की डाली हुई वही पुरानी लकीर पीटे जा रहे हैं। परन्तु यहां भी आंखें खुलने लगी हैं। लार्ड कर्ज़न ने तो स्पष्ट ही कह दिया था कि "रेज़िडेन्शल युनिवर्सिटी" का भाव भारत में सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं क्योंकि यहां प्रथम से गुरु शिष्य का गाढ़ा सम्बन्ध रहा है।

यह निर्विवाद सचाई है कि सब मनुष्य एक सी शक्तियां तथा एक सी प्रकृति लेकर उत्पन्न नहीं होते। और यही बड़ी भारी दलील पुनर्जन्म के लिये है जिस के आगे आज कल के सभ्य देशों के उच्च विचारक भी सिर झुका रहे हैं। जब यह ठीक है कि भिन्न२ रुचिएं और भिन्न शक्तियां लेकर मनुष्य उत्पन्न होते हैं, तो उनकी शिक्षा के क्रम में भी भेद अवश्य होना चाहिए जिस से विधाता (अर्थात् उन के कर्मों) ने जिस कार्य के योग्य उनको बनाया है उसी में लग कर वे अपने जीवन को सफल कर सकें। संसार में जो उच्च कोटि के काम अर्थात् कविता, शिक्षा, उपदेश, राज शासन इत्यादि हैं उनका बीज मनुष्य अपने अन्दर लेकर जन्मता है। अनेक जन्मों के साधनों से ये उच्च शक्तियां सम्पादन की जा सकती हैं। तभी तो वेद का आदेश है कि आचार्य में यह मानसिक बल होना चाहिए कि अपने शिष्य की स्वाभाविक रुचि तथा शक्ति को पहिचान कर ही उसकी आवश्यकता के अनुसार उसके लिए पाठविधि नियत करे।

शिक्षा का यही एक सार्वभौम नियम है जिस कारण से आचार्य और ब्रह्मचारी का घनिष्ट निकट सम्बन्ध होना चाहिए। और सब नियम गौण हैं। इसी नियम को लक्ष्य में रख कर प्राचीन भारत वर्ष में गुरुकुल की प्रथा चली थी। इन्हीं ब्रह्मचर्याश्रमों का नाम तीर्थ था। "*समानतीर्थे वासी*" इस उपनिषद् वाक्य में भी यही रहस्य है। इसी भाव को लक्ष्य में रख कर ऋषि दयानन्द ने ब्रह्मचर्याश्रम रूपि गुरुकुल स्थापन कर के शिक्षा प्रणाली के सुधार के लिए बल दिया था। ऋषि की इसी आज्ञा को मनुष्य मात्र के कल्याण का मुख्य हेतु समझ कर कांगड़ी ग्राम की भूमि में गुरुकुल की बुनियाद रक्खी गई थी।

शिक्षा का माध्यम क्या होना चाहिए? यह गौण विषय है और एक प्रकार से एक देशी भी है। सार्वभौम नियम यह है कि शिक्षा का माध्यम बालक की मातृभाषा होनी चाहिए। सार्वभौम लिपि होने के योग्य देव नागरी लिपि है। सार्वभौम भाषा होने के योग्य संस्कृत भाषा है, यह मेरी और मुझ सरीखे कुछ अन्य विचारकों की सम्मति है। परन्तु जब तक सारे संसार में एक लिपि तथा एक भाषा का प्रचार न हो ले तब तक क्या होना चाहिए? उत्तर यही हो सकता है कि साधारण प्रारम्भिक शिक्षा का माध्यम प्रान्तिक भाषा ही हो सकी है। भारत वर्ष में प्रारम्भिक शिक्षा का माध्यम बंगाली, गुजराती, मराठी, तैलंगी करनाटी, तामल इत्यादि होते हुए भी उच्च शिक्षा का माध्यम संस्कृत को बनाया जासकता है। परन्तु गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली को भारत से बाहिर ले जाना होगा तो वहां उसी प्रान्त की भाषा से काम लेना होगा। किन्तु आचार्य और ब्रह्मचारी के घनिष्ट सम्बन्ध और दोनों के ब्रह्मचर्य व्रत पालन का नियम वहां भी समान रहेगा। इसी प्रकार अन्य गौण नियमों को भी समझ लेना चाहिये।

अब तक गुरुकुल ने गौण नियमों के पालन में किसी हद तक सफलता प्राप्त की है। सादा जीवन सिखाने, सहन शक्ति के विकासित कराने इत्यादि में कुछ कृतकार्यता हुई है। परन्तु मुख्य नियम के पालन की दशा क्या है, इस पर लिखना सुगम नहीं है। उस के लिए मुख्य साधन योग्य आचार्य का मिलना है जो इस वर्णाश्रम से पतित समय में अप्राप्त है। और इसी प्रकार पूर्व साधनों से संस्कृत ब्रह्मचारी मिलने भी कठिन हैं। कहा जासकता है कि जैसे ब्रह्मचारी मिलते हैं वैसे आचार्य भी मिलसकते हैं—यह ठीक है और इसी पर सन्तोष करना पड़ता है। परन्तु फिर भी आचार्य में यह शक्ति होनी चाहिए कि ब्रह्मचारी का जीवनोद्देश्य क्या स्वभाविक है इसे चुनसके और उसके अनुसार उसे शिक्षा दे सके। इस में फिर कठिनाई है। प्राचीन गुरुकुल आचार्य के आधीन होते थे, इस समय के गुरुकुल सभाओं के आधीन हैं। आचार्य भी उन सभाओं का नौकर है। उसे अपने आत्मा की साक्षी पर नहीं चलना है प्रत्युत अपनी स्वामिनी सभा के सभासदों के विचारों के अनुकूल अपने आत्मा को बनाना है। कहा जायगा कि प्राचीन काल में शिक्षा की आवश्यकताएं इतनी न थीं जो अब हैं, परन्तु जिन गुरुकुलों में चौंसठ विद्या और अनगिनत शास्त्र पढ़ाए जाते थे वहां आर्थिक आवश्यकता को वनस्थ आचार्य अपने पल्ले से पूरा करता हो यह ध्यान में नहीं आता। मेरी इस शंका की पुष्टि उस श्लोक से होती है जिस में दस सहस्र विद्यार्थियों के पालन पोषण का भार अपने ऊपर लेकर उन्हें दूसरा जन्म देने वाला ही आचार्य कहा जाता था। इतनी दौलत वनी के पास कहां से आती थी। निस्सन्देह बिना उस के प्रबन्ध तथा शासन में हस्तक्षेप किये उस की आर्थिक आवश्यकताओं को राजा तथा अन्य श्रीमान् पुरुष पूरा करते थे। उस के विरुद्ध आज कल के भारतीय आचार्य्य का काम एक ओर गुरुकुल के लिए स्वयम् तथा अन्य शिक्षकों द्वारा पब्लिक से भीख मांगते फिरना दूसरी ओर, फिर प्रबन्धकर्तृसभाओं की कड़ी आलोचनाओं का उत्तर देने में समय बिताना तीसरा काम। क्या ऐसी स्थिति उचित है? यदि नहीं तो इस को ठीक अवस्था में लाने का यत्न गुरुकुलों की प्रबन्धकर्तृसभाओं को करना चाहिए।

श्रद्धानन्द सन्यासी

महात्मा गान्धी
और
मि० चिन्तामणि

संयुक्त प्रान्त के एक मात्र "मोडरेट" पत्र के १४ मई के मुख्य लेख में मि० चिन्तामणि ने "महात्मा गान्धी और सहयोग त्याग" पर लिखते हुये ऐसा स्वर अलापा है जिसकी मधुर तान बिलकुल ही गोरे शाही की हित चिन्ता के ठेकेदार पत्रों की स्वर में मिल गई है। जिन विचारों की पायोनियर, सिविल मिलिटरी गज़ट या इंगलिशमैन में आशा हो सकती थी वैसे ही विचार उस लेख में प्रगट किये गये हैं। इस लिए नहीं कि आप को भारत की नौकर शाही के हित की बड़ी फ़िक्र है परन्तु इस लिए कि आप महात्मा गान्धी जी की सत्य नीति को सहन नहीं कर सके आप चिन्ता की "पारसमणि" की लाग से शासन सुधार, सत्याग्रह, स्वदेशी और खिलाफ़त के मामलों को सोना बनाने का भरसक यत्न करते रहे हैं और अब भी आप "सहयोग त्याग" (Non cooperation) के लोहे को सोना बनाया चाहते हैं पर आप की मार ऐसी है जो लोहे को मट्टी बनाये बिना न छोड़ेगी। भूल कर आप की कलम पंजाब के अत्याचारों के विरुद्ध चल पड़ी थी, उस के लिए आपने प्रायश्चित करते हुये मुसलमानों को चेतावनी देने के लिए लिखा है कि "यदि पंजाब के लोग कुछ स्थानों में उपद्रव और सरकारी अधिकारियों का अपमान न करते तो सरकारी लोगों को कठिनता से ही अत्याचार करने का अवसर मिलता। यदि लोग खिलाफ़त के मामले पर आपे से बाहिर न होंगे और सहयोग त्याग के मूर्ख और घातक सिद्धान्त का अनुसरण न करेंगे तो सरकार को भी आवश्यकता न होगी कि वह क्षति करसके।" यह लिखते हुये आपने न केवल एक वैयक्तिक पक्षपात का ही उदाहरण पेश किया है परन्तु एक ऐसी स्थापना कर डाली है जो देश और जाति के लिये पूर्ण घातक है। आप ने पंजाब के मामले में निर्णय करते हुए सहयोग त्याग नीति के बारे में भी अभी सरकार के पक्ष में फ़ैसला कर दिया है। यह लिखना न केवल घातक है परन्तु साफ़ही यह शरारत भरा है। हम कुछ उदरण श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी की उस गवाही से देते हैं। जो उन्होंने देहली के बारे में हण्टर कमेटी के सम्मुख दी थी। इस से लोग मि० चिन्तामणि के लेख की सचाई जान सकते हैं—

उद्धरण १—

"३० मार्च १९१९ का दिन प्रार्थना और उपवास के लिए नियत किया गया और २४, २७ और २९ के दिन सभायें की गई। २७ के दिन मैं सभापति था। मैंने अपने भाषण की समाप्ति में महात्मा गान्धी की घोषणा में एक और शर्त लगाई ऐसा कहा जाता है। वह यह कि "प्रत्येक व्यक्ति को उस दिन आध घंटा ध्यान करते हुए परमात्मा से प्रार्थना करनी चाहिये कि वह हमारे विरोधियों के दिल बदल दे— ईश्वरशक्ति के बल से हम महाराज जार्ज, महा मन्त्री और मि० माण्टेगू जो इंगलैण्ड में हैं उनके दिलों पर भी असर डाल सकते हैं।" उचित निर्देशों का विज्ञापन शहर में लगाया गया और स्थानीय दैनिक-पत्रों में छपवाया गया। यह नीचे का था—

क्या करना है?

(१) ३० मार्च शोक का दिन मनाया जाना चाहिये।

(२) २९ की रात्रि से ३० मार्च की रात्रि तक उपवास करना चाहिये।

(३) सब दैनिक कार्य कर चुकने पर एकान्त में बैठ कर परमात्मा से सहन शक्ति प्राप्त करने, सरकार को मार्ग से न गिरने देने और भारत माता को दुःखों से बचाने की प्रार्थना करनी चाहिये।

(४) सब कार्य और दूकानें आदि बंद करके देश को हित विचार मानसिक शुद्धि और लोकहित में लगाना चाहिये।

(५) प्रत्येक नर नारी और बाल वृद्ध को सायंकाल ५ बजे की सभा में शामिल होना चाहिये।"

उसी दिन (२९ मार्च) सायंकाल ३० मार्च १९१९ के स्थानीय "मोर्निङ्ग-पोस्ट" के मुख्य लेख में बड़े कुटिल शब्दों में लिखा गया कि देहली के नेता, लोगों को उपवास करा के उपद्रव कराना चाहते हैं। हमने उसी दिन २९ मार्च की सांझ को एक सभा की, जिसमें इस पत्र का यह लेख एक व्यक्ति ने पढ़ कर इस पर टीका टिप्पणी की। मैं ही इस दिन भी सभापति था और सर विलियम विसेन्ट का वायसराय की कौंसिल का रौलेट बिल पास करते समय का भाषण ख्याल करके—जिस में उस ने महात्मा गान्धी के सिवाय दूसरे लोगों के सत्याग्रह (Passive Resistance) से सक्रिय प्रतिरोध (Active Resistance) करने पर उतारु हो जाने का फ़तवा दिया था—मैंने अपने भाषण की समाप्ति में यह ज़ोरदार रिमार्क किये थे। मैंने कहा "ऐंग्लो इण्डियन पत्र का कोई गुप्त रहस्य हो सकता है। स्थानीय अधिकारी सर विलियम विसेंट को भविष्यवादी सिद्ध करने का यत्न करें पर मैं तुम लोगों से कठपुतली न बनने की अपील करता हूं।"

उद्धरण २

"मैं तुरंत रेलवे स्टेशन के लिये चल पड़ा। यहां मैंने सुना कि मैशीनगन चला दी गई है। लगभग १ दर्जन मारे या घायल हुए हैं—लाशों को स्टेशन के भीतर खींच लिया गया है। एक रेलवे का यात्री और एक स्त्री भी उसी का शिकार हुई हैं—ऐसा मैंने सुना।

दूसरी ओर से मैंने गुरखों को आते देखा। गोरे फ़ौजी पहिले ही मौजूद थे। मैं पुलिसमैन्स के पास गया जिन में एक मि० करी सिटी मैजिस्ट्रेट थे और उन से मैंने सचाई जाननी चाही। उन्होंने मुझे उपेक्षा दृष्टि से देखा और मि० करी ने पीठ मोड़ ली। मैंने उस से कहा मैं शीघ्र ही लोगों को सभा के लिये ले जाता हूं और तुम्हें मैशीनगनों और फ़ौज से लोगों को भड़काना नहीं चाहिये। सब लोग तीन चार हज़ार पीछे और कुछ आगे २ चल दिये। १५ मिनट में ही 'पीपल पार्क ग्राउण्ड' में सब जमा होगये।

लोगों की संख्या बढ़ती गई और २५ हज़ार होगई। मैं उन्हें सत्याग्रहियों की भांति कार्य करने, शोक और गुस्से को दबाने के लिये कह रहा था कि इतने में ही घण्टाघर के पास गोरों से गोली चलाये जाने और लगभग दर्जन के मरने और घायल होने की खबर मिली। कुछ लोग भड़क उठे मैंने उन्हें फिर शान्त किया।"

किस प्रकार एक फ़ौजी अफ़सर ने शांत सभा को सवारों सहित आ घेरा और किस प्रकार चीफ़ कमिश्नर पूरी फ़ौज लेकर धमकाने पहुंचा—इत्यादि बातें समाचार-पत्रों में प्रगट हो चुकी हैं। मैनपुरी के गुरखों के बंदूकें श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी की छाती पर तानने की घटना भी प्रत्येक व्यक्ति को याद ही होगी। अपनी गवाही के अन्त में आपने कहा कि—

उद्धरण ३

(१) "३० मार्च के दिन रेलवे स्टेशन पर गोली चलाने की कोई जरूरत न थी। यदि अधिकारियों ने मुझे बुला लिया होता मैं २

मिनट ही में स्टेशन पर पहुंच कर एक दम भीड़ को हटा देता। मैं स्टेशन के पास ही रहता हूं।

(२) टाउनहाल के दर्वाजे पर गोली चलाना बिल्कुल अन्याय था।

(३) मैजिस्ट्रेट और पुलिस बदला लेने के लिये ही मृत और घायल लोगों को ३० के दिन पुलिस हास्पिटल में ले गये जहां घायलों की मरहम पट्टी के लिये काफ़ी सामान न था। चीफ़ कमिश्नर के पास डेपूटेशन जाने और उस के साथ पुलिस हस्पताल जाने पर गोली चलने के २९ घंटे बाद घायलों को सिविल हस्पताल में लाया गया, मृत लाशें उन के सम्बन्धियों को लौटाई गईं और भली प्रकार मरहम पट्टी की गई। आंग्ल नर्सों ने भयंकर घावों की देख भाल से इनकार कर दिया। जब उन से कहा गया तब उन्होंने कहा "उन्हें अच्छा फल मिला है, वे राजद्रोही हैं और हम उन की देख भाल न करेंगी।" या इन्हीं अर्थों के दूसरे शब्द कहे।"

श्री स्वामी जी के शब्द देहली का मामला साफ़ कर देते हैं और बताते हैं कि पहल किस की ओर से की गई। हकीम अजमल खां और डाक्टर अन्सारी आदि देहली के नेताओं की गवाहियां भी साफ़ कर देती हैं कि देहली में गोली चलाने के लिये कोई सबूत न था और नेता ही थे जिन्होंने जनता को इतने पर भी शांत रक्खा।

अमृतसर में भी रेलवे पुल पर ही गोली चलाये जाने ने लोगों को भड़काया। कांग्रेस उप समिति (Sub committee) की रिपोर्ट—जिसे स्वयं चिन्तामणि न्याय पूर्ण दृष्टि से उचित तौर पर लिखी हुई कह चुके हैं—से उद्धरण देकर हम लेख लम्बा नहीं किया चाहते। ५८ पृष्ठ पर साफ लिखा गया है कि "प्रिय नेताओं के निर्वासन ने जनता को भड़का दिया। निहत्थों पर गोली चलने से वह और भी भड़क उठे। पुल तक पहुंचने और गोली चलने तक जनता की ओर से कोई उपद्रव न हुआ था। मार्शल ला—कमीशन, हण्टर कमेटी की सरकारी तथा हमारे से इकट्ठी की गई गवाहियां हमें इस परिणाम पर पहुंचाती हैं कि फायर के लिये कोई आज्ञा (warrant) न थी।" फिर १५८ पृष्ठ पर लिखा गया है कि—

"महात्मा गांधी की कैद और डा० सत्यपाल तथा डा० किचलू की कैद और निर्वास (Depostation) अन्याय पूर्ण थे और इसी से लोग भड़क उठे।" "अमृतसर में लोगों का उपद्रव रेलवे पुल पर के फ़ायर का ही परिणाम था और फिर जब कि मृत और घायल लोगों का दृश्य इसके लिये पर्याप्त था।" "प्राप्त सब सचाइयों से कोई भी ऐसा कारण प्राप्त नहीं जिस से मार्शल-ला का लगाया जाना न्याय्य ठहराया जा सके।"

इत्यादि उद्धरणों से स्पष्ट है कि चिंतामणि-महाराज का पिछली घटनाओं के बारे में यह लिखना कितना निर्मूल और मिथ्या है। बीर डायरादि हत्यारों के हिमायतियों को सिर पर चढ़ाने के लिये कितना खतरनाक है। फिर अभी से मौर्निंग पोस्ट और विलियम विन्सेंट की भान्ति सहयोग त्याग की नीति के बारे में भविष्यद् वाणी कितनी घातक, हानिकारक और कुटिलता पूर्ण है—यह भी साफ है।

यदि यह सम्मति मि० चिन्तामणि ने बहुत सोच विचार के बाद अब निश्चित की है और पिछले सब लेखों पर पानी फेर दिया है तब हमें कुछ नहीं कहना—नहीं तो आशा है कि मि० चिन्तामणि यदि वैसे ही शीघ्रता में ऐसा कह गये हैं तो वे इसके लिए उचित दुःख प्रगट करते हुये अपने शब्दों को वापिस लेंगे और भारतीयों को निश्चय दिलायेंगे कि वे आगे से कभी भी गोरे शाही की हित चिन्ता की फ़िकर न करेंगे और नाहीं कभी उनमें अपने स्वर की मीठी तान मिलायेंगे।

घोर अपमान

"भारत रक्षा कानून का अशुद्ध प्रयोग."

माम्य जवाहरलाल नेहरु उन देश भक्तों में से हैं जिन्हों ने कभी अपनी देश भक्ति की डींग नहीं मारी। आपका जैसा शान्त स्वभाव है वैसे ही आप देशभक्त कांग्रेस मैन हैं। आप में देशभक्ति और जातीयता कूट कूट कर भरी हुई है। पिछली पञ्जाब की जांच में आपने भी बड़ी सहायता पहुंचाई थी। पञ्जाब के अनेक स्थानों पर आप स्वयं गये थे। अभी आप अपनी धर्मपत्नी के स्वास्थ्य बिगड़ने से हवा बदलने के लिये मसूरी गये हुए थे और उसी "सेवाय होटल" में ठहरे थे जिस में हमारी सरकार ने अफ़गान—प्रतिनिधियों का सत्कार करने के लिये अनेक प्रपञ्च रचे हुए हैं। श्री पण्डित जी के साथ आपकी वृद्धा-माता और बहिन भी थीं। आप को उन प्रतिनिधियों से कोई मतलब न था और नाहीं आप उनके अतिथि सत्कार में कोई विघ्न डालते थे परन्तु फिर भी आप बड़े ख़तरनाक समझे गये। उसी स्थान में १७ दिन रह चुकने के बाद आपका 'भारत रक्षा कानून' के आधार पर प्रान्तीय सरकार की ओर से आज्ञा दी गई कि "यतः आप सामाजिक शान्ति के लिये कण्टक हैं या हो सकते हैं अतः आपको देहरादून के ज़िले से बाहिर हो जाना चाहिये।" फिर आपकी ज़िलाधीश से बात चीत हुई और उसने आपसे प्रतिज्ञा मांगी कि आप न किसी प्रतिनिधि से मिलेंगे और नाहीं किसी प्रकार की उन से चिट्ठी पत्री करेंगे—इस पर चूंकि आपका कोई भी विचार अफ़ग़ानी प्रतिनिधियों से मिलने मिलाने का न था आपने प्रतिज्ञा करने से इनकार किया और देहरादून का ज़िला छोड़ जावें।

यह घटना मामूली नहीं है। इस से श्रीयुत पंडित जी को रोगशय्या पर लेटी हुई धर्मपत्नी, वृद्धा-माता और अबला बहिन को एक दम मसूरी की ऊंचाई से लेकर देहरादून भी नहीं परन्तु वहां से भी परे आने में जो दिक्क़त हुई होगी वह प्रत्येक सज्जन समझ सकता है। यह जहां शान्त देशभक्त नेता का घोर अपमान होने से जाति का भयकंर अपमान है वहां यह भारत रक्षा कानून का अशुद्ध और ज़बरदस्त प्रयोग है, युद्ध के ६ मास बाद तक के लिये यह कानून बनाया गया था पर अब तो ठीक १८ मास हो चुके हैं 'कानून' का मनमाना प्रयोग जारी है। न केवल इस घटना के ही परन्तु इन मनमानी करतूतों के विरुद्ध जिनकी हमें बटलर राज्य में आशा नहीं हो सकती थी भयकंर देश व्यापी आन्दोलन की भारी आवश्यकता है।

---

१९ के इण्डिपेण्डेण्ट में श्रीयुत राय बहादुर डा० महेन्द्रनाथ ओहदेदार की मृत्यु का समाचार पढ़ कर दिल कांप गया। आप में देशभक्ति और जातीयता की लग्न लगी हुई थी। निःसन्देह आप की कमी की पूर्ति लखनऊ के लिये असम्भव और प्रान्त के लिये अतीव कठिन है।

ईसामसीह=कहो, विल्सन 'तुम्हारी १४ शर्तें कहां गईं?

विल्सन=प्रभु मसीह, वहीं, जहां आप की १० आज्ञायें।

(Commendments)

दिमाग़ पर लहरों की टक्कर।

(१)

तूफ़ान आने पर जैसे समुद्र में एक से बढ़ कर दूसरी लहरें पैदा होती हैं, और परस्पर टक्कर खाती हैं, इसी प्रकार इस समय संसार में भिन्न २ प्रकार की लहरें उत्पन्न हो रही हैं और आपस में टकरा रही हैं। क्या इसमें किसी को संदेह है कि भूगोल पर इस समय भयानक तूफ़ान है? विचारों और आदर्शों की उमंगें आकाश से बातें करती हैं, पर सब की चोटियां भिन्न ही भिन्न हैं, सब के रुख़ भिन्न ही ओर को हैं।

कहीं भूतवाद है, और कहीं अध्यात्मवाद है। कहीं प्रेमधर्म है, और कहीं आरम्भ धर्म हैं। कहीं व्यक्तिवाद है, और कहीं समष्टिवाद है। कहीं एक सत्तात्मक राज्य है, और कहीं अराजकता वाद है। कहीं धनियों का राज्य है—तो कहीं बोल्शविज़्म है। सारांश यह कि एक दूसरे से बिल्कुल विपरीत आदर्शों की लहरें ज़ोर शोर से चल रही हैं और टकरा रही हैं। आदर्शों और विचारों का एक घमासान युद्ध है जिस का भीषण नाद कभी योरप में सुनाई देता है और कभी एशिया में। यह युद्ध कभी प्रकट रूप से दिखाई देता है और कभी परोक्ष रूप से उसका भान होता है। कभी यह सेनाओं के रूप में आ जाता है, और तलवार की चमक में दिखाई देता है, पर कभी २ यह केवल दिमाग़ों में ही घूमता है, और परोक्ष रूप से काम करता है।

दूर क्यों जायें, अपने ही देश की ओर दृष्टि डाल कर देखिये। भारतवासियों के दिमाग़ों में कई प्रकार के आदर्शों का संग्राम हो रहा है। लहरें तो बहुत हैं, और अनगिनत हैं, पर उनमें से बड़ी लहरें दो हैं। एक लहर पाश्चात्य सभ्यता की है। पाश्चात्य सभ्यता में वह सब कुछ आ जाता है, जो योरप या अमेरिका का चिह्न है। योरप के कपड़े, योरप की भाषायें, योरप के रीति रिवाज, योरप के आदर्श, योरप की जातियों के प्राकृतिक साधन—यह सब कुछ पाश्चात्य सभ्यता के अन्तर्गत है। एक लहर यह है—जो हमारे देश के शिक्षित समाज पर आई, और अशिक्षित समाज पर शिक्षितों द्वारा आक्रमण कर रही है।

दूसरी लहर स्वाधीनता की है। बहुत से लोगों का विचार है कि यह स्वाधीनता की लहर पाश्चात्य सभ्यता की लहर का परिणाम है। योरोपियन शासक दावा करते हैं कि भारत को स्वाधीनता का भाव उन्होंने सिखाया है, योरपियन शिक्षा पाये हुए और पढ़ी पढ़ाई सम्मति को सदा अपना लेने वाले महानुभाव हां में हां मिलाते हुए कहते हैं कि यह बिल्कुल ठीक है, कि भारत को सब तरह की स्वाधीनता—और विशेषतया राजनीतिक स्वाधीनता पश्चिम ने सिखाई है। योरपियनों और योरपियन शिष्यों का विचार बिल्कुल निर्मूल है। भारत के लिये न विचार स्वातन्त्र्य का विचार नया है, और न राजनीतिक स्वातन्त्र्य का। हम पूछना चाहते हैं कि क्या हमारे दर्शनकारों को विचार स्वातन्त्र्य का पाठ पढ़ाने के लिये लकी साहिब गये थे? और क्या प्रताप या शिवाजी को राजनीतिक स्वाधीनता की शिक्षा देने के लिये मेरीवाली महाशय पधारे थे? भारत में स्वाधीनता का भाव पुराना है जो कई कारणों से देर तक दबा रहा। स्वाधीनता का भाव कोई ख़रीदी हुई वस्तु नहीं हो सकती, वह मनुष्यता का तक़ाज़ा है, जो जातियों के साथ कम या अधिक राशि में सदा ही रहता है।

दूसरी लहर स्वाधीनता की है। अब विचित्रता देखिये। यह दोनों लहरें भारत में विद्यमान हैं पर इन का आपस में सम्बन्ध बहुत ही झमेले में पड़ गया है। कहीं यह दोनों लहरें सीधी टकराती हैं, कहीं यह एक दूसरी के ऊपर से निकल जाती हैं, कहीं पर बिल्कुल एक हो जाती हैं और कहीं न मिलती हैं न टकराती हैं, दूर २ से एक दूसरी को सलाम दे जाती हैं। देखिये जो लोग स्वाधीनता का तात्पर्य पाश्चात्य प्रभाव से स्वाधीनता चाहते हैं—(प्रभाव शब्द में सभी कुछ आ गया) उन के दिमाग़ों में दोनों लहरें एक दूसरी की विरोधिनी हो कर टकराती हैं। ऊपर किस का हाथ रहे, यह सापेक्ष बल पर निर्भर है। जो लोग समझते हैं कि भारत वर्ष को स्वतन्त्रता मिलने का यही उपाय है कि वह पाश्चात्य मार्ग का अनुसरण करें, उन के दिमाग़ों में यह लहरें एक दूसरी पर से निकल जाती हैं, या हाथ बटाती हैं, और सहायक हो जाती हैं। कई लोग दिमाग़ में दोनों आदर्शों के झगड़े को स्थान ही नहीं देते, या झगड़े को गम्भीर नहीं बनने देते, वह मोटर पर भी चढ़ लेते हैं, योरपियन सूट भी पहन लेते हैं, सूर्य की ओर मुंह कर पानी भी फेंक छोड़ते हैं, स्वराज्य की सभा में व्याख्यान भी दे आते हैं और मौक़ा मिलने पर कमिश्नर साहिब के घुटने भी दबा आते हैं। उनके दिमाग़ों में लहरें तरह दे जाती हैं।

और जितनी लहरें हैं, वह इन्हीं दो लहरों के जुदा २ परिणाम हैं। कहीं वह मेल से उत्पन्न होती हैं और कहीं टक्कर से। कहीं वह समर्थन के रूप में आती हैं, कहीं प्रतिवाद के रूप में। कई लोग प्राचीन धर्म का उद्बोधन चाहते हैं, वह पाश्चात्य सभ्यता से स्वाधीनता चाहते हैं। कई लोग पाश्चात्य सभ्यता से इतनी घृणा करते हैं कि यदि उनके पुराने कपड़े को नई हवा छू जाय तो वह अपना कपड़ा फेंकने के लिये तय्यार हो जाते हैं। यह स्वतन्त्रता की उन्हीं लहरों का परिणाम है। उस में भी ज़रा दिमाग़ कम लगा तो एक विलक्षण ढंग का परिणाम निकलता है। कई लोग मोटर को पसन्द करते हैं रेल को नहीं। बिजली के पंखे को चाहते हैं कपड़े की मिल को नहीं। घड़ी से उपयोग लेना उचित समझते हैं, पर कला के मिल को कोसते हैं। लहरों की टक्करों से दिमाग़ का चक्कर डोला होके का प्रायः ऐसा परिणाम होता है। कई

लोग स्वाधीनता का नाम रटते २ पागल हो जाते हैं और अराजकता-वाद तक पहुंच जाते हैं। सारांश यह कि भारत में बहती हुई सैकड़ों तरह की लहरों और उन लहरों की मूल रूप दो लहरें हैं, शेष सब उन्हीं के भिन्न २ सम्बन्ध के रूप हैं।

इन दो लहरों में पड़े हुए भारतवासियों के दिमाग अठखेलियां खा रहे हैं और डांवाडोल हो रहे हैं। हृदय पूछता है कि क्या इसका निपटारा करने वाला भी कोई है या नहीं?

इन्द्र

गुरुकुल जगत्

इन्द्रप्रस्थ

दुःख के पीछे सुख

दुःख सह कर ही सुख का मज़ा है। जहां दुःख नहीं, वहां उत्तम सुख का सौभाग्य भी नहीं मिलता। दो हफ्ते तक तप कर अब आकाश सुखदायी प्रतीत होता है। मान्सून की लहर ने आकर दिशाओं को शान्त कर दिया है। इधर ढाकों ने कलियां गिराकर पत्तों का लिबास पहिना है। कला अरावली पर्वत बीच २ में पत्तों का ढेर से दिखाई देता है। इस समय न लूह है, और न तपश है। यह जानते हैं कि यह सुख कुछ दिनों का है, अभी वह गर्मी आने को है जिस में आदमी की तो क्या, गधे को भी साया में खड़ा होना पड़े, पर बीच में शान्ति की लहर आई है, उसका पूरा आनन्द लेना ही उचित है। आज कल गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ के निवासी ऐसा ही आनन्द लेरहे हैं।

आरोग्य

ऋतु के शान्त होने से रोग भी शान्त हो गया है। रोग की शान्ति में गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ के डा० अहमेन जी की अनथक सावधानता भी कुछ कम कारण नहीं है। चिकित्सालय में केवल एक ऐसा रोगी है, जिस के नीरोग होने की चिन्ता है। दो एक कमपेढ़ी के बीमार हैं, पर सावधानता रखी जाय तो वह रोग नहीं, एक क्रियात्मक मज़ाक है।

पठन पाठन

पठन पाठन निर्विघ्न रीति से हो रहा है। अध्यापक और विद्यार्थी लगे हुए हैं। पढ़ाई बारह बजे से पूर्व ही समाप्त कर दी जाती है।

अध्यापक सभा

अध्यापकों तथा अधिष्ठाताओं की एक सभा बनाई गई है, जिसका उद्देश्य शिक्षा प्रणाली के सुधार, और गुरुकुल की उन्नति के साधनों पर विचार करना है। श्र० मुख्याधिष्ठाता सभा के प्रधान और मुख्याध्यापक उपप्रधान हैं। पहले अधिवेशन में पं० बालकृष्ण जी मन्त्री और मुन्शी रामसिंह जी उपमन्त्री चुने गये। सभा के अधिवेशन शुक्रवार के दिन होते हैं।

अधिवेशन

सभा के अभी तक तीन अधिवेशन हुए हैं। प्रारम्भिक अधिवेशन में सभा के नियम उद्देश्यादि सुनाये गये, और मन्त्री उप मन्त्री का चुनाव हुआ। दूसरे अधिवेशन में श्र० मुख्याधिष्ठाता ने शिक्षा सम्बन्धी मुख्य २ समस्याओं को सभा के सामने रखते हुए बताया कि उन सब का अन्तर्भाव इन तीन प्रश्नों के उत्तर में से हो जाता है—

(१) क्यों पढ़ाया जाय?
(२) कैसे पढ़ाया जाय?
(३) क्या पढ़ाया जाय?

सभा के सामने इन प्रश्नों को रखते हुए व्याख्याता ने बताया कि यही प्रश्न हैं जिन पर अगले अधिवेशनों में सभासदों को विचार करना चाहिये।

तीसरा अधिवेशन

तीसरे अधिवेशन में दिल्ली के दयानन्दाश्रम विद्यालय के हैड मास्टर मास्टर सुन्दरसिंह जी बी.ए.बी.टी. ने पढ़ाने की रीति पर कुछ विचार प्रकट किये। आप श्र० मुख्याधिष्ठाता के निमन्त्रण पर बड़ी कृपा से कष्ट उठा कर गुरुकुल आये। आपने सब श्रेणियों की पढ़ाई का निरीक्षण किया और सन्तोष प्रगट करते हुए कई उचित सम्मतियां भी दीं। आप १४ मई को आये थे। दैव योग से उसी रोज़ अध्यापक सभा का अधिवेशन था। आपका उस में व्याख्यान हुआ। अन्त में सभापति ने आपको धन्यवाद देकर सभा समाप्त की।

इन्द्र

—:०:—

"गुरुकुल मटिण्डु"

ऋतु अच्छी है केवल दो ब्रह्मचारी रोगी हैं। नहर के पास बहने से ब्रह्मचारियों को स्नान करने में बहुत आराम है।

आज कल पढ़ाई का कार्य बड़े ज़ोर से चल रहा है पं० निरञ्जनदेव जी विद्यालङ्कार पं० शान्तिस्वरूप जी पं० रविदत्त जी, तथा पं० केदारनाथ जी पूर्व से ही अध्यापन का कार्य करते थे, उनके अतिरिक्त रामसिंह जी, जिन्हों ने इस साल B.A. की परीक्षा दी है, और चौधरी प्रतापसिंह जी चौ० महासुख जी चौ० कृष्णचन्द्र जी जिन्होंने F.A. की परीक्षायें दी हैं चारों महानुभावों ने अपना वार्षिक अवकाश गुरुकुल की सेवा के अर्पण किया है। पहिले दो सज्जन पढ़ाई का कार्य करते हैं और पिछले धन संग्रह का कार्य करेंगे।

अनाज का कार्य

अनाज के इकट्ठा करने के लिये ५ मण्डलियां बनाई गई हैं मण्डलियां अपना काम कर रही हैं। वैशाख मास में विवाहों से ४१६)॥। गुरुकुल के लिये दान में मिला। दानी महाशयों का धन्यवाद है। उपरोक्त दान में चौ० हरकिशनलाल जी चौ० पीरुसिंह जी चौ० रामकला जी पं० पं० रविदत्त जी पं० निरञ्जनदेव जी और रामसिंह जी आदि विशेष तौर पर धन्यवाद के पात्र हैं।

विवाह के अतिरिक्त दाराखेरी मे चौ० लखीराम व तुलीराम के प्रयत्न से १३८) प्राप्त हुवे जिस के लिये वे धन्यवाद के पात्र हैं।

५—अनाज का ब्यौरा अगले सप्ताह दिया जायगा कर्मियों की अत्यन्त आवश्यकता है दानी महाशयों को इधर ध्यान देना चाहिये।

पूर्णदेव शर्मा गुरुकुल मटिण्डु

संसार—समाचार—विचार

टर्की भी चल बसा

देखते देखते ही संसार के भूगोल पर के अनेक राष्ट्रों और साम्राज्यों की काया पलट गई। भारतीयों की दीन प्रार्थना और विरोध करते करते, महामन्त्री तथा वायसराय के विश्वास दिलाते दिलाते भी बस अब टर्की भी चल बसा। भारतीय मुसल्मानों के घाव पर नमक मिर्च छिड़कते हुये वायसराय और भारत सरकार उसकी मरहम पट्टी करते हुये मरे हुये को सदा जीते रहने का थोथा थोथा आश्वासन दे रहे हैं। टर्की जाता हुआ वही पाठ पढ़ा रहा है जो कुछ दिन पहिले वीर कैसर और स्वेच्छाचारी ज़ार ने पढ़ाया था कि "संसार में किसी का जमाव नित्य नहीं है। व्यक्तियों की तरह जातियों, घरों की तरह राष्ट्रों और नगरों की तरह साम्राज्यों के उजड़ते देर नहीं लगती। जो आज अपना पेट फुलाये सेठ बने बैठे हैं कल वही दिवालिए बन कर दर दर धक्के खाते हैं। जो कल भुवन कम्पा रहे होते हैं उन्हीं के सिर पर काल का भूत चढ़ा नाच रहा होता है। इस तरह मालूम नहीं किस की कब बारी आ जाय?" इस चलाचली के मेले में यह पाठ पढ़ते हुये भारतवासी क्यों कर दस साल तक चुप साधे रहें; यह समझ नहीं पड़ता।

'हिज़रत' या "मातृ पूजा"

जब मान्य शौकत-अली कलकत्ते में यह कह चुके हैं कि "यदि ख़लीफ़ा भी भारत पर हमला करते तो वे भारतीयों की रक्षा और स्वतन्त्रता के लिये उनके विरुद्ध लड़ते"—तो अब मुसल्मान भाई मातृ पूजा करते हुये यहीं शरीरान्त कर देने की अपेक्षा कायरों की तरह 'हिज़रत' कर यहां से भागने की तय्यारी में क्यों हैं?

न्याय—तुला

जिस न्याय तुला पर टर्की को तोला जाकर आर्मीनिया के लिये उसे सख्त सज़ा देदी गई है और जिस न्याय तुला पर "कार्कज़ूरी" ने मि० लायडजार्ज महामन्त्री, लार्ड फ्रेंच कमाण्डर इन चीफ़ आयर्लैंड और मि० इन-मैक्फ़र्सन आयर्लैंड के मुख्य मन्त्री को कार्क के मेयर की हत्या के लिये दोषी ठहराया है—उस न्याय तुला पर राजभक्त-भारतीयों के लिये न्याय तोलने का साहस नहीं है-यह अमृतसर के हत्याकाण्ड और पञ्जाब के अत्याचारों ने साफ़ कर दिया है।

युरोपियन संघ और टाइम्स आफ इण्डिया

टाइम्स आफ इण्डिया की पक्षपात शून्य सम्मति पर कि डायर की करतूत ने सबका सिर लज्जा से नीचा कर दिया है बम्बई और कलकत्ता के युरोपियन सब कुम्हला पड़े हैं और कहते हैं कि हन्टर कमेटी की रिपोर्ट प्रगट होने तक किसी भी राज—भृत्य पर जनता को सम्मति नहीं बनानी चाहिये। बहुत अच्छा होता यदि यही पाठ गोरेशाही के गोरे—काले (Anglo Indian) खूनी पत्रों और उनके सम्वाद दाताओं को कुछ मास पहिले रटाया जाता।

पाओनियर और जनरल डायर

जनरल डायर के कारनामों के लिए बड़ा वकील, गोरेशाही का राहदर्शक प्रयाग का गोरा-काला पत्र जनरल के लिए गवाहियां ढूंढता रहता है। अभी हाल ही में उस दिन एक "१४ साल भारत में" नामका खूनी गवाह उक्त पत्र में लिखता है कि "यदि शूरवीर डायर यह हत्याकाण्ड न करता तो उसे अपने सिंहासन से उतर कर यह हत्याकाण्ड करना पड़ता।" चूंकि वीर डायर के बाद आप ही "जनरल" बनने के उम्मेदवार होंगे। निश्चय यही गवाह अपनी जाति का बेड़ा उस पार लगायेंगे।

भारत—मित्रों की फ़िकर

जब से मान्य महम्मद अली इङ्गलैण्ड और मान्य लाजपतराय भारत पहुंचे हैं तब से भारत की चिन्ता में व्यग्र कर्नल येट और चार्लस ओमन को नींद नहीं आती। इसी फ़िकर के मारे वे पार्लियामेन्ट में भारत सचिव को भी चैन नहीं लेने देते।

भाई परमानन्द और कालेपानी के अन्य कैदी

भाई परमानन्द जी को जैसे सरकार यथा समय छोड़ना भूल गई थी हम भी वैसे आप का यथासमय स्वागत करना भूल गये थे। अब हम आप का हार्दिक स्वागत करते हैं। भाई जी ने देशवासियों के प्रति धन्यवाद प्रगट करते हुये लिखा है कि अभी ५० राजनीतिक कैदी काले पानी की चार दिवारी के भीतर राजकीय घोषणा के अमृत बिन्दु के प्यासे पड़े तड़प रहे हैं। शायद राजकीय क्षमा की पहुंच उन तक नहीं हो सकी—क्योंकि मि० मिलर साहिब ने साथ वैस्टर्न रेलवे में हड़ताल करा रक्खी है।

राजकीय घोषणा की व्याख्या

मि० हार्नीमन भारत सरकार की दृष्टि में अभी भारतीय शांति के लिये कण्टक हैं—अतः वे भारत न पधार सकेंगे। यही राजकीय—घोषणा की यथार्थ व्याख्या है।

पटियाले को बधाइयां

कुम्भकर्ण की निद्रा और रावण के भोग विलास में मस्त हमारे रियासती राजा लोग करवट बदलते हुए कुछ न कुछ करही दिखाते हैं। अभी पटियाले के महाराजा ने २० हज़ार रुपया ओड्वायर-स्मारक के लिए दिया है। बधाइयां! यह उसी दिन का समाचार है जिस दिन आप शिमले के सरकारी घर से बाहिर तशरीफ़ लाये थे। अब तक ब्रिटिश जाति का मान रसातल में पहुंचाने का उद्योग केवल काले-गोरे लोग ही कर रहे थे, अब हमारे रियासती राजाओं ने भी उस उद्योग में हाथ बटाया है। धन्यवाद!

पञ्जाब को चेतावनी

राजद्रोही—सभा कानून (Seditious meeting act) की ओर पञ्जाब का ध्यान खींचा गया है। पञ्जाबवासी कहीं "मार्शल ला" की अमोघ शक्ति भूल गये!

अधिकार-चर्चा या वोट भिक्षा

जातीय विश्वविद्यालयों की ओर से की गई गुरुकुल विश्वविद्यालय के स्नातकों की मताधिकार-चर्चा को सहयोगी प्रताप—कानपुर ने भिक्षा का नाम दिया है। क्या सहयोगी समझता है कि "पराधीन जाति अपने प्रभुओं से भिक्षा ही मांग सकती है, पर अधिकार चर्चा नहीं कर सकती।"

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिये छपा।

ओ३म्

Registered No A 875

श्रद्धा

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि ।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः ॥ (ऋ० म० १० सू० १५१, म० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! इस (समय) हमको श्रद्धावान करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | १६ ज्येष्ठ सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० २८ मई सन् १९२० ई० | संख्या ६ भाग १

हृदयोद्गार

ए बगुले!

(एक मछली के दिलके उद्गार)

समझ गया खेल तेरी मुझसे न दिल की बातें बहुत छिपाना ॥टेक॥
है आज भी मुझको याद आती वो चान्दनी रात प्यारी प्यारी ।
किनारे गंगा के जब तू आया था, घूमने का बना बहाना ॥ १ ॥
प्रशान्त पानी में मछलियें सब, थे नींद में मस्त हो रही थीं ।
लगा सुनाने वो बेसुरा सा तू, इनको उठ उठ के अपना गाना ॥२॥
निराला तेरा था रंग इनसे, निराला तेरा था रूप इनसे ।
निराली तेरी थी बोली इनसे, अनोखा तेरा था सारा बाना ॥३॥
वो लड़ रहीं थीं अपने भाइयोंसे, थी घरमें मेरे ही फूट फैली ।
थे स्वर्ग, सौन्दर्य धाम मेरा—बना हुआ था कसाई खाना ॥ ४ ॥
विरक्त योगी तुझे समझ कर, वो मिलके तेरी शरण में आईं ।
शुरू किया तब तो इस के तूने, उन्हें हरी खेतियां दिखाना ॥५॥
लड़ा के इनको हंसी हंसी में, कभी जिताया कभी हराया ।
ये खेल तेरी बनी हुई थी, कभी हंसाना कभी रुलाना ॥ ६ ॥
जो सो रहे थे चला के जादू, बनाया बेहोश उनको तूने ।
जो जागते थे झपट के उनको, शुरू किया चोंच से उठाना ॥ ७ ॥
किसी को मारा किसी को खाया, किसी को जाकर के दूर फेंका ।
यों धीरे धीरे उजाड़ डाला, ये तूने मेरा भरा खजाना ॥ ८ ॥
यहां पै तेरे से लाखों बगुले हैं, खा रहे आज मछलियों को ।
हरेक योधा बना हुआ है, है काम सबका हमें सताना ॥ ९ ॥
ए झूठे योगी! गुजर चुकी है, निशा, वो सूरज निकल रहे हैं ।
वो योगी अब तो यहां फिरेंगे, है याद जिनको गया जमाना ॥ १० ॥

"निधि"

टर्की!

सम्भल! सम्भल!! है लगी पलटने पलभर में काया तेरी,
तुझ ही पर अब क्रूर कालने देख नजर अपनी फेरी ।
किधर जायगी! होगा तुझ पर ऐसा भीषण अत्याचार,
कुचली जावेगी स्वतन्त्रता तेरे प्राणों की आधार ॥ १ ॥
वह सुख, वह आनन्द सभी कुछ तेरा हो जावेगा दूर,
जिस में अब तक भूल सभी कुछ तू रहती थी होकर चूर ।
स्वप्न सदृश वह खेल पुरानी तेरे आगे नाचेगी,
तू रोवेगी अपनी बीती सबको कथा सुनावेगी ॥ २ ॥
कभी समय था तेरा डंका ही बजता था चारों ओर,
क्या यूरोप? सभी डरते थे सुनकर टर्की! तेरा शोर ।
तूने ही इसलाम धर्म का लेकर कठिन क्रूर तलवार,
सारे जग में अपने बल से खूब किया था कभी प्रचार ॥ ३ ॥
किन्तु आज तो दैव-चक्र ने उल्टा ही पल्टा खाया,
जो नीचे था देख वही है पीठ ठोक ऊपर आया ।
तेरे दास बने हैं मालिक तेरा करते बटवारा,
तू चुपचाप पड़ी है अब तक आज बड़ा है हत्यारा ॥ ४ ॥
वह गर्वीला झण्डा तेरा देख हाय गिर जावेगा,
अभी मिनट में दर्प तुम्हारा मट्टी में मिल जावेगा ।
इस दुनियां में फिर तो तेरा नहीं [illegible] नाम निशान,
तेरी ओर नहीं यह देगा सभ्य जगत् तब कुछ भी ध्यान ॥ ५ ॥

(शेष फिर) "आनन्द"

ब्रह्मचर्य सूक्त की व्याख्या।

ओ३म्। पूर्वो जातो ब्रह्मणो ब्रह्मचारी घर्मं वसानस्तपसोदतिष्ठत्। तस्माज्जातं ब्राह्मणं ब्रह्म ज्येष्ठं देवाश्च सर्वे अमृतेन साकम्॥ ५॥

"ब्रह्मणः वेद ज्ञान (की प्राप्ति) से पूर्वः जातः ब्रह्मचारी पहिला प्रसिद्ध हुआ ब्रह्मचारी घर्मं वसानः दीप्त (प्रकाशमय) रूप को प्राप्त हुआ तपसा + उत् अतिष्ठत् तप से ऊंचा उठता है। तस्मात् उस (पहिले ब्रह्मचारी) से ज्येष्ठम् + ब्रह्म + ब्राह्मण सब से बड़े वेद द्वारा ब्राह्मण उत्पन्न होते हैं च सर्वे देवाः + अमृतेन साकम् और सब विद्वान अमृतत्व सहित (उत्पन्न होते हैं)"

सृष्टि प्रवाह से अनादि है—यही सिद्धान्त सृष्टि उत्पत्ति की समस्या को हल करता है। और कोई भी कल्पना करो—शून्य से सृष्टि हुई, सदा से कार्य जगत् ऐसा ही है इत्यादि—ब्राह्मण में सृष्टि की समस्या हल नहीं होती। तब सृष्टि प्रवाह से अनादि है—सूक्ष्म से स्थूल रूप धारण करती और फिर अपने उपादान कारण में लीन हो जाती—यही प्रवाह चल रहा है।

सृष्टि के आदि में जहां परमात्मा ने भौतिक आंखों को लाभ दायक बनाने के लिए भौतिक सूर्य का प्रकाश किया वहां मनुष्य की बुद्धि रूपी अन्तरीय आंखों को सुखदायक बनाने के लिए वेद ज्ञान का प्रकाश किया। जिस तप के प्रभाव से भौतिक सूर्य का उदय हुआ उसी तप के बल (तेभ्य तप्तेभ्यस्त्रयो वेदा अजायत) से तीनों (ज्ञान, कर्म, उपासना रूपी) वेदों का प्रकाश हुआ। उस ब्रह्म विद्या का जिस द्वारा प्रकाश हुआ वही ब्रह्म=वेद का जानने वाला और उस में गति रखने वाला ब्रह्मचारी ब्रह्मा कहलाया। ब्रह्म वेद की ओर चर (गति=ज्ञान, गमन, प्राप्ति) गतिमान हो कर जिसने पहिले उस में गमन करके उस को प्राप्त किया इस लिए ब्रह्मा प्रथम ब्रह्मचारी है। तेजोऽसि तेजो मयि धेहि। तुम तेज स्वरूप हो मुझ में भी तेज को धारण कराओ! इस प्रार्थना को ब्रह्मा ने ही सार्थक बनाया। तप द्वारा उस उपतेज को धारण कर के वह तप से ऊंचा उठ कर मनुष्य सृष्टि का आदि गुरु बना। जब जब सृष्टि होती है, उसका उत्तर तम चलाने वाला आदि पुरुष भी उत्पन्न होता है। इसी भाव को लेकर श्वेताश्वतरोपनिषत् (?) कहा है—"यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै" इसी भाव को प्रकट करते हुए उपरोक्त वेद मन्त्र का मानो एक प्रकार का भाष्य ही मुण्डकोपनिषत् में किया है:—

"ब्रह्मा देवानां प्रथमः सम्बभूव विश्वस्य कर्ता भुवनस्य गोप्ता। स ब्रह्मविद्यां सर्वविद्या प्रतिष्ठामथर्वाय ज्येष्ठपुत्राय प्राह।" "कल्प के आरम्भ से सर्व (वर्णाश्रम) धर्म का प्रचारक और (उस विद्या के प्रचार द्वारा) सब प्राणियों का रक्षक वेद वेत्ताओं में पहिला (अर्थात् समग्र वेद को जानने वाला) पुरुष (अमैथुनी सृष्टि में ब्रह्मा उत्पन्न हुआ) सब विद्याएं जिस में स्थित हैं ऐसे ब्रह्मा जी ने उस ब्रह्मविद्या को अपने ज्येष्ठ पुत्र अथर्वा को उपदेश किया।"

अथर्वा ने अङ्गिरा को और उसने अपने शिष्यों को—इसी प्रकार शिष्य प्रशिष्य परम्परा से ब्रह्मविद्या का प्रचार चला आता है। जिस से वेद के तीनों काण्डों का शंका समाधान होकर अथर्ववेद में उन का पूर्ण ज्ञान होता है इसी लिए अथर्ववेद को ही वेद का अन्त कहना ठीक है। इसी लिए जिस समय शिष्य को ब्रह्मा ने वेद ज्ञान दिया उसका नाम अथर्वा हुआ और उसी से वेदान्त के प्रचार की परम्परा चली।

ब्रह्मा पहिला ब्रह्मचारी हुआ, उसी से ब्रह्म वेद के जानने वाले ब्राह्मण उत्पन्न हुए। ब्राह्मण कौन है? जन्म से तो सब शूद्र हैं—ब्रह्म को पहिचानने से ही ब्राह्मण बनता है। जन्मना जायते शूद्रस्संस्काराद्द्विजोच्यते। वेदभ्यासी भवेद्विप्रः ब्रह्म जानाति ब्राह्मणः॥ आदि, सब से पहिले स्थित, ब्रह्मचारी ब्रह्मा ने ही संस्कार द्वारा दूसरा जन्म देकर शूद्रों को ब्राह्मण बनाया और फिर यही परम्परा चलती रही। सब विद्वान् ब्रह्मा की प्रथम शिक्षा को शिरोधार्य समझ कर ही मोक्ष रूपी अमृत का पान करते हैं और अब भी यदि सच्चा आचार्य मिल जावे और वह ब्रह्मचारी को विद्या माता के गर्भ में स्थित करा के तीन रात्री (४८ वर्षों की आयु) तक रख कर उसकी पूर्ण रक्षा के पश्चात् दूसरा आत्मिक जन्म दे तो निस्सन्देह वह आदित्य ब्रह्मचारी अमर जीवन को साथ लेकर ही उत्पन्न हो।

इसी भाव को कैसी उत्कृष्ट भाषा में मनु भगवान् ने प्रकट किया है:—ब्राह्मणो जायमानो हि पृथिव्यामधिजायते। ईश्वरः सर्वभूतानां धर्म कोशस्य गुप्तये॥ पृथिवी में ब्राह्मण का जन्म होना ही श्रेष्ठ है क्योंकि वही धर्म के खजाने का रक्षक है। ब्राह्मण सदा ब्रह्मचारी है क्योंकि वह इन्द्रियों को वश में रखता है और गृहस्थाश्रम के कर्तव्य पालन करता हुआ भी इन्द्रियों का गुलाम नहीं बनता। वह इतना ऊंचा उठता है कि उसे भोग नीचे नहीं खींच सकता। वह सारे जगत् के पदार्थों को अपना ही समझता है इस लिए उसके वास्ते कोई भी वस्तु अप्राप्त नहीं रहती—सर्वं स्वं ब्राह्मणस्येदं यत्किञ्चिज्जगतीगतम्। श्रैष्ठ्येनाभिजनेनेदं सर्वं वै ब्राह्मणोऽर्हति—"जो कुछ भी जगत् के पदार्थ हैं वे सब ब्राह्मण के हैं, ब्रह्मोत्पत्ति रूप श्रेष्ठता के कारण ब्राह्मण सम्पूर्ण को ग्रहण करने योग्य है।" तब तो मनु महाराज का कहना ठीक ही है कि—स्वमेव ब्राह्मणो भुङ्क्ते स्वं वस्ते स्वं ददाति च। आनृशंस्याद् ब्राह्मणस्य भुञ्जते हीतरे जनाः—ब्राह्मण अपना ही खाता अपना ही पहिरता और अपना ही दान देता है। इस में सन्देह नहीं कि और लोग ब्राह्मण का दिया हुआ भोगते हैं। संसार के भोगों में लाव न फंसकर जो ब्राह्मण अन्य सारी प्रजा को यथार्थ भोग के लिए कमाई करने का सीधा मार्ग दिखाता है—वही धन्य है।

अब भी यज्ञ में ब्रह्मा का उच्चासन रहता है। यजमान और अन्य सब यज्ञ-पुरुषों को विषय में चलाना अब भी ब्रह्मा का ही अधिकार है। गिरते हुओं को वही टोक कर गिरने से बचाता है। जहां मनु भगवान् ने धर्माधर्म का निर्णय करने के लिए दस विद्वानों की सभा और न्यून से न्यून तीन वेदों के जुदा जुदा जानने वाले तीन की धर्म सभा का विधान किया है वहां जो व्यवस्था, एक चारों वेदों का ज्ञाता तदानुकूल आचरण रखने वाला ब्रह्मचारी, दे उसको बड़े से बड़े बहुपक्ष पर भी प्रधानता दी है।

संसार में जब तक ऐसी गुरु-शिष्य परम्परा स्थिर रहती है तब तक उसके अन्दर धर्म और शान्ति का राज रहता है और जब जब इस परम्परा में बाधा पड़ती है तब तब ही अधर्म और अशान्ति का दौर-दौरा चल जाता है। जब जब भी पहिले ब्रह्मचारी का आदर्श सर्वसाधारण की आंखों से ओझल होता है तब तब ही प्रजा का सम्मिलित आत्मा उसके लिए व्याकुल हो कर पुकारता है। जब प्रजा के इस अनुताप में स्वच्छ, निर्मल शुद्ध भाव प्रवेश करता है तब प्रजा के मालिक फिर से ब्रह्मचारी ब्रह्मा को संसार के उद्धार की आज्ञा देते हैं।

हे, संसार की व्याकुल प्रजा! क्या लाखों के रक्त और करोड़ों की आत्म-हत्या ने तेरे हृदय को अब तक शुद्ध नहीं किया, कि जिस से अब तक तेरे अन्दर ब्रह्मचारी ब्रह्मा का प्रादुर्भाव नहीं हुआ। तब प्रभु से प्रार्थना करो कि, वह सच्ची शुद्धी प्रदान करे जिस से संसार का शीघ्र कल्याण हो॥ ओमित्यो३म्।

श्रद्धानन्द सन्यासी—

श्रद्धा

भावी कार्य क्रम--

पहिला पग

देश में, इस समय, एक नवयुग आ-रहा है। कुछ ही दिनों में, सुधार स्कीम के अनुसार, नई कौंसिलें बन जावेंगी और शासन की बागडोर, किसी अंश तक, हमारे देश भाइयों के हाथ में आजावेगी। कौंसिलों के चुनाव के लिए अभी से तैयारियां हो रही हैं। उम्मेदवार खड़े हो रहे हैं। नरम और गरम दल के नेता भावी कार्य क्रम को बताने के लिए अपने २ उद्घोषणा पत्र निकाल रहे हैं परन्तु इन में वास्तविकता कुछ भी प्रतीत नहीं होती। इस विषय में "मैंचेस्टर गार्डियन" का यह कथन सर्वथा उचित प्रतीत होता है कि जैसे कामान्ध पुरुष मीठी २ बातों से दूसरों को फंसाता है, उसी प्रकार से उद्घोषणा पत्र बड़ी २ बातों से सर्वसाधारण को लुभाकर अपने पक्ष में वोट लेने मात्र के लिए ही हैं। वस्तुतः, बात है भी यही है। "उत्तरदायित्वपूर्ण शासन प्राप्त करना" "सम्पूर्ण स्वराज्य लेना" "अधिकार" "वैध आन्दोलन" "शिक्षा" "हिन्दू-मुसलमान एकता" इत्यादि ये बातें तो ऐसी हैं जो क्या नरम और क्या गरम-दोनों दलों को ही स्वीकृत हैं और जिस के लिए दोनों प्रकार के नेता प्रयत्न करेंगे ही। क्या "स्वराज्य" और "अधिकार" प्राप्ति के लिए "वैध आन्दोलन" करने से कोई भी दल इन्कार कर सकता है? क्या वे इस के लिए पूर्ण प्रयत्न न करेंगे? यदि हां, तब विशेष उद्घोषणा पत्रों की क्या आवश्यकता है? अब समझ में आजाता है कि दल बन्दी से भरी हुई ये उद्घोषणायें क्यों थोथी हैं? इसी लिए कि इन में शाखाओं को ही सुधारने का प्रयत्न किया गया है मूल को नहीं।

तब भावी के लिए हमारा कार्य विभाग किस प्रकार का होना चाहिये जिस से देश में कुछ मौलिक सुधार हो, बनावटी नहीं।

देश के नेताओं को और विशेषतया राजनैतिक नेताओं को अब यह अच्छी तरह से समझ लेना चाहिये कि राजनैतिक सुधारों के साथ सामाजिक सुधारों की भी अत्यन्त आवश्यकता है। अब तक समझा यह जाता रहा है कि समाज सुधार का काम आर्य समाज—ब्रह्म समाज आदि समाजों का ही है कांग्रेस का नहीं। इसी भयंकर भूल का यह परिणाम है कि आज ६ करोड़ से अधिक भारत माता के पुत्र हमसे बिछुड़ कर ईसा की भेड़-बकरियों की संख्या बढ़ा रहे हैं। यदि अभी तक हमने अपनी इस भूल को नहीं समझा तो अब समझ लेना चाहिये। इस समय देश में प्रचलित जो "छूत—अछूत" "उच्च—नीच" "शिक्षित अशिक्षित" "ब्राह्मण अब्राह्मण" आदि के झूठे भेद हैं, उन्हें दूर करते हुये अछूतों को भी छूत बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। देश के नेताओं ने अछूतोद्धार के महत्व को समझकर कार्य रूप में यदि अभी परिणित न किया और भावी कार्यक्रम का इसे एक मुख्य अंग समझते हुए इसके लिए उचित आन्दोलन न किया, तब वे एक दिन शोक से देखेंगे कि उन्हीं के पूर्वजों की सन्तान उनसे विरुद्ध लड़ने को तैयार हैं।

समाजसुधार की दृष्टि से तो अछूतोद्धार का महत्व है ही परन्तु राजनैतिक दृष्टि से भी इस का अत्यन्त महत्व है। वह क्या? समाचार पत्रों के पढ़ने से ज्ञात होता है कि नई कौन्सिलों की उम्मेदवारी के लिए लोग अभी से खड़े होरहे हैं और अपने पक्ष में वोट लेने के लिए सब प्रकार के प्रयत्न किए जारहे हैं। यद्यपि गांवों में रहने वाले 'अशिक्षितों' और 'अछूतों' की ओर से भी इन में कुछ प्रतिनिधि भेजे जाने का नियम है परन्तु सुना जाता कि कुछ एक ज़मींदार, नव्वाब और रायसाहब—रायबहादुरिए उन पर अनुचित दबाव डालते हुए अपने लिए वोट ले रहे हैं। ईश्वर करे यह ख़बर झूठ हो पर कहा जाता है कि सरकार का भी इस में कुछ हाथ है। यू. पी. में एक दम ऐसे नव्वाबों, राजाओं और जीहजूरों का जिन्हें राजनीति का क, ख भी नहीं आता, उम्मेदवारी के लिए खड़े होजाना इस सन्देह को और भी पुष्ट करता है। यदि यही अवस्था रही तो फिर कौन्सिलें उन्हीं "ख़रीदे हुए" आदमियों से भर जावेंगी जिन से आज कल भरी हुई हैं। "आसमान से गिरा और खजूर में अटका" वाली कहावत के अनुसार कौन्सिलें फिर ऊंचे आदमियों के लिए ही होंगी।

शिक्षित दल को और राजनैतिक नेताओं को इस भयंकर भूल से बचने के लिए हम अभी से चेताव दिये देते हैं। यद्यपि अब बहुत देर होगई है पर तो भी हाथ पांव मारने से कुछ न कुछ बन ही जावेगा। उन्हें चाहिए कि इसे अपने कार्य क्रम का एक मुख्य अंग बनावें।

इस लिए आने वाले नव युग में सफलता पूर्वक काम करने के लिए हमारा प्रथम पग यह होना चाहिए कि हम अछूतों को सब प्रकार से अपने साथ मिलावें। दूसरा पग क्या होना चाहिए-इस पर हम अगले अंक में विचार करेंगे।

अभागी टर्की !

संसार में ग़रीब की कोई नहीं सुनता, इस विषय में जो उदाहरण दिये जाते थे, इतिहास में टर्की की गिनती भी अब उन्हीं में हुआ करेगी। किसी समय टर्की का सिक्का एशिया के बड़े भाग पर बैठा हुआ था, उसकी सभ्यता का दौरदौरा था परन्तु आज संसार के राजनैतिक क्षेत्र से इस प्रकार ज़बरदस्ती धकेला जाता देख कर वस्तुतः उस पर तरस आता है। परन्तु युरुप की राजनीति में 'तरस' और 'दया' के लिए कोई स्थान नहीं है। युरूप! तुम्हें "बधाइयां"! क्योंकि प्रेज़िडेण्ट विल्सन की १४ बातों की आड़ में की गई तुम्हारी कुटिल नीति आज सफल हो गई है। क्योंकि तुम्हारी आंखों का कांटा बुड्ढा रोगी अपना बिस्तर—बोरिया सिर पर उठाये पर तुम्हारी ओर क्रोध और घृणा पूर्ण नेत्रों से देखते हुए आज [illegible] है।

इङ्गलैण्ड! घर में घी के दिए जलाओ क्यों कि 'मोसुल' की तेल की खानें अब तुम्हारी ही मुट्ठी में हैं! इस तेल की रोशनी से अब तुमने काली कलियों के चेहरों को खूब चमकाना!! टर्की का निपटारा 'लीग आव नेशन' की पहिली करतूत है! देखें, आगे क्या गुल खिलते हैं? इस दाव पेंच और कतरब्योंत को देखकर सार्वभौम-शान्ति की आशा करना क्या बड़ा भूल नहीं है?

राजनीति में झूठ

लोकमान्य तिलक ने पिछले दिनों अपने एक लेख में कहा था कि राजनीति में झूठ बोलने से कोई हानि नहीं और विशुद्ध वा निर्विशेषण सत्य के लिए इस में कोई स्थान नहीं है परन्तु, इस के विरुद्ध, महात्मा गान्धी का यह सिद्धान्त है कि मनुष्य को सदा--क्या राजनीति में और क्या धर्म में सत्य पर ही आरूढ़ रहना चाहिए। तभी वे वह सफल-मनोरथ हो सकता है। आजकल समाचार पत्रों में इस विषय पर खूब विवाद चल रहा है। प्रश्न यह है कि क्या राजनीति में झूठ बोलना चाहिये? हम तो इस विषय में महात्मा गान्धी के साथ पूर्ण सहमत हैं। लोकमान्य तिलक जी से हम पूछते हैं कि यदि राजनीति में झूठ बोलना उचित ही है तब वे नौकरशाही पर झूठे दोष लगाने, झूठे कारण ढूंढने आदि का दोष क्यों लगाया करते हैं? उन्हों ने अपनी सब पुस्तकों में सत्य बोलने पर क्यों बल दिया है? अच्छा, यदि लोकमान्य जी के इस सिद्धान्त को ठीक ही मान लिया जाय तब इसका प्रयोग सब से पहिले उन्हीं पर होना चाहिए। और यह इस रूप में, कि इस में क्या प्रमाण है कि राजनैतिक क्षेत्र में वे जो कुछ कर रहे हैं, सच्चे भाव ही से कर रहे हैं। हमारा यह अभिप्राय कभी नहीं कि हमें उनकी देश भक्ति की सच्चाई के विषय में कुछ भी आशंका है पर जब प्रश्न सिद्धान्त का है तब उस पर सभी दृष्टि से विचार होना चाहिये। इतिहास इस बात का साक्षी है कि जिसने एक दिन क्षणिक लाभ के लिए विदेशियों के सामने झूठ बोला, अगले दिन वह अपने देश भाइयों को भी धोखा दिये बिना नहीं रह सकता। क्यों कि विचार और भाव तो वे ही हैं केवल स्थान ही भिन्न २ है।

आयरलैण्ड और भारत

कई सदियों से अब तक आयरलैण्ड इङ्गलैण्ड के पावों में लोटता हुआ और गिड़ गिड़ाता हुआ ही अपने अधिकारों को मांगता था पर उससे कुछ फल निकलता न देख अब वह ब्रिटेन के सिर पर चढ़ कर अपने अधिकारों को मांगता नहीं किन्तु स्वयं उद्घोषित कर रहा है। ठीक है "भूत वही जो सिर पर चढ़ कर बोले।" दैनिक पत्रों में प्रकाशित होने वाली रूटर की तारें यदि सच्ची हैं--जिस में अभी हमें बहुत सन्देह है--तो वस्तुतः सिनफीन वहां बड़ा दंगा कर रहे हैं। कुछ ही हो, सरकार की ओर से भी हाउस आव कामन्स में नई कठोर नीति की उद्घोषणा कर दी गई है जिस के अनुसार ऐसी घटनाओं को दबाने के लिए सब प्रकार के साधन प्रयुक्त किये जावेंगे। इस में अभी बहुत सन्देह है कि ऐसी नीति से कहां तक सफलता होगी क्यों कि जिन कठोर-शासन के परिणाम स्वरूप ये घटनायें हैं वे उसी प्रकार के शासन से कैसे दब जावेंगी। एक भूल के लिए की गई दूसरी भूल से कोई बात सुधार नहीं सकती। इतिहास इस बात को डंके की चोट कह रहा है कि अत्याचार और कठोरता से स्वतन्त्रता, जातीयता और स्वराज्य के भाव कभी दब नहीं सकते। परन्तु शोक है कि वेस्टमैन्स्टर में बैठे हुये राजनीतिज्ञ इस सिद्धान्त को समझते हुये भी इस के विरुद्ध न केवल आयरलैण्ड में किन्तु भारत और मिश्र में भी कार्य करने के लिए तत्पर हैं। गत वर्ष पंजाब में जो घटनायें हुई थीं, आयरलैण्ड में उनसे भी अधिक भयंकर होने पर भी यद्यपि वहां पर मार्शल-ला नहीं लगाया पर तथापि शासन को कठोरता का रूप देने में कोई कसर नहीं छोड़ी गई। हम तो भारत-सरकार नहीं २ ब्रिटिश-सरकार से यही कहते हैं कि वह संसार की गति को देखे, समय की नब्ज़ को पहिचाने और तदनुसार न केवल आयरलैण्ड के प्रति भी किन्तु भारत और मिश्र के प्रति कठोरनीति के अव अवलम्बन को छोड़ते हुये उदार-नीति का ही आश्रय ले। अब उसकी शान्ति इसी में है।

मि॰ तिलक का प्रायश्चित

'टाइम्स आव इण्डिया' के गत अंक में यह प्रकाशित हुआ है कि मि॰ तिलक ने अपने दूसरे पुत्र के विवाहोत्सव में इंगलैण्ड जाने के लिए प्रायश्चित किया है। यदि खबर सच्ची है तो वस्तुतः लोकमान्य तिलक जैसे नेता के जीवन पर यह एक कलंक है कि वे समाज सुधार के मामलों में इतने संकुचित हृदय के हैं।

गुजरात में महिला विश्वविद्यालय

गुजरात काठियावाड़ में पूना के महिला विश्वविद्यालय के अनुसार स्त्रियों के लिए एक विद्यापीठ बनने लगा है जिस में बम्बई के "सर चीनाई"ने ३३ लाख रुपये दान दिए हैं। गुजरात वालों का उद्योग प्रशंसनीय है।

बालक के गले में फांसी!

पो॰ ढाका (जि॰ चम्पारन) से किसी चन्द्रहासिंह, छरूपा, ने हमारे पास एक चिट्ठी भेजी है। उसने गिड़गिड़ाते हुए लिखा है कि, "मेरे बाल विवाह की अनिच्छा प्रकट करने पर भी मेरे पिता तथा अन्य कुटुम्बी जबरदस्ती मुझे एक बारात में घसीट ले गये। वहां जाने पर मैं बहुत रोया-धोया और उसी समय मेरी सुध-बुध जाती रही। इतने में, सभी मेरी कर दी गई। अब अगर शादी से मेरा उद्धार नहीं हुआ तो मैं आत्महत्या कर लूंगा।' (स्वदेश)

अपूर्व पारितोषिक

का उपहार

साहित्य परिषद् के सब सभ्यों तथा गुरुकुलीय ब्रह्मचारियों को विदित हो कि इस वर्ष साहित्यपरिषद् ने उन महानुभाव को जो संस्कृत भाषा में "स्वामी दयानन्द" के विषय में सर्वोत्तम १०८ श्लोक बनायेंगे। २५) का उपहार देने का निश्चय किया है। इन १०८ श्लोकों में से २० से अधिक अनुष्टुप छन्द के न होने चाहिये। श्लोक बनाने का अधिकार साहित्य परिषद् के सभ्यों तथा गुरुकुल कांगड़ी के ब्रह्मचारियों को ही है। कवि महानुभावों को, अपने श्लोक आश्विन मास के अन्त तक भेज देने चाहिए।

भीमसेन (देवभिक्षुः)
मन्त्री साहित्यपरिषद्

हमारे नवीन सहयोगी

ज्योति

लाहौर से प्रकाशित होने वाली इस नई मासिक पत्रिका का हम हार्दिक स्वागत करते हैं। आर्य जगत् में प्रसिद्ध, विदुषी श्रीमती विद्यावती सेठ बी.ए. इस की सम्पादिका हैं। नारी-जगत् के उद्धार के लिये आपने जो आजन्म सेवा का कठोर व्रत धारण किया हुआ है, वह किसी से छिपा नहीं है। आपकी उस अनथक सेवा की लगन के कई फलों में से यह पत्र भी एक है जिसका प्रथम अंक इस समय हमारे सामने है। यह उत्तम २ लेख और कविताओं से पूर्ण है। प्रारम्भ में महात्मा गान्धी जी के अपने हाथ के लिखे हुवे अक्षरों का एक पत्र है। लेखों में श्री छेदीलाल जी प्रोफेसर गुरुकुल-कांगड़ी का "हमारी आर्थिक स्थिति" पर और श्री प्रोफेसर रामदेव जी बी.ए. सम्पादक वैदिक मैगज़ीन का "महाभारत कालीन स्त्री शिक्षा" पर लिखा गया लेख अत्यन्त खोज और महत्व पूर्ण है। पत्रिका की नीति अत्यन्त उदार है क्या कि इस में धार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक और साहित्यिक सभी प्रकार के लेख हैं। इस पत्रिका की दूसरी बड़ी विशेषता यह है कि इस का एक भाग जहां सर्व साधारण के लिए उपयोगी लेखों से परिपूर्ण है वहां स्त्रियों में शिक्षा फैलाने तथा उन्हें उत्तम उत्तम लेख लिखने में उत्साहित करने के लिए "वनिता-विनोद" नाम का एक पृथक् विभाग है जिस में "केवल स्त्रियों और कन्याओं द्वारा लिखे हुवे स्त्रियुपयोगी लेख रहा" करेंगे। इस "वनिता विनोद" में कला कौशल सम्बन्धी लेख प्रतिमास रहा" करेंगे। इस नये अङ्क में श्रीमती भगवती जी द्वारा "जनी सुश्रुषा" पर लिखित लेख नारियों के लिए पढ़ने योग्य है। पत्र का आकार सरस्वती से कुछ बड़ा है। पृष्ठ संख्या ७० है। वार्षिक मूल्य ४॥) परन्तु स्त्रियों से ४) है जो कि लेख-सामग्री और पृष्ठ संख्या को दृष्टि में रखते हुये बहुत नहीं है। हम प्रत्येक सद्गृहस्थ में इस पत्र का प्रवेश चाहते हैं। इस अंक की कृतकार्यता पर हम श्री सम्पादिका जी को बधाई देते हैं और आशा करते हैं कि पत्रिका उन्नति में निरन्तर तत्पर रहेगी।

धर्माभ्युदय

यह मासिक पत्र आगरे से निकलता है जिस के सम्पादक श्री नारायणदत्त विद्याधर्मी हैं। अगस्ती मास का विशेषांक हमारे पास समालोचनार्थ आया है। टाइटिल पेज पर कई रंगों से रंगा हुआ भारत माता का एक सुन्दर चित्र है जिस के हाथ में "अहिंसा परमो धर्मः" से अंकित एक झण्डा है। भीतर देश के प्रसिद्ध नेता महात्मा गान्धी, लोकमान्य तिलक, पं० मदनमोहन मालवीय और पं० नेहरू जी के चित्रों के अतिरिक्त कई जैन आचार्यों के भी चित्र हैं। साधारणतया सभी लेख अच्छे हैं परन्तु "प्राचीन भारत में डाक व्यवस्था" "धन कैसे कमाया जाता है" "पुर्तगाल भाषा से हमारा सम्बन्ध" "स्त्रियों की सम्मति कैसे हो" इत्यादि लेख विशेषतया मननीय हैं। बीच २ में उत्तम कविताएं भोजन में सुगन्ध का काम करती हैं। वस्तुतः, यह अपनी तड़क भड़क और सज धज में हिन्दी के बड़े पत्रों को मात कर गया है। सरस्वती के आकार के १४० पृष्ठ हैं। वार्षिक मूल्य ३) और विशेषांक का १) है। इस अंक की सफलता पर हम सम्पादक जी को धन्यवाद देते हैं। हिन्दी प्रेमियों को इस पत्र के सञ्चालकों का उत्साह बढ़ाना चाहिए।

देश

इस नाम का एक नया साप्ताहिक पत्र हाल ही में, पटना (बिहार) से निकलना प्रारम्भ हुआ है। इस के सम्पादक बिहार के प्रसिद्ध देश भक्त बा० राजेन्द्रप्रसाद एम. ए. एल. एल. बी. हैं। इसका ७ वां अङ्क हमारे सामने है जिस में विचार पूर्ण लेख और सम्पादकीय टिप्पणियां हैं। इस अंक में पुरी के अकाल का 'हृदय विदारक चित्र' देते हुवे 'शमशान में बिना जलाये हुवे मुर्दों के ढेर' और "अकाल जनित मृत्यु को छिपाये जाने" के विषय में जिन छिपी हुई बातों को खोला गया है—उन्हें पढ़ कर सचमुच सरकार की इस सङ्कुचित और असहानुभूतिपूर्ण नीति पर आश्चर्य और दुख होता है। यदि ये दोष सच्चे नहीं हैं, तो क्यों नहीं सरकार इनका विरोध करती? पत्र की पृष्ठ संख्या १६ और वार्षिक मूल्य २॥) है।

मथुरा समाचार

जैसा कि नाम से स्पष्ट है, यह मथुरा का अर्द्ध—साप्ताहिक पत्र है जिसके सम्पादक श्री० बा० रामनाथ मुख़्तार हैं। आकार 'प्रताप' जैसा, पृष्ठ संख्या ४। वार्षिक मूल्य ३) हैं।

पत्र की नीति पढ़ने से यद्यपि स्पष्ट प्रतीत नहीं होती पर तो भी वह होमरूल और राष्ट्रीयता का प्रचारक प्रतीत होता है। पत्र में सम्पादकीय लेख और टिप्पणियों को भी यदि कुछ स्थान दिया जावे तो उत्तम हो।

छात्र सहोदर

हिन्दी में अब तक ऐसा कोई पत्र न था जो विद्यार्थियों के लिए विशेषतया उपयोगी होता हुआ उन्हें राष्ट्रीयता की शिक्षा भी देवे। परन्तु यह पत्र जिसका प्रथम अंक इस समय हमारे सामने है, इस कमी को बहुत अंश तक दूर करेगा। "हम" इस शीर्षक के नीचे जो सम्पादकीय लेख है, उसके एक २ अक्षर से ऐसे ही भाव टपक रहे हैं। हम चाहते हैं कि छात्रों को अपने विद्याभ्यास में जो कठिनाइयां आती हैं, उस समय यह पत्र सच्चा "सहोदर" होता हुआ अपने इस ध्येय को कभी न भुलावे कि " " .... ऐसे ही राष्ट्रीय भावों से युक्त भावी सन्तान तैयार करने का बीड़ा हमने उठाया है और वह भी राष्ट्रीय भाषा द्वारा।" पत्र के मुख पृष्ठ पर "महर्षि मालवीय" जी का चित्र है। सम्पादक श्री० मातादीन शुक्ल हैं। सरस्वती जैसा आकार है। उत्तम २ लेखों और कविताओं से पूर्ण ३६ पृष्ठ हैं। पत्र होनहार है और छात्रोपयोगी है। वार्षिक मूल्य २॥) और जबलपुर से प्रकाशित होता है।

विवाह या तमाशा ?

जिला आज़मगढ़ के लखपती कलवार बा० रामावतार के २॥ वर्ष के लड़के का विवाह उसी ज़िले के बा० देवीदास की १॥ वर्ष की कन्या से फागुन में होगा। (फलदान हो चुका है)। दोनों कलकत्ते में कारबार करते हैं। लड़की वाला भी पचास साठ हज़ार का आदमी है।

(देश पटना)

विचार तरंग

प्रतिष्ठा

(गतांक से आगे)

(७)

संसार बसन्त के आने पर जमली और बनावटी का भेद खुल जाता है। वनाधर्मी साधु इसे आया देख कर गल से 'कांय कांय' करने लगते हैं किन्तु सच्चे सन्त अपने को चारों दिशाओं में फूलों से घिरा हुआ, मन्द पवन से बोझयमान और ऊंचे स्थान पर बैठा हुआ पाकर गर्दन झुकाये मीठी वाणी बोल २ कर हृदय की कृतज्ञता प्रकाश करते हुये नहीं थकते।

(८)

महात्माओं को दिये गए प्रतिष्ठा और सम्मान उन पर क्षण भर भी नहीं ठहरते (पद्माकर के कमल पत्र पर पड़े जल बिन्दुओं के समान वे तुरन्त अपने असली धाम में जा पहुंचते हैं)—वे उनके चरणों में जा गिरते हैं—जिनके चरणों में वे महात्मा स्वयं उस गुरुदेव का आशीष पाते हैं जिसे कि वह स्वयं सर्व अर्पित हैं या उस माता को भेंट हो जाते हैं जिसके कि वे सपूत हैं और जिसकी अनन्य भक्ति के कारण वे महात्म पद को प्राप्त हैं। इस साधनों में वे महात्मा स्वयं बिल्कुल खाली, निर्लेप और अछूते रहते हैं।

जिन्होंने प्रतिष्ठा की मालायें इधर आती जाती हुई देखा है वे महान् आश्चर्य से देखते हैं कि वे ही प्रतिष्ठायें उन सच्चे महात्माओं पर गले में सुन्दर पुष्पों का हार और परिचिन्ह आभूषण बन कर कैसे उतर रही हैं। यह किसका जादू है। यह क्या महात्माओं की करामात है? किन्तु महात्मा बताते हैं कि यदि यह कोई अलौकिक बात है तो केवल विनम्र रहने की बात है यदि कोई जादू है तो यही जादू है और उनका कुछ जादू या करामात नहीं है।

(९)

पहिले जब मैं चुपचाप सुदूर ग्राम में दिन रात तेरी पूजा करता था, वह मेरे आनन्द के दिन थे ऐसा मानता हूं। किन्तु जब से तेरे कुछ भक्त लोग दर्शन करने आने लगे और आग्रह पूर्वक बुलाया जाकर सामाजिक स्वागत सत्कारों में से गुजरना होने लगा, तब से वह तेरी पूजा विषम हो गई है। वह आनन्द मारा गया है। ऐसी तेरी इच्छा, यदि तूने मुझे यही काम अब सौंपा है। किन्तु मुझे तेरी अकेले उपासना के वे दिन नहीं भूलते जबकि तेरे—केवल तेरे यहां से मुझ पर प्रतिष्ठाओं की दिव्य दृष्टि होती थी—अन्य कोई मुझे न जानता था और न सत्कारपूर्वक अपना मलिन जल मुझ पर डालता था।

किन्तु उससे भी बहुत पहिले जबकि मुझे तेरे चरणों की कुछ खबर न थी एक दिन वह भी था जब मैं एक छोटी सी सभा के सभापति की कुर्सी पर बैठने के लिए ऐसे आतुर था जैसे कि कोई दस दिन का भूखा एक रोटी के टुकड़े को पड़ा पाकर भयंकरता से लपकता है। अहो उद्धारक! तेरी लीला!!

(१०)

जब मैं किसी आदमी को देखता हूं जो कि केवल अपनी कोई त्रुटि बताने वाला न मिलने के कारण घमंड में अकड़ कर चल रहा है, तो देख कर बड़ा तरस आता है और जी दुखता है। मुंह से अपने लिए यही प्रार्थना निकलती है 'हे विधाता, मुझे चाहे सदा किसी जंगल में रखना, किन्तु कभी चाटुकारों के बाड़े में घड़ी भर भी न घिरा रखना। यदि दुर्भाग्य से मेरे गुण और दोष दोनों बताने वाले सच्चे समालोचक मुझे न मिल सकें तो मुझे घोर निन्दकों के बीच में बसा देना किन्तु कृपाकर उस भयंकर स्थान में कभी जगह न देना जहां पर सब प्रश्नों का उत्तर 'जी हां' 'ठीक है' में ही मिलता है, जहां पर ऐसा सेन्सर (Sensor) का प्रबन्ध है कि सिवाय 'वाह, 'वाह' के और किसी भी प्रकार का समाचार लाने वाली हवा तक मुझे न पहुंच सके।"

जहां मेरे केवल काले पार्श्व पर प्रकाश पड़ता है वहां मेरा सब कालापन धीरे २ बढ़ जायगा। और ठीक उसी तरह जहां केवल सफेद पक्ष खुला रहता है, वहां मेरी सब धवलिमा नष्ट होजायगी और मैं पूर्ण काला रह जाऊंगा, यद्यपि जी में मैं अपने को बिल्कुल सफेद समझता रहूंगा। ऐसे निरन्तर धोखे की अवस्था में रहना कितना भयंकर है। इस धोखे से जब आंख खुलती है तो अपनी दशा देख कर सिवाय आत्मघात के और कुछ नहीं बन पड़ता।

मेरा शरीर पहले ही निर्बल है। फिर यदि मैं हमेशा 'वाह वाह' की गर्म भाप हवा में रहूंगा और निन्दा के झोकों से कभी भी जल वायु परिवर्तन न होता रहेगा तो बताओ मेरे अन्त काल में आंखें तो क्या होगा।

(११)

जब कितनी आश्चर्यकारक बात होती है जब हम दम से अपनी प्रशंसा चाहते हैं किन्तु कि हम अच्छी तरह जानते हैं कि वे अज्ञानी और मूर्ख हैं। प्रशंसा के लालच में यह भी नहीं देखते कि हमें क्या चीज़ मिल रही है। मूर्खों की दी हुई प्रतिष्ठा का क्या मूल्य है? जो बिचारा उस बात को समझ ही नहीं सकता वह हमारी क्या प्रशंसा करेगा और क्या निन्दा करेगा। अज्ञानी और स्वार्थी पुरुष जिस समय निन्दा, अपवाद फैलाने लगते हैं तो ज्ञानी लोग इस से बड़ा भारी शकुन समझते हैं।

हे प्रतिष्ठे! तुम्हारा भी संसार में कोई उचित स्थान है। वह वहां है जिस मौके पर अनुभवी वृद्ध पुरुष प्रसन्न होकर हमारे सिर पर हाथ फेरते हैं या सज्जन सहृदय अपनी सराहना का प्रेम हमें प्रदान करते हैं—जबकि इन आप्त पुरुषों से आदर की इच्छा और निरादर का भय हमें उत्साह पूर्वक सदा सन्मार्ग पर रखे रखते हैं। यही अवस्था है जब कि हमें अपने विकास के लिए परदत्त प्रतिष्ठा की ज़रूरत है—जब कि बाल पौधे की अवस्था में इस जलसेक के समय २ पर दिये जाने की ज़रूरत है। "धर्मेन्द्र"

- -:o:—

ग्राहक महाशय पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखा करें:—

प्रबन्धकर्त्ता

गुरुकुल—जगत्

गुरुकुल कांगड़ी

पठन पाठन | विद्यालय तथा महाविद्यालय में पढ़ाई क्रम पूर्वक चल रही है। महाविद्यालय में इतिहास अर्थशास्त्रोपाध्याय छेदीलाल जी बार-एट-ला अवकाश पर चले गये हैं और उन के आने की भी अब शीघ्र ही आशा है। उन की जगह पर प्रो० जयचन्द्र जी विद्यालंकार सहायक इतिहास उपाध्याय बड़ी योग्यता से काम कर रहे हैं। कृषि—उपाध्याय श्री—बाबूराम जी गत सप्ताह यहां से चले गये हैं। इस सप्ताह उनके स्थान पर लायलपुर—कृषि—कालेज के प्रोफेसर श्री०—देशराज जी नियुक्त किये गये हैं। आप उसी कालेज के प्रतिष्ठित ग्रेजुएट (Graduate with honours) हैं। सब कुलवासी आपका हार्दिक स्वागत करते हुये आशा करते हैं कि आप स्थिर रूप से रहते हुये सबको अपने ज्ञान से लाभ उठाने का अवसर देंगे।

सभायें और पत्र | महाविद्यालय की वाग्वर्धिनी, विज्ञान परिषद्, संस्कृतोत्साहिनी आदि सभाओं के अधिवेशन क्रम पूर्वक प्रतिदिन रात्रि को होते हैं। शेष तीन दिनों में दैनिक आंग्लभाषा-सभा (Daily English [illegible]) होती है जो कि अभी कुछ दिन से ब्रह्मचारियों ने फिर से चलाई है। इस में उपाध्याय तथा स्नातक भी सम्मलित होते हैं। विद्यालय-विभाग की भी साहित्य सञ्जीवनी और साहित्योत्साहिनी आदि सभाओं के अधिवेशन अत्यन्त उत्साह पूर्वक रात्रि को होते हैं। इन सब सभाओं के पाक्षिक और मासिक पत्र "राजहंस" "साहित्य चन्द्रिका" तथा "देवप्रीती" उत्तम२ लेखों और चित्रों से विभूषित हो कर अपने अपने समय पर वाचनालय में दर्शन देते रहते हैं।

वाचनालय | "सद्धर्मप्रचारक" और "वैदिक मैगजीन" के यहां से चले जाने के कारण वाचनालय में पत्रों की और विशेषतया आर्य्य भाषा के पत्रों की जो कुछ न्यूनता हो गई थी, वह अब "श्रद्धा के परिवर्त्तन में आने वाले पत्रों के कारण दूर हो गई। वाचनालय से सब कुलवासी अब पूर्ण लाभ उठाते हैं।

ऋतु और स्वास्थ्य | दिन में गर्म हवा चलने और रात को ठण्ड पड़ने के कारण यद्यपि ऋतु बहुत उत्तम नहीं है तथापि ब्रह्मचारियों के स्वास्थ्य पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। रोगी गृह में बेरौनकी ही दीख पड़ती है।

श्री कुलपति जी | श्री—स्वामी श्रद्धानन्द जी गुरुकुल के आवश्यक कार्य के लिए तीन सप्ताह के लिए बाहर जा रहे हैं। २३ को यहां से कलकत्ता के लिए रवाना हो कर २७,२८ को देहली पहुंचेंगे। वहां से आप मैंसवाल की गुरुकुल-शाखा के उत्सव में सम्मिलित होंगे जो कि ३१ मई तथा १ जून को होगा। फिर, आप शाखाओं का निरीक्षण करते हुये लौट आवेंगे।

विदेश में हमारे स्नातक | आर्य जनता से यह छिपा हुआ नहीं है कि इस विश्वविद्यालय के कुछ एक स्नातक विदेश में अध्ययन करने के लिए गये हुये हैं। पं० हरिश्चन्द्र जी कई वर्षों से विदेश में हो हैं। पं० चन्द्रकेतु जी अमेरिका से रसायन का कार्य सीख कर बम्बई की हिन्दू बटन फैक्टरी में कैमिस्ट का काम करते हैं। पं० विनायकराव जी गत वर्ष से बैरिस्टरी पास करने के लिए इंग्लैण्ड गये हुये हैं। पं० ईश्वरदत्त जी दक्षिणी—अफ्रीका में, गुरुकुल की ओर से वैदिक-धर्म के प्रचार का जिस उत्साह से कार्य कर रहे हैं वह पाठकों से छिपा हुआ नहीं है। गुरुकुल प्रेमियों को यह सुनकर प्रसन्नता होगी कि अभी जून मास से दक्षिण हैदराबाद के निवासी हमारे स्नातक भाई श्री पं० शान्तिस्वरूप जी विद्यालंकार शिल्प और उद्योग का कार्य सीखने अमेरिका जारहे हैं। सब कुलवासी आपके लिए मंगल कामना करते हुये परमात्मा से आपकी पूर्ण सफलता की प्रार्थना करते हैं॥

गुरुकुल—इन्द्रप्रस्थ

जेठ की हवा

जेठ की वह हवायें, जिनका वर्णन बाणभट्ट ने हर्ष चरित के कई पृष्ठों में किया है, प्रारम्भ हो गई हैं। लू खूब ज़ोर से चलती है—और प्रातः मिट्टी के बादलों को लिये रहती है। कभी कभी मिट्टी के पीछे दो चार बूंद पानी की भी पड़ जाती हैं। गर्म हवा से सीधा युद्ध करने का जैसा अवसर इस पहाड़ी पर मिलता है, वैसा शायद ही कहीं मिले।

रोग

ज्वर आदि सामान्य रोग इस समय शान्त हैं। एक नये प्रविष्ट ब्रह्मचारी से गल पेड़ों का बीज बोया गया है। पहली श्रेणि के ब्रह्मचारी गल पेड़ों से पड़ रहे हैं। परन्तु सन्तोष इतना है कि रोग का कोई भयानक रूप नहीं है। किसी किसी को गलपेड़ों के साथ थोड़ा सा ज्वर हो जाता है, प्रायः वह भी नहीं होता।

सम्मति

पिछले सप्ताह बताया गया था कि मा० सुन्दरसिंह जी बी,ए,बी.टी. दिल्ली से आये थे, और निरीक्षण करके चले गये। दिल्ली से उन्होंने जो सम्मति भेजी है वह निम्नलिखित प्रकार से है—

"मैंने श्री प० गङ्गाराम जी शर्मा रोपड़ निवासी सहित किसी सूचना देने के बिना ही गुरुकुल की श्रेणियों का निरीक्षण किया। कार्य में—निमग्नता को देख चित्त बहुत ही प्रसन्न हुआ अध्यापक तथा विद्यार्थी अपने २ कार्य में लगे हुए पाये गये। समय तथा स्थान सम्बन्ध प्रत्येक कार्य में नियम देखा गया। सारे निरीक्षण से यह ज्ञात होता था कि प्रबन्धकर्त्ता प० इन्द्रचन्द्र-विद्यावाचस्पति इस सारी कला को बड़े परिश्रम से चला रहे हैं। आप शिक्षा के बड़े गूढ़ मर्मों को समझते हैं।

मैंने प्रथम, द्वितीय, तृतीय श्रेणी का गणित का निरीक्षण किया। ३म श्रेणी को ज़बानी गणित का एक प्रश्न दिया। एक दो श्रेणियों से अष्टाध्यायी के सूत्र सुने। सब कुछ संतोषजनक पाया गया। निम्नलिखित बातों पर यदि अधिक ध्यान रखा जाए तो अच्छा है:—

१. अष्टाध्यायी के सूत्र केवल याद ही न किये जावें किन्तु लिखे भी जावें।
२. पहाड़े विद्यार्थी स्वयं प्रत्यक्ष वस्तुओं की गणना से बनावें।
३. दहाई इकाई का ज्ञान प्रथम श्रेणी ही में दिया जावे।
४. व्यायाम प्राणायाम सहित कराई जावे।

१५-५-२० । सुन्दरसिंह बी०ए०बी०टी०"

इन्द्र

संसार समाचार पर

टिप्पणी

विजय को चेतावनी

सरकार ने हमारे देहली के सहयोगी 'विजय' को रियासतों के शासन विषय में लेख छापने के कारण चेतावनी दी है। सरकार का यह काम उसकी नीति के सर्वथा विरुद्ध है। रियासतों के आभ्यन्तरिक कार्यों के विषय में जब कभी सरकार से दख़ल देने के लिए अपील की जाती है तब सरकार यह कह कर टाल दिया करती है कि रियासतों के अन्दरूनी मामलों में वह दख़ल नहीं देसकती। यदि सरकार का यह कथन ठीक है तो जब वहां के निवासियों में जागृति होरही है और वे अपने शासन के दोषों पर टीका टिप्पणी करते हैं, तब सरकार को बीच में दख़ल देने की क्या आवश्यकता है? क्या यह परस्पर-विरोध नहीं है?

सरकार का उत्तर

जातीय-विश्वविद्यालयों के स्नातकों को नई स्कीम के अनुसार, कौन्सिलों में अपने प्रतिनिधि भेजने के विषय में जो प्रस्ताव गुरुकुल की एक सार्वजनिक सभा में पास हुआ था, उस की एक प्रति वायसराय को, मि० माण्टेगू तक पहुंचा देने के लिए भेजी गई थी। भारत-सरकार के अण्डर-सेक्रेटरी का, उस विषय में, हमारे पास जो उत्तर आया है, उसका हिन्दी अनुवाद यह है—

"उस प्रस्ताव की कापी को आगे भेजता हुआ जो कि अप्रैल ३०, १९२० को गुरुकुल-आंगन में की गई सार्वजनिक सभा में पास हुआ था, मैं आपके १म मई १९२० के पत्र की रसीद को स्वीकार करता हूं।"

आशा है, इस पत्र से ही सरकार इस आवश्यक मामले को खटाई में न डाल देगी।

मद्रास—सरकार का प्रशंसनीय कार्य

'कुम्भ कोणम' (मद्रास) की म्यूनिसिपल कौंसिल के लिए एक पंचम—अछूत—को नामिनेटेड मेम्बर बनाने के कारण लार्ड विलिङ्डन की सरकार वस्तुतः धन्यवाद पात्र है। बहुत दिन हुये, लार्ड विलिङ्डन ने लैजिस्लेटिव कौंसिल में भी एक अछूत-प्रतिनिधि को चुना था। यदि अन्य प्रान्तीय सरकारें भी ऐसे साहस के कार्य करें तो समाज सुधार में वस्तुतः बहुत सहायता मिले।

क्या सब अंग्रेज़ जनरल डायर के काम को पसन्द करते हैं?

'पायोनीयर' न जाने कहां २ से पत्र मंगवा कर जनरल डायर की प्रशंसा में राग अलापता हुआ यद्यपि यह दिखाने का प्रयत्न कर रहा है कि सब अंग्रेज़ जनरल की क्रूरता से सहमत हैं पर वस्तुतः यह बात नहीं है। इस बात का स्पष्ट प्रमाण उस पत्र से मिलता है जो कि एक उदाराशय अंग्रेज़ ने हाल ही में अमृत बाज़ार पत्रिका में छपवाया है। वस्तुतः यह पत्र कलकत्ते में "इङ्गलिशमैन" के लिए लिखा गया था पर वह अपनी अनुदारता के कारण छापने का साहस न कर सका। पत्र का अन्तिम भाग महत्त्व पूर्ण है कि "यदि आप इसी प्रकार से लिखते रहेंगे तो आपको अपने लेखों में यह स्पष्ट कर देना चाहिये कि यह सम्मति आप की और आप जैसे थोड़े आदमियों की ही है, भारत के अंग्रेज़-समुदाय की नहीं। ऐसा कहने के लिए आपके पास कोई प्रमाण नहीं है और मैं घृणा पूर्वक इस से इन्कार करता हूं।" ये विचार प्रशंसनीय हैं।

मरहठों का अनुकरण करो

२२ मई को बड़ोदा के मि. 'खासराव जादव' के सभापतित्व में बम्बई में आलइण्डिया मरहठा कान्फ्रेंस का अधिवेशन हुआ। सभापति महोदय ने अपने व्याख्यान में मरहठों को अपने पुराने गौरव को याद दिलाते हुए उन्हें नई कौंसिलों में अपने वर्ग (Community) की ओर से प्रतिनिधि भेजने का जो विशेष अधिकार दिया गया है, उसके प्रति घृणा और असहमति प्रकट की। उन्होंने कहा कि 'वर्गीय—प्रतिनिधि निर्वाचन (Communalrepresentation) जातीय जीवन को नाश करने वाला और उस में फूट डालने वाला है। क्या विचित्र बात है? एक वर्ग तो इस प्रकार के उच्च और निःस्वार्थ पूर्ण भाव प्रकट कर रहा है और दूसरी ओर पंजाब के सिक्ख तथा अन्य कुछ एक वर्ग और सम्प्रदाय विशेष प्रतिनिधि का अधिकार प्राप्त करने के लिए शोर मचा रहे हैं। शोक है कि वे अपने तुच्छ स्वार्थों से अन्धे हुए जातीय एकता के महत्व को नहीं समझते। और मरहठा-वर्ग के ये भाव अत्यन्त सराहनीय हैं। पंजाब के सिक्खों और अन्य वर्गों से हम बल पूर्वक कहेंगे कि वे मरहठों का अनुकरण करें।

आर्य मित्र की भूल

हमारे सहयोगी "आर्यमित्र" ने जातीय शिक्षणालयों के ग्रेजुएट्स के वोट सम्बन्धी अधिकार पर लिखते हुवे (निष्पक्षपात दृष्टि से) इस प्रश्न के साथ पूर्ण न्याय करने का यत्न किया है। आपका प्रश्न है कि सरकार किस किस को जातीय शिक्षणालय समझे? बहुत विचारने पर भी हमें इस प्रश्न की पेचीदगी का पता नहीं लगता। यदि सरकार की जातीय शिक्षणालयों को स्वीकार करने की इच्छा हो तो इस के लिये आवश्यक गुण (qualificatons) का निश्चित करना कोई मुश्किल बात नहीं। सरकार की सहायता के बिना जातीय संस्थाओं द्वारा प्रचलित शिक्षणालयों को ही जातीय शिक्षणालय समझना चाहिये। परन्तु उत्तरदायित्व शून्य पाठशालाओं और जातीय शिक्षणालयों में भेद करना आवश्यक होगा।

इस के साथ सहयोगी की सम्मति में वोट अधिकार प्राप्त करने के लिये सरकार से किसी न किसी प्रकार का सम्बन्ध ज़रूर करना होगा। "किसी न किसी प्रकार" का अभिप्राय यदि शिक्षा विषयक या परीक्षा विषयक है तब तो निसन्देह जातीय शिक्षणालयों को ऐसा सम्बन्ध न करना चाहिये। परन्तु ऐसे सम्बन्ध के न होने से वोट देने का अधिकार कैसे अयुक्त है यह हमें समझ में नहीं आता।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिये छपा।

ओ३म्

Registered No. A 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० मं० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। श्रद्धे! इस समय, हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | २३ ज्येष्ठ सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० ४ जून सन् १९२० ई० | संख्या ७ भाग १

हृदयोद्गार

एक स्नातक का कुल वियोग !

दुनियां के पार जिनके मेरा है आशियाना।
तुम को नहीं उचित यों इस को हमीं चढ़ाना॥ टेक॥
मैं छिप रहूंगा तुम को रोना नहीं जो भाता।
आंसू नहीं ये सोले मेरे पै आज आना॥
रो लूंगा फिर अकेला जी खोल कर यहां मैं।
मत सुन यों सुनेंगे पर दर्द मेरा गाना॥
ऐ आशियाने मेरे प्यारे ख़ज़ाने मेरे।
बेकस मैं हो रहा हूं ये देस है बिगाना॥
दिन भर उड़ान कर के जब सांझ लौटता था।
कैसे कहूं वो ओझल तेरा मुझे बुलाना॥
भरना के माहीं करना सब का वो फिर नहाना।
फिर डाल बैठ सब के तानें नई सुनाना॥
फलती रहे वो झाड़ी तेरा जहां बसेरा।
गुलशन रहे हरा वो तेरा जहां ठिकाना॥
कुछ को न बेवफ़ाई मुझ को जुदाई देके।
क्यों कर मैं खोल लेता यां घोंसले बनाना॥
खुश हूं यहां भी तानें हैं जो यहां भी कोई।
बस में नहीं है लेकिन तेरा भी याद आना॥
तेरी ही याद ने कुछ जादू सा कर दिया है।
कब का भुला चुके ये हसरत तो यह बहाना॥

"मराल"

टर्की !

(गतांक से आगे)

पराधीनता—निविड़-पाश में तू ऐसे फंस जावेगी।
ज्यों फंसती ही जावेगी ज्यों बाहर आना चाहेगी।
तुझे छोड़ भी देंगे ऐ गे छुटजाने के सभी विचार,
बड़ा कठिन होगा तब तेरा पा लेना उनमें उद्धार॥ ७॥
आत्म शक्ति गर है कुछ तुझ में यह समय है दिखलादे,
जो निर्बल समझे हैं तुझको निर्बल उनको जतलादे।
अपने देश जाति के ऊपर करदे बस सब कुछ बलिदान,
अगर चाहती है कुछ रखना दुनियां में तू अपना मान॥ ८॥
पुण्य बहेगी रुधिर धार जब तुझ पर तेरे वीरों की,
तब कुछ आशा बंध जावेगी तेरी ऊपर उठने की।
तेरी ओर सभी की दृष्टि दौड़ एक दम जाती है,
क्या करती है देखें टर्की बचती है या जाती है॥ ९॥

"आनन्द"

आर्य्य-समाज नगीना (बिजनौर) का वार्षिकोत्सव १७,१८,१९,२० जून को होना निश्चित हुआ है। सन्यासी महात्माओं और विद्वान् उपदेशकों से प्रार्थना है कि इस अवसर पर अवश्य पधारें।

(लक्ष्मीनारायण)
मन्त्री

—:०:—

ब्रह्मचर्य सूक्त की व्याख्या।

ओ३म्। ब्रह्मचर्येति समिधा समिद्धः कार्ष्णं वसानो दीक्षितो दीर्घश्मश्रुः। सद्य एति पूर्वस्मादुत्तरं समुद्रं लोकान्त्संगृभ्यमुहुराचरिक्रत्॥६॥

"ब्रह्मचारी × समिधा समिद्धः (जो) ब्रह्मचारी समिधा (पृथिवी लोक, सूर्यलोक, तथा अन्तरिक्ष लोक की विद्या रूपी यज्ञ) से प्रकाशित *कार्ष्णम्×वसानः* काले मृग का चर्म धारण किए *दीर्घश्मश्रुः×दीक्षितः×एति* बढ़ी हुई दाढ़ी मोंछ वाला दीक्षित हो कर चलता है। *सः×पूर्वस्मात्×उत्तरम् समुद्रम्×एति* वह शीघ्र ही इस (ब्रह्मचर्य रूपी) पहिले से ऊपर के (गृहस्थ रूपी) समुद्र को प्राप्त होता है (और) *लोकान् संगृभ्य×मुहुः×आचरिक्रत्* लोक संग्रह करके बारम्बार अभिमुख (अर्थात् व शमें) करता है।"

ब्रह्मचारी को तीनों लोकों की विद्या प्राप्त करने में ऐसी लगन से जुट जाना चाहिये और इन लोकों की घटनाओं को इस प्रकार हस्तामलक कर लेना चाहिये कि वे उसके अन्तः करण के लिये समिधावत् होजायं। उनको वह ब्रह्मचारी ज्ञानाग्नि से प्रदीप्त कुण्ड यज्ञ में डालकर यज्ञ मण्डप की शोभा को चौगुना बढ़ा दे। इस प्रदीप्त ज्ञानाग्नि से उसका अपना हृदय रूपी कुण्ड अत्यन्त प्रकाशित होगा। यह तेज जो ब्रह्मचारी के पवित्र मुख को प्रकाशित कर रहा है, क्षणिक न रहेगा। यह तेज स्थिर होगा।

यह सारा तय्यारी का ज़माना है। यह साधन-काल है जिस में मनुष्य साधन-सम्पन्न बनता है। कर्म के बन्धनों में फंसे हुए साधारण मनुष्य के लिए विषयों में प्रवृत्ति साधारण अवस्था क्या—एक प्रकार से स्वाभाविक बन जाती है। इस अवस्था को बदलना ही ब्रह्मचर्याश्रम का उद्देश्य है। प्रवृत्ति के स्थान में निवृत्ति मार्ग का आश्रय लेकर ही विषयों की दासता को त्याग मनुष्य उनका स्वामी बनता है। परन्तु यह निवृत्ति मार्ग जहां जीवात्मा को [illegible] बनावट तथा तजिर्दिष्ट [illegible] की गुलामी से आज़ाद कर देता है वहां है बड़ा बिखड़ा रास्ता। इस दुर्गम पथ पर चलना तलवार की धार पर नृत्य करने के बराबर है। तब क्या यह मार्ग असाध्य कर्म है? साधन-शून्य पुरुषों के लिए जहां यह असाध्य है वहां साधन-सम्पन्न ब्रह्मचारी के आगे इस की सब मंज़िलें अपने आप साफ़ हो जाती हैं और वह बे खटके इन में से गुज़र जाता है। ब्रह्मचारी को न शारीरिक बनाव चुनाव की सुध है और न उस के सिंगार की सुध। वह तत्व के उपासना की ओर दृष्टि लगाए सांसारिक फ़साद्दों से बे लाग जा रहा है।

ब्रह्मचारी जब अपने व्रत को पूर्ण करके विद्या व्रत-स्नातक हो कर समावर्तन के लिए तय्यारी करता है तो उस का वेश क्या होता है। काले मृग का चर्म तो उसका ओढ़ना है। और दाढ़ी मूंछ उस की बहुत बढ़ी हुई हैं। अस्वाभाविक जीवन व्यतीत करते करते जहां मनुष्यों को परमात्मा के दिये हुए श्रेष्ठ भोज्य पदार्थ पचाने के लिए गर्म मसालों और खटाई आदि की ज़रूरत होती है, वहां शौच के नियमों को भुला कर मनुष्यों ने और भी अनावश्यक अवस्थाएं उत्पन्न करली हैं। ब्रह्मचारी के लिए नापित की आवश्यकता नहीं और न सेफ़्टी-रेज़र और मशीन की कैंची की। उसके शरीर के बाल, स्वतन्त्रता से बढ़ कर, जहां उसके अन्दर की विद्युत को उत्तेजित करके उसकी रक्षा करते हैं वहां काले मृग का चर्म उसके शरीर को सर्दी गर्मी के बाह्य आक्रमणों से बचा कर उसको निस्पृह जीवन व्यतीत करने के योग्य बनाता है। ब्रह्मचारी को धुन एक लगी है, और वह धुन है—*तत्वान्वेषण*। इसके लिए वह संसार के सुखों को न्यौछावर कर देता है और सब प्रकार के भोगों को त्याग देता है। और वह भोगों में फंसे भी कैसे? जब त्याग से प्रत्येक अवस्था में आनन्द ही आनन्द अनुभव करता है, जब अपने त्याग के आगे इन्द्रियों को और विषयों को शिर झुकाये देखता है—जब देखता है कि सचमुच इनका स्वामी वह बन रहा है तब वह भोगों का भोग्य पदार्थ कैसे बन सकता है।

काला मृग का चर्म धारण किए बढ़ी हुई दाढ़ी मोंछ वाला ब्रह्मचारी हीं भोगों से भोगे जाने के स्थान में उन्हें अपना आज्ञापालक सेवक बनाता है। मनु भगवान् ने यज्ञ प्रधान देश में ही ब्राह्मण को बसने की आज्ञा देते हुए, यज्ञ प्रधान देश के जो विशेषण बतालये हैं उन में एक विशेषण यह है कि उस प्रदेश में काले मृग स्वतन्त्रता से विचरते हों। इस लिए काले मृग का चर्म प्राप्त करने के लिए उन का घात करने को मनुस्मृति ने भी मत में नहीं रक्खा। जहां काले मृग स्वतन्त्रता से विचरते हैं वहां उन का चर्म उनकी स्वभाविक मृत्यु पर ऋषियों के लिए प्राप्त करना बहुत सुगम है।

जिस आश्रम निवासी ब्रह्मचारी ने आचार्य्य की दृष्टि से रक्षा पाते हुए सर्दी गर्मी की ताड़ना से ऊंचे उठ कर ब्रह्म तेज का धारण कर लिया है वही दीक्षा का अधिकारी होता है—"व्रतेन दीक्षामाप्नोति।" [illegible] विद्या की पाठविधि समाप्त भी [illegible] हो परन्तु दीक्षा का अधिकारी उसी समय होता है जब कि ब्रह्मचारी *व्रत स्नातक* बनने की योग्यता प्राप्त करले, तब वह पहिले समुद्र को नियम पूर्वक लांघ कर दूसरे समुद्र के अन्दर प्रवेश करता है। ब्रह्मचर्य पहिला समुद्र है। जिसने इस पहिले समुद्र में गोते खाए हों, जिसने ब्रह्मचर्याश्रम में रहते हुए उसके पवित्र नियमों को तोड़ा हो, जिसे पूर्वाश्रम में ही विषयों ने भोग कर खोखला कर दिया हो वह गृहस्थाश्रम रूपी उत्तर समुद्र में प्रवेश करने का साहस क्यों करता है? इस लिए कि अविद्या ने उसको अन्धा कर दिया है और उसमें देखने की शक्ति नहीं बची। गृहस्थरूपी उत्तर समुद्र में काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार रूपी बड़े २ मगरमच्छ मुंह खोले विचर रहे हैं, भयंकर भोग की लहरें उठ रही हैं—उसके अन्दर तो इन्द्रियदमन से दृढ़ ब्रह्मचारी का ही काम है। ब्रह्मचर्य स[illegible] का फल क्या है? वेद का उत्तर है "लोक संग्रह।"

समुद्र अथाह है, आन्धी के [illegible] लहरों को बाल्लियों ऊपर उछाल रही हैं और उसके अन्दर मनुष्यों से भरी हुई किश्ती फंस गई है। आमने सामने की लहरों ने किश्ती को भंवर में फंसा दिया है। उस किश्ती को कौन निकाले। किनारे पर हा हा कार मच रहा है, परन्तु किसी का साहस नहीं पड़ता कि हिल सके। किश्ती के यात्री लहरों की हलचल से मद से उन्मत्त अपनी शोचनीय अवस्था को अनुभव नहीं करते। [illegible] में चक्कर आ रहा है और

(शे[illegible] ने दूसरे कालम के नीचे)

श्रद्धा

क्या संसार में बोल्शेविज़्म का राज्य होगा ? ‡

(निजू संवाददाता द्वारा)

अभी बहुत काल व्यतीत नहीं हुआ कि सब लोगों के मुंह पर एक ही शब्द था। महा युद्ध की प्रत्येक घटना, प्रत्येक समाचार और प्रत्येक बात इसी दृष्टि और इसी भाव से देखी जाती थी। प्राचीन पुस्तकें, और नवीन ग्रन्थ इसी ओर लगाये जाते थे। वह शब्द थे कि "क्या संसार पर केवल "फौजीपन" (Militarism) का ही राज्य होगा ?" महायुद्ध का अन्त हो गया। नयी घोषणा हुई। वह घोषणा "अन्तर्जातीय संगठन" की थी। कहा गया सेना दूर होगी; न्याय का विजय होगा, सब सुख शान्ति और आराम मिलेगा। पर वह कहां ? कहा जाता है कि अन्तर्जातीय संगठन शान्ति लायेगा, महंगी दूर करेगा। पर आपत्ति दूर न हुई। बड़े २ राष्ट्रों की वही हालत। रमणियों और सन्तानों की वही दशा। कहां तक चुप होंवे? अब व्याकुल हृदय पूछता है कि कहां है अन्तर्जातीय संगठन ? फिर नया शब्द उठता है। वह दबाये दबता नहीं, छिपाये छिपता नहीं। दूसरी ओर से कहा जाता है कि "अन्तर्जातीय संगठन" सब कुछ कर देता, बोल्शेविज़्म खराब कर रहा है—इसे दबाओ फिर सुख, शान्ति का राज्य होगा।

अब प्रश्न उठता है "बोल्शेविज़्म क्या है ?" दबाते हैं, छिपाते हैं पर दबता नहीं और छिपता नहीं। सच्चा भाव प्रगट हो जाता है। एक उच्च सरकारी पदाधिकारी से बात चीत हुई तो उसने देहली, पञ्जाब की घटनाओं पर बात करते हुये मुझ से कहा कि "स्वामी जी ! निश्चय ही आप बोल्शेविक लोगों के विरुद्ध लड़ने में हमारी सहायता करेंगे।" मुझ से जिसका—धनबल, शक्तिबल, कुछ नहीं और जिसका विद्याबल भी बहुत नहीं—सहायता मांगने पर आश्चर्य बहुत हुआ। मैंने कहा "पहिले समझाये तो सही बोल्शेविज़्म क्या है ?" यह कोई गिरगिट है—जब सुनते हैं तो लालरङ्ग कहा जाता है। देखते हैं तो पिला फिर श्वेत और हरा हो जाता है। उन्होंने बोल्शेविज़्म का रूप "Murder, Arson, Pillage" बताया। अर्थात् "घात, दाह और लूट" इत्यादि ही बोल्शेविज़्म है। मैंने कहा कि कुछ दिन पहिले यह बातें "कैसर के बारे में कही जाती थी और सब कुछ कैसर के माथे मढ़ा जाता था।" फिर अखबार देखे और इधर उधर देखा। एक वैदिक धर्मी से बात चीत हुई। उसने कहा कि इस बोल्शेविज़्म में धर्म की गन्ध आती है। ये धर्मात्मा मालूम होते हैं। इस प्रकार अब तक "बोल्शेविज़्म" समझ नहीं पड़ा कि क्या है ?" यदि यही घात, दाह और लूट ही बोल्शेविज़्म है तो कहिये पञ्जाब में पिछले दिनों में क्या था ? आज कल का संसार का झगड़ा क्या है। ऐसा बोल्शेविज़्म रूस से लाने की ज़रूरत नहीं, ऐसे बोल्शेविज़्म के नमूने तो हर जगह उपस्थित हैं। आज कल की हड़तालें इसी के नमूने हैं। यह बोल्शेविज़्म रूस से नहीं आता पर हर जगह स्वयं पैदा हो जाता है। भूत से घबराने वाले के लिए भूत बाहिर नहीं परन्तु उसी के भीतर हृदय में बैठा हुआ है। हृदय से यदि भूत निकल जाय तो बाहिर भूत सता नहीं सकता।

किसी स्थान पर चिन्ह देख कर अनुमान किया जाता है कि वहां कोई वाटिका थी, कभी पैदावार भी थी, महल थे। पर अराजकता, आलस्य, प्रमाद के फैल जाने से जङ्गल बन गया, मांसाहार शुरू हो गया। कोई बुद्धिमान् आता है। सोचता विचारता है। चिह्नों को देख कर एक हाथ में आग दूसरे में कुल्हाड़ा पकड़ कर सफ़ाई करता है। फिर खेती शुरू होकर महल वाटिका आदि खड़े हो जाते हैं। कमेटी आदि बैठती है तो सलाह मशवरे में ही सारा समय बीत जाता है। दुःख के साधन बिना आग दूर नहीं हो सकती। खाण्डव को भी आग से ही साफ़ करना पड़ा था। दुःख के साधनों को दूर करने के लिए आग और कुल्हाड़े के सिवाय और कोई चारा नहीं। पर यदि नयी खेती पर ही हल को चलाना शुरू कर दिया तब समस्या का हल नहीं। फिर तो चारों ओर दुःख ही दुःख है। यही दृष्टान्त बोल्शेविज़्म के साथ लगाइये। एक दिन रूस में एक सत्ता थी। उसने १६, वर्ष के बालक बालिकाओं को साइबीरिया में डाल दिया। किसी की सुनाई न होती थी। महायुद्ध के समय उलट पुलट हुई। उलट पुलट करने वालों को क्या मालूम था कि क्या निकल आयगा। कुल्हाड़ा और आग ने सफ़ाई कर दी। कौनसा स्थान है जहां बोल्शेविज़्म नहीं है। जहां भी अत्याचार पर अत्याचार शुरू हो जाता है, धर्म से ग्लानि पैदा हो जाती है, न्याय का मानों निशान नहीं रहता, वहीं यह बोल्शेविज़्म पैदा हो जाता है। तब घेरे में घिरी हुई बिल्ली के गले पर झपटने की दशा आजाती है। संसार में भी वही हालत है। दूर जाने की ज़रूरत नहीं। यहीं ब्राह्मणों के अछूतों पर अत्याचार देखिये। मद्रास में स्थानों पर ब्राह्मणों के अत्याचार याद कीजिये। भारत में ६॥ करोड़ अछूत हैं। आपके ही बङ्गाल में 'नामशूद्र' लोगों के अत्याचार आप से छिपे नहीं हैं। उसी का परिणाम आज का ब्राह्मण—अब्राह्मणों का कलह है। अब्राह्मण कहते हैं हम किसी ब्राह्मण को कौंसिल में न जाने देंगे। नेशनलिस्ट मौडरेट्स को न जाने देने पर उतारू हैं। मौडरेट तो शायद एक आध चला भी जाय पर ब्राह्मण शायद एक भी न जा सके। बस, यही बोल्शेविज़्म है। शासन से विश्वास उठ जाय, मृत्यु का राज्य हो जाय, किसी की सुनाई न हो, दलील का कुछ काम न हो—बस फिर कुल्हाड़ी और आग की ज़रूरत पड़ती है,—यह भी न हो तो बाहिर से चिङ्गारी लाई जाती है। यह बोल्शेविज़्म बाहिर से नहीं आता—अन्दर ही है। अब प्रश्न उठता है कि यह अवस्था कैसे दूर हो ? इस को दबाया नहीं जा सकता। दबाने वाले में भी इस के पैदा होने का भय है। यह छूत रोग है—छछून्दर छोड़ने की देर है। कोई खास मनुष्य इसे किसी स्थान से नहीं लाते हैं। हड़तालें हो रही हैं—अन्याय का अनुभव कर सब काम छोड़ बैठते हैं। आज अछूत बात नहीं सुनते।

अमृतसर के स्वागत के भाषण में मैंने कर्नल वूस्टकर के शब्द में कहा था कि "ईसाई बृटिश राज्य रूपी बारूद के ऊपर लगर हैं।" ग्राम के ग्राम ईसाई हो रहे हैं। ६॥ करोड़ पर जो अत्याचार किये थे उन्हीं का यह परिणाम है। आज फिर पूछा जाता है कि क्या पञ्जाब की गत घटनाओं के बारे में कोई भी ईसाई सरकार के प्रतिकूल था चूंकि वे बृटिशर हो

‡ उस व्याख्यान का सारांश जो कि श्री० पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी ने २६ मई की सायंकाल को कलकत्ता—आर्य्य समाज में बड़ी जनता के सम्मुख दिया था।

गये थे।" बस यदि ७ करोड़ बृटेशर हो गये तो जड़ें पाताल को चली जायंगी । आज तिलक महाराज कहते हैं कि "अगर स्वराज्य का आन्दोलन सफल होजाय तो मैं अछूतों के साथ खाने को तय्यार हूं।" यहां 'अगर' की शरत है यहां तो झट 'बृटेशर' बना लिया जाता है। कहो तो सही तुम में और अछूतों मे भेद क्या है? यदि इनके पवित्र मन और आत्मा को देखना है तो चलो 'गुरुकुल काङ्गड़ी' । दशम और एकादश मे जो बालक पढ़ते है देखो उनमें कोई भेद है भी या नहीं? रामचन्द्र आर्य्यजाति के पिता समान और सीता माता समान हैं। उन्होंने भी 'निषाद' गले लगाया और अपनाया पर आज तुम मे उन्हें गले लगाने का हौसला नहीं है। जो तिरस्कार और अत्याचार किये हैं उन्हें दबाना कठिन है। इसे ही दूर करना है। आज वे हमारी नहीं सुनते। तब क्यों वे ब्राह्मणों के लिये वोट देने लगे हैं?

लोहा लोहे को काटता है, स्वयं भी कट जाता है। जलता लोहा पानी से बुझता है। 'शठ प्रति शठं कुर्यात् सादर प्रति सादरम्' को को लेकर जो लोग शैतान के साथ शैतानी करना चाहते हैं क्या वे अपने घर चोरी होने पर स्वयं चोर बनेंगे? क्या वे व्यभिचार होने पर स्वयं धर्म मार्ग से गिरेंगे। इस स्मृति वाक्य का तात्पर्य है कि उदण्ड को दण्ड देकर दबाया जाय न कि हम भी उदण्ड हो जांय। बौल्शेविज़्म का इलाज बौल्शेविज़्म नहीं है। गोला चलाना ही बौल्शेविज़्म है। यदि गोला बारी से इसे दबाया गया तो लोहा स्वयं भी कटेगा।

समाज क्या है! हमारे प्राचीन कह गये हैं "ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः। ऊरू तदस्य यद् वैश्यः, पद्भ्यां शूद्रोऽजायत।" शरीर के तीन जोड़ चार भाग बनाते हैं। इन में बुरा कोई भी नहीं। पञ्च ज्ञानेन्द्रियों और एक कर्मेन्द्रिय वाला शिर भाग ब्राह्मण है जिसका कर्तव्य ज्ञान का उपार्जन कर उपदेश देना है। यद्यपि सब भोजन भी मुख से ही खाया जाता है पर प्राण वह शरीर के दूसरे भागको देकर स्वयं कुछ नहीं रखता। भुजा क्षत्रिय अर्थात् रक्षा के लिये हैं—पर पागल होकर स्वयं अपने को ही मारना शुरू करदेती हैं। इसी प्रकार सच्चे वैश्य और सच्चे शूद्र भी समाज के लिये आवश्यक हैं इसी लिये तुलसी दास ने भी कहा है कि "न जाने कौन वेश मे नारायण मिल जाय।" इस समय खराबी यही है, समाज की व्यवस्था ठीक नहीं है बौल्शेविज़्म पागलपन है—दिमाग का ठिकाने न रहना है। एक दिन अश्वपति का एक राज्य था जिस में "न कोई चोर, न शराबी, न व्यभिचारी पुरुष और न व्यभिचारिणी स्त्री थी। वह सब राज्य केवल दिमाग के बिगड़ने से ही उठ गया। सिर की अवस्था ठीक न रही। यह प्राचीन आर्यों की दशा थी, आज की दशा विचित्र है।

दशरथ महाराज के महामन्त्री कौन थे? वह लायड जार्ज न थे, जिन्हें अपने घर वालों के ऐश्वर्य की चिंता है और जो ऐहिक स्वार्थ से प्रेरित हो कानून बनाते हैं। वे सच्चे ब्राह्मण एक ही समय के यज्ञ का सामान रखने वाले वशिष्ठ थे। बस, यदि महामंत्री सच्चे ब्राह्मण और राजा सच्चे क्षत्रिय नहीं बना सकते तो बौल्शेविज़्म भी दूर नहीं हो सकता। इस समय के महामंत्री वैश्य हैं—अपने और रुपये वालों के स्वार्थ से प्रेरित होकर कानून बनाते हैं।

आज शोर है हम सुधार लेंगे। क्या होगा सुधारों से यदि फिर कौंसिलों में जायदाद के मालिक—अपना, जथे और जाति का पक्षपात रखने वाले चले गये। आज गोरी नौकरशाही है, कल काली नौकरशाही हो जायगी। यदि वैश्य लोग कानून बनायेंगे तो फिर उन्हीं करोड़ों पर अत्याचार होगा और फिर बौल्शेविज़्म यहीं पैदा हो जायगा। रूस जाकर इसे लाने की जरूरत नहीं। कोई होमरूलर्स है, कुछ कांग्रेस मैन और कुछ मडरेट। होमरूलर्स भी तीन हैं, एक महाराज तिलकाइट दूसरे एनीबिसण्ट के चेले और तीसरे अब गान्धीयाइट होंगे। सभी अपनी धुन में लगे हैं—किस को रोयें? तुम्हारे मे नेक चलन नामी होंगे तो भी तुम अपने मन से ही दौलतमंद बदचलन भेजोगे। परिणाम क्या होगा—फिर बौल्शेविज़्म जारी होगा। आग और कुल्हाड़ा ही फिर काम मे लाना होगा। यह बौल्शेविज़्म बौल्शेविज़्म से न दबेगा। यह तो संसार की भलाई के लिये ही है। इसको दबाया नहीं जा सकता। इसे रूस से लाने की आवश्यकता नहीं, यह यहीं है और पैदा हुआ है।

वर्णाश्रम धर्म की पुनः स्थापना ही इसे दबा सकती है। इस धर्म की स्थापना यहीं हो सकती है। भोग विलास में लिप्त दूसरे देशों में इस धर्म की स्थापना नहीं हो सकती। इसी पवित्र भूमि में जो कि पतितावस्था मे भी त्याग के लिये आदर्श है इस धर्म की स्थापना हो सकती है। यह देश संसार का गुरु है। भारत की आत्मिक शक्ति तोप, बंदूक आदि की प्राकृतिक चीजों से नहीं दब सकती। यदि यहां वर्णाश्रम धर्म की स्थापना हो गई तो न केवल भारत ही का परन्तु संसार का उद्धार हो जायगा। क्रमशः सुधारों के लिये मरने की जरूरत नहीं है। सुधार तो स्वयं हो जायंगे, यदि कौंसिलों में सच्चे ब्राह्मण जायेंगे। यद्यपि कम्पनियां और आर्थिक तथा व्यापारिक मामले बुरे नहीं परन्तु उन में विदेशियों का सामना नहीं किया जा सकता—वह और भी आगे बढ़ते जायेंगे। कारखाने सब नाकारी हो जायेंगे। यह भी सब हों, पर इनकी दृढ़ता के लिये वर्णाश्रम धर्म की भारी जरूरत है। और यह अवस्था गुरुकुल-प्रणाली के प्रचार के बिना कठिन है। ब्रह्मचर्याश्रम में वर्ण का बीज बोकर फिर वर्णव्यवस्था सुधार सकती है अन्यथा नहीं। यदि वर्णव्यवस्था के बिना प्राकृतिक उन्नति के लिये यत्न किया गया तो फिर आग और कुल्हाड़े की जरूरत पड़ेगी। बौल्शेविज़्म टाले न टलेगा, दबाये न दबेगा, छिपाये न छिपेगा।

अब समय कार्य करने का है बातें बनाने का नहीं। समय था जब कि शब्द का जादू मोह लेता था अब तो साधारण लोग भी कर्तव्य बुद्धि से ही बात सुनते हैं। कर्तव्य का समय है। सच्चे ब्राह्मण पैदा करने का समय है। अभ्यास और वैराग्य से ही यह सम्भव है। स्थान स्थान पर गुरुकुलों की स्थापना हो। उत्तम सन्तानें हों, तब सब सिद्ध हो जायगा। आप में भाव है केवल इच्छा को कर्म में लाने की जरूरत है। आपका ही देश है, आपकी ही जाति है और आपका ही पवित्र वायुमण्डल है जहां इस वर्णाश्रम धर्म की स्थापना हो सकती है।

परमात्मा हम सब में अपना कर्तव्य समझने और उसे पूरा करने की शक्ति दें—यही प्रार्थना है।

श्रद्धा के नियम

भारत वर्ष के लिए

एक वर्ष के ३॥)
६ मास के २)

६ मास से कम के लिए भेजने का नियम नहीं—

भारत विभिन्न देशों से
एक वर्ष के लिए— ५)

वी. पी. भेजने का नियम नहीं।
रोक मूल्य आने पर जारी होगा—

विज्ञापन कोई भी नहीं दिया जायगा। केवल गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी की बिकाऊ पुस्तकों का सूचीपत्र अधिक से अधिक वर्ष में तीन बार दिया जायगा।

प्रबन्धकर्त्ता श्रद्धा
P. O. गुरुकुल कांगड़ी
(जिला बिजनौर)

भावी कार्य क्रम—

दूसरा पग

कलकत्ते में होने वाली पिछली "मार्डरेट-कान्फ्रेंस" में सुधार-स्कीम को पूर्ण रूप से कृतकार्य बनाने के लिए देश के प्रसिद्ध नेता माननीय मि० शास्त्री ने एक बड़ी शर्त यह लगाई थी कि *"यदि योग्य आदमी चुने गये।"* (If Peroper Men areelected) प्रश्न यह है कि योग्य आदमी कौन है? इसका उत्तर भिन्न २ व्यक्ति भिन्न २ दृष्टि से दे रहे हैं। इस समय की कांग्रेस की मालिक 'नेशनलिस्ट' पार्टी यह कह रही है कि जो कांग्रेस के मन्तव्यों को पूर्ण रूप से माने वही चुना जाना चाहिए। अपने आपको 'लिबरल' कहने वाली 'माडरेट' पार्टी, दूसरी ओर, डंके की चोट यह कह रही है कि सरकार के साथ पूर्ण-सहयोगिता रखते हुए सुधार स्कीम को सब प्रकार से कृतकार्य बनाने की जो प्रतिज्ञा करे वही चुनाव के योग्य है। इस प्रकार हरेक दल अपने अपने मन्तव्यों के पोषकों को ही योग्य पुरुष समझता है। देश के भाग्यों के निर्णायकों और जाति के सम्मुख उत्तरदायकों के लिए योग्यता का दर्जा यदि केवल अपने अपने दलों की बातों को मानना न मानना ही रह जावेगा तो, ऐसे आदमियों से बनी हुई कौंसिलों से कुछ वास्तविक सुधार की आशा करना वृथा ही है। निर्वाचित प्रतिनिधियों के महत्व और उत्तरदायित्व को ठीक २ समझ कर तदनुसार उत्तम से उत्तम व्यक्ति चुनने की जगह यदि हमारे राजनैतिक नेताओं ने, निजू स्वार्थों से प्रेरित हो, अपने धड़े के आदमियों को ही चुनवा दिया तो वे एक ऐसी भारी भूल करेंगे जिसके लिए पीछे सिवाय पछताने के और कुछ नहीं बन पड़ेगा। परन्तु शोक है कि हमारे राजनैतिक नेता, इस अंश में, सर्वथा उदासीन हैं जिसका एक मात्र कारण यह है कि उन्होंने धर्म को राजनीति से पृथक् समझा हुआ है। वे निजू और सार्वजनिक जीवन में भेद करते हैं। वे कहते हैं कि अच्छे आदमी की कसौटी यह है कि जब वह जनता के सामने आवे तो सभ्य हो, नम्र हो, साफ़-सुथरा हो, मीठी ज़बान का हो और सुशील हो पर उस समय जबकि वह घर में बैठा है तब कैसा हो—इससे हमें कुछ मतलब नहीं। यदि वह शराबी कबाबी और दुराचारी है, तब भी हम उस पर अंगुली नहीं उठा सकते क्योंकि ये उसके "घरेलू-जीवन" की बातें हैं। उनके मतानुसार, ये "अन्दरूनी-मामले" हैं जिनमें दख़ल देने का किसी को अधिकार नहीं। इन राजनीतिज्ञों के कथनानुसार, यदि ऐसे आदमी कौंसिल के चुनाव के लिए खड़े हों तो हमें उनके लिए खुले दिल से वोट देनी चाहिए बशर्ते कि उनका सार्वजनिक जीवन वैसा हो जैसा कि हम अभी ऊपर लिख चुके हैं और वे अपनी पार्टी के बन्धनों के आगे सिर झुकाने को तैयार हों।

क्या खूब! कैसा विचित्र सिद्धान्त है! देश के गम्भीर प्रश्नों का निर्णय करने वाली बड़ी से बड़ी सभा में बैठने का अधिकार प्राप्त करने का कैसा सुगम मार्ग है? परन्तु इस की बुनियाद थोथी है। हम भी इस सिद्धान्त को मान लेते यदि मनोविज्ञान की इसमें अड़चन न होती। इसके अध्ययन से हमें दो अटल सचाइयां पता लगती हैं। पहिली यह कि मनुष्य जिस शैली से किसी बात पर बार २ विचार करता है, उसकी रेखायें धीरे २ उसके मस्तिष्क के आभ्यन्तरिक भाग पर पड़ती जाती हैं और क्रमशः गहरी होती जाती हैं, जिसका परिणाम यह होता है कि वे विचार अनायास ही कार्य के रूप में परिणित होने लगते हैं और उनका रोकना, तब विषम सा हो जाता है। दूसरी सचाई यह कि आभ्यन्तरिक जीवन में मनुष्य जो काम करता है अच्छे या बुरे उनका प्रभाव, किसी न किसी रूप में, बाहर अवश्य प्रकट होता है क्योंकि वे उसकी मस्तिष्क की रेखाओं को ऐसा बदल देते हैं वा बना देते हैं कि जिससे वे उसके जीवन की प्रत्येक घटना में अपना प्रभाव दिखाये बिना नहीं रहते।

इन दो सचाइयों को सम्मुख रखते हुए कौन यह कहने का साहस कर सकता है कि निजू और सार्वजनिक जीवन में भेद है और दोनों का एक दूसरे पर प्रभाव नहीं पड़ता। इस विषय में, यदि उदाहरणों की आवश्यकता हो तो प्रत्येक मनुष्य के अपने जीवन के अनुभव के साथ २ इतिहास भी ऐसे साक्षियों से भरा हुआ है। कार्लाइल इत्यादि, लेखकों के विषय में यह कहा जाता है कि वे निराशा-वादी इसलिए थे क्योंकि वे अपने घरेलू-जीवन में अत्यन्त दुःखी थे और उन्हें कब्ज़ और अपचन की सदा शिकायत रहती थी। तब, जो आदमी अपने घर में, अपने निजू-जीवन में शराबी, मांसाहारी, दुराचारी, और विषयी है, अपने घर वालों के साथ क्रोध, अन्याय, हिंसा और अभिमान का परिचय देता है, वह जब जनता के सामने आवेगा और सार्वजनिक जीवन में काम करेगा—तब इन प्रभावों से बेदाग़ और बेलाग रहेगा—यह कहना क्या दुस्साहस मात्र नहीं है? क्या, इस कथन से, अपनी वज्र मूर्खता का परिचय देना नहीं होगा?

× × ×

बस, अब समझ में आ जाता है कि भावी के लिए कार्य करते हुए *दूसरा पग* हमें क्या और किधर उठाना चाहिए। नई कौंसिलों के लिए हमें ऐसे आदमी चुनने चाहियें जो *योग्य* हों। योग्यता कैसी? किसी दल बन्दी या जत्थे की नहीं किन्तु *सदाचार की, पवित्र जीवन की और ब्रह्मचर्य्य की*। हमारे प्रतिनिधि विद्वान् होने के साथ २ *शराब, मांस आदि के व्यसनों से शून्य, सदाचारी, धार्मिक, संयमी* और तपस्वी तथा *पूर्ण ब्रह्मचारी हों*। आज कल के दोष पूर्ण राजनैतिक प्रवाह में बहते हुए नेताओं को हमारा यह कथन यद्यपि हास्यप्रद प्रतीत होगा परन्तु यह हम उन्हें निश्चय पूर्वक कह सकते हैं कि सुधार स्कीम के प्रति चाहे उन का कैसा ही भाव क्यों न हो—चाहे विरोध का और चाहे सहयोगिता का—वह कभी भी पूरा नहीं हो सकता यदि प्रतिनिधि उसी प्रकार के न हों जैसा कि अभी हम ऊपर लिख चुके हैं। इस विषय में हमसे यह पूछा जा सकता है कि जो सज्जन मानषीय निर्बलताओं के होते हुए भी, पवित्र *देश-सेवा* के भाव से काउन्सिलों में जाना चाहते हैं, उनका क्या प्रबन्ध किया जाय इस विषय में हम—

उम्मेदवारों को एक सलाह—

देंगे। और वह यह कि यदि उनमें देश और जाति की सेवा के लिए वास्तविक इच्छा है तो वे, अच्छा हो, इसे कौन्सिलों की शानदार पर बन्द कोठरियों के बाहर रहकर ही पूरा करें। इस विषय में हम महात्मा गान्धी की इस बात से सर्वथा सहमत हैं कि कौंसिलों के मेम्बर होने की अपेक्षा उनसे बाहर रहते हुये ही देश-सेवा अधिक उत्तम रीति से हो सकती है। एक बात और

है। सुधार स्कीम पहिले ही बहुत दोष पूर्ण है। कौन्सिलों में यदि अयोग्य (*दुराचारी, व्यसनी, विषयी और दुर्भाव पूर्ण*) व्यक्ति चले गये तो वे उसे और भी दोष युक्त कर देंगे। इसके विरुद्ध यदि योग्य पुरुष (*सदाचारी, धार्मिक, विद्वान ब्रह्मचारी और अहिंसक*) गये तो वे अपनी योग्यता और विद्वत्ता से दोषयुक्त इस स्कीम को भी देश के लिए हितकर बनाने में कोई कसर न छोड़ेंगे।

चूंकि अभी कुछ ही दिनों में चुनाव होने वाला है, इस लिए हम अभी से अपने देश भाइयों को सावधान किए देते हैं। अपने देश की बाग-डोर यदि उन्होंने अयोग्य व्यक्तियों के हाथ में दी तो *गोरी नौकरशाही* के स्थान में *काली नौकरशाही*—जो कि शायद उससे भी अधिक बुरी हो—के आ जाने के सिवाय शासन नीति में और कोई भेद नहीं आ सकता। परन्तु इसके लिए भी एक और बात पर विचार करने की आवश्यकता है। वह क्या? यह हम अगले अंक में बतावेंगे।

विचार तरंग

प्रेम

लेखक श्रीयुत "आनन्द"

(१)

बहुत से लोगों की राय है कि यह सारी सृष्टि प्रेममय है। हरेक वस्तु उस विधाता के प्रेम के दृढ़ सूत्र में बन्धी हुई है। प्रेम के बिना जीवन सूखा है। वह जीवन ऐसा है कि मानों उस में प्राण नहीं किन्तु देह में लोहार की भत्था की तरह श्वास प्रश्वास जारी रहता है। कवि की रचना प्रेम के बिना नहीं हो सकती। चित्रकार बिना प्रेम चित्र नहीं बना सकता। सारी सृष्टि का आधार प्रेम है, हृदय प्रेम है, सार प्रेम है, जो कुछ है वह सब प्रेम ही है।

× × × × ×

किन्तु प्रेम है क्या? एक का दूसरे को चाहना ही प्रेम कहलाता है? मनुष्य स्वार्थ में एक दूसरे को बहुत चाहते हैं तो क्या वहां प्रेम की उत्पत्ति हो जाती है? नहीं कभी नहीं, कारण वश किसी को चाहना, आत्मतृप्ति या स्वार्थ के लिये किसी की अपने दिल में अभिलाषा रखना प्रेम नहीं कहलाता। स्वार्थमयी सृष्टि से उसकी उत्पत्ति ही नहीं होती। आत्मतृप्ति की जहां ज़रूरत नहीं होती स्वार्थ का लेश नहीं होता, प्रेम तो वहीं से प्रारम्भ होता है। जहां सकारण नहीं अपितु अकारण चाहना होता है। सकारण चाह कार्य पूरा होते ही मिट जाती है किन्तु अकारण चाह में किसी कार्य की अपेक्षा ही नहीं होती।

× × × × ×

(२)

चातक बादल को अकारण ही चाहता है उसे इस बात की कतई परवाह नहीं है कि बादल उसकी ओर देखता है नहीं! वह उसको डांटने के लिये गड़गड़ा रहा है या नहीं वह उसको मारने के लिये ओले गिरा रहा है या नहीं। वह अपने आपको उसके सिपुर्द कर चुका है। उसके दिल में अगर कोई ध्यान है तो उसी का है, वह अन्तिम दम तक सब तरह की अवस्था में उसी का नाम रटेगा—अपनी देह उसी के नाम पर छोड़ देगा। बादल उसकी ओर आंख उठाकर नहीं देखता—न सही—अपने स्वाति जल से उसकी प्यास नहीं बुझाता तो कोई पर्वाह की बात नहीं। ये कारण उसकी चाह को हटा नहीं सकते। चातक हर समय उसी का रहेगा। बादल जितना उसे दुराने का प्रयत्न करेगा उस के दिल में प्रेम की राशि उस से दुगुनी हो जावेगी। यह है प्रेम—यह है प्रेम का आदर्श। प्रेम में अपना भूल कर सब कुछ दूसरे का करना होता है। अपने को दूसरे के हाथ बेचना पड़ता है। वहां यही ध्यान करना पड़ता है कि क्या मन, क्या देह और क्या और, सब कुछ उसी का है, उसी के लिये है। जब अपना ही कुछ नहीं रहा तो फिर अपनी फिकर कहां? वहां और इच्छा नहीं, चाह नहीं। कहिये क्या इस पद पर पहुंचना सुगम बात है? क्या इस पद का अधिकारी यह तुच्छ स्वार्थ मय चीज़ों से बना हुआ जीव हो सकता है? कभी नहीं।

× × × × ×

(३)

लोग प्रेम का नाम बहुत अधिक लेते हैं। वे अपने को प्रेमी भी समझते हैं। वे समझते हैं कि किसी के हाथ दिल रूपी धन देने हीं से चीज़ें तुम्हारे लिये हैं किन्तु परीक्षा समय पर हो जाती है। दी हुई चीज़ें फिर उसी की बन जाती हैं। प्रवृत्तियों के झुकाव रूपी दीपक की शिखा पर सब चीज़ें क्षण भर के लिये पतङ्ग बन कर भस्म हो जाती हैं।

× × × + +

जहां अपना ध्यान नहीं हर दम दूसरे का ध्यान है वहीं एक को दूसरे की सच्ची चाह है। जिस चाह रूपी सौम्य मूर्ति पर दिल और देह की पूर्णतया बलि चढ़ाई जा सकती है वहीं प्रेम है। किन्तु जहां डर है, जहां अपना विचार है वहां प्रेम का अस्तित्व हो ही नहीं सकता। कबीर जी ने यह बिलकुल ठीक कहा है—

"जब लग मरने से डरे तब लग प्रेमी नांहि।
बड़ी दूर है प्रेम पर समझि लेहु मन मांहि॥"

× × × × ×

(४)

मैं इस ओर आने वाले के दिल को फेरना नहीं चाहता। यह राह सब से उत्कृष्ट है। और इसी लिये सब से कठिन है। पर

(शेष पहिले कालम के नीचे)

पर ब्रह्म में मिलने का यह सब से उत्तम साधन है। आए आइये-इस राह पर चलिये किन्तु यहां दुःख का नाम न लीजिये। अपने प्रेमी पर लाखों की न्योछावर न कीजिये। यह मार्ग ही ऐसा है। यह वहीं ले जाता है, जहां दुःख का नाम नहीं है। जहां एक मात्र सुख है—एक चीज़ है। यहां प्रेमी को दुखाने पर ही सुख की अत्यधिकता कही जाती है।

× × × × ×

यहीं सब वृत्तियों का उपराम हो जाता है। यहीं चित्त का अत्यन्त शुद्ध स्वरूप प्रकट होता है। यहीं दिल परवश होता है। यहीं उसकी चञ्चलता मारी जाती है। यहीं वह एकाग्र होता है। यहीं उस पर परमात्मा का शुद्ध प्रतिबिम्ब पड़ता है। उसकी ज्योति दिखाई पड़ती है। यहां सुख के सिवाय कुछ नहीं होता। इस पवित्र स्रोत में नहाने से पापों की शुद्धि होती है। यहीं प्रेमी की प्राप्ति होती है। यहीं एकता होती है। यहीं सच्चा सुख है। यहीं पर पहुंचना उद्देश्य है। यहां देह नहीं: दिल नहीं, नामरूप से हीनता हो जाती है। जो अपने आपको खोना चाहते हो तो अवश्य इधर आओ, यहां अपने आप से अपनी पन से मुक्ति मिल जावेगी।

अछूतों को उठाओ !!

विकट समस्या का हल !!

पिछले दिनों कोचीन रियासत के 'अर्ने कुल' नामक स्थान में होने वाले "अन्त्यज-सम्मेलन" के सभापति सर नारायण चन्दावकर ने सभापति के हैसीयत से अछूतोद्धार के कुछ उपाय बतलाये हैं जिन्हें हम यहां देते हैं। आशा है, पाठकगण उस पर पूर्ण विचार करेंगे—

(१) अछूतों की राजनैतिक स्वतन्त्रता के लिए इस समय जो कुछ भी किया जा रहा है, उस से यद्यपि उनकी आर्थिक और सामाजिक दशा सुधारने में बड़ी सहायता मिलेगी परन्तु यह काम अधिक और शीघ्र सफलता से हो सकता है यदि इस प्रश्न को सम्पूर्ण रूप से हाथ में लिया जावे, टुकड़ों २ में नहीं, जैसा कि आज कल किया जा रहा है।

(२) उनके पृथक् स्कूल खोलने की जो नीति है वह लाभदायक होने के स्थान में अत्यन्त हानि कारक है। इस से उनको स्मृति में यह बात पक्की होती रहती है कि वे अछूत हैं और अन्त्यज हैं। येही भाव है जिनके उच्छेद की आवश्यकता है।

(३) उनके युवक और युवतियों के लिए ऐसे आश्रम खोले जाने चाहियें जिन में उन्हें मिशनरी का काम सिखाया जावे। वहां से पढ़कर वे अपने अछूत भाईयों के उद्धार के लिए काम करें। इस उपाय से बहुत सफलता हो सकती है।

(४) सरकार तथा प्राइवेट संस्थायें जो कि इस क्षेत्र में काम कर रही हैं, अछूतों के कुछ योग्य बालकों को उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए वजीफ़ा दिया करें। अपने समूह में इन पढ़े लिखों को देखने मात्र से ही उनके हृदयों में शिक्षा प्राप्ति के लिए उत्साह पैदा होगा।

(५) शिक्षित तथा समर्थ पुरुषों में अपने आपको उनसे पृथक् रखने की जो प्रवृत्ति है वह अछूतों की उन्नति में अत्यन्त बाधक है। इसका एक दम त्याग कर देना चाहिये।

(६) पुराणों और शास्त्रों की कथा, कीर्तन, भजन, व्याख्यान लैन्टेर्न लेक्चर आदि द्वारा उन्हें शिक्षित करते हुये उनकी धार्मिक और सामाजिक स्थिति को उन्नत करने का खूब प्रयत्न करना चाहिये। इस काम के लिए एक विशेष विधान होना चाहिये जो इन में स्वावलम्बन तथा क्रियात्मक सहयोगिता के भावों को उत्साहित करे।

(७) ऐसे सामाजिक उत्सव, और सह भोज इकट्ठे होने चाहिये जिन में नीच श्रेणी के ये लोग उच्च और शिक्षित पुरुषों के साथ समान रूप से उठ-बैठ सकें। हम अपने पाठकों से ४ थे, ५ वें और ७ वें उपाय की ओर विशेष ध्यान देने की प्रार्थना करते हैं। हमें यह बात नहीं भूलनी चाहिये कि यह प्रश्न केवल सामाजिक नहीं है किन्तु सामाजिक-राजनैतिक है। हमें अपनी वाणी और कर्म दोनों द्वारा सदा यही दिखाना चाहिये कि हम सच्चे भावों से काम कर रहे हैं और उनके प्रति हमारी सहानुभूति कोई निजू स्वार्थ सिद्ध करने के लिए नहीं है। सब से बढ़ कर अपने इन अभागे और नीच भाइयों के प्रति यदि शिक्षित पुरुषों की सहानुभूति और क्रियात्मक सहयोगिता का प्रकाश वास्तविक रूप से ही उनकी जगा रहें न हो, तो यह प्रश्न बहुत ही सुगम हो जावेगा और सफलता प्राप्त करने में, तब बहुत देर नहीं लगेगी

(द्वितीय पृष्ठ से आगे)

ऐसा अन्धेरा छा गया है कि उन्हें अपनी हीन दशा का परिज्ञान ही नहीं। ऐसी दशा में एक तेजस्वी महात्मा अज्ञात से चले आ रहे हैं एक क्षण में उन्हों ने सारी अवस्था को जांच लिया और एक दम से समुद्र में कूद पड़े। देखते देखते—पहुंच गए। बढ़ गए। किश्ती को जा पकड़ा और उछल कर ऊपर चढ़ गए। पतवार को भय के नशे से चूर मांझी से छीन कर अपने हाथ में लिया, और किश्ती संभल गई। वह लहरों की भंवर से निकली और किनारे पर लग गई।

ब्रह्म को प्राप्त, आत्मा, ब्रह्मचारी किस लिए तपधारी करता है? क्या विषयों का दास बनने के लिए? यदि यही उद्देश्य होता तो भौतिक गृह में आत्मिक गर्भ में पुनः प्रवेश का क्या मतलब! ब्रह्मचारी सारी तपधारी इस लिए करता है कि स्वार्थ को भूल कर संसार की पीड़ित प्रजा के दुःख हरण करने के लिए जनता का सच्चा मार्ग दर्शक बने। ऐसे ब्रह्मचारी उत्पन्न करने का अधिकार आर्यवर्त्त के गुरुकुलों को था। क्या वह समय फिर लाया जा सकता है? यदि नहीं, तो संसार के पुनरुद्धार की आशा छोड़ देनी चाहिए।

ओमित्योरेम्— श्रद्धानन्द संन्यासी

गुरुकुल—जगत्

गुरुकुल-कुरुक्षेत्र

(१) आज कल विद्यालय प्रातः ६॥ बजे से ११ बजे तक लगता है। दिन में अधिक गरमी के कारण आश्रम में ही पठन पाठन का कार्य होता है। श्री० पं० शशि भूषण जी के ६ मास के अवकाश पर चले जाने से श्री० मास्टर काशीराम जी मुख्याध्यापक का कार्य कर रहे हैं। अन्य अध्यापक महाशय भी बड़े उत्साह से अपने २ कार्यों को कर रहे हैं।

(२) यह प्रसन्नता का अवसर है कि यहां की आर्थिक दशा को सुधारने के लिए दानी महाशयों ने कुछ ध्यान देना आरम्भ कर दिया है। सफेदू के म० रामदास जी कालिया वाले ने भण्डार के कमरे के लिए १०००) की प्रतिज्ञा की है जिस में २००) नकद जमा भी कर दिये हैं। मुज़फ्फर नगर से श्रीमती श्यामदेवी जी c/o बाबू जगन्नाथ जी ने एक कमरे के लिए ५००) में से २००) नकद भेज दिया है। दोनों महाशय शेष धन भी शीघ्र भेजने का यत्न कर रहे हैं। एक गौ के वास्ते ६०) म० शंकरदास जी ओवरसियर ने चक 509 लायलपुर से भेजा है। गोदान की ओर अन्य दानी महाशयों को भी ध्यान देना चाहिए। ब्रह्मचारियों के दूध के लिए उत्तम गौओं की ज़रूरत है। इस मास में २५), २०), १६) की और छोटी छोटी राशियां भी प्राप्त हुई हैं जिनके लिए दानी महाशयों को हार्दिक धन्यवाद है। जिन सज्जन महाशयों के पास धन जमा करने की रसीद बुक हैं उन्हें धन जमा कर कार्यालय में सूचना देने की कृपा करते रहना चाहिए।

मैं रोगी होने के कारण अन्न जमा करने के लिए बाहिर नहीं जा सका। जिन उत्साही सज्जनों को पत्र भेजे गये हैं और जो प्रति वर्ष अन्न जमा करने का कष्ट उठाया करते हैं, वे स्वयमेव अन्न जमा करने की कृपा करते हुए इस आश्रम की सहायता करें।

जीवनराम
प्रबन्धकर्त्ता

संसार समाचार पर

टिप्पणी

स्वदेशी का प्रचार

महात्मा गान्धी द्वारा सम्पादित "यंगइण्डिया" में यह पढ़ कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि उनके सत्याग्रह आश्रम में बुने हुए खद्दर के कपड़ों का बहुत प्रचार हो रहा है। उसके लिए शिकारपुर, बीजापुर, बम्बई और अदन तक से आर्डर आ रहे हैं। खड्डियों, करघों और हस्तक्रिया कौशल से बने हुए पदार्थ ही, सच्चे अर्थों में, स्वदेशी हैं। गुरुकुल विश्वविद्यालय में भी, शीघ्र ही, इस विषय का एक विद्यालय खुलने वाला है जिस में ब्रह्मचारियों को, खाली समय में, हाथ से कपड़ा बुनने का शिल्प सिखाया जावेगा। कपड़े के लिए हमारा जो करोड़ों रुपया प्रतिवर्ष विदेशियों के पेट में हज़म होता है वह इसी उपाय से बन्द हो सकता है। ये लक्षण देश के लिए शुभ हैं।

दैनिक भविष्य

सर्व व्यापी प्रेसएक्ट द्वारा रौंदे जाने का प्रयत्न किए जाने पर भी 'भविष्य' के संचालकों ने उसे पुनः न केवल साप्ताहिक किन्तु दैनिक रूप में भी प्रकाशित कर के जिस साहस और उद्योग का परिचय दिया है, वह अत्यन्त सराहनीय है। सहयोगी का हम हार्दिक स्वागत करते हैं और आशा करते हैं कि उसका यह दैनिक रूप स्थिर रहेगा।

मुसलमान और गो-रक्षा

हमारे मुसलमान भाई भी अब गो रक्षा की ओर ध्यान दे रहे हैं, यह प्रसन्नता की बात है। काबुल के अमीर का गो-हत्या को बन्द कर देने के विषय में जो अभी उद्घोषणा पत्र प्रकाशित हुआ था वह हमारे पाठक जानते ही हैं। अब "बाम्बे क्रानिकल" द्वारा ज्ञात हुआ है कि ममगरोल के *पीर मोतामिया साहब* ने हिन्दू-मुसलमान एकता को बढ़ाने के लिए प्रत्येक गांव और शहर में *"गोवर्द्धक मण्डलियां"* स्थापित करने के लिए आन्दोलन प्रारम्भ किया है। जिसका उद्देश्य यह है कि प्रत्येक गृहस्थी को अपने घर में कम से कम एक गौ रखने के लिए प्रोत्साहित किया जावे। पीर साहब कहते हैं कि इससे जहां आर्थिक लाभ होगा वहां गो रक्षा भी होगी। कहने की आवश्यकता नहीं कि यह आन्दोलन कोई नया नहीं है। आज से कई वर्ष पूर्व महर्षिदयानन्द ने गोकरुणानिधि इत्यादि पुस्तकों द्वारा ही नहीं किन्तु अपने जीवन में क्रिया द्वारा भी इस विषय का पूर्ण आन्दोलन किया था जिस का अनुकरण आर्यसमाज अब भी कर रहा है। तथापि, यह अवसर प्रसन्नता का है कि हमारे मुसलमान भाई भी अब इसकी आवश्यकता को समझने लगे हैं।

कौन्सिलों में देशी भाषा

बम्बई-सरकार ने एक विज्ञप्ति प्रकाशित की है जिस के अनुसार, प्रेज़िडेण्ट से पूछ कर, मैम्बर देशी भाषा में भी अपनी स्पीच दे सकेंगे। इतना ही नहीं, अंग्रेज़ी न जानने वाले मैम्बरों की प्रार्थना करने पर भी वह देशी भाषा में बोल सकेगा। बम्बई सरकार के इस प्रशंसनीय कार्य की सराहना करते हुये हम अन्य प्रान्तीय सरकारों से भी इसका अनुकरण करने की प्रार्थना करते हैं।

डा० ओहदेदार का स्वर्गवास

हमें यह समाचार सुनकर अत्यन्त दुख हुआ है कि लखनऊ के प्रसिद्ध डाक्टर और देश भक्त रायबहादुर डाक्टर ओहदेदार का गत सप्ताह, रात को अचानक, स्वर्गवास हो गया। आप समाज सुधारक होने के साथ २ राजनैतिक क्षेत्र में भी काम करते थे। कांग्रेस के पुराने भक्त थे। गतवर्ष सहारनपुर की प्रान्तीय राजनैतिक-परिषद् के आप सभापति चुने गये थे। आपके परिवार के साथ हम हार्दिक सहानुभूति प्रकट करते हुये परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि आप की आत्मा को शान्ति प्रदान करें।

गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की विजय

मद्रास के मि० एस श्री-निवास आयङ्गर, एडवोकेट जनरल ने हाल ही में, उस पद से इस्तीफ़ा देकर, राजनैतिक क्षेत्र में प्रविष्ट हुये हैं। उनके वक्तव्य इस लिए, विशेष महत्त्व पूर्ण हैं। आपने, सभापति की हैसियत से, 'मद्रास' में होने वाले "विद्यार्थि सम्मेलन" में यह कहा है कि "हमारी शिक्षा में अंग्रेज़ी का क्या स्थान होना चाहिये-इस विषय में मेरी सम्मति अब बदल गई है। मेरी अब यह दृढ़धारणा है कि, देसी भाषाओं को मुख्य-स्थान देते हुये अंग्रेज़ी का दूसरा दर्जा होना चाहिये।" गुरुकुल में आयङ्गर महाशय की सम्मति क्रियारूप में हो रही है। *क्या यह हमारी विजय नहीं है ?*

३२० वर्ष का कोई आदमी नहीं

'श्रद्धा' के तीसरे अंक में हमने यह समाचार दिया था कि *पानीपत में ३२० वर्ष की आयु का एक साधु आया हुआ है।* इस पर ख़ास वहीं के एक संवाददाता ने हमें निम्न पत्र भेजा है—"यहां पर १०० साल की आयु का कोई सन्यासी नहीं आया है। और नाही, इस प्रकार की कोई यहां अफ़वाह है। बाहर से इसी प्रकार के और भी कई पत्र आये हैं परन्तु यह ख़बर बिल्कुल ग़लत है।"

एक और महाशय ने हरिद्वार से हमें लिखा है। "मैंने हरिद्वार में ख़ास पानीपत से आये हुये आदमियों से दर्याफ्त किया है। उन्होंने जवाब दिया कि वहां पर ३०० वर्ष की आयु का कोई आदमी नहीं आया।"

गुरुकुल में श्री स्वामी शंकराचार्य जी

२० वैशाख या १ मई को दुपहर को गुरुकुल में श्री-१०८ *जगद्गुरु स्वामी शंकराचार्य जी* का शुभा गमन हुआ था। सब कुल वासियों की ओर से आप को एक अभिनन्दन पत्र दिया गया जिस का उत्तर देते हुये आपने गुरुकुल के कार्य की अत्यन्त प्रशंसा की। आप के दो व्याख्यान हुये-एक संस्कृत में और दूसरा अंग्रेज़ी में-जिनका सारांश हम अगले अंक में देने का प्रयत्न करेंगे।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से वहांके प्रिन्टर और पब्लिशर आद्वीराम के लिये छपा।

ओ३म्

Registered No A. 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में भी श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० म० १०, सू० १५१, म० ५)
सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को ही बुलाते हैं। हे श्रद्धे! इस समय (सब समय) हमको श्रद्धामय कीजिये।
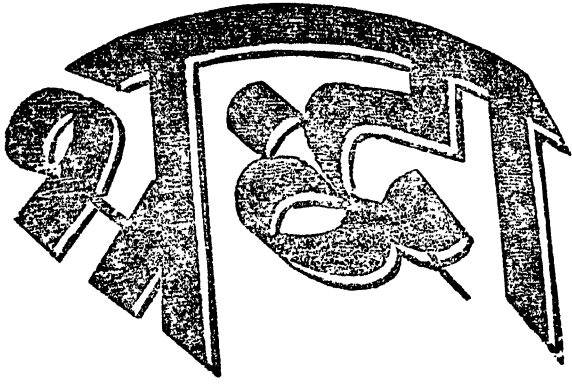
सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | ३० ज्येष्ठ स० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० ११ जून सन् १९२० ई० | संख्या ८ भाग १

हृदयोद्गार

चाह !!

आनन्द वाली फुलवारी से यह झोली भर लाया हूं,
कुछ फूलों को गूंथ कर माला, कुछ यूं ही ले आया हूं।
हे प्रभु जी! स्वीकार कीजिये, यह माला मैं पहरा दूं,
और सुमनकुसुम अञ्जलि तुम पर, इन फूलों की बरसा दूं (१)
भेंटें दे दे थका हुआ हूं, पाया नहीं जरा विश्राम,
ऐसी कितनी भेंटें दी, कितना जपा तुम्हारा नाम।
भेंट लिए फिर भी वैसो ही, मांग रहा हूं वह ही दान,
'एक बार तो दिखला दो प्रभु! मुझ पर मीठी सी मुस्कयान' (२)
मन मन्दिर में सदा तुम्हारी, मैं तो मूर्ति बनाऊंगा,
स्नेह भक्ति की गुंथ मालायें, सदा उसे पहराऊंगा।
श्रद्धा रूपी फूल चढ़ा कर, प्रेम-सलिल बरसाऊंगा,
जैसा होगा वैसा ही, प्रभु! तुम को सदा रिझाऊंगा (३)
बेसुध होकर, टूटी फूटी, देख, चढ़ाते हम को तान,
फूट पड़ेगी आप तुम्हारे, मुख से वैसी ही मुस्कान।
इसी झमेले में हम दोनों हो जावेंगे अकथ निहाल,
जो चाहूंगा, करवालूंगा, देखो! चलकर ऐसी 'चाल' (४)

"दासी"

स्वदेशी

दिशा से पश्चिम की आज फैला, ये देखो तूफान आ रहा है।
अपार भय को सभी दिलों में, न जाने क्यों ये जमा रहा है॥१॥
उजाड़ डाले हैं खेत सारे, बदल गई चाल जाम्बुवी की।
स्वतन्त्रता, शान, औ कला को, यहां से बिल्कुल उड़ा रहा है॥२॥
न पेट के हित बचा है भोजन, न देह ढकने को वस्त्र बाकी।
घटा है धन और मान सारा, ये दासता को बढ़ा रहा है॥३॥
जिधर भी देखो उदासता है, दया सभी में है रोष भारी।
कि हा! पुरन्दरपुरी को यों ही, मसान ये क्यों बना रहा है॥४॥
न धन रखा है न मान कोई, स्वतन्त्रता का न नाम कोई।
सुरम्य उद्यान को हमारे, सभी तरह से सुखा रहा है॥५॥
गया सभी कुछ न दुःख मानो, बचा है जो कुछ उसे बचालो।
विदेशी चीजों से योग छोड़ो, जो दास हमको बना रहा है॥६॥
हरेक ही चीज़ के हुए हम, भिखारी, पर मस्त सो रहे हैं।
न जाने वो कौन है बड़ा बल, जो हमको यों ही सुला रहा है॥७॥
न कोप से या न लोभ से ही, किया विदेशी का त्याग हमने।
स्वमान रक्षार्थ छोड़ना है, स्वमान को जो मिटा रहा है॥८॥

"सहृदय"

ब्रह्मचर्य सूक्त की व्याख्या।

ओ३म् ब्रह्मचारी जनयन् ब्रह्मापो लोकं प्रजापतिं परमेष्ठिनं विराजम्। गर्भो भूत्वामृतस्य योनाविन्द्रो ह भूत्वा सुरांस्ततर्ह ॥ ७ ॥

(ब्रह्म) वेद विद्या (अपः) प्राण विद्या (लोकम्) दृश्यमान् जगत् और (परमेष्ठिनम् विराजम् प्रजापतिम्) सब से ऊंचे स्थित, सब के प्रकाशक, प्रजा पालक, परमात्मा) को (जनयन्) प्रत्यक्ष करता हुआ (ब्रह्मचारी) ब्रह्मचारी ने (अमृतस्य योनौ गर्भः भूत्वा) मोक्ष प्रदायनी ब्रह्मविद्या (सावित्री) रूपी योनि में गर्भ रूप हो कर और (ह इन्द्रः भूत्वा) और निस्सन्देह इन्द्र हो कर (असुरान् ततर्ह) असुरों का नष्ट किया है।"

ब्रह्मचर्य की आधार शिला वेदारम्भ संस्कार है। ब्रह्मचारी सब से पहिले आचार्य से वेद मन्त्र (गायत्री) की दीक्षा लेता है। फिर से ही उसे प्राणविद्या का ज्ञान होता। ज्ञान बिना अभ्यास के कुछ भी फल नहीं लाता। प्राणविद्या का ज्ञान इस लिए आवश्यक है कि उस से प्राणों को वश में लाया जासके। इस लिए वेदाभ्यास के साथ ही उसे तीन प्राणायाम नित्य करने की शिक्षा मिलती है। तप ब्रह्मचर्य का मूल है और मनु भगवान् कहते हैं कि (प्राणायामः परंतपः) प्राणायाम ही बड़ा तप है। प्राणों को वश में करने से ही मन वश में आता है और तब इन्द्रियां डांवाडोल नहीं होतीं। मन की एकाग्रता से ही संसार का यथार्थ दर्शन होता है। डांवांडोल मन संसार के वास्तत्व को नहीं समझ सका। संसार का वास्तविक स्वरूप देखने के लिए निश्चल मन की आवश्यकता है। जब लोक-संग्रह ब्रह्मचारी का परम अधिकार है तो सब से पहिले उसे लोक का यथार्थ स्वरूप मालूम होना चाहिए। वेद विद्या की प्राप्ति का फल प्राण विद्या में प्रवेश और प्राण विद्या द्वारा प्राणों को वश में करने का फल जगत् के वास्तविक स्वरूप को जानना।

लोक के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान किस लिए चाहिए? इस लिए कि उस लोक के ठीक (लोकृ=दर्शने) दर्शन हो सकें। रूप के विमोहित होकर मनुष्य व्याकुल पागलों की भांति उसी की ओर टिकटिकी लगा देते हैं। परन्तु प्राणों को वश में किए ब्रह्मचारी विचार करता है क्या अस्थी, मज्जा और चर्मादि की यह चमक है जो सुन्दर मानवी चेहरे को दमका रही है? क्या यह प्राकृतिक जिह्वा के अन्दर वह लालित्य है जो सहस्त्रों को मूर्छित कर देता है? क्या पत्थर, पानी और पोल के अन्दर वह छटा छिपी हुई है जो हिमशिखा की ओर स्वभावतः मनुष्यों की बाहिरी आंखों को आकर्षित कर रही है? प्राण के विजेता ब्रह्मचारी की अन्दर की आंखें खुल जाती हैं और वह देखता है कि जड़ में सौन्दर्य नहीं। जिस प्रकार चन्द्रादि लोक सूर्य से प्रकाश प्राप्त कर के ही प्रकाशित होते हैं, इसी प्रकार सारी प्रकृति सौन्दर्य को किसी अन्य उच्च शक्ति से धारण करती है। सारा सौन्दर्य उस प्रभु का है जो सब से ऊंचा स्थित, सब में व्यापक हो कर सब को प्रकाश दे रहा है — जो सूर्य लोकों का भी द्योतक तथा देव और ऋषि महात्माओं के हृदयों का भी प्रकाशक है।

ऐसी निर्मल बुद्धि को लेकर ब्रह्मचारी दीक्षा से व्रत का अधिकारी बनता है तब उसे बाहर के प्रलोभन अपनी ओर नहीं खींच सके। मोक्ष-स्वरूप परमात्मा के अन्दर जब आत्मा स्थित हो गया तब ओझल हो जाता है। यही उसका अपूर्व गर्भ है। जब इस गर्भ में स्थित हुआ तो बाहर की 'सुध बुध' भूल जाती है। हर मुल्क और हर समय में आदर्श विद्यार्थी उसी को माना जाता रहा है जिसे विद्या प्राप्ति की धुन में बाहिरी दुनिया के साथ कोई सम्बन्ध न रहे। जिसने बालों की दासता, कपड़ों की दासता, चटोरी, जबान की दासता, और गोष्ठी की दासता में समय और शारीरिक बल को नष्ट किया वह सावित्री माता के गर्भ में कभी गया ही नहीं।

परन्तु जिस प्रकार हाथ, पैरादि अवयव बन जाने पर प्राकृतिक माता के गर्भ में बालक हाथ पैर मारने लगता है और बुद्धिमती माता उसे धार्मिक पिता की सहायता से शान्त कर देती है इसी प्रकार जब सावित्री माता के गर्भ में ब्रह्मचारी जल्द बाजी से कुछ व्याकुल होने लगता है तो आचार्य की सहायता से विद्या माता उसे सावधान कर देती है। यह गर्भ का समय बड़ा नाजुक है, विशेषतः आरम्भ का समय। जब आरम्भ के पांच मास ठीक व्यतीत होजाय तो फिर माता सन्तान की ओर से निश्चिन्त जाती है, इसी प्रकार जब ब्रह्मचारी गुरुकुल निवास के पहिले दश वर्षों के अन्दर से बड़ी सलामत गुजर जाय तो जहां वेद विद्या पर उसका विश्वास होजाता है वहां आचार्य भी उसकी रक्षा से अपेक्षया निश्चिन्त हो जाता है। जब इस प्रकार सुरक्षित ब्रह्मचारी जन्म लेकर द्विजन्मा बनता है तब निस्सन्देह वह इन्द्र पद का अधिकारी होता है।

'इन्द्र' कौन है? मानवी शरीर के अन्दर ही देव और असुर दोनों हैं। ज्ञानेन्द्रिय देव हैं क्यों कि जीवात्मा जितना भी ज्ञान उपार्जन करता है वह इन्हीं के द्वारा अन्दर पहुंचता है। काम क्रोध मोह लोभादि असुर हैं और वे भी कहीं बाहिर से नहीं आते। देवभाव के उलट जाने से अन्दर ही इन की उत्पत्ति होती है। इन्द्रिय रूपी देवों को जब जीवात्मा वश में कर लेता है तब उसकी "इन्द्र" संज्ञा होती है। और अविद्या रूपी विरोचन (विगत प्रकाश) काम क्रोधादि को उत्पन्न करके जीवात्मा को विषयों में उसे इन्द्रियों का दास बना लेता है तभी उस को मनुष्य से भी नीचे राक्षससंज्ञा हो जाती है।

ब्रह्मचर्य का अन्तिम उद्देश्य यह है कि ब्रह्म (वेद और परमेश्वर) तेज धारण करके संसार का कल्याण किया जाय और यह नहीं हो सकता जब तक कि काम क्रोधादि के दलों को केवल दबा ही न दिया जाय प्रत्युत उन को दग्धबीजवत् नष्ट भी न कर दिया जाय।

ब्रह्मचर्य का आदर्श इस समय लोप हो रहा है, संसार इस लिए भोग और स्वार्थ के जाल में फंस रहा है। इस फांस को काट कर जनता को मुक्त कराना इस समय का सब से बड़ा काम है। क्या माता के गर्भ में कोई ऐसा बालक रक्षा पा रहा है।? उत्तर की प्रतीक्षा करनी चाहिए। शमित्योम्

श्रद्धानन्द संन्यासी

श्रद्धा

गुरुकुल परिवार में एक नई सन्तान की उत्पत्ति

पिछले दिनों ही हुई है। रोहतक के ज़िले में पहिले मटींडू ग्राम के पास गुरुकुल विश्वविद्यालय की एक शाखा खुली हुई है। उस में इस समय ६० छात्र शिक्षा पारहे हैं। उस शाखा का वार्षिकोत्सव गत चैत्र मास (सं०१९७७) की समाप्ति पर हुआ था। उस समय ७०००) के लगभग रोक धन जमा हुआ था तथा अनाज और धन की प्रतिज्ञाएं हुई थीं। उस शाखा गुरुकुल का प्रबन्ध गुरुकुल के पुराने स्नातक पण्डित पूर्णदेव जी कर रहे हैं और वहां की प्रबन्धकर्तृ सभा का कहना था कि उस प्रान्त के सब भूमिपति उन के कार्य से बहुत सन्तुष्ट हैं। रोहतक प्रान्त 'हरियाना' के नाम से प्रसिद्ध है इसलिए मैंने उस संस्था का नाम "मध्य हरियाना गुरुकुल" रक्खा है। इसी (रोहतक) प्रान्त में दूसरा गुरुकुल झज्झर आर्यसमाज के पूर्व मन्त्री श्री पं० विश्वम्भर जी खोलना चाहते थे। उन्होंने भूमि भी ख़रीद ली थी, इमारतों का सामान भी तय्यार कर लिया था और मेरे इस कहने पर कि यदि ५०,०००) का स्थिर कोष जमा करने के अतिरिक्त वह आवश्यक मकान (पाठशाला तथा आश्रम के लिए) बनवा देंगे तब मैं उसे गुरुकुल विश्वविद्यालय की शाखा स्वीकार करूंगा, पं० विश्वम्भर जी कलकत्ते गए और ६०००) नक़द लाने के अतिरिक्त ३०,०००) की प्रतिज्ञाएं ले आए। परन्तु जब पीछे से दानियों ने इन्कार कर दिया तो उन के हृदय पर ठेस लगी और उन्हें अपने शरीरादि की सुध भी भूल गई। इस भावी गुरुकुल का नाम पं० विश्वम्भर जी ने ही "दक्षिण हरियाना गुरुकुल" रक्खा था। पं० विश्वम्भर जी ने उस प्रस्तावित गुरुकुल के सब पत्र तथा हिसाबादि गुरुकुल कांगड़ी के कार्यालय में दे दिए हैं और यदि उस के सम्बन्ध का सब धन, जो १०,०००) के लगभग है, वसूल हो जावे और कलकत्ते वाले दानी एक ब्राह्मण की प्रतिज्ञा को पूर्ण करना अपना धर्म समझें तो वह गुरुकुल भी खुल हो जायगा।

तीसरे गुरुकुल का हरियाना प्रान्त में हाल में ही जन्म हुआ है। गुठाला उप जाति के जाट भूमि पतियों ने चौधरी फूलसिंह और उन के साथियों ने प्रतिज्ञाएं कराके मुझे सूचना दी कि वह अपना जुदा गुरुकुल खोलना चाहते हैं। मैंने उन्हें उत्तर दिया कि यदि वह ५०,०००) रुपया स्थिर कोष के लिए एकत्र करके गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी के द्वारा सूद पर चढ़वादें और आवश्यक मकानात बनवादें तो मैं उन की खोली हुई शाखा को प्रधान गुरुकुल की शाखा स्वीकार करा दूंगा। इस को चौधरी फूलसिंह तथा अन्य सरदारों ने स्वीकार किया। 'मध्य हरियाना गुरुकुल' के जलसे से लौटते हुए मैं इन नए सम्बन्धियों के साथ भूमि देखने आया। भैंसवाल ग्राम में १९० बीघा भूमि मानों प्रकृति ने इसी गुरुकुल के लिए सुरक्षित रक्खी हुई थी। जैसे भूमि चौरस और वृक्षों से लदी हुई है, वैसी ही लम्बी चौड़ी चौरस भी है। भूमि के मध्य में एक कच्चा तालाब है जिस के पक्के घाट बना कर वह उत्तम शान्ति सरोवर बन सकता है।

मैंने उस स्थान को उत्तम समझ कर वहां ही गुरुकुल खोलने की सम्मति दी। मालूम हुआ कि चौधरी घासीराम जी आनरेरी मजिस्ट्रेट, जो गुठाला बिरादरी के शिरोमणि सरदार समझे जाते हैं, एक कूप बनाने को १०००) देंगे और सर्वथा गुरुकुल की सहायता करेंगे। मैं चला आया और [illegible] सज्जनों ने काम शुरू किया। ३१ मई से गुरुकुल की प्रतिष्ठा के लिए उत्सव आरम्भ हुआ। उसी दिन कलकत्ते से सीधा भैंसवाल मैं पहुंचा। १ और २ जून को भी जलसा हुआ। ५१ ब्रह्मचारी प्रविष्ट हुए जिन की संरक्षा का भार गुरुकुल के नए स्नातक पण्डित शान्तिस्वरूप वेदालंकार ने उठाना स्वीकार किया। पहिली जून को अपील पर पौने तेरह हज़ार चांदी के रुपए प्राप्त हुए जिनसे एक बड़ा बटलोआ भर गया। २ जून को प्रविष्ट ब्रह्मचारियों का वेदारम्भ संस्कार हुआ। और धन की अपील पर फिर लगभग ७०००) रुपए प्राप्त हुए। यद्यपि विवाहों के ज़ोर शोर के मारे लोग पूरे बल से नहीं आ सके परन्तु फिर भी इतनी भीड़ थी कि उस बड़े हजूम को उपदेश सुनाने में कठिनता होती थी। देवियों का उत्साह और उनकी श्रद्धा अनुकरणीय थी। गुरुकुल भूमि से भैंसवाल १½ मील है और उस में अब तक कोई कूप नहीं। देवियां सिरों पर मीठे जल के घड़े धारण किए सुन्दर गीत गाती हुई सभा मण्डप में पधारीं और पुरुषों की प्यास की औषध इकट्ठी कर दी। मुझे पहिले से मालूम है कि हरियाना के जाट क्षत्रियों की माताएं, बहिनें और पुत्रियां बड़ी शुद्ध आचार की स्वामिनी हैं और जब मैंने इन में गुरुकुल के लिए असीम श्रद्धा देखी तो मुझे दृढ़ विश्वास हो गया कि उत्तर-हरियाना का गुरुकुल शुद्ध ब्रह्मचारी घड़ कर उन्हें सच्चे द्विज बनाने में अवश्य कृतकार्य होगा।

और इस स्थान में एक बात मैं स्पष्ट कर देना चाहता हूं। मेरे पास कुछ ऐसे पत्र आते हैं जिनमें विविध स्थानों में गुरुकुल की शाखाएं खोलने का विचार प्रकट किया जाता है। मैं ऐसे भाइयों को यह सम्मति दूंगा कि यदि ऐसा विचार हो तो पहिले ५०,०००) तो कम से कम स्थिर कोष में जमा कर लिया करें और कम से कम २५,०००) की इमारत बनवा लिया करें जिस का नक़्शा मैं तय्यार करा रहा हूं। फिर यदि उस इलाक़े के लोग ब्रह्मचारियों के भोजन के लिए पर्याप्त अनाज प्रतिवर्ष जमा कर देने की प्रतिज्ञा करलें तो शाखा गुरुकुल खोल कर कष्ट न होगा और प्रविष्ट छात्रों की रक्षा भी ठीक हो सकेगी।

श्रद्धानन्द संन्यासी

—:०:—

लोकमान्य तिलक और मि० पाल

मि० पाल द्वारा सम्पादित "इन्डिपेन्डेन्ट" और "नेशनलिस्ट" तथा लोकमान्य तिलक की पार्टी के "मराठा" और "केसरी" के दृष्टिमत पर ध्यान दें, आजकल भारत कार्यक्रम के विषय में बड़ा मनोरंजक विवाद चल रहा है। प्रश्न यह है कि सुधार स्कीम के प्रति हमारा क्या भाव होना चाहिए? लोकमान्य तिलक तथा उनकी पार्टी का यह मत है, जैसा कि उन्हों ने अपने उद्घोषणा पत्र में स्पष्ट किया है, कि सुधार स्कीम से पूरा लाभ उठाते हुये हमें उस से अधिक प्राप्त करने का पूर्ण आन्दोलन करना चाहिए। अर्थात् हमारा भाव सहयोगिता और विरोध दोनों का मिला हुआ होना चाहिए। इस पर मि० पाल बड़े बिगड़े हुये हैं। वे कहते हैं कि इस स्कीम के प्रति दो ही भाव हो सकते हैं, पूर्ण विरोध का या पूर्ण सहयोगिता। सुलहनामा करके तीसरा भाव हो ही नहीं सकता। और चूंकि पिछले प्रकार के भाव का उद्देश्य नरम दल वालों ने उद्घोषित किया है, इस लिए स्वभावतः, पहिले प्रकार का भाव गरम दल वालों का ही होना चाहिए। इस लिए मि० पाल यह उपदेश देते हैं कि कौंसिलों में घुसो परन्तु सुधारस्कीम का नाश करने के लिए ही।" इसका उत्तर "सर्व्वेन्ट" के एक लेखक ने प्रचुर उत्तम दिया है और वह यह कि निर्वाचक मण्डल ऐसे आदमियों को चुनेगा ही क्यों जो कि उसकी अभीष्ट वस्तु का नाश करने के लिए ही खड़े हो रहे हैं। निर्वाचक मण्डल उन से कहेगा कि "हम आपके लिए सम्मति क्या दें, जबकि आपका उद्देश्य ही नाश करना है।" इस सो हम विषय में इतना ही कहेंगे कि मि० पाल अपनी वाग्वीरता के लिए ही प्रसिद्ध हैं, कर्मवीरता के लिए नहीं परन्तु लोकमान्य तिलक इसके विरुद्ध, अपनी कर्मवीरता से ही देश के नेता बने हैं और जो कुछ कह रहे हैं अपने अनुभव से ही कह रहे हैं। मि० विपिनचन्द्र पाल को, इस लिए, अपने भड़कीले कथनों से देश को गुमराह नहीं करना चाहिए।

पायोनियर को बधाई !!!

वैसे तो 'पायोनियर' प्रायः सदा ही देशी पत्रों के विरुद्ध रहा करता है परन्तु २१ मई के अंक में उसने तो एक अकलमन्दी की बात लिख दी है जिस के लिए उसे बधाई देनी चाहिए। भारतीय सरकार के गर्मियों में, शिमला चले जाने के कारण देश के शासन को जो हानि पहुंचती है, उसके विरुद्ध भारतीय नेता यद्यपि चिरकाल से आन्दोलन कर रहे हैं पर उसका फल कुछ नहीं निकला। अब तो सरकार को अपनी भूल मान ही लेनी चाहिए क्योंकि उसकी खुशामद करने वाले "पायोनियर" की भी अब यही सम्मति होगई है। ३१ मई के अंक में वह कहता है कि "इन पहाड़ों का जीवन सहभोजों और नाचों के निरन्तर चक्कर से व्याप्त होता है" (टेढ़े अक्षर हमारे हैं)। आगे वह लिखता है कि "कई वर्ष पूर्व किपलिंग ने यह लिखा था कि "काम शासन और आराम के लिए शिमला सब से उत्तम है" परन्तु आज कल प्रत्येक पहाड़ी स्थान अपने आपको चारों ओर के सूखे मौसम (ennui) से बचाने के लिए प्रयत्न कर रहा है, तब यह अति सन्दिग्ध है कि ऐसे स्थानों का वायु मण्डल कठोर और ईमानदारी के काम के लिए अनुकूल है।" (टेढ़े अक्षर हमारे हैं) इसी प्रकार लिखते हुए उसने आगे, आज कल के सहभोजों में जिस चंचलता और भोगमय जीवन का प्रकाश होता है, उसकी कड़े शब्दों में समालोचना की है। 'पायोनियर' को हम सचाई की दृष्टि में रखते हुये यह कहना कठिन नहीं है कि इन्हीं 'सहभोजों और नाचों के निरन्तर चक्कर में व्याप्त' रहने के कारण ही, शायद, गत वर्ष भारत सरकार ने पंजाब की घटनाओं की बिना जांच पड़ताल किये, ओडवायर के कहने से ही वहां पर मार्शल्ला जारी कर दिया था। "शिमले के देव" तो, पायोनीयर की इस सचाई को पढ़ कर, शायद यही कहेंगे कि "नादान दोस्त से दाना दुश्मन अच्छा" है परन्तु हम तो समझते हैं कि "सुबह का भूला शाम को घर पहुंच जावे" तो भी भला ही है।

मित्र-दल की स्वार्थमयी नीति

युद्ध से पूर्व और युद्ध के दिनों में भी मित्र दल का सदा यही दावा रहा था कि वह छोटी जातियों की रक्षा और स्वतंत्रता के लिए लड़ रहा है। सन्धि की कड़ी शर्तों द्वारा जर्मनी को कुचलते हुए भी यही दम भरा गया था परन्तु हम देखते हैं कि स्वयं मित्र दल 'लीग-आवनेशन' के परदे के पीछे कोई और ही खेल खेल रहा है। 'अत्याचारी' जर्मनी यद्यपि जमीन पर चारों कोने चित्त पड़ा हुआ है पर उस की स्पिरिट, फिर भी, मित्र दल में काम करती प्रतीत होती है। यही तो कारण है कि इङ्गलैंड ने चुपके से एशिया, मैसोपोटामिया, पैलिस्टाईन और जर्मन साऊथ आफ्रिका के बहुत सारे हिस्से को काबू कर लिया है, और फ्रान्स ने सिरिया तथा साऊथ अफ्रिका के कुछ भाग को "शासनाधिकार" (mandate) के नाम से अपने चुंगल में फांस लिया है। ठीक है "पर उपदेश कुशल बहुतेरे, पर जो आचरहिं ते नर न घनेरे"। अब समाचार आया है कि बैलजियम डेपुटेशन जर्मन-अफ्रिका के 'रुआण्डा' और 'उरुण्डि' नामक स्थानों को अपनी छत्र छाया में रख उन्हें सभ्य बनाने की इच्छा से आज कल इङ्गलैंड में आया हुआ है और आशा की जाती है कि उसकी प्रार्थना लगभग स्वीकृत होजावेगी। 'एक ही तवे की रोटी, क्या छोटी और क्या मोटी' वाली कहावत के अनुसार बैलजियम भी तो इन जैसा ही है। हम मित्र दल की इस स्वार्थ पूर्ण नीति की कभी प्रशंसा नहीं कर सकते।

ग्राहक महाशय पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखा करें:—

प्रबन्धकर्त्ता

भावी कार्य क्रम—

तीसरा पग

गत अंक में हम यह भली प्रकार दर्शा चुके हैं कि सुधार स्कीम के अनुसार बनने वाली कौन्सिलों में हमें जो अपने प्रतिनिधि भेजने चाहियें; उन में क्या २ गुण आवश्यक हैं। परन्तु उस विचार को अलग रखते हुये भी हमें, एक और दृष्टि से, उत्तम से उत्तम, पुरुष ही कौन्सिलों के लिए चुनने चाहियें।

इस समय देश में प्रधानतया पांच प्रकार के आन्दोलन हो रहे हैं; *धार्मिक; सामाजिक; राजनैतिक; शिक्षा-विषयक* और *श्रमी दल सम्बन्धी* जैसे हड़ताल आदि। यद्यपि ये आन्दोलन भिन्न २ प्रतीत होते हैं परन्तु वस्तुतः ये हैं एक ही; क्योंकि इन सब के आधार में काम करने वाले मौलिक सिद्धान्त एकही हैं। परन्तु फिर भी यह कहना अनुचित न होगा कि बिखरे हुये मोती के इन दानों को एकता रूपी सूत्र में पिरो देना साधारण बुद्धिमत्ता का काम नहीं है। ये आन्दोलन सफलता पूर्वक चलते जायँ; कहीं कहीं टाकरा न हो; कहीं आपस में ऐसी रगड़ न लग जावे जिस से विरोध की चिनगारी पैदा हो और समय के प्रवाह के साथ २ इन चारों क्षेत्रों में लगी हुई हमारी शक्तियां समभाव से और सामञ्जस्य से विकसित होती जावें—इस के लिए अत्यन्त योग्यता, कुशलता और दूरदर्शिता की आवश्यकता है। यदि हम भारत के पिछले १० वर्षों की जागृति के अनुभव से लाभ उठावें जैसा कि हमें अवश्य चाहिये तो हम यह बिना किसी हिचकिचाहट के, कह सकते हैं कि अभी तक हमारे देश में ऐसे योग्य, उदार और विद्वान् पुरुष बहुत थोड़ी संख्या में हैं। इस बात का महत्व तब और भी बढ़ जाता है जब कि हम यह सोचते हैं कि यदि अयोग्य पुरुष कौन्सिलों में चले गये तब वे शैशवावस्था में से गुज़रते हुये इन आन्दोलनों को आपस में न केवल लड़ा ही देंगे किन्तु अपनी मूर्खता और अदूरदर्शिता के कारण, उन्हें रौंध देंगे। इस लिए हमें इस बात का भरसक प्रयत्न करना चाहिये कि हम कौन्सिलों में उन्हीं पुरुषों को आगे दें जिनका हम पिछले अंक में वर्णन कर चुके हैं।

परन्तु यह तब तक नहीं हो सकता जब तक कि *चुनने वाले* अर्थात *निर्वाचक-मण्डल* स्वतन्त्र और योग्य पुरुषों द्वारा संगठित न हो। कौन्सिलों के उम्मेदवारों की जहां योग्यता अपेक्षित है वहां, दूसरी ओर, उन्हें भेजने वालों की *योग्यता और दूरदर्शिता* कुछ कम आवश्यक नहीं है।

परन्तु, शोक है, कि इस विषय में हमारा देश बहुत पिछड़ा हुआ है। साधारण साक्षरता में जहां हमारे देश में १०/० से कुछ ही अधिक है वहां *राजनैतिक शिक्षा* तो हमारे देश में बहुत ही कम है। हम यह अपने अनुभव से कह सकते हैं कि अच्छे २ पढ़े-लिखे नवयुवक और ग्रेजुएट तक भी राजनैतिक शिक्षा में बिल्कुल कोरे हैं। उन्हें नहीं मालूम कि हमारी आधुनिक राजनैतिक दशा क्या है, देश में क्या आन्दोलन हो रहा है; हमारी क्या मांगे हैं और क्या अधिकार हैं; भारत के गम्भीर और महत्व पूर्ण प्रश्न क्या हैं और उनका क्या हल है; अंग्रेज़ी सरकार की शासन पद्धति क्या है और नौकरशाही किस तरह हमें सदा अपने अंकुश के नीचे रखती है। ऐसे भी शिक्षित व्यक्ति हमारे व्यवहार में आये हैं जो यद्यपि सुधार स्कीम के अनुसार बनने वाली कौन्सिलों में प्रतिनिधि भेजने का अधिकार रखने के कारण निर्वाचक मण्डल के सभासद हैं परन्तु उन्हें इस स्कीम का महत्व, इस के प्रस्ताव, इस के कायदे कानून और इनके औचित्यअनौचित्य के विषय में तनिक भी ज्ञान नहीं है। यही अवस्था *आध्यात्मिक और सामाजिक* प्रश्नों के विषय में भी है जिन में कि वे सर्वथा अशिक्षित हैं। हमारा यह कथन अत्युक्तिमात्र न समझना चाहिये कि भारत में ऐसे *शिक्षाशून्य* (साक्षरता नहीं किन्तु *धार्मिक-सामाजिक और राजनैतिक शिक्षा*) पुरुषों की संख्या कुछ कम नहीं हैं।

जब निर्वाचक मण्डल के अधिकांश सभ्यों की ऐसी शोचनीय दशा है तो वे उत्तम पुरुषों को चुन सकेंगे; योग्य व्यक्तियों को पुष्ट कर सकेंगे; धार्मिक-अधार्मिक और विद्वान् अविद्वान् को परख सकेंगे और *सदाचारी असदाचारी उम्मेदवारों* को ठीक कसौटी पर कस सकेंगे ऐसी आशा स्वप्न में भी नहीं की जासकती।

× × × ×

इस शोचनीय दशा को दृष्टि से ओझल न करते हुये हमारे लिए यह बताना कठिन नहीं है कि *तीसरा पग* हमें किधर उठाना चाहिये। इस विषय में कुछ एक क्रियात्मक सलाहें हम दे देते हैं कि—

(१) प्रत्येक ग्राम और नगर में ऐसी सभा-समितियां स्थापित हो जायें जिनका एक मात्र उद्देश्य उपर्युक्त प्रकार की *सार्वजनिक-शिक्षा* फैलाना ही हो। अच्छा हो यदि ये समितियां अपना काम तुरन्त ही करें। इस का एक उपाय यह हो सकता है कि जिस प्रकार निरक्षरों को साक्षर बनाने के लिए "रात्रि पाठशालायें" खोली जाती हैं, उसी प्रकार इन *सार्वजनिक-शिक्षा-शून्य पुरुषों को शिक्षित* करने के लिए "रात्रिपाठशाला" स्थापित की जावें जिन में सर्व साधारण को इन विषयों का साहित्य पढ़ाया जावे और इस के साथ २ समाचार पत्र भी पढ़ायें जावें। इन समितियों के पास एक उत्तम पुस्तकालय और वाचनालय भी अवश्य होना चाहिये।

(२) गतांक में हमने साधारण योग्यता के उम्मेदवारों को यह सलाह दी थी कि वे यदि सच्ची देश सेवा के भाव से ही कौन्सिल में जाना चाहते हैं तो उन से बाहर रह कर ही वे इस शुभ काम को अधिक उत्तम रीति से कर सकेंगे। अब स्पष्ट हो जाता है कि उनके लिए कर्म का क्षेत्र क्या है? वे सर्व साधारण में इस *सार्वजनिक शिक्षा* का, निःस्वार्थ भाव से, प्रचार करें। लोगों को इस दृष्टि से शिक्षित करें कि जिस से वे उत्तम व्यक्तियों को ही चुन सकें। क्या यह कम महत्व पूर्ण काम है?

(३) उत्तम व्याख्यान और शुद्ध साहित्य द्वारा सर्व साधारण में इस प्रकार की *सार्वजनिक शिक्षा* के प्रति रुचि पैदा करने के साथ २ प्रचार भी किया जाये।

ये हैं, कुछ उपाय जिनसे हम जाति में का स्वाभिमान पैदा करने के साथ २ सर्व-साधारण को उत्तरदायित्व पूर्ण शासन के योग्य बना सकेंगे।

हमें विश्वास है कि हमारे देश भाई इस गम्भीर प्रश्न पर पूर्ण विचार करते हुये तदनुकूल आचरण भी करेंगे।

"अछूत" और "पतित"

शब्दों को बायकाट करो !!!

आज कल अन्त्यजों को उठाने के लिए कई समाजों और संस्थाओं की ओर से जो इतने प्रयत्न हो रहे हैं, उन सब का ध्यान हम एक भूल की ओर खेंचना चाहते हैं जो कि अभी तक वे कर रहीं हैं। वह यह कि वे इन अन्त्यजों को "अछूत" कहना एक दम छोड़ दें। इसका कारण यह है कि जब हम अपने भावों, लेखों, और सम्मेलनों में बार बार उन के लिए "अछूत" शब्द का प्रयोग करते हैं तो इस से जहां पढ़ने वालों और सुनने वालों के दिलों पर "*अछूतपन*" का भाव दृढ़ होता जाता है, वहां, दूसरी ओर, जिनके हित और उद्धार के लिए हम इतना आन्दोलन करते हैं, वे अन्त्यज भी अपने आपको "अछूत" ही समझते हैं। और जब तक इन लोगों की यह धारणा रहेगी कि "*हम अछूत हैं*" और "*वे छूत हैं*" तब तक वे अपने आपको गिरा हुआ ही विचार करते हुये कभी भी अपने आपको उत्तम करने का यत्न नहीं करेंगे।

एक बात और है। आत्म सम्मान का भाव मनुष्य को उठाने में बड़ा सहायक होता है। यदि किसी पतित मनुष्य को हम उसके पूर्वजों के नाम पर अपील करते हुये उसके आत्म सम्मान के भाव को उत्तेजित करें तो वह शीघ्र ही अपने आपको सम्भालता हुआ अधःपतन से बच जाता है। इन छोटी जातियों में काम करते हुये भी हमें इसी सिद्धान्त का ख्याल रखना चाहिये। यह सोचना भ्रम मात्र ही है कि इन लोगों के अन्दर आत्म-सम्मान का कोई भाव ही नहीं है। गिरे से गिरे हुये मनुष्य में भी यह भाव, किसी न किसी अंश में, अवश्य विद्यमान रहता है। इस लिए इन लोगों के प्रति अपने भावों को प्रकट करते हुए हमें कभी कोई ऐसे शब्द नहीं कहने चाहिए जिस से इन का आत्म-सम्मान भाव दब जावे। इस क्षेत्र में काम करने वाले ईसाई मिशनरियों में यह एक बड़ा भारी दोष है कि उनका ढंग उनके इस पवित्र और उच्च भाव को सर्वथा नष्ट करता है। यद्यपि इस से उनका अभिप्राय तो पूरा हो ही जाता है परन्तु उनका अनुकरण करने वाले हमारे कुछ देश भाइयों की कार्यपद्धति से भी "*अछूत*" "*पतित*" इत्यादि अनुचित और हानिकारक भाव पूरे हो रहे हैं—यह अत्यन्त शोक की बात है। हमारे देश की कुछ जन संख्या हमारे अपने शब्दों के प्रयोग के कारण यदि 'अछूत' और 'पतित' आदि भ्रष्ट शब्दों से सभ्य जगत् में याद की जावे तो इसका सम्पूर्ण दोष हम पर ही है। इस लिए, इस भयंकर भूल से बचते हुये हमें भविष्यत् में अपने इन देश भाइयों के प्रति किसी भी भाषा, लेख वा सम्मेलन में *अछूत, पतित* इत्यादि बुरे शब्दों का कभी भी प्रयोग न करते हुए इनका *बायकाट ही कर देना चाहिये*।

प्रसंग वश, हम यहां एक और बात कह देना चाहते हैं। अन्त्यजों में काम करने वाले मिशन का यह प्रधान कर्तव्य होना चाहिए कि वे इन्हें अपने पांव पर खड़ा होना सिखावें। ऐसे ढंग कभी भी काम में न लावें जिस से उन्हें फिर, अपने से ऊपर वाले वर्णों का मुहताज होना पड़े। इस बात को अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए कि जब तक किसी व्यक्ति के अन्दर स्वयं, उन्नति करने और अपने पांव पर खड़े होने की इच्छा न हो तब तक किसी और द्वारा किए किये बाहर के प्रयत्न सर्वत्र निष्फल होते हैं। भारत का गत १५ वर्ष का राजनैतिक-जीवन हमें यही शिक्षा दे रहा है। अब, पिछले कुछ दिनों से, भारत में जागृति के जो इतने चिन्ह प्रकट हो रहे हैं उस का एक मात्र कारण यह है कि हमारे अन्दर अपने को उठाने और अपने पांव पर खड़ा होने की इच्छा पैदा हो गई है। परन्तु यह इच्छा भी तब तक पैदा नहीं हो सकती जब तक कि हम अपने *आत्म सम्मान* के भाव को सुरक्षित न रक्खें। इस सिद्धान्त को दृष्टि में रखते हुए—और अपने इन ६॥ करोड़ देश भाइयों के अन्दर इस पवित्र और उच्च भाव को खूब बढ़ाने का प्रयत्न करते हुए हमें अपनी ओर से कभी ऐसे शब्दों का प्रयोग, भूल कर भी नहीं करना चाहिए जिस से इन भावों पर पाला पड़ जावे।

पुस्तक-समालोचना

विचित्र परिवर्तनः—यह "एक राष्ट्रीय उपन्यास" है जो कि "नागरी-ग्रन्थ-रत्न माला" का प्रथम "रत्न" है। इसके लेखक श्रीयुत "सेवक" महोदय हैं। हमने इस पुस्तक को, भलि भांति आद्योपान्त पढ़ा है परन्तु तो भी हमें यह समझ में नहीं आया कि इसे "एक राष्ट्रीय उपन्यास" क्यों कहा जावे? इस "उपन्यास" के नायक बा० मदन मोहन हैं। ग्रेजुएट होने के बाद किन्हीं कारणों से लेखक ने उन्हें घर से भगा दिया। इस अवस्था में भिन्न २ अज्ञात-स्थानों से "भारतदास" नाम रख कर, उन्होंने अपने जन्म स्थान की एक सभा को, समय२ पर, भारत की आधुनिक दशा विषयक अपने लेखों के साथ बहुत सा धन भी भेजा। लेखक ने "जिस प्रकार नाना भांति के पुष्प अलग २ रहते हुए उतने सुशोभित नहीं होते, वरन एक माला में गुंथ जाने से उन में और ही मनोहरता, सुन्दरता और मनोरमता आ जाती है" उसी प्रकार प्रताप, विद्यार्थी, भारतमित्र, मर्यादा आदि मासिक, साप्ताहिक समाचार पत्रों से सहायता लेकर "भारतीय किसान" "भारतीय स्त्री समाज" "भारतीय कुली और प्रवासी" "भारत की आर्थिक दशा" इत्यादि विषयों पर लिखे गये लेखों का संग्रह किया है। यद्यपि ये लेख अत्यन्त उत्तम हैं, भाव पूर्ण हैं, शुद्ध भाषा में हैं और देश भक्ति के विचारों को बढ़ाने वाले हैं परन्तु फिर भी यह कहने पर हम बाधित हैं कि इन का ढांचा उपन्यास जैसा नहीं है। लेखक महाशय से, इस लिए, हम यह प्रार्थना करेंगे कि वे यदि अगले संस्करण में पुस्तक के मुख्य पृष्ट पर से "एक राष्ट्रीय उपन्यास" ये शब्द उड़ा दें तो इस की उपादेयता और भी अधिक बढ़ जावेगी। पुस्तक युवक और युवतियों के हाथ में देने योग्य है। लेखक का प्रयत्न फिर भी, सराहनीय है। पुस्तक का आकार मझोला और पृष्ट संख्या ३०१ मूल्य लिखा नहीं। मिलने का पता—साहित्य भूषण भण्डार, का ढंकल।

संघ—व्यायाम—कवायत के हिन्दी बोल पहलवान भग १४ पृष्ठ की एक छोटी सी पुस्तिका है परन्तु है अत्यन्त उपयोगी। आज कल स्कूलों में जो कवायत प्रचलित है उस के सब नाम अंग्रेजी में हैं जो कि कानों को बड़े भद्दे मालूम होते हैं। इस पुस्तक के प्रकाशन से यह कठिनता दूर हो जावेगी क्यों कि इस में सारी कवायद के हिन्दी नाम दिये गये हैं। यद्यपि पुस्तिका की भाषा में गुजरातीपन अधिक है और किसी २ स्थल पर अनुवाद भी ठीक नहीं हुआ पर तो भी लेखक अपने इस प्रथम प्रयत्न के लिए धन्यवाद के पात्र हैं। यह आशा करते हुये कि दूसरे संस्करण में ये त्रुटियां दूर हो जावेंगी, हम प्रत्येक स्कूल में और विशेषतः जातीय संस्थाओं में इसका प्रवेश चाहते हैं। पुस्तिका का मूल्य -) और बाबा जी पुरा-बड़ोदा के पते से लेखक से ही प्राप्य है।

विधवाओं की संख्या।

उम्र	विवाहित स्त्रियां	विधवायें
०-१	१३,२१२	१,०१४
१-२	१७७५३	८५६
२-३	४९,७८७	१,८०७
३-४	१३४,१०५	९,२७३
०-५	३०२,४०५	१७,७०३
५-११	२९,१९६७८	९४,२४०
१०-१५	१०,०८७०२४	२२३०३२

उम्र	हिन्दू वि०	मुसलमान वि०
०-१	८६६	१०९
१-२	७५५	६४
२-३	१,५६४	१६६
३-४	३६८७	५८०१
४-५	७६०२	१२८१
०-५	१४७७५	२११२
५-१०	७७५८१	१३,२७६
१०-१५	१८१५०७	३६,२६४

प्रान्त	संख्या
बङ्गाल	१७५८१
बिहार	३६२५७
बम्बई	६७२६
मद्रास	५,०४९
युक्तप्रान्त	१७,२०१
बड़ौदा	७८१
हैदराबाद	६,७८२

गांधी जी का वक्तव्य।

"...सुधारक कहेंगे कि इस रोग से मुक्त होने का प्रत्यक्षतः केवल एक उपाय है, और वह है विधवा विवाह। परन्तु, मैं ऐसा नहीं कह सकता। खानदान में बहुत सी विधवायें हैं, लेकिन उनसे पुनर्विवाह करने के लिए मेरी कहने की हिम्मत नहीं पड़ सकती। वे खुद इधर भूल कर भी ध्यान नहीं देंगी—उपाय है यह कि मनुष्य प्रतिज्ञा करे कि मैं दोबारा विवाह नहीं करूंगा। और (१) बाल-विवाह बंद हों, (२) जब तक वरकन्या एक साथ रहने योग्य न हो जांय, उनकी शादी न हो, (३) जो लड़कियां अपने पति के पास न रहे हों, उनको केवल शादी ही न कर दी जाय, बल्कि उनको शादी करने के लिए उत्साहित किया जाय, (४) १५ वर्ष से कम उम्र विधवा का पुनर्विवाह हो, (५) विधवाओं को अभागी न समझा जाय, तथा (६) उनकी शिक्षा दीक्षा का प्रबन्ध हो।

(नवजीवन)

जातीय शिक्षा

एक दिन कलकत्ते में स्वामी श्रद्धानन्द ने जातीय शिक्षा पर व्याख्यान दिया था। व्याख्यान देने के लिये उठ खड़ा होने पर जब लोगों ने स्वामी जी से अंग्रेजी में भाषण करने के लिए अनुरोध किया, तो आपने इसका जवाब देते हुए कहा, कि बड़े दुःख की बात है, कि जातीय शिक्षा के सम्बन्ध में कुछ बोलने के लिये विदेशी भाषा की सहायता लेनी पड़ती है। सर्वसाधारण के लिये जातीय भाषा में ही शिक्षा देने की आवश्यकता है। सब लोगों को लिखना-पढ़ना सिखाना चाहिये और इसका प्रबन्ध होना चाहिये, जिस में बिना पैसा खर्च किये, सब लोग पढ़ सकें। विद्यार्थियों को ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना चाहिये। जिस में विद्यार्थियों के सामने अच्छा आदर्श रहे, इस लिये ब्रह्मचारी शिक्षकों की बड़ी आवश्यकता है। कुछ लोगों का कहना है कि राजनीति, विज्ञान प्रभृति विषयों की शिक्षा, बिना अंग्रेजी के किसी दूसरी भाषा द्वारा नहीं दी जा सकती; पर स्वामी जी कहते हैं, कि इन विद्याओं के लिये किसी विशेष भाषा की आवश्यकता नहीं। जब जिस जाति के हाथ में ये दोनों विषय पड़ते हैं, तब अपनी ही भाषा के द्वारा इन विषयों का वह जाति, अपने समाज में प्रचार करती है!

पाटली पुत्र

गुरुकुल में श्री १०८ जगद्गुरु स्वामी शङ्कराचार्य्य जी!!!

जातीय शिक्षा का आदर्श

आधुनिक शिक्षा-प्रणाली व्यापार प्रणाली है।

प्राचीन शिक्षा-पद्धति ही आदर्श है!!

गुरुकुल के कार्य की प्रशंसा!!!

द्वारका के, पूज्यवर श्री० १०८ जगद्गुरु स्वामी शङ्कराचार्य जी के गुरुकुलागमन की सूचना हम, गत-सप्ताह, पाठकों को दे चुके हैं। अभिनन्दन पत्र दिये जाने के पश्चात् 'साहित्य परिषद्, के विशेषाधिवेशन में उनके दो सारगर्भित व्याख्यान हुए—एक संस्कृत में और दूसरा अंग्रेजी में। दूसरे व्याख्यान का विषय *जातीय-शिक्षा का आदर्श*—था जिसका सारांश यह है—

"भारत भूत में उन्नत था और भविष्यत में उन्नत होने के लिए वर्तमान काल में जागृत हो रहा है। इस जागृति के आधार में क्या सिद्धान्त काम कर रहा है? इसका क्या कारण है कि भारत पर विदेशी कौमों के साथ २ उनकी सभ्यताओं के इतने आक्रमण होने पर भी वह मरा नहीं—अभी तक जीवित है; जब कि इसके विरुद्ध, ग्रीस, रोम, बैबिलोनिया इत्यादि पुराने देशों की सभ्यताओं का आज कुछ भी पता नहीं है। इसका प्रथम कारण भारत का *सत्य* को नहीं २ *सार्वभौम सत्य* को दृढ़ता के साथ पकड़ना है। पाश्चात्य सभ्यता राजनीति और धर्म में भेद करती है परन्तु हमारा यह दृढ़ सिद्धान्त रहा है कि *सत्यान्नास्ति परोधर्मः*।

इस प्रकार इस विशेषता की व्याख्या करते हुए और यह बताते हुए कि किस प्रकार बौद्ध, मुहम्मदी और ईसाई मत ने भारतीय सभ्यता पर आक्रमण किया और किस प्रकार सत्य के एक ही अंग पर बल देने के कारण उनकी *विश्व स्वरूप वैदिक धर्म से पराजय हुई*, आपने भारतीय-सभ्यता की रक्षा का *दूसरा कारण जातीय धर्म परायणता* बताया। भारत में अभी तक ऐसे पुरुष विद्यमान हैं जिनके लिये कुछ मिनिटों में समाप्त होने वाली

पूजा पाठ सन्ध्या मात्र ही धर्म नहीं है किन्तु वह सम्पूर्ण जीवन के लिए एक लक्ष्य ध्येय है। हमारे मत में आयुर्वेद, शिल्प, कलाकौशल, विज्ञान, साहित्य, राजनीति इत्यादि सब कुछ धर्म के अन्तर्गत ही माने जाते हैं। हमारी शिक्षा प्रणालि भी धर्म के विस्तृत क्षेत्र से बाहर नहीं थी।

इस प्रकार भूमिका बांध कर आपने प्राचीन और आधुनिक शिक्षा प्रणाली की तुलना करते हुए कहा कि आधुनिक शिक्षा प्रणालि वस्तुतः व्यापार प्रणालि है। आज कल शिक्षा की तिजारत होती है। यह उसी प्रकार बिकती है जिस प्रकार दुनिया की और चीज़ें। चूंकि हमारे शासक वैश्यों में सब से अधिक वैश्य हैं, इस लिए हम भी वैश्य हो रहे हैं। यह कितने शोक का स्थल है कि हमारे ब्राह्मणों ने आज कल, पवित्र वेद भगवान् को भी वैश्यवृत्ति का सा एक साधन बनाया हुआ है। परन्तु, इसके विरुद्ध, प्राचीन शिक्षा का आदर्श क्या था? वहां शिष्य बचपन से ही गुरु के घर रहता था। वह उसका आध्यात्मिक गुरु था। वह उसकी छिपी हुई शक्तियों को पूर्ण रूप से विकसित करने के लिए भरसक प्रयत्न करता हुआ तदनुकूल परिस्थिति पैदा करता था। प्राचीन आदर्श के अनुसार उसके लिए उत्तम से उत्तम अध्यापक चुने जाते थे। परन्तु ये सब काम किन्हीं स्वार्थ के भावों से प्रेरित होकर नहीं किए जाते थे। उस समय विद्या बिकती नहीं थी किन्तु उस समय का आदर्श तो यह था कि सर्वेषामेव दानानां ब्रह्मदानं विशिष्यते। प्राचीन आदर्श के अनुसार माता पिता और आचार्य—इन तीनों का बालक के लिए शिक्षक होना बताते हुए श्री० स्वामी जी ने आचार्य के विषय में कहा कि उसका मुख्य काम निःस्वार्थ भाव से बच्चे का जीवन सुधार करना ही था। पौराणिक कथा में से भृगु और आंगिरस के शिष्य बृहस्पति, शुक्र और उसके पुत्र कच की शिक्षा प्राप्ति-विषयक कथा का उदाहरण देते हुए और महाभारत में से द्रोणाचार्य की धृष्टद्युम्न को अपना घातक जानते हुए भी निःस्वार्थ भाव से शिक्षा देने वाले उदाहरण से श्री० स्वामी जी ने यह दर्शाया कि प्राचीन काल में माता पिता उत्तम शिक्षक के पास ही—चाहे वह शत्रु भी क्यों न हो—अपनी सन्तान को भेजते थे और शिक्षक भी आदर्श-अध्यापक के कर्तव्यों का पालन करते हुए सब को मुफ्त और निःस्वार्थ भाव से उत्तम से उत्तम शिक्षा—देता था।

शिक्षा समाप्त करके ब्रह्मचारी जब संसार में प्रविष्ट होता था तो इस अवसर पर दिए हुए गुरु के उपदेश की ओर निर्देश करते हुए व्याख्याता महोदय ने बताया कि संसार में एक मात्र धर्म ही उस का स्वामी और शासक होता था। परशुराम भीष्म और कृष्ण अर्जुन का उदाहरण देकर यह बताया गया कि प्राचीनों का धर्म एक मात्र कर्तव्य पालन ही था। यह उनकी विशेषता थी कि अपने कर्तव्य का पालन करते हुए वे वैयक्तिक भावों को—अच्छे वा बुरे—बीच में नहीं आने देते थे।

इस प्राचीन पद्धति की और इस उच्च आदर्श की यदि आधुनिक शिक्षा प्रणालि से तुलना की जावे तो बड़ा भारी भेद प्रतीत होता है। अब शिक्षा का आदर्श बदल गया है, उसका ढंग, ढांचा और प्रणालि—सभी बदल गए हैं। वर्तमान काल में जिस शिक्षा का भारत में प्रचार है उसे "भारतीय शिक्षा" कभी नहीं कहा जा सकता क्योंकि उसमें भारतीयता बिल्कुल नहीं है। इस पद्धति के अनुसार बचपन में ही उन्हें ऐसी पुस्तकें दी जाती हैं जिनके सहारे से उनके भारतीयता के संस्कार सर्वथा नष्ट हो जाते हैं वा दब जाते हैं। हमारे बच्चों के हाथ में छोटी २ जो पहिली पुस्तकें दी जाती हैं, उनमें युरुप और अमेरिका के स्थानों का अधिक वर्णन होता है अपेक्षा भारत वर्ष के; उनमें राम, कृष्ण और प्रताप की वीर कहानियों की जगह नेपोलियन, नेल्सन और वैलिङ्गटन की शूर वीरता का अधिक वर्णन किया जाता है। इसी लिए इस प्रणालि से निकले हुए युवकों को अपने प्राचीन इतिहास का मुख्य २ घटनाओं से भी उतना परिचय नहीं होता जितना कि इङ्गलैण्ड और अमेरिका की छोटी २ घटनाओं से। इस लिए, सच तो यह है कि यह शिक्षा-प्रणालि भारतीय-शिक्षा प्रणालि नहीं किन्तु अंग्रेज़ी-शिक्षा प्रणालि ही है। इस प्रणालि में भारत की आत्मा किसी भी अंश में विद्यमान नहीं है। सिवाय इसके कि पढ़ने वाले बच्चे भारत के हैं, और किसी दृष्टि से भी इसे भारतीय नहीं कहा जा सकता।

इस प्रकार दोनों की तुलना करके व्याख्यान महोदय ने जातीय-शिक्षा के महत्व को दर्शाते हुए इस मार्ग में जो वास्तविक कठिनाइयां उपस्थित होती हैं उनका, अपने अनुभव से, हल बताया। अन्त में आपने गुरुकुल के कार्य की प्रशंसा करते हुए अपना व्याख्यान समाप्त किया। आशा है श्री० स्वामी जी अन्य वार्षिकोत्सवादि और समयों पर पधार कर हमें अनुगृहीत करते रहेंगे। तदनन्तर शान्ति पाठ के साथ सभा विसर्जित हुई।

विजय को बधाई — यह समाचार सुन अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि पंजाब सरकार ने विजय को अपने प्रान्त में आने की आज्ञा देदी है। सहयोगी को हम बधाई देते हैं और पंजाब-सरकार को भी धन्यवाद दिए बिना नहीं रह सकते कि अन्त में उसने यह भूल मान ही ली कि सहयोगी राज विद्रोही है। हम आशा करते हैं कि सहयोगी अब फिर दैनिक का चोला पहिन हमें शीघ्र ही दर्शन देगा।

श्रद्धा के नियम

भारत वर्ष के लिए

एक वर्ष के ३॥)

६ मास के २)

६ मास से कम के लिए भेजने का नियम नहीं—

भारत विभिन्न देशों से

एक वर्ष के लिए— ५)

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर [illegible] के लिये छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह मा।
(ऋ० मं० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! मुझे (इसी समय) श्रद्धावान करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है
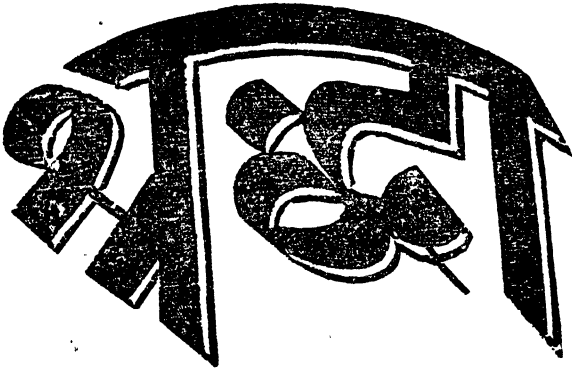
५ आषाढ़ सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० १८ जून सन् १९२० ई०

संख्या ६
भाग १

हृदयोद्गार

अमर वाटिका ॥

(जलियां वाला बाग) !।

महा भयंकर रात्रि छागई, अन्धकार घन घोर हुआ।
बुझी ज्योति अन्याय वायु से, दानव दल का जोर हुआ ॥१॥
उसी तिमिर में पापिजनों ने, माया का विस्तार किया।
टिमटिम करते दीप बुझ गये, जग ने हाहाकार किया ॥ २ ॥
सूर्यचन्द्र निस्तब्ध कर दिए, हवा और जल रोक दिया।
कड़ी कैद की जलती भट्टी में, जिस किस को झोंक दिया ॥३॥
स्वयं शब्द निःशब्द हो गया, श्वास श्वास का रुद्ध हुआ।
बालक युवक वृद्ध सब ही पर, स्वयं क्रोध सक्रुद्ध हुआ ॥ ४ ॥
इसी समय उस प्रबल आसुरी चिन्ता का सञ्चार हुआ।
नर से नर पर अहो! पाशविक कैसा अत्याचार हुआ ॥ ५ ॥
कोड़े मारे दीन जनों पर, सबलों ने बल दिखलाया।
क्रूर कर्म में फँसे दुष्टों ने, धर्म शर्म सब बिसराया ॥ ६ ॥
तब हताश हो कर उन सब ने तेरा ही अवलम्बलिया।
उन के आर्त्तनाद ने अमरों के हृदयों को क्षुब्ध किया ॥ ७ ॥
दीन जनों की रक्षा के हित देवयज्ञ तब रचा गया।
पीड़ित प्रजा जनों का जिसमें करुण क्रन्दन सुना गया ॥ ८ ॥
दुखित जनों के हृदयानल से, आ धूम उत्पन्न हुआ।
जिस के विकट गन्ध को पाकर दानव दल भयसन्न हुआ ॥ ९ ॥
क्रोध वेग में चीरज तज तज कर यज्ञभूमि को भ्रष्ट किया।
कलुषित हिंसाने निर्दोषी शान्त जनों को नष्ट किया ॥ १० ॥
तेरा लेकर आश्रय हम सब, यज्ञ वेदिनिर्माण करें।
जिस में अपना रक्त बहाकर तेरा वह अपमान हरें ॥ ११ ॥
अमर वाटिका अमर हुई, सह कर भीषण अत्याचार।
भेंट करेंगे आने वाले, तुझे प्राणों का उपहार ॥ १२ ॥ "देवभिक्षुः"

मां का आंचल

(जलियां वाला बाग में जाने वाले बच्चे के प्रति माता का उपदेश)

पड़ा हज़ारों बरस से मैला है देश माता का प्यारा आंचल।
इसी के धोने को आज बेटा! तुझे है हंसकर तैयार होना ॥१॥
पड़ें मुसीबत तो डर ही क्या है, कदम बढ़ाकर न पीछे धरना।
नहीं फ़िक्र आज इस के ख़ातिर, अगर है कुरबान तूने होना ॥२॥
न होगा हाथों में अस्त्र कोई, खिंचेंगी सगीन तेरे ऊपर।
है मां की गोदी में गिर के तूने अनन्तनिद्रा में आज सोना ॥३॥
कपाल तकिया बनेगा तेरा शहीद तेरे बनेंगे साथी।
जगत् के झगड़े हटेंगे सारे वहां न होगी हंसी न रोना ॥ ४ ॥
विदाई देते समय यहां पर, जो आंसुओं की नदी बहेगी।
है तूने उसमें डुबो डुबो कर, हरेक आंचल का दाग़ धोना ॥५॥
भरी हुई ख़ून से शहीदों के, ओह' नदी जो उफन रही है।
मिटा के आंचल के दाग इस को, है फिर उसी ख़ून में डुबोना ॥६॥
न देखना मुड़ के लाल पीछे उछल के आगे क़दम बढ़ाना।
उसी में आंचल के साथ तेरा भी आज है वीर-स्नान होना ॥७॥
चढ़ा के निकलेगा रंग जब तू हज़ारों टूटेंगे गीध तुझ पर।
चमक के बिजली सा तूने उन पर ए लाल! जंगल का बाज़ होना ॥८॥
ख़ुशी से इस लाल लाल आंचल को बढ़ के मां तेरी ओढ़लेगी।
तुझे इसी ख़ून का ए बेटा! है अपनी आंतों में बीज बोना ॥९॥
तयार हो लाल! देश तुझ को गरज के बादल बुला रहे हैं।
फ़िकर है क्या जब बदल के चोला, यहीं है फिर२ से जन्म होना ॥१०॥

"निधिः"

ब्रह्मचर्य सूक्त की व्याख्या।

आचार्य स्ततक्ष नभसी उभेइमे उर्वी गम्भीरे पृथिवी दिवं च। तेरक्षति तपसा ब्रह्मचारी तस्मिन् देवाः संमनसो भवन्ति ॥ ८ ॥

"ब्रह्मचारी के लिए (उभेइमे नभसी) इन दोनों परस्पर बंधे हुए (उर्वी पृथिवीमुत गम्भीरे दिवम्) विस्तृत चौड़ी पृथिवी और गहरे सूर्य को (आचार्यः ततक्ष) आचार्य ही आकृति देता है (ब्रह्मचारी तपसा तेरक्षति) उन दोनों की ब्रह्मचारी तपसे रक्षा करता हैं। (तस्मन्देवाः समनसः भवन्ति) उस (ब्रह्मचारी) में सब देवता एक-मन होते हैं।"

स्वयं प्रकाशमान तथा प्रकाशमानों से प्रकाशित-दोनों प्रकार के लोकों से जटित यह अन्तरिक्ष रूपी अथाह समुद्र है। ये दोनों प्रकार के लोक एक ही नियम में परस्पर ग्रन्थित हैं। जहां एक सौर नक्षत्र के सब अङ्ग एक दूसरे को अपनी ओर खींचते और एक सूर्य के गिर्द एक ही नियम से चक्कर लगाने पर अपनी स्थिति स्थिर रख सकते हैं वहां असंख्यात सौर नक्षत्र एक बड़े नक्षत्र के गिर्द चक्कर लगाते हुए ही शायद, आकाश की शोभा बढ़ाते रहते हैं। इन में से हमारी पृथिवी अप्रकाशमान लोकों की प्रतिनिधि रूप से तथा हमारा सूर्य प्रकाशमान लोकों के प्रतिनिधि रूप से हमारी भौतिक विद्या के स्रोत हैं। इन दोनों की विद्या को ब्रह्मचारी के लिए आचार्य ही प्रकाशित करता है। विस्तृत फैली हुई पृथिवी और मानवी आंखों के लिए गम्भीर सूर्यलोक विद्यार्थी की दृष्टि में एक अचम्भा सा दिखाई देता है जब तक कि आचार्य का उपदेश उस के लिए उनके रहस्यों को खोल कर नहीं सुलझा देता। आचार्य (अर्थात् ब्रह्मचर्य पूर्वक ब्रह्मचारी की रक्षा करने वाला) ही मानुष पृथिवी और सूर्य को ब्रह्मचारी के लिए, आकृति देने वाला है।

आचार्य ने "द्यावापृथिवी" का यथार्थ ज्ञान ब्रह्मचारी को देदिया; परन्तु फिर भी क्या उस ज्ञान से ब्रह्मचारी चिरकाल लाभ उठा सकता है। बिजुली चमक जाती है, कुछ काल के पीछे फिर चमक जाती है। परन्तु क्या इस से मनुष्य मात्र को कुछ भी लाभ मिला अमरिका में "बेन्जेमिन् फ्रैंकलिन" से पहिले कितनी बार पहाड़ों पर और जङ्गलों में बिजुली चमकी परन्तु सिवाय इस लिए कि वहां की बाल बुद्धि प्रजा आश्चर्यित हो कर मुंह बायदे, उसका कुछ भी परिणाम न हुआ। परन्तु "फ्रैंक्लिन" ने इसी आकाशव्यापिनी विद्युत् को पृथिवी पर जंजीरों से जकड़ लिया और आज वही बलवती विद्युत् दिमाग़ रखने वाले निर्बल से निर्बल मनुष्य की भी दासी बनी हुई है। आकाश से उतार कर पृथिवी तल पर चली विद्युत को बन्दी-गृह में फ्रैंक्लिन ने, किस शक्ति के आधार पर, डाला। निस्सन्देह वह तप की ही उत्कृष्ट शक्ति थी। उसी तप की शक्ति से आज तक प्रकृति के प्रबल से प्रबल चमत्कारों को क्रियावान् विद्वान् क़ाबू करते रहे हैं। तप की शक्ति बड़ी है। आचार्य से मिली हुई शिक्षा को दृढ़ता से धारण करने के लिए तप की आवश्यकता है।

एक ही प्रकार का बीज विविध भूमियों में बोया जाता है। सब स्थानों में एकसी ही उपज नहीं होती। इस का कारण क्या है? इस का कारण यही है कि उन भूमियों में शक्तिभेद है। एक ही आचार्य के पास बहुत से विद्यार्थी शिक्षा पा रहे हैं। परिणाम में वहां भी बहुत बड़ा भेद पड़ जाता है। जहां एक विद्यार्थी मूर्ख का मूर्ख रह जाता है वहां दूसरा मौलिक सिद्धान्तों का आविष्कार करने वाला सिद्ध होता है। यह भेद क्यों? यहां तप का अभाव या भाव ही मुख्य कारण है। विद्यारूपी बीज सब के लिए एकसा खुला है और एक ही प्रकार शिक्षा का हल चलाकर उसे बुद्धिरूपी खेतों में बोया जा रहा है। परन्तु जहां तप नहीं वहां पहिले तो बीज उगता ही नहीं और यदि उगता भी है तो ठीक उपज नहीं होती। आचार्य का परिश्रम तभी फलीभूत होता है जब कि ब्रह्मचारी के अन्दर तप का साधन जागृतावस्था में हो।

एक ही गुरुकुल में एक ही आचार्य की संरक्षा में, एक ही प्रकार के उपाध्यायों से शिक्षा पाते हुये क्या कारण है कि कोई उत्तम ब्राह्मण बनता, कोई वीर प्रजापालक क्षत्रिय बनता, कोई वैश्य बनता, और कोई शूद्र भी नहीं बन सका। यहां भी तप ही असमानता का कारण है।

आचार्य जो ज्ञान देता है ब्रह्मचारी तप से उसकी रक्षा करता है। जिस वैदिक ज्ञान के संसार में प्रचरण का कारण भी तप ही है, उस के विस्तार की रक्षा का मूल कारण भी तप ही हो सकता है। ब्रह्मचर्य का जीवन ग्रन्थ भी तप के चट्टान पर ही स्थिर रह सका है। तब आचार्य के लिए गुरुदक्षिणा यही उत्तम है कि जो ज्ञान उसने शुद्ध हृदय से ब्रह्मचारी को दिया है उसकी रक्षा ब्रह्मचारी तप द्वारा करे। उसका फल क्या होगा?

उस ब्रह्मचारी में सब देवता एक-मन होंगे अर्थात उसके जीवन में विघ्न कारी न होंगे प्रत्युत सहायक होंगे। आठ वसु ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य तथा इन्द्र और प्रजापति उस के वश में होंगे। आग और पानी, हवा और सूर्य, प्राण और मन, विद्युत और यज्ञ—सभी उसके वश में होंगे। उसके लिए लोक लोकान्तरों के पर्दे उठ जायेंगे और वह प्रत्येक प्राकृतिक वस्तु के निज स्वरूप को देखता हुआ आत्मिक जग में भी राज्य करने के योग्य बन जावेगा।

तप की कैसी महिमा है? जो तप, आह्लाद से भी ऊपर उठाकर, परमानन्द शान्त अवस्था तक पहुंचा सकता है, जो तप दुःखों के गन्ध को भी समीप आने से रोक देता है, जो तप अपने स्वरूप को पहिचानने के योग्य बनाता है—उस तप से मुक्त होने को ही जो नराधम स्वर्ग का साधन समझते हैं, वे ब्रह्मचर्य तथा विद्यार्थी जीवन के गौरव को समझ ही नहीं सके। "सुखार्थिनः कुतोविद्या, विद्यार्थिनः कुतो सुखम्।" विद्या तपस्वी के लिए है, सुखी के लिए नहीं। स्वर्ग की कामना से जो यज्ञ करते हैं वे अनुभव के पीछे स्वयं तपस्वी हो जाते हैं। परमपिता संसार भर के विद्यार्थियों को तप में प्रेरित करें यह सन्यासी की हार्दिक प्रार्थना है। ओमित्यो३म्।

श्रद्धानन्द सन्यासी

—:०:—

श्रद्धा

यदि इतना ही समय अपने सुधार में लगाया जाता !

जब कभी कहीं दो से अधिक आर्यसामाजिक सज्जन इकट्ठे होते हैं तो उन में यही चर्चा छिड़ती है कि आर्यसमाज रसातल को जा रहा है—उसका सुधार करना चाहिए। मेरे पास पिछले दिनों एक पत्र आया जिस में लिखा था कि आर्य लोगों में केवल नवग्रहों की पूजा न करना ही वैदिक विवाह का आदर्श समझा जाता है; उन में और कोई भी वैदिक विधि नहीं होती। मैंने उत्तर में उन्हें दस ऐसे विवाह गिना दिए जिनमें बहुतसा सांसारिक कष्ट सहन करते हुए भी वैदिक आदेश नहीं तोड़ा गया था। अभी मैं आर्यसमाज के महोपदेशक पण्डित पूर्णानन्द जी की पुत्री के विवाह संस्कार से लौटा हूं। इस में वर और कन्या की आयु तथा उनका स्वयं प्रतिज्ञा मन्त्र पढ़ना तथा बिना दूसरे की सहायता के उन के अर्थ सुनाना उपस्थित सज्जनों और देवियों के हृदयों को आल्हाद से भरपूर कर रहा था। संस्कृत के दिन थे, जब हिन्दुओं में विवाह वर्जित, और आनन्द से विवाह की विधि बताई जारही थी। मैंने अपने सम्बोधक महाशय को सब कुछ लिख कर अन्त में प्रार्थना की कि अब उन्हें अपना विवाह करने का अवसर प्राप्त हो (क्योंकि वह कुमार हैं) तो उन्हें अपनी अनुभव की हुई त्रुटियों से बचना चाहिए। और पत्र की समाप्ति पर यह प्रार्थना की—"तुझको पराई क्या पड़ी अपनी नबेड़ तू।"

आर्यसमाज उन्नति नहीं कर रहा, आर्यसमाज गिर रहा है, आर्यसमाज में जीवन नहीं है—यह पुकार आर्यजगत के चारों ओर से उठ रही है। आर्यसमाज क्यों उन्नति नहीं कर रहा? उत्तर मिलता है कि इसमें स्वाध्याय की कमी है। मेरी ओर से फिर प्रश्न होता है कि क्या आप नियम पूर्वक स्वाध्याय करते हैं— तब तो बगलें झांकने के सिवाय कोई जवाब नहीं मिलता। "जी, मुझे यह काम यह काम; समय नहीं मिलता इत्यादि" अरे भाई! गप्पाष्टक के लिए समय मिलता है दूसरों पर झाड़ू डालने का समय मिलता है; अपने सुधार के लिए समय नहीं। स्वाध्याय सब ठीक है परन्तु द्विज के लिए सर्वोत्तम तथा आवश्यक स्वाध्याय वेद का है। मनुस्मृति में लिखा है—"योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम्। स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः।"

जो द्विज वेद को बिना पढ़े अन्य में श्रम करे, वह जीता हुआ ही वंश के सहित शूद्रता को प्राप्त होता है। मैंने ऐसे सुन्दर गुण कर्म से ब्राह्मणत्व का अभिमान करने वाले देखे हैं कि जिन्हें बरसों तक विद्वानों से वेदांग पढ़ने का सुअवसर प्राप्त था पर उन्हों ने मूलवेदों तक पहुंचने का यत्न न किया और यदि वे उपन्यासों और गप्पाष्टकों से आधा समय भी बचा लेते तो आज वेद के अध्यापक बन सकते। अब भी जितना समय स्वाध्याय के उपदेश सम्बन्धी लेख लिखने और वक्तृता देने में व्यय होता है उसी का उपयोग वैदिक व्याकरण तथा निरुक्तादि के अध्ययन में लगावें तो कितना वास्तविक लाभ आर्यसमाज को पहुंचाने के लिए तैयार कर सकें।

आर्यसमाज गिर रहा है। इस में प्रमाण क्या? सदाचार की परवा नहीं की जाती कर्म काण्ड पर ध्यान नहीं दिया जाता। यह सब कुछ सच है, परन्तु क्या आप के दुहाई देने से सारे आर्यसमाज में सदाचार का प्रचार, कर्म काण्ड का प्रचार और वैदिक सिद्धान्तों की रक्षा हो जायगी। यदि दूसरों में दस छिद्र हैं तो पांच आप में भी तो हैं—क्यों न उन्हीं के दूर करने में सारा बल लगादो क्या आप कर्म काण्ड में पूरे उतर चुके हो? यदि नहीं तो अपने आप को पूर्ण करने में लग जाओ। क्या आपने सब वैदिक सिद्धान्तों के मर्म को समझ लिया है? यदि नहीं तो उनके रहस्य को समझने की योग्यता सम्पादन करने में संलग्न करो।

आर्यसमाज में जीवन नहीं। इस का क्या प्रमाण? यही कि आत्म विद्या की प्यास लेकर जो आर्यसमाज में प्रवेश करते हैं उनके लिए आत्मोन्नति और योगाभ्यास के साधन का कोई स्थान नहीं। यह ठीक है, परन्तु ऐसे स्थान का निर्माण कौन करेगा? क्या आकाश के देवता अपने मोक्ष के परमानन्द को छोड़ कर मर्त्यलोक में उतर आयेंगे? जब जब धर्म का बहुत ह्रास हुआ, तब तब ही किसी मुक्तात्मा ने शरीर धारण करके हमें सीधा मार्ग दिखाया। उस मार्ग के दर्शक आप ही क्यों न बनो। जो समय हाऊ पुकार में लग रहा है वह स्वयम् अमर जीवन की ओर चलने में क्यों न लगे। मैं फिर भी कहता हूं—"तुझको पराई क्या अपनी नबेड़ तू।" परन्तु उधर से उत्तर मिलता है—"आर्य समाज के आचार्य ने हमें इस समाज का मुख्योद्देश्य संसार का उपकार बतलाया है, इस लिए संसार को सीधे मार्ग पर चलाना हमारा परम धर्म है; उसे हम कैसे त्यागदें?" मैं कब कहता हूं कि आप अपना धर्म त्यागदो, परन्तु इतना अवश्य विचारलो कि पर उपदेश कुशलता में ही रत रहने के नियम के प्रचार से संसार का उपकार किसी अंश में हो भी सकेगा या नहीं। यदि आपका परम धर्म संसार का उपकार करना है तो अन्य आर्यों का भी तो धर्म यही है। तब वह भी तो "पर उपदेश" में ही लगजावेंगे। तुम उनके छिद्र बतलाओ, वे तुम्हारे छिद्र बतलाएं। और इन सबके धर्मपालन रूपी युद्ध में क्या आर्य समाज अधिक अवनीति तो न कर बैठेगा? यह विचारणीय बात है। तब क्या किया जाय? मानलो कि आर्य समाज की जन संख्या दस लाख है। इन में से जिस किसी को भी आर्यसमाज में शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति का अभाव दिखाई दे वह अपने अन्दर की निर्बलताओं को दूर करने का प्रयत्न आरम्भ करदे। दूसरों का सुधार शायद वह बड़े यत्न से भी न कर सके परन्तु अपना सुधार निश्चित रूप से कर सकेगा। यदि अपने सुधार में कृत कार्य हुआ तो एक लक्ष (बटा) दस लाखवें भाग का सुधार होगया, परन्तु यदि जन्म भर अन्य संसार के उपकार के केवल गीत गाता रहा तो संसार अपनी वर्तमान स्थिति से हिलेगा भी नहीं।

फिर एक बात और भूलने योग्य नहीं है। शराबी के उपदेश से क्या किसी ने शराब छोड़ा है? कबाबी की नसीहत से क्या किसी मांसाहारी ने गोवध छोड़ा है? दुर्व्यसनी पिता क्या अपनी सन्तान को दुर्व्यसनों से निवृत्त कर उस को जहर से बचा सकता है? अन्धे को अन्धा कैसे मार्ग दिखायगा? जब स्वयम् कर्मशील नहीं हो तो दूसरों के लिए तुम्हारा कर्मण्यता का उपदेश कब फलदायक होगा? इस लिए आवश्यक यह है कि वाणी और लेखनी को इस अंश में, कुछ काल के लिए विश्राम देकर सब भाई अपने सुधार में लग जाय। फिर उनके जीवन दिन रात उपदेश दिया करेंगे।

वर्ण विभाग का नई व्यवस्था

आज कल आर्य समाज के नव ब्राह्मणों ने एक नई व्यवस्था देनी शुरू करदी है। उनका कहना है कि जब वर्ण व्यवस्था का मूल सिद्धान्त श्रम विभाग है तो एक ही मनुष्य पर ज्ञान और कर्तव्य दोनो का बोझ डालना ठीक नहीं। उनका कथन है कि ब्राह्मण का काम ज्ञान प्राप्त करके दूसरों के लिए उपदेश देना ही है, उस उपदेश के अनुसार चलना दूसरों का काम है। ... ब्राह्मण वेद के अनुसार उपदेश करेगा कि राज स्वदेशी और प्रचार ... हो, परन्तु इन कामो को पूरा कराने में उसे कोई भी भाग नहीं लेना चाहिए। इस में सन्देह नहीं कि जिस प्रकार मनुष्य की बनावट में शिर, बाहु, जंघा और पैर अलग अलग हैं इसी प्रकार मनुष्य समाज में भी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के काम अलग अलग हैं। परन्तु फिर भी जैसे एक मनुष्य को ब्राह्मण होते हुए भी क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र के कर्म करने पड़ते है इसी प्रकार मनुष्य समाज के भी ब्राह्मणत्व प्रधान राष्ट्रों को भी क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के काम भी सरंजाम देने पड़ते हैं।

मनुष्य समाज के शिर अंग (अर्थात् जाति) को हम ब्राह्मण पद का अधिकारी समझें क्या उस में क्षत्रियत्व और वैश्यत्व के गुण कर्म का अभाव होने पर उसका अस्तित्व भी रहसकता है? यही हाल व्यक्तियों तथा अन्य मनुष्य-कृत संस्थाओं का है। यदि एक मनुष्य का शिर केवल ज्ञान प्राप्त कर के वाणी द्वारा उसका उपदेश ही कर के बैठ जाय और उसकी भुजाएं शिर की रक्षा न करें और उदर शरीर का पालन न करे तो फिर इसका उपदेश भी कैसे हो सकेगा! इसी प्रकार यदि आर्यसमाज केवल वैदिक ज्ञान के मौखिक प्रचार पर ही सन्तुष्ट हो बैठ जाय और उस ज्ञानको कर्तव्य में लाने का प्रयत्न न करे तो वह अपने मुख्योद्देश्य ... भी कार्य नहीं हो सकता। मेरी सम्मति में आर्यसमाज एक पूर्ण समाज तभी कहला सकता है जबकि उसमें चारों आश्रमों और चारों वर्णों की व्यवस्था और उनकी रक्षा का साधन विद्यमान हो।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा क्या कर रही है?

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा के उद्देश्य बड़े विस्तृत है, परन्तु जितने ही उस के उद्देश्य विस्तृत हैं उस से भी बढ़कर इसका कार्य-क्षेत्र सङ्कुचित रहा है। यदि ठीक सम्मति दी जाय तो नाम मात्र काम भी इस ने नहीं किया। और तो क्या होना है। साधारण वार्षिक अधिवेशन में उपस्थित सदस्यों का एक आध रहा, अन्तरङ्ग सभा का "कोरम" पूरा करने के लिए भी हाथ पैर मार कर रह जाना पड़ता है। दोनो अधिवेशन ६ जून के लिए बुलाए गए थे। ५ अन्तरंग सभासद् दिल्ली पहुंच जाते तो कुछ काम हो जाता; चार ही इकट्ठे हुए। प्रान्तिक सभाओं के काम इस लिए होते हैं कि वहां प्रान्तिक स्वार्थ काम करता है, सार्वदेशिक सभा का काम सब प्रान्तों का सम्मिलित काम है, इस लिए किसी का भी काम नहीं है। अस्तु, साधारण तथा अन्तरंग सभा के अधिवेशन चाहे हों वा न हों कुछ काम हो रहा है जिस का समाचार आर्य सज्जनों तक पहुंचाना मैं अपना कर्तव्य समझता हूं।

कन्या गुरुकुल खोलने के लिए श्री सेठ रघुमल जी ने यही निश्चय किया है कि सार्वदेशिक सभा की ओर से ही यह संस्था चले। जो बड़ा भारी ट्रस्ट वह स्थापित करना चाहते हैं उस के साथ इस संस्था का सीधा रास्ता कोई न होगा और एक लाख इसके लिए अलग पूरा कर दिया जायगा। इस लिए "बदरपुर" तथा "तुगलकाबाद" के समीप ही ३५० बीघे के एक टुकड़े का सौदा होगया है और डिप्टी कमिश्नर दिल्ली की आज्ञा मिलते ही वह खरीद लिया जावेगा। १०,०००) श्री सेठ रघुमल जी ने नकद दे दिया है; जमीन खरीदते ही इमारत शुरू हो जायगी। और बाकी रुपया भी आजावेगा। विचार यह था कि अभी किराए का मकान लेकर कन्यायें प्रविष्ट करली जावें, परन्तु कोई भी उचित स्थान दिल्ली नगर से बाहर नहीं मिला, इस लिए इमारत बनने के पीछे ही कन्याओं का प्रवेश ठीक है।

दूसरा काम मद्रास में वैदिक धर्म का प्रचार है। इस के लिए तीन वर्षों से एक योग्य उपदेशक भेजने की स्वीकृति थी परन्तु जिन प्रान्तिक सभाओं पर रुपए की डाटडाच की गई थी उन्हों ने सार्वदेशिक सभा की अपील का कुछ उत्तर नहीं दिया था। अब पंजाब की सभा ने अपनी प्रतिज्ञा की हुई रकम भेजदी है संयुक्त प्रान्त की सभा उतनी ही भेजने को तैयार है, इस लिए गुरुकुल कांगड़ी के एक योग्य स्नातक को मद्रास प्रचार के लिए भेज दिया है। उसके अतिरिक्त दो अन्य स्नातकों को भी भेज सकता हूं यदि धन पर्याप्त हो। मद्रास के कई नेताओं ने मुझे प्रेरित किया है कि मैं अपने प्रचारक अधिक संख्या में भेजूं क्योंकि उन की सम्मति में मद्रास के "अब्राह्मणों" को वहां के "नामधारी ब्राह्मणों" के अत्याचार से यदि कोई शक्ति मुक्त करा सकती है तो वह आर्यसमाज की संस्था ही है। मुझे इस काम के लिए इस समय यदि ५०००) भी मिल जांय तो न केवल काफ़ी धर्म-प्रचारक ही भेज सकूंगा, प्रत्युत कुछ समय आगामी गुरुकुलीय दीर्घावकाश में से निकाल कर स्वयम् भी एक चक्कर उधर लगाऊंगा। मनुष्य सुधार के प्रेमी अन्य पत्र-सम्पादकों से भी प्रार्थना है कि मेरी इस अपील को अपने ग्राहकों तक भी पहुंचा दें।

स्वराज्य को योग्यता का प्रमाण दो

अभी १ सप्ताह नहीं हुए कि पायोनियर में मैंने १ नोट देखा। लिखा था कि संसार में सब स्थानों में गेहूं की उपज कम हुई है एक भारत वर्ष ही है जिस में आवश्यकता से अधिक उत्पत्ति हुई है। मेरा माथा उसी वक्त ठनका था अब लिखा जारहा है इङ्गलैण्ड में गेहूं कम है और भारत वर्ष में आवश्यकता से अधिक है; इस लिए सरकार गेहूं खरीदना आरम्भ करेगी। इस पर चारों ओर से अपने कोई कोई स्वदेशी पत्र जिनको सुधार स्कीम के विचार से कुछ अवकाश मिलता है शोर मचा रहा है कि यहां से गेहूं बाहर नहीं जाना चाहिये। यह स्पष्ट है कि यदि गेहूं बाहर गई तो भाव ३ सेर का भी हो जायगा। और असहयोगिता दिखलाने के प्रकारों में तो मतभेद है, परन्तु यह एक ऐसा विषय है जिस पर मतभेद नहीं हो सकता। नरम और गरम सब प्रकार के राजनैतिक दल, महात्मा गान्धी और लोकमान्य तिलक और जिन्ना कुछ भी प्रभाव देश में हो क्यों न घोषणा पत्र निकाल दें, और क्यों न सारे देश के किसान और व्यापारी एक स्वर से प्रतिज्ञा कर लें कि भारत वर्ष से बाहर जाने के लिये १ सेर भी अनाज नहीं बेचेंगे। स्वराज्य की योग्यता का प्रमाण इस से बढ़ कर न दिया जा सकेगा, यदि इण्डियन गवर्नमेण्ट कोई अत्याचारी क़ानून बना के बलात्कार से गेहूं खरीदना चाहे तो उस क़ानून को तोड़ कर सत्याग्रह करना मातृभूमि की बड़ी भारी सेवा होगी।

श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रवासी भारतवासी

अभी पञ्जाब विशेषतः अमृतसर की फौजी कानून की दुःखगाथा की असह्य वेदना दूर न हो पाई थी कि फिजी प्रवासी भारतवासियों के दुःखपूर्ण समाचारों ने जले पर निमक छिड़क दिया। अमृतसर में जनरल डायर ने जो हत्याकाण्ड किया था उसी की मि० रे ने फिजी के निहत्थे, भोले भाले भारतीयों पर फिर कर दिखाया। वहां की पवित्रता अबलाओं पर किए गए अत्याचार और दुराचारों की भयङ्कर पुनरावृत्ति फिजी प्रवासी भारतीया पतिव्रताओं पर भी हो गई। भारतीय स्त्री पुरुष कैद किए गये, पीटे गए गोलियों के शिकार बनाये गए। सारांश-वह सब कुछ वहां किया गया, जो यहां कभी किया गया था। यहां तक कि "खुले विद्रोह" (Open Rebellion) का भूत यहां की नौकरशाही के नौकरों की भांति वहां के प्रभुओं को भी चिपट गया।

पूर्वीय अफ्रीका से भारतीयों को आचार पतित कह कर निकाला जारहा था। दक्षिणीय अफ्रीका में पहिले बिचारे दर दर धक्के खा चुके थे अब भी वहां की गोरी सरकार काले भारतीयों के पीछे हाथ धो कर पड़ी है। कैनाडा, आस्ट्रेलिया आदि उपनिवेश पहिले ही भारतीयों को काला कह कर निकाल चुके हैं। अब छोटे से द्वीप फिजी ने भी गोरे सभ्यताभिमानियों की पंक्ति में खड़े होने के लिए काले भारतीयों को मशीनगनों, बन्दूकों और गोलियों का शिकार बना डाला।

फिजी प्रवासी भारतवासियों ने मंहगी आदि आर्थिक अवस्थाओं से तङ्ग आकर हड़ताल (शान्तप्रतिरोध) का आश्रय लिया था। इधर श्रीमती मणिलाल तथा अन्य दो तीन स्त्रियों के देश निकाले का झूठा समाचार (जो वहां के ऐसाई भारतीयों ने उड़ाया था) पाकर स्त्रियों की मामूली सभा इस के प्रतिवाद के लिए हुई। पुलिस और गोरों ने बलात् उस सभा के तोड़ने का निश्चय कर सभा पर धावा बोल दिया। बस, इसी पर हत्याकाण्ड हो गया। सर्वशक्तिमती गोरी सरकार के नौकरों ने मशीनगनों, और बन्दूकों के मुंह खोल दिए। २०० पुरुष और २१ स्त्रियां कैद की गईं। ५ का इकट्ठा चलना, ७ का इकट्ठा रहना नियम विरुद्ध ठहराया गया। श्रीयुत मणिलाल बैरिस्टर सरीखे नेताओं की वही हालत की गई जो पञ्जाब के अनेक पुरुषों की की गई थी। कोड़े लगाए गए—एवं देश निकाले की सजा भी दी गई। पञ्जाब के फौजी कानून का पूरा पूरा नाटक फिजी के अधिकारियों ने दिखलाया। हा! शोक!! फिजी प्रवासियों की-दुख भरी कथा, वहां की भारतीय अबलाओं की आह और आर्तनाद आज किस भारतीय का हृदय न दहला देता होगा। माता की अमृतसर के घावों की अभी मरहम पट्टी न हुई थी कि तुरन्त मर्मस्थल पर फिर भारी आघात। गतवर्ष की अश्रुधारा अभी बन्द न हुई थी कि फिर वही लोमहर्षण हत्याकाण्ड।

५ लाख भारतीयों को साम्राज्य के लिए बलि चढ़ाकर माता ने आशा लगाई थी कि साम्राज्य में बृटिश पताका के तले मेरे पुत्रों को समाधिकार मिलेगा पर वह कहां? युरोप की रणस्थली में काले गोरे सब के एक साथ बही हुई खून की नदी ने आशा दिलाई थी कि संसार में से नहीं तो कम से कम साम्राज्य में से तो काले गोरे का प्रश्न उठ ही जायगा। पर इन सतयुगी आशाओं को इस तामसप्रधान कलियुग में स्थान कहां?

कहा जाता था कि "नया युग उदय हुआ है।" क्या यह वही नया युग है जिसका प्रभात पञ्जाब में हुआ था और मध्याह्न फिजी में हुआ है। सुधारों का शोर है, कौंसिलों के सभ्य बनने का शौक है, स्वराज्याधिपत्य शासन पाने की धुन है—पर आत्म गौरव का कुछ भी ध्यान नहीं। भारतीयत्व की रक्षा की कुछ भी चिन्ता नहीं। अधिकारों की फ़िकर है पर कर्तव्य का ध्यान नहीं।

क्या करेंगे 'सुधार' और 'नव युग'? यदि भारतीय हम ऐसे ही धक्के खाते रहेंगे और भारतीय-गौरव ने गोरों के खेल की गेंद बनकर उनकी ठुकसियां ही खानी होंगी। असली सुधार तभी है जब कि गोरे दिमागों का सुधार होकर भारतीयों को इसी काले रूप में गोरों के समान अधिकार मिलेंगे।

निस्सन्देह, फिजी की घटना ने "समाधिकार" को भी स्वप्न बना दिया है। जिस का घर में नागरिक होते हुए भी कुछ भी मान नहीं—क्या उसे विदेशमें कुली रूप में गए हुए को मान मिलेगा? कभी नहीं।

अस्तु, अब क्या करें? सभा और सम्मेलन, व्याख्यान और प्रस्ताव आदि शस्त्र तो कभी के निकम्मे हो चुके हैं। हण्टर कमीशन का फैसला देखकर अब "रोयलकमीशन" के लिये आन्दोलन करने का भी साहस नहीं रहा। स्वतन्त्र कमीशन की नियुक्ति का भी क्या फल होगा—जब कि पञ्जाब की कांग्रेस की रिपोर्ट का कुछ फल होता नहीं दीखता? "पञ्जाब का खुला विद्रोह" शान्त करने वाली नौकरशाही सरकार के आगे हाथ जोड़ते हुये भी अब डर लगता है। एवं, किंकर्तव्य विमूढ़ हुए हमें सूझता नहीं कि क्या किया जाय। तुलसीदास के "पराधीन सपनेहु सुख नाहीं" का सिद्धान्त याद कर अपनी घर बाहिर सब जगह बुरी दशा देखकर अपने ही पर तरस आता है, दया आती है रोना आता है। निस्सन्देह, अमृतसर और फिजी की घटनाओं ने दिखा दिया है कि—

"सर्वं परवशं दुःखं, सर्वमात्मवशं सुखम्।"

भविष्य के लिये हमारे हाथ में क्या है? चीनियों की तरह हम में ... हमारी सरकार में इतनी शक्ति नहीं कि कोई प्रवासी भारतवासियों ... कायम रख सके। प्रतिज्ञाबद्ध कुली ... दासता की बेड़ियां खोल या सुलझा ... है। महात्मा गान्धी, माननीय एण्ड्रूज़ और मि० पोलक के यत्न भी व्यर्थ होते दीखते हैं तो हम क्या कर सकते हैं? हम सब कुछ कर सकते हैं। भविष्य के लिये कुली बन कर बाहिर जाना छोड़ सकते हैं। चाहे व्यवस्थापिका सभा की उपसमिति ने ब्रिटिश गायना और फिजी के डेपुटेशनों के लिए अनेक 'किन्तु' 'परन्तु' लगा कर कुली देना स्वीकार किया है। पर हम इसका पूर्ण विरोध करते हैं। श्रीयुत दिमनलाल के डेपुटेशन ने जैसे भारतीयों को कुलीप्रथा की दासता से मुक्त करने के स्थान में और भी बांध दिया है। यदि ऐसी ही भविष्य में नहीं बन्धना तो आज ही प्रण करना चाहिए कि हम कभी भी किसी भी रूप में कुली बनकर बाहिर न जायेंगे। यदि फिर "प्रतिज्ञाबद्ध कुलीप्रथा" का किसी दूसरी कुलीप्रथा का शिकार नहीं होना तो आज से ही 'कुली' होना ही छोड़ना चाहिए। २० लाख प्रवासी भारतवासियों की दुर्दशा से अब भी पाठ सीखना चाहिए। अन्यथा, यदि कुली भी होना है और आनन्द भी लूटना है तो यह कठिन और असम्भव है। ऐ भारत माता के सुपुत्रो! हमारे गौरव की रक्षा हमारे ही हाथ में है। इसे न भारत सरकार और न ब्रिटिश साम्राज्य ही बचा सकता है चूंकि हमें प्रारम्भ से ही राम और कृष्ण महाराज की श्याम सन्तान होना पसन्द है न कि डार्विन के सिद्धान्तानुसार बंदर गोरे होने का सौभाग्य मिला है।

विचार तरंग

जलियान वाला बाग़

(श्रद्धा के लिए विशेष रूप से लिखित)

(१)

स्मरणीयभूमि! मैं तुम्हें क्यों स्मरण करने लगा हूं। क्या मेरे पास स्मरण करने के लिये कुछ और नहीं हैं या तुम्हारा स्मरण कोई आनन्द दायक बात है? केवल इस लिये कि गतवर्ष के कुछ घटनाचक्र के कारण तुम हम सब के हृदय २ में स्मरण का विषय हो गयी हो। यह अच्छा अवसर है कि मैं तुम्हें स्मरण कर २ के सत्यस्वरूप के कुछ उन सत्यों के गीत गालूं जो कि उसकी घटनाओं में प्रकाशित होते हुवे हमें सन्मार्ग दिखलाया करते हैं। इसी लिये मैं तुम्हें स्मरण करना चाहता हूं, नहीं तो क्या इस भारतभूमि पर ही अन्य कोई स्थान नहीं जहां पर कि ऐसे अन्यायपूर्ण कृत्य किये गये हों, निरपराधों का रुधिर बहाया गया हो या ऐसे स्थान नहीं जहां कि स्वदेश के लिये इस से भी अधिक आत्मबलि दान किये गये हों हम उन्हें जानते हों या न जानते हों।

(२)

सुफला भूमि! तुम्हें बाग़ न होते हुवे भी बाग़ कहना ठीक ही है। अभी तक तुम्हारी भूमि चाहें बाग़ न रही हो किन्तु उस दिन से यह बाग़ ही है जब कि यहां पर 'देश भक्ति' 'हिन्दुमुस्लिम ऐक्य' आदि उत्कृष्ट बीजों का वपन और तत्काल हो सब भाइयों के सम्मिलित कवोष्ण रुधिर से इसका सिंचन किया गया। मुझे न कोई मरने वाले दिखाई देते हैं और न कोई मारने वाला, केवल एक सुरम्य मनोद्यान भूमि फाड़ कर निकलता हुआ दृष्टि गोचर हो रहा है जिस से कि बड़े २ उत्तम फलों की आशा है—जिस से कि यदि इसे सच्चे मालियों की सेवा मिलती रही तो उन मधुर फलों की आशा है जिन्हें कि आस्वादन कर सम्पूर्ण भारत महान् सन्तोष लाभ करेगा।

(३)

क्या तू घबराता है कि यहां पर इतने भारत निवासी मर गये। हे भारत को प्यार करने वाले! क्या इसे स्मरण कर २ के तू शोकाकुल होता है। आज इस भारत में जितने भी देह दिखायी दे रहे हैं कुछ काल के उपरान्त इन में से एक भी यहां न होगा, किन्तु भारत—तेरा प्यारा भारत—फिर भी जीवित होगा। भारत की आत्मा जिस देह में निवास करती है वह ऐसे सहज में नहीं नष्ट किया जा सकता। डायर ओडवायर न जाने कितने विविध २ देह ले और छोड़ चुकेंगे जबतक कि भारत (इस से भी उन्नतावस्था में) बना रहेगा। यह हमारे देह तो केवल भारत देह के कोष्ठों (Cells) के समान हैं जो कि व्यायामादिक कृत्यों से प्रतिदिन पुराने नष्ट होते और नये प्राण से परिपूर्ण हो उनका स्थान लेते रहते हैं।

गोलियां खाकर बहुत से भारतवासी वहां मर गये तो क्या बुरा हुआ। क्या वे भी मलेरिया या श्लेष्मज्वर से पीड़ित हो कर अपने प्राण छोड़देते या अकाल में भूखों मर जाते? उलटे यह क्या ही अच्छा होता कि ईश्वर की ऐसी कृपा होती कि हम निकृष्ट मौतों से अपने प्राण गंवाने वाले भी सब भारतीय भाई उस प्रथम वैशाख के दिन इसी बाग़ में किसी निमित्त आजमा होते और ईश्वर की ऐसी कृपा होती कि डायर साहिब को अपनी बारूद का बीच में तब तक टोटा न पड़ने पाता जबतक कि हम सब ही वीरगति न प्राप्त हो जाते। तब शायद जनरलसाहिब बहादुर का जी कुछ सतुष्ट होता (क्यों कि मृत्यु संख्या लाखों में होती) और हमारा जी भी संतुष्ट होता कि सब मरने वाले हमारे भाई 'देश भक्ति' की ही मौत मरे।

(४)

पुण्यभूमि! तुम तीर्थ की पवित्रभूमि बन गई हो, उस समय से कि जिस शुभ घड़ी में हम पर वह घटना बीती जिसने कि भारत के कुछ पाप हर लिये। ज्यों २ एक एक गोली भारत भक्ति पूर्ण छाती पर गिरती थी त्यों २ दूसरी तरफ एक २ पाश कटकर गिरता जाता था। वे सर्वान्तर्यामी भगवान् के हाथ थे जो कि उन बन्धनों को खोल रहे थे जो कि हमारे पापों के कारण कभी हम पर बंधगये थे। यह कुछ बन्धनों से छुटकारे का दिन—तप द्वारा निर्मलता पाने का दिन—कुछ पाप भार से हलके होने का दिन, क्या यह दिन दुःख का दिन था। क्या इसे याद कर के हमें कभी शोक उपस्थित होगा।

शोक है तो यह है कि यह मेरा अधम निरर्थक शरीर उनमें न था जो कि उस दिन स्वदेश के पाप काटने में काम आवे। मेरे हृदय का (योग अनाहत चक्र बेध्य) उस दिन कैसे सहज में घातक गोली से बिंध जाता और अन्दर वही 'नाद' उठता सुनाई देता "इस से दुःखित भारत के कुछ दुःख दूर हों।" ऐसा ही भाव चित्त में उठता है जब कि ध्यान आता है इस देश के लिये हमें न जाने कितने कष्ट सहने हैं—तप करने हैं, यदि हमें इसकी सच्ची स्वाधीनता का दिन कभी देखना है।

(५)

मेरे दिल में यदि जनरल डायर के प्रति द्वेषया घृणा का भाव उठता है तो मैं भी उसका तीसरा भाई हूं—मुझे भी इस पाप भाव के लिये वैसा ही दण्ड भोगना होगा। यह पिशाची भाव ही तो हैं जो कि जनरल डायर को हत्यारा डायर बनाते हैं, फिर यदि हम भी इन्हीं भावों के दास हो कर बदला लेते हैं (या बदला लेने में अशक्त होने से जी में ही जलते हैं जो कि और भी बुरा है) तो वैसे ही पाप-भक्त हैं और निश्चय से वैसे ही दुःख फल पावेंगे। भारतभूमि! ऐसी अवस्था में मन में उच्च बल न होने के कारण तेरे पुत्रों के चित्त में भी क्रोध और प्रतिद्वेष के विचार अवश्य तीव्रता से आते हैं और इस के विपरीत भाव बड़े ही अनोखे प्रतीत होते हैं। किन्तु ऋषियों की भूमि! माता! यदि हम भी इन अनोखी बातों की सचाई न देख सकेंगे तो संसार में और कौन देखेगा?। इस लोमहर्षण हत्याकाण्ड के दृश्य द्वारा यदि हम भी अपने सत्यव्यवहार से हिला दिये गये तो इन ऋषियों की तपस्याओं से परिपूतभूमि पर जन्म पाना हमारे किस काम का हुआ। तब तो हम ने सच मुच तेरे पुत्रों को मार डाला। तू ही हमें बतादे कि ये वस्तुएं बिलकुल मिथ्या और निस्सार हैं। उन ही वस्तुओं का सहारा लेकर खड़ा हुआ जा सकता है जो कि सहायता के पक्ष में हैं। तू ही हमें बतादे कि राजनियमों के बल और अपने शासन से भी परे यही बात है जिस से कि ऐसे २ दृश्य मूलतः असम्भव हो सकते हैं। नहीं तो स्वराज्य हो जाने पर भी ईर्ष्या द्वेषभाव यदि (कारण) होंगे तो ऐसे २ कार्य अनिवार्य होंगे—तब भी उन्मत्त विरोधी दलों में से कोई बल वाले वहां कैदों के फूकने आदि के समान दृश्य उपस्थित कर सकेंगे तो अधिक सामर्थ्य वाले जलियानवाला की घटना कर दिखावेंगे। "अभय"

गुरुकुल-जगत्

गुरुकुल-काङ्गड़ी

ठण्डी हवा के झोंके

पिछले दो सप्ताह में सब कुलवासी गर्मी से तंग आ रहे थे। हमारी स्थिति बड़ी विचित्र थी। दिन में गर्म हवा और रात में बिल्कुल हवा नहीं चलती थी। हमारे इस दुःख में गंगा ने कुछ साथ देने के बदले आंख मिचौनी ही शुरू की परन्तु "जब खुदा देता है तो छप्पर फाड़कर देता है" इस कहावत के अनुसार जब दिन फिरे तो इकट्ठे ही फिरे। इस सप्ताह हमें न तो गर्मी ने तंग किया और ना ही गर्म हवाओं ने किन्तु उसके विरुद्ध, दिन के समय आकाश में प्रायः बादल रहने और रात के समय में ठण्डी हवा के चलने से ऋतु उत्तम हो गई है। इतना ही नहीं, पिछले दिनों में साधारण वर्षा होने से टैम्परेचर कुछ गिर गया है जिस से गर्मी का ज़ोर कम हो गया है, वहां गंगा भी अनवरत धार में बहने लगी है। इस ऋतु परिवर्तन के कारण सब कुलवासी अत्यन्त प्रसन्न हैं।

स्वास्थ्य

अत्युत्तम है। चोट के कारण पड़े हुये एक दो ब्रह्मचारियों के अतिरिक्त इस समय रोगी गृह बिल्कुल सूना है। एक उपाध्याय महाशय छुट्टी से लौटते हुये अपने साथ युद्ध-ज्वर (Influenza) ले आये थे जिन के संसर्ग से अन्य दो तीन कार्यकर्त्ताओं में यह रोग फैल गया परन्तु हमारे अनुभवी और सुयोग्य डाक्टर श्री० सुखदेव जी के अनथक परिश्रम और निरीक्षण के कारण सब नीरोग हो गये हैं और अब इस के फैलने का कोई भय नहीं रहा।

साहित्यपरिषद् और अन्य सभायें

महाविद्यालय तथा विद्यालय की सब सभायें नियम पूर्वक प्रति सप्ताह अपने अधिवेशन कर रही हैं। गत सप्ताह [illegible] की सब से बड़ी सभा साहित्य [illegible] का अधिवेशन हुआ जिस में श्री पं० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालङ्कार-प्रोफेसर राजाराम कालिज कोल्हापुर ने "मांस भक्षण" पर अत्यन्त सारगर्भित व्याख्यान दिया। व्याख्याता महाशय ने धार्मिक आर्थिक, सामाजिक, नैतिक, वैज्ञानिक और प्राकृतिक इन ६ प्रकार की युक्तियों से मांस भक्षण का खण्डन किया। विषय पर बड़ा मनोरंजक विवाद हुआ जिस का व्याख्याता महोदय ने समुचित उत्तर दिया। सभापति के आसन पर श्री० डाक्टर सुखदेव जी विराजमान थे।

सम्मेलनों की धूम

पिछले दिनों में कुल में, सम्मेलनों की खूब धूम रही। लगभग प्रत्येक सभा ने अपने २ विशेष सम्मेलन किये। महाविद्यालय की 'संस्कृतोत्साहिनी' सभा की ओर से दो सम्मेलन हुये। पहिला 'कविता सम्मेलन' था जिस में ब्रह्मचारियों ने संस्कृत में अपनी बनाई हुई उत्तम २ कवितायें तथा समस्यापूर्त्तियां सुनाईं। सभापति का आसन दर्शनोपाध्याय श्री० पं० योगेन्द्रनाथ जी भट्टाचार्य्य ने सुशोभित किया। इसी सभा का दूसरा विशेष अधिवेशन "प्रतिभा-सम्मेलन" था जो कि अपने ढंग का निराला होने के साथ २ अत्यन्त ही मनोरंजक था। इस में साल २ ब्रह्मचारियों के दो दल बनाये गए जिन के नेता ब्र० विद्यानिधि (१४ श्रे०) और ब्र० विद्यारत्न (१४ श्रे०) थे। दोनों दलों ने संस्कृत श्लोकों में, अन्त्याक्षरी में शास्त्रार्थ किया पर इन श्लोकों की विशेषता यह थी कि वे ब्रह्मचारियों के अपने ही बनाए हुये थे। श्लोक केवल अनुष्टुप् छन्द में होते थे किन्तु शार्दूल विक्रीडित मालिनी, स्रग्धरा इत्यादि छन्दों के भी थे। सम्मेलन की एक और विशेषता यह थी कि प्रत्येक पक्ष ने दूसरे को हराने के लिए कई श्लोक तत्काल बनाए थे जिस से शास्त्रार्थ की मनोरञ्जकता अधिक बढ़ गई। दोनों ओर के श्लोकों की कुल संख्या लगभग [illegible] हजार के थी। दोनों पक्ष बराबर रहे। सभापति का आसन वेदोपाध्याय श्री पं० सूर्यदेव जी ने सुशोभित किया था।

तीसरा सम्मेलन विद्यालय की मुख्य सभा "साहित्य [illegible]" ने किया जिसका नाम द्वितीय "हिन्दी-साहित्य सम्मेलन" था। गत वर्ष भी यह सम्मेलन इन्हीं दिनों में हुआ था। सभापति का आसन श्री० पं० स्नातक सत्यदेव जी विद्यालङ्कार ने अलंकृत किया। उनके सारगर्भित और विचार पूर्ण भाषण के अनन्तर हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के विषय में कई उत्तम २ प्रस्ताव हुए। मुख्यवक्ताओं में श्री० पं० दीनानाथ जी सिद्धान्तालङ्कार, ब्र० मन्मथ काम जी ब्र० प्रियव्रत जी, ब्र० अंगिरा जी, ब्र० भीमसेन जी, ब्र० धर्मदेव जी, इत्यादि थे। चौथा सम्मेलन विद्यालयाश्रम के छोटे ब्रह्मचारियों की "साहित्य सम्वर्द्धिनी" सभा की ओर से "कवितासम्मेलन" के रूप में, श्री पं० गयाप्रसाद जी "श्रीहरि" के सभापतित्व में हुआ जिसमें ७ वीं ८ वीं श्रेणी के ब्रह्मचारियों ने मुख्यतया तथा अन्यों ने गौणतया भाग लिया। सब ने स्वरचित कवितायें तथा पद्य सुनाये। इस प्रकार पिछले दो सप्ताहों में कुलवासियों ने इन सम्मेलनों से खूब आनन्द प्राप्त किया। इस महीने में और भी कई सम्मेलन होने वाले हैं जिनका संक्षिप्त वर्णन हम समय २ पर पाठकों के सन्मुख रखते रहेंगे।

हमारे कुल पिताजी

कलकत्ते से लौट आये हैं। वहां उन के गुरुकुल शिक्षा प्रणालि पर दो उत्तम सार्वजनिक व्याख्यान हुए जिनका सार हम पिछले अंकों में पाठकों के सम्मुख रख चुके हैं। जनता पर इन व्याख्यानों का अत्युत्तम प्रभाव पड़ा। शाखाओं का निरीक्षण करते हुये आप अब वापिस आ गये हैं।

—:o:—

स्वामी श्रद्धानन्द जी और हन्टर कमेटी की रिपोर्ट

पाठकों को हम सहर्ष सूचित करना चाहते हैं कि अगले अङ्क से हन्टर कमेटी पर श्री पूज्य [illegible] श्रद्धानन्द जी के लेख प्रारम्भ होंगे। ये लेख अलग क्रोड़पत्र के रूपमें दिये जायंगे। आशा है हमारे ग्राहक इनका उचित स्वागत करेंगे।—

संसार समाचार पर

टिप्पणी

एक युरेशियन महिला का आर्यसमाज में प्रवेश

गत ३० मई की शाम को लखनऊ-आर्यसमाज मन्दिर में "मिस थोईसिलज का मोगदावोविच" नाम की एक सरबियन महिला ने ईसाई मत से विश्वास के सर्वथा उठ जाने के कारण, *वैदिक धर्म* में प्रवेश किया। इन की उमर २२ वर्ष की है और ये एक पोस्ट और टेलिग्राफ़ के डायरेक्टर जैनरल की सुपुत्री हैं। अब इनका नाम *श्रीमती स्नेहलता देवी* रक्खा गया है। उस अवसर पर भिन्न भिन्न संस्थाओं को इन्हों ने ३०) दान दिये। लखनऊ-आर्यसमाज के कार्य की सराहना करते हुए हम श्रीमती जी को यह विश्वास दिलाते हैं कि वैदिकधर्म में उनकी भटकती आत्मा को अवश्य सच्ची शान्ति मिलेगी।

रहस्य खुलगया—'हाउस आवकामन्स' के मैम्बरों का स्वार्थ

युद्ध के दिनों में इङ्गलैण्ड के व्यापारियों ने बहुत लाभ उठाया था। इस पर टैक्स लगाने की सूचना वहां के "टैक्स पेयर" ने दी जिसका परिणाम स्वरूप एक कमेटी बिठाई गई जो कि इस मामले की पूरी जांच कर के रिपोर्ट करे। कमेटी ने यद्यपि युद्ध के दिनों में कमाये हुये धन पर टैक्स लगाने की आवश्यकता बतलाई पर साथ ही सरकार से यह भी प्रार्थना की कि इस से *व्यापारिक साहस* को धक्का पहुंचेगा, इस लिए अच्छा हो कि ऐसा टैक्स न लगाया जावे। यद्यपि यह कोई बहुत अच्छी युक्ति न थी पर इस से व्यापारियों को और भी अधिक धन बटोरने का अवसर मिला। परन्तु जब सरकार चाहती है और उसकी बनाई हुई कमेटी भी उस में सहमत है फिर क्यों वह टैक्स न लगाने की सलाह देती है! सचमुच *यह एक विचित्र रहस्य था* जो कि अभी तक सबको डांवाडोल कर रहा था पर "टाइम्स आवइण्डिया" एक विलायती अख़बार के आधार पर कहता है कि इसका *रहस्य अब खुलगया* है। असली बात यह है कि इस प्रकार अधिक टैक्स लगाने का प्रभाव ७५% *हाउस आवकामन्स के मेम्बरों पर पड़ेगा* जिन की स्वार्थ-रक्षा के लिए ही कमेटी ने उपयुक्त सलाह दी थी। जहां इस प्रकार धन के लोभी शासक हों वहां क्या कभी उत्तम शासन की आशा की जा सकती है? अब समझ में आजाता है कि प्राचीन काल में *शासन की बागडोर वशिष्ठ जैसे निरीह ब्राह्मणों के हाथ में क्यों थी?*

फिजी में भारत वासियों पर अत्याचार

भारत हितैषी मि० सी० एफ़० एण्ड्रूज़ ने अंग्रेज़ी अख़बारों में एक पत्र छपवाया है जिस से ज्ञात होता है कि वहां की 'कोलोनियल सुगर रिफाईनिङ्ग' कम्पनी के मजदूरों के थोड़े वेतन होने के कारण हड़ताल करने से पुलिस ने उनके साथ अत्यन्त पाशविक अत्याचार किया। इस के अतिरिक्त वहां के प्रसिद्ध नेता डाक्टर मणिलाल जी एम.ए.एल.एल.बी. बैरिस्टर ने "हिन्दू" में एक पत्र छपवाया है जिस से ज्ञात होता है कि उन्हें थाने में इन्स्पेक्टर के सामने ख़ास कान्स्टेबल द्वारा पीटा गया और उन्हें घर से बाहर न निकलने की आज्ञा दी गई। इतना ही नहीं, आपको भूख से मार डालने की भी चेष्टा की गई। गोरों के छोटे छोटे बच्चे तक आप के नौकरों को पिस्तौल निकाल धमकी देते थे। इस प्रकार और भी सारी कहानी अत्याचार क्रूरता और नृशंसता से भरी हुई है। बिना जांच किये "आरमीनिया" के जिस 'हत्याकाण्ड' के लिए आज टर्की को बदनाम किया जा रहा है, क्या वे अत्याचार उस से कम हैं जो कि कई वर्षों से फ़िजी आदि द्वीपों में भारतीयों पर हो रहे हैं? परन्तु बात तो सारी सुफ़ेद चमड़ी की है जिस के आगे आते ही सब कुछ श्वेत-कलंक कालिमाशून्य हो जाता है। सरकार को रायल कमीशन बिठाकर [illegible] मामले की पूरी खोज करवानी चा[illegible]

शुभ-विवाह

यह समाचार सुन हमें [illegible] प्रसन्नता हुई है कि गुरुकुल के स्नातक [illegible] नन्दकिशोर जी विद्यालंकार प्रोफेसर रामजस कालेज देहली, का विवाह कलकत्ते के प्रसिद्ध व्यापारी म० शिवप्रसाद गर्ग की सुपुत्री *श्रीमती सौभाग्यवती* जी से गत सप्ताह कलकत्ते में आनन्द पूर्वक हुआ। वधूपक्ष की ओर से ५००) और वर पक्ष की ओर से १२५) का दान गुरुकुल को दिया गया। हम अपने स्नातक भाई को बधाई देते हुये इस जोड़ी के चिरायु रहने की परमात्मा से प्रार्थना करते हैं।

"सम्पत्ति"

श्री-प० शेरसिंह जी आर्योपदेशक के सम्पादकत्व में इस नाम की एक मासिक पत्रिका 'मुज़फ्फ़रगढ़' से निकलनी प्रारम्भ हुई है। सुन्दर २ कविताओं के अतिरिक्त लेख भी उत्तम, ओज पूर्ण और रोचक होते हैं। हम सहयोगी का हार्दिक स्वागत करते हैं। छपाई और काग़ज़ उत्तम है। वार्षिक मूल्य २॥)

इन्दौर में आर्यसमाज पर अत्याचार—

हमारे एक मान्य महोदय-ने जिन के कथन की सत्यता में तनिक भी सन्देह नहीं हो सकता—हमें निम्न आशय का समाचार भेजा है—

"......यहां आर्य्यसमाज के उत्सव से लौटकर दिल्ली के पण्डित रामचन्द्र जी शर्मा यहां भी आये थे। उन के व्याख्यानों की व्यवस्था की गई तो पुलिस ने कहा कि सन् १९११ ईस्वी के अमुक रेगुलेशन् के अनुसार बिना मैजिस्ट्रेट की आज्ञा के ओपन ऐयर मीटीङ्ग नहीं हो सकती। एतदर्थ प्रथम दिन केवल १५ मिनिट में ही व्याख्यान बन्द कर देना पड़ा। दूसरे दिन जब आज्ञा के लिए प्रार्थना पत्र दिया गया तो मैजिस्ट्रेट ने इस शर्त पर आज्ञा दी कि ईसाइयों और मुसल्मानों के मतों पर रीज़नेबल और अन-रीज़नेबल जस्ट और अनजस्ट-कैसे भी रिमार्क न किये जावें और न इन मतों का रिफ्रेन्स ही अपने पक्ष या विपक्ष में ही दिया जावे।"

मैजिस्ट्रेट के इस अन्याय पूर्ण व्यवहार और धींगा धींगी का अत्यन्त विरोध करते [illegible] महाराज साहब से बीच में [illegible] देने की प्रार्थना करते हैं।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से सद्धर्म प्रचारक के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिये छपा।

ओ३म्

Registered No. A 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निमुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० मं० ३ सू० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे ! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।"
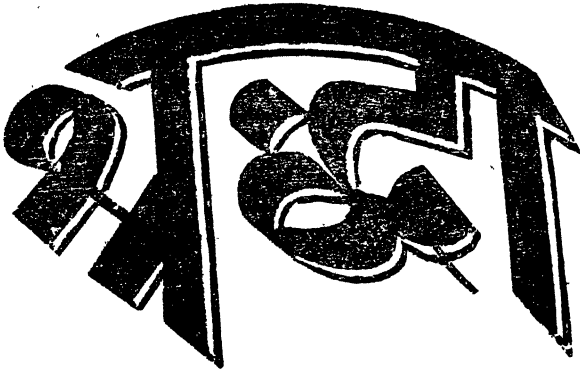
सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | १२ आषाढ़ सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० २५ जून सन् १९२० ई० | संख्या १० भाग १

हृदयोद्गार

ईश विनय

प्रभो ! पदकञ्ज के तुमरे अली हम आशु बन जावें ॥
सदा संसार के हित की करें हम कामना प्रभु से,
जगत् को प्रेममय देखें तुम्हारे प्रेम रंग जावें ॥ १ ॥
न हरि हम स्वार्थवश अपने सतावें दीन दुखियों को,
सभी को बन्धुसम लख के दयामय कंठ निज लावें ॥ २ ॥
न हमको चाहिए ऐसी कभी सम्पत्ति हे स्वामिन् !
जिसे पाकर के प्रभुवर के चरण से दूर हो जावें ॥ ३ ॥
विषम विषमय विषय तृष्णा तरङ्गों की तरल माला,
करै दुःखी न हरि हमको यही वरदान इक पावें ॥ ४ ॥
प्रभो ! इक ध्यान इक आशा मनोरथ एक हों मन का,
पुलक तनु प्रेम पूरन हो सदा "श्री हरि" के गुन गावें ॥ ५ ॥

पं० गयाप्रसाद जी (श्रीहरिः)

"सरस्वती-विद्यालय अहरोला" अरैली के मुख्याध्यापक श्री-केशोराम बी. ए. सूचना देते हैं कि यह संस्था गत [illegible] में स्थापित है जिस में विद्यार्थियों को ८ वीं श्रेणी [illegible] शिक्षा दी जाती है। यह सरकार द्वारा स्वीकृत है। इसमें [illegible] र्थियों को ब्रह्मचर्य व्रत धारण करना पड़ता है और स[illegible] व्यतीत करते हैं।" मासिक शुल्क १२) है। आर्यजनता [illegible] नुभूति की प्रार्थना की गई है।

परमात्मन् !

तुम्हारी ज्योती के देखने का मैं एक प्यासा बना हुआ हूं-टेक
मुझे न पर्वाह ज़िन्दगी की मुझे न कुछ चाह दौलतों की।
तुम्हीं को सब चीज़ सौंप करके तुम्हारे पीछे लगा हुआ हूं ॥१॥
मुसीबतें आरहीं हैं आयें न दिल यहां से कभी हटेगा।
मैं भूल सब कुछ तुम्हारी चिन्ता से एक गाफ़िल किया हुआ हूं॥२॥
हिलाओगे उसको क्या जो दुनिया से हिल तुम्हारा ही हो चुका है।
समझना ! कोई फ़रक नहीं है मैं बस तुम्हीं में मिला हुआ हूं॥३॥
न कोई सम्बन्ध रह गया है तुम्हारे मेरे में जो नहीं है।
तो क्यों छिपे हो ? दिखाओ अपने को देर से मैं खड़ा हुआ हूं॥४॥
संभलना ! आंधी चली मिटाने तुम्हारी हस्ती का दिल से मेरे।
यहां पै बेहोश होके तुमको पुकारता मैं गिरा हुआ हूं ॥ ५ ॥
अभी हैं नज़दीक दूर होगे पड़ेगा दोनों के बीच पर्दा।
बचाओ जल्दी हृदय के मालिक ! अभी समय है बचा हुआ हूं ॥६॥
तुम्हारी ज्योती के होंगे दर्शन ये घोर अन्धेर दूर होगा।
तभी मैं मैं नाथ ! देख लूंगा कि ओह तुम्हीं में हुआ हुआ हूं ॥७॥

"आनन्द"

श्रद्धा के नियम

वार्षिक मूल्य ३॥) ६ मास का २) वी. पी. भेजने का नियम नहीं है। ग्राहक महाशय पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक सं[illegible] अवश्य लिखा करें।

ब्रह्मचर्य सूक्त की व्याख्या।

इमां भूमिं पृथिवीं ब्रह्मचारी भिक्षामाजभार प्रथमो दिवंच। ते कृत्वा समिधावुपास्ते तयो रार्पिता भुवनानि विश्वा ॥ ६ ॥

"(ब्रह्मचारी प्रथमः) **ब्रह्मचारी पहिले** (इमाम् पृथिवी भूमि भिक्षाम् आजभार) **इस विस्तृत भूमि को भिक्षा में आहरण करता है** (दिवंच) **फिर द्युलोक को, और** (समिधौ कृत्वा उपास्ते) **उनको समिधा बना कर उपासना करता है।** (तयोः विश्वा भुवनानि अर्पिता) **उन दोनों में सबलोक आश्रित हैं।"**

सब दानों में ब्रह्मविद्या का दान ही श्रेष्ठ है। कूप तड़ागादि, अन्न भोजनादि–सब दानों में ब्रह्मदान ही उत्तम है। मनुस्मृति में कहा है–"सर्वेषामेव दानानां ब्रह्मदानं विशिष्यते। वार्यन्नगोमहीवासस्तिलकाञ्चनसर्पिषाम्।" **जल, अन्न, गाय, भूमि, वस्त्र, तिल, सोना घी–इन दानों से ब्रह्म अर्थात् वेदविद्या का दान अधिक है। आचार्य ही वेदविद्या का दान देता है। वेद की पढ़ाई में; ब्रह्मविद्या के अध्यापन में भी यदि टकापंथ ही चला तो फल कुछ नहीं होगा। विद्या कोई भी हो उसका अध्ययन ब्रह्मविद्या द्वारा तत्वज्ञान की प्राप्ति के लिए होना ही श्रेयस्कर है। और उस ब्रह्मविद्या का सौदा नहीं हो सक्ता उस का निष्कामता से दान ही हो सक्ता है जो टकों के बदले पढ़ाता है वह टीचर हो, प्रोफ़ेसर कहलाए, प्रिन्सिपल भी प्रसिद्ध हो परन्तु वह आचार्य नहीं बन सक्ता। आचार्य बनने के लिए पहिला स्वाभाविक गुण यह बनना चाहिए कि निष्कामता की पराकाष्ठा पर पहुंच जाय। धन कमाने वाला बनिया आचार्य नहीं बन सक्ता, शारीरिकादि दण्ड देने वाला क्षत्रिय भी आचार्य नहीं बन सक्ता; शूद्र का तो कहना ही क्या है। आचार्य बनने के लिए 'ब्राह्मण' का ही अधिकार है। और ब्राह्मण को वेद में शरीर के मुख्य भाग से उपमा दी है। उस भाग में प्राण है जो सारे शरीर को अपने दान से पुष्ट रखता है। प्राण की महिमा इसी लिए बहुत तक ही गई है। उपनिषदों से ऊपर बढ़कर अथर्ववेद तक में प्राण की बड़ी प्रशंसा है। यहां तक कहा है कि सारे ब्राह्मण का आधार प्राण ही है–**"वशे सर्वेंत्रिदिवे यत्प्रतिष्ठितम्। मातेव पुत्रान्रक्षस्व श्रीश्चप्रज्ञांच विधेहि इति" **माता जैसे सन्तान की रक्षा करती है वैसे ही प्राण** शरीर के सर्व **अङ्गों** तथा **प्रत्यङ्गों की रक्षा करता है। इसी प्रकार मनुष्य समाज रूपी पुरुष की बनावट में ब्राह्मण ही सबका आधार है। ब्राह्मण ही आचार्य हो सक्ता है। ब्राह्मण यद्यपि दूसरों की कमाई का अन्नजल ग्रहण कर के पलता है तथा मनुस्मृति में सब कुछ (जो भी संसार में है) ब्राह्मण का ही बतलाया है–**"सर्वस्वं ब्राह्मणस्येदं यत्किंचिज्जगतीगतम्" **और फिर कहा है–**"स्वमेव ब्राह्मणो भुङ्क्ते स्वंवस्ते स्वंददातिच। आनृशंस्याद् ब्राह्मणस्य भुञ्जते हीतरेजनाः।" **ब्राह्मण भोजन करे या पहिरे या देवे, सो सब ब्राह्मण का अपना ही है। और लोग जो भोजनादि करते हैं वह केवल ब्राह्मण की कृपा है।**

सारा संसार ब्राह्मण के दान से ही पलता है। उस दान शील श्रेष्ठ ब्राह्मण आचार्य से ब्रह्मचारी पहिली भिक्षा में इस प्रत्यक्ष, विस्तृत भूमि का ज्ञान उपलब्ध करता है। तृण से लेकर पृथिवी पर्यन्त का ज्ञान आचार्य पहिले देता है। वह एक समिधा हुई। परन्तु एक हाथ से ताली नहीं बजती। दो के बिना पूर्ति नहीं होती। पृथिवी प्रत्यक्ष है, इन्द्रियगम्य है परन्तु उसके अन्दर के रहस्य बिना विशेष प्रकाश के समझ में नहीं आते। तब आचार्य ब्रह्मचारी को परोक्ष ज्ञान देता है। पृथिवी से उसको "द्यौलोक" में लेजाता है। भौतिक सूर्य से लेकर आत्मा तक को प्रकाश देने वाला "प्रकाश स्वरूप" **तक ले जाता हुआ आचार्य शिष्य के लिए भिक्षा पूरी कर देता है। इस परिशिष्ट दान को प्राप्त कर के ब्रह्मचारी "समित्पाणि" पर गुरु के दरबार की ओर चलता है आचार्य से मिली भिक्षा भी निन्दनीय नहीं–वह भी सराहनीय है, कल्याणकारी है। परन्तु–**'स पूर्वेषामपिगुरुः कालेनानवच्छेदात्" **उस गुरुओं के भी गुरु, पूर्व आचार्यों के भी आचार्य, जिस के लिए भूत और भविष्यत् कोई अस्तित्व नहीं रखता–उस परम गुरु से भिक्षा प्राप्त किए बिना ब्रह्मचारी अपने परम उद्देश्य को प्राप्त नहीं होता। आचार्य से प्राप्त किया हुआ दान अगले दान का अधिकारी मात्र बनाता है। पृथिवी और द्यौ के ज्ञान रूपी दो समिधाओं को श्रद्धाञ्जलि रूपी दोनों हाथों में लेकर ब्रह्मचारी उस परम तत्व के समीप पहुंचता है। उन्हीं दोनों समिधाओं पर सब लोक आश्रित हैं। वहां पहुंच कर ब्रह्मचारी सर्व देवों, प्रकाशकों, ब्रह्माण्ड के चलाने वाली शक्तियों को एक ही वीणा की तारें बनी हुई एक ही स्वर अलापते सुनता है। वहां पहुंच कर द्वन्द्व से मुक्त होता है और अपने आचार्य के लिए सच्चे धन्यवाद का भाव उसके हृदय में उत्पन्न होता है।**

संसार सच्चे आचार्यों के बिना पीड़ित हो रहा है। उसका व्याकुल हृदय सच्चे पथ-दर्शकों के बिना व्याकुल होरहा है। परन्तु उधर से आशा जनक शब्द भी सुनाई देता है। शिकायत यह है कि अच्छे विद्यार्थी नहीं मिलते परन्तु शिकायत करने वाले यह भूल जाते हैं कि सच्चे आचार्य दुर्लभ होगए हैं। जिस वेद का उपदेश ऊपर दिया गया है उस वेद का प्रचार जिस देश में खुला था और जिस के आचार्यों के चरणों पर बैठकर सदाचार की शिक्षा लेने अन्य देशों के लोग आते थे, उसी देश में जब आचार्यों का अभाव है तो और किसी स्थान से क्या आशा हो सकती है। नवीन ट्रेनिंग कालिज ऐसे आचार्य उत्पन्न करने में अशक्त हैं, जहां दिन रात आचार्यों के वेतन बढ़ाने का प्रश्न उठकर कमिटियों का सा सौदा कराता है—उन शिक्षकों से आशा रखनी व्यर्थ है। हे, परमगुरो! तुम्हीं अपने शिक्षणालय के अन्दर इस देव-निर्मित भूमि के विद्वानों को खींच लो, जिससे वे सांसारिक कामनाओं पर विजय प्राप्त करके ब्रह्मविद्या का दान देने की शक्ति धारण करके विस्तृत भूमी और प्रकाश की शक्तियों की समिधा ब्रह्मचारियों के हाथों में देकर उन्हें विविध शक्तियों के एकत्र करने के लिए केन्द्र बना सकें। शमित्यो३म्।

श्रद्धानन्द सन्यासी

—:o:—

ओ३म्

श्रद्धा १२ आषाढ़ १९७७ का क्रोडपत्र

हन्टर-कमिटी रिपोर्ट की उधेड़ बुन

भूमिका

दिल्ली में ३० मार्च १९१९ को दो बार गोली चली। यह माना गया है कि निहत्थों पर गोली चली। उसके पश्चात् महात्मा गांधी जी को दिल्ली आते हुए मार्ग में गिरफ़्तार किया गया। उस पर दिल्ली में तो केवल हड़ताल ही की गई, परन्तु अमृतसर में उसके पश्चात् डाक्टर सत्यपाल और डाक्टर किचलू को अपनी कोठी पर बुला कर डिपुटी कमिश्नर ने मोटर में क़ैद कर धर्मशाला भेज दिया। गांधी जी ९ अप्रैल १९१९ की रात को गिरफ़्तार करके बम्बई की ओर लौटाए गए। किचलू और सत्यपाल १० अप्रैल को दस बजे धोखे से बुलवा कर अज्ञातस्थान को भेज दिए गए। इस पर अमृतसर में असन्तोष फैल गया। जनता डिपुटी कमिश्नर के बंगले की ओर चली। वह क्यों जा रही थी इस का पता डाक्टर फ़ौक़ की शहादत से लगता है। वह कहते हैं कि "जनता यह चिल्ला रही थी कि वे अवश्य डिपुटी कमिश्नर से मिलेंगे और आग्रह करेंगे कि जहां उनके नेता किचलू और सत्यपाल हैं वहां ही उनको भी भेज दिया जाय, यदि उन (नेताओं) को छोड़ न दिया जाय।" यह माना गया है कि ये सारी प्रजा निहत्थी थी। परन्तु जैसे दिल्ली में रोड़ों (Brick-bats) की कहानी घड़ी गई वैसी ही अमृतसर के सम्बन्ध में गढ़न्त मालूम होती है। अस्तु जनता अपने 'मां बाप' डिपुटी कमिश्नर के बंगले पर जाना चाहती थी परन्तु "मा बाप" जी कहते हैं कि उन्होंने स्वयं गोली चलाने की आज्ञा दी। पैदल और सवारी के दोनों पुलों पर गोलियां बरसीं और ३० और ४० के बीच में लाशें तड़पती हुई गिर पड़ीं। इन मुर्दों और घायलों को देख जनता पागल होगई। उस पागलपन में जो पिशाचलीला उन्होंने की उस पर सभी विचारशील राजनैतिक नेताओं तथा शिक्षित भारत निवासियों ने घृणा प्रकट की है और उन कुछ पापी पुरुषों को अत्यन्त दूषित ठहराया है।

कुछ आदमियों की पिशाचलीला के पीछे ही अमृतसर में फ़ौज आघुसी। चारों ओर दब कर सब शान्त हो गए। पकड़ी धकड़ी शुरू हुई, उस पर भी कोई न हिला १३ अप्रैल के प्रातःकाल तक यह हालत रही, यहां तक कि मृतक शरीरों की अर्थियों के साथ भी सरकारी हुकुम से बढ़कर आदमी शोक मनाने भी न गए। ऐसी शान्त अवस्था में जनरल डायर चारों ओर शोर मचाते फिरे कि "अगर तुम सरकार से लड़ना चाहते हो तो सरकार लड़ने को भी तैयार है।" शहर के कुछ स्थानों में ढिंडोरा पीटा गया कि यदि कोई जमाव होगा तो मिलिटरी उसे अब से भी तितिर बितर कर देगी। प्रथम तो डर के मारे घर से कोई निकलता ही न था कि बज़ारों में दी हुई घोषणा को सुनता, फिर बहुत स्थानों में डुगडुगी की आवाज़ कान पहुंचना भी माना गया है और यह भी स्वीकार किया गया है कि बैशाखी के मेले के कारण शहर से बाहर हज़ारों आदमी आए हुऐ थे जो शहर के "जोड़ मेल" में शरीक होने के लिए आसके थे और आए। जनरलडायर ने यह समाचार पाते ही कि जलियांवाला बाग़ में हज़ारों जमा हैं एक पल में जलियांवाला बाग़ का राह लिया। फ़ौजी हथियार बन्द सिपाहियों के साथ दो "मशीनगन" भी लेली और रामबाग़ से "अशरफ़ी चाल" चल दिए। यह रहस्य है कि ऐसी ख़बर सुनकर उन्होंने मोटर पर होते हुए भी "डबलमार्च" क्यों न कर दिया। परन्तु मेरे लिए यह रहस्य नहीं है। जिस शक्ति ने लालाकन्हैयालाल वकील के उस दिन होने वाली सभा के समाचार से अनभिज्ञ होते हुए भी उन के व्याख्यान की घोषणा डुगडुगी वाले से दिलाई थी, उसी शक्ति ने जनरलडायर को कह दिया था कि यदि पहुंचने में देर हो गई तो भून डालने के लिए समाज अधिक इकट्ठा हो जायगा। और जनरलडायर को क्या चाहिए था? खप्परवाली कराली "काली" के स्थानापन्न तो थे ही, उनके खप्पर के लिए अधिक से अधिक लहू और उनके गले के लिए बड़ी से बड़ी 'मुण्ड—माला' चाहिये थी। दोपहर जो हवाई जहाज़ जलियांवाले बाग़ पर मण्डला रहे थे वे भी तो यही देख रहे थे कि कि कब मेला पूरा भरे और जनरल साहब "बाग़ियों!" को गाजर मूली की तरह काट डालने के लिए चलें।

जनरल साहब पहुंचे तो मालूम हुआ कि अन्दर के मैदान में "मशीनगन" नहीं जासकती—मार्ग तङ्ग है। उन्हें बाज़ार में छोड़ ५० सिपाहियों को राइफल समेत अन्दर की ओर जमा कर खड़ा कर दिया। खड़ा करते ही गोली चलाने का हुकुम दिया। क्यों? क्या वह २० वा २५ हज़ार का मजमा युद्ध करने को तय्यार था। जनरल साहब कहते हैं कि उन्हें देखते ही लोग भाग चले। तब प्रश्न हुआ कि आप क्या बिना गोली चलाए उन्हें तितिर बितिर नहीं कर सके थे? उत्तर मिला कि कर तो सकता था, परन्तु उस अवस्था में फिर लौट कर वे लोग मेरी हंसी उड़ाते। यह उत्तर कैसा भद्दा है—सारा प्रेस इसकी धूल उड़ा चुका है। "फ़ायर" का हुकुम हुआ और परे के परे साफ होने शुरू होगए। सरकारी गवाही ने माना है कि ४०० मारे गए और १२०० घायल हुए। जनता में घुम और उनको देख और उनकी कहानियां सुन कर मेरा अनुमान है कि ८०० से कम मारे नहीं गए और २५०० से कम घायल नहीं हुए। तब इतनों की सूची क्यों न तैयार हुई? जनरल डायर के एक उत्तर से इस प्रश्न का भी उत्तर मिल जाता है। इस पूछने पर कि जब तुम्हारे गोली समाप्त होने पर क्या सैकड़ों भुन गए और शेष भाग गए तो तुमने घायलों की सहायता का कुछ यत्न किया—उत्तर मिला—"नहीं, निसन्देह नहीं। यह मेरा [illegible] था। परन्तु हस्पताल मौजूद थे [illegible] थे डाक्टर भी थे। घायलों का काम [illegible] सहायता मांगना था। परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया क्योंकि वे स्वयं जानते थे कि (यदि उन्हों ने सहायता चाही) तो वे नाजायज स-

माज मे होने के कारण गिरिफ़तार कर लिए जायगे।" जो कारण घायलों के खुले हस्पतालों से सहायता की याचना न करने का था, वही कारण मारे गए तथा घायल हुओं की पूरी सूची न तय्यार होने का था। सेवा-समिति की ओर से जो सूची तय्यार हो रही थी उसमें भी यही बाधा थी। जिन के घर के दो गोली से मारे गए थे सेवासमिति के सेवकों को भी सरकारी गुप्तचर समझ कर कह देते कि उनका कोई नहीं मारा गया। डायरशाही ने यह सिद्ध कर दिया था कि यदि घर के एक आदमी पर बाग़ी होने का सन्देह हुआ तो अपनी जान दे देने पर भी उस के सब सम्बन्धी बाग़ी समझे जायंगे। और इन्जील के मानने वालों के लिए यह विचार है भी स्वाभाविक, क्योंकि वे तो अबतक बाबाआदम के लिए पाप का फल भोग रहे हैं।

लाहौर को छोड़ कर सारे पंजाब में जो कुछ हुआ वह केवल जलियांवालेबाग़ के खूनी घात का हाल सुन कर हुआ। जिन ज़िलों में, खुली बग़ावत का अपराध जड़ कर, मारशलला का भयंकर प्रहार किया गया, उन में जाकर देहातों से ज़मींदारों तक से मैंने बात चीत की। उन सब का कहना यह था कि न कोई साज़िश थी और न कोई बग़ावत; जनता ने एक ही समाचार सुना था कि अमृतसर के अन्दर उनके हज़ारों भाई सेना ने भून डाले। इन सादे आदमियों का ख़याल था कि रेलगाड़ियां और फ़ौज उन के भाइयों के घात के लिए जारही हैं और इस लिए यदि वे रेल की पटरी उखाड़ देंगे तो अधिक फ़ौज न आसकेगी और उनके भाई बच जायंगे। इस के सिवाय यह विचार भी था कि रौलट एक्ट के विरुद्ध आन्दोलन नहीं छोड़ना चाहिए और कष्ट सहन करते हुए भी अपने भाव प्रकट कर देने चाहिए। इसे साज़िश कहो, बग़ावत कहो, बृटिश राज को पलट देने का यत्न कहो -कुछ भी कहो—परन्तु था वही जो मैंने ऊपर लिखा है। एक बात कृषिकारी देहातियों ने और कही।—"स्वामी जी! यदि कोई साज़िश होती तो क्या हवाई जहाज़ और मशीनगनें भी गोरों को बचा सकतीं? हममें से तो ऐसा किसी का विचार ही न था। हम निरपराधियों पर अत्याचार हुआ है। परन्तु फिर भी जो कुछ हुआ अच्छा ही हुआ। हम समझते थे कि अंग्रेज़ का बच्चा चाहे कैसा भी कड़ा हो, परन्तु अन्याय नहीं करता, झूठ नहीं बोलता। इस लिए हम इन्हें देवता समझ कर इन से दबते थे। मारशलला के दिनों ने सिद्ध कर दिया कि ये लोग स्वार्थरक्षा के लिये झूठ भी बोल सकते और अन्याय भी कर सकते हैं। यहां तक गिर सकते हैं जहां तक हमारी गुलामक़ौम भी नहीं गिरी हुई है। दूसरा लाभ यह हुआ कि हमें हवाई जहाज़ों और मशीनगनों की हद मालूम हो गई कि वह क्या कुछ कर सकते हैं।" मैं चाहता हूं कि बृटिश गवर्नमेन्ट नौकरशाही की इस घटना पर एकान्त में विचार करे और सोचे कि जो अमानत उनके और हमारे सांसारिक मालिक, पंचम जार्ज, ने उन्हें सौंपी है उसमें वे ख़यानत तो नहीं कर रहे।

मारशलला जारी हुआ। उसने क्या क्या अत्याचार किए इस से केवल समाचार पत्रों के कालम ही स्याह नहीं हो चुके, इस की साक्षी केवल महात्मा-गान्धी वाली कमिटी ने ही नहीं दी, इस का समर्थन केवल हन्टर कमिटी के तीन हिन्दोस्तानी सभ्यों ने ही नहीं किया प्रत्युत लार्ड हन्टर और उनके चारों गोरे साथियों को भी उस अत्याचार को छिपाने का हौसला नहीं पड़ा। संसार में इस मार्शलला की बदौलत बृटिश गवर्नमेन्ट की बदनामी हो रही थी। गवर्नमेन्ट के हिन्दोस्तानी मित्रों ने भी कह दिया कि यदि इस अत्याचार का आन्दोलन न कराओगे तो आपके लिए हम भी "कोई ख़ैर का कलमा" पढ़ने के योग्य न रहेंगे। जिन राष्ट्रों के साथ मिलकर जर्मनी की शक्ति, न्याय और निर्बल जातियों की रक्षा के नाम पर लाड़ी थी, उन मित्र राष्ट्रों ने भी सन्देह की दृष्टि से जब भौंएं टेढ़ी करलीं तो विवश होकर आन्दोलन के लिए एक कमिटी बनाई गई और उन के प्रधान लार्डहन्टर नियत किए गए। इसी लिए कमिटी का नाम हन्टर कमिटी प्रसिद्ध हुआ। किस प्रकार इस कमेटी के सामने साक्षी पेश करने के निमित्त शर्तें पेश की गईं, किस प्रकार पञ्जाब गवर्नमेन्ट ने उन शर्तों का तिरस्कार किया, किस प्रकार गांधी, नहरू, तय्यब जी, सी० आर दास इत्यादि से प्रसिद्ध कानूनदां लोगों ने निष्पक्षपात आन्दोलन से एक बड़े अन्याय पर से सन्देह का घूंघट उठा दिया, किस प्रकार हन्टर कमिटी भी कुछ अत्याचारों को न छिपा सकी, किस प्रकार बहुत काल तक गवर्नमेन्ट हिन्द, भारत सचिव से अपराधियों को बचाने के लिए गोष्ठी करती रही और लार्ड-चैम्सफ़ोर्ड ने अपने अनिवार्य शिक्षक के दबाव से किस प्रकार "सरमाइकल ओडायर" पर नरम सी झाड़ डालने के पीछे उसे आसमान पर चढ़ाने की कोशिश की और किस प्रकार भारत सचिव, मिस्टर मान्टेगु, ने बृटिश गवर्नमेन्ट की प्रतिष्ठा? (Prestige) क़ायम रखने के 'ख़याले-ख़ाम' से दुम-बुरीदा लार्डचेम्सफ़ोर्ड पर अपनी गवर्नमेन्ट की असीम विश्वास की घोषणा की। ये घटनाएं हैं जिन की कतरब्योंत करते हुए भारत के राजनैतिक नेताओं और योग्य सम्पादकों ने बृटिश गवर्नमेन्ट के बनाए हुए सुन्दर गाउन के चीथड़े उड़ादिए। इन पर कुछ भी लिखने की ज़रूरत नहीं है। फिर मैंने क्यों इस विषय पर लेखनी उठाने का विचार किया?

इस लेख माला में न तो मैं इण्डियन नैशनल कांग्रेस से स्थापित कमेटी के समर्थन में योग दूंगा और नाहीं हन्टर-कमेटी की रिपोर्ट की विस्तृत पड़ताल करूंगा। मेरा उद्देश्य इस लेख माला में उन विषयों पर लिखने का है जिन पर मैं कुछ नया प्रकाश डाल सकता हूं। और इन सब में प्रथम विषय सत्याग्रह का है।

क्या पंजाब के विप्लव का ज़िम्मेवार सत्याग्रह है?

लार्ड हन्टर और उन के चारों गोरे सहकारी सभ्य कहवा देते हैं—"हमें यह कहने में शंका नहीं कि पंजाब में और अन्यत्र मिस्टर गांधी की तहरीक ने मनुष्यों के बड़े भाग में कानून के न पालन करने के साथ परिचय तथा सहानुभूति का भाव उत्पन्न कर दिया था और शासन नियम के अनुसार चलने के भाव जो समाज तथा विप्लव के बीच खड़े हो जाते हैं उनकी ऐसे समय में जड़ खुद गई थी जब कि उनकी पूरी शक्ति की

श्रद्धा

आर्यसमाज में एकता के शुभ चिन्ह।

संसार में चारों ओर परिवर्तन देख कर आर्यसमाज का भी आसन हिलने लगा है। जब से विश्वव्यापी घोर युद्ध आरम्भ हुआ था तब से ही मैंने यह घोषणा देनी आरम्भ की थी कि यदि यूरोप और अमेरीका की लोभप्रधान सभ्यता को कोई शक्ति विजय कर सकती है तो वह आर्यों की प्राचीन सभ्यता है। जब तक लोभ के स्थान में निष्कमता का राज्य नहीं लाया जाता तब तक यूरोप और अमेरीका में, और उसके साथ ही एशिया और अफ्रीका में भी शान्ति का राज्य नहीं आसकता। आर्य समाज के काम करने वालों को मैं विशेषतः जगाता रहा और उन्हें यह जतला कर कि वे ही प्राचीन आर्य सभ्यता का पुनः प्रचार कर सकते हैं, उन्हें उत्तेजित करता रहा कि अपने तुच्छ वैयक्तिक द्वेषों को दूर करके एकमन से इस बड़े सुधार में लग जावें।

चार आषाढ़ के आर्य गजट में जो मुख्य लेख निकला है, उसे देख कर मुझे बड़ा सन्तोष हुआ। लेख का शीर्षक है—"*आर्य समाज में इनक़िलाब*" यह बतला कर कि संसार में परिवर्तन हो रहा है और यह मान कर कि दुनिया और धर्म का एक ही रास्ता है, आर्य गजट के योग्य सम्पादक लिखते हैं कि "केवल आर्य समाज पर ही रह रह कर नज़र उठती है" और आर्य समाज ही इस आवश्यता को पूरा करना चाहता है, मानते हैं कि उस के अन्दर भी एक बड़े परिवर्तन की भारी आवश्यकता है। वह परिवर्तन क्या होना चाहिए? इसके उत्तर में सम्पादक आर्य गजट लिखते हैं—"आर्य समाज में इनक़िलाब लाने के लिए.........सब से पहिली आवश्यक बात यह है कि *आर्य समाज* एक हो जावे। आर्य समाज इस समय बिखरा हुआ है, हर एक पार्टी अपनी अलहदा कोशिशों से अपनी शक्ति को छिन्न भिन्न बहुत कुछ खो रही है। इस समय अधिक शक्ति तो इस बात के लिये व्यय होती रही है कि हमारी पार्टी के आदमियों के साथ हमारे आदमी जुड़े रहें, हमारी सभा के साथ हमारी समाजें पूर्ववत् सम्बन्धित रहें" । इस अवस्था को आर्यसमाज की संस्था में अधिक बतलाते हुए सम्पादक महाशय लिखते हैं—"पार्टियों का बखेड़ा अब बहुत देर तक कायम नहीं रहना चाहिये अगरचे अब आपस में प्रेम विश्वास की लहर चल रही है तो हम यह कांटा, यह पर्दा जो तरक्की के रास्ते में हायल है क्यों न दूर कर दिया जावे ताकि एक ही संगठन के नीचे सारा काम हो सके"।

आर्य गजट के सम्पादक जी का यह प्रस्ताव बड़ा ही आवश्यक और सार गर्भित है। परन्तु इस प्रस्ताव को अमल में लाने के लिये आवश्यक है कि आर्यसमाज की सब पार्टियों के वास्तविक नेता मिलकर बात चीत करें, और खुले दिल से परस्पर के द्वेषभाव को दूर करदें। सम्वत् १९७४ के अन्तिम मास में, जब मैंने धर्मप्रचार के लिये पंजाब का दौरा किया था तो प्रत्येक स्थान में दोनों पार्टियों के आर्यपुरुष मिलकर एक हो जाने के लिये तैयार मालूम होते थे। फिर जब कार्तिक के अन्त में मैं अमृतसर की आर्यकुमार सभा के वार्षिकोत्सव में सम्मिलित हुआ तो यह देख कर प्रसन्नता हुई थी कि दोनों पार्टियों के आर्यकुमार उस उत्सव को इकट्ठे मिल कर मना रहे थे। उस समय भी मेल का प्रस्ताव हुआ था और जाति अपील लेने पर मैंने यह जिम्मा लिया था कि यदि लाहौर में मुख्य नेता आपस में मिल जावें तो मुफ़स्सल के सर्व आर्य समाजों को मैं इकट्ठा कर दूंगा। मैं समझता हूं कि इस समय भी उसी नियम पर काम करने से सफलता हो सकेगी।

आर्य गजट के सम्पादक जी ने दो अंशों में और इनक़िलाब की ज़रूरत बताई है, एक यह है कि *भारी विद्वान् उपदेशक रखे जावें* और दूसरे यह कि *आर्य समाज का बच्चा, बच्चा, आर्यसमाज के लीडर और आर्यसमाज के मेम्बर, इसके उपदेशक और प्रीचर वैदिक धर्म की आग से अग्निरूप बने हुए हों।* और अन्त में लिखते है—"हम चाहते हैं कि यह इन क़िलाब यदि कल आना है तो आज आवे लेकिन अकेला इनसान इनक़िलाब पैदा करने में असमर्थ है। आज कल मिल कर काम करने का वक्त है, संघ शक्ति में भारी ताक़त है। यदि आर्यभाई सच्चे अर्थों में आर्यसमाज की जरूरत समझते हैं तो अब उन्हें मुर्दों की तरह नहीं रहना चाहिये और इस पर अपने विचार प्रकट करके और किसी ख़ास नतीजे पर पहुंच कर आर्यसमाज में इन क़िलाब लिखना चाहिये ताकि हम दुनिया को पलट सकें।" जब सम्पादक महाशय ने गोला छोड़ दिया है तो लेख तो निकलेंगे ही और दोनों ओर से निकलेंगे, परन्तु उन से बहुत लाभ नहीं होसकेगा। उत्तम यह है कि आर्यसमाज में शक्तिशाली प्रत्येक विचार के मनुष्यों के प्रतिनिधि स्वयं इकट्ठे होकर विचार करें। यदि वे सब सच्चे हृदय से किसी परिणाम पर पहुंचेंगे तो उन के साथ आर्यसमाज के सर्वसाधारण बिना ननु नच के सम्मिलित हो जायेंगे। यह मामला ऐसा साफ़ है कि इस के लिए युक्तियों पेश करने की कोई जरूरत मालूम नहीं होती। पञ्जाब के अन्दर यदि पार्टीबन्दी दूर होकर एक संगठन के नीचे सब काम होने लग जावें तो अन्य प्रान्तों के भी आर्य भाई आप से आप उनके पीछे लगजायेंगे।

कोई सुने वा न सुने यदि कोई अच्छा विचार अपने अन्दर आवे तो उसे प्रकट कर देना चाहिये मेरी सम्मति में जो महानुभाव आर्य समाज की बिखरी हुई शक्तियों को इकट्ठा कर सकते हैं, और यदि चाहें, तो बखेर भी सकते हैं, उन्हें महात्मा हंसराज जी एक ओर महाशय रामकृष्ण जी दूसरी ओर भली प्रकार से जानते हैं। यदि दोनों महाशय अपने पांच पांच मन्त्रियों को इकट्ठा कर के एक नामावली बनालें और अपने अपने सहायकों के साथ विचार करें तो किसी अच्छे परीणाम पर पहुंचने की सम्भावना है। यदि वे महाशय जिनके नाम मैं भूल गया हूं, बुरा न मानें तो मैं अपनी बुद्धिअनुसार एक सूची दे देता हूं:—

कालिज पार्टी—

(१) महात्मा हंसराज जी (२) प्रिन्सपल साईं दास जी (३) बख्शी टेकचन्द जी (४) लाला रामप्रसाद जी बी० ए० (५) लाला देवीचन्द जी एम० ए० (६) पं० लब्भूराम जी हिसार (७) लाला दुर्गादास जी वकील (८) पं० भगवद्दत्त जी बी० ए०

महात्मापार्टी—

(१) महाशय रामकृष्ण जी (२) महाशय कृष्ण जी बी० ए० (३) प्रोफ़ेसर रामदेव जी (४) पं० विश्वम्भरनाथ जी (५) रायबहादुर ठाकुरदत्त धवन (६) राय रोशन लाल जी (७) पं० ठाकुरदत्त शर्मा अमृत धारा (८) महाशय देवराज जी।

मैं इस विषय में भी अपनी सम्मति देना चाहता हूं कि यदि किसी स्थिर एकता का विचार हो तो सब से पहिले यह निश्चय कर लेना चाहिये कि आर्यसमाज के सभासद् बन रहने के लिए कौनसे मुख्य सिद्धान्त हैं जिन को मानना आवश्यक है, और कौनसे गौण सिद्धान्त हैं, जिन से मत भेद रखते हुए भी एक मनुष्य आर्यसमाज का सभासद् रह सकता है। जब तक इसका निर्णय न हो हो जावेगा, तब तक वैयक्तिक झगड़ों में सिद्धान्त के प्रश्न को बलात्कार से लाने का रोग दूर न होगा और सामूहिक एकता स्थिर न रह सकेगी परन्तु इस विचार को ससार बनाने के लिये आवश्यक है कि कुछ विद्वान् सन्यासी महात्माओं को भी शामिल किया जावे। जो अपने विषय में तो मैं पहिले ही कह देता हूं कि यद्यपि मेरा इस समय किसी विशेष पार्टी से सम्बन्ध नहीं है तथापि पुराने संस्कार

दोनों दलों के आर्य समाजियों के दिलों में मौजूद ही है, इसलिये मेरे सम्मिलित होने से तो कोई लाभ नहीं होगा। मैं ३ नाम पेश कर देता हूं यदि उन महानुभावों को विचार में शामिल होने के लिये प्रेरणा की जा सके तो कुछ अच्छा परिणाम निकल जाय:—

(१) श्री स्वामी सर्वदानन्द जी सन्यासी (२) श्री स्वामी सत्यानन्द जी सन्यासी (३) श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी सन्यासी।

एकता की आवश्यकता को आर्य पुरुष अनुभव करते हैं वा नहीं, इसी से सिद्ध हो जायेगा कि मेरे इस प्रस्ताव पर क्या अमल होता है!

श्रद्धानन्द सन्यासी

गुरुकुलीय साहित्य परिषद्

पाठकगण!

आषाढ़ मास का प्रारम्भिक भाग कुल में बड़े आनन्द और समारोह से मनाया गया। ३ आषाढ़ को साहित्य परिषद् सभा का जन्मोत्सव हुआ। २ बजे से प्रारम्भ होकर ४ बजे सभा समाप्त हो गयी। सारा कार्य क्रम मनोरञ्जक और नये उत्साह को संचारित करने वाला था। इस दिन आकाश मण्डल मेघों से आच्छन्न था, आदित्य भगवान ने अपने पुण्य दर्शन न दिये थे। सर्व वक्ताओं ने एक सम्मति से यही प्रस्ताव किया कि साहित्य परिषद् ग्रन्थमाला के स्थान पर आदित्य नाम के मासिक पत्र को प्रकाशित करें। अन्त में श्री सभापति जी ने मासिक पत्र सबन्धी कार्य को स्थिर करने के लिए दो बातों अर्थात् "१ मन्त्री २,३ वर्षों के लिए स्थिर बनाया जाय और २ सम्पादक भी गुरुकुलीय उपाध्यायों में से ही हों" की ओर ध्यान आकर्षित कर सभाविसर्जित की। तदनन्तर जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में ५¼ बजे महाविद्यालय और विद्यालय में हौकी का सामुख्य हुआ। विद्यालय के खिलाड़ियों का परिश्रम प्रोत्साहनीय था परन्तु भाग्य अनुकूल न था।

रात को जन्मोत्सव के ही उपलक्ष्य में सहभोज किया गया—सहभोज में ब्रह्मचारियों ने श्लोक गाकर आमन्त्रित महानुभावों को आह्लादित किया। इस प्रकार साहित्य परिषद् का जन्मोत्सव सर्व त्रुटियों से मनोरञ्जक और आशामय रहा।

इस के आगे ७-८ आषाढ़ को साहित्य परिषद् की ओर से दो विशेष अधिवेशन हुए। इन में श्री प्रो० कुलकरणी जी, जो कि ग्वालियर रियासत के कौलेज में इतिहास के प्रोफेसर हैं, ने ग्रीक और रोमन इतिहास पर दो मनोरञ्जक व्याख्यान दिये।

तीसरा विशेष अधिवेशन ६, आषाढ़ को प्रातः काल ७½ से १२ बजे तक हुआ। इस दिन साहित्य परिषद् की ओर से प्रतिनिधि सभा—का अधिवेशन किया गया जो कि पुस्तकालय भवन में हुआ। दर्शक वृन्द सम्पादकगण और प्रतिनिधि मण्डल के लिए अलग २ स्थान नियत किए। पूर्व दिशा के मुख्यद्वार के सामने प्रधान का आसन था। प्रधान का आसन श्री स्वामी जी महाराज ने अलंकृत किया था। सभापति जी की बांई ओर निर्णायक समिति के सभ्य तथा विरोधी मण्डल के नेता अपने दल बल के साथ और दांयी ओर मान्य दर्शकगण और प्रधानामात्य अपने मन्त्रि—मण्डल के साथ बैठे थे। ठीक समय पर सभा आरम्भ की गई। प्रथमतः ब्र० भीमसेन ने ईश प्रार्थना की तदनन्तर प्रधानामात्य ब्र० यशपाल ने अपना भाषण सुनाया और हिन्दू अन्तर्जातीय विवाह बिल को उपस्थित किया। बिल उपस्थित किये जाने के अनन्तर संशोधन उपस्थित किये गये। विवाद आरम्भ हुआ। दोनों ओर के वक्ता पूरे जोश में थे। विरोधी दल के नेता ब्र० विद्यारत्न जी १४ ने अपना भाषण विवाद के मध्य में दिया। विवाद ११½ बजे तक चला। विवाद के अनन्तर सम्मति संग्रह किया गया। प्रथमतः संशोधनों पर सम्मतियां ली गयी। दोनों ही संशोधन बहुसम्मति से अस्वीकृत किये गये। बिल पर सम्मति ली गयी और यह बहुसम्मति से स्वीकृत किया गया। निर्णायक समिति ने ब्र० भीमसेन के भाषण को उत्तम निश्चित किया। जिस के लिए इन्हें पारितोषक दिया गया। तदनन्तर निश्चित किया गया कि प्रधानामात्य अगली प्रतिनिधि सभा में राज व्यवस्था सम्बन्धी बिल उपस्थित करें। इस के लिये प्रधानामात्य को निश्चित तिथि से १ मास पूर्व अपना बिल प्रकाशित करना होगा। उस के १५ दिन बाद तक प्रस्ताव और संशोधन प्रधानामात्य के पास पहुंच जाने चाहियें। इस समय के पीछे आये हुये प्रस्तावों वा संशोधनों पर प्रतिनिधि सभा में विचार न हो सकेगा।

हमें आशा है कि अगले अङ्कों में क्रमशः हम आपके सामने प्रतिनिधि सभा का विस्तृत विवाद सहित वर्णन दे सकेंगे।

भीमसेन देवभिक्षुः
मन्त्री साहित्य परिषद्

"हिन्दू अन्तर्जातीय विवाह बिल"

उद्देश्य—

क्योंकि हिन्दू विवाह नियम की वर्तमान में की गई व्याख्या के अनुसार हिन्दुओं की जातियों तथा उप जातियों में हुए अन्तर्जातीय विवाह नियमानुकूल नहीं समझे जाते; साथ ही इस व्याख्या के विवादग्रस्त होने के कारण वैयक्तिक मामलों तथा सामाजिक उन्नति में बहुत सी अड़चनें उपस्थित हुई हैं। इस लिए इस प्रकार के विवाहों के होने में जो क़ानूनी रुकावटें हैं उनको सार्वजनिक लाभों की वृद्धि के विचार से दूर करने की आवश्यकता समझ कर यह क़ानून बनाया जाता है; जो कि १ वैशाख १९७८ विक्रमीय सम्वत् से लागू होगा।

नाम—

इस कानून का नाम "हिन्दू अन्तर्जातीय विवाह कानून" (Act) होगा।

क्षेत्र—

यह नियम सम्पूर्ण भारतीय साम्राज्य में लागू होगा। व्यक्तिगत क़ानून होने के कारण यह प्रत्येक भारतीय हिन्दू प्रजा पर लागू होगा; चाहे वह कहीं रहती हो।

नियम—

१. हिन्दुओं में भिन्न २ जातियों तथा उपजातियों में हुए विवाह नियम विरुद्ध नहीं समझे जाएंगे, चाहे कोई हिन्दू रिवाज या हिन्दू नियम का आशय इस के विरुद्ध समझा जाता हो।

२. एक पति की उपस्थिति में एक पत्नी, तथा एक पत्नी की उपस्थिति में एक पति दूसरे विवाह के अधिकारी न होंगे;

सिवाय इसके

जब कि वे सन्तानोत्पत्ति के बाधक रोगों से ग्रस्त हों या अन्य अवस्थाओं से बाधित हों।

३. विवाह समय में वर वधू की आयु कम से कम क्रमशः २५ और १६ वर्ष की होनी चाहिए।

गुरुकुल शिक्षा प्रणाली और परीक्षा विधि

गुरुकुल की पाठ प्रणाली पर कभी २ यह दोष लगाया जाता है कि इस में परीक्षक घर के होते हैं और परिक्षायें बड़ी नर्म होती हैं। ऐसे महाशयों से हम जून के इस मर्डनरिव्यू में अमेरिका की प्रसिद्ध यूनिवर्सिटी 'इओवा' के प्रोफेसर डा० सुधीन्द्र बोस एम. ए, पी. एच डी द्वारा "शिक्षा" विषय पर लिखे लेख को ज़रा ध्यान से पढ़ने की प्रार्थना करते हैं। भारतीय विद्यार्थियों की बुद्धि, परिश्रम और विद्याभिरुचि की, अपने अनुभव के आधार पर प्रशंसा करते हुये लेखक महाशय कहते हैं कि भारत में जो इतने अधिक विद्यार्थी फेल होते हैं, उसका दोष उन के माथे मढ़ना भारी भूल है परन्तु

"Surely, Surely there is something radically wrong with the whole examination system. I am inclined to believe that examinations in India are unnecessarily stiff, that they are more difficult in India than most other countries, and certainly more difficult than in England"

अर्थात्—वस्तुतः, सारी परीक्षा विधि में कोई मौलिक दोष है। मेरी सम्मति है कि भारत में परीक्षायें आवश्यकता से अधिक कठोर हैं, वे प्राय अन्य सब देशों से अधिक कठिन हैं और इंगलैण्ड से तो अवश्य ही अधिक कठिन हैं"।

अमरीका की परीक्षा प्रणाली को बताते हुये और यह दर्शाते हुये कि कितने अधिक छात्र वहां पास होते हैं विद्वान् लेखक महाशय अन्त में कहते हैं कि

"...... but under no circumstances should they (examinations) be made so hard as to become great *"deterrent factor in the way of true learning"*"

अर्थात्—किसी भी अवस्था में वे (परीक्षायें) इतनी सख्त कभी नहीं होनी चाहियें कि जिससे वे "शिक्षा में बड़ी भारी रुकावट" हो जावें।

गुरुकुल परीक्षा विधि और सरकारी परीक्षा विधि में वास्तव में यही बड़ा भारी भेद है। हमारी परीक्षा-विधि शिक्षा में रुकावट के रूप में नहीं है जैसा कि भारत के अन्य सरकारी विश्वविद्यालय में है। हमारी प्रणालि में विद्यार्थि की बुद्धि और ज्ञान की वास्तविकता की, और सरकारी विश्वविद्यालयों में छात्रों के घोटे और रगड़े की परीक्षा होती है। हमारे लिए परीक्षा एक बाह्य साधन मात्र है परन्तु सरकारी विश्वविद्यालयों के लिए यही एक उद्देश्य है। दोनों में भेद स्पष्ट है। गुरुकुल पर आक्षेप करने वालों को यह समझ लेना चाहिए कि हमारी परीक्षा प्रणाली ऐसी है जिसका अनुकरण सभ्य-जगत् में सर्वत्र होता है परन्तु सरकारी विश्वविद्यालयों की प्रणालि ऐसी भद्दी और निकम्मी है कि जिसका अनुकरण किसी और सभ्य देश में तो क्या, उनके सञ्चालकों के अपने देश इंगलैण्ड में भी नहीं होता। शिक्षित दल से अन्त में हम इतना ही कहेंगे कि उसे अब गुरुकुल शिक्षाप्रणालि का महत्व समझना चाहिये।

पुस्तक–समालोचना।

नैपोलियन बोनापार्ट (सचित्र)

अंग्रेजी में फ्रान्स के सम्राट् नैपोलियन पर भिन्न २ दृष्टि से लिखे गये कई जीवन चरित्र मिलते हैं परन्तु उनमें सब से उत्तम और प्रामाणिक "मि० एबट" का समझा जाता है। प्रस्तुत पुस्तक उसी का अनुवाद है जो कि "विविध भाषा मर्मज्ञ" श्रीयुत बा० हरिकृष्ण जौहर, साहित्यालंकार द्वारा किया गया है। अनुवाद उत्तम, सरल, स्पष्ट और सुगम भाषा में हुआ है। "सदा-समर-विजयी फ्रान्स सम्राट्" नैपोलियन के सुन्दर चित्र के अतिरिक्त पुस्तक में १५ और मनोहर चित्र हैं जो कि सोने में सुगन्ध का काम करते हैं। आकार बड़ा, पृष्ठ संख्या २३४; काग़ज़ मोटा और छपाई साफ़-सुथरी है। हिन्दी-जगत् में अपनी अनूठी पुस्तकों के कारण धूम मचाने वाली 'हरिदास एण्ड को कलकत्ता द्वारा प्रकाशित। मूल्य २॥) जो कि पुस्तक की उपयोगिता को दृष्टि में रखते हुए बहुत नहीं है।

नवजीवन निबन्ध-माला सं० ५, ६

(क) *नेटाली हिन्दू*—पृष्ठ संख्या १६० मूल्य ॥=) डाक व्यय पृथक्।

(ख) *भारतीय नवयुवकों को राष्ट्रीय सन्देश* पृष्ठ संख्या ११६ मूल्य ॥)

दोनों पुस्तकों का आकार मझोला; काग़ज़ चिकना छपाई उत्तम है।

पहिली पुस्तक के लेखक श्री० भवानी दयाल जी हैं जिनका नाम हमारे पाठकों से छिपा हुआ नहीं है। प्रवासी भारतवासियों के लिए आप चिरकाल से आन्दोलन कर रहे हैं। प्रस्तुत पुस्तक में भी इसी विषय का समावेश है। नेटाल में गए हुए भारतीयों में मांस भक्षण, और मदिरापान के अतिरिक्त "ताजिया-परस्ती" नामक कुप्रथा का चिरकाल से प्रचार है। लेखक महाशय ने एक "नेटाली हिन्दू" के जीवन का कथा रूप में सच्चा चरित्र खैंच कर इन कुप्रथाओं का, बड़ी उत्तम रीति से, दोष-दर्शन करवाया है। पुस्तक काम की है।

दूसरी पुस्तक में महात्मा गांधी, लाला लाजपतराय, मि० ह्यूम, मि० ऐण्ड्रयूज़, महात्मा गोखले, मिसेज़ बिसेण्ट आदिक देशभक्तों के समय २ पर नवयुवकों के प्रति दिये हुये भाषणों का संग्रह है जो श्रीयुत रघुनाथ प्रसाद जी द्वारा किया गया है। संग्रह उत्तम हुआ है परन्तु एक बड़ी भारी कमी जो हमें खटकती है—उसे बिना कहे हम नहीं रह सकते। वह यह कि संग्रह कर्ता महाशय ने कुछ ऐसे प्रसिद्ध देशभक्त महानुभावों के भाषणों को कोई स्थान नहीं दिया जिन की आयु का अधिकांश ही नवयुवकों को सुधारने, शिक्षित करने और उपदेश देने में व्यतीत हुआ है। उदाहरण के लिए श्री–पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी, महात्मा हंसराज जी, पं० मालवीय जी, सर आशुतोष मुकुर्जी, प्रिन्सिपल विस्वानी इत्यादि। भारतीय नवयुवकों के हित के लिए इन देशहितैषी जनों ने जो काम किया है, वह किसी से छिपा हुआ नहीं है। आशा है, कि अगले संस्करण में यह कमी दूर कर दी जावेगी। पुस्तक, तथापि, उपयोगी है और नवयुवकों के हाथ में देने योग्य है।

The Indian medical Question— What Should we do?

लेखक श्रीयुत गोविन्द अमृत वैद्य। दाम ।=) डाकव्यय -)

१०३ पृष्ठ की इस पुस्तक में यह दिखाने का प्रयत्न किया गया है कि दवाइयों से स्वास्थ्य रक्षा के स्थान में स्वास्थ्य हानि होती है। लेखक महोदय ने भारत की महात्माओं और प्रसिद्ध पाश्चात्य डाक्टरों के कथनों से अपने मन्तव्य को पुष्ट करते हुये "स्वभाविक इलाज" की आवश्यकता बताई है। पुस्तक के अन्त में भारत में आज कल प्रचलित "एलियोपैथी" दवाईयों के दोष दिखाये हैं जो, शायद, युक्तियुक्त ही प्रतीत होते हैं। लेखक का उद्योग सराहनीय है। आकार छोटा; छपाई और कागज़ साधारण। मिलने का पता–रामवाड़ी; डाक, अमरेली; (काठियावाड़)।

विचार तरंग

जलियां वाला बाग़

(श्रद्धा के लिए विशेषतया लिखित)

गतांक से आगे

(६)

जनरल डायर ! तुम्हारे गोले बारूद उस दिन बेशक तुम्हारे न चाहते हुए चुक गये; किन्तु (मेरा) प्रेम दया और न्याय का अक्षय भंडार कभी चुक नहीं सकता। तुम्हें अपनी उन विनाशक सामग्रियों के चुक जाने का शोक न होवे, क्यों कि वह चुकजाने वाली ही थी चाहे कितनी ही होती। वह उतनी ही विनश्वर था जितना कि तुमने उससे मारे जाने वाले भारतवासियों काले देहों को समझा थी और जितना कि स्वयं तुम्हारा गोरा देह नश्वर है। ऐसी २ और भी जितनी संसार की विनाशी वस्तुयें हैं उन में से किसी का भी भरोसा करना बड़ा भारी धोखा खाना है। सभी अदूरदर्शी जो कि इन चुक जाने वाली तथा विनाशक वस्तुओं का सहारा लेते हैं हाथ मल पछताते रहे हैं, और पछतायेंगे, क्योंकि ये वस्तुयें किसी की भी रक्षा नहीं कर सकतीं केवल नाश ही करसकती हैं।

(७)

यह बात तुम्हें यदि ठीक न मालूम होती हो तो कुछ प्रतीक्षा करो। 'हन्टर कमेटी' सूचना की नहीं, किसी अन्य घोषणा की नहीं। किन्तु अपने ही जीवन में आने वाले उस क्षण की, जबकि तुम्हें 'किसी से डंसे जाने का' भय न रहेगा, जब कि पंजाब की रक्षा की चिन्ता या अपनी रक्षा की चिन्ता तुम्हें न रहेगी, जब कि किसी से प्रशंसा या निन्दा-पत्र आने की आशा या शंका न रहेगी, जब कि तुम्हें 'भारत के ३५ वर्षों के अनुभव' की, अपना मार्ग दिखाने के लिए आवश्यकता न प्रतीत होगी और जबकि अपने सिवाय संसार में कुछ अपना न दीखेगा। उस समय अपने आप से पूछना कि यह ठीक है कि नहीं।

जलियानवाला बाग़ ! तुम मुझे क्या स्मरण दिलाओगे ! क्या तुम मुझे किसी के पाप कर्मों की याद दिलाया करोगे। तब मुझे ऐसे स्मारक की ज़रूरत नहीं। मेरे मन को तो जो शीघ्र ही उल्टी तरफ़ खिंच जाता है केवल उन्हीं बातों का निरन्तर स्मरण दिलाए जाने की ज़रूरत है जो कि कल्याण की तरफ निर्देश करती हैं।

(८)

नहीं मेरी प्रातः स्मरणीया भूमि ! तुम मुझे तेरे उन भाईयों का शुभकामना और भक्ति के सहित सदा स्मरण दिलाया करना जिन्होंने कि स्वदेश के काम में तेरी गोद में बैठ कर अपने आपको बलिदान कर दिया। जब २ चित्त में तेरा दृश्य आवे तब तब उन्हीं भाइयों का यह शिक्षाप्रद पावन स्मरण होवे जिस द्वारा कि वह मेरा मन दिन प्रतिदिन पवित्र और बलवान् होता जावे। किन्तु इसके अतिरिक्त यदि कुछ स्मरण होवे तो यही होवे कि 'जो तेरे लिए कांटे बोता है तू उस के लिए फूल बो (स्फुट)'—कि जो तुम्हें हानि पहुंचाता है तू उसकी हानि करके वस्तुतः अपनी हानि मत कर—कि 'यदि दुष्ट अपनी दुष्टता नहीं छोड़ता तो क्या सुजन को अपनी सुजनता छोड़ देनी चाहिए (दयानन्द)'। और कुछ नहीं। तुम्हारी संपूर्ण घटना इसके अतिरिक्त और कुछ भाव न उपजावे—वह (बहुत से निरपराध अजान लोगों पर बाल और बूढ़ों पर) सनसनाती हुई गोलियों की भयंकर वर्षा, वह मरते हुओं की दुःखभरी आहें, वह इतने दिनों तक पड़ी सड़ती हुई लाशें और फिर उनके सम्बन्धियों के शोक दग्ध हृदयों से निकलते हुवे उच्च निश्वास—वह सब कुछ भी चित्त में यही साधु भाव उपजावे, इस के विपरीत और कुछ कुभाव न उपजावे।

धर्मम्

—:०:—

गुरुकुल–जगत्

गुरुकुल उत्तर हरियाना भैंसवाल (रोहतक):—

इस गुरुकुल के खोले जाने का निश्चय ज़िला रोहतक के गठवाल गोत्र के जाटों की संगठित पंचायत ने आज से तीन साल पूर्व ही करलिया था। और उसकी आधार शिला २३ अप्रैल २० को रक्खी गई थी।

पंचायत के निश्चयानुसार कुल संचालिका एक समिति है। जिसके लगभग १०० सभासद् हैं। इस के प्रधान गुरुकुल कांगड़ी के मुख्याधिष्ठाता तथा आचार्य श्रीयुत पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी हैं। और उपप्रधान–मलिक चाजीराम जी, मलिक नौबतसिंह जी, मलिक मोहनलाल जी, मलिक शिवनसिंह जी, मलिक अमीलाल जी, मलिक दयालीराम जी, तथा चौ० मुखलालसिंह जी हैं। एवं मन्त्री मलिक नरोत्तमसिंह जी, मलिक शिवलालसिंह जी, मलिक मांईचन्द जी, मलिक अमीलाल जी तथा मलिक फूलसिंह जी हैं। समिति के कोषाध्यक्ष–मलिक भागमल जी तथा मलिक खुशीराम जी हैं।

दृश्य बड़ा अपूर्व है। गुरुकुल भूमिका चारों ओर खेतों की ऊंची सीमा है। ठीक बीच में ही एक सुन्दर तालाब है जो यमुना उपनहर से भराजाता है। तालाब के चारों ओर सघन तरु श्रेणी है जो पुनः गुरुकुल-कांगड़ी के जांगलिक दृश्य को याद कराती है। इस तलाव के चारों ओर मैदान है। जिस में उत्तर की ओर कच्चे मकान बनने आरम्भ हो गये हैं। १० या १२ दिन में कच्ची चिनाई बन्द हो जायगी। और फिर वर्षा ऋतु के बाद पक्का लगकर पक्की चिनाई होगी। और दूसरी ओर गुरुकुल का आश्रम बनेगा। तब वर्तमान कच्चे मकान गुरुकुल गोशाला (जिसे गुरुकुल के साथ ही साथ पंचायत ने खोला है।) के कार्य में आयेंगे।

गुरुकुल का प्रथम वार्षिकोत्सव बड़ी धूम धाम से ३१ मई तथा १–२ जून को गुरुकुल भूमि में मनाया गया। तीनों दिन श्री-स्वामी जी के मनोहर एवं

आवश्यकता थी।" (रिपोर्ट—पृ० ६९—परिच्छेद ५) इस सम्मति के साथ अक्षरशः सहमत होते हुए सर चिमनलाल सीतलवार, पं० जगतनारायण तथा साहेबज़ादा आफ़ताब अहमद अपने सहयोगियों के बहुमत की युक्तियों के साथ भी सम्मत हैं। पृ० १०४ पर वह लिखते हैं—We entirely agree with what is stated in this chapter (meaning Chapter IX) regarding the *Satyagrah* movement and its offshoot, civil disobedience of laws.

हन्टर कमिटी के गोरे और काले—दोनों प्रकार के—सभ्य एक इसी बात पर सहमत हैं कि सारे फ़िसाद का मूल कारण केवल गांधी जी का सत्याग्रह ही था। इसके लिए पहिला हेतु दोनों ने यह दिया है कि क़ानून की आज्ञा पालन का भाव उड़ाने से ही पंजाब तथा अन्य स्थानों (अहमदाबादादि) में जनता ने अत्याचार किए। यह माना जाता है कि बम्बई और अहमदाबाद में महात्मा गान्धी के पहुंचते ही शान्ति होगई और मुझे पंजाब में दौरा लगा कर मालूम हुआ कि जहां गान्धी जी का सहन सम्बन्धी उपदेश पहुंच गया वहां अत्याचार सह कर भी लोगों ने शान्ति रक्खी। मेरा निश्चय यह है कि यदि गान्धी जी को देहली और पंजाब का दौरा लगाने दिया जाता और डाक्टर किचलू और डाक्टर सत्यपाल को न पकड़ा जाता तो पंजाब में कुछ भी हलचल न होती। और साथ ही मेरा यह निश्चय है कि यदि गान्धी जी का सत्याग्रह सम्बन्धी अत्याचार-सहन का उपदेश देहली और पंजाब में न फैला होता तो यद्यपि देहली ... हज़ारों हिन्दू मुसलमानों की लाशों के ढेर दिखाई देते परन्तु ब्रटिश गवर्नमेंट के लिये भारत भारतवर्ष का शासन कठिन हो जाता। किन्तु भारतवर्ष के अंग्रेज़ (Anaglo-Indians) तथा भारतीय राजनैतिक नरम दल के नेता मेरी नहीं सुनेंगे और अपनी ही अलापते जायेंगे—इस लिए कोई भी दलील इस अंश में उनका मत परिवर्तन करने के लिए काफ़ी नहीं हो सकेगी। फिर भी अपना मत यहां प्रकाशित कर दिया है क्योंकि आगे चलकर मैं उदाहरणों से सिद्ध करने का साहस करूंगा कि सत्याग्रह की स्पिरिट ने ही लार्ड हन्टर, जनरल बारोज़; सर चिमनलाल और पण्डित जगतनारायण को इस योग्य बनाया था कि वे बेखटके बैठकर इन्क्वायरी (Enquiry) कर सकें।

अब एक बड़े हेतु की पड़ताल करनी रह गई जिससे सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया कि सत्याग्रह को गान्धी जी के अतिरिक्त सभी लोग दूषित समझते थे। हन्टर रिपोर्ट के पृष्ठ ६९ पर लिखा है:—

"In an open letter to mr Gandhi Swami Shraddhanand, a follower or colleague of his at Delhi, occurs the significant passage—' I am threfore convinced that under the present condition in India, the civil breaking of laws without producing an upheaval among the masses (for which neither you nor any *Satyagrahi* is morally responsible) is impossible.'

मेरी लम्बी खुली चिट्ठी में से अपने मतलब का केवल इतना उद्धरण क्यों दिया गया? इसकी कहानी बड़ी मनोरञ्जक है। देहली में जिस दिन हन्टर कमिटी के सामने मेरा बयान होना था उसी प्रातः मुझे यह मालूम हुआ कि हिन्दुस्थानी मेम्बरों ने लार्ड हन्टर के साथ सौदा कर लिया है कि सत्याग्रह के विषय में वे ही जिरह के सवाल करेंगे और सारी कमेटी के मतलब के लिए सत्याग्रह को उसके असली रूप को प्रकट कर देंगे। इस किम्वदन्ती का कारण यह मालूम होता था कि हन्टर कमिटी के तीनों हिन्दुस्तानी मैम्बर मौडरेट थे, और मौडरेटों के नेता पहिले से ही महात्मा गान्धी के सत्याग्रह के विरुद्ध घोषणा पत्र दे चुके थे। महात्मा गान्धी के सत्याग्रह का व्रत भी मैंने इन्हीं मौडरेटों के कारण लिया। देहली में मैं मिस्टर श्री निवास शास्त्री जी से मिला तो उन्होंने छूटते ही कहा—"आपने गांधी जी का नया रंग (Vagary) देखा। मह पढ़िये मैं इसके विरुद्ध घोषणा पत्र निकालूंगा" मैंने लीडर का पर्चा हाथ में लिया और गान्धी जी का प्रतिज्ञा पत्र पढ़ा, पढ़ कर मैंने उत्तर दिया:—"इस पर तो मैं भी हस्ताक्षर करने को तय्यार हूं, यदि आप नहीं शामिल होते तो आपको कोई उत्तर-दाता नहीं बना सकता फिर आप एक अच्छे काम के कार्य में विघ्न क्यों डालें?"। शास्त्री जी ने जवाब दिया—"स्वामी जी हम तो घोषणा पत्र निकालेंगे ही।" मैंने उत्तर दिया "मैं इस प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर कर के तार द्वारा सूचना दे दूंगा"। उधर मैंने गान्धी जी को तार दिया और इधर लीडर का नया अंक पहुंच गया जिसमें शास्त्री जी का घोषणा पत्र छापा हुआ था।

सारांश यह कि मौडरेटों की सम्मति पहिले से ही बन चुकी थी और उसी के अनुसार उन्होंने अपने अङ्गरेज़ सहयोगियों को कष्ट से बचाने के लिए इस विषय में प्रश्न करने का बोझ अपने ज़िम्मे लिया। जब लार्ड हन्टर मुझ से प्रश्न कर चुके और जब मेरा लम्बा बयान हो चुका तो सर चिमनलाल सीतलवारने एक सीधा प्रश्न किया:—"क्या आपने गान्धी जी के सत्याग्रह से सम्बन्ध तोड़ लिया है।" मैंने कहा कि "मेरा यह उत्तर लिख कर कि मैंने सम्बन्ध तोड़ लिया है उस सम्बन्ध तोड़ने के कारण जो मैंने अपनी खुली चिट्ठी में दिये हैं लिख लिए जावें। मैंने अपनी उस खुली चिट्ठी से वे कारण पढ़ने आरम्भ किये तो सर चिमनलाल ने कहा:-"क्या आप यह चिट्ठी मुझे दे सकते हैं"? मैंने इस के अर्थ यही समझे कि सारी चिट्ठी शहादत में लेली जावेगी और चिट्ठी की नक़ल सर चिमनलाल के हाथ में देदी। अपना बयान समाप्त कर के मैं ४ घंटे तक शेष कार्यवाही देखता रहा। उसके पश्चात् जब मैं बाहर जाने लगा तो कमिटी के सैक्रटरी मिस्टर स्टोक्स ने (Mr. Stokes) वह चिट्ठी लौटा कर मेरे हाथ में देदी और स्वयं बिना मेरी बात सुने लौट गये। मालूम होता है कि सर चिमनलाल ने अपने मतलब का भाग चिट्ठी से नक़ल करके इसे लौटा दिया था। हन्टर कमिटी के सब सभ्यों ने मेरी चिट्ठी का यह मतलब निकाला है कि मैं गांधी जी के सत्याग्रह के प्रतिज्ञा पत्र और उसके अनुसार की गई कार्यवाही को दूषित

समझ चुका था इस लिये मैंने उससे अपना सम्बन्ध तोड़ लिया। इस मामले को अपने अहमदाबाद में हुए बयान में महात्मा गांधी जी ने साफ़ कर दिया था। जब लार्ड हन्टर ने उन से पूछा कि क्या उनके लैफ्टीनैण्ट स्वामी श्रद्धानन्द ने उनके सत्याग्रह को दूषित समझ कर सम्बन्ध तोड़ लिया तो महात्मा गान्धी जी ने उत्तर दिया:—"लैफ्टीनैण्ट न कहिये मेरे सहयोगी कहिये स्वामी श्रद्धानन्द ने सत्याग्रह को दूषित नहीं समझा प्रत्युत वे मुझ से भी कुछ आगे जाना चाहते थे।" महात्मा गान्धी की सम्मति ठीक है वा हन्टर कमेटी के सभ्यों का विचार शुद्ध है इसका पता आगे के पत्र व्यवहार से लगेगा।

मेरे जिस (२ मई, १९१९ वाले) पत्र में से एक वाक्य लेकर हन्टर कमिटी ने राजा और प्रजा को धोखे में डाला है वह ज्यों का त्यों नीचे देता हूं और जिन वाक्यों की ओर विशेष ध्यान दिलाता हूं उनको 'इटालिक्स' में छपवा देता हूं—

"Before I took the Satyagrah vow proposed by you in connection with the extraordinary measures known as the Rowlatt *bills* I was preaching not only the strict practice of *Ahimsa* (non-violence) and *satya* (Truth) but of other virtues also as described in the Yamas and Niyamas. I always laid special stress on the observance of the rules of Brahmacharya (Sexual purity) and thought it to be the root of all virtue. *My idea has been that the practice of Brahmacharya alone can put a stop to the present-day struggle in the world.* On taking the Satyagrah vow, I sent round through the Press a message to the Satagrahis in which the practice of Brahmacharya was enjoined as the condition of success.

You know well that I never cared to take part in current polites, much less did i concern myself with the proposed Montagu-Chelmsford scheme of reforms My opinion has alwyas been that the Indian politicians can never hold their own in round table conferences with our rulers, who have always been at the head of world-diplomacy for the last thousand years. The only way of obtaining political rights, in my opinion, was to allow our rulers to work out their own schemes of reform.

But the Rowlatt bills laid the axe at the root of the [illegible] of human liberty and [illegible] and, therefore, when the call came from you, whom I regard to be the embodiment of one ancient spiritual culture I responded to the call with my whole heart and soul.

One of the Rowlatt bills was passed into law and your command went round for the observance of a day of humiliation and prayer. The whole country responded to your call with a will which will never be surpassed. What occured after that at Dehli on the 30th of March, 1919 is known all over India. Then you were arrested while on your way to Dehli, and the whole country was stirred to its very depths. The consequences of that ill-advised action of the government are known to all.

I am at one with you candemning all excesses and atrocities committed at Ahmedabad, Viramgam, Amritsar and Kasur & by misguided, perverted people. I further express my sense of horror at the burning of public and other buildings, especially that of the christian churches at Amritsar and Gujranwala. The killing of Indian christian religious men and the unprovoked brutal attacks on ladies has given me the greatest shock, and I hope the Hindus and Muhammadans of Amritsar and other places will make some amends by helping in the rebuilding of the churches and in showing practical sympathy with the families of one European and Indian brethren who were thus murdred.

But I can not join with you in your silence about the wilful provocations which government officials gave at Dehli and some other places and of the horrors perpetrated in the name of law and order in the Punjab. If I have not been able to raise my voice against the excesses of the people and the tyranical doings of Govt. officials, it is on account of the gagging of the Public Press at Dehli; at the instance of the Panjab government and for the indiscriminate censoring of all telegrames and letters which are sent from Dehli.

Now as regards the occassion of my writing this letter to you. I have the highest regard for your person and your saintly character and it gives me great pain to differ from you on any material point. But if I, conscientiously, differ from you I would be untrue to myself if I do not speak out and take the consequences.

You have suspended the Civil breaking of laws *temporarily* because in your opinion "a crisis has arisen in the country and it was not suited to the occasion". You, however, hope that "when tranquility was restored in the country and the people had thoroughly imbibed the true prnicples of it (Satyagrah) would be started again." *Now, I am convinced that so long as the present system of government lasts there is no hope either of tranquility being restored in the country or of the people at large being allowed to imbibe practically what you call "the true principles of Satyagrah through the signing of sympathy on paper* I am, therfore, convinced that under the present conditions in India the Civil breaking of laws, without producing an upheaval among the masses [for which neither you nor any Satyagrahi is morally responsidle] is impossible,hence consistentlly with the views you hold the time for the civil disobedience of laws other the Rowlatt Act will never arise in the near future. *I am, further, of opinion that when real tranquility is restored in India the Rowlatt Act will have gone out and again no occassion for civil disobedience of laws on its account will arise, The result is that the actual reason of my signing the Satyagrah vow formulated by you having disappeared I beg your leave to withdraw my name from the Satyagrah Sabha founded by you.* As a Sanyasi I will continue my work of the preaching and practice of the Eternal principles of Dharma which include, Satyh, Ahimsa and Brahmacharya also.

Personally my opinion about the passed Rowlatt Act and the proposed Rowlatt bill remains unchanged and I will think it to be my Dharmic duty not to obey orders passed under those laws when they come into force. I will also go on with personal spiritual Sadhans for getting a repeal of those laws. But besides my work of preaching Dharme, my services will always be at the disposal of my countrymen in the following constructive works:—

I. Indian Unity i e. bringing Hindus Muhammadans, Sikhs, christians &. on a common platform and the adjustment of their differences by united Punchayats.

II. Popularizing the use of swadesh-made things,

III The introduction of Hindusthani as a national laugnage, and,

Iv. The development of a national system of education independent of the present government Univirsity System".

श्रद्धानन्द सन्यासी

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शालिग्राम के लिए छपा।

प्रभावशाली व्याख्यान हुए भजनीकों ने भी खूब रँग जमाया।

तीसरे दिन गुरुकुल में प्रविष्ट ब्रह्मचारियों का वेदारम्भ संस्कार हुआ। मध्याह्नोत्तर गुरुकुल के लिये अपील हुई। जिस में १६ सहस्र रुपया चन्दे का हुआ। इस चन्दे की विशेषता यह थी कि सारी अपील में कुल १०४) के नोट आये थे शेष चांदी ही चांदी बज रही थी।

इस समय ब्रह्मचारियों का स्वास्थ्य अच्छा है। तीन चार को साधारण ज्वर है। कुल की सेवा के लिये एक चिकित्सक की आवश्यकता है।

कुल के संचालकों का उद्देश्य बहुत ऊंचा है आशा है कि दानी महाशय कुल के उद्देश्यों की पूर्ति में हाथ बटावेंगे।

शान्तस्वरूप शर्म्मा
वेदालंकार
प्रबन्धकर्त्ता

गुरुकुल-इन्द्रप्रस्थ

श्री मुख्याधिष्ठाता जी का दौरा

श्री मुख्याधिष्ठाता जी (गुरुकुल कांगड़ी) शाखाओं के निरीक्षण के दौरे पर ५ जून को गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ में पधारे। आपने आकर विद्यालय, आश्रम, कार्यालय तथा चिकित्सालय आदि का निरीक्षण किया। सब कुछ देखकर आपने प्रसन्नता प्रकट की। कई विशेष आज्ञायें आप दे गये हैं जिन्हें कार्य में परिणत करने का शीघ्र ही यत्न किया जायगा। दोपहर के समय आपने ब्रह्मचारियों को कुछ उपदेश भी दिया जिसका उन पर उत्तम प्रभाव पड़ा है। उसी दिन सांय काल के समय आप लौट गये।

इमारत का काम

इधर तो शादियों की धूमधाम, और उधर सारे दिल्ली में काम का ज़ोर; दो महीनों तक मज़दूरों की खोज करते २ अब कुछ सफलता प्राप्त हुई है। शादियों का ज़ोर कुछ कम होगया है। युवराज के आने से पूर्व भारत सरकार नई दिल्ली को एक विशेष हद तक पूरा कर देना चाहती है इस लिए रुपया पानी की तरह बह रहा है। पचास २ मील के मेहनती लोग उसी पानी में स्नान करने को उमड़ रहे हैं, ग़रीब गुरुकुल में मज़दूरी कौन करे।

तो भी अनथक ओवरसियर पं० शिवचरण जी की हिम्मत ने कुछ मदद इकट्ठी कर ही दी है। अब विद्यालय के दो शेष कमरों का कार्य खूब ज़ोर से चल रहा है। १५ दिनों में कमरों का काम प्रायः पूरा होजायगा। फिर गोशाला का कार्य आरम्भ होगा। कुए की खुदाई का काम भी चल पड़ा है। इस बार जिस हिम्मत से काम प्रारम्भ हुआ है, उसे देख कर आशा पड़ती है कि कुछ महीनों में गुरुकुल प्रेमियों को कुए में पानी निकल आने का शुभ समाचार सुनाया जासकेगा।

ऋतु

ऋतु जैसी गर्म होनी चाहिए, वैसी ही है। जेठ को गर्मी ही शोभा देती है। सूर्य खूब तप रहा है। यह गर्मी का वेग इस आशा से सहन किया जारहा है कि दस पन्द्रह दिनों में बरसता हुआ बादल शान्ति का सन्देश सुनायगा। सब क्लेश ऐसी ही आशा से सहन किये जाते हैं।

गुरुकुल अध्यापक सम्मेलन का अधिवेशन

निश्चय किया गया है कि २७ और ३० श्रावण को गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ में भारत में विद्यमान सब गुरुकुलों के अध्यापकों का एक सम्मेलन किया जाय जिस में जहां गुरुकुल सम्बन्धी आवश्यक विषयों पर निबन्ध पढ़े जायं वहां स्थिर रूप से गुरुकुल अध्यापक सभा का भी संगठन हो। सम्मेलन से जहां एक ओर अध्यापकों का परस्पर परिचय बढ़ेगा वहां उन्हें गुरुकुल सम्बन्धी विषयों पर एक दूसरे की सम्मति से लाभ उठाने का भी मौका मिलेगा। विचार यह है कि इस सभा द्वारा गुरुकुल शिक्षा प्रणाली से सम्बन्ध रखने वाली उन जटिल समस्याओं को हल किया जाय, जिन्हें सभी अनुभव करते हैं पर उपाय न होने से कर कुछ नहीं सकते। निमन्त्रण पत्र भेजे जारहे हैं। जिन गुरुकुल की शिक्षा में विशेष अभिरुचि रखने वालों को भूल से निमन्त्रण न पहुंचे, वह स्वयं ही अपने को निमन्त्रित समझें।

इन्द्र

संसार समाचार पर

टिप्पणी

मारवाड़ियों में जागृति

ज़माने की ज़बरदस्त लहरों की टक्कर से जगाये जाकर मारवाड़ी भाई अब अपना कर्त्तव्य समझ रहे हैं—यह प्रसन्नता की बात है। अभी उस दिन बम्बई में होने वाले "मारवाड़ी-अग्रवाल-सम्मेलन" में एक "अग्रवाल-जातीय फण्ड" खोला गया जिसमें लगभग ९ लाख रुपया एकत्रित हुआ।

सम्मेलन के अन्त में महात्मा गांधी जी ने मद्रास में हिन्दी-प्रचार के लिए ५० हज़ार रुपये की अपील की जिसमें बम्बई वालों ने ४० हज़ार और कलकत्ता के मारवाड़ियों ने १० हज़ार रुपया दिया। धन का सदुपयोग इसे ही कहते हैं।

कन्या पाठशाला को दान

मेरठ के मुंशी शम्भुदास पेशकार की विधवा धर्म-पत्नी श्रीमती "विशन देवी" ने हाल ही में १३ लाख रुपये का दान दिया है जिसमें से २५ हज़ार रुपया एक "देवनागरी हाई स्कूल" को और २५ हज़ार रुपया स्थानीय समाज की कन्या पाठशाला को २००) मासिक अमाउन्स के साथ दान दिया है। श्रीमती जी को धन्यवाद देने के साथ २ हम मेरठ समाज को भी बधाई देते हैं और आशा करते हैं कि पाठशाला की दशा अब बहुत उन्नत हो जावेगी।

खण्डेवाल महासभा में आर्यसमाज की विजय!

गत सप्ताह इन्दौर में "खण्डेवाल महासभा" का वार्षिक अधिवेशन हुआ। जिस में बाल-विवाह, वेश्याओं के नाच, स्त्रियों के गन्दे गीत और विवाह आदि संस्कारों में फ़िज़ूलख़र्ची के विरुद्ध प्रस्ताव पास हुए। इसके अतिरिक्त १३० जाति-बहिष्कृत परिवारों को पुनः सम्मिलित किया गया। आर्यसमाज और क्या कहता है? क्या यह उसकी *क्रियात्मक विजय* नहीं है?

रूटर की महिमा

"बोल्शेविज़्म" के प्रसिद्ध नेता 'लेनिन' के विषय में इलाहाबाद का "लीडर" इस प्रकार से लिखता है—"कहा करते

हैं कि जो अपनी मृत्यु के विज्ञापनों को पढ़ता है, वह अधिक काल तक जीता है। गत वर्षों में 'लेनिन' की जितनी अधिक जन्म और मृत्यु हुई है, उतनी किसी की नहीं हुई। प्राकृतिक वा राजनैतिक वायु मण्डल के प्रत्येक परिवर्त्तन से उसकी मृत्यु की सूचना देने के लिए हमारा मित्र रूटर, सर्वसाधारण को खुश करने के लिए, सदा तैयार रहता है।''

हम इससे सर्वथा सहमत हैं। परन्तु, शोक है, इस बार समाचार पत्रों में जो तार छपा है, उसमें रूटर ने उसे मारा नहीं किन्तु भगाया है। इस बार उसके मित्र 'ट्रॉटस्की' को मारा गया है। वाह-जी! रूटर!!!

युरुप की आधुनिक दशा

युद्ध के बाद देश की जो भयंकर—दशा होती है वही आज कल युरुप की है। वे सब दृश्य वहां अब प्रकट हो रहे हैं जो किसी समय इस अभागे भारत ने भी देखे थे। हाउस आव कामन्स में इसी विषय पर व्याख्यान देते हुए लार्ड सेसिल ने, गत-सप्ताह, युरुप की वर्त्तमान भयंकर-दशा का वर्णन इन शब्दों में किया है ''जनता की बहुत बड़ी संख्या भूख और बिमारी का शिकार बनी हुई है। आर्थिक चक्र स्थान भ्रष्ट होगया है, सिक्के पर से विश्वास उठ रहा है, और शिल्प उद्योग का काम बिल्कुल बन्द पड़ा है।........ मध्य *युरुप की इस समय अत्यन्त भयंकर दशा है।* युरुपियन सभ्यता के इतिहास में ऐसा भयंकर दृश्य कभी उपस्थित नहीं हुआ।''

भारत को पाश्चात्य सभ्यता का अनुकरण करने का जो उपदेश दिया करते हैं उन्हें लार्ड सेसिल जैसे राजनीतिज्ञ का यह कथन ध्यान से पढ़ना चाहिए।

इङ्गलैण्ड क्यों उकसा रहा है?

युरुप की ऐसी भयंकर दशा का वर्णन जहां हम एक ओर सुनते हैं वहां दूसरी ओर यह सुनकर दुःख होता है कि इङ्गलैण्ड की युद्ध तृष्णा अभी तक समाप्त हुई प्रतीत नहीं होती। इस सप्ताह की विलायती डाक द्वारा आये हुए समाचारों से ज्ञात होता है कि इंग्लैण्ड, अब भी युध्द के २ बारूद भेजता हुआ पोलैण्ड को रूस (बाल्शवीक्ट) से लड़ा रहा है। रूस इस युद्ध में यदि हार गया तो न केवल रूस की परन्तु सारे युरुप की दशा अत्यधिक शोचनीय हो जावेगी। इंग्लैण्ड के ये हथकण्डे, उसकी उद्घोषित नीति के, क्या सर्वथा विरुद्ध नहीं हैं?

'दिये तले अन्धेरा'

समाचार आया है कि 'सेन रिमो' कान्फ्रेंस में जाते हुए ''मारसेलीज'' नामक स्थान में लायड जार्ज ने अपनी एक वक्तृता में निम्न शब्द कहे थे—''मैं अपने आपको संसार की स्वाधीनता का वीर समझता हूं और सब प्रश्नों पर इसी दृष्टि से विचार करता हूं।'' लायड जार्ज का ''स्वाधीनता के वीर'' होने का सब से बड़ा प्रमाण टर्की और जर्मनी के साथ की गई सन्धि के अतिरिक्त भारत, मिश्र और एशिया में मिलता है। ख़ैर, इन सबको भुलाते हुए अपने पड़ोस में रहने वाले आयरलैण्ड के साथ कठोर-शासन को प्रयोग में लाते हुए अपने आपको ''स्वाधीनता का वीर'' होने का जिस तरह परिचय दिया जा रहा है, वह किसी से छिपा नहीं है। क्या यह ''दिये तले अन्धेरा नहीं'' है?

जर्मनी और मित्रदल-

''लीग आव नेशन'' की आड़ में मित्र दल द्वारा जिस प्रकार जर्मनी को कुचलने का प्रयत्न किया गया है, वह हमारे पाठकों से छिपा हुआ नहीं है। परन्तु यह अब प्रसन्नता की बात है कि मित्र दल का भाव अब बदल रहा है। विलायत के प्रसिद्ध समाचार पत्र ''रिव्यू-आव रिव्यूज़'' के इस मास के अंक में मि० ''सिसली हसलटन'' का इसी विषय पर एक रहस्य पूर्ण लेख छपा है। पिछले दिनों ''सेन-रिमो'' में मित्रदल की जो कान्फ्रेंस हुई थी, उसमें ये सज्जन चूंकि स्वयं उपस्थित थे, इस लिए इनकी बातें सुनने योग्य हैं। कान्फ्रेंस का महत्व दर्शाते हुए और टर्की, सन्धि का वर्णन करते हुए लेखक महाशय लिखते हैं कि मित्रदल ने यह बात अच्छी तरह से समझ ली थी कि *''जर्मनी हमारा शत्रु नहीं है किन्तु हमारा साथी है।''* मित्रदल के प्रतिनिधियों के इस भाव परिवर्तन का कारण, लेखक महाशय के शब्दों में, उनका यह समझ लेना है कि *''यदि जर्मनी का नाश होगा तो सारे युरुप का नाश होगा''* जर्मनी की क्षति से सब से अधिक डरने वाले और इसीलिए सन्धि की शर्तों को अधिक से अधिक कठोर करने वाले फ्रांस ने भी अपनी भूल मान अब यह समझ लिया है कि ''*जर्मनी के नाश में फ्रांस का नाश है और जर्मनी की उन्नति में ही फ्रांस की उन्नति है।''* फ्रांस ने अपना रुख क्यों बदला—इसमें भी एक रहस्य है। और वह यह कि, इङ्गलैण्ड कुछ ही दिनों में जर्मनी के साथ आर्थिक सम्बन्ध जोड़ने वाला है जिसका अनुकरण महाद्वीप के अन्य सभ्य देश भी करेंगे। अब यदि फ्रांस ने अपनी पुरानी शत्रुता ही रक्खी और इस आर्थिक-सन्धि का हिस्सेदार न बना तो वह पछड़ जावेगा और सब से अधिक घाटे में रहेगा।

युरुप की आधुनिक राजनीति का रुख अब इधर ही है। यद्यपि इस भाव के मूल में 'स्वार्थ' ही काम कर रहा है पर तो भी आधुनिक-राजनीति में यह एक विचित्र, पर शुभ परिवर्त्तन ला देगा; इस में कोई सन्देह नहीं।

पटियाला—महाराज

और दूसरे झोली चुक सिक्खों को गुरुदासपुर में हुई हुई सिक्ख सभा ने (१३ जून) सिक्ख बिरादरी से बाहिर कर दिया है चूंकि इन लोगों—विशेषतः महाराज साहिब ने २० हजार रुपया ओड्वायर फण्ड में देकर जाति पर काला धब्बा लगाया है। उसी सभा ने फैसला किया जब तक हमारे भाई कैद से न छोड़े जायेंगे तब तक हम सेना में भरती न होंगे और ज़मीन का लगान सरकार को न देकर कैदी भाइयों के सम्बन्धियों के पालने में लगावेंगे। निजाम रामपुर आदि रियासतों के लिये भी मुसलमान भाई इस उदाहरण का अनुकरण करें। देश में ऐसी ही जागृति की आवश्यकता है।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिये छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० मं० ३ सू० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है { १६ आषाढ़ सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० २ जुलाई सन् १९२० ई० } संख्या ११ भाग १

हृदयोद्गार

चर-गीत ३

प्यारा हिन्दुस्तान हमारा ॥ टेक ॥

(१)

प्यारा हिन्दुस्तान हमारा
प्यारा बया बान और जंगल
    झील, पहाड़, और वृक्ष द्रुम
बीहड़, बाग़, फूल, मेवा, फल
    प्यारा है हर एक नज़ारा
प्यारा हिन्दुस्तान हमारा ॥

(२)

प्यारी गंगा, प्यारी जमना
    गोदावरी, नर्मदा, कृष्णा,
हिमालया, हिन्दूकुश, बिन्ध्या
    प्यारी ज़मीन आस्मां प्यारा
प्यारा हिन्दुस्तान हमारा ॥

(३)

हिन्दू, मुसलमान, ईसाई
    बौद्ध, पारसी, जैनी भाई
मन्दिर, मूरत, तीरथ, मसजिद
    मक्का, प्राग, हज्ज, हरद्वारा
प्यारा हिन्दुस्तान हमारा ॥

(४)

तुझ को दिल से प्यार करें हम
    तुझ पर जान निसार करें हम
तेरा दम हज़ार भरें हम
    तू दिलबर तू यार हमारा
प्यारा हिन्दुस्तान हमारा ॥

श्रीपद्मकोट —श्रीधर पाठक।
४.६.१९२०

श्वेतमेघ ! अब करो किनारा ॥ टेक ॥

बहुत सही हम, बहुत दुर्ई बस, उजड़ा देश हमारा ॥
हरे भरे जो बाग लगे थे जीवन प्राण अधारा ॥
ओलों की बौछारें खाकर, तिन भी प्राण विसारा ॥
कष्ट समय में तृषित हुओं ने तुमको मेघ ! पुकारा ॥
आशा बड़ी थी तुम से हमको, लख कर रूप तुम्हारा ॥
हाय हाय पर होकर निष्ठुर लूटा माल हमारा ॥
देख लिया बस देख लिया अब, असली रूप तुम्हारा ॥
मीठी ध्वनि, परमोरस, हिय है, विषमय तोय तुम्हारा ॥
जाग उठे हैं सभी लोग अब, फैला सकल उजारा ॥
दुखित जनों ने तुमको देखकर, तुमसे किया किनारा ॥
कृष्ण मेघ ! अब शीघ्र पधारो, आया काल तुम्हारा ॥
पीत पटी से शोभित हो कर, मेटहु दुःख हमारा ॥

देवभिक्षु

ब्रह्मचर्य सूक्त की व्याख्या।

अर्वागन्यः परोअन्यो दिवस्पृष्ठाद् गुहा निधी निहितौ ब्राह्मणस्य। तौ रक्षति तपसा ब्रह्मचारी तत् केवलं कृणुते ब्रह्म विद्वान्। १०।

"अर्वाक् अन्यः एक समीप वर्ती दिवः पृष्ठात् परः अन्यः द्युलोक के ऊपरले भाग से परे दूसरा ब्राह्मणस्य निधी गुहा निहितौ ब्रह्मज्ञान के दो कोश (आचार्य के हृदय रूपी) गुफा में संगृहीत हैं। तौ ब्रह्मचारी तपसा रक्षति उन दोनों की, ब्रह्मचारी, तप से रक्षा करता है और ब्रह्म विद्वान् तत् केवलं कृणुते ब्रह्म को जानता हुआ उसको केवल करता है।"

ब्रह्मचारी किस से भिक्षा ग्रहण करता है? इस पर लिखते हुए पीछे कहा जा चुका है कि वेद विद्या का दान ही सर्व दानों में श्रेष्ठ है और वह आचार्य ही दे सक्ता है। इस लिए ब्रह्मचारी को आचार्य से ही भिक्षा लेनी चाहिए। उस पहिली, द्यौ और पृथिवी, (स्वप्रकाशमान तथा दूसरों से प्रकाशित) लोकों की विद्या रूपी भिक्षा प्राप्त कर के ही ब्रह्मचारी को सन्तुष्ट न हो जाना चाहिए क्यों कि वे सब तो परमोद्देश्य की प्राप्ति के केवल साधन मात्र हैं। आचार्य की हृदय रूपी गुफ़ा में केवल एक ही ख़जाना नहीं है, उस गुफ़ा के अन्दर एक और कोष भी है जिस का पता ब्रह्मचारी को तब ही लग सक्ता है जब कि वह पहिली भिक्षा को पचाने के योग्य बन जावे। तप-पूर्वक गुरुकुल में निवास करते हुआ ब्रह्मचारी द्यौ और पृथिवी-दोनों—प्रत्यक्षलोकों की विद्या प्राप्त करलेता है। लोकदर्शने प्रत्यक्ष होने से ही तो ये सब लोक कहलाते हैं। परन्तु इन प्रत्यक्ष लोकों से परे, इन से भी सूक्ष्म, एक पद है जिस की प्राप्ति ही जीवन का परमोद्देश्य है। भौतिक पृथिवी को भौतिक सूर्य प्रकाशित करता है, परन्तु हृदय मन्दिर को प्रकाशित करने का अधिकार आत्मिक सूर्य को ही है जो कि जीवात्मा को भी मन्दिर बनाकर उसे प्रकाशित करता है और भौतिक इन्द्रियों से अगम्य है। इसी भाव की व्याख्या उपनिषद् में की है—य आत्मनि तिष्ठन्नात्मनोऽन्तरो यमात्मा न वेद यस्यात्मा शरीरम्। आत्मनोन्तरो यमयति स त आत्मान्तर्याम्यमृतः॥ "जो परमात्मा जीवात्मा में स्थित और जीवात्मा से भिन्न है, जिस को जीवात्मा नहीं जानता कि वह मुझ में व्यापक है, जिस परमात्मा का जीवात्मा शरीर है, जो उसे नियम में रखता है, वही अविनाशी स्वरूप तेरा भी आत्मा है उसको तू जान।"

पृथिवी और द्यौ की प्रत्यक्ष विद्या आचार्य की हृदय रूपी गुफा में एक कोष है, परन्तु इन से भी परे परोक्ष दूसरा ख़जाना है। यदि ब्रह्मचारी देव मण्डल में शामिल होना चाहता है। अर्थात् यह चाहता है कि विद्याव्रत—स्नातक बनकर जब वह गुरुकुल से लौटे तो देवगण उसकी अगुआई करें तो उसे प्रत्यक्ष से परे परोक्ष विद्या के लिए आतुर होना चाहिए—परोक्ष प्रिया हि देवाः। जब प्रत्यक्ष विद्या के लिए तप की आवश्यकता है तो परोक्ष ब्रह्मज्ञान के लिए उस से भी बढ़ कर तप की आवश्यकता है। मानसिक—तप बड़ा कठिन है परन्तु उतना ही अधिक बल देने वाला भी है। पृथिवी और द्यौ की अपरा विद्या, साधन मात्र होने से गौण है, उस से ऊपर परा विद्या मुख्य है क्यों कि परमोद्देश्य तक पहुंचा देती है। उस मुख्य की रक्षा ब्रह्मचारी तपसे करता है।

तब ब्रह्म को जानता हुआ केवल उसी का हो रहता है। यही कैवल्य है। प्रसिद्ध लोकोक्ति अबतक चली आती है—गुरुबिनु ज्ञान न पावै भोला चेला गुरु के बिना ज्ञान नहीं और—ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः—और ज्ञान के बिना अविद्या के बन्धनों से छूटना नहीं होता। इसी लिए गुरु की आवश्यकता है। वह हमारे अन्दर है, बाहर है, उस से सारा ब्रह्माण्ड अच्छादित है; परन्तु जब तक हृदय के अन्दर उसे देख न लें तब तक समीप होते हुए भी हम सब उस से बहुत दूर हैं। इन्हीं दर्शनों के लिए गुरु की ज़रूरत है। उस प्रकाश स्वरूप की झलक तो बिजुली की चमक की तरह कभी न कभी मूढ़ पुरुष भी देखता है; परन्तु उस झलक के ओझल होने पर फिर उसे भूल जाता है। उस के दर्शन बिना आचार्य की कृपा के नहीं होते। परन्तु जब एक बार सचमुच दर्शन हो जावें और जीवात्मा "अपने प्रभु को चीन्ह लेवे," तब वह उसी का हो रहता है। फिर आचार्य की सहायता की आवश्यकता नहीं रहती। प्रधान आचार्य की संरक्षा में जाकर साधारण आचार्य की क्या ज़रूरत है? प्राणी तब उसी का हो रहता है।

उसी का हो रहने का मतलब क्या है? क्या प्राणी की क्रिया बन्द हो जाती है? क्या वह कर्म छोड़ देता है? कर्म तो किसी अवस्था में भी छूट नहीं सकते, हां कर्मफल को वह त्याग देता है। जिसका हो रहा है, सब कर्म उसी के अर्पण करता है। वह इसलिए कर्म नहीं करता कि उसे कर्म का फल मिलेगा, वह यह नहीं देखता कि उसके शरीर तथा उसकी इन्द्रियों को उस कर्म से क्या लाभ होगा; कर्म करने के लिए उसके पास एक ही कसौटी है—"क्या उस कर्म से वह उससे दूर न हो जायगा जिसका वह हो रहा है?"— निस्सन्देह जो कुछ भी उसके गुण, कर्म, स्वभाव के अनुकूल है वही कर्त्तव्य है, जो उसके प्रतिकूल है वही अकर्त्तव्य है। इसी लिए तो अपने शिष्य अर्जुन को कृष्ण भगवान् ने उपदेश दिया था—"कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं, बोद्धव्यं च विकर्मणः। अकर्मणश्च बोद्धव्यं, गहना कर्मणो गतिः॥" "कर्म क्या है? विपरीत कर्म क्या है? और कर्म न करना क्या है? यह जानना चाहिए, क्योंकि कर्म की गति गहन है।" बिना कर्म एक क्षण भी प्राणी जी नहीं सक्ता, और मुक्ति का आनन्द और परमात्मा की सामीप्यता को भी बिना प्रयत्न के स्थिर नहीं रक्खा जा सकता। तब कर्म का सर्वथा त्याग तो हो ही नहीं सकता। फिर बचाव इसी में है कि उसका होरहे जिसका स्वरूप ही पथप्रदर्शक है और जिसकी समीपता [illegible] को 'अकर्म' और "विकर्म" के [illegible] मार्ग से अलग करके कर्त्तव्य कर्मों का बोध सदा कराती रहे। संसार को ऐसे आचार्यों की आवश्यकता है जो स्वयं नित्य उसके गर्भवास में रहते हुए अपने शिष्यों को उसी का बना देवें। उस पद के जो अधिकारी हैं उनके लिए ही ब्रह्मचारी कहलाना शोभा देता है, और जब ऐसे ब्रह्मचारियों की संख्या संसार में बढ़ती है तभी संसार का कल्याण होता है। शमित्योऽम्।

श्रद्धानन्द सन्यासी

श्रद्धा

बेगार की आसुरी प्रथा

दूर होनी चाहिये

(१)

भूमिका — बेगार प्रथा का कोई भी चिन्ह वैदिक समय के इतिहास में पाया नहीं जाता। जब वेद इस के सर्वथा विरुद्ध है कि एक मनुष्य दूसरे मनुष्य को अपना दास बना सके तो वैदिक काल में इस का पता कैसे लग सकता है। परन्तु इस समय भारतवर्ष में बेगार प्रथा का बड़ा प्रचार है। इस के लिये केवल ब्रिटिश गवर्नमैण्ट ही दोषी नहीं है क्यों कि जब भारतवर्ष में अंग्रेज दूकानदारों ने आकर अपना सिक्का जमाया तो यह प्रथा पूरे तौर पर प्रचलित थी। इस विवेचना से कोई लाभ नहीं है कि यह घृणित प्रथा कब प्रारम्भ हुई, और इस का जन्म-दाता कौन था। यहां तो इतना ही कहना पर्याप्त है कि स्वतन्त्र जातियों की माता होते हुए भी ग्रेट ब्रिटेन ने इस आसुरी प्रथा को जड़ मूल से न खोया प्रत्युत, इसको अपनी रक्षा में लेलिया। हम बंगाल के आदि ब्रिटिश शासकों के विषय में पढ़ते हैं कि जिन ग्रामों में से वे पालकी पर चढ़ कर निकलते थे, उनके डर के मारे वे ग्राम मनुष्यों से खाली हो कर सुनसान जंगल की तरह हो जाते थे।

परन्तु, यह बेगार-प्रथा भारतवर्ष में प्रचलित थी और ब्रिटिश गवर्नमैण्ट ने इसे अपनाया और करोड़ों आदमी, जो औरों से बढ़के नहीं तो उनके जैसे ही शरीर, मन और आत्मा रखने वाले हैं, एक संगठित अत्याचार के पाओं तले रौंदे जारहे हैं। यह प्रथा न केवल मनुष्यों को ईश्वरदत्त अधिकारों से वंचित कर के पशुओं से भी गिरा हुआ बना रही है, प्रत्युत मनुष्यों को सदाचार से भी गिरा रही है। इस कुप्रथा के भयानक परिणाम राजा और प्रजा के सामने स्पष्टतया रखने के लिये मैं नीचे का पत्रव्यवहार सर्वसाधारण के आगे रखता हूं।

गुड़गावा के जिलासाहब के नाम मेरा पत्र — "देहली तारीख २७ मार्च १९१९ सन्

महाशय !

जिन्हें मूल से अछूत कहते हैं, अपने देश में उनकी धार्मिक तथा सामाजिक स्थिति को ऊंचा करने में, मुझे बड़ी मनोरंजकता है। आपके अधीन जिले के कुछ ग्रामों में चमारों के बहुत से परिवार रहते हैं, जिनको देहली और इन्द्रप्रस्थ की अछूतोद्धार सभाओं ने अपने बराबर का दर्जा दिया है। इन चमार परिवारों को पुलिस और तहसील सदैव बेगार के काम के लिये तंग करती रहती है, पिछले दिनों ही बल्लभगढ के तहसील के चपरासियों ने उनकी मारपीट की और स्वयं तहसीलदार ने उन्हें गालियां दीं और उन्हें बाधित होना पड़ा कि तहसीलदार के लिये दाना दलने और पुलिस के थाने पर विटिनरी सर्जन का सामान उठाकर ले जाने के लिये चमार मर्द और औरतों को किराया दे कर भेजें। तहसील के चपरासियों की इन करतूतों का हाल देहली के दैनिक हिन्दी 'विजय' में निकल चुका है। जिस की १ प्रति आपके अवलोकनार्थ भेजता हूं। मुझे मालूम हुआ है कि गुड़गांव जिले में सब चमारों से खुली बेगार जनता की सम्मति के विरुद्ध ली जाती है, और उसकी जिम्मेवारी सरकारी अफसरों पर है।

"जहां तक मुझे मालूम है कोई भी कानून या नियम ऐसा नहीं जो चमारों को वा ग्राम के अन्य कमीनों को सरकारी नौकरों की बेगार में जाने के लिए बाधित करे। वे चमार भी जो मरे हुए जानवरों की खाल लेते हैं, उनका कर्तव्य ग्राम के मालिकों की ओर अवश्य है. परन्तु सरकारी नौकरों के लिए बेगार में काम करने का उनका कानूनी कर्तव्य नहीं है। मैं सन्यासी हूं, इस लिए मेरा धर्म है कि जो लोग अपनी आत्मिक और आचार सम्बन्धी स्थिति को उच्च बनाना चाहें उन्हें सहायता दूं। इन प्रान्तों के चमारों ने अपने प्रतिनिधियों द्वारा मुझे तहसील और पुलिस के अफसरों और सिपाहियों के जुल्म की शिकायत की है और मैं उनकी शिकायतों का आन्दोलन करने और उन्हें यह सम्मति देने के लिए, कि वे गवर्नमैण्ट के छोटे अफसरों के अनुचित दबाव में न आवें बल्लभगढ़ जा रहा हूं।

"जहां तक मुझे ज्ञात है पंजाब गवर्नमैण्ट ने अपने घोषणा पत्र द्वारा बेगार की मनाई करदी है। मैं आशा करता हूं कि आप अपने ज़िले के तहसीलदारों को आज्ञापत्र भेजदेंगे कि वे जबर्दस्ती बेगार न लें, और यदि वे पंजाब गवर्नमैण्ट की स्पष्ट आज्ञा के विरुद्ध जावें, तो आप उनके ऐसे काम का नोटिस लेवें। यदि कोई ऐसा कानून है, जिससे मैं अनभिज्ञ होऊं जोकि तहसील और पुलिस के अफसरों को चमारों से बाधित बेगार लेने का अधिकार देता है, तो मैं आपका धन्यवाद दूंगा, यदि आप उसकी १ प्रति मेरे पास भेज देवें जिससे कि योग्य अधिकारियों की सेवा में भिजवाकर ऐसे अनब्रिटिश (Un-British) कानून को मन्सूख कर दिया जावे।"

इस पत्र के साथ ही जो विजय का अंक भेजा था उसकी रजिस्ट्री नहीं कराई गई थी इस लिए वहां से सूचना आई कि विजय का अंक नहीं पहुंचा। तब मैंने उसका दूसरा पर्चा रजिस्ट्री करा कर २७ मार्च को भेज दिया। मेरे पत्र का गुड़गांवा के डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट ने अन्त तक कोई उत्तर नहीं दिया, और मुझे देहली और पंजाब के हत्याकाण्डों ने उधर खैंच लिया। कामों से निवृत्त होकर २३ फर्वरी १९२० मार्च को मैंने एक पत्र पंजाब के वर्तमान लैफ्टीनैण्ट गवर्नर सर एडवर्ड मैकलगन की सेवा में भेजा।

पंजाब के लाट साहब के नाम पत्र — "माननीय श्रीमान् !

जब मैं पिछली बार लाहौर में श्रीमानों से मिला था तो यह संदेह किया गया था कि अमृतसर में कांग्रेस के अधिवेशन के दिनों में ज़रूर कुछ फ़िसाद होगा, उन कठोर स्मृतियों के कारण जो कि जनता के मनों पर अंकित हो चुकी थीं। उस समय मैंने श्रीमानों को निश्चय दिलाया था कि फ़ौज और पुलिस की भड़काने वाली नुमाइशें न हुई तो सब काम शान्ति से होजावेगा। परिणाम ने दिखलाया कि मेरी आशा अनुचित न थी परन्तु इस सब का यश केवल श्रीमानों को है, क्यों कि आपकी आज्ञा स्पष्ट थी कि ऐसी कोई नुमाइश न की जावे। मुझे शोक है कि जनता के साथ सच्ची सहानुभूति के इस उदार भाव के लिए मैं स्वयं जाकर आपको धन्यवाद न दे सका और इस लिए इस अवसर पर अपनी और कांग्रेस के स्वागत-कारिणी सभा की ओर से श्रीमानों की इस उदार नीति के लिए धन्यवाद देता हूं।

"इस समय मुझे आप से एक नई प्रार्थना करनी है और मैं आशा करता हूं कि श्रीमान् मेरे इस भाव का उचित मान करेंगे कि अखबारों में बल देने के स्थान में गवर्नमेंट के शिरोमणि की सेवा में निवेदन कर रहा हूं........ मेरी प्रार्थना यह है मैं जानता हूं कि (पंजाब के भूतपूर्व लैफ्टिनैण्ट गवर्नर) सर डेनिस फिट्ज़ पैट्रिक के समय में जबर्दस्ती बेगार लेने के विरुद्ध एक दृढ़ घोषणापत्र सूबे में भेजा गया था और पंजाब गवर्नमैंट को उस आज्ञा का समर्थन उनके पीछे के सब लाट साहब करते रहे। विशेषतः सर डनजिल इबैटसन ने बहुत जोर दिया। परन्तु सत्य यह है कि गुड़-

गांव तथा और ज़िलों में बाधित बेगार का राज्य है और जहां कहीं चमारों की बस्ती अधिक है वहां इसका दबाव अधिक अनुभव होता है। दृष्टान्त के लिए—बल्लभ गढ़ ज़िला गुड़गांव में एक तहसील का स्थान है। उस स्थान के चमार मेरे पास यह शिकायत लाये कि तहसील के चपरासी उन को जबर्दस्ती बेगार पर लेजाना चाहते हैं और यतः वे कारीगर हैं, यदि वे बेगार पर जाने से इनकार करें तो उन को बुरा भला कहा जाता, और और तरह से उनके साथ बुरा व्यवहार किया जाता, मैं यहां साफ कर देना चाहता हूं कि हिंदू समाज में इन चमारों का दर्जा, इन्द्रप्रस्थ अछूतोद्धार सभा के कारण ऊंचा हो चुका है। इन चमारों की कठिनाइयों का वर्णन देहली के एक हिन्दी दैनिक में निकला था और मैंने समाचार पत्र का वह अंक अपने अनुभवों सहित डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट गुड़गांव के नाम भेज दिया था जिसकी ज्यों की त्यों प्रति इस पत्र के साथ लगा देता हूं। डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट ने अपने पत्र में उसकी रसीद भेजते हुए लिखा था कि विजय का अंक नहीं पहुंचा, वह, कभी भी १ अप्रेल १६१६ को पूरी करदी। उनके पश्चात् कई बार स्मरण कराने पर भी कोई उत्तर न आया। यतः मैं पंजाब के पीड़ितों को सहायता देने और उसके पश्चात् कांग्रेस के अधिवेशन को कृतकार्य बनाने में लगा रहा, इस लिए मुझे बल्लभगढ़ के चमारों की नई कठिनाइयों का हाल न मालूम हुआ। अब जब कि मैं जनवरी के अन्त से देहली में हूं मेरे पास इन लोगों के तथा अछूतोद्धार सभा के अधिकारियों के कई डेपुटेशन आचुके हैं, जिन्होंने उस अत्याचार का वर्णन किया है, जो इन (चमारों) पर हो रहे हैं। मेरी विनय पूर्वक प्रार्थना यह है कि न केवल इन लोगों के कष्ट के विषय में आन्दोलन किया जावे प्रत्युत एक दूसरा स्पष्ट आज्ञा पत्र निकाल दिया जावे, जिससे पञ्जाब के सब जिलों में बाधित बेगार ली जानी बन्द हो जावे। मैं आशा करता हूं कि श्रीमानों से की हुई यह प्रार्थना फल लायेगी।

मनुष्य जाति का विनीत सेवक

श्रद्धानन्द सन्यासी

इस पत्र का उत्तर पंजाब गवर्नमेण्ट के अर्थसचिव माननीय महाशय ई० जोज़फ की ओर से १० ... सन् १६२० को लिखा हुआ निम्नलिखित आया—

पंजाब गवर्नमेण्ट का उत्तर

"महाशय !

मुझे आज्ञा हुई है कि लैफ्टीनैण्ट गवर्नर के नाम आपके पत्र तारीख २३ फर्वरी १६२० की पहुंच स्वीकार करूं और आपको बतलाऊं कि अम्बाले के कमिश्नर साहब का ध्यान गुड़गांव ज़िले में बेगार के निस्बत आपके उक्त पत्र में वर्णित शिकायतों की ओर खेंचा गया है।

"आपके पत्र में जो बेगार के प्रश्न पर साधारण दृष्टि दिलाई गई है, उसके सम्बन्ध में उस उत्तर की एक प्रति भेजता हूं जो पंजाब लैजिस्लेटिव कौन्सिल में ७ मार्च को किये प्रश्न के उत्तर में दीगई थी।"

पंजाब के लाट साहब की कौन्सिल में उसी घोषणा पत्र की बुनियाद पर, जिसका ज़िकर मेरे पत्र में है; सरदार बहादुर गजनसिंह ने प्रश्न किया था। उत्तर में चीफ सैक्रेटरी मिस्टर क्रेकने कहा—"जनवरी सन् १८६४ के जिस बेगार बन्द करने वाले इश्तिहार की तरफ ध्यान खेंचा गया है, मालुम हुआ कि वह अब तक रद्द नहीं किया गया। पिछले १० वर्ष में केवल ४ ही शिकायतें बेगार सम्बन्धी सीधी गवर्नमैण्ट के पास हुई हैं। यह सम्भव है कि और भी शिकायतें स्थानीय अधिकारियों के पास हुई हों और उन्हों ने वहीं फैसला कर दिया हो...............

"उस इश्तिहार के फिर जारी करने और उस के अनुसार कार्य करने के विषय में जो सम्मति दी गई है उसका उत्तर यह है कि कोई नया आज्ञा पत्र जारी करने से पहिले गवर्नमैण्ट उसी कमिटी की रिपोर्ट की प्रतीक्षा करेगी जो पिछली जनवरी में इस बात का निर्णय करने के लिये नियत की गई थी कि जब अफ़सर लोग दौरे पर हों तो उनकी आवश्यकताओं को उन तक पहुंचाने का सब से अच्छा साधन क्या हो सकता है।"

इसका प्रत्युत्तर मैंने फिर मार्च में ही दिया था

मेरा दूसरा पत्र

"श्रीमन् !

मेरा पहिला कर्तव्य यह है कि ज़ि० गुड़गांव मे बेगार की शिकायत की ओर जो आपने अम्बाले डिवीज़न के कमिश्नर का ध्यान खींचा है उसके लिये श्रीमानों को धन्यवाद दूं। पञ्जाब के अर्थसचिव ने मुझे उस उत्तर की एक प्रति भी भेजी है जो कि गत ५ मार्च को पंजाब लैजिस्लेटिव के कौन्सिल में बेगार के साधारण प्रश्न पर दिया गया था। परन्तु बेगार प्रथा का एक अंश ऐसा है जिसके विषय में श्रीमानों की गवर्नमेन्ट को तत्काल कार्यवाही करनी चाहिये।

"गत तीन सप्ताहों में मुझे गुड़गांवा और रोहतक के ज़िलों में गुरुकुल विश्वविद्यालय की शाखाओं के निरीक्षणार्थ जाने का अवसर मिला। मैंने देखा कि युवक चपरासियों के साथ युवक चमारी औरतें सिर पर चपरासी का बिस्तरा लिया बाधित बेगार में जारही हैं। मैंने इसको बहुत ही अनुचित समझा कि युवा स्त्रियां युवक चपरासियों और सरकारी अधिकारियों के नौकरों के साथ जबर्दस्ती भेजी जावें, और कभी उनके साथ ही रात बितानी पड़े। मुझे ग्रामीण सर्वसाधारणों से मालूम हुआ कि इससे बहुतवार बड़े कुत्सित परिणाम निकलते हैं, तथा व्यभिचार फैलता है और ऐसी खराबियों को लम्बरदार दबा देते हैं जो ऐसी खराबियों से स्वयं मुक्त नहीं है। स्त्री अपनी जाति की माता है चाहे वह युरोपियन लेडी हो वा ब्राह्मणी देवी हो वा लोक प्रसिद्ध अछूत जाति की पुत्री हो। बेगार के साधारण प्रश्न के लिये उस रिपोर्ट की प्रतीक्षा की जा सकती है जो कि गत जनवरी में सरकारी अफ़सरों में सामान पहुंचाने के उचित साधनों पर विचार करने के लिये नियत की गई है, परंतु बेगार में स्त्रियों को जबर्दस्ती ले जाने की प्रथा एक दम बन्द हो सकती है।

मैं श्रीमानों से प्रार्थना करता हूं कि आप स्वयं इसमें हस्तक्षेप करें और ऐसा घोषणा पत्र घुमा दें कि किसी अवस्था में भी कोई भी स्त्री बाधित बेगार में न लगाई जावे। मैंने श्रीमानों को सीधा सम्बोधन इस लिये किया है कि एक बड़ी आवश्यक बुराई के सुधार में विलम्ब न हो। इस दृढ़ आशा से कि श्रीमानों को अपने आधीन निर्धन से निर्धन प्रजा का भी पितृवत् स्नेह है।"

मैं हूं आपका सेवक

श्रद्धानन्द सन्यासी

(असमाप्त)

अनुचित आशा का फल निराशा

पण्डित हरिश्चंद्र (गुरुकुल के प्रथम स्नातक) ५½ वर्ष से विदेश में हैं। मार्च १६१६ के अन्त में वे लण्डन में थे, अन्तिम पत्र उनका देहली में उनके भाई के पास अप्रेल के मध्य में पहुंचा था कि फिर कुछ पता न लगा। कई महीनों के बाद अकस्मात् उनका पत्र २५ नवम्बर १६१६ का लिखा हुआ जनवरी में देहली पहुंचा। उस में लिखा था कि अपनी रक्षक गवर्नमेण्ट की कृपा से ७ महीनों तक उनको पुर्तगाल में नज़रबन्द रहना पड़ा। उस में

ओ३म्

श्रद्धा ११ आषाढ़ १९७७ का क्रोडपत्र

हन्टर-कमिटी रिपोर्ट की उधेड़ बुन

(२)

अपने स्वदेशी भाईयों के साथ मेरा पत्रव्यवहार, प्रायः हिन्दोस्तानी भाषा में होता है परन्तु यह पत्र अंग्रेज़ी में इस लिए लिखा गया कि इसे अंग्रेज़ी दैनिक समाचार पत्रों में छपवाने की आवश्यकता थी क्यों कि महात्मा गांधी के घोषणा पत्र उन्हीं में निकलते थे। मैंने इस पत्र में यह बतलाकर कि रौलट-बिलों के सम्बन्ध में जिस सत्याग्रह के प्रण पर मैंने हस्ताक्षर किये थे उस से पहिले भी मैं अहिंसा और सत्य का ही केवल प्रचार न करता था प्रत्युत, ब्रह्मचर्य को भी कृतकार्यता का मूल साधन समझता था, और यह बतलाकर कि वर्तमान पौलिटिकल तथा मौन्टेगुचैम्सफोर्ड सुधार-स्कीम को उद्देश्य करते हुए मेरी यह सम्मति रही है कि अपने शासकों का गोष्ठी में हम कभी भी मुकाबिला नहीं कर सकते क्यों कि १००० वर्ष से वे राज सम्बन्धी कुटिल नीति के संसार में शिरोमणी रहे हैं, मैंने देहली के हत्याकाण्ड का ज़िकर करके लिखा था—"अहमदाबाद वीरम गांव और कसूर आदि स्थानों में जो कुछ भटके हुए उजड्ड आदमियों ने अत्याचार और महापाप किए उन को अपराधी ठहराने में आप के साथ मैं सहमत हूं। इस से आगे मैं सरकारी और अन्य मकानों के विशेषतः अमृतसर और गुजरांवाला के ईसाई गिर्जों, के जलाए जाने पर घृणा प्रकट करता हूं। हिन्दुस्तानी धार्मिक ईसाई की हत्या ने मुझे बहुत ही उद्विग्न किया है; और मैं आशा करता हूं कि अमृतसर और अन्य स्थानों के हिन्दू मुसलमान इन गिर्जों को पुनः बनाने और इस प्रकार मारे गए युरोपियन और हिन्दोस्तानी भाईयों के परिवारों के साथ असली हमदर्दी दिखाने से कुछ प्रायश्चित करेंगे।

इस के पश्चात् यह लिखकर कि इतने दिनों इन विषयों पर मेरी आवाज़ इस लिए न सुनी गई थी कि दिल्ली और पंजाब में प्रेस का गला घूंट दिया गया था और तार समाचारों तथा पत्रों पर भी सैंसर बैठा हुआ था और इस पर बल देकर कि महात्मा जी के लिए बहुत पूजा का भाव मन में रखते हुए भी अपने आत्मा की आवाज़ को दबा नहीं सकता, मैंने लिखा था—"आपने सभ्यता से क़ानून का तोड़ना कुछ काल के लिए इस लिए बन्द कर दिया है क्यों कि आप की सम्मति में 'देश के अन्दर एक संकट का समय आगया है और यह (कानून का तोड़ना) समय के अनुकूल नहीं है। किन्तु आप आशा रखते हैं कि "जब देश में शान्ति की पुनः स्थापना होजायगी और जनता इस (सत्याग्रह) के सच्चे नियमों को ग्रहण करने के योग्य हो जावेगी तो इसे फिर चलाया जावेगा।"

अब मेरा निश्चय है कि जबतक वर्तमान शासन-प्रणाली चलेगी तबतक न तो देश में शांति की पुनः स्थापना की ही आशा है और नहीं जनता को असली तौर पर आपके बतलाए सत्याग्रह के सच्चे नियम......ग्रहण करने का मौका मिल सकेगा। इस लिए मेरा निश्चय है कि हिन्दोस्तान की वर्तमान दशा में, जनता में हलचल उत्पन्न किए बिना (जिस के लिए न आप न और कोई सत्याग्रही ज़िम्मेवार हैं) कानून को सभ्यता से तोड़ना असम्भव है, इस लिए आप के मन्तव्यानुसार सभ्यता से कानून तोड़ने का अवसर शीघ्र आवेगा ही नहीं। इस के अतिरिक्त मेरी यह सम्मति भी है कि जब हिन्दोस्तान में वास्तविक शान्ति स्थापित होजायगी तो रौलट एक्ट का बहिष्कार होचुका होगा और तब उन के कारण सभ्यता से कानून तोड़ने का कोई अवसर ही न रहेगा। परिणाम यह है कि अब मेरे आप की बनाई हुई सत्याग्रह की प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर करने के असली कारण के उड़ जाने पर, मैं आपकी स्थापित की हुई सत्याग्रह सभा से अपना नाम लौटा लेने की आज्ञा चाहता हूं। सन्यास-धर्म के अनुसार धर्म के शाश्वत नियमों के कर्त्तव्य और प्रचार का मेरा काम (जिस में सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचर्य भी शामिल हैं) चलता ही रहेगा............"। ऊपर के उद्धरणों को पढ़ कर पाठकों को सन्देह नहीं रह सकता कि मैंने महात्मा गांधी की सत्याग्रह सभा से त्याग-पत्र क्यों दिया—इस लिए नहीं कि लार्ड हन्टर और उन के गोरे साथियों, तथा सर चिमनलाल और उन के काले साथियों, (यद्यपि उनके दोनों साथी अंग्रेजों से कुछ कम गोरे न थे) के लेखानुसार मैं सत्याग्रह के नियमों में कुछ न्यूनता समझता था, प्रत्युत इस लिए कि जब गोरे नौकरशाही जान बूझ कर भड़काने को तय्यार हैं तो बिना हलचल के काम न हो सकेगा। इस विचार को अधिक स्पष्ट करने के लिए उसी समय का कुछ और पत्र व्यवहार देता हूं।

मेरा पत्र ३ मई १९१९ को दिल्ली से चला। ५ मई को अहमदाबाद पहुंचा होगा। ६ मई को नीचे का पत्र उन्हों ने लिखाः—

"भाई साहब, आप का ख़त मुझे मिला है, पढ़ कर मैं बहुत दुःखित हुआ हूं। मैं कैसा भी करूं, मेरी भूल होजाय तो भी आप आपका प्रण क्यों छोड़ सकते हैं। यदि लोग सत्य अहिंसा का पालन करने के लिए तय्यार न होजाएंगे तो हम सार्वजनिक सत्याग्रह छोड़ सकते हैं, किन्तु हम सब क्यों छोड़ सकते हैं? मैं नहीं जानता हूं कि आपको सब पत्रिका मिल चुकी है या नहीं। एक पत्रिका जिसमें लड़त किस तरह फिर शुरू हो सकती है उस बारे में लिखा गया है। जब तक रौलेटकायदे रद्द नहीं हुए हैं तब तक हम शान्ति नहीं रह सकते हैं—ऐसा मेरा दृढ़ मन्तव्य है।

दिल्ली में मिलिटरी ने भूल की ऐसा मैंने आपके ख़त से जान लिया और आपको मालूम है मेरे व्याख्यानों में इस विषय में मैंने सख़्त टीका की थी। पंजाब के बारे में अब तक भी मुझे मालूम नहीं है कि मुख्य दोष किसका है। पंजाब के बारे में मैंने कुछ भी नहीं कहा। अहम-

दाबाद और वीरम गाम में पोलिस का कोई दोष नहीं था। केवल स्वच्छंदता ही से लोगों ने बड़ा भारी अत्याचार किया था। प्रजा के साथ साथ काम करते हुए प्रजा को सीधा रास्ता बताना आपका और मेरा धर्म है, ऐसी मेरी अटल मति है। मेरी उम्मीद है आप प्रतिज्ञा का ठीक ठीक पालन करेंगे। आपका मोहनदास गांधी" इस पत्र का उत्तर मैंने ९ मई को लिख कर भेजा, जो नीचे देता हूं--
"श्री महात्मा गाँधी जी,

आप का ६ मई का पत्र मुझे मिला, इसमें मेरे पत्र का पूरा उत्तर नहीं आया। आप ने अपनी नई पत्रिका पढ़ने के लिए मुझे लिखा है। ८ मई के Independent में मैंने आप के दो लेख पढ़े। आप जुलाई के प्रारम्भ से फिर क़ानून भङ्ग का कार्य आरम्भ करने को लिखते हैं। मेरी सम्मति में इन दो मास के अन्दर सारी जनता में सत्याग्रह के सच्चे भाव नहीं फैलाये जा सकेंगे। और जबतक गवर्नमेन्ट का इस समय का बर्ताव जारी रहेगा तब तक कभी भी ऐसे उच्च भाव जनता में फैल नहीं सकेंगे। आपको भी इस में सन्देह है और इसी लिए आप लिखते हैं कि यदि ऐसा न हुआ तौ भी सरकार इतनी फ़ौजें लगा देगी कि लोग Violence न कर सकेंगे। इस लेख ने इधर के सब सत्यग्रहियों में असन्तोष फैला दिया है। मेरा निश्चय है कि ऐसी बेइज़्ज़ती को कबूल करना सत्याग्रह नहीं किन्तु सरल जनता को फ़ौजियों के हवाले करना रूपी पाप है। शोक यह है कि जिन सहस्रों आदमियों ने आप से श्रद्धा के भाव से प्रेरित होकर सांसारिक और अपने भविष्य की परवा न करके सांसारिक सब कुछ खोया उन से कुछ भी सम्मति न लेकर आप एकदम घोषणा पत्र छपवा देते हैं।

रौलट एक्ट के विरुद्ध मेरा वैयक्तिक (individual) सत्याग्रह जारी रहेगा, परन्तु पहिले पत्र में जो कुछ मैंने लिखा है इस पर (आप के ८ मई वाले लेख Independent में ...) मेरा निश्चय और भी दृढ़ हो गया है।

"आपका
श्रद्धानन्द

मेरे अन्तिम पत्र से सर्व साधारण को पता लग जावेगा कि मैं सत्याग्रह के नियम के विरुद्ध न था प्रत्युत, उसके प्रयोग में लाने के महात्मा गान्धी के ढंग के विरुद्ध था। यह प्रसन्नता की बात है कि महात्मा गान्धी जी ने ख़िलाफ़त के प्रश्न पर आन्दोलन करते हुए स्पष्ट कह दिया है कि यदि सचाई पर चलते हुए दसलाख भी कट जावें तो परवाह नहीं। परन्तु होना यह चाहिए कि अपनी ओर से सत्याग्रही सत्याग्रह के अपराधी, न बनें।

देहली का मामला। हण्टर कमेटी के गोरे और काले दोनों प्रकार के ही सभासद् इस परिणाम पर पहुंचे हैं कि ३० मार्च सन् १९१९ को जो दो बार गोली चली वह उचित थी। इस परिणाम पर पहुंचने का कारण यह मालूम होता है कि इन लोगों ने सरकारी गवाहों को, जो स्वयं अपराधी थे, प्रामाणिक समझा है, और उनके मुक़ाबिले में देहली के प्रसिद्ध से प्रसिद्ध नेताओं की साक्षी का कुछ भी मूल्य नहीं समझा। इस का कारण एक और भी मालूम होता है। वह यह कि जिन सरकारी अफ़सरों पर जिरह के सवाल करने से असलियत मालूम हो सकती थी, उन पर या तो जिरह करने का मौका नहीं मिला और या गवर्नमेंट की तरफ़ से पेश ही नहीं किया गया। मिस्टर ओड सुपरिन्टेंडेण्ट सी. आई. डी. का बयान जनता के प्रतिनिधियों को जिरह का मौका दिये बिना इस बहाने पर समाप्त कर दिया गया कि वे छुट्टी पर जाते हैं। यदि उनका बयान ४ दिन पीछे होता तो कुछ गज़ब न हो जाता। मिस्टर ओड से पूछ कर साफ़ हो जाता कि ३० मार्च को गोली चलने के पीछे जो जोश सर्वसाधारण में रहा उसके कारण एक मात्र कर्नल बीडन थे। कर्नल बीडन की शिकायतें वायसराय तक पहुंचाई जा चुकी थीं, प्रेस में बराबर उनकी चर्चा थी, परन्तु उनको सी.आई.ई का ख़िताब देकर फ़्रांस पर भेज दिया गया। यदि इन्हें भी कुछ दिन रोका--जाता तो कोई हर्ज न था। ३० मार्च की पहिली गोली मिस्टर मार्शल पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट की भूल से चली। उनको ४ दिन पीछे ही देहली से ग़ायब कर दिया गया और उनकी बला गले लगने के लिये मिस्टर जैफ़रीज़ (असिस्टेण्ट सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस) से वे अकल आदमी आगे कर दिये गये। मिस्टर जैफ़रीज़ का बयान जिन्होंने सुना है, उनको मालूम है कि प्रत्येक बात में अत्युक्ति करना इसने अपना कर्तव्य समझा हुआ था। जहां सैशन जज के बयान में रेलवे स्टेशन पर जमा जनता के हाथ में लाठियों का होना वर्णित नहीं वहां जैफ़रीज़ को चारों ओर लट्ठबन्ध ही दिखलाई देते थे। दृष्टान्त के लिए जफ़रीज़ का एक बड़ा झूठ मैंने अपने छपे हुए बयान में हण्टर कमिटी के सामने पेश कर दिया था। जब ३० तारीख़ की बड़ी मीटिंग को पहिले फ़ौजी सवारों ने घेर लिया तो फ़ौजी जनरल के साथ मिस्टर जैफ़रीज़ भी घोड़े पर आये थे, जिन से मैंने इस हस्ताक्षेप का कारण पूछा। जैफ़रीज़ ने ही यह कहा था कि अभी एक घोड़ा मेरे पास से गुज़रा। उसी समय मैंने सारी जनता को पूछा तो किसी ने भी कोई घोड़ा जाते हुए नहीं देखा था, इसी पर ये लोग लज्जित होकर लौट गये थे।

बड़ी भारी घटना उस दिन यह थी जबकि चीफ़ कमिश्नर ने फ़ौज को लेकर दूसरी बार ३० तारीख़ के बड़े हुजूम के गिर्द घेरा डाला था, और मशीनगनों को सड़क पर लगा कर पूछा था कि सभा के शांति से बिखर जाने का कौन ज़िम्मेवार होगा, मैंने एक दम से जवाब दिया था "मैं स्वयं ज़िम्मेवार हूंगा और इसी लिए उन लोगों को जिनके सम्बन्धी गोली से मारे गये वा घायल हुए हैं उनको मैं शान्त कर रहा हूं; परन्तु यदि हमारे घर लौटने के समय फ़ौजों ने कुछ भी तंग किया तो सारी ज़िम्मेवारी आप पर होगी।" उस समय चीफ़कमिश्नर यह कहते हुए लौटे थे कि—"यदि यह मीटिंग चुपचाप बिखर जावेगी तो फ़ौजी और पुलिस कोई भी हस्ताक्षेप न करेंगे।" परन्तु जब सभा विसर्जन हुई, और जनता शान्ति से मेरे साथ आ रही थी तो मार्ग में मनीपुरियों ने हमें आते देखकर एक ओर होकर कारतूस भरे और एक गोली

की आवाज़ सुनाई दी। मेरे पटरी पर चढ़कर पूछने के साथ ही ११,१२ राइफलें मेरी छाती की ओर लगादी गई। और साहब का यह कहना ठीक नहीं है कि उन्होंने मुझे चले जाने के लिये persuade किया प्रत्युत यह दृश्य उन्हें दिखला कर मैं चल दिया था। उस के पश्चात् एक फर्लांग तक बराबर मैशीनगन हमारे गिर्द घेरा डालती गई और लोग शान्त रहे। इस पर हन्टर कमेटी ने ध्यान ही नहीं दिया। फिर जब ३१ मार्च को पहिला जनाज़ा कबरिस्तान की तरफ़ चला गया तब भी अन्त तक मैशीनगन ने पीछा किया इन सब घटनाओं का कोई भी ज़िक्र नहीं है।

सत्याग्रह का देहली में असर हन्टर-कमिटी ने देहली में ३० मार्च की घटना को सत्याग्रह का परिणाम बतलाया है, परन्तु यदि मेरे, हकीम अजमल खां, डाक्टर अन्सारी, रायबहादुर सुलतान सिंह और अन्य भद्रपुरुषों के बयानों पर कुछ भी ध्यान दिया जाता तो कमेटी को मानना पड़ता कि देहली में जो जोष उठा, उसके लिए तो सरकारी अफसरों का वह प्रमाद जिम्मेवार था जिसने निहत्थे निरपराधियों पर गोलियां चलवाईं। और इस परिणाम का सहारा देहली के सत्याग्रहियों के सिर पर है कि उसके पश्चात् राजपुरुषों और प्रजापुरुषों दोनों का कुछ नुकसान नहीं हुआ। ऐसे मौके १२, १४ और १५ अप्रैल सन् १९१९ के दिनों में कई बार आये जब कि यदि सत्याग्रही जनता को शान्त न करते, और उनके अन्दर के पशु भाव को दैवभाव का सञ्चार कर के दबा न देते, तो न जाने क्या हो जाता। उस समय क्या हो सकता था इसका हाल मिस्टर ग्रैरन ही ठीक तौर पर बतला सकते. यदि एङ्ग्लो इण्डियन जनता ने एक ओर, और गवर्नर जनरल की कौन्सिल ने दूसरी ओर दबाव न दिया होता। यह सत्याग्रह सभा के अधिकारियों का ही काम था कि जहां एक ओर गोरे और काले नौकर शाहियों का बाल बांका न हुआ वहां नौकर शाहियों को भी मशीनगनें चलाने और एरोप्लेन से बम्ब बरसाने का मौक़ा न मिला। मुझे बड़ा शोक कमिटी के हिन्दुस्तानी मैम्बरों पर है जिन्होंने केवल दलबन्दी के पक्षपात में बड़े ज़बर्दस्त आत्मिक नियम का तिरस्कार कर डाला। यतः उनके नेता सत्याग्रह के विरुद्ध व्यवस्था दे चुके थे, इस लिए सत्याग्रह के गुण भी उनको दृष्टि में दोष ही नज़र आने लगे, और इसी पक्षपात में पड़ कर उन्होंने देहली की घटना की अधिक छान बीन नहीं की।

मेरी सम्मति में विरोध की आग फिर से न धधक उठती और सर्वथा शान्ति हो जाती यदि लार्ड चैम्सफोर्ड की स्पेशल ट्रेन, जो देहरादून जाते हुए ३१ मार्च के मध्यान्ह समय देहली ठहरी थी, उनको उतर कर नगर में आने की आज्ञा देती और जो दो दर्जन से अधिक घायल हस्पताल में पड़े थे, उनके साथ किङ्ग जार्ज के प्रतिनिधि सहानुभूति प्रकट कर जाते। परन्तु लोगों की यह आशा तो पूरी न हुई, और तीसरे ही दिन जो कुछ देहली के लोकल अधिकारियों ने अपनी बरियत के लिए रिपोर्ट की उसी पर मोहर लगा कर वायसराय के होम-डिपार्टमैण्ट से घोषणापत्र निकल गया।

(असमाप्त)

श्रद्धानन्द सन्यासी

—:o:—

गुरुकुल—जगत्

गुरुकुल—कांगड़ी

'कुल' में सावन भादों पंजाब और संयुक्त प्रान्त से आये हुए समाचारों से ज्ञात होता है कि उधर अभी बड़ी गर्मी है और एक बूंद भी नहीं पड़ी। परन्तु हमारे कुल में और ही मौसम है। लोक में प्रचलित मति की दासता से मुक्त हो एक क्षण के लिए यदि यह भुला दिया जावे कि यह महीना "आषाढ़" का है, तो हम निःशंक, यह कह सकते हैं कि पिछले सप्ताह से यहां पर तो सावन-भादों का ही समा बंधा हुआ है। पिछले दिनों की मुसलाधार वर्षा और चारों ओर की हरियावल को दृष्टि में रखते हुये गुरुकुल की किसी सभा में इस विषय पर एक मनोरञ्जक विवाद हो सकता है कि "आज कल क्या मौसम है, जेठ-आषाढ़ या सावन-भादों"।

गंगा पिछले दिनों की वर्षा के कारण गङ्गा में अब खूब पानी आगया है। दोनों धारायें अच्छी तरह से चल रही हैं जिस से सायंकाल, ब्रह्मचारीगण आनन्द पूर्वक तैरते हैं। श्री-मुख्याधिष्ठाता जी ने आज्ञा प्रकाशित कर दी है कि तैरने का सामुदाय शीघ्र किसी भी दिन, केवल ६ घन्टे पूर्व सूचना देने पर होगा-जिसके लिए उचित पारितोषक भी दिया जावेगा। ब्रह्मचारीगण, अत्यन्त उत्साह पूर्वक, उसकी तैय्यारी में लगे हुये हैं।

पढ़ाई विद्यालय तथा महाविद्यालय, दोनों विभागों में, पढ़ाई नियम पूर्वक चल रही है। श्री० वैद्य धरणीधर जी ग्रीष्मावकाश से लौट आये हैं और उन्होंने आयुर्वेदिक की पढ़ाई का फिर चार्ज ले लिया है। श्री० प्रो० छेदीलाल जी के वापिस आने की असमर्थता प्रकट करने के कारण इतिहास-अर्थशास्त्रोपाध्याय का जो पद रिक्त हुआ है उसके स्थान पर १४ वीं श्रेणी को श्री० आचार्य जी और शेष तीन श्रेणियों को सहायक अर्थ शास्त्रोपाध्याय श्री० पं० जयचन्द्र जी पढ़ाते हैं। शेष सब उपाध्याय तथा अध्यापक महाशय अपने काम में खूब लगे हुए हैं।

हमारे विद्यार्थी और शास्त्री परीक्षा गुरुकुल की दशम श्रेणी तक ही पढ़कर कई विद्यार्थि, गत-वर्ष किन्हीं कारणों से, यहां से जाकर ही शास्त्री परीक्षा में बैठ गये थे। गुरुकुल-प्रेमियों को यह सुन कर प्रसन्नता होगी कि इनमें से लगभग सभी पास हो गये हैं। उनके नाम ये हैं-ब्र० [illegible] (सुशोभन) ब्र० [illegible], ब्र० दीनदयाल, ब्र० [illegible], ब्र० [illegible]। इतना ही नहीं, ब्र० [illegible] का सम्पूर्ण परीक्षा परिणाम की सूची में द्वितीय नम्बर रहा है। गुरुकुल की [illegible] की शिक्षण की योग्यता का इस से [illegible] और क्या प्रमाण हो सकता [illegible]

शिल्प और्द्योगिक विभाग के [illegible] [illegible] [illegible] की [illegible] था वह सब लगभग [illegible] है। बड़ोदा में विशेष रूप से शिक्षा पाये हुए स्नातक श्री० पं० सत्यानन्द जी विद्यालंकार इस विभाग के अध्यक्ष हैं। इस विभाग में

सा का कार्य, अब शीघ्र ही प्रारम्भ ने वाला है।

कृषि-विभाग

हम अपने किसी पिछले अंक में कृषि नये उपाध्याय श्री० देवराज जी के ाने की सूचना दे चुके हैं। आपके लगन, रिश्रम और उत्साह से इस विभाग में ाश्चर्य जनक उन्नति और नवजीवन आ या है। विद्यार्थियों को खेतों में ले जा र आप क्रियात्मक काम (जैसे हल च- ाना इत्यादि) स्वयं अत्यन्त प्रेम से, कराते हैं जिससे अन्य ब्रह्मचारियों के नों में भी इस काम के प्रति रुचि पैदा ा रही है। आर्य्य जनता को यह सुन र प्रसन्नता होगी कि इन्होंने अब यहाँ हमे का निश्चय कर लिया है।

कार्य

हम गुरुकुल प्रेमियों को आशा दिलाते कि हम उन्हें प्रति १५ वें दिन इस विभाग में ब्रह्मचारियों द्वारा किये गए ार्य का कुछ संक्षिप्त वर्णन सुनाया क- गे। पिछले दो सप्ताह में जो कार्य किया है, वह इस प्रकार है:—

"यहां की भूमि में इस साल, गर्मी की भाजी अच्छी नहीं हुई। "लाल सुरखी" नाम के कीड़े ने खीरा ककड़ी, खरबूज, कद्दू तथा इसी जाति के और फलों को बहुत नुकसान पहुंचाया है। इन कीड़ों के होते हुये जो जिन्होंने ज़- मीन के पास के टुकड़ों में यही खेती बोई थी, उन्हें अब आगे के लिए अच्छी शिक्षा मिल गई है। परन्तु, इस से कीड़ों को अपना भोजन खासी तादाद में मिल गया जिस से वे और भी बढ़ गये। नतीजा इसका यह हुआ कि लगभग सारी खेती निकम्मी होगई है। हमारे कृषि के उपा- ध्याय जब आये थे तब यह नाश लगभग समस्त होचुका था और शेष को बचाने के लिए यत्न करने में खर्चा बहुत अधिक था। इन दिनों की वर्षा ने इस नुकसान को कुछ कम कर दिया है। प्रकृति ने भी विद्यार्थियों को यही शिक्षा दी है कि इस बुराई का गर्भ में ही नाश करना सब से उत्तम है। इस से खर्च कम होता है। उन के टुकड़ों (ज़मीन के) में मक्की बहुत अच्छी हुई है। अपने खेतों में मक्की की सुण्डी, को देख कर उन्हें कुछ सन्देह हुआ था [illegible] करने के लिए उन्होंने उचित उपाय कर लिये जिस में उन्हें पूरी कामयाबी हासिल हुई।

इस विभाग के प्रत्येक छात्र को क्रि- यात्मक शिक्षा देने के लिए, आश्रम के पीछे की ज़मीन में से ⅖ एकड़ टुकड़ा दिया गया है जिसमें उन्होंने वर्षा के इन दिनों में, कपास बोई है। इस सूबे के डायरेक्टर आव एग्रीकैल्चर मि० लीक ने १० सेर कपास के बीज भेजने की कृपा की है। ये बीज, जो कि ब- ढ़िया हैं, २ एकड़ ज़मीन में बोये गए हैं। इसे २½ फ़िट के फ़ासले पर लाइनों में काश्त किया गया है जिसके पौधे अच्छी तरह से निकल आये हैं। हमारे कृषि के उपाध्याय जी की प्रार्थना करने पर, ला- हौर के "पंजाब वैटिरिनरी" कालेज के एक ग्रेजुएट यहां आये थे और उन्होंने १४ वीं श्रेणी के कृषि के विद्यार्थियों को "पशु-विद्या" के विज्ञान पर एक उत्तम व्याख्यान दिया। विद्वानों के इस प्रकार के व्याख्यान विद्यार्थियों के लिए अत्य- न्त उपयोगी और लाभदायक होते हैं।

किसानों की ज़मीन का एक जगह होना, आर्थिक दृष्टि से, ज़मीदारों के लिए बहुत लाभदायक है। हम अपने किसानों की ज़मीनों को एक ब्लाक में लाने का प्रबन्ध कर रहे हैं।

गुरुकुल ने लायलपुर से, वहीं के बने हुये, खेती के यन्त्र मंगवा लिये हैं। इन से काश्त करने का काम कम समय में और कम ख़र्च से हो सकेगा।

इस समय ढोरों के लिए चारा बोया जा रहा है जिस के लिए यह वर्षा बहुत लाभ दायक हुई है। बड़े बाग में, इस बसन्त के मौसम में, पहली दफ़ा गोभी लगाई गई है।

साहित्य परिषद् पार्लियामेंट के रूप में साहित्य परिषद् का जो शानदार विशेष अधिवेशन हुआ था, उसका संक्षिप्त वर्णन पिछले अंक में हम दे चुके हैं। इस सप्ताह इस का एक साधारण अधिवेशन हुआ जिसमें श्री० पं० सत्यदेव जी विद्यालंकार ने "स्वदेशी" पर एक खोज पूर्ण और उत्तम निबन्ध पढ़ा। निबन्धकर्त्ता ने कम्पनी के राज्य से, आधुनिक काल तक के इतिहास पर दृष्टि डालते हुए और उस समय स्व- देश में बने हुये पदार्थों के वर्णन के साथ साथ १६०४-७ के दिनों के स्वदेशी आन्दोलन के कारण, विस्तार और प्र- स्ताव पर विचार करते हुये, इस समय यह आन्दोलन किस प्रकार सफल हो सकता है और इसका क्या महत्व है इत्यादि प्रश्नों पर आर्थिक, सामाजिक और राज- नैतिक दृष्टि से अत्युत्तम विचार किया गया था। निबन्ध पर मनोरञ्जक विवाद भी हुआ था। सभापति का आसन श्री पं० विश्वनाथ जी ने सुशोभित किया था।

अन्य सभायें पिछले दिनों महा- विद्यालय वाग्व- र्धिनी सभा में कई उत्तम २ व्याख्यान हुये जिन में से दो श्री—प० रामचन्द्र जी सिद्धान्तालंकार ने "धर्म और मृत्यु" "अख़बारों की दुनिया—" इन दो विषयों पर दिये। सभ्यों ने इन्हें बहुत पसन्द किया तीसरा व्याख्यान, श्री० पूज्य आचार्य्य जी के सभापतित्व में, गुरुकुल वृन्दावन के स्नातक श्री० प्रो० धर्मेन्द्र तर्क शिरोमणि (स- म्पादक 'आर्य्यमित्र') ने "योग का वैज्ञा- निक आधार" इस विषय पर १६ आषाढ़ को दोपहर को दिया था। म०वि० की दूसरी मुख्य सभा "संस्कृतो- त्साहिनी" के अधिवेशन भी नियम पू- र्वक हो रहे हैं १७ वैशाख को इस सभा की ओर से एक- "राजकवि सम्मेलन" किया था जिसमें राजा भोज के कालिदास भारवि भवभूति आदि प्रसिद्ध ६ कवियों के अनुकरण में ब्रह्मचारियों में भी ६ कवि बने थे जिन्होंने अपने २ श्लोक सु- स्वर के साथ सुनाये थे। सभापति के आसन पर श्री० प० वागीश्वर जी विद्यालंकार विराजमान थे। १८ वैशाख को इसी सभा का जन्मोत्सव भी अत्यन्त समारोह और आनन्द के साथ मनाया गया था। सभापति श्री० पं० शान्तिस्वरूप शर्मा वेदालंकार, प्रबन्धकर्त्ता गुरुकुल भैंसवाल (रोहतक) थे। सभापति जी के योग्य- तापूर्ण, उत्तम गम्भीर और धारा प्रवाह संस्कृत भाषण के अतिरिक्त अन्य विद्या- लय के कई ब्रह्मचारियों ने भी सरल और शुद्ध से संस्कृत में उत्तम और सम- योचित व्याख्यान दिये।

लिखा था कि ४ दिन से रिहाई हुई है और कि वे स्पेन की राजधानी मैड्रिट को जारहे है। उसके पश्चात् कोई पत्र नहीं आया जिस पर आश्चर्य था। मार्च के मध्य में फिर पत्र आया कि मैड्रिड में टाईफ़स (Typhus) बुखार ने बहुत सताया, दो बार उसके आक्रमण हुए परन्तु जान बचगई। निर्बलता दूर होने पर घर को लौटेंगे। इस अन्तर में मैंने कर्नल सी के. (Col. C. kaye) डायरैक्टर सी. आई. डी. से पत्र व्यवहार किया और स्पष्ट पूछा कि पं० हरिश्चन्द्र के यहां आने में कोई बाधा तो नहीं है। कर्नल 'के' का सीधा उत्तर आया कि कोई कारण नहीं कि पण्डित हरिश्चन्द्र अपने देश को लौट कर न आवें और साथ ही उन्होंने यह कृपा की कि इङ्गलैण्ड में गवर्नमेन्ट को तार भेज कर वे उनका पता लगवायेंगे। फिर जब मुझे मालूम हुआ कि जलवायु परिवर्तन के लिये पं० हरिश्चंद्र फ्रांस के Biarretg नगर में मौजूद हैं तो मैंने कर्नल के. को भी इस की सूचना दे दी फिर मई के अन्तिम सप्ताह में फ्रांस के बोलों (Boulegne) नगर से पण्डित हरिश्चंद्र का तार आया कि वे सात जून के जहाज से चलेंगे। श्रद्धा के उप सम्पादक को मैंने मना कर दिया था कि पत्र में इस की सूचना न दें। उन्होंने तो ऐसा ही किया पर म० कृष्ण ने अपने दोनों पत्रों में यह सूचना दे दी और लिखा "दिसम्बर सन् १९१४ में वे इङ्गलिस्तान गये थे और, उस वक्त से लेकर अब तक यूरप और अमरिका में ही रहे हैं। उनकी जिन्दगी निहायत पुरमाजरा है ख्याल यह है कि वे २१ जून तक तक भारत मे पहुंच जावेंगे।"

इस समाचार को पढ़ कर चारों ओर से आनंद और आशा से भरे हुए पत्र आरहे हैं परंतु उधर अवस्था यह है कि जो (China) नामी जहाज बोलों मे ७ जून को चला था वह २५ जून को बम्बई पहुचा। पण्डित इन्द्र वहां थे उनको २६ तक पण्डित हरिश्चंद्र नहीं मिले,, और न उस जहाज मे उनका पता लगा पण्डित इंद्र गुरुकुल इंद्रप्रस्थ लौट आये हैं। जिन्होंने बड़ी आशाएं बांधी थीं वे बहुत निराश होंगे, परंतु जिन्होंने आशा की लहर पर सभमें न की थी वे शांत चित्त बैठेंगे। समार मे गत ५ वर्षों के अंदर बीसियों देश, सैकड़ों नगर लाखों घर और करोड़ों मनुष्य बरबाद हो गए, वहां व्यक्ति का आना या न आना कुछ अर्थ नहीं रखता। यदि पं० हरिश्चंद के भाग्य में अपनी मातृभूमि की सेवा का विधान है तो वे अवश्य लौट आवेंगे, अन्यथा इस विषय पर अधिक लिखना या विचार करना बुद्धिमता नहीं है।

पितृ ऋण से छूटने की एक विधि

प्रत्येक आर्य गृहस्थ पर जो ३ ऋण बतलाये गये हैं, उन में से पहिला पितृ ऋण है। जिस प्रकार माता पिता ने सन्तानोत्पन्न करके उनका पालन पोषण कर उन्हें धर्म मार्ग पर चलने के अनुकूल बनाया है, उसी प्रकार संतान का भी कर्तव्य है कि उत्तम मनुष्य सृष्टि को बढ़ावे। आर्यों में पितृ ऋण का इतना बोझ माना जाता है कि जब अपने कोई सन्तान उत्पन्न न हो तो दूसरे की सन्तान को अपना कर उत्तराधिकारी बनाते हैं। किसी लड़के को गोद में लेकर उसको अपनी जायदाद का मालिक बना देना कुछ बड़ा काम नहीं है ऐसी सन्तान जायदाद का नाश भी कर देती है परन्तु विद्या आचार रूपी धन देकर ही सन्तान को उत्तम बना पितृ ऋण मे उऋण हो सकते हैं। ऐसे मनुष्यों के लिए गुरुकुल की संस्था बड़ा अच्छा अवसर देती है। अभी लाहौर के श्री डाक्टर परमानन्द जी ने १ अनाथ बालक की शिक्षा का सारा भार अपने ऊपर लेकर प्रथम ६ महीने का शुल्क भेज दिया है, और सदैव भेजने का इकरार किया है। इस समय लगभग ४० ब्रह्मचारी स्थिर ब्रह्मचारियों के आधार पर आये शुल्क पर या बिना शुल्क के शिक्षा पारहे हैं। इनके अतिरिक्त इस समय ६ ब्रह्मचारी पूरे शुल्क पर और ५ आधे शुल्क पर ऐसे पढ़ रहे हैं जिनके घर से शुल्क आना सर्वथा बन्द हो गया है, और विवश होकर उनको गुरुकुल से अलग करना पड़ेगा, यदि ६ महानुभाव १२) महीना देने वाले और ५ महानुभाव ६) महीना देने वाले तय्यार हो जावें, तो ११ ब्रह्मचारी कुलशिक्षा का लाभ लेसकें, दानियों को पितृऋण से मुक्त होने का यश मिले। अन्य पत्र सम्पादकों से मेरी प्रार्थना है कि इस लेख को अपने पत्रों में भी प्रकाशित करदें।

महात्मा गांधी और खिलाफत

महात्मा गांधी जी ने खिलाफत के सम्बंध में अपनी स्थिति स्पष्ट करदी है। उन्होंने मान लिया है कि सब ही मुसलमान इस में शामिल नहीं है, केवल वे ही हैं जो निर्भय होकर असहयोगिता का व्रत (non-coopration) पालन करना चाहते हैं। बाहर वालों के लिए चाहे वे मुसलमानों के पूरे प्रतिनिधि न समझे जावें, परन्तु वे अपनी संख्या बढ़ाने का प्रयत्न कर रहे हैं। इस लिये कि शायद सारी मुसल्मान जनता शामिल न हो सके इनका काम व्यर्थ नहीं कहाजा सकता। यह सर्वथा सत्य है। यदि १ मनुष्य भी अपना कोई विशेष धर्म समझ ले तो इस लिये कि उसमें अन्य लोग शामिल नहीं हो सकते, वह अपने कर्तव्य से नहीं गिरेगा। अपने विषय में गांधी जी ने साफ़ कह दिया है कि वे मुसल्मानों को प्रतिनिधि रूप से पीछे चलाने वाले मुसल्मान ही हो सकते हैं, । वे तो कृतकार्यता की विधि अर्थात् वे लीडर नहीं है। प्रत्युत् सलाहकार हैं। मुसल्मान जनता को पीछे चलाने वाले है अमल में लाना मुसल्मानों का काम है। प्रश्न हो सकता है कि कमेटी में अन्य हिंदू क्यों नहीं हैं, गांधी जी उत्तर देते हैं कि यह काम मुसलमानों का है न कि हिंदुओं का। यतः गांधी जी असहयोगिता की विद्या में निपुण हैं इस लिये उन्हें कमेटी में लिया गया है न कि हिंदुओं के प्रतिनिधि रूप से। गांधी जी लिखते हैं कि वे मुसल्मानों के साथ वहीं तक चलेंगे जहां तक कि उनकी मांग सर्वथा न्यायानुकूल होगी। और यह ब्रिटिश राज भक्ति के विरुद्ध भी नहीं है, परन्तु यदि मुसल्मान आग्रह करेंगे तो वे उन के साथ न होंगे। इस को फिर स्पष्ट करते हैं:—यदि मुसल्मान अफगानिस्तान के द्वारा भारत पर चढ़ाई करें और उस दबाव से टर्की की सन्धि की शर्तों को ठीक कराना चाहें तो प्रत्येक हिंदू का कर्तव्य होगा कि उस चढ़ाई का मुकाबिला करे।

यह अंतिम बात मेरी समझ में नहीं आई। ऐसे विचार रखते हुए महात्मा गाधी जी को चाहिये कि खिलाफत कमेटी से प्रतिज्ञा करालें कि वे लोग किसी भी आग्रह में शामिल न होंगे, और मिस्टर शौकतअली से उनके उस कथन का खण्डन करा दे, जहां उन्होंने पुत्र को जहाद की धमकी दी थी। यदि खिलाफत कमेटी इन बातो को मानने के लिये तय्यार न हो जावे तो गांधी जी का उस कमेटी का अगुआ बनना (क्यों कि वे ही इस समय उसके कर्ता धर्ता हैं) उनको उस कमेटी के सभासदों के सब कामों का जिम्मेवार बनावेगा।

श्रद्धानन्द सन्यासी

पुस्तक--समालोचना

आर्य्य-धर्म-ग्रन्थमाला:—

के ६ गुच्छक हमें समालोचनार्थ प्राप्त हुए हैं।

(१) आर्य्यों की नित्यकर्म-पद्धतिः—वैदिक-सिद्धान्तानुमोदित जो नित्य कर्म प्राचीन शास्त्रों में प्रत्येक सद्गृहस्थी के लिए बताये गए हैं, उन पर इस पुस्तक में बड़ा उत्तम विचार किया गया है। प्रत्येक मंत्र का अर्थ और भावार्थ देने से महत्व और भी बढ़ गया है। पृष्ठ संख्या ३०, मूल्य -)

(२) पंच महायज्ञों की विधिः—हमारे शास्त्रों में प्रत्येक गृहस्थ के लिए ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, बलिवैश्वयज्ञ और अतिथि यज्ञ—ये पांच दैनिक यज्ञ बताये गए हैं। मनु महाराज ने इन यज्ञों को अत्यन्तावश्यक और पुण्य कारक बतलाया है। २६ पृष्ठ की इस पुस्तक में इन सब पर उत्तम विचार किया गया है। प्रत्येक यज्ञ के लिए आवश्यक जो मन्त्र हैं, उनके अर्थों पर युक्तियुक्त विचार करने से इसका महत्व और भी बढ़ जाता है। मूल्य -)

(३) विस्तार पूर्वक सन्ध्याविधिः—स्वर्गीय श्री० ला० ज्वाला सहाय जी—लूनमियानी निवासी—की उर्दू की पुस्तक का यह हिन्दी अनुवाद है। पुराने आर्यसमाजी ला० ज्वाला सहाय जी के नाम से भली भांति परिचित हैं। आपको वैदिक-धर्म से कितना प्रेम था और आपकी ईश्वरोपासना में कितनी दृढ़ता और अनुराग था—यह आपको इस पुस्तक के स्वाध्याय से पता लगता है। प्रारम्भ में सन्ध्या की आवश्यकता बताते हुए और सन्ध्याकाल तथा 'प्रणव' शब्द की व्याख्या करते हुए, परमात्मा के विराट्, वायु आदि नामों पर उत्तम विचार किया गया है। अन्त में सन्ध्या के मन्त्रों के केवल अर्थ ही नहीं दिए गए किन्तु उनकी विस्तार पूर्वक व्याख्या भी की गई है। धर्म-पिपासुओं के लिए पुस्तक बड़े काम की है। पृ० संख्या ४८, मूल्य ≈)

(४) आचाराऽनाचार और छूतछात:—यद्यपि महर्षि दयानन्द ने अपनी अमूल्य पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश के दशम समुल्लास में "भक्ष्याभक्ष्य और आचारानाचार" पर संक्षिप्त, पर उत्तम विवेचन किया है परन्तु फिर भी कई पौराणिक और आर्यसमाजी भाई भी महर्षि के शब्दों से उलट-पुलट अर्थ निकालने का प्रायः प्रयत्न करते रहते हैं। इस लिए महर्षि के भावों पर निष्पक्षपात दृष्टि से विचार करना आवश्यक था। प्रस्तुत पुस्तक इसी कमी को दूर करती है। ग्रन्थकर्ता जी के पृ० १६ पर निकाले गए इसी परिणाम से कोई भी सच्चा आर्य असहमत नहीं हो सकता—"धार्मिक मत-भेद आपस के खान पान व्यवहार में बाधक नहीं होना चाहिए, जब तक कि उस मत-भेद के कारण खान पान में भी मत-भेद न हो...... ।" पुस्तक में और भी कई बड़े काम के विचार हैं। पृष्ठ संख्या ३६ मूल्य ≈)

(५) ईसाई पक्षपात और आर्य्य समाज-सरकार को आर्य्य-समाज के विरुद्ध भड़काने के लिए इस देश में और विदेश में, जितना प्रयत्न ईसाइयों ने किया है उतना अन्य किसी मत ने नहीं किया। ६४ पृष्ठ की इस पुस्तक में सरकारी गुप्त काग़ज़ात के आधार पर ग्रन्थकर्ता जी ने बड़ी उत्तम रीति से इन "झूठे मित्रों" की पोल खोली है। उनके इस कथन में बहुत सचाई है कि "बृटिश गवर्नमेन्ट को पहिले पहिल आर्य्य समाज के विरुद्ध भड़काने तथा उनसे भयभीत कराने वाले ईसाई पादरी ही रहे हैं।" मूल्य ≈)

(६) वेद और आर्य्य-समाज.—वेद और आर्य्य-समाज का आधाराधेय का सम्बन्ध है। परन्तु यह कैसे है, इसके मानने से आर्य्य समाज की क्या स्थिति है और वेदों का कौन सा पद है—इन सब गूढ़ प्रश्नों पर यदि विचार करना हो तो इस पुस्तक को अवश्य पढ़ना चाहिए।

पुस्तक का महत्व वहां और भी बढ़ जाता है जहां कि ग्रन्थकर्ता जी ने, अत्यन्त निष्पक्षपात भाव से, आर्य्य-समाज में सत्यार्थप्रकाश और महर्षि दयानन्द की स्थिति पर गम्भीर विचार प्रकट किए हैं। आज कल आर्य्य भाइयों में इन प्रश्नों पर प्रायः विवाद चला करता है। इसलिए उन्हें किसी युक्ति युक्त परिणाम तक पहुंचाने में ४० पृ० की यह पुस्तक बड़ी सहायता दे सकती है। मूल्य ≈)

(७) मातृभाषा का उद्धार—भागलपुर के चतुर्थ-हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति की हैसियत से श्री० महात्मा मुन्शीराम जी ने जो भाषण दिया था, उसी को अब इस पुस्तक-रूप में प्रकाशित किया गया है। प्रारम्भ में देव नागरी के महत्व पर और उसे राष्ट्रीय-भाषा सिद्ध करते हुए अन्त में मातृभाषा की उन्नति के लिए जो विचार प्रकट किए हैं, वे बड़े महत्व के हैं। ये विचार साधारण विचार नहीं प्रतीत होते परन्तु एक चौथाई सदी से अधिक समय तक हिन्दी प्रचार के लिए अनवरत कार्य करने के बाद निकाले गए हैं। विशेषतः, हिन्दी प्रेमियों के लिए, पुस्तक बड़े काम की है। मूल्य ≈)

(८) पारसी मत और वैदिक धर्मः—सब मतों के तुलनात्मक अध्ययन करने वालों से यह छिपा हुआ नहीं है कि पारसी-मत के मूल सिद्धान्त वेदों और शास्त्रों से ही लिए गए हैं परन्तु इस विषय पर प्रकाश डालने वाली कोई पुस्तक हिन्दी में अब तक नहीं निकली। प्रस्तुत पुस्तक इस कमी को, बहुत अंश तक दूर करती है। विषय विवेचन अच्छी तरह से किया गया है। वैदिक धर्म के प्रचारकों के अतिरिक्त साधारण जनता के लिए भी पुस्तक उपयोगी है। पृष्ठ संख्या ४०, मूल्य ≈)

(९) मानव धर्मशास्त्र तथा शासन-पद्धति इस पुस्तक में रोमन-जस्टीनियन और आंग्ल-स्मृतियों से सहायता लेते हुए मीमांसा-शास्त्र के सिद्धान्तों को सीधी सादी भाषा में समझाने का प्रयत्न किया गया है। जिसमें ग्रन्थकर्ता जी को पर्याप्त सफलता हुई है। ६४ पृ० की इस पुस्तक की एक विशेषता यह भी है कि इसमें पूर्व और पश्चिम—दोनों के शासन पद्धति विषयक सिद्धान्तों की तुलना की गई है। वर्तमान भारतीय आन्दोलन में भाग लेने वाले नवयुवकों के लिए शासन

पद्धति का केवल उथला ही ज्ञान आवश्यक नहीं किन्तु उसके मूल में काम करने वाले सिद्धान्तों से भी परिचय होना चाहिए। यह पुस्तक इस कठिनाई को किसी अंश तक, अवश्य दूर कर सकती है। मूल्य =)॥

इन सब पुस्तकों के रचयिता और प्रकाशक

श्री० महात्मा मुन्शीराम जी [जिज्ञासु] हैं। हिन्दी-जगत और आर्य-जगत में आपका नाम नया नहीं है। आप हिन्दी के पुराने लेखक हैं। इसी लिए, आपकी लेखनशक्ति में एक विशेष बल और ओजस्विता है। जिसका प्रमाण इन पुस्तकों से मिलता है। इन सब पुस्तकों की भाषा शुद्ध, सरल, मजी हुई और उत्तम है। छपाई और कागज़ भी बढ़िया है। हमे आशा है, आर्यजनता इनका उचित स्वागत करती हुई प्रकाशकों का उत्साह बढ़ावेगी।

सारे सैट को इकट्ठा मोल लेने वालों के साथ ।) की रियायत की गई है। मिलनेका पता त्यजय-कार्यालय दिल्ली वा गुरुकुल कांगड़ी बिजनौर है।

हमारे नवीन सहयोगी

संसार (सचित्र)

इस नाम का एक नया मासिक-पत्र लगभग सरस्वती के आकार का, श्री० उदयनारायण वाजपेयी और श्री० नारायणप्रसाद अरोड़ा बी० ए० के सम्पादकत्व में कानपुर से प्रकाशित होना प्रारम्भ हुआ है जिसका आठवां अंक इस समय हमारे सामने है। मुख्य पृष्ठ पर स्वतन्त्रता देवी के पांव तले बने हुए भूमण्डल के सुन्दर चित्र के अतिरिक्त अन्दर महात्मा गान्धी का एक फोटू है। लेख और कविताएं उत्तम और भावपूर्ण हैं। इस अंक में "[illegible] की स्वाधीनता का [illegible]" और "[illegible] परीक्षा" से दो लेख खोज से लिखे गये हैं। पत्र उच्च कोटि का है। हम सहयोगी का हार्दिक स्वागत करते हैं। पृष्ठ संख्या लगभग ४०, वार्षिक मूल्य ३); छपाई और कागज़ उत्तम; मिलने का पता 'लक्ष्मी प्रेस कानपुर।

प्रेम

इस पत्र के सम्पादक श्री कुंवर महेन्द्र प्रतापसिंह जी के विदेश चले जाने के बाद से इस पत्र की दशा अत्यन्त शोचनीय होगई थी जिससे इसे बन्द करना पड़ा था, परन्तु श्री० भगवानदास जी केला के सम्पादकत्व में सहयोगी ने अब फिर दर्शन दिये हैं—यह प्रसन्नता की बात है। पत्र के उद्देश्य उच्च हैं। लेख और टिप्पणियां उत्तम हैं और राष्ट्रीयता के भावों से पूर्ण हैं। सहयोगी का हम हार्दिक स्वागत करते हैं और आशा करते हैं कि यह अपनी नीति को स्थिर रक्खेगा। वार्षिक मूल्य २); मिलने का पता:- प्रेम महाविद्यालय वृन्दावन।

मनोरमा

मण्डी धनौरा (यू.पी.) से श्री प्यारेलाल दीक्षित और रामकिशोर गुप्तजी के सम्पादकत्व में प्रकाशित होने वाली इस नई मासिक पत्रिका का हम हार्दिक स्वागत करते हैं। इसके फरवरी, मार्च और अप्रेल के अंक हमारे सामने हैं। सरस्वती के आकार की लगभग ३६ पृष्ठ की इस पत्रिका में सरल और मधुर कविताओं के अतिरिक्त उत्तम और गवेषणा पूर्ण लेख भी रहते हैं। गल्पें मज़ेदार हैं। ऐसी पत्रिकाओं की, वस्तुतः हिन्दी में अत्यन्त आवश्यकता है। हिन्दी प्रेमियों को इसका उचित स्वागत करना चाहिये। वार्षिक मूल्य ३) मिलने का पता मण्डी धनौरा (मुरादाबाद) यू० पी० है।

सार और सूचना।

१—रायकोट संस्कृत पाठशाला के मुख्याधिष्ठाता श्री [illegible] सन्यासी सूचना देते हैं कि इस पाठशाला के आश्रम, गोशाला, वस्तुभण्डार और भोजन-शाला तैयार हो चुके हैं, अब केवल पढ़ाई के कमरे शेष रह गये हैं जिस के लिए हज़ार रुपये दान के लिए जनता से प्रार्थना की गई है।

मथुरा मत आओ।

२ मथुरा की पुलीस ने लोजिंग-हाउस के सम्बन्ध में नियम बनाये हैं वह बड़े कठिन हैं प्रथम तो सब लोग लाजिंग हाउस की पाबन्दी [illegible] नहीं चाहते। दूसरे यह नियम इतने कड़े हैं कि जब तक इन में उचित तबदीली न होगी हम हरगिज़ न मानेंगे। इन नियमों के विरोध में लोगों ने सब धर्मशालाएं बंद करदी हैं यात्रियों को महान् कष्ट हो रहा है। अब बरसात आने वाली है अब और भी ज्यादा दुःख यात्रियों को होगा। मजबूरन हम यात्रियों से प्रार्थना करते हैं कि वह कृपाकर अभी मथुरा न आवें। जब तक चुंगी सख़्ती दूर न करे। वरना कठिनाई होगी अधिकारियों से प्रार्थना है कि शीघ्र ही इस ओर ध्यान दें। नहीं तो चौबों की आमदनी पर तो तलवार चलेगी ही। साथ ही शहर का व्योपार भी परदेशी न आने से कम हो जावेगा और चुंगी की भी आमदनी कम हो जावेगी। रनछोरलाल शर्मा।

३—म० आशाराम जी शर्मा उपदेशक गो—रक्षिणी सभा कनौला गो—रक्षा की आवश्यकता बताते हुये स्थान २ पर पिंजरापोल खोलने की जनता से प्रार्थना करते हैं।

४—बड़ौदा के जयदेव ब्रदर्स सूचना देते हैं कि वैदिक साहित्य के प्रति श्रद्धा उपजाने के लिए उन्हों ने "वैदिक विज्ञान ग्रन्थ-माला" प्रकाशित करनी प्रारम्भ की है जिस की प्रथम पुस्तक "सृष्टि विज्ञान" है, और दूसरी "वेदों में शिल्प विद्या" है जो कि अभी प्रेस में है। आर्य जनता से इस माला के प्रचार की प्रार्थना की गई है।

५—'इंडिपैंडैंट' आफ़िस से म० विष्णुदत्त शर्मा ने हमारे पास "पंजाबी हिंदुओं के नाम खुली चिट्ठी" इस शीर्षक का एक लम्बा लेख प्रकाशनार्थ भेजा है। जिस में आर्यसमाज और उस के नेताओं द्वारा किये गये हिन्दी—प्रचार विषयक कार्य की प्रशंसा करते हुये पंजाबी हिन्दुओं से (जिन में सिक्ख भी शामिल हैं) "कौमी जनम के मसले को हल करने में हाथ बटाने" और "मातृ भाषा के प्रति कर्तव्य पालन के अवसर को हाथ से न जाने देने की" प्रार्थना की गई है। लेखक महोदय, अन्त में अगले हिन्दी साहित्य सम्मेलन को पंजाब में किये जाने का अनुरोध करते हैं। हम भी पंजाबी भाइयों से यत्न पूर्वक कहते हैं कि हिन्दी के प्रति वे अपना कर्तव्य समझें और इस वर्ष हिन्दी—साहित्य सम्मेलन को अवश्य ही अपने प्रान्त में निमन्त्रित करें। आर्यसमाज को इस काम में अग्रसर होना चाहिये।

६—आर्यसमाज शिमला (गुरुकुल पार्टी) का वार्षिकोत्सव १०, ११, १२ सितम्बर १९२० को होना निश्चित हुआ है। प्रसिद्ध उपदेशकों और भजनीकों के [illegible] ने की आशा है।" हुकूमतराय [illegible]

७—श्री—आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रान्त के उपदेशक विभाग के अधिष्ठाता श्रीरायसाहब डा० सत्यव्रत एल.एम.एस. आर्य जनता का वेद-प्रचार की शोचनीय दशा की ओर ध्यान आकर्षित करते हुये प्रत्येक परिवार से फी आदमी १) दान देने की प्रार्थना करते हैं। आर्यभाइयों को इस ओर अवश्य उत्साह से काम करना चाहिये।

आर्य्य वीरो ! अपनी संख्या बढ़ाओ !!!

मनुष्य-गणना में अलग खाना होगा !

सरकार की आज्ञा !!

सार्वदेशिक—सभा के कार्यालय से हमें सूचना मिली है कि, भारत—सरकार की आज्ञानुसार, आगामी मनुष्य-गणना में "आर्यों" की संख्या का अलग खाना होगा और इम्पीरियल टेबल में इनकी सब गणनायें अलग दिखाई जावेंगी। हम जहां सब आर्य्य-प्रतिनिधि-सभाओं से प्रार्थना करते हैं कि वे अपने आधीन समाजों को इसके लिए अभी से आन्दोलन करने की आज्ञा दें वहां दूसरी ओर, प्रत्येक वैदिकमतावलम्बी से बल-पूर्वक कहते हैं कि वे बिल्कुल निडर होकर अपने आपको *आर्य्य* लिखावें। *पार्टी—बन्दी के झगड़ों को भुलाते हुए इस मामले में सब को एक हो जाना चाहिये।*

आर्य्य वीरो ! *इस सिद्धान्त को मत भूलो कि धर्म के विस्तार और उन्नति में, संख्या—वृद्धि एक बड़ा भारी कारण है।*

संसार समाचार पर

टिप्पणी

पाश्चात्यों की मानसिकता

ईसा ने कहा था कि "अपने शत्रुओं से प्रेम करो" और दाहिनी गाल पर चपेट मारने वाले के सामने बाईं भी कर दो" परन्तु उसका अनुकरण करने का दम भरने वाले ईसाईयों का चरित्र इस से सर्वथा विपरीत है। पाश्चात्यों में पारस्परिक घृणा और द्वेष का कितना राज्य है, इसका प्रमाण निम्नलिखित एक घटना से मिलता है। जापान के "योकोहामा" नामक स्थान में फ्रान्सीसियों का "ओरियण्टल पैलेस" नामक एक होटल है। इसके दरवाजे पर, मोटे अक्षरों में, ये शब्द लिखे हुए हैं "जर्मनों को इस होटल में आने की आवश्यकता नहीं"। इतना ही नहीं एक बार भूल से एक जर्मन अपने परिवार सहित इसमें आटिका। इस पर अध्यक्ष ने दो घण्टे में होटल खाली कर देने की आज्ञा दी जो कि उस परिवार को करना पड़ा। इससे ज्ञात होता है कि यद्यपि युद्ध समाप्त हो गया है पर पाश्चात्यों के हृदयों में से घृणा और विद्वेष के भाव अभी तक नहीं दूर हुए।

क्या रूस गरीब है?

रूस के प्रतिनिधि "क्रेसिन" आज कल इंग्लैण्ड राज्य में सुलह की शर्तों को तै करने के लिए आये हुये हैं। एक पत्र-संवाददाता से बात चीत करते हुए उन्होंने अभी हाल ही में, यह कहा है कि रूस इस समय भी, २ वा ३ मिलियन टन मिट्टी का तेल, २, ३ मिलियन टन उत्तम चमड़ा, २०० टन तारपीन तेल, और १० हजार टन खाने के तेल बाहर अन्य देशों में भेज सकता है।

रूटर महाराज तो हमें, पिछले दिनों से, रूस की निर्धनता और दरिद्रता का बहुत भयंकर वर्णन सुना रहे हैं परन्तु रूस—प्रतिनिधि के इस कथन से तो उसकी सफलता में बहुत सन्देह होने लगता है। परन्तु, भूखे शेरों की तरह मोसुल की तेल की खानों के लिए लड़ने वाले सभ्यताभिमानी युरोपियन राष्ट्र क्यों नहीं रूस से व्यापार सन्धि करके अपनी इच्छा पूरी कर लेते ?

ग्रेट—ब्रिटेन को ईराक छोड़ना होगा

इस सप्ताह की विलायती डाक में आये हुए "डेली मेल" में प्रसिद्ध संवाददाता 'लोवेट फेसर' का एक विचार-पूर्ण लेख है जो कि प्रत्येक देश-भक्त अंग्रेज़ को आंखें खोल कर पढ़ना चाहिए। मध्य-एशिया में अपना साम्राज्य बढ़ाने के लिए जिन कुटिल नीतियों का ग्रेट-ब्रिटेन आज कल प्रयोग कर रहा है—लेखक महाशय ने उनकी कड़े शब्दों में समालोचना की है। लेखक का यह प्रश्न सर्वथा उचित है कि यदि यह बात मान भी ली जावे कि साम्राज्यवृद्धि के लिए सब अवस्थायें अनुकूल हैं तब भी मि० लायड जार्ज और उनके एक दो पुछल्ले मन्त्रियों को क्या अधिकार है कि वे पार्लियामेंट से बिना सलाह किये अपने साम्राज्य के सिर पर एक और भारी साम्राज्य का भार लाद दें ? उन्हें क्या अधिकार है कि वे पार्लियामेंट से बिना सलाह किये अपने ही उत्तरदातृत्व पर मैसोपोटामिया आदि देशों का "शासनाधिकार" (Mandate) के "स्वीकार" करने का शोर मचावें ? लण्डन के छोटे २ तङ्ग घरों में गन्दी गली में रहने वाले कीड़ों की तरह जीवन बिताने वाले ग़रीब मज़दूरों के लिए उत्तम हवादार घर बनवाने के लिए तो लायड जार्ज की सरकार के पास पैसा नहीं है परन्तु एशिया की भूमि को, कुचालों से, काबू करने के लिए सरकार की थैलियों का मुंह न जाने कहां से खुल जाता है ? लेखक महाशय के अन्तिम वाक्य भावी घटना—चक्र पर प्रकाश डालने के लिए पर्याप्त हैं—"मैं बल पूर्वक कहता हूं कि ग्रेट ब्रिटेन मध्य एशिया और भारत को अपने काबू में नहीं रख सकता और यदि सरकार ने इसी नीति का अनुकरण किया तो वह सम्पूर्ण साम्राज्य को नाश के किनारे पहुंचायेगी।"

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर प्यारेराम के लिये छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में ... को बुलाते हैं।"

श्रद्धा

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः। (ऋ० मं० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है { २९ आषाढ़ सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० ९ जुलाई सन् १९२० ई० } संख्या १२ भाग १

हृदयोद्गार

मेरा आशियाना !

कब तक नहीं मिलेगा मेरा वो आशियाना ।
गिन गिन के साल गुज़रे बे ठौर बे ठिकाना ॥ १ ॥
मेरी भली गुज़र थी यह था बहिश्त मुझ को ।
रहता था चैन से मैं मिलता था आब दाना ॥ २ ॥
जब से हैं तेरे आये मुबारिक कदम यहां पर ।
वीरान हो गया है मेरा बहिश्त खाना ॥ ३ ॥
मेरे ही दर पै आके तूने पनाह पाई ।
ज़ालिम ज़रा न सोचा, यूं ठीक था सताना ॥ ४ ॥
कर तरहतरह की कोशिश मैंने रिझाया तुझ को ।
दे कर के जान अपनी दे कर अटल खज़ाना ॥ ५ ॥
सब बे गुनाह बच्चे तूने कटाके मेरे ।
दर्दे जिगर का मेरा किसने सुना फिसाना ॥ ६ ॥
आरामगाह मेरी कब फिर नसीब होगी ।
घर मेरा बन गया है मेरा हि क़ैद खाना ॥ ७ ॥
तू चैन से पड़ा है बंसी बजा रहा है ।
और हंस रहा है ज़ालिम यूं देख तड़फड़ाना ॥ ८ ॥
तू खुद बे खुद है मुलज़िम और खुद बना है मुनसिफ़ ।
तेरी निगाह में तो रोना भी है बहाना ॥ ९ ॥
मेरी भी एक दिन तो उस तक रिसाई होगी ।
आक़ा सुनेगा मेरा पुर दर्द चहचहाना ॥ १० ॥
कब तक जुलुम करेगा मेरा भी तो खुदा है ।
"बेबस" का बस भी होगा बदलेगा जब ज़माना ॥ ११ ॥

शान्ति बहादुर (बेबस)

—:०:—

हाय हे नींद !!

मोरि नींद न हरि को भाई रे—टेक

पहिले आ नटवर कान्हा ने बंसी तान सुनाई रे—
हम चादर आंचल सो बोले लोरी भली बनाई रे ॥ १ ॥
कपिल वस्तु के भिखमंगवा ने दूजी तान उड़ाई रे—
सुधि हमरी लें भं रे बाबा सुधि अपनी बिसराई रे ॥२ ॥
फिर बालक भंगवेधारी ने अपनी राह बताई रे—
सो अपनी सुधि लेवत सो गये दूजी खाट बिछाई रे ॥३॥
बड़ो लड़ैय्या दक्खिनी जोगी करी मार लगाई रे—
हम चुटकी झोली में दीन्हीं परली राह बताई रे ॥ ४ ॥
जोगी सो पर जादू वालो रक्तबीज को भाई रे—
खटमल बन हलवत मोहि काटत वाकी सैन पठाई रे ॥५॥
करन गुदगुदी फिर प्रभु भेजे डायरफ्रायर भाई रे—
पेट पकर हंस हंस बस कीन्हो अब प्रभु देत दुहाई रे ॥६॥

'मराल'

—:०:—

ब्रह्मचर्य सूक्त की व्याख्या।

अर्वागन्य इतो अन्यः पृथिव्या अग्नी सोमेतो नभसी अन्तरेमातयोः श्रयन्ते रश्मयोधि दृढ़ास्ताना तिष्ठति तपसा ब्रह्मचारी ॥ ११ ॥

"(अग्नी इमे नभसी अन्तरा समेतः) दो अग्नि इन दोनों, एक दूसरे से मिले हुओं के अधः प्रदेश में मिलती हैं—(अन्य अर्वाक्) एक समीपवर्त्ती (अन्यः इतः पृथिव्या) दूसरी इस पृथिवी से दूर है—तयो रश्मयः दृढ़ाः अधि श्रयन्ते) उन दोनों की करणें दृढ़ हो कर अधिकार पूर्वक ठहरती हैं—(ब्रह्मचारी तपसा तान् आतिष्ठति) ब्रह्मचारी तप से उन के ऊपर बैठता है।"

दो तेज हैं जो एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। एक पृथिवी की ओर जाता है और दूसरा उससे परे—एक प्रत्यक्ष प्राकृतिक जगत पर प्रकाश डालता है और दूसरा परोक्ष आत्मिक जगत् पर। ये दोनों तेज बीच में ही एक दूसरे से मिल जाते हैं। इनको मध्य में मिलाने वाला कौन है?—यतोऽभ्युदयनिः श्रेयस सिद्धिः सधर्मः। जिससे इस लोक तथा परलोक के सुख की सिद्धि होती है वह धर्म है। इसी धर्म ने दोनों तेजों को एकीभूत किया है। जिससे अभ्युदय सिद्ध होता है वही निःश्रेयस को भी प्राप्त कराता है। दोनों धर्म में ही दृढ़ होते हैं। जिसने इस लोक के पदार्थों का यथावत् स्वरूप दिखा दिया, तृण से लेकर पृथिवी तक और पृथिवी से लेकर द्यौ लोक पर्यंत के दर्शन कराके मनुष्य को उनसे उपयोग लेने के योग्य बना दिया—वह पहली ज्योति ज्ञान है। परन्तु अकेले इस ज्ञान से काम न चलेगा यह ज्ञान तो मनुष्य को कर्म का मार्ग दिखाने वाला है। उपनिषद् ने कहा है कि मनुष्य क्रियाशील है। जैसे कर्म वह इस जन्म में करता है वैसी ही स्थिति उसे आगामी जन्म में मिलती है। ज्ञान की आवश्यकता कर्म के लिए है और ज्यों ज्यों मनुष्य कर्मशील होता जाता है त्यों त्यों उसका ज्ञान निश्चयात्मक होता जाता है। यही अवस्था है जब ज्ञाता ज्ञेय पदार्थ के विषय में रहस्य की बातें जानने लगता है। अर्थात् उसके समीप पहुंचता है।

वही ज्ञान मंज कर विज्ञान हो दूसरी ओर चलता है। उस के आगे परलोक है, वहां ज्ञान नहीं पहुंच सकता, उस उच्च पदकी ओर दृष्टि उठाकर ज्ञान की पगड़ी गिर जाती है। तब मंजा हुआ ज्ञान अति सूक्ष्म हो कर आगे चलता है, आत्मिक दर्शन उसी के द्वारा होते हैं। आत्म दर्शन होते ही सांसारिक पदार्थों पर भी नया प्रकाश पड़ता है। जो प्राकृतिक वस्तुएं केवल अपना बाह्य स्वरूप ही द्रष्टा को दिखलाती थीं, वे अपने अन्तरीय रहस्य भी उसके सामने खोलकर रख देती हैं। उसी समय दोनों ज्योतियों—ज्ञान और विज्ञान—का मेल होता है, उस मेल का नाम ही धर्म है, और उसी से जो सिद्धि होती है वह इस लोक और परलोक दोनों को अपने अन्दर समेट लेती है। उन दोनों का प्रकाश स्थिरता से दृढ़ हो जाता है। इस प्रकाश में बुद्धि डांवांडोल नहीं होती। परन्तु उस प्रकाश को एकरस दृढ़ रखना तप का काम है। ज्ञान और विज्ञान की किरणों का चक्र साधारण मनुष्य के हृदय पर भी अंकित हो जाता है। परन्तु वहां उसकी स्थिति बिना तप के नहीं हो सकती। इस तप को धारण करके ज्ञान और विज्ञान को उसके अन्दर स्थित करने की शक्ति ब्रह्मचारी में ही होती है। उन दोनों के ऊपर स्थित होना ब्रह्मचर्य व्रत और साधन की पराकाष्टा है।

ज्ञान और विज्ञान दोनों की स्थिति का स्थान ब्रह्मचारी का विशाल और दृढ़ हृदय है। वह ज्ञान सार्थक नहीं, उलटा व्यक्तियों और जातियों को डुबाने वाला है, जिसका आधार ब्रह्मचर्य नहीं। इसी वेद मन्त्र की आज्ञा को लक्ष्य में रखकर आचार्य उपाध्याय और अध्यापक का ब्रह्मचारी होना आवश्यक बतलाया गया है। मानसिक शिक्षा चाहे कितनी भी ऊंची हो संसार का कल्याण करने वाली नहीं होती यदि उसका फैलाने वाला ब्रह्मचारी नहीं। जिस देश और जिस समय में अब्रह्मचारी शिक्षक प्रधान हुए उस देश और उस समय से में मनुष्यों के लिए उलटी हानिकारक सिद्ध हुई। यूनान और रोम जिस समय रसातल को पहुंचे उस समय सांसारिक विद्या की उन में कमी न थी। स्पार्टा में ३०० योद्धा सहस्रों को मुंह मोड़ देने की शक्ति उसी समय रखते थे जबकि उस नगर में बालक और बालिकाएं ब्रह्मचर्य का कठिन व्रत धारण किया करती थीं। राम के समय अयोध्या का जो वर्णन है, वह तभी सम्भव था जबकि राम लक्ष्मण से राजपुत्र वसिष्ठ के आश्रम से ब्रह्मचर्य के नियम पालन की शिक्षा लेकर निकलते थे। दशरथ के समय की अयोध्या का वर्णन करते समय आदि कवि वाल्मीकि लिखते हैं—

तस्मिन् पुरे वरे हृष्टा धर्मात्मनो बहुश्रुता
नरा स्तुष्टाःधनै स्वैर्लुब्धा सत्यवादिन
कामीवान कदर्यो वा, नृशंसः पुरुषः
क्वचित्।
द्रष्टुं शक्यमयोध्यायां, नाविद्वान्न च
नास्तिकाः ॥

"इस श्रेष्ठ पुरी में सब लोग हृष्टपुष्ट, धर्मात्मा, बहुश्रुत, रोगरहित, सत्यवादी और अपनी ही कमाई से सन्तुष्ट थे। कामी वा कञ्जूस वा खुशामदी वा अविद्वान् वा नास्तिक कोई भी ऐसा पुरुष अयोध्या में दिखाई न देता था।"

इसको भले ही कोई पुरुष अत्युक्ति कहलें, परन्तु जो चित्र राम सीता और लक्ष्मण के ब्रह्मचर्य व्रत का कवि ने खेंचा है उस का परीणाम इसी प्रकार की जनता हो सकती है। धन्य है वह देश जहां ज्ञान और विज्ञान के ऊपर पग धरकर अपने बल से तपस्वी ब्रह्मचारी उनको संसार के कल्याण के लिए दृढ़ रख सकता है।

शान्तिरयोम्।

श्रद्धानन्द सन्यासी

श्रद्धा

बेगार की आसुरी प्रथा

दूर होनी चाहिये

(२)

जिस पत्र का अनुवाद गताङ्क में दिया गया था और जिस में मैंने सर एडवर्ड मैकलेगन से प्रार्थना की थी कि स्त्रियों से बेगार लेना एक दम से बन्द कर दिया जावे उसका श्रीमान लाट महोदय ने कोई उत्तर न दिया। मेरी सम्मति में बेगार के सारे प्रश्न के साथ मेरी इस प्रार्थना का कोई सम्बन्ध न था, यदि बेगार पुरुषों के सम्बन्ध में इस समय रखना आवश्यक भी समझी जाती, तब भी स्त्रियों की सतीत्व की रक्षा का प्रश्न ऐसा आवश्यक था कि उसको एक दम से हल कर देना था। परन्तु मैं भूलता हूं स्त्रियों के सम्बन्ध में आज कल की युरोपियन सभ्य जातियों की दृष्टि का प्राचीन आर्यों की दृष्टि से बड़ा भेद है। अस्तु

फिर मेरे पास रोहतक नगर से बनियों की बड़ी भारी शिकायत आई कि उन की दूकानें जबर्दस्ती बेगार में बुलाई जाती हैं, और दिनों तक उनको अपना कारोबार बन्द करना पड़ता है। इस पर ३० मार्च १९२० को मैंने उस शिकायत की नकल अपने पत्र सहित भेजी। वह शिकायत अन्य समाचार पत्रों में निकल चुकी है। इस लिये उसकी प्रति न देते हुए, मैं अपने पत्र का अनुवाद यहां दर्ज कर देता हूं—

गुरुकुल विश्वविद्यालय
३० मार्च सन् १९२०

श्रीमन्!

मैंने यहां लौट कर गुरुकुल विश्वविद्यालय का चार्ज लेलिया है, क्योंकि यहां मेरी बहुत आवश्यकता थी। श्रीमानों को ज्ञात है कि बेगार के संशोधन के लिए मुझे एक प्रकार की लगन है। अपने पिछले पत्र में मैंने श्रीमानों के समक्ष अपनी हार्दिक प्रार्थना रखी थी कि आप चमार देवियों की रक्षा के लिए हस्तक्षेप करें जिन्हें तहसील के चपरासी और सिविल और मिलिटरी अफसरों के नौकर बलात्कार ले जाते हैं। अब श्रीमानों का ध्यान एक अन्य प्रकार की बेगार की ओर खेंचना चाहता हूं जिसका मेरे पहले पत्रों में ज़िकर नहीं है।

ऐसा मालूम होता है कि जब कभी सरकारी अफसर दौरे पर जाते हैं, तो उनके कैम्पों के पास लाकर दूकान खोलने के लिये दूकानदारों को बाधित किया जाता है और उन को एक कल्पित भाव पर सौदा बेचने के लिये मजबूर किया जाता है। कभी २ एक आफ़िसर कई दिनों तक एक कैम्प में रहता है। और दूकानदार को अपनी दूकान बन्द करके दिनों तक कैम्प की ही सेवा सुश्रूषा करनी पड़ती है।

एक ऐसे दृष्टान्त का समाचार रोहतक से आया है, जिनमें शिकायत करने वाले निम्न लिखित हैं— १) हरजस राय, बेटा वृन्दावन महाजन रोहतक (२) मंगतराय, बेटा निदादरमल महाजन रोहतक (३) कुन्दनलाल, बेटा नथूमल महाजन रोहतक (४) मनोहर लाल, बेटा प्रसाद महाजन रोहतक। इस पत्र के साथ इन लोगों की पूरी कहानी श्रीमानों के सूचनार्थ भेजता हूं।

मेरी सम्मति में यह बड़ा ही वजनदार मामला है, और इससे बढ़कर और वजनदार मामले हो सकते हैं, और इस लिये मैं श्रीमानों से निवेदन करता हूं कि इन मनुष्यों को बुलाकर स्वयं तहकीकात कीजिये। अन्य आन्दोलन, चाहे कमिश्नरों के द्वारा ही कराये जावें, व्यर्थ सिद्ध होते हैं क्योंकि वे (कमिश्नरादि) अपने मातहतों के द्वारा काम लेते हैं, और वे मातहत ही प्रायः बेगार के मामले में अपराधी भी होते हैं।"

यद्यपि इस पत्र का भी कोई उत्तर लाट साहब ने न दिया परन्तु ऐसा मालूम होता है कि किसी प्रकार का आन्दोलन अवश्य कराया गया, और शायद कोई विशेष आज्ञा भी रोहतक से भेजी गई। इसके सिवाय रोहतक की "डिस्ट्रिक्ट कांग्रेस कमेटी" ने कुछ प्रस्ताव पास करके गवर्नमेन्ट के पास और प्रेस में भी भेजे थे।

बल्लभगढ़ के चमारों की शिकायत के सम्बन्ध में, बड़ी विचित्र तहकीकात हुई। अम्बाले के कमिश्नर ने शायद गुड़गांव के डिप्टी कमिश्नर को लिखा, और उन साहब बहादुर ने सब डिविज़नल ऑफीसर को वहां भेज दिया। सब-डिवीजनल साहब ने न तहसील के चपरासियों को पूछा और न तहसीलदार और थानेदारों का सामना चमारों से करवाया, प्रत्युत लम्बरदार की चमारों से बहस करवा दी। बल्लभगढ़ के चमारों की पञ्चायत ने जो पत्र इस विषय का लिखा वह नीचे देता हूं:—

"श्रीमान् स्वामी जी महाराज नमस्ते।

आपने जो चिट्ठी बाबत तहकीकात भेजी थी, सो वह तहकीकात १ मई को मारफत साहब सब-डिविजनल ऑफीसर होगई है। साहब ने अपने बंगले पर हमको और मुखिया लम्बरदार को बुलाकर हमारी और उसकी बहस करादी। हमारा लम्बरदार से कोई मनाज़ा नहीं। हमारी तहकीकात तो सिर्फ यह होनी चाहिये थी कि सरकारी मुलाजिम हमसे कितना काम मुफ्त लेते हैं जिससे हम तंग हो रहे हैं। ऐसी तहकीकात तो कई दफे हो चुकी है लेकिन कोई असर हमारी मुसीबत की कमी में नहीं हुआ। इस तरह तो कोई फायदा हमारे लिये मालूम होता नहीं देता क्योंकि लम्बरदार से बयान लेलिया कि चमारों के जिम्मे मुफ्त बेगार है, और ये इसी लिये बसाए गए हैं।"

बल्लभगढ़ में आन्दोलन करने से मालूम हुआ कि महीने में १ बार सब-डिविजनल आफिसर आते हैं। गर्मी और बरसात के दिनों में दो चमार दिन रात पंखे पर रहते हैं दोनों को एक एक आना प्रतिदिन दिया जाता है। जाड़ों में छः छः चमार साहब का सामान लिए एक स्थान से दूसरे स्थान में चलते रहते हैं। १३ फर्वरी को तहसील का चपरासी "गोला" १० चमारों को डाक बंगले लेगया और उन्होंने माल का सामान ४ मील की दूरी पर, 'तिगाओं' में पहुंचाया। इनको १ कौड़ी भी नहीं मिली। सरसों की चोरी में एक अपराधी पकड़ागया वह चोरी का माल मनभर से अधिक था और एक चमार के सिर पर उठवा कर अदालत में भेजा गया। यदि तहसीलदार, नायबतहसीलदार, हेडमुहर्रिर, थानेदार किसी के यहां भी दाना दलने या घर के यहां और कोई काम करने की आवश्यकता होती है, तो चमारियों को जबर्दस्ती पकड़ कर लेजाते हैं, और बिना कुछ दाम दिये काम करवाते हैं इत्यादि इत्यादि।

ऐसा मालूम होता है कि हिसार जिले में भी बेगार सम्बन्धी बड़ा भारी आन्दोलन होरहा है,, उस जिले के डिपटी कमिश्नर मिस्टर "[illegible]" ने मुझ से मिलकर बेगार के विषय में बात चीत करनी चाही थी क्योंकि मिस्टर पं० नेकीराम के परिश्रम से इस विषय में बहुत [illegible] होरहा है [illegible]

को मिलने का समय न निकाल सका, परन्तु मेरी सम्मति में वह समय आगया है जबकि ऊपरी बात से कुछ परिणाम नहीं निकलता। भिवानी के सम्बन्ध से पं० नेकराम शर्मा ने एक घोषणा पत्र निकाला है जिसका शीर्षक है—"बेगार मत दो" उस पत्र में बेगार की बुराईयां बतलाते हुए उन्हों ने लिखा है—

"भिवानी में बेगार और रसद दोनों की बन्द होगई है, मैं चाहता हूं कि यह पाप सारे ही देश से निकल जावे। भिवानी में बेगार-विरोधनी सभा भी बनी है........बेगार और रसद के कारण जिन को जो तकलीफ़ हो वह साफ कहनी चाहिए। मैं समझता हू कि ऊंचे अफ़सर इस काम में हमारा साथ देंगे।"

बेगार सम्बन्ध में कई बार शोर मचा और आन्दोलन हुआ परन्तु उसकी सख्ती उसी प्रकार बनी रही। यदि मुझे गुरुकुल का चार्ज लेने के लिये यहां न आना पड़ता तो मेरा दृढ़ संकल्प था कुछ वर्षों तक सारा समय बेगार की प्रथा हटवाने, और जिन्हें भूल से अछूत कहा जाता है उनकी सामाजिक स्थिति को ठीक करने में लगा देता। बेगार के सम्बन्ध में एक और बड़ा जटिल प्रश्न है जिस के लिये आर्यसमाज को विशेषतः, और हिन्दु मुसल्मानों को साधारणतः, बल-पूर्वक श्रम करना चाहिये। जब कभी किसी अछूत जाति के व्यक्तियों को आर्य समाज उठाकर अपने में सम्मलित करता है, और उन से गोमांस के भक्षण, और मदिरापान के दर्शन छुड़वाता है और उन्हें ईसाई के अर्थ बताता है, तो बेगार उनके जिम्मे फिर से लगा दी जाती है। परन्तु यदि वह ही व्यक्ति चोरी करा कर बिना समझे अपने आप को ईसाई कहने लग जाता है तो उसकी बेगार तत्काल बन्द हो जाती है। देहली के इर्द गिर्द चमारों को ईसाई बनाने के लिये न कोई धर्मोपदेश दिये जाते और न ईसा के साथ जुड़ जाने का आदेश किया जाता है। उन चमारों के सामने केवल प्रलोभन यह रखा जाता है कि उन से कोई बेगार नहीं ले सकेगा।

यह सारी राम कहानी मैंने इस लिये सर्वसाधारण के सामने रखी है कि जाति का एक एक व्यक्ति पर समझ ले कि उनकी जाति का भविष्य किस प्रकार बिगड़ रहा है। सब से पहिली बात यह है कि स्त्रियों का बेगार में लेना सर्वथा बन्द होजावे। प्रत्येक जिले में एक एक समिति (कमेटी) ऐसी बन जानी चाहिये, जिन के सभासद उन जातियों को, जिन से बेगार लिया जाता है, समझा दें कि प्रत्येक अवस्था में बेगार देने से इन्कार करें। यदि फिर भी उन पर कोई जुल्म हो तो वे समितियां धन आदि से सहायता दे कर मुकद्दमा करावें और यदि न्यायालयों से भी कोरा जवाब मिले तो अन्य प्रकार से ऐसे दीनों की रक्षा करने के साधन सोचते रहें। इस अंश में पंजाब के लाटसाहब से अन्तिम निवेदन है।

प्रथम आप लोग बड़े गौरव से कहा करते हैं कि पुराहित कौमों में स्त्रियों का बड़ा मान है। अमृतसर में जनरल डायर ने अपनी घृणित पिशाच लीला से दिखला दिया कि वह मान आपका अपनी जाति की स्त्रियों के लिये ही है। हम लोग भारत पुत्रियों को अपनी जाति के भविष्य का निर्णायक समझते हैं। यदि आप उनकी रक्षा के लिए हाथ न बढ़ावेंगे, तो आपकी गवर्नमेंट के लिए उसका परिणाम अच्छा न होगा।

द्वितीय जब आप के सिविल और मिलिटरी आफिसर भारत का खजाना लूट रहे हैं, और अपनी योग्यता से बढ़ कर वेतन पारहे हैं, तो फिर उनका क्या अधिकार है कि इस महंगी के समय में १ आना रोज पर दिन रात पंखा जबरदस्ती खिंचवावें। यदि उन के लिए पंखे की आवश्यकता है और असबाब ढोने के भी आवश्यकता है; और उसके लिये उन के वेतन पर कोई बोझा न डालना आपको अभीष्ट है तो उन के लिये विशेष नपरासी नियत कर दीजिये, उन की बारबरदारी के लिए बैलगाड़ी या ऊटगाड़ियां नियत कर दीजिये, परन्तु भारत निवासियों के ऊपर इसका अनुचित बोझ न डालिये।

मैं जानता हूं कि देश भाषा में यह लेख होने के कारण अंग्रेजी दैनिकों के सम्पादक इस विषय पर कुछ लिखना अपना अपमान समझेंगे, परन्तु यदि देश भाषा में निकलने वाले सब समाचार पत्रों में घोर आन्दोलन छिड़ जावे तो भी बड़ा भारी परिणाम होगा।

ईसाइयों के मन्सूबे

भारतवासियों! चेतो।

सन् १९१९ में अमरीकन ईसाइयों ने प्रचार का जो कार्य भारतवर्ष में किया है उसका ब्यौरा हाल में अमरीका के 'मिशनरी रिव्यू' में प्रकाशित हुआ है। उस में कहा गया है कि १,३२६ अमरीकन और ६,८७० देशी ईसाइयों ने प्रचार का कार्य किया, और पादरियों के २,०६० स्कूल हैं, जिन में ७,७०,६८० विद्यार्थी शिक्षा पा रहे हैं। ११ छापाखाने भी हैं, जिन में ५१७४०,४२० पृष्ठ ईसाई साहित्य के छापे गये। इस वर्ष में ईसाइयों के १७० अस्पतालों में ७०४,७१४ मरीज़ों का इलाज किया गया। अमरीकन समाचार पत्रों से पता चलता है कि अमरीका में ईसाइयों के २५ फ़िर्क़े हैं, जिन में से प्रत्येक के अधिकार में सहस्रों गिर्जाघर और उपदेशक हैं। हाल में ये सब एक हो गये हैं, और इन्होंने पहिले भारत में प्रचार करने का संकल्प किया है। भारतवर्ष के ईसाइयों ने कार्यक्रम का मसौदा भी वहां भेज दिया है, जिस से शीघ्र ही यहां उनका कार्य आरम्भ हो जायगा। खबर है कि इस प्रचार के लिए इन्हों ने ढाई अरब डालर एकत्रित किये हैं। प्रचार के कार्य के लिए भारतवर्ष के कई विभाग भी इनके द्वारा किये गये हैं और शीघ्र ही स्कूल, अस्पताल, पुस्तकालय, बायस्कोप, सेवा-समितियां, कम सूद पर रुपया देने आदि के रूप में यह प्रचार का कार्य आरम्भ होगा। कहने की आवश्यकता नहीं कि प्रचार का यह कार्य विशेष कर

७६३,६२,६७ अछूतों

में होगा। इस लिए यदि शीघ्र ही भारतवासी न सम्हल जायं तो बाद में उनको पछताना पड़ेगा। हमें आशा है कि सनातनी, आर्यसमाजी, जैन, बौद्ध, सिक्ख, दादूपन्थी, कबीरपन्थी, शैव, शाक्त वैष्णव आदि अभी से सचेत हो जायंगे।

देवीदत्त द्विवेदी। (अभ्युदय)

पुस्तक-समालोचना

१. धर्म द्रोनों की रक्षा—
२. उत्तराखण्ड की महिमा और कुरुक्षेत्र माहात्म्य—

दोनों पुस्तकों के लेखक श्री पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी सन्यासी हैं। प्रथम पुस्तक में भारत में हमारे धर्म के कैसे क्षय के इतिहास को देते हुए और उनके कार्य्य करने के ढंग के रहस्यों को बड़ी सुन्दर भाषा में खोलते हुये अछूतोद्धार की आवश्यकता और उसके उपायों पर गम्भीर दृष्टि से, विचार किया गया है। पुस्तक उपादेय है। आकार छोटा पृ० ७६। मूल्य—डाकव्यय मात्र अर्थात् केवल एक आना।

दूसरी पुस्तक में स्वर्ग के मार्ग उत्तराखण्ड के भौगोलिक, ऐतिहासिक और प्राकृतिक वर्णन के साथ साथ गढ़वाल की सामाजिक अवस्था का भयंकर चित्र खींचा गया है। दूसरे भाग में कुरुक्षेत्र का माहात्म्य बताते हुये और भौगोलिक वर्णन देते हुये वहां का संक्षिप्त इतिहास भी दिया गया है। बड़े आकार की ९२ पृष्ठ की इस पुस्तक की एक बड़ी विशेषता यह है कि इस की भाषा सरल और शुद्ध होने के साथ बड़ी लच्छेदार है। बीच बीच में कथन की पुष्टि में प्राचीन ग्रन्थों से जो प्रमाण दिये गये हैं, उस से इसका महत्व और भी बढ़ गया है। पुस्तक खोज से लिखी गई है और ऐतिहासिकों के बड़े काम की है। मूल्य आठ आने मात्र।

दोनों पुस्तकों के मिलने का पता:—प्रबन्धकर्त्ता 'विजय' दिल्ली या गुरुकुल पुस्तक भण्डार डा० गुरुकुल कांगड़ी (बिजनौर)

बाड़ीलाल मोतीलाल शाह राजपूताना हिन्दी साहित्य सभा [झालरापाटन शहर] गान देवोस्ट्रीट बम्बई की पुस्तकें

१-स्त्रीचरित्र संगठन—प्रथम पुस्तक के लेखक श्री बाबू दयाचन्द्र गोयलीय बी.ए. हैं। यह पुस्तक "स्त्रीचरित्र संगठन" नामक एक बंगला पुस्तक के आधार पर लिखी गयी है। दाम ॥) है। पुस्तक भाव और भाषा दोनों दृष्टियों से उपादेय है। रमाबाई लक्ष्मीबाई आदि के मनोरंजक उदाहरणों से पुस्तक बहुत ही सरस और शिक्षाप्रद है। साथ ही साथ आवश्यक बातों को पाठों के अन्त में गद्यात्मक रूप से रखा गया है। यह संक्षिप्त निबन्ध सग्रह कन्यापाठशालाओं तथा गृहों के लिये बहुत ही लाभकारी है।

२-अर्थ-शास्त्र—अंग्रेजी भाषा में श्री मती एम. फौसेट एल एल डी द्वारा लिखित "पोलिटिकल इकानमी" नामक पुस्तकके आधार पर लिखी गयी है।

पुस्तक की विशेषता यह है कि इस में विदेशी उदाहरणों के स्थान पर स्वदेशी उदाहरण दिये गये हैं। पुस्तक विषय की दृष्टि से बहुत उपयोगी है और अर्थशास्त्र सम्बन्धी सामान्य ज्ञान के लिए अच्छी है। अध्यायों के अन्त में दिये प्रश्न अध्यापकों और विद्यार्थियों के लिये बहुत उपयोगी हैं। परन्तु पुस्तक की भाषा सरल नहीं है। साथ ही स्वदेशी उदाहरण देते हुये भी उन्हें मनोरंजक बनाने की ओर पूर्ण ध्यान नहीं दिया गया। प्रारम्भिक पुस्तकों में भाषा का सरल होना अति आवश्यक है। हमारी सम्मति में योग्य लेखक महोदय को ऐसी प्रारम्भिक पुस्तकें लिखते हुये अनुवाद करने की अपेक्षा स्वतन्त्र रूप से लिखने का यत्न करना चाहिये। इस में भाषा और उदाहरण दोनों स्वयं ही मनोरंजक हो सकेंगे। पुस्तक तथापि काम की है और संग्रहणीय है।

३ पार्लियामेण्ट—इसके लेखक या अनुवादक श्री सुदर्शनदास गुप्त हैं। पुस्तक प्रसिद्ध लेखक सरकोर्टनीइलबर्ट की "पार्लियामेन्ट" नामक ग्रन्थ का भावान्तर है। हिन्दी साहित्य में यह ग्रन्थ अपने ढंग का प्रथम ही है। पारिभाषिक शब्दों की दिक्कत को देखते हुवे भी नि. सन्देह लेखक महोदय का परिश्रम सराहनीय है यदि योग्य लेखक महोदय परिभाषिक शब्दों के लिये प्रो० बालकृष्ण जी द्वारा लिखित "स्वराज्य" पुस्तक को देख लेते तो बहुत सम्भव था कि उन्हें इतनी दिक्कत न होती। पुस्तक में क्रमशः लोकसभा और लार्ड सभा का विस्तृत वर्णन है, और ऐतिहासिक क्रम के कारण पुस्तक मनोरंजक है। पुस्तक के अन्त में आवश्यक परिचय के लिये परिशिष्ट भी दिया गया है, जो उपयोगी है। साथ ही यदि पारिभाषिक शब्दों की सूची भी देदी जाती तो बहुत लाभ होता यद्यपि विषय के नये होने के कारण कई स्थलों में भाषा जटिल हो गयी है तथापि विषय की दृष्टि से पुस्तक उपादेय है। हिन्दी भाषा में शिक्षा देने वाले शिक्षालयों को यह पुस्तक अपनालेनी चाहिये। दाम केवल १।=) है।

४—शुश्रूषा:—लेखक श्री० डाक्टर श्री गोपालरामचन्द्र सांवे एम. ए० बी. एस, सी. स्टेट सर्जन (इन्दौर) हैं।

मझोले आकार की २०२ पृष्ठ की इस पुस्तक में रोगियों की परिचर्या और सेवा विषयक आवश्यक प्रश्न पर उचित विचार किया गया है। विचार शैली ऐसी है जो कि साधारण मनुष्यों के समझ में भी आसकती है। रोगग्रस्त व्यक्ति के लिए, उचित औषध आदि के अतिरिक्त उत्तम परिचर्या की भी आवश्यकता है, क्यों कि हमारे देश में बहुत सारी बातें इस विषय के उचित ज्ञान के न होने से ही होती हैं। पुस्तक में साधारण स्वास्थ्य के नियमों पर भी विचार किया गया है। प्रत्येक गृहस्थी को यह पुस्तक अपने पास रखनी चाहिये। मूल्य १) है, जो कि बहुत नहीं है।

हिन्दी-मनोरंजन—सरस्वती के आकार वाले लगभग ३० पृष्ठ का यह मासिक पत्र वस्तुत: मनोरञ्जन के लिए उत्तम साधन है, क्यों कि इस में, साधारण कविताओं के अतिरिक्त, मज़ेदार गल्पें रहती हैं। हास्य विनोद पर भी एकाध लेख होता है। मूल्य २॥), कानपुर से प्राप्त है।

स्वार्थ—ज्ञान मण्डल काशी द्वारा प्रकाशित यह पत्र अब अर्थशास्त्र राजनीति और इतिहास विषयक उत्तम २ लेखों से परिपूर्ण होने के कारण, निःसंकोच, एक उच्च कोटि का मासिक पत्र है। पत्र की एक बड़ी विशेषता यह है कि इस में मौलिक लेख भी होते हैं। गहन और गम्भीर विषयों पर लेख होते हुवे भी भाषा सरल और शुद्ध होती है—यह इस की दूसरी बड़ी विशेषता है। वस्तुत:, यह पत्र हिन्दी के स्थिर साहित्य की बड़ी सेवा कर रहा है। जनता को प्रकाशकों का उत्साह बढ़ाना चाहिये। मिलने का पता—ज्ञान मण्डल काशी वार्षिक मूल्य ४)

भूल संशोधन—पिछले अंक में "नेटाली हिन्दू" और "भारतीय युवकों के प्रति सन्देश" इन दो पुस्तकों की समालोचना करते हुए हम उनका मिलने का पता लिखना भूल गये थे। ये दोनों पुस्तकें "मैनेजर सरस्वती सदन, इन्दौर (मध्य भारत)" इस पते से मिलती हैं।

गुरुकुल-जगत्

गुरुकुल मटीण्डू समाचार

ऋतु साधारणतया अच्छी है। सब ब्रह्मचारी नीरोग हैं। बीच में १० १२ ब्रह्मचारी रोगी हो गये थे, पर अब सब अच्छे हैं।

ज्येष्ठ मास ही गेहूं एकत्रित करने का समय था पर विवाहों का इतना जोर था कि जिन जिन गांवों में हमारे डेपुटेशन, गये, वही गांव खाली पाये। अतः अनाज इकट्ठा होने नहीं पाया।

दान-विवाहों पर भिन्न २ स्थानों से १००४॥।=) प्राप्त हुवे, तथा अन्यदान २४६) रु०। इस दान के अतिरिक्त चौ० नन्दरूप जी भूरण ने ७००) रु० का मकान पुत्र के नामकरण संस्कार पर, बनवाने की प्रतिज्ञा की थी जिनमें से १५०) रु० तो पेशगी भेज दिया है और शेष मकानों के आरम्भ करने पर भेज देंगे। (३) चौ० भर्तुसिंह जी गढ़ीवाल के ने ६००) रु० मकान बनवाने के लिये, अपने पुत्र के विवाह पर दान दिया है।

अभी तक जिन २ स्थानों पर अनाज मिला है वे निम्नलिखित हैं:—

मारा १५) मन
मटिण्डू १६5 मन
बधान १८5 मन तथा २४) रु०
माकड़ौली २२5
खावड़ा ५७5 मन
इस्लामपुर ११5५ तथा २७) रु०
तुर्कपुर ३5१०
थाना ४२5
गुहना १८5 तथा १५) रु०
सम्भालका १५5

उपर्युक्त २१७ मन १५ सेर गुरुकुल में पहुंच गया है, जिसे गुरुकुल की गाड़ी ला चुकी। इतना या इस से कुछ अधिक अभी तक अन्य गांवों में पड़ा हुआ है, जिसे अभी तक गाड़ी नहीं ला सकी। उपर्युक्त अनाज के इकट्ठा करने में चौ० पीरूसिंह जी चौ० [illegible] जी चौ० निहालसिंह जी और चौ० [illegible]रूप जी का विशेष परिश्रम है, जिस के लिये उन्हें धन्यवाद दिया जाता है।

पढ़ाई नियम पूर्वक हो रही है गुरुकुल भैंसवाल के उत्सव पर, पञ्चम तथा षष्ठ श्रेणियें, मुख्याध्यापक तथा पं० निरंजन देव जी विद्यालंकार के साथ गई थी। आंधी के कारण जिन मकानों के छप्पर उड़ गये थे अब उन मकानों पर कड़ियें डलवाई जा रही हैं। मजदूर तथा राजों का बड़ा टोटा है। ब्रह्मचारियों ने स्वयं छुट्टी के दिन ५ हजार से अधिक नम्बरी इंटें बनाई। ऐसे प्रेम और उत्साह से ईंटें निकाल रहे थे कि हमें भी अपने गुरुकुल कांगड़ी के दिन याद आगये। अध्यापक भी ईंटों के निकालने में लगे हुए थे। रोटी तथा पानी वहीं पहुंच जाता था। उन्हीं ईंटों से ब्रह्मचारियों ने लगातार प्रातः नित्यकर्मों से निवृत्त हो कर सांयकाल के ७ बजे तक गोशाला की दीवारें खड़ी कीं, उन्होंने स्वयं अपने हाथों से ईंटें चुनी।

इस गुरुकुल को एक बात का बड़ा घाटा है, वह यह कि नौकर नहीं मिलते। रोहतक जिले से तो नौकर मिलते ही नहीं, यू.पी. के अलीगढ़ जिले से मंगाने पड़ते हैं गोशाला में यू.पी. के दो नौकर थे वे चले गये, बहुत यत्न किया कि किसी न किसी प्रकार वे मिलें, पर सब यत्न निष्फल गया। यह देखकर पञ्चम श्रेणियों के ब्रह्मचारियों ने अपने गुरुओं के पास कहा कि हमें नौकरों की कोई ज़रूरत नहीं, यह सारा बोझ हम अपने कंधों पर उठाते हैं"

अतः पंचम श्रेणी के ब्रह्मचारियों ने गौओं के चराने का काम अपने ऊपर ले लिया है। क्रमशः दो २ ब्रह्मचारी रोज चराने चले जाते हैं।

सवेरे तथा सांयकाल के समय गौवों तथा भैंसों के लिये गतावा करने का बोझा षष्ठश्रेणी ने अपने ऊपर ले लिया है। दूध भी अध्यापक तथा षष्ठश्रेणी के ब्रह्मचारी ही दोह लेते हैं।

कहार के अभाव से अपने बर्तन आप ही साफ़ कर लेते हैं, तथा धोबी के अभाव से छुट्टी के दिन स्वयं कपड़े साबुन से साफ़ कर लेते हैं।

बाग का काम भी ब्रह्मचारी स्वयं कई सालों से कर रहे हैं। भाजी स्वयं बोते तथा बाग में पानी भी स्वयं देते हैं। मकानों की सख़्त जरूरत है। दानी महाशयों को इस ओर ध्यान देना चाहिये।

पूर्णदेव
स० मुख्याधिष्ठाता
शाखा गुरुकुल मटिण्डू

गुरुकुल कुरुक्षेत्र

(१) ऋतुः—सामान्यतः आजकल ऋतु बड़ी उत्तम है, परन्तु गर्मी के मारे नाकों दम हो रहा है। यद्यपि कई दिनों से ऊपर बादल मंडला रहे हैं तथापि वर्षा के अब तक कोई चिन्ह मालूम नहीं पड़ते। ब्रह्मचारीगण मन्द मन्द समीर सेवन करते हुए अपने स्वास्थ्य की उन्नति में लगे हुए हैं। औषधालय प्रातः खाली पड़ा रहता है। कभी कभी भूल चूक से एक दो रोगी आजाते हैं जो शीघ्र ही स्वास्थ्यलाभ कर अपने अपने आश्रमों को लौट जाते हैं।

(२) विद्यालय में पढ़ाई का काम भलीभांति चल रहा है। सब अध्यापकगण बड़े परिश्रम तथा उत्साह पूर्वक ब्रह्मचारियों के पढ़ाने में लगे हुए हैं। ब्रह्मचारियों की मानसिक उन्नति के लिए यहां "सत्सगसम्मेलन" का संगठन किया गया है, जिसका प्रति सप्ताह अनध्याय के दिन अधिवेशन होता है। इस में क्या ब्रह्मचारी, क्या अध्यापक और क्या अधिष्ठाता सभी बड़े प्रेम पूर्वक भाग लेते हैं। पिछले सप्ताह मुख्याध्यापक श्री मा० काशीराम जी के सभापतित्व में "स्वास्थ्यरक्षा" विषय पर ब्रह्मचारियों द्वारा उत्तमोत्तम विचार प्रगट किए गए थे। ऐसे विषय विचार करने से जहां नैत्यिक कार्य प्रणाली में उन्नति होती है, वहां ब्रह्मचारियों में वक्तृताशक्ति और मन में प्रतिभा का भी विकास होता है। इस सम्मेलन की सामयिक स्थिति और उस में ब्रह्मचारियों के उत्साह को देख कर हम यह कहे बिना नहीं रह सकते कि भावी में इस से बड़े उत्तम उत्तम फलों की आशा है।

(३) श्री लाला भौवतरायजी के ३ मास की छुट्टी चले जाने पर प्रबन्ध का काम भी सब श्री मुख्याध्यापक जी के कन्धों पर ही आपड़ा है। तथापि उसमें कुछ त्रुटि

ओ३म्

श्रद्धा २६ आषाढ १९७७ का क्रोडपत्र

हन्टर-कमिटी रिपोर्ट की उधेड़बुन

(३)

क्या पंजाब में खुली बग़ावत थी

खुली बग़ावत का मसला क्यों उठाया गया? इस पर इस समय बड़ा विवाद चल रहा है। सर माइकेल ओड्वायर के चले जाने के पीछे बोल्शेविकों की रिश्वत और जर्मनों की साज़िश, और भारत के राजनैतिकों की गोष्ठी इन सब प्रकारों को पञ्जाब गवर्नमेंट ने त्याग दिया था। हन्टर कमिटी के हिन्दुस्तानी मैम्बरों ने बड़े ज़ोर से गोरे मैम्बरों की इस प्रस्तावना के चीथड़े उड़ा दिये हैं। उन्होंने अनिवार्य युक्तियों से सिद्ध कर दिया है कि जो भी शोरिश पञ्जाब में मची और फ़िसाद हुए, वे सरकारी अफसरों के कारण क्षणिक थे, उसमें किसी भी कौन्सपिरेसी (Conspiracy) का दख़ल न था। परन्तु कमेटी के गोरे मैम्बरों ने केवल माशलला की अदालतों के प्रमाण तथा लेफ्टीनैन्ट गवर्नर की अप्रमाणिक अवस्था पर ही (बिना किसी प्रत्यक्ष प्रमाण के) यह फ़तवा दे दिया कि पञ्जाब में खुली बग़ावत थी। इस समय सर माइकेल ओड्वायर फिर वही राग-आलाप रहे हैं कि खुली बग़ावत (open rebellion) का प्रमाण मिल जाता यदि हण्टर कमिटी को पेशावर तथा कलकत्ते के मामलों का भी आन्दोलन करने का अधिकार होता। इस निस्सार प्रतिज्ञा का खण्डन भारतवर्ष के सभी दलों के नेता कर चुके हैं, परन्तु मेरी स्थापना यह है कि यदि विशेष साक्षी हण्टर कमिटी के सामने ली जाती तो यह सिद्ध हो जाता कि सर माइकेल ओड्वायर को सच्चा सिद्ध करने के लिये सरकारी अफ़सर ही खुली बग़ावत के लिए बनावटी साक्षियें पैदा कर रहे थे। इस के लिये कुछ विशेष घटनाओं का वर्णन आवश्यक है।

(१) अप्रैल सन् १९१९ के तृतीय सप्ताह से ही एक प्यारेलाल नाम का मनुष्य मेरठ के ज़िले में १ झण्डा लिए घूमने लगा, और सत्याग्रह तथा हड़ताल और होमरूल और अन्य बातों का शोर मचाते हुए कहता फिरा कि वह राय बहादुर सुलतानसिंह देहली वाले का कारिन्दा है, और इसी काम पर नौकर रखा गया है। इधर कर्नाल और रोहतक के ज़िलों में भी १, २ ऐसे ही आदमी राय सुलतानसिंह को बदनाम करते हुए घूमते फिरते रहे। मेरठ के डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट ने वोहन और बैरन दोनों साहबों से शिकायत की कि राय सुलतानसिंह उनके ज़िले को ख़राब करता है। बैरन साहब ने राय सुलतानसिंह को बुलाकर पूछा कि क्या वे मेरठ जाया करते हैं? राय साहब के 'हां' में उत्तर देने पर उन्हें मना किया गया कि डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट की शिकायत है इस लिए वे मेरठ न जावें। रायसाहब ने प्रत्युत्तर में कहा जब मेरी लाखों की जायदाद वहां है, और जब मुकद्दमा भी मेरा चल रहा है, तब कैसे न जाऊं? इस पर बैरन साहब को आश्चर्य हुआ और उन्हों ने कारिन्दे प्यारेलाल का ज़िकर किया। रायसुलतानसिंह ने उत्तर दिया कि प्यारेलाल मेरा कोई कारिन्दा नहीं है, और न मैंने ऐसे काम के लिये किसी को नियत किया है। आश्चर्य है कि पुलिस ऐसे आदमी को गिरफ़तार नहीं करती और मुझपर दोष लगाती है। पंजाब गवर्नमैंट ने मिस्टरबैरन से यह भी शिकायत की थी कि देहली के व्यापारी दबाव डाल कर पंजाब के ज़िलों में हड़ताल करा रहे हैं और कि देहली के लीडरों के भेजे हुए आदमी पंजाब में खराबी डलवा रहे हैं। मिस्टरबैरन साहब ने मिस्टर औह, सुपरिन्टेण्डेण्ट सी. आई. डी. को आज्ञा दी कि वे इसका तत्त्व पता लगावें। यदि औह साहब का बयान मिस्टर दास के सामने होता तो उनसे पूछा जाता कि उन्होंने किस मुसल्मान डिपुटी सुपरिन्टेण्डेण्ट सी.आई.डी को इस काम के लिये तैनात किया था। और इस के आन्दोलन का क्या फल हुआ? प्यारेलाल जब पकड़ा गया, तो उसने बतलाया कि रायसुलतानसिंह ने मुझे द्वार सैकड़ों रुपये इस काम के लिये दिये हैं कि वह ग्रामीणों को भड़कावें। परन्तु जब देहली में प्यारेलाल को लाये तो वह रायसुलतानसिंह का घर न पहिचान सका। फिर देहली की सी.आई.डी. को पता लगा कि यह शुभकाम प्यारेलाल के सुपुर्द मेरठ पुलिस के बड़े अफसर ने किया था। यह बात छिपी नहीं कि संयुक्त प्रान्त के लाट साहब, सरहार्टकोर्ट बटलर के मातहत एक मेरठ के ... डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट थे, जो लाटसाहब की इच्छा के विरुद्ध सरमाइकेल ओड्वायर को ही ब्रिटिश गौरव का रक्षक समझते थे, उनके पुलिस ऑफ़िसर की राक्षसी लीला आसानी से समझ में आसकती है।

(२) अब यह छिपी हुई बात नहीं कि सरमाईकेल ओड्वायर सारे भारतवर्ष में यदि सब से बढ़कर १ व्यक्ति को ब्रिटिश जाति का शत्रु समझते थे तो वे महात्मागांधी हैं, और उनसे उतरकर यदि सरमाईकेल ओड्वायर की क्रूर दृष्टि थी तो वह मुझपर थी। जब मेरे लाहौर जाने का समाचार प्रसिद्ध हुआ, तो मेरे स्वागत के लिये जो आज्ञा उक्त महोदय ने ... दे छोड़ी थी, वह यदि पंजाब गवर्नमैण्ट छपवादे, तो उस से सर्वसाधारण का बड़ा मनोरंजन होसकता है। सर माइकल ओड्वायर ने ही हम दोनों का वह सम्बन्ध गढ़ा है जो लार्ड हन्टर के प्रश्न से मालूम होगा था अर्थात्—महात्मा गांधी Chief और और श्रद्धानन्द संन्यासी Lieutenant यदि इण्डिया ऑफ़िस का गुप्त रहस्य प्रकाश होसके होसके तो इस प्रकार कोई Confidential cable (गुप्त तड़ित्-समाचार) लार्ड चैम्सफोर्ड का मि० मान्टेगु के

ास भेजा हुआ प्रकाशित हो सकता है।

इन लोगों की कल्पना क्या थी? सर ाइकल ओड्वायर और उनके साथियों ो वायसराय के होमसेक्रेटर को यह चमा दिया था कि बोल्शेविकों ने भारतवर्ष ं अराजकता फैलाने के लिए गांधी के ास धन भेजा है। गांधी कानून भङ्ग करने के लिए नियम सिखाता और अराजकता फैलाने का पाठ पढ़ा कर सैकड़ों ड़कों और युवकों को मेरे पास भेज रहे ं, और मैं देहली से अपने दूत भेज कर ब ओर क्रान्ति करा रहा हूं। यह काम ैसे किया जाता था इसका १ प्रमाण ेता हूं:—

(नोट—यह बात याद रखनी चाहिए कि जो दृष्टान्त आगे वर्णित किया ावेगा उसके विषय में हण्टर कमिटी के ामने मिस्टर सी० आर० दास ने मुक़ े प्रश्न किया था, परन्तु कमिटी ने उस ्रश्न को नया और असम्बद्ध कह कर ाल दिया)

देहली में जिस दिन (१७ अप्रैल १९१९) पुलिस की ओर से अन्तिम ोली चली, उसी दिन ओब्रन साहब बहादुर े पहिला काम यह किया कि एक १२, १३, वर्ष की आयु वाले लड़के के चूतड़ों र बेरहमी से बेतें लगवाईं। इसकी वह शा मिस्टर एन्ड्रूज ने भी देखी थी और उन्होंने समाचार पत्रों में लिखने के अतिरिक्त वायसराय को भी उस के विषय में लिखा था। वह लड़का बेतें खाकर रेवाड़ी की तरफ़ चला गया, और वहां ुलीस ने उसे फिर गिरफ़तार कर लिया। उसको हवालात में रख कर उस की ओर े एक बयान लिखा गया जिसका सारांश यह था—

"[illegible] ...न गुरुभाई जयनारायण और चन्द्रबल सहित ७ महीनों तक रेलवे स्टेशन बम्बई के समीप फूलचन्द्र भगवान् दास की धर्मशाला में महात्मा गांधी से शिक्षा ग्रहण करता रहा। फिर हम सब को गांधी जी ने ३० मार्च १९१९ से १½ महीना पहिले देहली में विशेष आज्ञाएं दे कर भेज दिया। इसी प्रकार बहुत से लड़के गांधी जी ने देश में भ्रमण करके व्याख्यान देने के लिये तय्यार कर के भेज दिये थे। मुझे देहली में स्वामी श्रद्धानन्द के पास भेजा था। वे नील के कटरे में १ बड़े मकान में रहते थे वहां कुछ मुसलमान और हिन्दु आया करते थे। स्वामी श्रद्धानन्द ने मजिस्ट्रेट तहसीलदार और पुलिस अफ़सर मुकर्र करके उनको पीतल के बिल्ले दिये थे। और पुलिस के सिपाही मुकर्र कर के उनको कपड़े के बिल्ले दिये थे। ३० मार्च १९१९ से १⅓ महीना पहिले ही सब दीवानी मुकद्दमे स्वामी श्रद्धानन्द के यहां तय होते थे। वहां रोज़ व्याख्यान भी होते थे। व्याख्यान का विषय एकता और सत्याग्रह होता था। ३० मार्च के दिन मैं अपने गुरुभाइयों को साथ लेकर झण्डा हाथ में लिए निकला और सब को गांधी जी का हुक्म सुनाया कि ज़बर्दस्ती दुकाने बन्द कर दो, किसी को काम मत करने दो। फिर मैं झण्डा लिये रेल पर चला गया। मैंने ही वहां लोगों को पुलिस पर हमला करने का हुक्म दिया। फिर गोली चल गई। मेरे सामने मेरा गुरुभाई गोली से मारा गया, फिर मैं बराबर देहली में गांधी जी के आदेश का प्रचार करता रहा कभी फुव्वारे पर कभी एडवर्ड पार्क में। सत्याग्रह सभा में मुझे नहीं बोलना मिलता था। एडवर्ड पार्क में मैंने ही सी. आई. डी. के एन्सपेक्टर को पिटवाया था। जब ओब्रन साहब उसके पीछे मोटर पर आये तो मुझे लोगों ने अपने कन्धे पर उठा लिया और मैंने ओब्रन को बहुत गालियां दीं, तब ओब्रन साहब मुझे मोटर में बिठाकर ले गया और मेरे बेतें लगवाईं इत्यादि इत्यादि—

जहां तक मुझे याद है २७ मई १९१९ को यह बयान लेकर लाला सतनारायण इन्सपेक्टर सी. आई. डी मेरे पास आये और कहा—मिस्टर ओब्रन ने यह बयान तहक़ीक़ात के लिए मुझे दिया था। मैंने साहब से कहा कि इधर उधर भटकने के स्थान में स्वामी जी से पूछलेना अच्छा है. सो आपके पास इसकी सचाई वा झूठ के विषय में पूछने आया हूं। मैंने लाला सतनारायण को बतलाया कि मैं कभी नील के कटरे में रहा ही नहीं। यह लड़का (सरस्वतीगिरि) ३० मार्च १९१९ के दिन कहीं दिखलाई भी नहीं दिया। एडवर्डपार्क में ओब्रन साहब मोटर पर आये ही नहीं, बल्कि रात को घोड़े पर सवारों के साथ आये थे। सरस्वतीगिरि को बेतें १४ अप्रेल को नहीं वर १८ अप्रेल को लगाई गयीं। तो इस का बयान मेरे विषय में कैसे सच्चा हो सकता है, और मेरा तहसीलदार मजिस्ट्रेट पुलिसऔफीसर नियत करना कैसा मख़ौल है! लाला सतनारायण जी ने भी मेरे कथन की सचाई को माना और चले गये। एक बात यहां और बतलानी है, बयान अंग्रेज़ी में लिखा हुआ था, और जिस पुलिस सब इन्सपैक्टर ने अपने हाथ से बयान लिखा, उसने प्रारम्भ में ऐसे शब्द लिखे थे जिनका तात्पर्य लग भग यह है:—

"This statement has been obtained from Saraswti Giri by using every means in our po ver" **अर्थात्** "यह बयानसरस्वतीगिरि से उन सब साधनों को प्रयोग मे लाकर जो कि हमारी शक्ति में थे, प्राप्त किया गया है"

२९ मई सन् १९१९ को नीचे का पत्र ला० सत्यनारायण सबइन्सपैक्टर देहली ने लिखाः—"सांवलराम उपनाम सरस्वतीगिरि पुत्र देवकी नन्दन ब्राह्मण का, निवासी बड़ौदा डाक घर चूरू ज़ि० शेखावती रियासत जयपुर चेलावलराम गिरि फ़कीर बनारस उमर लगभग १३, १४ वर्ष— इसने बतलाया कि वह महात्मा गांधी के साथ ७ महीनों तक जयनारायण और चन्द्रबल अपने गुरु भाइयों के सहित रेलवे स्टेशन बम्बई के समीप फूलचन्द्र भगवानदास की धर्मशाला में रहा। ३० मार्च १९१९ की हड़ताल से १⅓ महीना पूर्व उन सब को शिक्षा देकर गान्धी जी ने देहली भेज दिया। महात्मा गांधी ने ऐसे बहुत से लड़के देश में घूम २ कर पुकार करने के लिए तय्यार किये थे।

"उपरोक्त मौखिक निश्चय के अनुसार स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की सेवा में महात्मा गान्धी जी से तसदीक़ कराने

के लिए भेजा जाता है। सत नारायण इन्स्पेक्टर पुलिस देहली ।"

मैंने इस पत्र की नकल महात्मा गांधी जी के प्राइवेट सेक्रेटरी के पास भेजदी। उनका जो उत्तर आया वह ला० सत-नारायण के पास अपने पत्र सहित भेजा। उस पत्र का अनुवाद नीचे देता हूं—

"१५ वर्मवेष्चियन सड़क देहली
३ जून १६१६

प्यारेलाल। सत्यनारायण!

सरस्वती गिरि के बयान के सम्बन्ध में आपके ५ मई १६१६ के नोट की प्रति प्रति मैंने महात्मा गांधी को भेजी थी उनका उत्तर यह है—"मुझे सांवलराम उप नाम सरस्वतीगिरि का कोई स्मरण नहीं है। मैंने न उसको शिक्षा दी, और न उसको वा किसी और को देहली वा और किसी स्थान में जाने और वहां लेक्चर देने को कहा, और न मैंने कोई लड़का वा आदमी देश में भ्रमण करके व्याख्यान देने के लिए तय्यार किया। कृपा करके मेरे नाम से प्रत्येक सम्बन्धित व्यक्ति को खबरदार कर दीजिए कि इस बयान का मैं सर्वथा खण्डन करता हूं कि मैंने किसी व्यक्ति को ऐसे काम करने के लिए उत्तेजना दी है जो कि पंजाब में हो गुज़रे हैं।" मैं समझता हूं कि सी. आई. डी. के ही सुपरिन्टेण्डेण्ट का सीधा कर्तव्य यह है कि गुड़गांव के अफसरों को बाधित करें कि इन लोगों के विरुद्ध कार्यवाही की जावे जिन्होंने लड़के सरस्वतीगिरि से ऐसा बयान हासिल किया और उस बयान की ज्यों की त्यों प्रति ? मुझे दी जावे.........।"

लाला सत्यनारायण के मकान से यह समाचार लेकर मेरा आदमी वापिस आया कि वे छुट्टी पर गए हैं। तब मैंने वही खत मि० पी. एल. और्ड सी. आई. डी. सुपरिन्टेण्डेण्ट के पास भेजा। उन्होंने ५ जून को नीचे लिखा जवाब भेजा:—

"प्रिय महाशय! आपके पत्र तारीख़ ३ जून सन् १६१६ के सम्बन्ध में, जिसमें आपने सरस्वती गिरि के वर्णन की प्रति मांगी है, मैं आपको सम्मति देता हूं कि आप डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट गुड़गांव को लिखिए। मैं उस बयान की प्रति देने की अवस्था में नहीं हूं ।"

तब मैंने १३ जून १६१६ को नीचे लिखा पत्र भेजा, जिस का वहां से अब तक कोई जवाब नहीं आया। उस पत्र को यहां ज्यों का त्यों यहां दर्ज करता हूं—

"Dear sir,

A statement of the Sadhu boy Saraswati Giri—who had been whipped at Dehli and who was afterwards arrested by the Gurgaon Police-was shown to me by the Delhi. C I D. The statement purposted to have been taken by a police Inspetor or Sub Inspector of the Gurgaon Police Force In that statement appeared several false allegations egainst me and against Mahatma G. K. Gandhi, which were shewnby me to be untrue—I hope-to the satisfaction of the Delhi C I D. The allegations were very serious and threfore I asked Mr. P. L. Orde, C. I. D. Superintendent of Police Delhi, to furnish me with a new copy of Saraswati Gir's statement. He replied that he was "not in a position to supply me" with a copy to you for the same.

I apply to you, there for, for a true Copy o the said stastement. The charges copying can be realized by sending the copy per V. P. P. for the amount spent on the same I hope, that in the interest of justice, you will kindly order a true copy of Sarswati Gir,s statement to be furnished to me at an early date at the address given at the top of this leter.

Your's Faithfully
Shraddhanand.

P. S The delay in writing to you has occured on account of my absence from Delhi

To
The District Magistrate,
Gurgaon

सरस्वती गिरि से बयान प्राप्त कर के पुलिस ने उसे हवालात से निकाल ३० मासिक पर सी.आई.डी. का काम लेने को नौकर रखलिया। परन्तु मेरे भाण्डा फोड़ देने और सरमाइकेल ओड्वायर के चले जाने के कारण उस बयान से लाभ उठाने का ओड्वायर के मन्त्री मिस्टर टाम्सन को साहस न हुआ।

सरस्वती गिरि की पिछली कहानी भी शिक्षादायक है। जब मतलब निकल चुका तो गुड़गांव पुलिस ने उसे छोड़ दिया। वह लड़का फिर पुलिटकल व्याख्यान देने लगा। दिल्ली में मेरे पास आकर रोया कि उस से पुलिस ने ज़बरदस्ती अङ्गूठा लगवा लिया और न जाने क्या लिखलिया। मुझे उसका कुछ विश्वास न हुआ और उसे पास न बैठने दिया। कुछ दिन हुए यह लड़का रुड़की और वहां से हरद्वार आया। उसके साथ दो और साधु बतलाए जाते हैं। साथ के दो साधुओं ने चोरी की-बतलाई जाती है। उनके साथ ही सरस्वतीगिरि को भी पकड़ लिया और उसे चार वर्ष के लिए बाल—शिक्षालय में कैद की सज़ा दी गई। सरस्वतीगिरि कहता है कि वह 'लकसर' हिन्दू-मुसलमान की एकता पर व्याख्यान देने गया था। वहां उसे पकड़ लिया। पुलिस यह नहीं कहती कि इसने चोरी स्वयं की। अपराध यह है कि इस बालक को भी चोरी का ज्ञान होगा क्यों कि यह चोर साधुओं के साथ हरद्वार पहुंचा था। सेशनजज के यहां अपील हुई, अपील डिस्मिस। हाईकोर्ट इलाहाबाद में निगरानी हुई वहां भी खारीज-ऐसा क्यों हुआ? इस लिए कि पायोनियर को यह लिखने का मौका मिले कि महात्मा गांधी के चेले भी चोर हो सक्ते है। अन्तिम फ़ैसले में हाईकोर्ट जज लिखते हैं कि सरस्वतीगिरि "मि.. गांधी का चेला बतलाया जाता है"... ..."यह विश्वास करना असम्भव है कि सरस्वतीगिरि सा अकाल-प्रौढ़ बालक, जो लेक्चर देता फिर रहा था, इस बात से अनभिज्ञ हो कि उसके दो साथियों ने स्वामी (कल्याणानन्द) का दान-पात्र उठा लिया हो" और इसी सम्भावना पर एक स्वतन्त्र बालक को परतन्त्र बना दिया गया।

यदि खुला आन्दोलन किया जाता तो बहुत सी साक्षियां, यह सिद्ध करने के लिए, मिल सकीं "कि पहले खूनी बगावत" की घोषणा लेकर पीछे उसके लिए सबूत गढ़ने शुरू हुए। पंजाब के रामनगर में यह बनावट बहुत पीछे बनाई गई कि लोगों ने सम्राट् जार्ज का पुतला निकाला और उसे जलाया, परन्तु पीछे

साफ़ होगया कि यह सारी बनावट थी। लायलपुर की बाबत एक नोटिस का ज़िक्र रिपोर्ट के ६० पृष्ठ पर आया है। उस में लिखा था—"तुम काहे की प्रतीक्षा कर रहे हो? यहां बहुत सी लेडियां हैं जिन की तुम इज्जत उतार सक्ते हो। सारे हिन्दुस्थान में घूमो, लेडियों और इन पापियों से देश को मुक्त करो और तब समय आवेगा जब हम सब मिल कर कहेंगे कि हिन्दू, मुसलमान और सिक्ख धन्य हैं।" इसका खण्डन महाशय सन्तसिंह जी प्लीडर लायलपुर ने कर दिया है। नोटिस हाथ से लिखा हुआ था और शहर के बीचोबीच घन्टाघर पर लगा हुआ था, जहां दिन रात सङ्गीन का पहरा रहता था यह नोटिस सिवाय सी.आई.डी के और कौन लगा सक्ता था, मेरे देहली सम्बन्धी बयान में ऐसी कई घटनाएं है जिन पर थोड़ा भी हन्टरकमिटी के मेम्बर ध्यान देते तो मालूम हो जाता कि सब स्थानों में ऐसी बनावटें सी.आई.डी. ने ही की होंगी।

रिपोर्ट के पृ० ६९ पर ओड्वायर का यह बयान भी दर्ज है कि गवर्नमेंट हिन्द से उन्हें यह समाचार मिला था कि २५ अप्रैल १९१९ को बम्बई में एक बड़ी जिहाद की सभा होगी। ऐसा ही २२ अप्रैल को देहली में मिस्टर बैरन ने, भाई एन्ड्रूज़ से कह कर उनके द्वारा मुझसे उसकी बाबत पूछा था। मैंने सम्मति दी थी कि इस पर किसी को भी बुलाकर नहीं समझाना चाहिए क्योंकि यह निरी गप्प है। समझाने से शायद उनका ध्यान हो इस ओर खिंच जाय। मिस्टर बैरन ने मेरी सम्मति को ठीक समझा। परन्तु सी. आई. डी. ने जिहाद की चर्चा फैलानी शुरू की। कुछ हिन्दू और मुसलमान चौधरी, मेरे पास २४ अप्रैल को पूछने आए कि क्या दूसरे दिन हड़ताल होगी। मैंने उन्हें समझा दिया कि यह सब गुप्तचरों का चकमा है, कोई हड़ताल न होगी। चौधरियों ने सर्वसाधारण को समझा दिया। रात को ११ बजे मुझे कुछ भद्र पुरुषों ने आ जगाया और खबर दी कि फ़तेहपुरी पर एक हस्तलिखित इश्तिहार लगा हुआ है, जिसमें मुसलमान को सूअर की और हिन्दू को गाय की क़सम दी गई है कि हड़ताल अवश्य की जाय। मैंने कह दिया कि यह सी. आई. डी. का काम है। तब लोगों ने जाकर वह विज्ञापन दीवार पर से पोंछ डाला। परंतु हाकिम ऐसे घबरा गए थे कि फ़ौज तैयार करली, ७० या ८० गोरे प्रातः ३ बजे से ही "टाउन हाल" में जमा कर दिये जो बेचारे रात के भी ७ बजे तक वहीं फंसे रहे और मशीनगन तैयार कर छोड़ी।

इसमें तो सब हिन्दुस्थानी सहमत हैं कि न खुली बग़ावत थी और मार्शल ला की ज़रूरत, परन्तु मैं बल पूर्वक यह भी कहता हूं कि जो कुछ शहादत उसके लिए पेश की गई है उसकी आधी केवल सी. आई. डी. की बनावट थी।

वाइसराय की जिम्मेवारी

रिपोर्ट के पढ़ने से एक बात स्पष्ट हो जाती है। सरमाइकल ओड्वायर तो सब से बड़ा अपराधी है ही जिस ने महात्मा गांधी को पलवल में गिरफ्तार करा और डाक्टरज़ किचलू और सत्यपाल को अमृतसर से बहार कर सारे देश में आफ़त मचा दी, परन्तु वाइसराय का उत्तरदातृत्व भी उससे कम नहीं। यह सच है कि वाइसराय से जो कुछ कराया होमेम्बर सर विलियम विंसेन्ट ने कराया, परन्तु वाइसराय का बड़ा अपराध यह है कि जब वह इतना निर्बल था कि विंसेन्ट उसे कठ पुतली की तरह नचा सके तो उस ने त्याग पत्र क्यों न दे दिया। वाइसराय ने आज अपने despatch में लिखा है कि जिन परिवारों के कमाऊ जलियाँवाले बाग़ में भूने गए उन्हें गुज़ारा देंगे, परन्तु यदि ३१ मार्च को वह दिल्ली ठहर कर घायलों की खबर ले कर कुछ हमदर्दी जाहिर कर जाता और विंसेन्ट के लेखों पर "खुशनूदी की मोहर" ? लगाने के स्थान में स्वयम् ३० मार्च १९१९ की घटना का आन्दोलन करता तो आज जनता उसके वश में होती। परन्तु आज तो वाइसराय पर ही कहावत लगती है कि—"समय चूकि पुनिका पछताने"—अब इन भद्रों में कौन आता है। जब मैं पंजाब में पीड़ित परिवारों को सहायता बांट रहा था तो प्रायः भाइयों का पहिला प्रश्न यह होता था कि यह सहायता कहीं सरकार की ओर से तो नहीं दी जाती मेरे तसल्ली दिलाने पर फिर माताएं कहतीं—

"हमारे साथ धोखा न हो, जिन निर्दयों ने हमारे निरपराध आदमी भून डाले उनके, रक्त से सने हुए, हाथों से हम एक पैसा न लेंगे।" और यदि अब भी वायसराय चाहें तो परीक्षा करके देखलें।

लिखा बहुत जासकता है परन्तु अब विशेष आवश्यकता नहीं। सब ने ही देश के कर्त्तव्य पर सम्मति दी है—अन्त में मैं भी ऐसा ही करता हूं—

इन घटनाओं से शिक्षा

अपने भविष्य के लिए भारतनिवासी इन घटनाओं से जो शिक्षाएं लेसक्ते हैं, उन में से कुछ नीचे लिखता हूं:—

[१] स्वार्थ, व्यक्तियों को ही नहीं, जातियों को भी अन्धा कर देता है। जो अंग्रेज न्यायकारी प्रसिद्ध थे, हिन्दुस्तान रूपी सोने के अण्डे देने वाली मुर्गी को हाथ से जाते देखकर प्रत्यक्ष अन्याय और झूठ पर उतर आए। इस से बृटिश गवर्नमेण्ट पर से विश्वास सर्वथा उठ गया। जिस गवर्नमेण्ट की जड़ें पाताल को पहुंची हुई समझी जाती थीं; वे खोखली होगईं। यदि भारतियों को स्वराज्य मिले तो उन्हें स्वार्थी प्रतिनिधि न चुनने चाहिएं।

(२) एकता में जीवन है, परस्पर के विद्वेष में मौत है। हिन्दू, मुसलमान क्या, सिक्ख, [illegible], ईसाई सब हिन्दुस्थानी एक मत हों, तब जाति जीती जागती शक्ति रहेगी, जिसकी ओर कोई आंख उठाकर भी न देख सकेगा। ईसाई भी समझलें कि बिरादरी के साथ ही वह बड़े हो सकते हैं। जो एकता प्राप्त हो चुकी है उसकी रक्षा करना पहला धर्म है।

(३) पापी अपराधियों पर मुकद्दमे चलाकर धन का नाश करना व्यर्थ है उस ओर लगने वाला धन तथा पुरुषार्थ शिक्षा का विस्तृत प्रचार करने पर लगाना चाहिये। पापी को मारने के लिए उस का पाप ही महाबली है। और

(४) अन्तिम शिक्षा यह लेनी चाहिए कि जहां तक हो सके सर्वसाधारण में ब्रह्मचर्य और सदाचार का प्रचार किया जाय, जिससे जातियों की आने वाली चोटें सदाचारियों के वज्र रूपी शरीर पर पड़कर स्वयं टुकड़े २ हो जाया करें।

(समाप्त)

श्रद्धानन्द सन्यासी

नहीं हुई है। हमें आशा है कि हम से दूर बैठे हुए भी लाला जी की सम्पूर्ण शक्तियां इस ओर ही लगी रहेंगी। सब कार्य ठीक प्रकार से पूर्ववत् ही चल रहा है।

दानी महाशयों की कृपा से दान भी अच्छी राशी में आता ही रहता है। अभी 'टोल' गांव से [जो कुरुक्षेत्र से लगभग १२ कोस दूर है) म० तेलूराम जी आर्य ने १८ मन पक्की गेंहूं भेजकर गुरुकुल से अपने प्रेम का परिचय दिया। हमें आशा है कि अन्य मानी दानवीर भी इनका अनुकरण करने में कभी पीछे न हटेंगे।

अन्त में, हम दानी महाशयों से बल पूर्वक प्रार्थना करते हैं कि वे गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के महत्व को अधिक और अधिक आवश्यकता समझते हुए, इनको तन, मन, तथा धन से जैसे भी हो सके किसी न किसी रूप में सहायता करते रहें। हमें विश्वास है कि हमारी यह धीमी किन्तु हृदय से निकली हुई आवाज़ बहरे कानों पर ही न पड़ेगी।

सार और सूचना

१—झांसी से "साहस" नाम का एक हिन्दी साप्ताहिक पत्र शीघ्र ही प्रकाशित होगा। पत्र राष्ट्रीय होगा। वार्षिक मूल्य ३) है।

२—आर्य समाज गढ़मुक्तेश्वर के वार्षिक चुनाव में श्री० रामशरणाचार्य्य जी वैद्यराज प्रधान और चौ० जगरामसिंह जी मन्त्री नियत हुये हैं। समाज का उत्सव २८, २९, ३० अगस्त को होगा।

३—ब्रह्मचारी शैलेन्द्र जी का पत्र—स्थानाभाव से नहीं छापा जा सकता।

—:o:—

श्रद्धा के नियम

वार्षिक मूल्य ३॥), ६ मास का २) वी. पी. भेजने का नियम नहीं है। ग्राहक महाशय पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखा करें।

संसार समाचार पर

टिप्पणी

अन्धों को सहायता पिछले दिनों, इङ्गलैण्ड की पार्लियामेण्ट ने अन्धों के विषय में एक कानून पास किया है, जिस के अनुसार स्थानीय म्यूनिसिपैलिटी और कमीटीज़ अन्धों के लिए न केवल शिक्षा किन्तु जीवन निर्वाह के लिए भी विशेष प्रबन्ध करें। इसके अतिरिक्त, ५० वर्ष के ऊपर की आयु वाले अन्धों को राज्य की ओर से पैंशन दी जावेगी। पार्लियामेण्ट का यह काम, वस्तुतः, प्रशंसनीय है। भारत सरकार और देशी रियासतों को भी इसका अनुकरण करना चाहिए।

पुत्र का पिता से विरोध विदेश-यात्रा के लिए लो० मा० तिलक के प्रायश्चित्त करने के विषय में हम 'श्रद्धा' के किसी पिछले अंक में लिख चुके हैं। अब सहयोगी 'वन्देमातरम्' का द्वारा ज्ञात हुआ है कि लो० मा० तिलक जी के सुपुत्र ने, 'इन्दुप्रकाश, में एक पत्र छपवा कर यह उद्घोषित किया है कि "मैं अपने पिता के प्रायश्चित्त को सर्वथा नापसन्द करता हूं।" यान्यस्माकं सुचरितानि तानि त्वयोपास्यानि नेतराणि। इस उपनिषद् वाक्य का क्रियात्मक उदाहरण यही है।

अन्तर्जातीयता का ढोंग बरसाती कीड़ों की तरह आज कल अन्तर्जातीय--सभाओं (International conferences) की यूरुप में धूम मची हुई है। कोई तीन चार राष्ट्र मिल एक सभा खोल देते हैं और उसे "अन्तर्जातीयता" का पहिरावा पहिना देते हैं। अभी उस दिन एक "अन्तर्जातीय—व्यापार—सभा" की ख़बर मिली है, जिस के सभापति फ्रान्सराष्ट्रपति म० मिलरैण्ड थे। हम नहीं समझते, कि यह सभा किस अधिकार से "अन्तर्जातीय" कही जा सकती है, जब कि यूरुप के दो बड़े राष्ट्र, जर्मनी और रूस के साथ इन राष्ट्रों की व्यापार संन्धि अभी तक विचाराधीन है। मित्रदल को अब यह भ्रम दूर कर देना चाहिये कि संसार में केवल वे ही राष्ट्र नहीं हैं जो कि इस की कूट नीति में हाथ बटाते हैं। परन्तु और भी हैं, जिन की सत्ता उसे स्वीकार करनी होगी। "हाथी के दांत खाने के और, और दिखाने के और" वाली कहावत के अनुसार मित्रदल को "अन्तर्जातीयता" का ढोंग रचना ही पड़ता है।

निरक्षरता से आर्थिक हानि 'यूनाइटेड—स्टेट्स (अमेरिका) में १५ मिलियन मनुष्यों के अनपढ़ होने के कारण राज्य को वार्षिक एक बिलियन और पांच सौ मिलियन डालर की आर्थिक हानि है। यदि यह ठीक है तो, इस हिसाब से, भारत को कितनी वार्षिक आर्थिक हानि होगी जहां के २८८ मिलियन लोग निरक्षर हैं? (इण्डियन विटनस)

उचित प्रस्ताव सहयोगी "कर्मवीर" के इस प्रस्ताव से हम सर्वथा सहमत हैं कि नई कौंसिलों के लिए खड़े होने वाले उम्मेदवारों के लिए जिन प्रतिज्ञाओं की आवश्यकता है उन में गोवध बन्द करवाने, और आयुर्वैदिक के प्रचार करने के विषय में भी प्रतिज्ञा करवाई जानी चाहिए। वस्तुतः इन दोनों की इस समय अत्यन्त आवश्यकता है। परन्तु इन दो प्रतिज्ञाओं के साथ तीसरी एक और प्रतिज्ञा जोड़ देनी चाहिए, और वह शराब मांस तथा अन्य मादक अन्य पदार्थों के सर्वथा निषेध कर देने के विषय में है। चूंकि आबकारी का सारा महकमा इन विषयों में से एक है, इस लिए इसका रोकना वा न रोकना हमारे ग़ैर-सरकारी मैम्बरों के हाथ में ही है। हम आशा करते हैं कि मादक-निषेधक समितियां इस विषय में अवश्य आन्दोलन करेंगी। किसी उचित अवसर पर हम भी इस मामले पर अपने विचार अवश्य प्रकट करेंगे।

आयरलैंड की सुलझन लोहे के पिंजरे में बन्द परन्तु स्वच्छन्द विचरण करने के लिए कोशिश करते हुए पक्षी के साथ मालिक जैसा व्यवहार करता है, वही आज ब्रिटेन आयरलैण्ड के साथ कर रहा है। साम्राज्य-वाद के मद में चूर इंगलैंड, वह

दुनियां के सब छोटे राज्यों को द्वेष समझता हुआ, उन्हें पददलित करना चाहता है वहां, दूसरी ओर आयरलैण्ड भी स्वाधीनता की भूख से सताया जाकर पागल होगया है और स्वतन्त्रता देवी के चरणों में अपना सिर रख चुका है। इंग्लैण्ड की कोई भी शक्ति अब विरोध की इस प्रचण्ड ज्वाला को बुझा नहीं सकती। और यदि इंगलैण्ड अपने फौजी शासन के नृशंस कृत्यों से इस मुट्ठी भर लोगों को रोंधने का यत्न करेगा तो इससे जहां वह, संसार की दृष्टि में, अपने नैतिक आधार को खोयेगा वहां, दूसरी ओर, अपने पुराने असर पर धब्बा लगावेगा। बस, अब तो केवल एक ही मार्ग है और वह यह कि ब्रिटेन यह समझले कि उस की सुरक्षा आयरलैण्ड की स्वाधीनता में ही है।

भावी युद्ध कहां होगा ?

कुछ समय पूर्व लार्ड कर्ज़न ने, हाउस आव लार्डस' में एक और महा-युद्ध की आशंका प्रकट की थी। संसार का आधुनिक घटनाचक्र तो इस आशंका को सत्य सिद्ध करने में लगा ही हुआ है, पर प्रश्न यही होता है कि इस का प्रारम्भ कहां होगा ? आस्ट्रेलिया के महा-मंत्री ने जापानियों की वृद्धि की ओर ध्यान दिलाते हुये, हाल ही में, यह भविष्यद्-वाणी की है कि भावी युद्ध 'शान्त महासागर' (Pacific) में होगा। लार्ड जैलिको ने विशाल-सामुद्रिक कार्य की आवश्यकता दर्शाते हुए यह सलाह दी है कि ब्रिटेन का उत्तर महासागर में खड़ा हुआ सामुद्रिक-बेड़ा प्रशान्त महासागर, में ही बुला मंगाना चाहिए। इतना ही नहीं, अमेरिका के नौसचिव ने भी अभी यह उद्घोषणा की है कि युनाइटेड स्टेट को, प्रशान्त महासागर, (Pacific) में अपना जंगी बेड़ा तैयार करना चाहिए इन लक्षणों से तो यही पता लगता है कि भावी अशान्ति का तूफान "प्रशान्त महासागर" के किनारों से ही उठेगा ? देखें, ऊंट किस करवट बैठता है ?

बाम्बे यूनिवर्सिटी में हिन्दी का निरादर

सर नारायण चन्द्रावरकर के प्रस्ताव और प्रिन्सिपल परांजपे के संशोधन के साथ बाम्बे-यूनिवर्सिटी की सीनेट ने एक प्रस्ताव पास किया है। जिसके अनुसार बी. ए. पास करने वालों को निम्न दो समूहों में से कोई दो भाषायें चुननी होंगी—अंग्रेज़ी, संस्कृत, ग्रीक, लेटिन, हिब्रू, अरबी फ्रेन्च, इनसता और पहलवी, पाली, परशियन, जर्मन, अर्धमागधी, मराठी, गुजराती, कनारी, उर्दू। यूनिवर्सिटी की सीनेट पर हमें आश्चर्य है कि उसने "अर्ध मागधी" "कनारी" "पहलवी" जैसी अप्रसिद्ध भाषाओं को तो स्थान दिया है परन्तु उस भाषा का जिसके बोलने वाले कुमाऊं से कुमारी तक हैं, जिस का प्राचीन साहित्य भी किसी से कम नहीं है, उस देश-भाषा 'हिन्दी' का क्यों निरादर किया है ? हिन्दी-प्रेमियों को इस विषय में पूर्ण आन्दोलन करना चाहिये।

सरकार की भद्दी युक्ति

संयुक्त प्रान्त की १९१९—२० की जो वार्षिक "स्वास्थ्य" रिपोर्ट निकली है उस से ज्ञात होता है कि प्रान्त में गतवर्ष जन्म संख्या ३९, २९ से गिरकर ३२.३९ होगई थी जिसका कारण प्रान्तीय सरकार के मत में, लोगों का सैनिक बनकर युद्ध की युद्ध भूमि में जाना है। सरकार की इस भद्दी युक्तिपर हमें हंसी ही आती है। इसका क्या कारण है कि पंजाब—जहां के सैनिक सब से अधिक संख्या में विदेश गये हैं—में जन्म संख्या घटने के स्थान में बढ़ी ही है ! "ग़ालिब ख़याल है अच्छा दिल ख़ुश करने को" के अनुसार हमारी प्रान्तीय सरकार के दिल को इस भद्दी दलील से तसल्ली मिल जावे तो हमें इस में कोई उज्र नहीं है !

लेबर पार्टी से बहुत आशा मत करो

इङ्गलैण्ड में स्कारबेरो नामक स्थान में होने वाली लेबर कान्फ्रेन्स ने गतवर्ष पंजाब मारशलला की आड़ में किये गये हत्याकाण्ड के प्रतिघृणा और डायर का नृशंसता के प्रति रोष प्रकट करते हुये वायसराय को वापिस बुला लेने का प्रस्ताव पास किया। कान्फ्रेन्स का यह काम अत्यन्त प्रशंसनीय है और हम सब भारतवासी उसके, वस्तुतः, अत्यन्त कृतज्ञ हैं। परन्तु, यहां पर, हम अपने देशभाइयों को एक चेतावनी दे देना चाहते हैं, और वह यह कि लेबरपार्टी से उन्हें बहुत अधिक आशा नहीं करनी चाहिये। हम वह समय नहीं भूले जब कि साम्राज्य की बागडोर हाथ में आने से पूर्व लिबरल पार्टी भी हमारी दीन दशा पर तरस खाती हुई, हमें सब्ज़ बाग़ दिखाने में कोई कसर न छोड़ती थी परन्तु अधिकार मिलने पर वे सब सिद्धान्त काफूर हो गये थे। इस सारे मामले की पुष्टी तो गोंसाई तुलसीदास का यह वाक्य अच्छी तरह से खोल देता है "असको जनमा जगमांहि। प्रभुता पाय जाय मदनांही। लेबर पार्टी के प्रति भी हमारी यह आशंका सर्वथा निर्मूल नहीं है।

युद्ध का खर्च

लन्दन की बैंकर्स इंस्टीट्यूट के समक्ष युद्धका ठीक हिसाब बताते हुए मि० एडगर क्रामण्ड ने कहाः—ब्रिटेन के ३६० क्रोड़ पाउण्ड, फ्रान्स के ५४१ करोड़ पाउण्ड, इटाली के १९० करोड़पाउण्ड, बेलिजयम के ५० करोड़ पाउण्ड और जर्मनी के ८७० करोड़ पाउण्ड खर्च हुए हैं। (श्री वेंकटेश्वर)

—:०:—

—भारत में आज से ६०० वर्ष पहिले, अलाउद्दीन ख़िलजी के समय में, खाने की चीज़ों का भाव फ़ी रुपया इस प्रकार थाः— गेहूं ११९ सेर, जौ २२४ सेर, चावल १७९ सेर, उड़द १७२ सेर, चना १७९ सेर, मोठ १९६ सेर, बूरा खांड़ १५ सेर, लाल खांड़ ४४ से १ और घी ३३ सेर। (स्वदेश)

—आज कल अमरीका में दूध का १२ सेर, डेनमार्क में १६ सेर और इङ्गलैंड में ८—१० सेर है। पर हिन्दोस्तान में दूध रुपये का तीन सेर ही बिक रहा है, [सुधारक]

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर श्रद्धाराम के लिये छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
'हम प्रात:काल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा को बुलाते हैं।'

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० म० १० सू० १५१, म० ५)
'सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।'
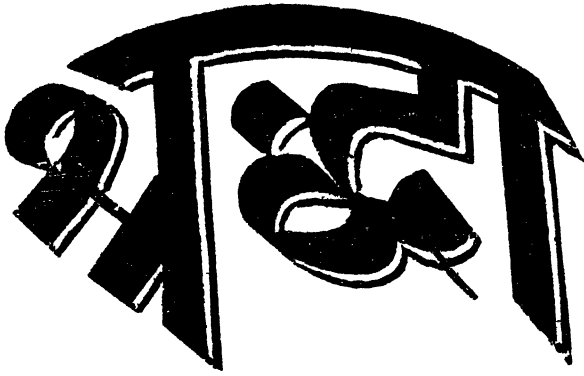
सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है { २ श्रावण सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० १६ जुलाई सन् १९२० ई० } संख्या १३ भाग १

हृदयोद्गार

कह दो न पग रुकेगा आगे
जो चल चुका है—टेक
दुनिया में बेड़ियों में
जकड़ा रहे न कोई।
सन्देश सब से पहिले
हम को ये मिल चुका है ॥१॥
डाला था उसने बाहों
पर बोझ ये हमारी,
उसका भुलाना अब तो
बहुतेरा कल चुका है ॥२॥
जगदीश के ये दयारी
सब से पुरानी क्रीणा,
जोशों की मार से तू
इस को मसल चुका है ॥३॥
टूटेगी और गाँठी
ये बेड़ी बजेगी,
इस के ये खाक सारा
फिर से संभल चुका है ॥४॥
मत भूल देख तारें
इस को यहीं जमाले,
दीपक का राग इस में
कुछ जो निकल चुका है ॥५॥

१ यह संसार एक बड़ी तरंग है। इस मे रहने वाले प्रत्येक छोटे से छोटे प्राणी से लेकर बड़े प्राणी मनुष्य और हस्ती तक, जिसके अति सूक्ष्म अणु और परमाणु से लेकर जड़ जगत् के अतिम-हान् पदार्थ सूर्य, चन्द्र और पृथ्वी तक—प्रत्येक एक रंग के समान हैं। इनका बनना—बिगड़ना तरंग के उठने—गिरने के समान है।

२. अरे युवक! जवानी की इस चांदनी रात में, जान्हवी के इस निस्तब्ध तीर पर तेरे अन्दर आनन्द स्रोत उमड़ आया है, जिससे तूने यह *आशा—राग* आलापना शुरू कर दिया है; पर ज़रा सम्भलकर गा, ज़रा सम्भलकर हृदय वीणा की तन्त्री को स्पर्श कर! देख, कहीं इतनी ऊंची-सुर न निकल पड़े जिसे तू काबू न कर सके, कहीं तान इतनी लम्बी न होवे जिसके लिए पीछे पछताना पड़े। कहीं *आशा-*औषधि का इतना बड़ा घूंट न पिया जावे जो पच न सके, और जठराग्नि को मन्द करदे। अब भी, सम्भल जा!

"भिक्षु"

———

ग्राहक महाशय पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखा करें।

———

राहों पे तू भी आजा
एहसान करने वाले,
ताकत में भूल कर तू
काफी मचल चुका है ॥६॥
बनने से कौन रोके
हम को गले की माला,
श्रद्धा का सूत्र दिल के
मोती में डल चुका है * ॥७॥

'मराल'

* अमृतसर कांग्रेस में पढ़ा गया।

— ० —

श्रद्धा के नियम

भारत वर्ष के लिए

एक वर्ष के	३॥)
६ मास के	२)

६ मास से कम के लिए भेजने का नियम नहीं—

भारत भिन्न देशों से

एक वर्ष के लिए—	५)

प्रबन्धकर्त्ता श्रद्धा
P. O. गुरुकुल कांगड़ी
(जिला बिजनौर)

———

ब्रह्मचर्य सूक्तकी व्याख्या।

अभिक्रन्दयन् स्तनयन्नरुणः शितिङ्गो बृहच्छेपोनु-भूमौजभार। ब्रह्मचारीसिंचति सानौरेतः पृथिव्यां तेन जीवन्ति प्रदिशश्चतस्रः ॥ १२ ॥

"(अभिक्रन्दयन् स्तनयन् शितिङ्गः अरुणः) चारों ओर शब्द करता, गरजता हुआ श्वेत और रक्त वर्ण (धारण किए) (भूमौ बृहत् शेपः अनुजभार) वह बड़ी उपजाऊ शक्ति भूमि में निरन्तर लाया है। (ब्रह्मचारी पृथिव्याम् सानौ रेतः सिञ्चति) ब्रह्मचारी पृथिवी के उन्नत स्थान में बीज सींचता है (तेन चतस्रः प्रदिशः जीवन्ति) उसी से चारों प्रधान दिशाएं जीवन करती हैं।"

पृथिवी के उन्नत स्थानों में ही उपजाऊ शक्ति अधिक है। वह उपजाऊ शक्ति उनमें कैसे आई? सत्व, रज और तम इन तीनों गुणों की साम्यावस्था में स्थिति रहती है। प्रलय समय में इस अवस्था का नाम ही प्रधान वा प्रकृति रहता है। प्रलय की समाप्ति पर जब सृष्टि का समय आता है तो रज से ही उसमें हल चल उत्पन्न होती है। रज क्रिया का उत्पत्ति स्थान है, अचल प्रकृति को वही चलायमान करता है। और सत्य ज्ञान का उत्पत्ति स्थान है। और वह उस क्रिया के कार्यों को समझने की शक्ति देता है। ज्ञान और क्रिया की उत्पत्ति ही सृष्टि की रचना के कारण हैं और इन्हीं के तिरोभाव पर सृष्टि का अन्त होकर प्रलय होता है। ज्ञान ब्राह्म-धर्म है और क्रिया क्षात्र धर्म है। इनकी उत्पत्ति ही जगत् बनने का साधन है और ये आते परमेश्वर से और अन्तकाल में भी उसी में होते हैं— "यस्य ब्रह्म च क्षत्रंचभे भवत ओदनः। मृत्युर्यस्योपसेचन क इत्था वेदयत्रसः।"

श्वेत और रक्त वर्ण धारण किए अर्थात् ब्राह्म और क्षात्र (ज्ञान और क्रिया) का प्रचार करके नियन्ता का नियम ही "चारों ओर शब्द करता और गरजता हुआ भूमि के अन्दर "उपजाऊ शक्ति" लाता, अर्थात उसको प्रकाशित करता है। परमेश्वर के अनादि नियम द्वारा ही जब जब तीनों गुणों की साम्यावस्था हिल कर सृष्टि रूप में आती है तब ही महत्तत्व से आकाश, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल और जलसे निकल कर पृथिवी प्रकाशित होती है। उसके अन्दर उपजाऊ शक्ति पूर्ववत् ही रहती है, परन्तु भूमि के अन्दर उपजाऊ शक्ति रहते हुए भी जब तक उसको ठीक करके उत्तम बीज उसके अन्दर नहीं गल जाता तब तक उस में से अन्न ओषधियें आदि उत्पन्न नहीं होते और जब अन्नादि उत्पन्न नहीं होते तो न रेत बन सकता न वीर्य बन सकता और नाहीं मनुष्य सृष्टि बढ़ा कर आगे के लिये सृष्टि क्रम को जारी रख सकता। वह बीज जिसने पृथ्वी में गल कर मनुष्य रूपी रत्न उत्पन्न करने के लिये वीर्य की बुनियाद डाली, अर्थात् उत्तम अन्न आदि ओषधियों को पैदा किया, पहले पहल वह बीज पृथ्वी में कैसे आया? उस बीज की पृथ्वी में स्थापना करने वाला वह अनादि ब्रह्मचारी है जो सारी सृष्टि में व्यापक होते हुए भी आप इस से प्रभावित नहीं होता; जो सारी सृष्टि को चलायमान करता हुआ आप अचल है; जो ब्रह्माण्ड के अन्दर व्यापक होता हुआ भी उस ब्रह्माण्ड को बाहर से घेरे हुए है; जो रोम २ में रमते हुए भी स्थूल और सूक्ष्म दोनों इन्द्रियों के ज्ञान से परे है।—"तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः ॥" (यजुअध्याय ४० मंत्र ५) वह अनादि और इस सृष्टि का आदि ब्रह्मचारी शिक्षा देता है कि जिस भूमि में उपजाऊ शक्ति है उसके अन्दर फल-लाने वाला बीज स्थापन करने की शक्ति ब्रह्मचारी ही में है। उत्तम से उत्तम उपजाऊ भूमि के अन्दर वही किसान ठीक बीज बो सकता है और उस से उचित फल भी प्राप्त कर सकता है जिस की इन्द्रियां अपने वश में हों। जो स्वार्थी, भोगी प्रत्येक समय प्रलोभनों में फंसा रहता है, प्रथम तो उस में इतना सन्तोष ही नहीं कि वह बोने के लिये बीज बचा सके और फिर यदि बीज को खराब कर के बो भी देवे तो उस में इतना साहस नहीं कि अन्तिम फल आने तक प्रतीक्षा करे वह कच्चे फल ही तोड़ने लग जाता है और न अपने आप को सन्तुष्ट कर सकता है और नाहीं संसार को कुछ लाभ पहुंचाता है। ब्रह्मचारी ही में बल है कि वह कर्म करता हुआ फल भोग की इच्छा को त्याग दे। आदि ब्रह्मचारी ने चारों दिशाओं में अन्न वनस्पति औषधि उत्पन्न कर के जीवात्माओं को जीवन का सीधा मार्ग दिखला दिया। यदि कोई मनुष्य जीवित रहना चाहता है, तो तभी रह सकता है जब कि वह सारे संसार के जीवन स्थिर रखने में भाग ले, यह शक्ति ब्रह्मचारी ही में आ सकती है। इस मंत्र का अर्थ करते हुए सायणाचार्य को भी मानना पड़ा है कि ब्रह्मचारी ही राष्ट्र में सुकाल और वृष्टि का साधन है। वह बतलाता है—"यस्मिन् राष्ट्रे ब्रह्मचारी निवसति तत्र कालवृष्टिर्भवतीति तात्पर्यार्थः ।"

वेद के टीकाकारों ने ब्रह्मचारी शब्द से मेघ का ग्रहण किया है और यह अर्थ भी अयुक्त नहीं क्योंकि जिस मेघ की शक्तियां बिखरी हुई नहीं हैं जिस मेघ ने एक प्रकार से संयम द्वारा सारे जल को एकत्रित कर लिया है और साथ ही जो सम भाव से वर्षा करता है वही भूमि की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाता है। परन्तु यहां ब्रह्मचारी से मतलब वह खेती करने वाला पुरुष है जिसके पुरुषार्थ पर ही मनुष्यों की जीवन यात्रा-सम्भव है। जिस राष्ट्र में ब्रह्मचारी कृषक हैं सचमुच उस राष्ट्र में अकाल वृष्टि कभी नहीं होती और इस लिए उसकी सारी प्रजा सुखी रहती है। जिस देश के कृषिकारों के अन्दर स्वार्थ-बुद्धि नहीं आती और वे कर्त्तव्य-परायणता के नियम पर ही खेती करते और अधिक से अधिक भूमि की उपज प्राप्त कर के जनता में फैलाते हैं, उस राष्ट्र में कोई अन्य शक्ति भी उपद्रव नहीं कर सकती क्यों कि भूमि-पति बनने का अधिकार उन्हीं को है जो कि भूमि से रत्न निकालने का परिश्रम करें। और यदि भूमि-पति ब्रह्मचारी हों तो राष्ट्र की रक्षा में क्या सन्देह है।

(अशिष्टपोष)

श्रद्धानन्द सन्यासी

श्रद्धा

जिसे निर्बलता समझे हो वही बल है।

आर्यसमाजियों की आरम्भ से यह शिकायत चली आती है कि गवर्नमैण्ट आर्यसमाज के विरुद्ध क्यों है? आर्यसमाज ने पहिले पहिल पंजाब और संयुक्त प्रान्त में ज़ोर पकड़ा था, और तब से ही सरकारी अफसरों की इस पर कृपादृष्टि चली आई; और तब से ही आर्यसमाजी गवर्नमैण्ट को प्रसन्न करने का प्रयत्न करते रहे। संयुक्त प्रान्त की आर्यप्रतिनिधि सभा ने पहल की और एक नया उप-नियम जड़दिया कि विशेष राजा का भक्त होना भी एक आर्यसमाज का कर्तव्य है। पंजाब में भी कभी एक दल की ओर से और कभी दूसरे दलकी ओर से गवर्नमैण्ट को यह विश्वास दिलाने का यत्न होता रहा कि आर्यसमाज का वर्तमान राजनिति से, यहां तक कि किसी राजनीति के स्वंय भी, कोई सम्बन्ध नहीं। मुझे शोक से याद आता है कि इस यत्न में बहुत से आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेताओं ने भी भागलिया। जितना परिश्रम ब्रिटिश गवर्नमैण्ट के नौकर शाही को प्रसन्न करने के लिए आर्यसमाज की ओर से किया गया यदि उतना परिश्रम अपने मन हृदय और आत्मा के स्वामी परमात्मा के प्रिय बनाने के लिये किया जाता तो न जाने आर्यसमाज की संस्था में आज कितनी उन्नति दिखलाई देती।

ब्रिटिश गवर्नमैण्ट आर्यसमाज से क्यों अप्रसन्न है, वह आर्यसमाज से क्यों इतनी घबराती है? क्या इस लिये कि वह इसे एक पोलिटिकल-बौडी समझती है? मेरी सम्मति में ऐसी कल्पना करना आर्यसमाजियों की भूल है। पटियाले के प्रसिद्ध अभियोग में सरकारी वकील मिस्टर ग्रेगने स्पष्ट कह दिया था कि यदि आर्यसमाज यह मानले कि वह एक राजनैतिक सभा है तो ब्रिटिश गवर्नमैण्ट का उस से कोई झगड़ा ही नहीं। झगड़ा तो यह है कि अपने आपको धार्मिक समाज बतलाता है, और है वास्तव में पोलिटिकल बौडी, इस लिये इस पर राजविद्रोह संशय होता है। प्रश्न किया गया इस का क्या प्रमाण है कि आर्यसमाज धार्मिक संस्था होते हुए भी पोलिटिक्स में दखिल देती है? उत्तर मिला कि इसका विचित्र संगठन ही इस के पोलिटिकल-बौडी होने का प्रमाण है।

जिन दिनों पटियाले का मुक़द्दमा चल रहा था मुझे ट्रेन में एक युरोपियन ब्रिटिश कमिश्नर के साथ यात्रा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मुझे पहचानते ही कमिश्नर साहब ने लाला लाजपतराय और आर्यसमाज की कथा छेड़दी। उन्हों ने भी आर्यसमाज को पोलिटिकल बौडी ही बतलाया। जब मैंने उनकी सब युक्तियों का समाधान कर के उन को निरुत्तर कर दिया तो अन्तिम दलील उन्हों ने बड़ी मनोरंजक दी—"But has it not got a wonerful organization?" "परन्तु क्या इसका संगठन आश्चर्य-जनक नहीं है?" मैने उत्तर दिया "Is it a sin to have a wonderful organization?" इस पर कमिश्नर साहब ने बात टाल दी।

जीवित जागृत धार्मिक संस्थाओं के विषय में ऐसी कल्पना संसार के इतिहास में कोई नई बात नहीं है। जब पहिले पहिल ईसाई मत रोम के साम्राज्य के अन्दर फैला और आश्चर्यजनक संगठन द्वारा उन्हों ने अपनी संख्या को बढ़ाया, जब इनके नियम पूर्वक काम करने वाले प्रचारक चारों ओर फैल गये, जब उनकी चर्चा का संगठन बड़ा दृढ़ होगया, जब उन्हों ने अपने सामाजिक प्रबन्ध को ऐसा उत्तम कर लिया कि अपनी विधवाओं तथा अपने मत के अनाथों, निर्धनों की रक्षा का स्वयं प्रबन्ध कर लिया, उस समय रोमन चक्रवर्ती राज्य भी कांप उठा। उस समय के ऐतिहासिक लिखते हैं—

"The Roman Emperors, discovering that it (Christian church organization) was absolutely incompotible with the emperial system, try to put it down by force. This was inaccordance with spirit of maxims, which had no other means but force for the stablisment of confomity"

एक म्यान में दो तलवारें नहीं रह सकतीं, एक सलतनत में दो बादशाह नहीं रह सकते यह बड़ी पुरानी लोकोक्ति है। एक साम्राज्य में दो संगठन कैसे रह सकें! या तो रोमन साम्राज्य का ही संगठन रहे या मसीह के अनुयायियों की चर्च गवर्नमैण्ट ही रहे; एक ही भूमि में दो का गुज़ारा नहीं हो सकता।

सन् १९०७ ईसवी से अब तक आर्यसामाजिक भाई मुझ से बार बार यह कहते रहे कि मैं प्रान्तीय लाट साहिबों और श्रीमान् वायसराय को निश्चय दिला दूं कि आर्यसमाज एक धार्मिक संस्था है। जब जब मुझ से यह कहा जाता रहा तब २ ही मेरा यह उत्तर होता रहा—कि जो कुछ आर्यसमाजी सिद्ध करना चाहते हैं वही तो छोटे लाटों और बड़े लाटों को खटकता है। आर्यसमाज के धार्मिक काम के विषय में गवर्नमैण्ट का क्या विचार है—मुझे सन् १९१० के आरम्भ में ही मालूम हो चुका था। सन् १९०८ के आरम्भ में गवर्नमैण्ट औफ इण्डिया ने आर्यसमाज के विषय में संयुक्त प्रान्त की गवर्नमैण्ट द्वारा आन्दोलन करवाया, और उस आन्दोलन का परिणाम छपवा कर भारतवर्ष की सब लोकल-गवर्नमैण्टों में बांटा गया। उसी को सिविल और मिलिटरी औफ़िसरों ने अपने लिए प्रामाणिक धर्म पुस्तक बना लिया। उस के एक उद्धरण से ही पता लग जावेगा कि आर्यसमाज से ब्रिटिश गवर्नमैण्ट को भय क्या है? । आर्यसमाज के विविध मन्तव्यों और कामों की पक्षपात युक्त ईसाई दृष्टि से आलोचना कर के वहां लिखा है:—

"This is one important development in the Arya Samj organization, which is a source of danger to the State, and that is the Gurukula system. The history and growth of Gurukula in these Provinces will be referred to in a subsequent chapter, but it is necessajy to refer to it when discussing the Aryasamaj as a Religeon. Whatever the defects may be, it is a very easy matter to train up a body of fanatics and devotees, by taking boys at the age of 8, absolutely removing them from parental influence, surrounding them with an atmosphire of ascetcism, austerity and religious devotion, instillig into their minds certain principles and encouraging a spirit of devotion and martyrdom. In training like this, which is what is given in the Gurukula, is to be continued under the district supervision of the ablest and most enthusia stic leaders of the Aryasamaj movement for the 17 most impressionable years of the boys life, material that will be forthcommning at the end of that period will be a menace to the State.

"There will be in them what is probably absent in most of the present missonarries of the Aryasamaj, deep-rooted personal convictions, and that coupled with the courage to go under privation, even if it is to be only physical, will give

them a wondrful influence with the people; and they will attact numberless converts instilling into them an enthusism scarly less than their own „

इस लम्बे उद्धरण से स्पष्ट पता लगेगा कि यदि कोई संगठन, धर्म, सच्चाई, तप और अस्तेय का क्रियात्मिक प्रचार करे तो वर्तमान काल की गवर्नमेंट को उस से सदा भय रहता है। उन की समझ में नहीं आता कि कोई मनुष्य—समाज यम और नियम का संयम, अपने आत्मा की उन्नति और मनुष्य के परमोद्देश्य को समझने के लिये भी कर सकता है। पौराणिक इन्द्र की तरह जिसे प्रत्येक तपस्वी को देख कर यही सन्देह होता था कि उसका इन्द्रासन छिनने लगा है, वर्तमान भोग प्रधान स्वार्थी गवर्नमेंट भी तप और संयम कराने वाली धार्मिक संस्थाओं का उद्देश्य भी अपने लिये भयकारी समझती है।

अदूरदर्शी पुरुष गवर्नमेण्ट के अविश्वास को बहुत प्रबल समझते हैं और यह अपने धर्म के लिए बहुत ही हानिकारक है। परन्तु इतिहास साक्षी देता है कि जब तक एक धर्म समाज के सभ्य अपने सिद्धान्तों पर दृढ़ रहते हैं और ज्ञान तथा कर्तव्य को मिलाए रखते हैं, तब तक प्रबल से प्रबल सांसारिक शक्तियां भी उन को अपने स्थान से हिला नहीं सकतीं। ईसाई मत के भी इतिहास को देखें तो पता लगेगा कि जब तक वे अपने सिद्धान्तों पर दृढ़ रहकर राज्य के प्रलोभनों से बचते रहे तब तक उनकी धार्मिक अवस्था को कोई भी शक्ति डावां डोल न कर सकी परन्तु ज्योंही रोमन सम्राट् के ईसाई हो जाने पर वे प्रलोभनों में फंसे तभी से ईसाई–धर्म के शुद्ध नियम में रोम के पौराणिक मत का खमीर घुस गया। भारत वर्ष में इस समय आर्य समाज की वही स्थिति है जो कि रोमन समय में ईसाई मत की थी। ईसाई मत ने रोमन साम्राज्य की शरण ले कर मसीह के पवित्र असूलों को इतना दूषित किया कि १८०० वर्ष पीछे तक कई विप्लवों के पश्चात् कहीं unitorian church ने फिर से एक शुद्ध रूपी ब्रह्म की उपासना की बुनियाद ईसाई प्रजा में रखी।

क्या आर्यसमाज के सभासद ईसाई मत और कुछ अन्य सम्प्रदायों के इतिहास से कुछ शिक्षा लेंगे? ब्रिटिश नौकर शाही की ओर से आर्य समाज को फसाने के बहुत से यत्न हो चुके हैं जिनका ज्ञान भी अब तक आर्य जनता को नहीं हुआ। आर्य समाज का भाग्य अच्छा था कि उस की जिन संस्थाओं पर साम, दाम, दण्ड, भेद द्वारा काम किया गया उनके संरक्षकों में चमकीले से से चमकीले प्रलोभनों से बचने की शक्ति थी। यदि आर्यसमाज के सभासद् उस को अपनी निर्बलता समझें, और ब्रिटिश नौकर शाही के जाल में फंस कर उनके साथ राजीनामा करने को अपना बल समझें तो इस से बढ़ कर शोचनीय अवस्था नहीं हो सकती। जितना समय मनुष्यों को प्रसन्न करने और उनके विश्वास पात्र बनाने में लगाया जाता है, यदि उसी का सदुपयोग कर के अपने परमात्मा को प्रसन्न करने और जीवन को उसके स्वीकार करने के योग्य बनाने में लगाया जावे तो आर्यसमाज में एसा बल आजावे जिस पर विचार करना भी एक वार उत्साह को बढ़ा देता है।

स्वागत वा अस्वागत

इस समय यह प्रश्न बड़े बल से छिड़ रहा है कि सम्राट् जार्ज के ज्येष्ठ पुत्र शाहज़ादा वेल्स के स्वागत में भारतीय प्रजा को समिलित होना चाहिए वा नहीं। इस विषय में पहिले पहिल गर्म दल की संस्थाओं ने आवाज उठाई। उनका लिखना था कि जब पंजाब के नौकर शाही अत्याचारियों का कोई इलाज नहीं हुआ और जनता के अन्दर असन्तोष है, तो संशोधित कौंसिलों की डुग डुगी बजाना और नौकर शाही के साथ मिलकर अपनी दशा से सन्तोष प्रकट करना मक्कारी होगी। इसके विरुद्ध नर्मदल के नेता तथा कुछ अन्य विचारक यह सम्मति देते हैं कि नौकर शाही के दोषों के लिए बादशाह जिम्मेवार नहीं इस लिए उन्होंने जो अपने पुत्र को भारत प्रजा के प्रति अपना सन्देश सुनाने को भेजा है उनका हार्दिक स्वागत करना चाहिए। महात्मा गांधी जी ने ब्रिटिश युवराज के स्वागत में न सम्मिलित होने के लिए एक बड़ी स्पष्ट युक्ति दी है कि उन के लिए हृदय में मान्य का भाव होते हुए और यह जानते हुए कि मंत्रियों के के बुरे भले कामों का सम्राट् के साथ कुछ सम्बन्ध नहीं है—यह सब कुछ जानते हुए भी युवराज के किसी भी स्वागत में इस लिए सम्मिलित नहीं होना चाहिए कि उस से जो संतोष हमारी क्रिया प्रकट करेगी वे लिखते हैं—"मैं समझता हूं कि हमारी राजभक्ति यह चाहती है कि हम सम्राट् के मंत्रियों को स्पष्टतया जतलादें कि यदि वे युवराज को हिन्दुस्तान में भेजेंगे तो हम उन के साथ किसी भी एसे स्वागत में शरीक न होंगे जिसका प्रबन्ध (नौकर शाही की ओर से) होगा। मैं उनको असन्दिग्ध भाषा में कह दूंगा कि खिलाफ़त और पंजाब के प्रश्नों पर हमारे दिल जले हुए हैं और जब कि हम उन (प्रश्नों) पर जान लगा रहे हैं तो हम से आशा न रखना चाहिए कि हम किसी भी स्वागत में शरीक हो सकेंगे।"

महात्मा गांधी जी ने आगे चलकर विस्तार पूर्वक वे अनुचित परिणाम बतला दिये हैं। जो भारतीयों के ऐसा करने से निकलेंगे। महात्मा गांधी जी की सब युक्तियों के साथ सहमत होते हुए मैं अपनी सम्मति पेश करता हूं, यदि उसमें कुछ सार हो तो महात्मा जी उस पर कुछ विचार करें। भारतवर्ष में ऐसे आदमियों की संख्या थोड़ी नहीं है जो ब्रिटिश नौकर शाही से अपने स्वार्थ सिद्धि की आशा पर अपनी जाति को बेचने के लिये तय्यार होजावें। वे तो प्रत्येक स्वागत सभा और प्रत्येक विनोद और राग रंग के काम में सम्मिलित होंगे ही। उनको छोड़कर शेष सब जनता की ओर से यह निश्चय हो जावे कि वे युवराज के स्वागत के लिये पहिले उनके बम्बई पहुंचने पर और फिर देहली में एक बड़ी सभा करके नौकर-शाहियों के असर से दूर उनका स्वागत करना चाहते हैं। उस स्वागत में हम अपने हृदय का उद्गार उनके सामने रखना चाहते हैं यदि वे हमारी ओर से यह जुदा स्वागत स्वीकार करने को तैयार न होंगे तो इसमें हम पर कोई दोष कर्तव्य से गिरने का नहीं आ सकेगा। देवी एनीबेसेन्ट युवराज के स्वागत के विषय में गांधी जी के मत का खण्डन करती हुई, इस अस्वागत के भाग को राज विद्रोह तक बतलाने में संकोच नहीं करतीं, परन्तु साथ ही कहती हैं कि नौकरशाही के साथ युवराज के स्वागत में सम्मिलित होते हुए भी हम युवराज द्वारा उनके पिता के पास पंजाब और अन्य स्थानों के अत्याचार सम्बन्धी अपने दुख की कहानी पहुंचा सकेंगे। जब कोई भी अभिनन्दन पत्र युवराज के सामने बिना नौकर शाही की आज्ञा के नहीं पेश हो सकेगा तो समझ में नहीं आता कि देवी बसन्ती की दो परस्पर विरुद्ध स्थापनाओं से सिद्ध क्या होगा।

सम्राट् जार्ज को जो प्रेम अपनी भारतीय प्रजा से है उसको कोई भूल नहीं सकता। वे अपने पुत्र को उस परस्पर के सम्बन्ध को फिर से जगाने के लिए भेज रहे हैं। भारतीय प्रजा भी हृदय से उनका स्वागत करने को तय्यार है परन्तु इस सम्बन्ध के अन्दर कोई तीसरा दलाल नहीं घुसना चाहिये। भारतीय प्रजा से बढ़ कर श्रद्धा सम्पन्न और कोई प्रजा नहीं है, यदि उस श्रद्धा के भाव

का प्रकाश सीधा सरल हृदय युवक युवराज तक पहुंच जावे तो कोई आश्चर्य न होगा कि वे प्रजा का शुद्ध स्वागत स्वीकार करलें। मेरी सम्मति में एक बार करतो गुज़रना चाहिए, यदि ब्रिटिश गवर्नमेण्ट के सचिव साम्राट् को संशय में डालकर उल्टी सम्मति देंगे तो भारत प्रजा फिर भी शुद्धान्तः करण से कह सकेगी कि उसने अपना कर्तव्य पालन किया।

पार्लमेण्ट में हन्टर रिपोर्ट

हण्टर कमिटी की रिपोर्ट पर ब्रिटिश हाउस औफ कामन्स में विवाद आरम्भ होगया। भारत सचिव मि० मान्टेगू ने विषय प्रस्तुत करते हुए जो प्रारम्भिक वर्णना की है उसे पढ़ कर और उसकी पुष्टि में युद्ध सचिव मि० चार्चिल्स ने जो ४ नियम स्थापित किये हैं उनको पढ़कर यदि किन्हीं राजनैतिकों का पूरा सन्तोष भी हो, तब भी इस में संदेह नहीं रहता कि ब्रिटिश साम्राज्य के अनुभवी और दूरदर्शी मिनिस्टर्स समझ चुके हैं, कि भारत वर्ष का ब्रिटिश साम्राज्य के साथ सम्बन्ध स्थिर रखने के लिए भारतीयों को बराबरी के अधिकार देने चाहियें। यह माना कि जो घोर आन्दोलन देश में हुआ, और उसका सिंहनाद जो मिस्टर पटेल ने इंगलैंड में पहुंचाया उसी का परिणाम है कि मि० मान्टेगू और मिस्टर चार्चिल ने ऐसी असन्दिग्ध वक्तृताएं दीं। परन्तु यह मानना पड़ता है कि यदि वे अन्तःकरण से एङ्गलो-इण्डियन-नौकर शाही के अत्याचारों के विरुद्ध न होते तो इस प्रकार की ज़बर्दस्त आवाज न उठाते।

मिस्टर माण्टेगू ने यह जतलाते हुए कि जनरल डायर ने जो कुछ किया यदि उसका समर्थन किया गया तो समझा जावेगा कि ब्रिटिश गवर्नमैण्ट भारतीयों को दबाकर राज्य करना चाहती है, और पार्लमैण्ट से यह पूछ कर कि वह भारतीयों को अपने सम्राज्य का हिस्सेदार समझकर, शासन करना चाहती है वा उन्हें दास बनाकर कहा—यदि दबाकर शासन करना है तो तलवार को ज्यादः तेज कर के चलाना पड़ेगा, और यहां तक चलाना पड़ेगा कि सभ्य संसार का सम्मिलित नाद ब्रिटेन को भारतवर्ष से बाहिर निकाल देवे। मिस्टर चार्चिल ने यह जतला कर कि आर्मी कौन्सिल ने सर्व सम्मिति से जनरल डायर के विषय में यह निश्चय किया है कि न केवल भारत वर्ष में ही प्रत्युत, अन्य कहीं भी उसका सेना में स्थान न मिले; निम्नलिखित ३ स्थापनाएं उस समय के लिए कीं जब कि किसी बलवे के कारण मिलिटरी औफिसर को जनता पर आक्रमण करने की आवश्यकता प्रतीत हो—(१) क्या जनता किसी स्थान पर वा पुरुष विशेष पर आक्रमण कर रही है (२) क्या ऐसी जनता केपास हथियार है। (३) उतनाही बल लगाया जावे जितना कानून के अनुसार उनको चलाने के लिए आवश्यक हो (४) अफ़सर को चाहिये कि किसी एक विशेष उद्देश्य को रखकर काम करे। अन्त में मिस्टर चर्चिल ने कहा कि जो पेट के बल चलने की पिशाचीय आज्ञा दी वह सर्वथा निन्दनीय और त्याज्य है। मिस्टर चर्चिल ने कहा यदि उनकी कोई सम्मति लेता तो वे जनरल डायर को ज़बरदस्ती सेना से त्याग पत्र देने के लिये मज़बूर करते।

जो लोग एङ्गलो-इण्डियन-नौकर शाही के अत्याचारों को देख कर निराश हो जाया करते हैं उनके लिये पार्लमैण्ट के इस विवाद से आशा की झलक दिखाई देती है। मि० मौण्टेगू और चर्चिल की वक्तृता की विस्तृत तार से पता लगता है कि उन्हों ने कोई भी बात सन्दिग्ध नहीं रखी। मि० चर्चिल ने कहा कि उनका एक मिनट के लिये भी यह विश्वास नहीं है कि जनरल डायर ने ब्रिटिश गवर्नमैण्ट के लिये हिंदुस्तान को बचा दिया। भारत वर्ष में यदि ब्रिटिश गवर्नमैण्ट बचेगी तो उसका कारण और साधन तलवार न होगी प्रत्युत भारत जनता के साथ सहानुभूति होगी। मि० मौण्टेगू ने कहा कि यदि भारत वासियों को अपना हिस्सेदार बनाना है तो पेट के बल चलने और सलाम के पश्चात्तापजनक काम बंद करने होंगे। इसके अतिरिक्त उन सब पुराने कानूनों और हुकमों का संशोधन करना होगा, जिन से हिंदुस्तानियों की उस स्वतन्त्रता पर, जिसका पाठ ब्रिटिश जाति ने ही पढ़ाया है, कुठारा घात होता हो। मालूम यह होता है भारत के दिन कुछ फिरने वाले हैं, और यदि हिंदुमुसलमानों ने अपनी एकता को स्थिर रखा और भारत के सुशिक्षित नेताओं ने अपने कर्तव्य को भुला न दिया और प्रलोभनों से बचे रहे तो वह दिन दूर नहीं है कि जब गोरों का अभिमान भ्रातृभाव में परिवर्तित हो जावेगा—और सब मिलकर अपने आपको एक साम्राज्य के सभ्य समझने लगेंगे।

श्रद्धानन्द सन्यासी

—:०:—

हिन्दी पर अंग्रेज़ी की क़लम मत लगाओ !!

कोई समय था जब कि हिन्दी की बोलचाल और चलते—साहित्य में संस्कृत शब्दों का अधिक प्रयोग ही विद्वत्ता का चिन्ह समझा जाता था। परन्तु यह प्रवृत्ति, प्रसन्नता की बात है, शिक्षा के क्रमशः विस्तार और जनता के विरोध के कारण प्रायः दबसी गई है। लेखक और वक्ता महाशय अब समझने लग गये हैं कि सरल और शुद्ध भाषा की ओर अधिक ध्यान देना चाहिये, मोटे मोटे डरावने शब्दों की ओर नहीं।

परन्तु हिन्दी के प्रायः सभी पत्रों में आज कल, एक और प्रवृत्ति नज़र आ रही है, जिसका अभी से विरोध होना चाहिये। जिस प्रकार बाबू लोग— चाहे वे हिन्दी पढ़े लिखे हों —प्रायः खिचड़ी भाषा—अंग्रेज़ी हिन्दी मिश्रित ही बोलते हैं, उसी प्रकार हमारे सम्पादकगण भी अब समाचार पत्रों में हिंदी पर अंग्रेज़ी की कलम लगा रहे हैं। संस्कृत के शब्दों का बहुतायत से प्रयोग, हम जानते हैं, अनुचित है परन्तु, आख़िर को, वह भाषा स्वदेशी तो है, इस लिए उसका प्रयोग इतना भयंकर नहीं है जितना कि एक विदेशी भाषा के शब्दों का। पहिली प्रकार की अवस्था में हम पूर्ण स्वदेशी ही रहते हैं और दूसरी दशा में हम सरकार को यह दिखा रहे होते हैं कि हमें अपने भाव प्रकाशित करने के लिए विदेशियों की शरण लेनी पड़ रही है। पिछले तीन—चार दिनों में हमने सरसरी नज़र से अपने सहयोगी पत्रों से बहुत सारे ऐसे शब्द इकट्ठे किये हैं, जिन में से कुछ एक, हम अपने कथन की पुष्टि में, नीचे देते हैं—

'अल्टीमेटम; पार्टी—पौलिसी; नन-आर्य्यसमाजी; स्पीच; नेशनलिस्ट; क्रैडेट; प्रिन्टर्स युनियन; टाइम, कन्ट्रोल; रिज़र्व फ़ण्ड; शेयर; शेयर-होल्डर; लोकल; रिटायर्ड; एडीटर, ? यूनिटी; इलैक्शन; डाईवोर्स; वोटर; मोरलटी; डिपार्टमैण्ट; करन्सी; रिप्रेज़ैन्टेटिव; कारस्पान्डैण्ट; रिपोर्टर; प्राइमरी स्कूल; प्राइमरी एज्यूकेशन; मेजारिटी; माइनोरिटी; डिस्ट्रिक्टबोर्ड; म्यूनिसिपल; डिस्टिंक्शन; हिंडलकमेटी.........इत्यादि इत्यादि।

प्रश्न यह है कि क्या इन के लिए हिन्दी में कोई शब्द नहीं है ?। हमें याद है कि पहिले भी इस विषय पर विचार उठ चुका है कि हिन्दी में अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग कहां तक होना चाहिए। उस समय प्रायः सब विद्वानो ने एक स्वर से यही कहा था कि जहां तक हो सके, विदेशी भाषा के शब्दों का प्रयोग बहुत कम हो और विदेशी भाषा के जो शब्द हिन्दी में ले लिए गए हैं, और जिनका अनुवाद करने से भाव ठीक प्रकट नहीं होता (जैसे, रेल, स्टेशन मास्टर, स्कूल फुटबाल, टिकट, काउन्सिल, वायसराय, गवर्नर, बोर्डिंग, प्रेस, कम्पोज़ीटर इत्यादि इत्यादि) उनके प्रयोग करने में कोई हानि नहीं है। परन्तु हमें शोक से कहना पड़ता है कि हिन्दी के उद्धार का दम भरने वाले हमारे सहयोगी पत्रों की अब उलटी ही प्रवृत्ति हो रही है, और वे उचित मात्रा से अधिक, अनावश्यक रूप से, अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग करने लग गए हैं। उदाहरण रूप से कितने शब्द हम पीछे दे आये हैं। उन सब के लिए हिन्दी में शब्द विद्यमान हैं, और यदि किन्हीं को न मालूम हों तो हम उन्हें सहर्ष बता सकते हैं। एक बात और है यदि यह मान भी लिया जावे कि अंग्रेज़ी के ऐसे शब्दों के लिए हिन्दी मे उपयुक्त शब्द नहीं हैं, तो हमें स्वयं घड़ने चाहिए। समय और भाव के अनुसार नये शब्द घड़ने से ही साहित्य में वृद्धि के साथ २ जीवन आता है। नहीं तो, ठहरे हुए पानी से भरे तालाब की तरह उसमें सड़ांद पैदा हो जाती है। अंग्रेज़ी पुस्तकों और समाचार पत्रों का अध्ययन करने वाले जानते हैं कि उसमे कितने ही शब्द ऐसे हैं जो नए घड़े गए हैं, वा घड़े जा रहे हैं, और कितने ही शब्द ऐसे हैं जो पुराने कोषों में न मिलकर नए कोषों में ही पाये जाते हैं। फिर, क्यों नहीं, हिन्दी के विद्वान् और सम्पादक गण, विदेशी भाषा की दासता को छोड़ नए शब्द घड़ते ? भारत की सब से अधिक समृद्ध देशी भाषा बंगाली, मराठी और गुजराती में क्या ऐसा नहीं होता ?

अन्त में, हम अपने भाव को फिर स्पष्ट कर देना चाहते हैं। हम यह नहीं कहते कि अंग्रेज़ी से हिन्दी में कोई शब्द न लिया जावे, क्योंकि उन्नति के लिए शब्द परिवर्तन भी आवश्यक है। परन्तु इसका यह अभिप्राय भी नहीं है कि अपनी भाषा से उचित और उत्तम शब्दों के होते हुए भी हम हिन्दी पर अंग्रेज़ी की कलम चढ़ावें, जैसा कि आज कल हमारे सामयिक साहित्य में हो रहा है। यह प्रवृत्ति बहुत भयंकर है। जिस के लिए हमें अभी से सावधान हो जाना चाहिये। हम जहां अन्त में, अपने सहयोगी मित्रों से प्रार्थना करते हैं कि वे अभी से इसे रोकने का प्रबन्ध करें, वहां हम हिन्दी-साहित्य सम्मेलन की स्थायी समिति से भी सानुरोध प्रार्थना करते हैं कि वह एक उपसमिति संगठित करावे जो इस बात का निर्णय करे कि अंग्रेज़ी के किन २ शब्दों का, अनिवार्य्य रूप से, हिन्दी में प्रयोग आवश्यक है और सन्दिग्ध अंग्रेज़ी शब्दों का हिन्दी रूप क्या क्या है। आशा है, इस विषय में उचित आन्दोलन किया जावेगा।

—.०:—

(पृष्ठ ७ के दूसरे कालम का शेष)

तृप्ति नहीं होती। वे अपनी अल्पज्ञता को जानलेते, और अपनी स्थिति को पहचान लेते हैं। ये ही हैं वे पुरुष, जो उन नियमों के जानने की तृष्णा से व्याकुल हो उठते हैं। किन्तु हा! उस जल की तलाश में इधर उधर विह्वल हो भटकते हुवे अन्त में प्यास के मारे वे तड़फ़ तड़फ़ मरजाते हैं—और तृषा की वेदना उस गहरी नींद में भी व्यथित करती रहती है।

(१०)

किन्तु अभी फिर भी उठना है। और अबकी बार उठकर वह तपस्वी अपने को योग्य पाता है। अब उसकी तृषाशान्ति का समय आगया है और वह उस नियन्ता के रस को पीकर स्वस्थ और अमृत हो कर इस भूलभुलैयां के जाल से मुक्त हो जाता है—और फिर इस जन्म के अन्धकार में नहीं आता। सच है:—

"पुनरुत्पाय च वै पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते"

"शर्मन्"

———

विचार तरंग

(१)

"ज्ञान और रहस्य"

"श्रद्धा के लिए विशेषतया प्रेषित"

(१)

पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा। यावत् पतति भूतले।

मनुष्य, ज्ञान रस को पीने को लोलुप हो, उठता है और प्याले पर प्याले चढ़ाने लगता है। किन्तु कब तक ? केवल थोड़े समय के लिए जब तक कि अशक्त हो भूमि पर अचेत नहीं पड़जाता।

सचमुच मनुष्य में दम नहीं है; रस पीने की ऐसी उत्कट इच्छा, जी की, जी में ही रह जाती है और वह ग़लत हो जाता है। तथा रस से भरा हुआ मांड वैसा का वैसा ही पड़ा रह जाता है।

(२)

न जाने हम किस अनादिकाल से अपने अज्ञान-शत्रु के विजय करने में लगे हुवे हैं। यद्यपि नए २ सिपाही अपने चमकीले नवाविष्कृत शस्त्रों को ले फूले नहीं समाते और 'यह लिया वह जीता' करते हुए गर्व से सिर ऊंचा कर कह उठते हैं कि हम अज्ञान वैरी की संसार में छाया तक न रहने देंगे'। किन्तु थोड़ा सा अनुभवी भी अपने इन ढीले कमज़ोर हथियारों की असमर्थता जानने लगता है और हार कर मुंह से यही निकालता है 'हम भूल में रहे,' शत्रु की तो ऐसी अनन्त सेना है जिसका जीतना हमारे हाथ में नहीं है।

(३)

ज्यों २ कोई जन इस महासमुद्र को तरता है, त्यों २ इस की अपारता और दुस्तरता बढ़ती जाती है। जितना कोई इसके परले पार के समीप जाने का यत्न करता है, उतना ही वह कहीं गुना अनुपात में दूर होता जाता है।

तब इस में आश्चर्य ही क्या है कि संसार जिसे पारंगत वा सिद्ध गोताख़ोर समझता है, वह अपने आपको वस्तुतः इस गम्भीर अविलोडित सागर के किनारे की छोटी कंकड़ियां ही चुनता हुआ पाता है।

(४)

सचमुच ज्ञान की उपलब्धि के लिए, दुनियां में दिन रात के अनथक घोर परिश्रम केवल इसी उद्देश्य से हैं कि आख़िरकार हम, जान सकें कि हमें कुछ भी ज्ञान नहीं है।

हमें ये दो दो आंखें इसीलिए मिली हैं कि हम प्रत्यक्ष देखलें कि हम अन्धे हैं।

और चारों ओर की चीजें हमें इसीलिए अपना रूप दिखा रही हैं कि हम समझलें कि उनका वास्तविक आन्तरिक रूप कुछ और ही है।

(५)

इस रात्रि में हम अपनी २ लैम्प, दीपक आदि जलायें बैठे हैं, (और बुझने पर फिर २ जलाते रहते हैं) किन्तु इस से रात्रि नहीं मिट जाती। केवल दीपक के इधर उधर कुछ मलिन प्रकाश अवश्य होजाता है; किन्तु शेष संपूर्ण अंतरिक्ष में तो वही अंधकार का अखण्ड राज्य है। यही हाल है और यही हाल रहेगा, हम चाहें कितने प्रतिभाशाली विद्वान आदि के महा लैंपों का ज़ोर लगा कर देखलें।

(६)

हमारे बड़े से बड़े बुद्धि दीपक का उजाला परिमित ही है। हम अपनी चार दिवारी के आगे लेशमात्र भी कल्पना नहीं कर सकते। चारों ओर कुछ दूर ही चल कर, उस काले पर्दे का घोर अंधकार आजाता है जिस के पार देखना हम मनुष्यों के भाग्य में नहीं है। तर्क—धनुर्धर उस अंधेरे में बड़े गर्व से अपने Search-light के तीर छोड़ २ कर लक्ष्यवेध की आशा करते हैं; किन्तु वे तीर टकरा २ कर अलक्ष्य होकर लौट आते हैं, और वहां की कोई भी ख़बर नहीं लाते, सिवाय इसके कि सामने एक अभेद्य कठिन काला पर्दा है जिसे हम बींध नहीं सकते।

(७)

क्या फिर हमारे हृदय में उस प्रकाश की अभिलाषा निष्फल ही जाग रही है? क्या इस अंधेरी भूल भुलैयां से निकलने का कोई भी मार्ग नहीं है?

नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकता। अवश्य ही कहीं न कहीं कोई प्रकाशमय महा-ज्योति विद्यमान है; नहीं तो बताओ कि किस की आभा से हमारे दीपक अपने आप को प्रकाशित किया करते हैं। और भला यह कैसे सम्भव में आसकता है कि जिस देव ने हमारे अन्दर उस ज्योति से प्रेम पैदा किया है उसने उसकी प्राप्ति के लिए कोई रास्ता न खोल रखा होगा। तो निःसंदेह-बिल्कुल निःसंदेह-कुछ ऐसे तरीके और विधियां हैं जिनके अनुसार फिरने और चक्कर लगाने से हम इस भूल भुलैय्यां के बहिर्द्वार को पहुंच सकते हैं।

(८)

किन्तु सवाल तो यही है कि वे तरीके या नियम कहां हैं? किसके पास हैं? क्या वे कभी हमें बतलाये या सुझाये भी जायंगे या नहीं? उनको ढूंढने के लिए किस ओर जांय?।

मेरे जी में तो यही है कि कहीं से उन नियमों का (ज्ञान नहीं; किन्तु) साक्षात् हो जाय, तो मार्ग निश्चित हो जायगा और मुझे आंखें मिल जायगी। अथवा हम में से किसी तत्व ज्ञानी सुज्ञानी के ही दर्शन प्राप्त होजांय, तो मैं भी श्रद्धा से उन्हें अपनी बांह पकड़ा दूंगा और निश्चल होजाऊंगा कि 'हे भगवन् मुझे भी निकाल ले चलो।' नहीं तो फिर अन्त में एक आशा तो है ही कि यहां की दीवारों से टकराते २ और असंख्यों वर्षों तक भूलते भुलाते कभी मुझे भी अकल आजायगी कि मार्ग को जान कर प्रकाश को प्राप्त करूंगा।

(९)

हम इस तमसावृत लोक में कहीं से आये हैं और यहां ही अपना कुटुंब पैदा कर फैलाकर बच्चों कच्चों सहित अब बस गये हैं तथा इसी प्रकार हम खेलों में समय बिताते हुवे अपने आपको ख़तम कर डालते हैं।

किन्तु दूसरे कुछ स्वस्थ हो कर उठते हैं और संसार की चीज़ों को अब देखना शुरू करते हैं तथा विस्मित होने लगते हैं। उनके लिये संसार खिलौने के स्थान पर अब एक आश्चर्य-कर वस्तु बन जाती है। किन्तु आगे २ अधिक अधिक आश्चर्य से आंखें फाड़ देखते फाड़ ही देखते उनका अन्तकाल आपहुंचता है और उनके विस्फारित नेत्र पथराये हुवे ही रह जाते हैं।

फिर तीसरी बार उठते हैं और अब पदार्थों को गम्भीरता से देखने लगते हैं। 'यह क्यों यह क्यों' करते हुवे 'तत्व' की खोज में मग्न होते हैं। किन्तु इस रहस्यमय कार्य कारण भाव को कौन जानता है, 'ऐसा क्यों हुआ' 'यह इसका गुण क्यों है' इन बातों को कौन बता सकता है। हम भले ही 'यह अज्ञेय है' 'या यह इसका स्वभाव है' आदि शब्द रख कर अपने मनको सन्तोष देदें; किन्तु जिज्ञासु को इससे

(इस का शेष पृष्ठ ६ में देखो)

—:०:—

सार और सूचना

१ काशी में पढ़ने वाले आर्य विद्यार्थियों के पढ़ने रहने और खाने के सुप्रबन्ध के लिए वहां पर एक "वैदिक मण्डल" की स्थापना की गई है जो इनके लिए मकान आदि का प्रबन्ध करेगा। इसके प्रधान श्री-स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ ढाई हज़ार रुपये की अपील करते हैं।

२. श्री० भवानीदयाल जी जिन की नई उत्तम २ पुस्तकों की समालोचना हम 'श्रद्धा के पिछले अंकों में कर चुके हैं, और जिन्होंने भारत में, पिछले कुछ दिन रह कर, प्रवासी भारतवासियों की हृदय भेदक दशा का चित्र कांग्रेस इत्यादि भिन्न २ राष्ट्रीय संस्थाओं के सम्मुख खैंचने के अतिरिक्त देश के अन्य भी कई सामयिक आन्दोलनों में भाग लिया था—वे अब भारत से पुनः प्रयाण करने वाले हैं। हम उन्हें हार्दिक विदाई देते हैं और आशा करते है कि वे दक्षिणी आफ्रिका में भारत माता के नाम को और भी अधिक उज्वल करेंगे।

३-दिल्ली का "कांग्रेस" जो पिछले दिनों में किन्हीं कारणों से बन्द हो गया था, अब फिर शीघ्र ही प्रकाशित होगा।

—:०:—

संसार समाचार पर

टिप्पणी

सिनफिनर कौन हैं ?

हमारे पाठक सिनफ़िनरों का नाम समाचार पत्रों में प्रायः पढ़ते रहते हैं, परन्तु इस नाम की उत्पत्ति कैसे हुई—यह शायद थोड़ों को ही मालूम होगा। सहयोगी "प्रभा" ने एक अंग्रेज़ी पुस्तक के आधार पर इस की उत्पत्ति जो बतलाई है उसे हम पाठकों के विनोदार्थ यहां उद्धृत करते हैं:—

"सीन फ़ीन का नाम-करण इस प्रकार हुआ। आन्दोलनकर्त्ताओं को अपने आन्दोलन के लिए नाम की तलाश थी। इस लिए उन्होंने एक सुप्रसिद्ध आयरिश विद्वान् की सम्मति ली। उसने उन्हें एक दृष्टान्त देकर समझाया। उस ने कहा कि मन्स्टर के एक आदमी ने अपने नौकर को मेले में घोड़ा बेचने के लिए भेजा। घोड़ा बिक गया परन्तु नौकर कई दिन तक लौट कर न आया। जब वह लौट कर आया तब अनेक पड़ौसी मौजूद थे। मालिक ने पूछा कि इतने दिन तुम कहां थे? नौकर ने यह कहकर प्रश्न को टाल दिया कि Sin fein Sinfein) !! (सिन फ़ीन, सीनफ़ीन== घर ही घर को) घर ही घर के अर्थात् घर के मामले घर ही के लिए हैं। तभी से इस आन्दोलन का नाम सिन फ़ीन पड़ गया। इस घटना से हमारे इन देश भाइयों को शिक्षा लेनी चाहिए जो कि अपने संस्थाओं के नाम रखने के लिए अंग्रेज़ी शब्द कोष की शरण लिया करते हैं।

सर पी. सी. राय का अनुकरण करो

नई काउन्सिलों के लिए उम्मेदवार खड़े होने के विषय में पूछे जाने पर विद्या-शिरोमणि सर पी, सी, राय ने उत्तर दिया कि "यद्यपि मुझे राजनीति से बड़ा प्रेम है, परन्तु मैं समझता हूं कि भारत के लिए राजनैतिक पुरुष आवश्यकता से अधिक हैं। इस समय वैज्ञानिकों की बड़ी कमी है और राजनीति से बाहर रहता हुआ मैं उसी के लिए नवयुवकों को तैयार करना चाहता हूं।" राजनैतिक क्षेत्र वस्तुतः, बड़ा लुभावना है और हमारे अनुभव-शून्य दिल चले नवयुवकों के लिए लीडरी-ख़रीदने का, दौर्भाग्य से, एक बड़ा उत्तम साधन बन गया है। यदि वास्तव में वे देश हित करना चाहते हैं तो उन्हें विज्ञान—तत्ववेत्ता राय महोदय का अनुकरण करना चाहिए।

रियासती अन्धेर का एक और नमूना

हिन्दू धर्म के प्राण स्वरूप, उदयपुर महाराज के "बिजौलिया" नामक प्रान्त में ग़रीब किसानों के प्रति जिस ओड्वायर शाही का परिचय दिया जा रहा है वह हमारे पाठकों से छिपा हुआ नहीं है। गुजरात के "जूनागढ़ दर्बार" ने भी अपनी एक विचित्र आज्ञा से, अपना नाम अब इसी श्रेणी में लिखवा लिया है। इस आज्ञा के अनुसार इस दर्बार के आधीन "बहाउद्दीन" नामक कालेज में काठिया वाड़ प्रान्त के अतिरिक्त और कोई बाहर के विद्यार्थी दाख़िल न हो सकेंगे! इस विचित्र आज्ञा के अनुसार लगभग १२० छात्रों को जिन में हिन्दू-मुसल्मान सभी हैं—कालेज छोड़ देना होगा। ऐसा क्यों? कि "राजा करैं सो न्याव"। उस में किसी को चूं-चरां करने का अधिकार नहीं है !!

सलाम की आज्ञा और प्रवासी भारत वासी

'ब्रिटिश-ईस्ट अफ्रिका' के 'हाटइस्लाम' नामक प्रान्त के पोलिटिकल-आफ़िसर ने इस आशय की एक विज्ञप्ति प्रकाशित की है कि "कोई भी भारत वासी जब कभी और जहां कहीं किसी शासक वा राजनैतिक कार्यकर्त्ता (पोलिटिकल आफ़िसर) को मिले, वहीं उसे उचित आदर के साथ सलाम करे" यह आज्ञा उसी प्रकार की है जैसे कि गतवर्ष ओड्वायर-डायर-शाही के दिनों में पंजाब में जारी की गई थी। मालूम होता है कि डायर-जान्सन-ओब्रायन-स्मिथ्यवड ओं के आदमी भारत से बाहर भी नौकरशाही के भावों का परिचय दे रहे हैं।

क्या यूरोपियन सहन शील हैं ?

पिछले दिनों की बंगाल की लेजिस्लेटिव कौन्सिल में माननीय बा० अखिलचन्द्रदत्त ने नई कौन्सिलों में एंग्लो-इण्डियनों के दो अधिक मैम्बर न लिए जाने के विषय में एक प्रस्ताव उपस्थित किया, जिसका विरोध करते हुए मि० थैटस्टेन ने कहा कि "हम यूरोपियन लोग शान्ति-प्रिय और सहनशील हैं। यदि वह (हिन्दुस्तानी) हमारे एक गाल पर तमाचा लगाने की भूल करेगा, तो मैं उसे विश्वास दिलाता हूं कि हमारा धर्म, चाहे जो कुछ कहे हम उस के सामने अपनी दूसरी गाल नहीं फेरेंगे। किन्तु इसके विरुद्ध इस ज़ोर से मारेंगे कि वह घबरा जावेगा।"

(टेढ़े अक्षर हमारे हैं।)

यूरोपियन के अन्दर कितनी सहनशक्ति है, इसका सब से उत्तम नमूना तो वक्ता महोदय के अन्तिम वाक्य हैं। सुफेद चमड़ी की शान्ति प्रियता" और "सहनशीलता" का यदि और वास्तविक ज्ञान प्राप्त करना हो तो मिस्र, साउथ अफ्रिका "ईस्ट अफ्रिका, चीन इत्यादि का इतिहास पढ़ना चाहिये जो कि इनकी "सहन शीलता" और "शान्ति प्रियता" के कारण ही खूनी रंग में लिखता गया है। बहुत दूर जाने की आवश्यकता ही क्या है! टर्की ईराक और मैसोपोटेमिया के साथ श्वेतांगों का जो व्यवहार हो रहा है। वह इसका ताज़ा नमूना है।

सुरेन्द्र बाबू संभलो ?

अमृत बाज़ार पत्रिका ने लिखा कि सुरेन्द्र बाबू हण्टर कमेटी के पक्ष में—नरम दल वालों की सम्मति प्राप्त कर रहे हैं। इस पर आप बुरी तरह से बिगड़े हैं। और अपने "वकील मित्रों की सलाहसे आपने मानहानि का मामला लेकर, जब अदालत का ताज़ा कष्ट खटाया है। बाबू सुरेन्द्र महाराज ने इस अभियोग में, जैसा कि मि० विपिनचन्द्रपाल ने "डिमोक्रेट" में ठीक कहा है, यह बात पहिले से मान ही ली है कि बहु पक्ष की यह रिपोर्ट इतनी गर्हित, और भयंकर है कि आत्म सम्मान को तिलाञ्जलि दिये बिना कोई इसे छू भी नहीं सकता। क्या हाईकोर्ट इस को मान लेगा? यदि नहीं तो, श्री० माननीय सुरेन्द्र बाबू को, ज़रा ठंडा कर, अपनी स्थिति सोचनी चाहिए क्यों कि कहीं वे ऐसा न हो कि चौबे जी छब्बे बनने गये, दुबे रह गये"।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिये छपा

ओ३म्

Registered No. A. 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में भी बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः॥
(ऋ० मं० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। श्रद्धे! श्रद्धे! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | ६ श्रावण सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० २३ जुलाई सन् १९२० ई० | संख्या १४ भाग १

हृदयोद्गार

डायर !

बेदाग़ होगये वे दाग़ा था जिनको तूने,
सब दाग़ आलगे हैं तेरे दहन पै डायर ! ॥ १ ॥
मारा था तूने उनको गोलों की मार देकर,
खूं दाग़ से किया है तुझको उन्हीं ने कायर ॥ २ ॥
जाकर बहिश्त में सब आराम कर रहे हैं,
आराम अब मिलेगा तुझको नरक में जाकर ॥ ३ ॥
डर क्या है लोग कहते तुझ को अगर हैं कायर ?
तू वीर है न शक है जाती को मुख दिखाकर ४ ॥
लेटे हुये उठे हैं सोते हुये जगे हैं,
तेरा ही नाम लेकर तेरी ही चोट खाकर ॥ ५ ॥
तुझको बहुत मुबारिक पर हम तभी कहेंगे,
तुझसा ही भेज देंगे जब और वे बनाकर ॥ ६ ॥

—आनन्द

सत्याग्रह तथा असहयोग !

दिखाया था एक ने नज़ारा, ये उस से बढ़कर दिखा रहा है
सिखाया उसने कि धर्म पर हो, ये स्वावलम्बन सिखा रहा है ॥ १
मिले थे उस से यवन औ हिन्दू, ये सब किसी को मिला रहा है
स्वतन्त्रता का ये मन्त्र पढ़ कर, के सारे बन्धन छुड़ा रहा है ॥ २
थे हम गढ़े में, उठाके हमको, ज़मीन पर ला बिठा दिया है
न दूर है अब शिखर हमें जब, ये आप ऊपर उठा रहा है ॥ ३
सिखाया उसने कि तप के बल से, जहान को जीतना सुगम है
ज़रूर ही ये उसी सबक़ को, अमल में लाकर बता रहा है ॥ ४
वो ग्रीष्म में था कि जिस से सारे, विरोधिजन दिल में जलचुके थे
ये वृष्टि में है सहानुभूती, की धार उनमें बहा रहा है ॥ ५
सड़े हुए कीच से कमल हो, तो ये तो उत्तम पदार्थ ऐसे
दिखाया उसने भी था न कुछ कम, ये उस से बढ़ कर दिखा रहा है ॥ ६

"सहृदय"

आवश्यक—निवेदन

अबतक वी.पी. द्वारा 'श्रद्धा' का भेजना बिलकुल बन्द था चूंकि कुछ सज्जन वी.पी. मंगा लौटा कर प्रतिज्ञा भंग के दोषी होते थे। पर अब हमें सज्जनों के आग्रह से बाधित हो कर वी.पी. भेजना शुरू करना पड़ा है। आशा है सज्जन लोग वी.पी. की आज्ञा पक्का निश्चय करके ही दिया करेंगे। वी.पी. लौटाने पर जहां लेखक प्रतिज्ञा भंग करता है वहां हमें भी आर्थिक और मानसिक हानि उठानी पड़ती है। वार्षिक मूल्य २॥), ६ मास का २) । ६ मास से कम का वी.पी. नहीं भेजा जाता।

प्रबन्धकर्ता-श्रद्धा
गुरुकुल-कांगड़ी
(बिजनौर)

ब्रह्मचर्यसूक्तकी व्याख्या।

अग्नौ सूर्ये चन्द्रमसि मातरिश्वन् ब्रह्मचार्य्यप्सु समिधमादधाति। तासामर्चींषि पृथगभ्रे चरन्ति तासामाज्यं पुरुषो वर्षमापः ॥ १३ ॥

"(ब्रह्मचारी अग्नौ, सूर्ये, चन्द्रमसि, मातरिश्वन्, अप्सु समिधम् आदधाति) ब्रह्मचारी अग्नि में, सूर्य में, चन्द्रमा में, आकाश गामीपवन में, जलधाराओं में समिधा को सब प्रकार से डालता है (तासाम् अर्चींषि पृथक् अभ्रेचरन्ति) उनकी किरणें जुदी जुदी मेघ मण्डल में चलती हैं और (तासाम् आज्यम् पुरुषः वर्षं आपः) उन से स्त्री, पुरुष, वृष्टि और सब जलाशय हैं।

ब्रह्मचारी पहिले अग्नि में समिधा डालता है। अग्निर्वा ऋग्वेदोऽजायत। अग्नि से ऋग्वेद हुआ। ऋच् स्तुतौ-ऋचा इस लिए कहते हैं कि इस वेद के मन्त्रों में तृण से लेकर पृथिवी पर्यन्त तथा पृथिवी से लेकर परमात्मा तक का साधारण ज्ञान दिया गया है। उस साधारण ज्ञानरूपी अग्नि को पहिली समिधा से वह प्रदीप्त करता है। तब क्रमशः वह यजुर्वेद द्वारा, कर्मकाण्ड द्वारा प्रथम प्राप्त किए साधारण ज्ञान कर्म में बदल कर जाने हुए द्रव्यों के समीप होता, अर्थात् उनकी उपासना करता है जिससे उस (विज्ञान) विशेष ज्ञान की प्राप्ति होती है। सूर्यात् सामवेदः—दूसरी समिधा से इस प्रकार ब्रह्मचारी विज्ञान रूपी सूर्य को प्रदीप्त करता है। तब तीसरी समिधा उसके अन्दर त्याग वा विनय का भाव उत्पन्न करने वाली शान्तिरूपी है जो चन्द्र में वह छोड़ता है। उससे प्रभावित हो कर वह चन्द्रमा का गुण धारण करता है। तब चौथी दयारूपी समिधा की आहुति आकाशगामीपवन में देते ही वह ऊपर उठता है और वहां से पांचवी समिधा द्वारा जल धाराओं (मंगल कामनाओं) की शीतल वृष्टि कर के संसार को तृप्त करता है। यह अलंकार सीधा और स्पष्ट है।

ब्रह्मचारी की डाली हुई समिधा की आहुतियों से जिलाई हुई एक एक शक्ति की किरणें अपनी अपनी परिधि के अन्दर बलवती हो कर ब्रह्मचारी के अन्दर इकट्ठी हो जाती हैं। जिस प्रकार सूर्य के उठाए हुए, विविध प्रकार के जलों के, परमाणु सूर्य मण्डल में ही इकट्ठे हो कर पृथिवी पर शीतल जलधारा छोड़ उसे तृप्त करते और उससे उत्तम अन्न औषधादि उत्पन्न करते हैं, इसी प्रकार ब्रह्मचारी की प्रदीप्त की हुई सब किरणें उसी में इकट्ठी हो कर संसार में आनन्द की लहरें चला देती हैं।

उसका प्रथम फल यह होता है कि पुष्टिकारक पदार्थों की कमी नहीं रहती। इस सचाई को इस समय भारत वर्ष में भली प्रकार अनुभव किया जा रहा है। पुष्टि कारक पदार्थ क्या हैं? घी आदि जिनकी उत्पत्ति दूध से होती है। परन्तु वह दूध शुद्ध अवस्था में अधिक परिमाण से उसी देश में उत्पन्न हो सकता है जहां ब्रह्मचारी निवास करते हों। भारतवर्ष में दूध की नदियां बहती थीं, जब यहां जीव हिंसा का अभाव था। फिर जब शिकारी राजपुरुषों (राजपूतों) तक ही मांस भक्षण सीमित रहा तब तक भी लाभदायक पशुओं की हानि न हुई और दूध घी से प्रजा पुष्ट होती रही। परन्तु ज्यों ही मांसाहारी, भोगी विदेशियों के चरण यहां आए और इन्होंने भारत प्रजा के शरीरों को ही नहीं वरन् उनकी बुद्धियों को भी दास बनाना शुरू किया, तब से ही क्रमशः यहां से दूध घी का ह्रास होना आरम्भ हो गया, यहां तक कि आज बच्चों को भी दूध नहीं मिलता। यहां तक ही नहीं प्रत्युत भोगप्रधान जीवन बन जाने से माताओं ने अपने विषय भोग के गहरे प्रमाद में फंसकर अपनी सन्तानों को अपने स्तनों के अमृत रूपी दुग्ध से भी वञ्चित कर दिया। जब आत्मा को पुष्ट करने वाला सात्विक भोजन नहीं रहा तो फिर उत्तम सन्तान की उत्पत्ति कहां से हो सकी। भारत प्रजा की सन्तान पर एक दृष्टि डालने से ही पता लग जाता है कि ब्रह्मचर्य के अभाव ने उसकी क्या दुर्दशा करदी है। बालक दूध के लिये तड़प रहे हैं और माता उनके दुःख से दुःखी हो रही है; परन्तु सहस्रों गायें निष्ठुर पिशाचों की उदर पूर्त्ति के लिए कट रही हैं। यह पिशाच लीला इसी लिए देखने में आती है क्योंकि कामचेष्टा ने संसार को अंधा कर दिया है।

फिर जब सृष्टि पुरुष हीन हो रही हो, जब 'मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति' की उक्ति चरितार्थ हो रही है, तो वृष्टि कहां से आवे और वर्षा के बिना जलाशय कहां से भरें? और जब जलाशय सर्वथा सूख चुके हों तो संसार के अन्दर स्नेह और प्रेम का जल हृदय रूपी वृक्षों को कैसे सींच सके। जिस पुष्टि कारक वीर्य से पुरुष की उत्पत्ति होती है जब उसका स्रोत ही ब्रह्मचर्य है तो फिर ब्रह्मचर्य के बिना यदि आज कल की सभ्यता विचार शील पुरुषों को दृष्टि में निर्जीव दिखाई दे तो क्या आश्चर्य है? इस अंश में आज संसार की दशा कैसी शोचनीय है! जहां एक ओर अनावृष्टि सताती है तो दूसरी ओर वर्षा के आरम्भ होने पर अतिवृष्टि का भय रहता है। मनुष्य के मनुष्यरूप धारण किये हुए होने पर भी पशुओं से भी नीचतर व्यवहार देखने में आते हैं। सभ्यता के सब अङ्गों के अन्दर से पीप और लहू बह रहा है, परन्तु उसके ऊपर बनावटी प्लास्तर कर के उसको छिपाया जा रहा है। जहां पर २ के अन्दर हा हा कार मच रहा है, वहां चिकनी चुपड़ी सूरतें दिखला कर संसार को भ्रम में डाला जा रहा है। धर्म और ब्रह्मचर्य के बिना संसार की वही दशा हो रही है जो मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र के बिना सकल—समृद्धि—सम्पन्न अयोध्या की हो रही थी। इसी अवस्था को देख कर कवि गोसाईं तुलसीदास की उक्तिको इस प्रकार परिवर्त्तित किया जा सकता है—"जिमि भानु बिन दिन, प्राणबिन तन, चन्द्र-बिनु जिमि यामिनी। तिमि ब्रह्मचर्य प्रकास, गुरुकुल वासबिनु, सब सभ्यता है भयामनी।"

शमित्योम् ।

श्रद्धानन्द सन्यासी

—:o:—

श्रद्धा

गुरुकुल का अधिकार

भारत निवासियों पर

असहयोगिता (Non cooperation) का इस समय सारे देश में शोर मचरहा है। जाति में महात्मा गांधी जी का पद बड़ा है, श्रीमान् लाला लाजपतराय जी भी देश भक्तों में ऊंचा अधिकार रखते हैं इन महानुभावों ने जो कुछ विचार किया है उस से देश का हित ही सोचा है इसमें कोई सन्देह नहीं। परन्तु विचारणीय इस समय यह है कि क्या इन महानुभावों से प्रस्तावित असहयोगिता के कामों में सफलता हो सकेगी या नहीं। जिस को मनुष्य सत्य समझे उसी के अनुसार काम करना मनुष्य का कर्तव्य है, उस में कृतकार्यता हो या न हो। व्यक्ति को सन्तोष है कि उस ने अपना कर्तव्य पालन किया और वहीं उस आन्दोलन की समाप्ति हो गई। परन्तु जहां लाखों और करोड़ों को पीछे लगाकर चलना हो, जहां ३० करोड़ के भविष्य का प्रश्न हो वहां सचाई को उसी हद तक अमल में लाना चाहिये जहां तक कि उस संसार के पांचवें भाग की जनता का निश्चित लाभ हो कर आन्दोलन में कृतकार्यता हो सके। महात्मा गांधी जी के जो प्रस्ताव हैं उन की परीक्षा मैं पहिले करता हूं:—(१) "सरकार से पाये हुए खिताब सब लौटा दिये जांय।" यदि सब भारत निवासी खिताब लौटा दें और आगे को कोई मिलने पर भी स्वीकार न करें परन्तु जहां १० छोड़ने वालों के स्थान में १०० ऐसे मौजूद हैं जो खिताबों पर इस तरह टूट पड़ते हैं, जैसे कुत्ते हड्डियों पर तो उसका प्रभाव न सरकार पर हो पड़ सकता है, और न जनता पर। (२) यही हाल आनरेरी ओहदों का है। (३) सिविल और मिलिट्री नौकरी से भी यदि सब त्याग पत्र देंगे तो ५०० उनकी जगह लेने के लिये तय्यार हैं। लाला लाजपतराय जी ने नई संशोधित कौंसिलों के बहिष्कार करने की घोषणा दी है, उस के विषय में महात्मा गांधी जी की सम्मति बहुत उत्तम मालूम होती है। कौंसिलों में जाने के लिए चाहे सैकड़ों तय्यार हो जावें, परन्तु यदि सम्मति देने वाले सहस्रों को काबू कर लिया जावे तो कोई भी प्रतिनिधि कौन्सिलों में न जा सके।

यह सब असहयोग कठिन मालूम होते हैं, परन्तु एक प्रकार का असहयोग है जो कि गवर्नमेंट रूपी पूर्णपुरुष की नस ढीली कर सकता है, वह यह कि कोई भी भारत निवासी अपनी सन्तान को सरकारी पाठशालाओं में पढ़ने के लिए न भेजे। बहुत भाग विद्यार्थियों का प्राइवेट (Private) तथा एडेड स्कूल्स (Aided Schools) और कालिजों के अन्दर है। यदि इस प्रकार के सभी कालिज यूनिवर्सिटी से अपना सम्बन्ध तोड़लें तो गवर्नमेंट के होश कुछ ठिकाने हो सकते हैं। मेरी सम्मति में यदि जातीय शिक्षणालयों के संचालकों में कुछ भी आत्मसम्मान का भाव होता तो लाहौर में फ्रैंक जोन्सन के अत्याचारों के पीछे वे अपनी संस्थाओं को ऐसी गवर्नमेण्ट की दासता से मुक्त करा लेते। परन्तु अब भी कुछ नहीं बिगड़ा *सुबह का भूला अगर शाम को घर आजावे तो उसे भूला नहीं कहते*:—दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालिज, दयालसिंह कालिज, सनातन धर्म कालिज और इनके आधीन सब संस्थाएं यूनिवर्सिटी के सम्बन्ध को एक दम त्याग दें, अन्य सब प्रान्तों के सैकड़ों कालिज और स्कूल यदि स्वतन्त्रता से काम करने लग जावें, और यदि बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी के संचालक धन्यवाद के साथ यूनिवर्सिटी चार्टर लौटा कर वायसराय की सेवा में भेज दें तो बिना किसी शोर गुल के बृटिश नौकर शाही का दिल दहल सकता है।

शायद ये स्वप्न की बातें हैं। परन्तु एक संस्था है जिसने १९ वर्षों से असहयोगिता का प्रमाण देकर जातीय शिक्षा को स्वतन्त्र बना छोड़ा है। गुरुकुल अपने जन्म दिन से अब तक नौकरशाही के जाल से बचा हुआ अपना काम करता आया है। इसके सचालकों को क्या क्या प्रलोभन नहीं दिए गए, जिन सुनहरी जञ्जीरों को अन्य जातीयता का अभिमान करने वाले, शिक्षणालयों ने बड़ी खुशी से पहन लिया है, मन लुभाने वाले वे जंजीर न जाने कितनी बार इन के सामने पेश की गईं, परन्तु परमेश्वर ने इन को ऐसी दासता से बचने की बुद्धि दी। इस समय भी मैं देखता हूं कि माता पिता अपनी सन्तानों को विदेशी दासता से बचा कर गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के अर्पण करना चाहते हैं, और बीसियों स्थानों से अनुरोध किया जारहा है कि मैं गुरुकुल की शाखायें वहां खोल दूं। प्रत्येक शाखा के खोलने का व्यय मेरे अनुमान में ७५०००) रुपया है। २५०००) में एक दम ऐसे मकान बन सकते हैं जिन में ३०० से अधिक विद्यार्थी निवास तथा शिक्षा प्राप्त कर सकें। और यदि ५००००) का स्थिर कोष साथ हो तो उसके सूद से ऊपर का सब खर्च चल सकता है। यदि मेरे पास ७५ लाख रुपया हो १०० शाखायें तत्काल खोल सकता हूं जिस प्रकार की हाल में ही उत्तर-हरियाना गुरुकुल जि० रोहतक में खोल चुका हूं। यह *पहिली विशेषता* है जिसके कारण गुरुकुल भारत जनता की सहायता का पात्र बन सकता है।

दूसरी विशेषता यह है कि इसी संस्था में प्राचीन ब्रह्मचर्य आश्रम को पुनरुज्जीवित करने का यत्न किया जाता है। प्राचीन गुरुकुलों की सब से बड़ी विशेषता यही थी कि आचार्य और ब्रह्मचारियों में पिता पुत्र का सम्बन्ध होता था। दोनों का जीवन बड़ा सरल, भोग रहित होता और तप की प्रधानता रहती थी। उस चित्र को फिर से खींचने का जीवित प्रयत्न यदि कहीं दिखलाई देता है तो वह गुरुकुल विश्वविद्यालय ही है। आर्य जाति के अन्दर ब्रह्मचर्य और गुरुशिष्य के सम्बन्ध के प्रति ऐसी श्रद्धा का भाव अब तक है कि उसी का मनोहर चित्र शब्दों द्वारा खैंच कर इस समय की दा—संस्थाएं लाखों बटोर लेती हैं। जहां प्रिन्सिपल और प्रोफेसर विद्यार्थियों से दिन में २,३ घण्टे ही मिल सकते हों, जहां उन्हें पकड़ कर एक तीसरी शक्ति ने टुकड़ा कर दिया हो, जन्म का उत्तम पहिला १०, १२ वर्ष का समय अन्य प्रभावों में व्यतीत करके जहां विद्यार्थी कौलिज में दाखिल हुए हों, उन कौलिजों के लिए नालिन्दा और तक्षशिला के नाम पर अपील करना कहां तक उचित है, यह अपील करने वाले सज्जनों को ही विचारना चाहिये। प्राचीन गुरुकुलों के आदर्श की ओर यदि कोई संस्था चलने का यत्न कर रही है तो यही है, क्योंकि यहां बचपन से ही बालक प्रविष्ट होकर इसी वायु मण्डल के अन्दर पलते और महाविद्यालय तक पहुंच कर इन्हीं विचारों में परिपक्व होते हैं।

तीसरी विशेषता इस कुल की यह है कि बाल विवाह की जड़ यहां कट जाती है। गुरुकुल के नियमानुसार कोई भी विद्यार्थी २४ वर्ष की आयु तक विवाह नहीं कर सकता। गुरुकुल का अनुकरण करते हुए देवी एनीबेसेन्ट ने सैन्ट्रल हिन्दू कालिज में यह नियम किया था कि मिडल तक कोई लड़का दाखिल न किया जावे जो विवाहित हो। लाहौर के डी० ए० वी० कालिज ने कुछ दिन पीछे इसका अनुकरण करते हुए ०० तक इम्तहान तक यह नियम चलाने की आज्ञा दी। परन्तु कालिज में इस नियम को चलाने का किसी को भी साहस नहीं हुआ। जिस देश में १०१४ एक वर्ष आयु की विधवा हों, और एक से पन्द्रह वर्ष तक की

४११६२७ विधवाएं हो रहा २५ वर्ष की आयु तक पुरुष और १६ वर्ष की आयु तक स्त्री के ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करने से कितना लाभ होता इस के बतलाने की आवश्यकता नहीं है। बाल विवाह के कारण ही निर्बल सन्तान होती है और उसी से जाति का नाश होता है।

चौथी विशेषता यह है कि जातिबन्धन की गुलामी से यह कुल भारतजनता को आजाद करता है। एक कुल में १५ वर्ष तक रहकर सब भाई जातिभेद को भूल जाते हैं। देखने वालों को भी यह निर्णय करना कठिन होता है कि कौन ब्राह्मण का, कौन शूद्र का और कौन अछूत का लड़का है जिस स्वाभाविक वर्णव्यवस्था का वेद द्वारा उपदेश किया है, जिस श्रमविभाग का निरूपक महाराज जैसे सनातन धर्मी ने भी समर्थन किया है—उस स्वाभाविक वर्ण व्यवस्था का क्रियात्मक प्रचार इसी कुल में हो रहा है।

पांचवीं विशेषता यह है कि जिस श्रद्धा की स्कूलों और कालिजों मे जड़ कट रही है उसका उज्वल मुख गुरुकुल में और भी परिमार्जित हो रहा है। जिन स्कूलों और कालिजों में ऊपर से बन्धन पर बन्धन डाले जा रहे हैं, और मातृभूमि के प्रति श्रद्धा का प्रकाश राजविद्रोह समझा जा रहा है, वहां यदि श्रद्धा की जड़ ही कट जावे तो सरल हृदय भारत पुत्रों का उस में क्या दोष है? आत्म सम्मान और देश-हित का शुद्ध भाव यदि विकसित हो सकता है तो इसी गुरुकुल विश्वविद्यालय के अन्दर।

छटी विशेषता—ब्रह्मचारियों का तप का जीवन है। बूट, कांटों के बन्धनों से मुक्त, सिर पैर से नंगे, जंगलों और पर्वतों की यात्रा करने में ब्रह्मचारियों के अतिरिक्त और कौन तपस्वी हो सकता है। इसकी साक्षी वे भद्र पुरुष भली प्रकार दे सकते हैं जिन्होंने ब्रह्मचारियों का खेल देखी हैं या जिन्हें कुल छात्रों के साथ यात्रा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

सातवीं विशेषता—यह है कि देश में यही एक विश्वविद्यालय है जिस में शिक्षा का माध्यम मातृभाषा को बनाया गया है। श्रीमान् पण्डित मालवीय जी ने भी हिन्दू यूनिवर्सिटी स्कीम बनाते हुए पहिले निश्चय किया था कि शिक्षा का माध्यम हिन्दी को रक्खेंगे, परन्तु फिर देहली गवर्नमेन्ट के हाथ मिलने के कारण उन्हें इस विचार को बदलना पड़ा। हिन्दीसाहित्य सम्मेलन के अधिवेशनों में मालवीय जी का ध्यान इस ओर दिलाया जाता रहा, गुरुकुलीय आर्यभाषा सम्मेलन में हर साल आर्य भाषा को हिन्दू युनिवर्सिटी का माध्यम बनाने का जोर दिया जाता रहा परन्तु अब तक उस का परिणाम कुछ नहीं निकला। हां इतना हुआ कि श्रीमान् मालवीय जी ने हिंदू यूनिवर्सिटी के पिछले कानवोकेशन में वाइस चान्सलर की कुर्सी से उठकर अवश्य यह कह दिया कि समय आ गया है जब कि हिन्दी को शिक्षा का माध्यम बनाना चाहिये। जो समय माननीय मालवीयजी अब लाना चाहते हैं, उसका गुरुकुल में १६ वर्षों से राज्य है।

और भी विशेषताएं गिनाई जा सकती हैं, परन्तु सब से बढ़कर विशेषता यह है कि भारतवर्ष में सचमुच जातीय शिक्षणालय कहे जाने के योग्य केवल यही संस्था है। परीक्षा की मंजिल से यह संस्था बहुत आगे निकल चुकी है और इस समय यदि भारत के युवकों के हृदयों में आत्मसम्मान और मातृभूमि के प्रेम का सञ्चार कोई संस्था कर सकती है तो एक यही है। ऐसी संस्था को आर्थिक स्थिरता प्रदान करना सारे देश का कर्त्तव्य है। इस संस्था में बड़ी शक्तियां हैं और भविष्य में इसका बड़ा प्रसार हो सकता है यदि इसके लिये दिन रात अनुभव करने वालों को गुरुकुल भूमि में ही रहकर काम करने का अवसर मिल सके, और यह तब हो सकता है जब कि उन लोगों को धन जमा करने के लिये बाहर मारे २ न फिरना पड़े।

गुरुकुल की इस समय की आवश्यकताएं निम्नलिखित हैं—(१) महाविद्यालय विभाग के ब्रह्मचारियों के लिये स्वास्थ्य प्रद आश्रम—१ लाख रुपया (२) वेद, दर्शन, आर्य सिद्धान्त, Western philosophy, रसायन, English, गणित, अर्थशास्त्र, इतिहास आदि विषयों के उपाध्यायों के निर्वाह के लिये इतना धन जिस से १८००×१०=१८००० सालाना सूद वसूल हो सके—३ लाख रुपया। (३) कृषि विभाग के मकानों के लिये ५० हजार, कृषि के अन्य सामान तथा कूप आदि के लिये ५० हजार, प्रोफेसरों तथा कर्मचारियों के वेतन के लिये १ लाख रुपये का सूद = सर्वयोग २ लाख रुपया। (४) कला भवन—स्टीम एंजिन और वर्क शौप (Steam Engine & work Shop) के सामान के लिये—१ लाख। इस में लोहारी तरखानी तथा उन से सम्बन्ध रखने वाले और बहुत से काम सिखलाये जावेंगे। इस अंश में गुरुकुल का एक ब्रह्मचारी बड़ी तीव्र बुद्धि रखता है, और यदि पूरा सामान उसके लिये जमा कर दिया गया तो आशा है कि बहुत से यन्त्र भी तय्यार हो सकेगा। हाथ से कपड़ा बुनने के लिये ५० हजार रुपया और अन्य बहुत सी कारीगरियां सिखलाने के लिये ५० हजार रुपये का स्थिर कोष। इन सब कामों के लिये इमारत पर १ लाख रुपया खर्च होगा। सर्वयोग ३ लाख रुपया। (५) आयुर्वेद स्थिर कोष जिसके सूद से ६ प्रोफेसरों, कम्पाउण्डरों और अन्य कर्मचारियों का वेतन निकल सके २॥ लाख रुपया। आयुर्वेद तथा उपयोगी शरीर विज्ञान और तत्सम्बन्धी अन्य शिक्षाओं के लिये ५० हजार के उपकरण चाहियें। इस विभाग के लिए बनाये जाने वाले मकानों पर १॥ लाख रुपये से कम खर्च न होगा, जिस में आयुर्वेद वाटिका आदि भी शामिल समझनी चाहिए। सर्वयोग ४॥ लाख रुपया। (६) गुरुकुल यन्त्रालय के लिए ५० हजार रुपया चाहिये क्योंकि शिक्षा माध्यम हिन्दी होने के कारण और वैदिक तथा लौकिक संस्कृत साहित्य के उपयोगी ग्रन्थों की आवश्यकता बाधित करती है कि अपने स्वतन्त्र यन्त्रालय से अपने उपयोग की किताबें छपवाई जावें। (७) विशेष विषयों के लिये विदेश में भेजकर उपाध्याय तय्यार करना। गुरुकुल में वे ही उपाध्याय काम कर सकते हैं जिन्होंने इस के वायुमण्डल में शिक्षा पाई हो। मैं चाहता हूं कि कम से कम अपने १० स्नातकों वा अन्य हितैषी विद्वानों को विदेश में भेजकर विशेष विषयों में निपुण बनाया जावे। जिससे जो अस्थिरता उपाध्यायों के बदलने के कारण दिखाई देती है बाहिर हो जावे। प्रत्येक ऐसे स्नातक वा विद्वान् को कम से कम ३ वर्ष विदेश में रखना होगा अतः दस दसहजार राशि की छात्रवृत्तियां चाहियें, योग एक लाख रुपया (८) इस समय पांच पांच हजार की शायद लगभग २० के छात्रवृत्तियां हैं जिनसे २० ब्रह्मचारी सदैव के लिए बिना शुल्क की शिक्षा पा रहे हैं मैं चाहता हूं कि कम से कम ८० और ब्रह्मचारी बिना शुल्क के शिक्षा पा सकें इस के लिये ४ लाख रुपया चाहिये। (९) शाखा गुरुकुल कुरुक्षेत्र का सारा बोझ अब गुरुकुल की प्रबन्धकर्त्री सभा पर ही आपड़ा है। उस को इस योग्य बनाने के लिये कि उस में २५० छात्र बराबर पढ़ते हों और ८ श्रेणियों तक उसका प्रबन्ध होजावे एक लाख रुपये की आवश्यकता है।

इस प्रकार २० लाख रुपयों की गुरुकुल वि-

श्वविद्यालय कांगड़ी को स्थिर करने के लिये आवश्यकता है। यदि इसकी तह आर्थिक सहायता से पूरी हो जावे और यहां के कार्य कर्ताओं को आये दिन भीख के लिये बाहर न निकलना पड़े तो इस संस्था से वे काम होसकेंगे जो कोई दूसरी संस्था एक करोड़ का स्थिर कोष जमाकर के भी नहीं कर दिखा सकती।

यह अपील हाथ मे लेकर मैं शीघ्र ही बाहर निकलने वाला हूं। मिलु अपनत्व तो द्वार पर आकर ही जगावेगा परन्तु यह घोषणा इस लिये निकाल दी है कि धर्म और देश के भक्तों को सहायता के लिए पहिले से तय्यारी करने का अवसर मिल जावे। दैनिक और साप्ताहिक स्वदेशी पत्र सम्पादकों से प्रार्थना है कि मेरी इस अपील को पत्रों में उद्धृत करदें।

श्रद्धानन्द सन्यासी

महर्षि की मृत्यु का रहस्य

(लण्डन का सम्वाद)

श्रीयुत प्रो० बालकृष्ण जी एम० ए० गुरुकुल विश्वविद्यालय की ओर से इंगलैण्ड अर्थशास्त्र का विशेष अध्ययन करने गये हुवे हैं। आपने हाल ही में श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी को 'ऋषि दयानन्द की मृत्यु' के बारे में एक पत्र लिखा है जिस में आपने उन के घातक या विष देने वाले के विषय पर कुछ प्रकाश डाला है। हम पत्र ज्यों का त्यों नीचे देते हैं। आशा है श्रीयुत महाराना प्रतापसिंह जी इस विषय पर अवश्य ही अपना मत प्रगट करेंगे। (उपसम्पादक)

"ऋषि की मृत्युघटना के सम्बन्ध में कुछ नवीन वृतान्त एक सज्जन से मिले हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से आवश्यक होने के कारण मैंने उन्हें प्रकाशित करना उचित समझा है। गत २० वर्षों से डाक्टर अहमद साहब लंडन में निवास करते हैं। आप जोधपुर में सैन्य मन्त्री (Military Secretary) थे जब ऋषि दयानन्द जोधपुर पधारे थे। अब तक हमारा यही ख्याल है कि स्वर्गवासी महाराजा जसवन्तसिंह की मुंहचढ़ी वैश्या "नन्ही" ने स्वामी जी को उन के रसोइये के द्वारा विष दिलवाया, किन्तु डाक्टर अहमद का कथन है कि "नन्ही जान" ने वह विष नहीं दिलाई। उन्होंने महाराज के न्यायशील होने के बहुत उदाहरण दिए और कहा कि यदि उस वैश्या ने स्वामी जी जैसे महर्षि और महाराज के गुरु को विष दिलाया होता तो वह नन्ही को दण्ड देने से कभी न चूकते, एक ऋषि की मृत्यु का कारण होने से रियासत और महाराज पर अमर लाञ्छन रहता कि घातक वैश्या को दण्ड नहीं दिया गया। उसे कोई दण्ड ही नहीं मिला, परन्तु महाराज की मृत्यु तक नन्ही उन के साथ रही। उनकी मृत्यु के पश्चात् महाराना प्रतापसिंह जी ने जो आर्यसमाजी थे और हैं उस के साथ अच्छा सलूक किया यदि वह घातक होती तो महाराजा और महाराना कभी उसे जोधपुर में न रहने देते। महाराज के जीते समय भी प्रतापसिंह जी का बड़ा प्रभाव था। चूंकि यह स्वामी जी के चेले थे अतः यदि नन्ही ने वस्तुतः कुछ किया होता तो उसे प्रतापसिंह जी यथा योग्य दण्ड दिलाए बिना कभी न छोड़ते।

इस आधार पर डाक्टर अहमद साहब की सम्मति है कि उस समय ऋषि को विष देने का दोष पोखरने ब्राह्मणों पर लगाया जा रहा था और यह उन्हीं की घृणित चाल थी। स्वामी जी के प्रचार से उनकी आय लोगों से तो जाती रहती थी किन्तु राजदर्बार से भी सब आय मारी जाती। यह ऐसी आपत्ति थी जिसे वे सहन न कर सकते थे। अतः उन्होंने स्वामी जी के ब्राह्मण रसोइये के द्वारा विष दिलाया।

इस घटना में दोष का भागी वस्तुतः कौन है इस की खोज करनी आवश्यक है। महाराना प्रतापसिंह जी मौजूद हैं और भी उस समय के कई सज्जन जीवित होंगे। मैं आशा करता हूं कि इसका पता शीघ्र ही लगाया जावेगा। कम से कम महाराना जी की सम्मति इस विषय में अवश्य प्रकाशित होनी चाहिए।"

बालकृष्ण

लण्डन २६, ६, २०

मि. माण्टेगू का असली स्वरूप

और

मि० चिन्तामणी की "हांजी ! हां"

(लेखक--सत्यदेव विद्यालंकार)

मि० माण्टेगू ने पञ्जाबबहस नहीं परन्तु डायरबहस के प्रारम्भ के भाषण में ठीक ऐसे ही मुंह खोला था जैसे मसीह ने पर्वत पर बैठ कर अपने शिष्यों को उपदेश देने के लिये खोला हो। दूसरे शब्दों में आपका भाषण पंजाब या भारतवासियों के उद्विग्न मनों के शान्त करने के लिये ऐसा ही था जैसा कि मि० विल्सन का १४ बातों वाला भाषण खून में डूबे हुये पश्चिम को बचाने के लिये था। इसमें सन्देह नहीं कि उस बहस में माण्टेगू जो कुछ कह गये वह इस लिये नहीं कि उन्हें वस्तुतः ही जलियांवाला बाग के हत्यारे गोरे द्वारा किया गया हत्याकाण्ड दिल में दुःख पैदा कर रहा था या वस्तुतः ही भारत से भय और अंग्रेज़ हिन्दुस्तानी के भेदभाव को उठा कर यहां सुशासन चलाना चाहते थे परन्तु चूंकि उन्हें अपनी गद्दी से खिसकने का भय था। निस्सन्देह आप शायद अपने खाने पीने सोने के कमरों में डायर, औड्वायर आदि को दिल भरकर कोस लेते होंगे परपार्लिमेण्ट में आकर आप का रूप बदल जाता है। घर में आप एक सभ्यसज्जन से भी बढ़कर होते हैं परन्तु पार्लमेण्ट में आकर आप एक राजनीतिज्ञ (Politician) बन बैठते हैं। यदि ऐसा न होता तो आप कभी उसके बाद १४ जुलाई को पार्लमेण्ट में कुछ सभ्यों के उत्तर में महात्मागान्धी के बारे में ऐसी स्थापना न करते जैसी आपने कर डाली। आपने उस दिन महात्मा जी के आचार व्यवहार और उनकी सेवाओं की बड़ी प्रशंसा की चूंकि ऐसा करने के लिये उनका कट्टर से कट्टर विरोधी भी बाधित है। पर आगे महात्मागान्धी जी के सब कार्यों को दुष्टतापूर्ण बता कर (Mr. Gandhi's efforts are thoroughly mischievous.) ही नहीं, परन्तु उस नौकरशाही की नकल को बिलकुल ही ढीला छोड़ कर जिसके कारण ही पिछले साल इतना उत्पात मचा था आपने

अपने असली रूप को दिखा दिया है। आप कहते हैं कि "जिन्हें भारत की शान्ति और नियम की रक्षा का भार दिया गया है और जिन पर सरकार का विश्वास है उन पर ही यह मामला छोड़ देना भला है।" इतना ही नहीं 'आप भारत की नौकरशाही के प्रत्येक कार्य का आंखें मूंद कर अनुमोदन करने का भी पूरा विश्वास दिलाते हैं। और पार्लमेण्ट के हस्ताक्षेप को भी भयानक बताते हैं।" यह मि० माण्टेगू का असली स्वरूप है जिससे बचने की आवश्यकता है। आप भले आदमी हैं, गोरे हैं एक यहूदी होते हुए भी उदार हैं पर आपके राजनीति के पहिरावे का रूप कदापि भला नहीं। भारत की नौकर शाही की नकेल के ढीला छूटने के जो भारी भयंकर परिणाम होंगे उन्हें भगवान् ही जानते हैं पर इस में आश्चर्य नहीं कि शायद फिर पिछले साल का सा हाल होजाए। मि० माण्टेगू उन्हीं पर विश्वास रख कर और उन्हीं के हाथ में भारत के भाग्य की बागडोर देकर जिनके ही हाथों से गत वर्ष भारत का बिगाड़ हुआ है अपने सुधारों से भारत का सुधार किया चाहते हैं यह बड़े आश्चर्य और खेद का विषय है। इनके ही हाथों में इन्हें उन्मत्त हाथी की तरह खुला छोड़ कर यदि भारत से काले गोरे का भेदभाव और भय का शासन हटाकर सुशासन करना है तो यह असम्भव कार्य है। मि० माण्टेगू का चेम्सफोर्ड और ओड्वायर का पिछले पत्रों में गुणगान करना ही नौकरशाही को भारत में बनाये रखने के लिए काफी था पर अब आप का यह कहना तो आप के दिल का अन्दर का भाग बाहिर कर देता है। ऐसा कहना कि आपने बहस के विरोध के डर के मारे ऐसा कह दिया कोई अच्छा बहाना नहीं। अस्तु

दूसरे लोग तो मि० माण्टेगू के मनुष्यपन पर मोहित होंगे पर हमारे श्रीमान् चिन्तामणि जी महाराज मि० माण्टेगू के इस असली रूप पर भी वहां मोहित हैं। १६ के लीडर का मुख्य लेख पढ़कर मि० माण्टेगू अनायास ही कह उठेंगे कि "बस, काचमूल्य से आज चिन्तमणि मिल गई है और चाहिये ही क्या?" और फिर जब उसी में यह पढ़ेंगे कि "कुछ ही मनुष्य जो देश के प्रतिनिधि नहीं और जिन्हें सरकार के प्रति ऐसा कहने का कोई अधिकार नहीं" तब तो वे फूले न समायेंगे कि देश के लीडर अलाहाबाद के मि० चिन्तामणि तो आज हमारे साथ हैं अब महात्मागान्धी जी क्या करेंगे?

आगे आपने मि० माण्टेगू की प्रशंसा करते हुए और उन्हें भारत का स्वराज्यपथप्रदर्शक बताते हुये कहा है कि उस बिचारे को भी महात्मागान्धी को सावधान करना पड़ा है। आप इन सुधारों के खिलौने के खेल में इतने मस्त हैं कि आपको स्वयं नहीं मालूम कि मैं क्या लिख रहा हूं? आपने स्पष्ट लिख दिया है "चाहे सरकार कितने भी गुना और ज्यादतियां करे पर भारतीयों को भविष्य का ध्यान रखते हुये उसके आगे हाथ जोड़कर ही खड़ा रहना चाहिये।" यह जो आपने लिखा सो लिखा पर आगे आपने मि० माण्टेगू के साथ जो "हांजी? हां" की है वह हमें असह्य है। आप कहते हैं कि "देश के भले की दृष्टि से महात्मा गांधी का आन्दोलन निस्सन्देह धूर्त्ततापूर्ण है।" (From the point of view of the interests of the country the movement is certainly michievous) ऐसी धूर्त्ततापूर्ण स्थापना करके आप कहते हैं कि "जनता अवश्य ही दिखायगी कि महात्मा जी के श्रद्धा और भक्ति ने उसके न्याय और साधारणविवेक को दबा नहीं लिया है।"

हमें पूरा विश्वास है कि मि० चिन्तामणि के इस लेख के प्रति जनता अवश्य ही अपने न्याय और विवेकबुद्धि को काम में लायेगी। कमाल का है "मौडरेटपन" या "लिबरलिज़्म" जिसकी डोंडी आप पीटते फिरते हैं। आश्चर्य है चिन्तामणि की परख पर। सुधारों के ज़रा से प्रलोभन में जो फस गये हैं वे देश और जाति का बिगाड़ करते हुए ज़रा भी नहीं हिचकते। सुधारों का कितना भार है वह आज किसी से छिपा नहीं है। देश का सुधार हो या बिगाड़ पर नयी कौंसिल की कुर्सी की 'चिन्ता' ने जिन्हें दबा लिया है उन से कुछ आशा करना अब व्यर्थ है।

९ ज्येष्ठ के अंक में "महात्मा गांधी और मि० चिन्तामणि" के लेख में हमने चिन्तामणि जी की खिलाफत के मामले की भयानक भविष्यवाणी पर प्रकाश डाला था। अभी ११ जुलाई के पत्र में भी आपने महात्मा गान्धी जी के प्रति लोगों को भड़काने का बड़ा यत्न किया है। अभी आपने १९ के लीडर में मि० माण्टेगू की 'हां में हां' मिला कर जो "सत बचन महाराज!" कहा है वह भी इसी वैयक्तिक पक्षपात का उदाहरण है। सहयोगी "भविष्य" इसे "चरित्र हीनता" कहता है हम भी इसे "चरित्र हीनता" ही कहने के लिए बाधित हैं।

—

विचार तरंग

"थोड़ासा"

(लेखक-श्रीयुत शर्मन्)

रोग में ग्रस्त बालक शय्या पर पड़ा है। वह कहता है 'नहीं, अम्मा! आज तो वैद्य जी मुझे भोजन के लिये विशेष तौर से मना कर गये है। वे कह गये हैं कि कुछ भी खाना बहुत हानि कर जायगा'। किन्तु पास खड़ी अम्मा भोजन भरी थाली हाथ में लिये कह रही है 'नहीं बेटा। थोड़ा सा तो खाले, और कुछ नहीं खाता तो ले यह थोड़ी सी खरिया ले। हाय बच्चा क्या दिन भर भूखा ही रहेगा?"

एक विचित्र सी अवस्था आपड़ने पर सत्यमूर्ती कह रहा है 'नहीं भाइयो! सत्य का महाव्रत पालन करने की वह महिमा तुम कुछ नहीं जानते हो मैं और क्या कहूं'। किन्तु अन्य सब लोग कहते हैं 'थोड़ासा एक बार झूठ बोलने में भला क्या हर्ज है एक बार तो धर्मराज युधिष्ठिर ने भी झूठ बोल दिया था। थोड़ासा झूठ न बोलने से यह सब बना बनाया काम बिगड़ जायगा।'

बड़े प्रलोभन का समय है, जब कि यती कह रहा है 'भाग जाओ, तुम्हारा मेरे सामने कुछ काम नहीं है। क्या तुम्हें मालूम नहीं कि मैं कौन हूं।' किन्तु चारों तरफ डोलती फिरती हुई मोहनी मूरतें इधर उधर भनभना रही हैं 'अरे थोड़ासा तो, बस आनन्द एक बार लेकर देख। फिर चाहे छोड़ देना। थोड़ासा, केवल थोड़ासा।'

प्राकृतिक संसार में पला हुआ एक युवक इस बाजारी दुनिया में नया नया आया है। स्थान स्थान पर उसे 'अपटुडेट' सभ्य मिलते हैं और कहते हैं 'अजी थोड़ा सा मांस अवश्य खाना चाहिये। इस से जिस्म में ताकत बढ़ती है। यह नुकसान तो बहुत खाने से होता है।' यार शराब का थोड़ा सा सेवन तो करना चाहिये। इस से चित्त सदा प्रसन्न रहता

है। इसका थोडासा सेवन तो साहब लोग भी भोजन के साथ करते हैं'। 'नहीं जी थोडसा मसाला, चटनी चूर्ण आदि खाना तो आवश्यक है। डाक्टर भी ऐसा ही कहते हैं। इन के बिना भोजन पच ही नहीं सकता'। केवल भोजन के बाद धूम्रपान (सिगरेट बीडी या हुक्का) बड़ा उपयोगी है। सारादिन पीने को कौन कहता है, थोडासा भोजन के बाद'।

× × × ×

बिच्छू कहता है कि मुझे केवल थोडासा —केवल अपने पतले डंक की नोक भर भरने को—स्थान अपने शरीर में देदे। बस, शेष सारे शरीर को मैं कुछ नहीं कहता।

आग लगाने वाला कहता है कि थोडीसी केवल एक चिंगारी अपने छप्पर के एक कोने में लगाने दो मैं और कुछ नहीं मांगता।

पाप भाव कहता है कि मुझे अपने हृदय में थोडासा स्थान देदो—मैं वहां कोने में एक तरफ चुपचाप बैठा रहूंगा कभी कुछ करूगा नहीं।

चतुर शासक कहता है कि तुम थोडासा केवल एक पैसा भर कर अपनी अमुक वस्तु पर लगा लेने दो अधिक कुछ नहीं।

विदेशी व्यापारी आकर कहते हैं कि तुम अपने विस्तृत देश के एक किनारे पर थोडीसी भूमि हमें देदो—केवल एक कोठी बनाने लायक जगह।

वामनावतार उतरते हैं और कहते हैं 'हे महादानी बलि राजा! तुम मुझे केवल साढे तीन पग धरने लायक थोडीसी भूमि दान करदो, बस मैं और कुछ नहीं मांगता।

× × × ×

'मैंने आज एसी चीज़ न खाने का व्रत किया था' किन्तु अमुक आदमी यह सोने का लड्डू रख गया है। अच्छा इसे न खाऊंगा, छोड़ दूंगा'...........'किन्तु जब वह दे गया है तो इसे बिलकुल न खाना तो उचित नहीं। इस लिये थो-डा-सा खालूं शेष सब छोड़ दूंगा'। वह थोडासा खालिया गया। थोडी ही देर बाद इसकी दूसरी तरफ से आंख मीचे हुवे एक गस्सा और भर लिया। अब इसे फिर उठा कर दो उंगलियों में पकडे हुवे इधर उधर घुमाता हुआ 'अब यह रह ही कितना गया है' इस सब को एक ही ग्रास में जल्दी से गले के नीचे उतार लिया गया—मानो कि यह जल्दी से खालेना न खाने के बराबर हो जायगा। (शेष फिर)

गुरुकुल जगत्

गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी

ऋतु बड़ी सुहावनी है। सूर्य और बादलों की आंख मिचौनी में दिन बीतता है। रात्रि को प्रायः प्रति दिन वर्षा हो जाती है। गरमी भी कभी कभी अपना ज़ोर दिखा ही देती है। गंगा खूब चढ़ी हुई है। डाक तथा यात्रियों के लिए तमेड़ों का प्रबन्ध होगया है। गंगा के मधुर कल्लोल के साथ प्रकृति की मुसक्यान ने कुल भूमि को तीनों लोकों से प्यारा बना रक्खा है। चारों ओर की हरियावली और उसमें पक्षियों का चीचहाना देखते और सुनते ही बनता है। कुलवासी ऋतु का पूरा आनन्द उठा रहे हैं। औषधालय भी आज कल खाली है। किसी प्रकार का कोई रोगी नहीं। आज कल सब से अधिक आनन्द तैरने का है। गत ५ श्रावण को तैरने की परीक्षा या साम्मुख्य था। पहिली सिंहगति में अर्थात् धारा को चीर कर सीधा पार करने में ब्र० वामदेव दशम श्रेणी पहिला हुआ। यह साम्मुख्य कुल के नीचे सबसे अधिक तेज़धारा में हुआ था। दूसरी सर्पगति में अर्थात् इकट्ठे छूटकर धारा पार कर पहिले लगने में ब्र० अर्जुनदेव १४ श्रेणी पहिले रहे। तीसरी लम्बीगति में अर्थात् लगभग ४ मील ऊपर छूट कर निर्दिष्ट स्थान पर पहिले पहुंचने में ब्र० विद्यारत्न १४ श्रे पहिले रहे। इन सब में पहिले रहने वालों को ५) पारितोषक दिया गया। इसी प्रकार छोटे ब्रह्मचारियों का भी मनोरञ्जक सामुख्य हुआ। पहले साम्मुख्य में लगभग १५, २० ब्रह्मचारी मैदान में उतरे थे। डुबकी आदि का साम्मुख्य स्थगित कर दिया गया। वह फिर कभी होगा।

ब्रह्मचारियों के इस प्राकृतिक आनन्द में विघ्न डालने वाली परीक्षा भी आ-पहुंची है। अगस्त के प्रथम सप्ताह में परीक्षायें आरम्भ हो जांयगी। दूसरे सप्ताह के बाद से वार्षिक छुट्टियां शुरू होंगी। परीक्षा के कारण आज कल ब्रह्मचारी पुस्तकमय हुए परीक्षा की आराधना की तैय्यारी में लगे हुए हैं। छुट्टियों के सुख की आशा में यह क्षणिक दुःख ब्रह्मचारी सुख से ही टाल रहे हैं।

लगभग ३ सप्ताह से श्रीयुत विद्यावाचस्पति पं० इन्द्र जी वेदालंकार गुरुकुल में आगये हैं। आपने विजय सम्पादन का कार्य गुरुकुल की स्थिर सेवा के प्रतिज्ञाबंधन से बाधित हो कर छोड़ा है। यहां पर आपने सहायकमुख्याधिष्ठाता का कार्य संभाल कर श्री स्वामी जी का कार्य बहुत हलका कर दिया है। श्री० पण्डित जी का कुल में पधारना निश्चय ही आर्य्य जगत् के हर्ष और कुल की स्थिरता का कारण होगा—इस में सन्देह नहीं।

श्रीस्वामी श्रद्धानन्द जी महात्मा गांधी जी के आवश्यक तार पर ५ श्रावण को लाहौर गये हैं। यहां से आप गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ के निरीक्षण और कन्या गुरुकुल के कार्य के लिए देहली जायेंगे। आशा है आप १४ आषाढ़ तक गुरुकुल लौट आवेंगे।

अन्य सब कार्य यथाक्रम चल रहा है। परीक्षा के कारण सभा सम्मेलन आदि का समारोह बन्द होगया है। गंगा के तैरने ने खेलें भी बन्द कर दी हैं पर फिर भी कभी भी साम्मुख्य (Match) होते ही रहते हैं। अभी महाविद्यालय के ब्रह्मचारियों के परस्पर साम्मुख्य ने गत तीन चार वर्षों के पूर्व के साम्मुख्य का अपूर्व आनन्द साक्षात् करा दिया।

पिछली बार हम प्रयाग सेवा समिति के एक दल के यहां पधारने का समाचार देना भूल गए थे। सेवा समिति ने बायस्काउट्स के कुछ कार्य कर दिखाये थे। हम यह आशा करते हुए कि सेवा समिति के सभ्य इसी प्रकार यथासमय कुलवासियों पर कृपा करते रहेंगे। सेवा समिति का हार्दिक धन्यवाद करते हैं।

—:०:—

संसार समाचार पर
टिप्पणी

पहली अगस्त — का शुभ दिन जातीय जीवन में नयी शक्ति संचार करेगा। नये उत्साह और उद्योग का भारत को पाठ पढ़ावेगा। हिन्दू मुस्लिम ऐक्य की माला में दो चार मोती और जड़ जायगा। देश वासियों को अपने आत्मिकबल की शक्तिका एक बार फिर परिचय दे जायेगा। माता एक बार फिर अपनी सन्तान को उस के लिये बलिदान होने को सन्नद्ध हुये देख मुस्करा कर आशीर्वाद देगी कि "जीव शरदः शतम्।" उस दिन क्या करना है?

(१) सम्पूर्ण हड़ताल—कलाओं में कार्य करने वाले श्रमियों और अन्य सरकारी सेवा वालों को छोड़कर।

(२) उपवास २४ घण्टे का यथा सम्भव

(३) सरकारी पदों और ख़िताबों का त्याग

(४) विशेष प्रस्ताव की स्वीकृति

(५) दिन भर आत्मबल की प्राप्ति के लिये प्रार्थना और उपासना—

सारांश - इस दिन असहयोग त्याग के कार्य्य प्रारम्भ करने की शंखध्वनि होगी। सावधान!

राजकीय घोषणा और सहयोग — श्रीयुत मान्य जवाहरलाल नेहरू के मसूरी से हटाये जाने की घटना हुए अभी बहुत दिन नहीं हुये कि लोकमान्य लाला लाजपतराय जी के कसौली के होटल से हटाये जाने की घटना फिर होगई है। एक ओर राजकीय घोषणा है, सहयोग के लिए अपील है दूसरी ओर सरकार की ऐसी बेढंगी चालें हैं। लाला जी लिखते हैं कि मेरा नाम खुफिया पुलिस के ११ नम्बर में है। लाला जी कसौली स्वास्थ्यसुधार के लिये गए थे। जब कसौली में अफ़गान प्रतिनिधि भी नहीं तब न मालूम किसके लिये होटल खाली करने की आवश्यकता थी? भगवान् जाने।

चीन में विद्रोह — चीन में विद्रोह होने का समाचार मिला है। साथ ही डेलीमेल के सम्वाद के अनुसार यह भी मालूम पड़ा है कि संसार की शान्ति के ठेकेदार चीन पहुंच गये हैं। कहा जाता है कि अमेरिका अपने दूत की रक्षा के लिए १२ सौ नौ सैनिक भेजता है इटली भी कमर कस रहा है। हमारे श्रीमान् पहिले ही से उत्तरीय चीन में सन्नद्ध हैं। फ्रांस भी शायद इस सवारी की तय्यारी कर रहा होगा। भला हो यदि संसार की शान्ति के ठेकेदार पहिले अपने घरों की सुलगती आग को शान्त करलें। अमेरिका को मैक्सिको, इंग्लैण्ड को आयरलैंड भारत तथा दूसरे स्थानों और इटाली को ट्रिपोली की सफाई कर लेनी चाहिये। जिसके घर में आग लग रही है वह बाहिर भी आग ही लगाएगा। अन्धे मिलकर दूसरों को क्या राह दिखलायेंगे? यही कारण है जिससे अन्तर्जातीय संघ का संसार की शान्ति का ठेका लेने के १२ मास बाद भी आज संसार में १२ स्थानों से अधिक जगहों में सेनायें भिड़ रहीं हैं। शायद २० वीं सदी की शान्ति और सन्धि का यही अर्थ हो तो कोई आश्चर्य नहीं।

इसका रहस्य क्या है? — उधर तो फ्रांस, अमेरिका और इंग्लैण्ड रूस की बोल्शेविक सरकार से व्यापार सम्बन्धी सन्धि और कैदियों की अदला बदली कर रहे हैं। इधर उनसे ईरान में युद्ध जारी है और पोलैण्ड की भी खींचा तानी बनी हुई है। कुछ दिन पहिले जो बोल्शेविक संसार की शान्ति को हड़पने वाले कहे जाते थे और जिन से अब भी युद्ध जारी है उन्हीं से यह सन्धियां हो रही हैं। इसका रहस्य क्या है?

ऐसे सुधार क्या करेंगे? — ज्वाइन्ट कमेटी ने नयी कौन्सिलों के चुनाव सम्बन्धी घूंसखोरी को रोकने के लिए कानून बनाने का आदेश किया है। हमारे सहयोगी "विश्वमित्र" ने १८ जुलाई के अङ्क के मुख्य लेख में इस कानून की आवश्यकता बतलाई है। हमारा पूछना है कि ऐसे सुधार क्या करेंगे जिनकी हवा ही लोगों को बिगाड़ देगी और उनमें घूंसखोरी का प्रचार कर देगी। यह सुधार नहीं बिगाड़ है।

महासभा का विशेषाधिवेशन — कलकत्ता ही में होगा ऐसा निश्चय होगया है। इस अधिवेशन के लिये जबलपुर, बम्बई, लाहौर, मेरठ और विशेषतः अन्ध्र प्रान्त के बहरामपुर के निवासियों का उठ खड़ा होना जातीय जीवन का सूचक है। इसी जातीय जीवन के गांव गांव में संचार करने की आवश्यकता है। इस विशेषाधिवेशन में हन्टर कमेटी रिपोर्ट, और ख़िलाफ़त पर विचार होते हुए विशेषतः नये सुधारों के साथ सहयोग करने के विषय पर विचार होकर अगला जातीयकार्य्यक्रम नियत किया जायगा। उक्त अधिवेशन के सभापति के आसन पर देश पञ्जाबकेसरी लाला जी को देखना चाहता है।

शर्मा जी को पुरस्कार — नये सुधारों के अनुसार वायसराय की शासकसभा में दो भारतीय साहिब बढ़ाये गए हैं, जिनमें एक की नियुक्ति एवं आय तथा कृषि विभाग के कार्य संभालने का समाचार प्रगट होगया है। यह हैं श्रीयुत बी. एन. शर्मा। अमृतसर में लार्ड चेम्सफोर्ड के वापिस बुलाये जाने के प्रस्ताव का विरोध करने का यह आपको पुरस्कार मिला है।

शासक सभा में दो शर्मा हो गए, तीसरे भी साल के भीतर भीतर ही नियुक्त कर दिए जायेंगे। यह कौन होंगे? जो डायर और ओड्वायर से पूरी हमदर्दी दिखायेंगे या वे जो ख़िलाफ़त आन्दोलन में कोई कारनामा कर जायेंगे। कहीं अलाहाबाद के लीडर (?) तो इस आशा में नहीं?

डायर के लिए चन्दा — इंग्लैण्ड के मोरिंग पोस्ट ने डायर पर तरस खाकर उसके लिए चंदा इकट्ठा करने की अपील की है। यहां के काले-गोरे पत्रों ने भी अपने कालमों में इस चन्दे के लिये अपील की है। आंग्ल जाति के यश को द्युलोक और आंग्ल साम्राज्य की जड़ें पाताल में पहुंचाने के जिम्मेदार खड़े होगए हैं—अब अब किसी बात की चिन्ता नहीं रही।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिये छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 375
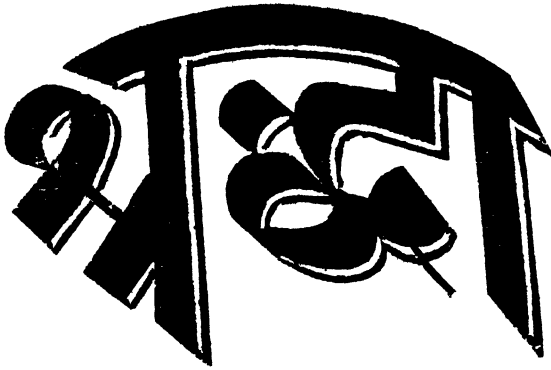
, सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है	१६ श्रावण सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० ३० जुलाई सन् १९२० ई०	संख्या १५ भाग १

हृदयोद्गार

एक राजपूतबाला की होली !!

नीकी न लागै फीकी ऐसी ये होरी—टेक

आज सखिन में बात सुनी मैं,
लैके सैन दिलीश चढ़ोरी ॥१॥
आये जगाने फिरते मुकाने,
लोने पिचकारी रंग घोरी ॥२॥
खान धरावो फाग मचावो,
करिये मतंह हि बीनाजोरी ॥३॥
छूटैं फवारे-शोणित वारे,
मलो लाल धूल की रोरी ॥४॥
झीलम झमकैं दामिनि दमकै,
घोड़े नाचैं तेगा ढें घेरे पोरी ॥५॥
बाना रगूंगी नद में मरूंगी,
रंग केसर को घोरी ॥६॥
सेज रचूंगी गोद धरूंगी,
मचे लार लपक मोरि होरी ॥७॥
जीत के आवो मान बढ़ावो,
कहा मान चलू कर जोरी ॥८॥

'मराल'

जीवन का मतलब समझना कठिन है। विधाता ने जगत् में अस्थिरता की सृष्टि क्यों की है? चपला की चमक की तरह जीवन में क्षणभर ज्योति उदित होकर फिर क्यों लीन हो जाती है? मनुष्य संसार के अनन्त कार्यों में व्यापृत रह कर कभी २ ऊपर की ओर दृष्टि डालता है। सुनील, प्रशान्त, अनन्त आकाश फैला हुआ है। नीचे शस्यश्यामला वसुन्धरा निश्चिन्त लेटी हुई है। दोनों स्थिर हैं, दोनो स्मरणातीत काल से निश्चिन्त हो कर ठहरे हुये हैं। पर इन दोनों के मध्यवर्ती मनुष्य के ही जीवन मे अस्थिरता है, चंचलता है। न जाने कब से काल का यह अविराम स्रोत प्रवाहित हुआ है। थोड़ी भी शान्ति नहीं है। इस जीवनप्रवाह में पड़ कर हम आगे ही बहते चले जाते हैं। न जाने कहां इस का अन्त होगा !!

भिक्षुः

आर्य्य-मित्र का व्यर्थ प्रयास

हिन्दी में अंग्रेजी के उचित मात्रा से अधिक प्रयोग की निन्दा के विषय में हमने गताङ्क में जो लेख लिखा था उस से असहमति प्रकट करते हुये, सहयोगी आर्य्यमित्र लिखता है कि भाषा के शब्दभण्डार को बढ़ाने के लिए अन्य भाषाओं से शब्द लेना अत्यन्त आवश्यक है। सहयोगी यदि हमारे उस लेख की अन्तिम पंक्तियों को ध्यान से पढ़ने का कष्ट उठाता तो उसे इस व्यर्थ प्रयास की आवश्यकता शायद ही होती। वे पंक्तियां ये हैं–"हम यह नहीं कहते कि अंग्रेजी से हिन्दी में कोई शब्द न लिया जावे क्योंकि उन्नति के लिए शब्द परिवर्तन आवश्यक है। परन्तु इस का यह अभिप्राय भी नहीं है कि अपनी भाषा में उचित और उत्तम शब्दों के होते हुये भी हम हिन्दी पर अंग्रेजी की कलम चढ़ावें ‥ ।" उस लेख में जिन अंग्रेजी शब्दों की सूची हमने दी थी उन के लिए हिन्दी में कोई शब्द नहीं है–यह कहना साहसमात्र ही है। यदि मान भी लें कि नहीं है तो क्यों न हम स्वयं गढ़ें? विदेशी भाषा की दासता की क्या आवश्यकता है?

——०:——

ब्रह्मचर्यसूक्तकी व्याख्या।

आचार्यो मृत्युर्वरुणः सोम ओषधयः पयः। जीमूता आसन्त्सत्वानस्तैरिदं स्व१ राभृतम्॥१४॥

("आचार्यः मृत्युः, वरुणः, सोमः, ओषधयः, पयः) आचार्य मृत्यु (रूप हो कर संसार की असारता का उपदेश देने वाला,) जल (रूप हो कर पापों से शुद्ध करने वाला,) चन्द्रमा (रूप हो कर हृदय के लिये आह्लादकारक,) औषध (रूप होकर शरीर को क्षीणता से बचाने वाला और) दूध (रूप हो कर शरीर को पुष्ट करने वाला) है। (जीमूताः सत्वानः आसन्) जीवन के नियमों का पुंज (उसके) सहनशील अनुचर है; (तैः इदम् स्वः आभृतम्) उन्हीं के द्वारा यह मोक्षसुख लाया गया है।"

आचार्य मृत्यु रूप हो कर ब्रह्मचारी को पहिला उपदेश देता है। कठोपनिषद् में यम (मृत्यु) और नचिकेता के सम्वाद द्वारा जिज्ञासु को पराविद्या का उपदेश बड़ी उत्तम विधि से दिया है। सच पूछा जाय तो कठोपनिषद् को "आचार्यः मृत्युः" इतने वाक्य की ही व्याख्या कह सकते हैं। इस रहस्य को सायणाचार्य तक ने अनुभव किया है। तभी तो उन्होंने अपने भाष्य में लिखा है—"यो मृत्युर्यमः स नचिकेतसे ब्रह्मविद्यामुपदिश्य आचार्यः संपन्नः" पहिला उपदेश आचार्य का ब्रह्मचारी के प्रति यह होता है जिस से शिष्य निर्भय हो जाय। अभिनिवेश बड़ा भारी क्लेश है। मौत का डर ही मनुष्य को तप और कर्त्तव्यपरायणता से रोकता है। उस डर को आचार्य पहिले दूर करता है। मन वाणी और कर्म से जन्म को प्रकृति से आत्मा का योग और मृत्यु को उनका परस्पर वियोग दिखलाकर पहिले शिष्य को निर्भय करता है। बुद्धदेव के जीवन में 'मार' की ओर से और ईसामसीह के जीवन में "शैतान के बहकाने" की कहानी इसी कठोपनिषद् रूपक का विस्तार है।

आचार्य जीवन और मृत्यु के रहस्यों को खोल कर शिष्य के सामने रख देता है। जो स्वयम् मौत के डर से कांपता है वह इस रहस्य की गुत्थी कैसे खोल सकेगा? इसी प्रथम लक्षण को लक्ष्य में रख कर कवि ने कहा है—"दशवर्षाणिताडयेत्।" पहिली ताड़ना से शिष्य के अन्दर असार वस्तुओं के प्रति पूरा वैराग्य उत्पन्न कर के, और अभ्यास से पुष्ट करा के आचार्य जल रूप हो कर उसके पापों को धो डालता है। उसी वाह्य बड़ी मैल को धोने के लिए महामुनि पतञ्जलि ने तप, स्वाध्याय और परमात्मा पर पूर्णविश्वास को क्रियायोग रूपी मुख्य साधन बतलाया है—"तपः स्वाध्यायेश्वर प्रणिधानानि क्रियायोगः।" (योग सूत्र।२।१।)

जब स्थूल पाप धुल गए, तब जिज्ञासु ब्रह्मचारी को सूक्ष्म मानसिक विकारों का ज्ञान होता है और उसके अन्दर अनुताप की लहर चलती है। हृदय व्याकुल हो जाता है। उस समय सच्चा आचार्य्य चन्द्रमा रूप हो कर ब्रह्मचारी की उदासीनता को आशा में बदल देता है। तब शिष्य के अन्दर आह्लाद भर जाता है। उस आह्लाद की अवस्था में शरीर की सुध नहीं रहती, अति की उस में भी संभावना है। उस विकट दशा को टालने के लिए आचार्य औषध रूप हो कर ब्रह्मचारी की वृद्धि में सहायक होता है। भोजन छादन, रहन सहन की विधि बतला कर आचार्य ब्रह्मचारी के शरीर को भी वज्र के तुल्य कर देता है। इसी वेद में अन्यत्र आया है कि जब शिष्य गुरु के समीप, समित्पाणि हो कर जावे तो पहली भिक्षा यह मांगे—"मेरा शरीर चट्टान की तरह दृढ़ हो जावे।" इस के लिए ऊपर कहा है कि दूध रूप हो कर आचार्य अपने शिष्य ब्रह्मचारी के शरीर को पुष्ट करता है। यह सब कुछ आचार्य क्यों कर सकता है! इसलिये कि जीवन के नियमों को उस ने सिद्ध कर छोड़ा है। जिस कलाधर के अन्दर से, ठीक क्रिया कर के वह ब्रह्मचारी को सुडौल शरीर इन्द्रियों, मन और आत्मा का स्वामी बना कर निकालना चाहता है उस में स्वयम् भी गुज़र कर आया है। इसी लिए तो संसार के बुद्धिमान् समझने लग गए हैं कि राजा के अयोग्य होने पर इतनी हानि की संभावना नहीं है जितनी आचार्य की अयोग्यता राष्ट्र को हानि पहुंचासकती है। 'यथा राजा तथा प्रजा' यह लोकोक्ति तो प्रसिद्ध है ही, परन्तु राजा का इतना प्रभाव प्रजा पर नहीं पड़ता जितना आचार्य का शिष्य पर पड़ता है।

जहां इस लिए आचार्य और ब्रह्मचारी आदर्श हों, वहां ही मोक्षसुख की प्राप्ति हो सकी है। वह आनन्द जिस के मध्य में दुःख काल कभी न आवे, तभी फैल सका है—जब की उत्तम आचार्य शिक्षा देने के लिए मौजूद हों।

संसार में इस समय घोर अशान्ति क्यों फैल रही है? इसलिए कि आचार्यों का अभाव। टीचर हैं, प्रोफेसर हैं, प्रिन्सिपल हैं, उपाध्याय हैं, उस्ताद, मौलवी हैं—परन्तु शिक्षा शिष्यों को उल्टा अविद्या के गढ़े में धकेल रही है। जो स्वयम् भोगी हैं वे दूसरों को त्याग कैसे सिखलाएंगे, जो स्वयम् पापों के गन्दे कीचड़ में फंसे हुए हैं वे सुकुमार शिष्यों को शुद्धि का पाठ कैसे पढ़ायेंगे। जो स्वार्थान्ध हैं वे दूसरों को निःस्वार्थ तपस्वी कैसे बनाएंगे? फ़ारसी के शायर ने आज कल के शिक्षकों के विषय में ही कहा है "ऊ ख़्वेशतन गुमस्त किरा रह बरी कुंद" वह आप गुमराह है (मार्ग भूला है तो दूसरों का पथ दर्शक कैसे बनेगा) "अन्धे नैव नीयमाना यथान्धाः" यदि अन्धा अन्धे को लेकर मार्ग पर चले तो अपने साथ उसको भी गढ़े में गिरायगा।

ईश्वरीय ज्ञान फिर से सावधान कर रहा है। क्या संसार के शिक्षक-वृन्द इस पवित्र घोषणा को सुनेंगे? परमेश्वर ऐसा करे कि जो लोग सुकुमारों के भविष्य को अपने हाथ में लेने का साहस करते हैं, वे अपनी पवित्र उत्तरदायिता को समझें। शमित्योऽम्।

श्रद्धानन्द सन्यासी

श्रद्धा

कर्मवीर कहां से उत्पन्न होंगे ?

मातृभूमि के लिए यह बड़ा विकट समय है। विकट ही नहीं आशा पूर्ण समय भी है। एक ओर शारीरिक कष्ट पर कष्ट और प्राकृतिक विपत्ति पर विपत्ति पड़ रही है दूसरी ओर तामस अवस्था से राजस अवस्था मे जाते हुए जाति के अन्दर जीवन के चिन्ह दिखाई देते हैं। जो पत्ते के खड़कने से कांपने लगते थे वे तोप के मुह में निर्भय हो कर जाने के लिये तय्यार हैं; यह परिवर्तन बड़ा है कौन इस से इन्कार कर सकता है ? इस परिवर्तन को देख कर शासक जाति की आंखें खुल रही हैं। जो कल हिन्दुस्तानियों को तुच्छ और न ध्यान देने के योग्य समझते थे वे आज उन्हीं हिंदुस्तानियों को कह रहे हैं—"हम बांई गाल पर थप्पड़ खाकर दाहिनी गाल आगे न करेंगे प्रत्युत तुम्हारी चोट के उत्तर में जबर्दस्त चोट लगावेंगे।" यदि कोई हिन्दुस्तानी दो वर्ष पहिले यह कहता कि वह भी गोरों को चोट लगा सकता है, तो सुनने वाले कहते—"मेंढक को भी जुकाम हुआ है।" कल यह दशा थी और आज यह है कि हिन्दुस्तानियों की चालों की गोरे शासक शिकायत करते हैं और धमकी देते हैं कि यदि ऐसी अवस्था रही तो वे भारत के प्रबन्ध में दखल न देंगे। गोरों का यह शोर मचाना चाहे केवल "कैंड" मात्र ही हो परन्तु ऐसे शब्द गोरों के मुह से निकलना एक आश्चर्यजनक घटना है।

कुछ ही हो यह घटना सामने है। भारतवासी अब अपने आप को गिरा हुआ नहीं समझते, अविद्या में ग्रस्त नहीं समझते, अयोग्य नहीं समझते समझते यह हैं कि आज ही वे स्वराज्य प्राप्त करने के योग्य हैं। इसका सीधा अर्थ यह है कि वे समझते हैं कि उनके अन्दर मनुष्यों पर राज्य करने की शक्ति आगई है। राज्य कौन कर सकता है ? कृष्ण भगवान् ने गीता में कहा है "नराणां च नराधिपम्" नरों के बीच में नराधिपति अर्थात् राजा हूं इस से कृष्णभगवान् का क्या मतलब है ? कृष्णोक्त गीता में निष्कामता का एक गीत गाया गया है। यदि सब से बढ़ कर कोई बात गीता से सिद्ध होती है तो वह यह कि कृष्ण भगवान् अपने आपको निष्कामता का आदर्श समझते थे; तब कृष्ण की इस उक्ति का अर्थ यह है कि राजा या शासक होने का वही मनुष्य अधिकारी है जो कि बिना फल की आकांक्षा के अपने कर्त्तव्य का पालन करे। क्या भारत निवासियों में, या उनके सुशिक्षित विभाग में, निष्काम कर्म करने का भाव जाग उठा है ?

प्रश्न स्पष्ट है परन्तु इसके उत्तर में कहा जा सकता है कि क्या हमारे वर्तमान शासक निष्कामता के स्वरूप हैं ? क्या उन्हों ने स्वार्थ को जीत लिया है ? क्या उनमें पक्षपात का लेश नहीं रहा ? दूर जाने की आवश्यकता नहीं, एक सप्ताह के समाचार पत्रों को ही उठालें तो पता लगता है कि उनके अन्दर क्या कामभाव कर रहे हैं। हथियारों का कानून बड़े बाजे गाजे से संशोधित किया गया परन्तु फल उसका यह है कि जहां गोरों और गवर्नमैन्ट के खुशामदियों को बिना रोक टोक हथियारों का लाइसेन्स मिलता है, वहां अन्य भद्र पुरुषों को बड़ा कष्ट उठाना पड़ता है। गुरुकुल कांगड़ी जंगल में है, वहां हिंसक पशुओं का भय रहता है, हथियारों का लाईसेन्स पहिले से है। ३ महीने से लाइसेन्स बदलवाने की दरख्वास्त दी हुई और हथियार दिखलाने के लिये भेजे हुए हैं. आज तक हथियार लौट कर नहीं मिले और शायद उस समय तक न मिलें जब तक कि आगामी वर्ष का लाइसेन्स बदलवाने की ज़रूरत न पड़ जावे। और गवर्नमैन्ट कह रही है कि उसने गोरे कालों के अधिकार बराबर कर दिये हैं। एक छोटीसी हंसी की बात है—एक गोरे लैफ्टीनैन्ट की तमाखू पीने की पाइप चुराई गई। अपराधी को ४ वर्ष की सख्त सजा दी गई। हाईकोर्ट में अपील हुई वहां से केवल २ बरस की सजा रह गई। किसी हिंदुस्तानी का हुक्का चुराया जाता तो शायद ३ महीने से ज्यादा कैद न होती। अभी जनरल डायर के मामले में जिस प्रकार की वक्तृताएं बड़े प्रसिद्ध पुराने अंग्रेज़ नेता दे रहे हैं वे सिद्ध कर रही है कि हमारे शासक जाति ने अपनी स्वार्थ सिद्धि को ही शासन का गुरु समझा हुआ है। एक ब्रिटिश [illegible] शैतान की तरह निहत्थे युवा बाल और बुड्ढों को भून डाले, जख्मी रात भर तड़प २ कर मरें और कोई पानी पिलाने वाला नहीं, बिना औषधि के सैकड़ों रात में मर जावें और इस एक व्यक्ति को बचाने के लिये ब्रिटेन के पुराने प्रसिद्ध लार्ड चान्सलर लौर्ड हाल्सबरी (Lord Halsbury) बूढी अवस्था में चलने की शक्ति न रखते हुए भी लड़खड़ाती टांगों को लिये हाउस औफ़ लार्ड में पहुंच जावें। समाचार देने वाला लिखता है कि इतने लार्ड किसी मामले पर बहस करने को जमा नहीं हुए और "Among the vortex ....was the Vetgon Lord Halsbury who was only liotable to hobble through the lobby" जो राजमंत्री भारत के बड़े हितैषी समझे जाते हैं उनके लेख और कर्त्तव्य भी पक्षपात से भरे हुए हैं। अभी बहुत से मुसल्मान यह देख कर कि इस राज्य के आधीन वे अपने धर्म के कर्तव्य पालन नहीं कर सकेंगे--हिजरत (देश छोड कर विदेश में जाने) के लिये तय्यार हुए। उनमें से कुछ पेशावर से आगे चले। उस ट्रेन में गोरे भी थे जिन्हों ने दो मुसल्मानी देवियों को कुदृष्टि से देखना आरम्भ किया। देवियों के रक्षक महा० हबीबुल्ला खां ने उनको स्त्रियों के कमरे में जाने से मने किया क्यों कि उन्हों ने अन्दर घुस कर स्त्रियों को तंग करना शुरू कर दिया था। स्वतः दोनों ओर निहत्थे थे इस लिये पत्थर की मारामारी होकर ट्रेन चलदी। अगले स्टेशनपर फौज ने ट्रेन को घेर लिया। हबीबुल्ला को बन्दूकें और संगीनें दिखलाकर बाहर बुलाया; बड़ी निर्दयता से उसके प्राण लिये गये। खिलाफत कमिटी पेशावर का बयान है कि उसके ६ गोलियों के ज़ख्म थे और ९ तलवारों तथा संगीनों के एक और "मुहाजिर" बाहर निकल आया था, उसको भी संगीन से घायल कर मरा हुआ समझ कर फेंक गये।

ऐसी निर्दयता क्यों हुई ? इस लिए कि हिन्दुस्तानियों का, अंग्रेज की ओर से अत्याचार होने पर भी, उसकी ओर आंख उठाकर देखने का साहस न रहे। शासकों पर विश्वास नहीं रहा, प्रिवि कौन्सिल के न्याय पर से इतबार उठ गया, फिर साधारण गोरों की तो कथा ही क्या है। यह दृष्टान्त अपने देश के सामने है। राज विद्या में यही लोग हमारे गुरु हैं इन्हीं की चालों से हम इन्हें हराना चाहते हैं। प्रश्न यह है कि छल को छल से पिशाचत्व को पिशाचत्व से अन्याय को अन्याय से क्या कभी दबाया या जीता जा सकेगा ? जब हम अपने शासकों से राजनीति का पाठ पढ़कर उसी के सहारे स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हैं तो हम भूल जाते हैं कि जिस नीति ने १५० वर्षों तक भारत से राज्य करने के पीछे भी उन्हें अकृतकार्य सिद्ध कर दिया है और इस योग्य उन्हें बना दिया है कि वे बुरे भले में विवेक ही न कर सकें और

अपने हिताहित को समझ ही न सकें तो यह नीति हमारे लिये कहां तक सुखदाई हो सकेगी ?

जिस स्वराज्य के लिए चिरकाल से उत्कृष्ट आकांक्षा लग रही थी उसके मिलने में बहुत कसर बाकी नहीं है। वह स्वराज्य इस लिये नहीं मिलेगा कि भारत निवासी अपना शासन आप करने के योग्य हो गये हैं, प्रत्युत इसलिए कि हमारी शासक जाति के साम्राज्य का बढ़ा हुआ फैलाव न जाने किस समय उन्हें एकदम से विवश करदे और वे भारत निवासियों को उन के भाग्य पर छोड़कर चल निकलें। दोनों तरह से स्वराज्य समीप है। यदि ब्रिटिश जाति की अति, पराकाष्ठा तक पहुंच गई और विकाश सिद्धान्त के अनुसार वे भारत को छोड़ने को बाधित हो गये तब भी, और यदि सम्भल कर उन्होंने अपनी नीति को बदल दिया और अपने हाथ से भारतवासियों के गले में स्वराज्य की मणिमाला पहना दी तब भी, इस का शासन भारत की प्रजा को ही करना पड़ेगा। यदि पहली अवस्था हुई तब तो वह स्वराज्य बड़ा महंगा पड़ेगा। स्वार्थी और भोगी गुरुओं के स्वार्थी तथा भोगी चेले एकदम बन्दी गृह से निकल कर चुन्धिया जावेंगे और एक दासता से निकल कर न जाने दूसरी कैसी दासता में उन्हें फंसना पड़े। यदि दूसरी अवस्था हुई तब भी जीवन के लिए कृष्ण भगवान् के वाक्य पर अमल करना होगा। यदि बहुत से कर्मवीर कर्मफल की आशा को छोड़कर निष्कामकर्मोपासक विद्यमान हुए तब तो बेड़ा पार हो जावेगा नहीं तो नैय्या मझधार में डावांडोल होगी।

क्या कोई ऐसा कलाघर है जिस में भय और काम के दोषों से मुक्त होकर पवित्रात्मा का काम करने के लिए खड़े होसकें। जाति वही बनती है जो कुछ कि उसे उसके शिक्षणालय बनावें। जब आज कल के शिक्षणालय भोग और स्वार्थ की ही शिक्षा देते हैं और निर्बल को पीस डालने की फिलासफी की सचाई का ही प्रचार करते हैं तो इन शिक्षणालयों से निस्वार्थ तपस्वी सभ्य कैसे निकल सकते ? और बिना तप के कोई भी मनुष्य कर्मवीर नहीं बन सकता। भारत वर्ष में पुराने राजाओं की कहानियां केवल कल्पना मात्र नहीं हैं, उनको केवल उपन्यास कह कर टाला नहीं जासकता। राजा अश्वपति की इस प्रतिज्ञा पर कि उस के राज्य में कोई भी कृपण अधर्मी, व्यभिचारी, इत्यादि नहीं है, हंसना मैं जनता हूं जब कि उन्हीं उपनिषदों में (जहां यह कहानी लिखी है) ब्रह्मचर्याश्रमों और गुरुकुलों के आदर्श का ही केवल वर्णन नहीं, अपितु गुरु और शिष्यों का जीवित सम्बन्ध भी दिखलाया गया है अयोध्या का वर्णन करते हुए बाल्मीकि ने वहां की प्रजा को सर्वगुणसम्पन्न बतलाने के साथ ही स्पष्ट लिख दिया है कि उस सारे राज्य में कोई भी व्यक्ति विद्या शून्य नहीं था। वही पुराना आदर्श जब तक सामने रख कर शिक्षा का काम फिर से आरम्भ न किया जायगा तब तक कर्मवीर मनुष्यों के दर्शन दुर्लभ ही रहेंगे।

गत चार वर्षों से मैं पश्चिमीय राज प्रबन्ध प्रणाली के विरुद्ध आवाज उठाते हुए बृटिश पार्लिमेन्ट के प्रतिनिधि सचिवों का दृष्टान्त पेश किया करता था, जहां एक कानून बनाकर वे "मारकोनी कम्पनी" के हिस्सों का बाजार मंदा करा देते और अपने एजण्टों द्वारा दूसरों के हिस्से खरीदवाते, और फिर दूसरा कानून पास कर के उन के दाम तेज कराके वही हिस्से बिकवा करोड़ों के वारे न्यारे करते। मैं कहा करता था कि राज मंत्री वसिष्ठ से त्यागी होने चाहिये जिनके सामने कानून बनाते हुए, अपना कोई स्वार्थ न हो। मेरे इस कथन की पुष्टि लन्डन के अखबार 'न्यू-विट्नेस' New Witness से होती है। वह बृटिश पार्लिमेंट को विचित्र प्रशंसापत्र देता है बृटिश गवर्नमेंट के एक सचिव (मिस्टर चर्चिल) ने एक लेख में शिकायत की थी कि आज कल की जनता बृटिश पार्लियामेंट से किसी भी, एक नाशक शक्ति को अच्छा समझती है, कुछ युक्तियां बृटिश पार्लियामेंट की स्थिरता की रक्षा के लिए दीं। इनके उत्तर में उन युक्तियों को मानते हुए "न्यूविट्नेस" का सम्पादक इस बात का उत्तर देता है कि 'प्रतिनिधि राज्य की आवश्यकता स्पष्ट होते हुए भी क्यों लोग उसके विरुद्ध होगए हैं, वह लिखता है—"वह विचार वा कल्पना यह है कि यह वस्तु (पार्लिमेन्ट) एक धोखा है। इस लिए नहीं कि राजनैतिक लोग यह करते हैं वा वह करते हैं, प्रत्युत इसलिए कि जनता समझती है कि उन (राजनैतिकों) से रिशवत देकर कुछ भी कराया जासकता है। यह नहीं है कि वे जातीय आवश्यकताओं को सर्वथा भूल जाते हैं, परन्तु इस लिए कि यह विश्वास किया जाता है कि *अपने स्वार्थ का उन्हें अधिक ध्यान है*।..........यह हम न जानें कि वह अवश्य धर्मात्मा होंगे, परन्तु हम यह जानते हैं कि आजकल की पार्लिमेण्ट के मेम्बर इमानदार नहीं हैं।" फिर "मार्कोनी कम्पनी" के हिस्सों की मिस्टर चर्चिल को याद दिलाकर सम्पादक लिखता है—"उस समय से यह निश्चय हो गया है और शायद अन्तिम निश्चय होगया है कि ऐसी समस्याओं से अपनी राजनैतिक उन्नति को नहीं रोकना चाहिए।.........पार्लिमेंट का हाल यह है कि यह पार्लिमेन्ट नहीं है। यह एक प्रकार की धनाढ्य सभा है.........जो कि न धनाढ्यों की ओर नहीं प्रजा की प्रतिनिधि कही जासकती है ...."

यह है पार्लियामेन्ट जो हम क्रमशः स्वराज्य देने लगी है। यदि इस आदर्श गुरु के लिये पीछे चल कर स्वराज्य लेना है तो वह चेलों के लिये कैसे सुखदाई होसकेगा। यदि पूरे बृटिश पार्लियामेन्ट के नियम आज यहां लागू करदें तो उस से क्या लाभ होगा जब यहां की पार्लिमेंट के मेम्बर उन से भी बढ़ कर स्वार्थी होजायंगे। यह लोकोक्ति अधर्म पर ही घटती है कि "गुरु गुड़ रहे और चेला शकर होगए"। माडरेट और एक्स्ट्रीमिस्ट, कांग्रेसी और दो मरूली, वेसन्टी और तिलकी सब उसी एक पश्चिमीय रंग में रंगे जाकर फाग खेलने की तय्यारी कर रहे हैं।

इस विकट समय की समस्या कौन हल करेगा ? मनुष्य और हम कागज, कलम और स्याही के पीछे भाग रहे हैं। अभी लार्डों में जो डायर पर बहस हुई उसके विषय में एक महाशय ने डाक्टर रवीन्द्रनाथ ठाकुर की सम्मति पूछी। उन्होंने उत्तर दिया—" इस से हमें प्रत्येक भीख के लिए उन पर निर्भर करने की असमर्थता और अपमान को अनुभव करना चाहिये जो हमें तुच्छ समझते हैं। हम अपनी वर्तमान गिरावट की गहराई से तभी उठ सके हैं जब अपने अंदर की निर्बलताओं के स्रोत को अलग करें और अपनी समाज, शिक्षा और सम्पत्ति सम्बन्धी शक्तियों को संगठन में लायें।.........अधीनता और भिखारीपन के भावों से युक्त होकर, भय को दूर भगाकर और व्यर्थ तीव्र क्रोध और ईर्षा से सुरक्षित होकर ही अपनी योग्य महान ताकत को पहुंच सके हैं।"

दार्शनिक तथा कविता पूर्ण कल्पनाओं के सुंदर वस्त्रों से अलग करके यदि ऊपर की दोनों सम्मतियों पर विचार करें तो परिणाम एक ही निकालता है। स्वार्थ और भोग की भ्रान्ति मे ग्रस्त वर्तमान सभ्य राष्ट्र और राज्य और उनके नेता भारत वर्ष के लिए पथदर्शक का काम नहीं दे सकते। लोभी गुरु का लालची चेला भवसागर से पार नहीं हो सकता। यह तो सम्भव है कि दोनों एक दूसरे को ले डूबें; यह सम्भव नहीं है कि गुरु को गहरी भंवर में धकेल कर चेला पार हो जाय। कवि ने ठीक कहा है—

लोभी गुरु लालची चेला
दोनों खेलें दांव।
भवसागर में डूबते।
बैठ पथर की नांव॥

संसार की वर्तमान घटनाएं पुकार पुकार कर हम सावधान कर रही हैं। हमें, कर्म फल का त्याग करके कर्तव्य पालन करने वाले कर्मवीरों की आवश्यकता है। परन्तु भारतनिवासी इस समय अपने मुख्य कर्तव्य को भूले हुए असार संसार को न्यौछावर कर रहे हैं। स्वार्थी, भयभीत दासों को छूमंतर से निर्भय कर्मवीर नहीं बनाया जासकता, इस के लिये "वैराग्य" और "अभ्यास" दोनों की आवश्यकता है।

क्या भारतवर्ष में गुरुकुलों से भिन्न कोई शिक्षणालय है जहां त्याग का क्रियात्मक पाठ पढ़ाया जाता है? क्या इनके अतिरिक्त कोई संस्था है जहां भारत संतान को तपस्वी बनाने का यत्न किया जाता है? ऐसी संस्था के मार्ग में जो आर्थिक तथा अन्य रुकावटें हैं उन्हें दूर करना भारतसंतान का मुख्य कर्तव्य है। मेरा नम्र परन्तु दृढ़ निवेदन यह है कि यदि मेरे गनाङ्क के लेखानुसार देश के हितचिन्तकों की ओर से आर्थिक सहायता (माली मदद) मिलजावे तो एक व्यक्ति अपना सारा बल लगा कर, इस अंश में, जो कुछ भी करसकता है उस में कमी न रहेगी।

यदि गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी तथा उसकी वर्तमान शाखाओं के लिए धन की चिन्ता न रहे और यदि देश के धार्मिक दानी थोड़ा सा भी ध्यान दें दो इस चिन्ता से मैं एक वर्ष में मुक्त हो सकता हूं—तब मेरा संकल्प है कि जिन्हें अछूत बतलाकर जाति का चौथा अंग काटदिया गया है उन की शिक्षा का काम हाथ में लिया जावे और उन्हें भारतमाता का शत्रु बनाने का जो यत्न इंग्लैंड और अमेरिका की ओर से शुरू हो गया है उस यत्न का मुकाबला कर के सचमुच दिखला दिया जावे कि माता की ६० करोड़ से एक भी कम मुजा नहीं है।

श्रद्धानन्द संन्यासी

—:o:—

पुस्तक—समालोचना

पुष्प—लता

लेखक—श्रीयुत—सुदर्शन। प्रकाशक—नाथूराम प्रेमी। हिन्दी ग्रन्थरत्नाकर कार्यालय बम्बई। मूल्य १।)

इस पुस्तक में लेखक ने अपनी दस मौलिक और मनोरञ्जक गल्पों का संग्रह किया है। प्रायः सभी गल्पें उत्तम तथा शिक्षा प्रद हैं। कइयों की रचनाविधि (plot) भी बहुत प्रशंसनीय है। लेखक ने कुछ एक मानवीय—मानसिक विकारों के रहस्यों को थोड़े में (एक वाक्य में) अच्छी तरह खोल दिया है।

उदाहरणार्थ

(१) **"जो कार्य वाणी नहीं कर सकती उसे दृष्टि कर देती है। पृ० (४)**

(२) **प्रेम सब कुछ सह लेता है किन्तु उपेक्षा नहीं सह सकता (पृ० १६२**

(३) **"लोग क्या कहेंगे। यह लोग क्या कहेंगे" का भय बहुत कुछ करवा देता है:—(पृष्ठ १५५) इत्यादि।**

भाषा सुन्दर, मधुर और काकूमयी है। निदर्शन मात्र के लिये यहां हम एक दो उदाहरण देते हैं:—

(१) **"सुन्दरता की कृत्रिम मूर्ति अपनी आदू भरी चितवन के साथ (सज्जित) हो कर रङ्गभूमि (Stage) पर आती है—तो प्रेमियों के लिये प्रलय हो जाती है। सुन्दरता चलती है तो साथ ही देखनेवाली आंखें सुनने वाले कान और अनुभाव करने वाले हृदय चलते हैं। माधुरी छवि के समुद्र में दर्शक निमग्न हो जाते हैं। देखने वाला अपने आप को भूल जाता है।" पृ०(१५२)**

(२) **"संसार में ऐसे मनुष्यों की न्यूनता नहीं जो फूकें मार कर आग जलाते परन्तु जब उन में से चिनगारियां उठने लगजाती हैं तो दूर हट जाते हैं।" "शिक्षा" शीर्षक वाली गल्प का अन्तिम भाग बड़ी रसिकता से लिखा गया है लेखक अपने प्रथम प्रयत्न में ही बहुत कुछ सफल हुये हैं। हम समझते हैं कि अगर काल्पनिक गल्पों की अपेक्षा ऐतिहासिक उत्तम घटनाओं को कल्पना मिश्रित कर लेखक गल्प लिखते तो बहुत उत्तम होता। हम हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर के सञ्चालकों को ऐसी मौलिक पुस्तकें निकालने के लिये हार्दिक धन्यवाद देते हैं।**

साम्यवादी	यह प्रसन्नता का अवसर है कि हिन्दी

में अब कई दैनिक पत्र निकलने लगे हैं। इस मामले में कलकत्ता ही अगुआ है। विश्वमित्र और भारतमित्र के अतिरिक्त अब एक और नया दैनिक पत्र "*साम्यवादी*" पिछले कुछ दिनों से, निकलने लगा है। पत्र में ताजे समाचारों का संग्रह उत्तम होने के अतिरिक्त टिप्पणियां भी मार्मिक होती हैं। यह पत्र व्यापारियों के भी बड़े काम का है क्यों कि इस में ताज़े देशी—विदेशी व्यापार—समाचार होते हैं। हिन्दी प्रेमियों को प्रकाशकों का उत्साह बढ़ाना चाहिये। वार्षिक मूल्य १२) मिलने का पता १३-नारायण प्रसादबाबू कलकत्ता

———

श्री शारदा	साहित्य शास्त्री नर्मदाप्रसाद मिश्र

बी.ए. विशारद के सम्पादकत्व में शारदा भवन से प्रकाशित होनेवाली इस मासिक पत्रिका का हम हार्दिक स्वागत करते हैं। मुख्य पृष्ठ पर दो देवियों के सुन्दर चित्र के अतिरिक्त बीच में और भी कई रंगीन चित्र हैं। लेख उत्तम, सामयिक और खोजपूर्ण तथा कई मौलिक भी हैं। कवितायें भी मनोहर और भावमयी हैं। वार्षिक मूल्य ५) 'मिलने का पता' दीक्षितपुरा (जबलपुर) है।

—:—

विचार तरंग

"थोड़ासा"

लेखक श्रीयुत "शर्मन्"

गतांक से आगे

'मैंने शराब तो बहुत दिनों से छोड़ दी है। किन्तु आज यह सामने दूकान आगयी है, लाऊं तो थोड़ीसी- केवल एक छोटा सा प्याला..........।' एक प्याला पी लिया। 'दुकानवाले ले! फिर पांच आने की और देदे'। पांच आने की भी पी डाली। 'अच्छा फिर अब पीनी है तो छक कर क्यों न पीलें'। जेब में अब टटोलने से कुछ पूंजी सवाचार रुपये के पैसे निकले वे सब दुकानदार के हवाले कर दिये गये और कई बोतलें खाली कर के चल दिये।

'मुझे पेचिश हो रही है इस लिये यह इमली का पानी और चाट खानी तो नहीं चाहिये किन्तु थोड़ासा केवल पानी २ चावलों में डाललेता हूं'। थोड़ी देर में पांच चार चम्मच और डाल लिये गये। और कुछ देर में 'अब मैं चीखूं या मरूं इसे तो खाऊंगा ही' ऐसा कह कर सारी कूंडी उठा कर पी डाली गयी।

रात दो बजे घड़ी का अलारम बज रहा है क्यों कि बाबू साहब ने ४ बजे की गाड़ी से कहीं जाना है और २ घन्टे तय्यारी में लगेंगे। उठकर'ऐं दो तो बज गये। किन्तु अभी देर है थोड़ासा और सोलेवें। १२ मिनिट बाद उठ जायेंगे'। तीन बजे के लगभग फिर आंख खुली 'गाड़ी तो ४ बजे आती है और ४½ पर छूटती है थोड़ासा सोलें। जल्दी से समान बांध लेंगें'।...वे तो पौने चार बज गये अब उठकर जल्दी करनी चाहिये। किंतु नींद क्यों खराब करें। अब दिन की गाड़ी से जायेंगे'। रोजके उठने के समय परभी जब कि ६½ बजे सूरज की धूप आंखों पर पड़ने लगी तबभी 'आज रात विघ्न होता रहा है' कह करवट बदल कर रहे, और ठीक आठ बजे उठने वाले बाबू साहेब चारपाई से आंख मलते हुवे उतर आये।

'यह बड़ा दुर्जन है। गुरुजी ने इस से मिलने से रोका था। किन्तु कभी २ थोड़ीसी बात चीत करलेने में क्या हर्ज है'। कुछ दिनों बाद दिल कहता है कि जब मित्रता हो की है तो इन की सभी बातों में थोड़ा थोड़ा सम्मिलित होना तो चाहिये, नहीं तो दोस्ती कैसी'। अब उन की सभी बातों में सम्मिलित होने लगे। अपने यार की मैंने सभी इच्छायें पूरी की हैं तो एक यह क्यों रह जाय। अच्छा कल भाई को विष खिला ही दूंगा। यह आंखों का कांटा दूर हो जाय तभी ठीक है। पकड़े जाने पर कुछ होगा फिर देखा जायगा'। अगले दिन अपने सहोदर भाई को भोजन में संखिया खिला दी गई।

× × × ×

हर एक काम आदि में 'थोड़ासा' से ही प्रारम्भ होता है। प्रारम्भ में थोड़ीसी उंगली पकड़ते पकड़ते ही पहुंचा पकड़ा जाता है और मनुष्य सर्वथा वशंगत हो जाता है।

वह आग जिस में कि सारा नगर जल गया प्रारंभ में थोड़ीसी केवल एक चिंगारी के रूप में थी।

वह व्रण जिस का कि विष सारे शरीर में फैल कर प्राण चले गये प्रारम्भ में थोड़ासा-एक जरासी फुंसी के रूप में था। वह आपस की लड़ाई जिसके महायुद्ध में असंख्यों प्राणी नष्ट हुवे और सम्पूर्ण संसार को एक धक्का पहुंचा, प्रारम्भ में थोड़ीसी केवल एक कटु वचन के रूप में पैदा हुई थी।

उस वीर्य नाश करने वाले में जो कि आज गले सड़े शरीर में पड़ा हुवा भयंकर आंखें दिखा रहा है और जिसे कि कुछ दिनों की दुनिया में नैराश्यके सिवाय आज कुछ दिखाई नहीं देता प्रारम्भ में केवल एक बार थोड़ेसे कामविचार के रूप में उधर मुंह उठाया था।

वह धोखा देने वाला जो कि आज संसार में किसी पर विश्वास नहीं कर सकता और जिसके लिये झूठ बोलना सच की तरह बिलकुल साधारण होगया है प्रारम्भ में केवल एक बार ही थोड़ासा झूठ बोल कर दूसरे को धोखा दियाथा। वह विषूचिकारोग जिस में कि बड़ा हृष्ट पुष्ट शरीर दो घन्टों में छटपटा-कर ठंडा हो गया प्रारम्भ में थोड़ासा दिखाई भी न देने वाले क्षुद्र से क्षुद्र कीटाणु के रूप में था।

वह पापवृक्ष जो कि आज बड़े ऊंचे ऊंचे और दूर २ तक फैली हुई विषाक्त शाखाओं में दृढ़ खड़ा है प्रारंभ में थोड़ासा केवल एक नन्हे से बीज के रूप में था।

× × × ×

छोटे से छेद की उपेक्षा करने वाले को क्या मालूम था कि इस 'थोड़ेसे' संपूर्ण जहाज में पानी भर जायगा और इसका सामान तथा ये हजारों यात्री देखते २ समुद्रगर्भ में ग़र्क हो जायेंगे।

थोड़ीसी (केवल पांच मिनिट की) देर करने वाले सेनापतिको क्या मालूम था कि इस से उसके महाराज की सदा के लिये पराजय हो जायगी और सारे संसार का इतिहास बदल जायगा।

माता को क्या मालूम था कि आज थोड़ीसी केवल एकपुस्तक की पाठशाला से चोरी कर लाने वाला उसका पूत एक दिन चोरी में फांसी चढ़ेगा और उसका कान भी काट लेजायगा।

अनजान को क्या मालूम था कि थोड़ीसी केवल रत्ती भर इस चीज़ के डल जाने से सारा कुंवा विषैला हो जायगा और जो इसका थोड़ासा भी पानी पीवेगा वह यमालय में ही पहुंच कर विश्रामलेगा।

ऊंची पहाड़ी पर सुख से खड़े हुवे प्राणी को क्या मालूम था कि पास की बेरों से लदी झाड़ी पर मारने के लिये थोड़ासा केवल एक पग नीचे की तरफ उठाने में वह खाई में जा पड़ेगा और तब इन्द्रियां चकनाचूर हो जायेंगी।

× × × ×

(शेषफिर)

आर्यसमाज में एकता की लहर

आर्यसमाज के सभी दलों की ओर से निकलने वाले मुखपत्रों में एकता की चर्चा चल पड़ी है। इस एकता की लहर ने प्राय प्रत्येक ही आर्यसमाजी के दिल में नई आशा का संचार कर दिया है।

एकता के इस युग में समाज में भी इस लहर का चलना सहज और स्वाभाविक ही है। पर इस लहर के साथ जो नई लहर चल पड़ी है वह निश्चय ही समाज के लिये घातक और इस लहर के प्रभाव को भी मारने वाली और बड़ी खतरनाक है। वह लहर यह है कि किन्हीं खास नियमों को आज कल के लिये ढीला कर दिया जाय।

आर्यसमाज के "आचरण की मर्यादा" के शीर्षक में सद्धर्मप्रचारक के सम्पादक महोदय भी इसी सम्मति के दीखते हैं और उन्होंने गताङ्क में इस का समर्थन भी जोर शोर से किया है। पहली लहर जितनी आशा जनक है दूसरी लहर उतनी ही निराशामय है। जहां पहली लहर से समाज की उन्नति झलकती है वहां दूसरी ओर से समाज की गिरावट निश्चित है। यदि पहली लहर ने समाज सगठन को दृढ़ कर दिया तब दूसरी निस्सन्देह उस में ऐसे घुन लगा देगी जिसका प्रतिकार असम्भव होगा।

दूसरी लहर का यह परिणाम है कि आर्यसमाज देहली ने एक ऐसा प्रस्ताव पास कर डाला है जिसका मतलब बार बार सोचने पर भी समझ नहीं आता। भाई, सद्धर्मप्रचारक के सम्पादक महोदय इसे अनुकरणीय प्रस्ताव कहते हैं पर हमें यह प्रस्ताव सामाजिक जीवन के लिये वैसा ही घातक प्रतीत होता है जैसे कि भारतीयों के राष्ट्रीय अधिकारों के लिये रौलट कानून घातक है। प्रस्ताव का यह आशय है कि "जो अन्तरङ्ग सभा का सभासद् प्रतिदिन सन्ध्या तथा स्वाध्याय न करेगा और मादक द्रव्य तथा मांस का सेवन और व्यभिचार करेगा तथा रिश्वत लेगा वह ठीक निश्चय होजाने पर तुरन्त अन्तरङ्ग सभा से निकाल दिया जायगा और छ मास के भीतर वह अपना आचरण ठीक न करेगा तो वह आर्यसभासद् भी न रहकर केवल आर्य रहेगा।" प्रस्ताव का पहिला रूप निस्सन्देह अनुकरणीय है परन्तु पिछला रूप बड़ा भयकर है। हमें आश्चर्य है उन लोगो पर, जिन्होंने यह प्रस्ताव पास किया है और भी अधिक आश्चर्य उन पर है जिन्होंने इस प्रस्ताव को तय्यार किया होगा। अस्तु—

हमारी सम्मति में प्रत्येक आर्यसमाजी के लिए आर्य होना आवश्यक है और आर्य वही होसकता है जो सन्ध्या तथा स्वाध्याय करता हो, मादक द्रव्य मांस का सेवन और व्यभिचार न करता हो, तथा रिश्वत न लेता हो, पर उक्त प्रस्ताव से देहली आर्यसमाज उन्हें भी आर्य कहने को तय्यार है जो इन दोषो से युक्त हों। आशा है कि देहली के समाजी भाई हमारे इस निर्देश की ओर ध्यान देकर अपने प्रस्ताव का पुन संशोधन करेंगे। यह प्रस्ताव दूसरी लहर का ही परिणाम है। शायद यह प्रस्ताव इस लिए भी किया गया हो कि आगामी मनुष्य गणना में आर्यों के खानो में भारी भारी सख्याये लिखी हुई हों। हमारा पूरा विश्वास है कि यह दूसरी लहर और मनुष्य गणना का यह खाना समाज को खाजायगा। यह इस लिए कि इन दोनो बातों ने समाज को सचाई से गिराना शुरु कर दिया है। जब श्री १०८ महर्षि दयानन्द सरस्वती सब सचाइयों का निर्णय कर गये हैं तब हमें समझ नहीं आता कि इन सचाइयों में अब समझौता करने की क्या आवश्यकता है?

यह समझौता और सचाई से गिरावट दूसरी लहर से उत्पन्न हुए कीटाणु हैं जो समाज में अनेक ऐसे रोगों को पैदा कर देंगे जिन से सामाजिक जीवन में एकता से होने वाली भलाई भी बुराई में परिणित होजायगी।

एकता का होना बड़ा सुखप्रद है पर सचाई में इस प्रकार का समझौता होना बड़ा दुःखदाई है। हम समझते हैं कि समाज के लिए यह परीक्षा का समय है। परीक्षा सचाई पर स्थिर रहने की ही है। ऐसा समय प्राय प्रत्येक समाज के जीवन में आता है। यदि समाज इस परीक्षा में पास होगा और यह भयानक लहर समाज को डांवाडोल न कर सकी तो निश्चय ही समाज दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करता जायगा। समाज के जीवन की दृढ़ता सचाई पर दृढ़ रहने में ही है न कि सचाई से नीचे गिर कर फिर ऊपर चढ़ने का यत्न करने पर। थोड़ासा भी सचाई से गिरना समाज को सदा के लिए रसातल में गिरादेगा। हमें आशा है कि एकता की नई लहर के प्रलोभन या मनुष्य गणना के अलग खाने का लोभ समाज को सचाई से थोड़ा सा भी न खिसकने देगा क्यों कि इसी में समाज का श्रेय और कल्याण है।

सत्यदेव विद्यालंकार

चिट्ठी—पत्री,

१—गंगागिरी सन्यासी मुख्याधिष्ठाता संस्कृत पाठशाला रायकोट लिखते हैं कि स्थानीय प० गोपीराम जी के सुपुत्र का मुण्डन संस्कार १८।७।२० को उक्त पाठशाला के मुख्याध्यापक जी ने कराया। स्टेशन मास्टर जी ने २००) स्थानीय पाठशाला को और ४०) दूसरे स्थानों को दिये। धन्यवाद।

२ मन्त्री मारवाड़ी अग्रवाल महासभा बम्बई अपने भाइयो और अपनी सभाओं को सूचित करते है कि सब प्रतिनिधियों को महासभा की रिपोर्ट भेज दी गई हैं। नियम छपरहे हैं, जो शीघ्र ही भेजदिये जायेंगे। जिन्हें यह न पहुचे वे कार्यालय से अवश्य ही मगालें।

दूसरी सूचना आप जातीयफण्ड के विषय में देते हैं कि जाति में शिक्षा प्रचार, विधवाओं और अनाथों की सहायता आदि के लिये एक बड़ा फण्ड चाहिये। फण्ड के लिये ६,५७३०१) की प्रतिज्ञा होचुकी हैं।

फण्ड के लिये एक ट्रस्ट की योग्यता होगी। इस विषय में वे जातीय भाइयो की सम्मति चाहते हैं।

३ प्रोफेसर नन्दकिशोर जी विद्यालङ्कार रामजसकालेज देहली लिखते हैं कि मैं अमेरिका अभी न जाऊंगा। मेरे इष्टमित्रों में कहीं से अफवाह फैल गई है और मुझे बराबर चिट्ठियां आरही हैं। सब मित्र अपनी भूल सुधार लें।

संसार समाचार पर

टिप्पणी

पहली अगस्त के शुभ दिन तक शायद यह 'श्रद्धा' पाठकों के हाथ पहुंच जायगी। इस दिन प्रत्येक जातीयाभिमानी को "श्रद्धा" की विशेषतया आराधना कर "श्रद्धा के व्रत" का पालन करना है। देश और जाति के प्रति श्रद्धा के, तथा देश बन्धुओं और जाति भाइयों के प्रति प्रेम के सम्बन्ध का दृढ़ करना है। अपने आत्मिक बल की परीक्षा देनी है। निश्चय ही यह परीक्षा का दिन है। जो इस दिन परीक्षा में फेल होगा उसे समझ लेना होगा कि देश के लिये उसका जीना व्यर्थ है।

महात्मा गांधी जी ने हाल ही के नवजीवन में लिखा है कि "वर्तमान सरकार के अन्याय हीठपन और पापों का पूरा खुलासा करना असम्भव है। एक झूठ के लिये दूसरा झूठ बोला जाता है। बहुतसा कार्य केवल धमकी या भय से ही कराया जाता है। जातीय उत्पात कदापि सम्भव नहीं यदि जाति इन सब बातों को चुपके से सहती जायगी। यदि भूखा आदमी भूख मिटाने का यत्न न करे और यत्न में मरने तक को तय्यार न होवे तो वह अपनी भूख की भी ढोंढी पीटता फिरे कोई उसकी भूख पर विश्वास न करेगा।" आगे आपने इस समय के लिये औषधि ढूंढ निकालने के लिये कहा है और उचित औषध नयी कौंसिलों का बायकाट ही बताया है। आप का कथन है कि ओड़ायर, स्मिथ और श्रीराम से दुष्ट व्यक्तियों का बहिष्कार यदि कठिन है तो उस सरकार का बायकाट सहज ही है जो इन्हें उभारती, और अपनी प्रतिज्ञायें तोड़ती रहती है। अत्याचारी राजाओं को पीड़ित प्रजायें छोड़ती ही रहती हैं। प्रजा का यह अधिकार है। भारत में भी लोग निराश होकर राज्य को लात मारते ही रहे हैं।"

यद्यपि आपने यह गुजरातियों के लिये लिखा है पर दूसरे प्रान्तवासियों को भी इस पर विचार कर लेना चाहिये।

मैम्बरी के बरसाती कीड़े हमें एक पंजाबी भाई का पत्र मिला है जिस में यह एक सम्वाद है कि "यद्यपि इधर वर्षा नहीं हुई परन्तु फिर भी बरसाती जन्तुओं ने नाक में दम कर रक्खा है। यह बरसाती जन्तु मेंढक मच्छर, बिच्छू, सांप आदि नहीं यह उनसे भी अधिक शोर मचाने वाले, कान के पास आकर मधुर स्वर अलाप कर मोहित कर तुरन्त काट खाने वाले, चालाक और खूब सूरत, परन्तु विषैले जन्तु हैं। बरसात अभी नहीं आई परन्तु यह आपहुंचे हैं। सम्पादक महोदय! यह जन्तु मैम्बरी के बरसाती जन्तु हैं जिनसे संभलने की बड़ी आवश्यकता है। अस्तु आपतो गंगा की परिखा से घिरे कुल भूमि के दुर्ग में आनन्द कर रहे हैं वहां वर्षा का आनन्द लेते हुए भी आप इन जन्तुओं से तंग न आते होंगे।" हमने उन्हें लिख दिया है कि "श्रीयुत लाला जी इन्हीं के लिये खड़े हुये हैं, और महात्मा गान्धी जी भी वहां पहुंच चुके हैं।" यह तो पंजाबी भाई से बात चीत हुई पर यह अवस्था आज सारे देशवासियों की होगी। बड़ा भला होगा यदि देशवासी इन जन्तुओं की भली प्रकार परीक्षा कर के ही इन से नाता जोड़ेंगे। नहीं तो, नाता न जोड़ने का उपाय तो सहज है।

मि० मान्टेगू की बड़ी बात मि० मान्टेगू की महात्मा गान्धी जी के विषय की व्याख्या के पूरे शब्द अब भारत सरकार ने प्रकाशित किये हैं। यह प्रायः वही हैं जो कि रूटर ने तार पर चढ़ा कर यहां पहुंचाये थे। उस में एक बात यह है कि "अनेक मनुष्य जिनका आचार बड़ा उच्च होता है पर वे राजनैतिक दृष्टि से बड़े शरारती या धूर्त होते हैं।" वस्तुतः आज कल "धूर्त वही है जो आचारहीन नहीं हैं।" एक तो मि० मांटेगू की बड़ी बात है दूसरी बड़ी बात अभी आपने कही है कि "महात्मा गान्धी का असहयोग आन्दोलन कभी सफल न होगा। असहयोग और युवराज के स्वागत के बहिष्कार को भी जनता न मानेगी"। अस्तु समय स्वयं दिखायेगा कि क्या होगा!

हिन्दू मुस्लिम ऐक्य इलाहाबाद के मुख्य पत्र ने कहा है कि सीमा प्रान्त में जो वहां के मुसल्मान हिन्दुओं को लूटते हैं यह केवल धन के लिए ही करते हैं उस में धर्म का मतभेद कारण नहीं है। और उन लोगों की इस लूट से हिन्दू मुस्लिम ऐक्य में भेद नहीं आना चाहिए। यदि वस्तुतः ही हिन्दू मुस्लिम ऐक्य को दृढ़ करना है तो इस ऐक्य की पहुंच उन गांवों में भी होनी चाहिए। आशा है हिन्दू मुस्लिम नेता निश्चय ही इस ओर ध्यान देंगे।

श्रद्धा के नियम

भारत वर्ष के लिए एक वर्ष के ३॥)
६ मास के २) ६ मास से कम के लिए भेजने का नियम नहीं—भारत भिन्न देशों से एक वर्ष के लिए— ४॥)

प्रबन्धकर्त्ता श्रद्धा
P. O. गुरुकुल कांगड़ी (ज़िला बिजनौर)

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिये छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 875

राजनीति का सूर्य्यास्त

तिलक-अंक

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निमुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० मं० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | २३ श्रावण सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० ६ अगस्त सन् १९२० ई० | संख्या १९ भाग १

राष्ट्र-सूत्रधार राजनैतिक-सन्यासी लोकमान्य तिलक की यादगार !!

जिसके महत्त्व को दिखाने के लिए हम किसी भी विशेषण की आवश्यकता नहीं समझते,

जो अपने आप में एक संस्था स्वरूप था;

जिसके व्यक्तित्व के चारों ओर ऐसी बलवती शक्तियां इकट्ठी होगई थीं कि जिससे नौकरशाही थरथर कांपती थी;

जो वर्तमान जागृति का पिता, वर्तमान राजनीति का एक मात्र आधार और "स्वराज्य-मय" था—

उस महापुरुष के लिए सबसे उत्तम यादगार क्या है ?

यही कि भारत के प्रत्येक ज़िले और ग्राम में "जातीय-राजनैतिक-विद्यालय" स्थापित किये जावें जिनमें अन्य जातीय शिक्षा के साथ २ उन राजनैतिक सिद्धान्तों की विशेष रूप से शिक्षा दी जावे जिनका आजन्म प्रचारक यह राजनैतिक सन्यासी—रहा है।

इन सब विद्यालयों के ऊपर भारत के किसी उत्तम केन्द्र में एक "तिलक-जातीय-विश्वविद्यालय" स्थापित किया जावे जिस में जातीय शिक्षा के साथ २ उच्च कोटि की राजनैतिक-शिक्षा दी जावे।

इसके अतिरिक्त, हिमालय से कुमारी अन्तरीप तक "तिलक स्वराज्य-मण्डल" स्थापित किए जावें जो व्याख्यानों, पुस्तकों तथा अन्य साधनों से एक मात्र "राष्ट्रीय दल" के राजनैतिक सिद्धान्तों का प्रचार करें।

विचार में व्यर्थ समय न खोकर शीघ्र ही धन इकट्ठा करना प्रारम्भ कर देना चाहिये।

प्यारे देश भाइयो! अपने राजनैतिक पिता, राजनैतिक सन्यासी राष्ट्र सूत्रधार की यादगार के लिए क्या आप कुछ भी आर्थिक सहायता नहीं देंगे! उठो! अपना कर्तव्य समझो और कृतघ्न मत बनो!!!

ब्रह्मचर्यसूक्त की व्याख्या।

अमावृत्त कृणुते केवलमाचार्यो भूत्वा वरुणो यदादैच्छत् प्रजापतौ। तद् ब्रह्मचारी प्रायच्छत् स्वान् मित्रो अध्यात्मनः ॥ १९ ॥

(वरुण आचार्यो भूत्वा) आचार्य भूत्वा) (श्रेष्ठ ब्रह्मचारी आदर्श) पुरुष आचार्य हो कर (अमावृत्तं केवलं कृणुते) इस घर में ही (सत्यशील) जल के समान शुद्ध (केवल शुद्धि अर्थ में भी आता है यथा—कातर्यं केवलानीति. ऋ० १, ४७) करदेता है (यदत् प्रजापतौ एच्छत, तत् मित्र ब्रह्मचारी अमना. अधि स्वान् प्रयच्छत्) इसे ही ब्रह्मचारी जिस जिस की प्रजा पालक आचार्य के लिए अभिलाषा करता है, अपने आत्मा वा शरीर में से पदार्थों वा गुणों को उसकी सेवा में देता है।"

आचार्य बनने के लिए आवश्यक है कि पहिले श्रेष्ठ गुणों को धारण करने वाला हो। वरुण पवित्रता प्रदान करने वाला, स्थान स्थान पर वेद में वर्णित है। स्वयम् पवित्र हो कर दूसरे अपवित्रों को जो पवित्र करसके वही 'वरुण देव' अर्थात् ब्रह्मचारी विद्वान् है। ऐसा पुरुष जब, वेद के पूर्ण आदेशानुसार, बालक उपनयन करता और ब्रह्मचारी बना कर सावित्री माता के गर्भ में स्थित कराता है तब पितारूप होकर रक्षा करते हुए उसे इसी घर में (अर्थात् आचार्य वा गुरुकुल में) पवित्र कर देता है। आचार्य चुनते समय प्राचीन काल में जिस वेद मर्यादा का अवलम्बन किया जाता था उसकी ओर आज ध्यान ही नहीं दिया। आज किसी कालिज का प्रिन्सिपल नियत करते हुए यह नहीं देखा जाता कि वह दुराचारी तो नहीं है, फिर यह कौन देखे कि वह अपने शिष्यों के हृदय और आत्मा शुद्ध करने की शक्ति भी रखता है वा नहीं। आज कल के आचार्य मांस खाने और मद्य पीने वाले हो सकते हैं, ईर्षा द्वेष में फंस कर विद्यार्थियों के साथ अनुचित व्यवहार करने वाले हो सके हैं, यहां तक कि व्यभिचारी होने पर भी उन्हें कोई शक्ति प्रिन्सिपल के पद से नहीं गिरा सकती। जब तक वे विद्यार्थियों को अपना विषय पढ़ाते जांय (चाहे किसी प्रकार से हो) और जब तक आचारण सम्बन्ध कालिज का कर सकें तब तक उनकी ओर आंख उठा कर कोई देख नहीं सकता। परन्तु सार्वभौम सचाई यह है कि जो स्वयम् अन्दर से अशुद्ध है वह दूसरों को शुद्ध कभी नहीं कर सकता।

जब वेद वर्णित, आचार्य ब्रह्मचारी के शरीर, अन्तःकरण और आत्मा को शुद्ध कर देता है तब उस से "गुरुदक्षिणा" की आशा बांधता है। इसी के विषय में उपनिषद् का प्रसिद्ध वाक्य है जिस से आचार्य स्नातको को दीक्षा देता है—"आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सी" आचार्य के लिए प्रिय धन देकर विवाह पूर्वक सन्तानोत्पत्ति कर—आचार्य का प्रिय धन क्या है? ब्रह्मचारी शिष्य से वह यही याचना करता है कि "जिस प्रकार मैंने तुझे कार्य, वाचिक और मानसिक शुद्ध भाव से विद्या दान देकर पवित्र किया है इसी प्रकार तो जहां दूसरो को इसी विद्या का दान देकर पवित्र कर वहां प्राप्त की हुई शिक्षा को अपने आचरण में ला" दीक्षान्त संस्कार के समय इसी प्रकार की प्रतिज्ञाएं ब्रह्मचारी करता है। इसके अतिरिक्त आर्थिक सेवा भी आचार्य की करता है। आचार्य ब्राह्मण ही हो सका है। वह ब्राह्मण मनुष्य समाज में ऐसा ही है जैसा शरीर में मुख्यभाग—गले से चोटी तक। जैसे प्राकृतिक भोजन सारे शरीर में पहुंचा कर मुख अपने लिए कुछ नहीं रखता, इसी प्रकार आचार्य को भी अपने लिए किसी भी आर्थिक सम्पत्ति की आवश्यकता नहीं है परन्तु जैसे अपने लिए कुछ भी अपेक्षा न रखते हुए मुख सारे शरीर के लिए अन्न जलादि की याचना करता है इसी प्रकार आचार्य को अपनी आध्यात्मिक सन्तान के पालन पोषणार्थ प्राकृतिक सम्पत्ति की आवश्यकता है। पुरानी कई कथाएं प्रसिद्ध हैं, जहां आचार्यों ने स्नातकों से गुरुदक्षिणा में करोड़ो रुपए मांगे हैं और स्नातकों ने निर्धन होते हुए भी घोर तप द्वारा भिक्षा कर के गुरु की आज्ञा का पालन किया। आचार्य को इस धन की क्यों आवश्यकता है? इस लिए कि सारे कुल के पालन पोषण तथा पठन पाठन का बोझ उस पर है। पूर्व काल में आचार्य संज्ञा ही उसकी थी जो दस सहस्र शिष्यों का पालन पोषण कर सके।

तब अन्तेवासी ब्रह्मचारी का विद्याव्रत स्नातक होने के पीछे कर्त्तव्य है कि आचार्य को उसका प्रियधन (प्राकृतिक वा मानसिक) अर्पण करने के पश्चात् सन्तानोत्पत्ति के लिए विवाह करे। सांसारिक पहिले पिता का जो पितृऋण है उस से मुक्त होने का यत्न करने से पहिले शरीर, मन और आत्मा की रक्षा करने वाले आत्मिक पिता—आचार्य के ऋषि ऋण से मुक्त होलिया जाय। जिस कुल से अपने शरीर, मन और आत्मा को शुद्ध किया उस कुल का जीवन स्थिर रखने में जितनी भी सहायता हो सके, करना कुल पुत्र का धर्म है। यदि वेद मर्यादा के अनुसार आचार्य ब्रह्मचारियों की सर्व शुद्धि में लगे रहें और ब्रह्मचारी शुद्ध भाव से जहां मन, वचन, और कर्म में कभी अशुद्धि आने न दें—वहां अपने गुरुकुल का गौरव स्थिर रखने में सहायक हों और साथ ही उस कुल के कोष की पूर्ति करना अपना कर्त्तव्य समझें तो यह देव निर्मित भूमि फिर से आदर्श बन कर संसार की जातियों का उद्धार करने लगजाय। शमित्योरेम्।

श्रद्धानन्द सन्यासी

श्रद्धा

राजनीति का सूर्यास्त

सोमवार १६ श्रावण (२ अगस्त) के प्रातः दैनिक अखबार समाचार लाए कि *लोकमान्य तिलक का देहान्त हो गया!* मैंने उसी समय सोचा कि भारतवर्ष से *राजनीति का सूर्य अस्त हो गया।* तिलक के होश संभालने से पहिले भी राजनीतिज्ञ थे और उनके समय में ऐसे नीतिज्ञ हो चुके हैं और हैं जिनका लोहा माना गया है। परन्तु फिर भी मैं यही कहता हूं कि अपनी मातृभूमि में राजनीति का सूर्य अस्त हो गया। यह क्यों? इङ्गलैंड के तत्वज्ञानी बेकन [Bacon] के विषय में लिखा गया है कि वह फ़िलासफ़ी (philosophy) को आसमान पर से ज़मीन पर लाया; तिलक महाराज के विषय में निश्चय है कि भारत वर्ष में राजनीति को *अंग्रेज़ी पढ़ों के पुस्तकालयों से बाहर निकाल कर जनता की झोपड़ियों में पहुंचाने के अगुआ वही थे।* केसरी पहला राजनैतिक समाचार-पत्र है जो किसानों की झोपड़ियों और मज़दूरों की गोष्ठियों में पढ़ा जाना शुरू हुआ था और गणपति पूजा पहिला संगठन है कि जिसने जनता के बड़े भाग को एक राजनैतिक सूत्र में पिरो दिया। *समर्थ रामदास* ने *शिवाजी* को द्विजन्मा बनाया और छत्रपति शिवाजी ने स्वतन्त्रता का नाद बजाया परन्तु समर्थ तिलक ने स्वयम् अपना राजनैतिक संस्कार किया और *स्वयम् ही भारत प्रजा को राजनैतिक स्वतन्त्रता की घोषणा दी*—Homerule is my birth—right and I claim it. *स्वराज्य मेरा जन्माधिकार है, और मैं इसका दावा करता हूं।*

राजनीति का सूर्य अस्त होगया। फिर क्या अन्धेरा होजायगा। हे पुनर्जन्म पर विश्वास रखने वाली भारत प्रजा! सूर्य अस्त होगया परन्तु उसका अत्यंताभाव नहीं हुआ। जो काम एक सूर्य करता था, उस से प्रकाश पाए हुए सहस्रों तारे उस को पूरा करेंगे। भारत माता के उज्वल मुख की ओर देखो—उसका मुख मलिन नहीं है, क्यों कि वह जानती है कि जो प्रकाश उसके समर्थ पुत्र ने फैलाया था वह एक एक भारत पुत्र ने अपने अंदर सुरक्षित करलिया है।

लोकमान्य तिलक के विछोड़े पर कौन आंसू न बहायगा! विवश होकर अश्रुधारा बह निकलेगी। परन्तु यह देखो विद्युत के अक्षरों में सूर्य लोक पर क्या लिखा गया है—"*स्वराज्य मेरा जन्माधिकार है और मैं उसे प्राप्त करूंगा।*" ओ३म् शांतिः शांतिः शांतिः।

श्रद्धानन्द सन्यासी

पार्टी का नेता नहीं, वैदिकधर्म का सेवक हूं।

आर्यसमाज के मिलाप पर मैंने कुछ लिख दिया था; उसमें आर्यसमाज के दोनों प्रधान दलों के संचालकों का नाम देकर सम्बोधन किया था कि वे सब मिलकर एकता का कोई ढंग निकालें। इस पर प्रकाश में लिखा गया—"अगला कदम उठाया नहीं जा सकता, जब तक लाला हंसराज जी अपने ख़याल का इज़हार न करें। स्वामी श्रद्धानन्द जी का कौल उनके गो अब किसी पार्टी तअल्लुक नहीं; लेकिन पुराने सस्कारों की वजह से लोग उन्हें गुरुकुल पार्टी का नेता समझते हैं"। अपने तीन श्रावण के अंक में प्रकाश ने यह लिखा, और १० श्रावण के अंक में सद्धर्मप्रचारक के संपादक ने इसी का अनुकरण करते हुए, मुझे महात्मा पार्टी का नेता बतला दिया है। मैं यदि चुप रहूं, तो कल को पार्टियों का फुटबाल बन कर मुझे फिर से आर्यसमाज के क्रीड़ा क्षेत्र में शायद इधर उधर ठोकरें खानी पड़ें इस लिए मैं स्पष्ट शब्दों में लिखता हूं कि मैं किसी पार्टी का नेता नहीं, मैं आर्यसमाज का भी 'ज़रख़रीद गुलाम' नहीं, मैं सार्वभौम वैदिकधर्म का एक तुच्छ सेवक हूं।

महात्मा हंसराज को मेरी राय में चुप नहीं रहना चाहिए, उन्हें तो चार अन्तरीय सहयोगियों से निश्चय कर के अवश्य अपनी सम्मति प्रकाशित करनी चाहिए। यदि यह कोई ऐसा पत्र लिख भी चुके हैं जिस से एकता के विरोध की गन्ध आती हो (जिस के प्रकाश करने की कृष्ण-महाराज ने प्रकाश में धमकी दी है) तो क्या हर्ज है, महात्मा हंसराज जी केवल इतना लिख सकते हैं कि उन्हों ने अपनी सम्मति बदल दी है। परन्तु महात्मा हंसराज जी के न बोलने से महात्मा वा गुरुकुल पार्टी के नेता अपनी उत्तरदायिता से मुक्त नहीं हो जाते। इस समय उक्त पार्टी के राजनैतिक नेता महाशय कृष्ण हैं और धार्मिक-नेता प्रो० रामदेव जी हैं। इन दोनों का कर्तव्य है, कि आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान महा. रामकृष्ण जी को सम्मति देकर उनसे घोषणा पत्र निकलवा दें, जिस से यह सिद्ध हो जावे कि किन शर्तों पर इन दोनों दलों में एकता की संभावना है फिर यदि महात्मा हंसराज जी अपने दल की सम्मति प्रकाशित न करेंगे, तो सर्व साधारण की दृष्टि में भाईयों के मिलाप में रोड़ा अटकाने वाले वह समझे जावेंगे।

एक आशंका सद्धर्मप्रचारक के सम्पादक महाशय ने की है। मैंने लिखा था कि तीन सन्यासियों की परिषद् बना कर उनसे निर्णय कराया जावे कि सिद्धान्तों में मुख्य कौन और गौण कौन हैं। इस पर उस प्रचारक ने जिस को जन्म मैंने दिया, और १९ वर्ष तक चलाया, मांस भक्षण के सिद्धान्त का लम्बा उदाहरण देते हुए, उसी प्रचारक के सम्पादक लिखते हैं—"हम पूछना चाहते हैं यदि इस प्रस्तावित सभा के सभासदों में से बहुत से सभासदों की यह सम्मति हो कि खान पान का सिद्धान्त गौण है, चाहे कोई मनुष्य शाक भोजी हो और चाहे मास भोजी सब कोई आर्यसमाज का सभासद हो सकता है, तथा यह सभा इस खान पान के सिद्धान्त को गौण ही ठहरा दे, तो क्या श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज इस बात से सहमत हो जावेंगे?"

प्रचारक के सम्पादक महाशय को विदित हो कि जो प्रश्न मुझ से किया है वह प्रो० रामदेव और महा. कृष्ण से करें। प्रकाश में लोकमान्य लाला लाजपतराय के मन्तव्यों पर लम्बी बहस उठाते हुए यह लिखा गया था कि यदि किसी गौण सिद्धान्त पर लाला जी का मतभेद हो तब तो उन्हें आर्यसमाज का काम करना ही चाहिए किन्तु यदि किसी प्रधान सिद्धान्त पर मतभेद हो तब उन्हें कालिज पार्टी के साथ भी मिलकर काम नहीं करना चाहिए। प्रकाश का वह पर्चा मेरे सामने नहीं है, शब्द तो और हो सकते हैं, परंतु जहां तक मुझे स्मरण है, भाव यही था। इसी विचार से मैंने सिद्धान्तों में मुख्य और गौण का निर्णय करने की ओर संकेत किया था। मेरे लिये वेदानुकूल सभी सिद्धान्त मुख्य हैं, गौण कोई नहीं। और केवल कागज़ पर लिखे हुए सिद्धान्त निर्जीव हैं, उन में जीवन तभी पड़ता है, जब कि सभी आर्यपुरुष तदनुकूल आचरण करें।

साराश मेरे सारे लेख का यह है, कि मेरी सम्मति किसी दलविशेष की सम्मति नहीं है। एकता के लिए पहला पग तभी उठेगा जब किसी दल का नेता अपनी स्पष्ट सम्मति प्रकाशित कर देवे।

सार्वदेशिक प्रचार में सहायता दो।

सार्वदेशिक सभा ने कई वर्षों से यह प्रस्ताव स्वीकार कर छोड़ा था कि मद्रास में वैदिक प्रचार के लिए एक उच्च कोटी का प्रचारक भेजा जावे। देर तक यह प्रस्ताव विचार कोटी में ही पड़ा रहा। बजट में इस के लिए १५००) रक्खा गया, परन्तु केवल ३५०) आर्य प्रतिनिधि पंजाब की ओर से इस निधि में आए शेष किसी प्रतिनिधि ने सुध न ली। संयुक्त प्रान्त की सभा ने प्रतिज्ञा की हुई है कि जो रकम पंजाब सभा देगी उतनी ही वह भी देंगे; अर्थात् ३५०) नकद और ३५०) का वादा—इतने में ही सार्वदेशिक सभा के प्रधान ने लंगोटी में फाग खेल डाला; और ५ आषाढ़ के 'श्रद्धा' पत्र में ५०००) की अपील निकाल कर प० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार को मद्रास की ओर विदा कर दिया। पं० सत्यव्रत ने बंगलोर में पहुंच कर जब अपना परिचय दिया तो स्कूल कालिजों के सैकड़ों विद्यार्थी हिंदी पढ़ने के लिए उनके गिर्द जमा हो गए। विद्यार्थी ही नहीं अन्य सुशिक्षित बहुत से सज्जन भी उत्सुक दिखाई दिए, प्रश्न स्थान का था National High School बंगलोर में इतना कमरा मिल गया जिस में ७९ विद्यार्थी पाठ ले सकें। संस्कृत जानने वाले विद्यार्थिओं को प० सत्यव्रत स्वय पढ़ाते हैं और केवल देश भाषा (मद्रासी) जानने वालों को उक्त स्कूल के संस्कृताध्यापक अक्षर बोध करा रहे हैं। जिस के बाद वे विद्यार्थी भी प० सत्यव्रत जी के पास ही पढ़ने लग पड़ेंगे। अंग्रेजी में आर्य-समाज का साहित्य मैंने कुछ पंडित जी के पास भेज दिया है। और यदि पर्याप्त धन मिलगया तो और बहुत सा भेज दिया जायगा। एक और स्नातक एक दूसरे साधारण पंडित सहित दस बारह दिन के अन्दर मद्रास की ओर प्रस्थान करेंगे इतना तो निश्चित है, इसी पर और बहुत व्यय होगा; यदि धन पर्याप्त मिल गया, तो और भी धर्मोपदेशक उस ओर भेजे जा सकेंगे। हिंदी का प्रचार वैदिक धर्म को सर्वसाधारण में फैलाने का पहला साधन है। इस लिए मैं धर्मप्रचार के साथ इस पर अधिक बल दे रहा हूं।

यदि दो ढाई महीने के लिए ही इतने बड़े डेपुटेशन का प्रबन्ध किया जाता तब भी बहुत साधन चाहिये था। मैं स्वय कलकत्ते से होकर सितम्बर के तीसरे सप्ताह में मद्रास पहुंच जाऊंगा और कई स्थानों में न केवल व्याख्यानदूंगा प्रत्युत वैदिक धर्म के प्रचार का भी उन प्रान्तो में कुछ प्रबन्ध करूंगा। परन्तु सार्वदेशिक सभा का प्रबन्ध ऐसा क्षणिक नहीं है। मैं चाहता हूं कि जब तक मद्रास प्रान्त में धर्म की जिज्ञासा ठीक प्रकार से जाग न उठे और प्रान्तीय विद्वान् सारा बोझ अपने ऊपर लेने को तैयार न हों स्वयं तब तक वहां पर निरन्तर काम होता रहे। सार्वदेशिक ने यह पहला काम सिर पर उठाया है। दूसरा काम मद्रास प्रान्त के कुम्भकोणम् नगर में होने वाले कुम्भ पर वैदिक धर्म का प्रचार है। मदुरा में सार्वदेशिक सभा के स्थापित किये हुए धर्म प्रचारक एम० जे शर्मा ने उक्त कुंभ में से मिल के ट्रेक्ट बांटने के लिए ९००) के लिए अपील की है उन को बिना सभा की आज्ञा के स्वतन्त्र अपील नहीं करनी चाहिए। उक्त कुंभ पर तामिल कनाडी, तैलगु आदी भाषाओं में छपवाकर बांटने के लिए बहुत से ट्रेक्ट तैयार करवाए जांयगे और जितने भी हमारे उपदेशक वहा पर होंगे उन्हे विशेष प्रकार से वहां पर टिकाया जायगा। आगामी माघ मास में वह कुम्भ होगा और एक मास तक मेले की भीड़ भाड़ रहेगी। इस समय २ ढाई हजार से कम क्या खर्च होगा। और फिर एक वैशाख सम्वत् १९७८ के दिन हरिद्वार के आने वाले कुंभी का पर्व हैं। उस दिन से २०, २५ दिन पूर्व ही प्रचार का काम शुरु हो जाया करता है। सं० १९७२ के कुंभ पर सार्वदेशिक सभा की ओर से किए गए प्रचार का बड़ा प्रभाव पड़ा था—इस बार उससे भी बड़ा काम हो सकता है, क्यों कि साधु महात्माओं के अन्दर भी देश हित और स्वदेश-सेवा की लहर चल रही है, और इस लिए वे आर्यसमाज के प्रयत्न को बड़े मान्य की दृष्टि से देखते हैं। उस समय व्यय करने के लिए भी अच्छी रकम चाहिये यदि सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा इन सब कामों को अच्छी तरह करना चाहे तो दस सहस्र (१००००) से कम रुपया उसे नहीं चाहिए।

यह अपील किए डेढ महीना हो गया। प्रश्न होगा कि इस अन्तर में अपील का फल क्या हुआ। उत्तर यह है कि केवल दो महाशयों ने पांच २ रु० भेजे शेष सब चुप हैं। अर्थात् इस समय हमारे पास ३५०+१०=३६० रुपये है जिससे काम चलाया जारहा है। इस अपील से इतनी उपेक्षा क्यों है। मुझे ज्ञात है कि अलग अलग प्रतिनिधियां अपना प्रभाव डालने के लिए बहुत साधन खर्च करने के लिए तैयार हैं, परन्तु सार्वदेशिक सभा को सहायता देना उन प्रतिनिधियों के संचालक धन को गंगा में प्रवाह करने के तुल्य समझते हैं। मुझे मालूम हुआ है कि पंजाब प्रादेशिक सभा ने तीन हजार से अधिक धन एकत्र कर के अच्छी पार्टी मद्रास भेज दी है। और उसके सभ्य दो महीनों तक हिन्दी शिक्षा का प्रचार करेंगे। यह बहुत अच्छी बात है। यदि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब को भी अपना डेपुटेशन भेजना होता तो उक्त सभा शायद अपने कोष से ही यह धन दे सकी—परंतु इस तरह के प्रांतिक डेपुटेशनों के जाने से कहीं मद्रास में भी आर्यसमाज की परस्पर दल बंदी का विष पहले पहल ही न फैल जाय। प्रांतिक सभाओं से सम्बंध रखने वाले समाजों का कर्तव्य है कि अपनी २ सभा की रक्षा और वृद्धि का संदेश ध्यान रक्खें परंतु प्रांतों से बाहर जो सार्वदेशिक धर्म प्रचार का कोष हो उसे सार्वदेशिक सभा के लिये छोड़ दें जिस से आर्यसमाजों के अंदर फैला हुआ वैमनस्य नए प्रांतों में वैदिक धर्म के लिए अरुचि न पैदा कर दे।

आर्य प्रतिनिधि सभाओं से जो सहायता मिलती थी वह मिल चुकी है। जीती जागती दो ही प्रतिनिधि सभा हैं जिन में से एक ने ३५०) दे दिए हैं और दूसरी से इतना ही धन आजायगा, परंतु आवश्यकता इस समय १००००) दसहज़ार रुपए की है। मैं भारतवर्ष की समग्र आर्यसमाजों और आर्य पुरुषों से अपील करता हूं कि यह धन शीघ्र जमा करदें। मैंने गुरुकुल में ही इस निधि का हिसाब खोल दिया है। अपना समय विभाग इस से आगे दूंगा जिस से ज्ञात होगा कि १६ अगस्त १९२० के दिन मुझे यहां से प्रस्थान करना है। उस से पहिले जितना धन आजायगा वह उस वक्त काम आयगा और शेष धन सब जमा होता चला जायेगा। जो धन भेजें मनीआर्डर या बीमा मेरे नाम से गुरुकुल कांगड़ी पते पर भेजें। रसीद उनको गुरुकुल के सहायक मुख्याधिष्ठाता (पं० इंद्र जी) की तरफ से पहुंच जावेगी।

इतना धन एकत्र होना कुछ कठिन नहीं है, यदि पचास बड़े २ आर्यसमाज एक २ सौ रुपया और एक सौ

आर्यसमाज प्रवास २ रु० जमा कर के भेज दें तो एक मास में १००००) जमा हो सकता है। बहुत से आर्य पुरुष हैं जो मद्रास में वैदिक धर्म प्रचार के लिए प्रान्तिक सभाओं को बहुत साधन देने के लिए तैयार रहते थे। उन्हें अब खुला दान देकर अपनी मनोकामना सिद्ध करनी चाहिए। अन्तिम निवेदन मेरा उन पक्षपात रहित महाशयों से है जो आर्यसमाज में परस्पर के झगड़ों को देख कर दान देने की इच्छा होते हुए भी आर्यसमाज के कामों से अलग हो बैठे हैं। उन के लिए दान देने का यह बड़ा अवसर है।

आर्यसमाजों के परस्पर के झगड़ों को दूर करने के लिए सार्वभौम सभा की आवश्यकता थी, वह सभा वर्षों से निर्जीव चली आई। एक दो बार उस में जीवन डालने का यत्न हुआ; और स्थिर न रह सका। इस समय एक ओर कन्या गुरुकुल के लिए भूमि मिल चुकी है; और उस का भवन बनाने के लिए धन भी सामने है, दूसरी ओर वैदिक धर्म के उच्च आदर्शों का प्रचार मद्रास आदि में हो कर देश की काया पलटने में बड़ा भारी भाग यह सभा ले सकती है। आर्यसमाज से मेरी प्रार्थना है कि मेरी अपील को सावधान होकर सुनें, और इसका यथोचित उत्तर दें।

मेरा आगामी कुछ काल का समय विभाग

१६ अगस्त को गुरुकुल से प्रस्थान करने का मेरा विचार है। एक दिन काशी ठहर कर १८ अगस्त को कलकत्ते पहुंचूंगा। सितम्बर के मध्य भाग तक कलकत्ते में स्थिति रहेगी। इस बीच में दो दिन के लिए कभी सर रवीन्द्रनाथ का शान्ति निकेतन देखने के लिए जाऊंगा। शेष समय कलकत्ते में ही व्यतीत करूंगा। इस अवसर में भी यदि किसी समीप स्थान के सभ्य पुरुष मेरे उद्देश्य में सहायता देने का वचन देंगे तो यथावकाश वहां भी जा सकता हूं। १५ सितम्बर १९२० तक मेरे साथ सारा पत्रव्यवहार आर्य समाज नम्बर १९ कार्नवालिस स्ट्रीट कलकत्ता के पते से होना चाहिए। कलकत्ता से मैं सितम्बर के तीसरे सप्ताह के आरम्भ में मद्रास चला जाऊंगा, और वहां का समय विभाग पीछे से समाचार पत्रों में छप जायगा।

श्रद्धानन्द सन्यासी
प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

—:o:—

जागृति के पिता की परलोक यात्रा

(लेखक श्री-पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति भूत पूर्व सम्पादक "विजय")

यों तो हर समय हर स्थान पर भारतवासी अनुभव करते हैं कि इस भाग्यशाली भूमण्डल पर वही अभागे हैं, परंतु अपने दौर्भाग्य का इतना अधिक अनुभव कभी नहीं हुआ था जितना तिलक के स्वर्गवास का समाचार जान कर हुआ। सारे पृथ्वी मण्डल पर जो घटनायें हो रही हैं, उनकी लहरें दूर दूर से आकर इस बूढ़े देश की दीवारों से टक्कर मार रही हैं, जिस ब्रिटिश साम्राज्य का भारतवर्ष भाग है, उसी में घटना चक्र तीव्र प्रवाह के वेग से बह रहा है। कार्लटन जिवर मसोपोटामिया और फ्रांस यह सब ऐसे हैं जिन में अपेक्षों से पैदे हुए आधिराज्य का भाग्य निर्णय हो रहा है। नहीं कह सकते क्या होनेवाला है—पर जो कुछ भी होगा, भारत का इस में पूरा भाग होगा। अब तक संसार की बड़ी घटनाओं के वायु के झकोरे भारत को छुए बिना ही चले जाते थे, पर अब यह सम्भव नहीं है। भारत के लिये जहां आशंकायें हैं—वहां आशायें और सम्भावनायें भी हैं।

भारतवर्ष की प्रजा जाग गई है। वह अपनी स्वाधीनता के लिये कुछ करना चाहती है। ठीक ऐसे समय में जब कि देश की किश्ती मझधार में है एक सीधा चप्पू लग गया तो उस पार है, और एक उलटा चप्पू लग गया तो फिर ठीक मालूम नहीं कि किस गहराई में बैठना हो, ऐसे मल्लाह की आवश्यकता थी जिस के हाथ की परीक्षा हो चुकी हो, जिस पर प्रजा का विश्वास हो, और जिसके सिक्के को देश का हरेक सिर स्वीकार करता हो। इस से बढ़ कर देश के दुर्भाग्य क्या होंगे कि ठीक ऐसे समय में प्रजा के प्यारे सर्वमान्य नेता तिलक का स्वर्गवास हो गया। क्या भारत का दुर्भाग्य निश्चय कराने के लिये इस से बड़े किसी प्रमाण की आवश्यकता थी?

आज देश में जो राष्ट्रीय जागृति दिखाई दे रही है, भाइयों! यदि लो० मा० तिलक को इस का पिता कहा जाय तो अनुचित न होगा। जब मैं सात साल का था, पढ़ने के लिये स्कूल में भी न जाता था, तब भी मैंने अपने घर में तिलक महाराज की तस्वीर देखी थी, और सुना था कि यह आदमी देश के लिये कैद हुआ है। उस दिन से आजतक लगभग २४ साल हुए हैं। इस समय में देश के हरेक आन्दोलन में, सरकार के अत्याचार को रोकने के हर एक यत्न में तिलक का नाम सुनता रहा हूं। प्रजा की जिह्वा पर प्रजा के हृदयों में यदि कोई नाम है तो वह तिलक है।

तिलक महाराज की इस लोक-प्रियता का कारण क्या था? इसका पहला कारण यह था कि उस महा पुरुष ने अपना सब कुछ देश हित के लिए अर्पण कर दिया। लो० मा० तिलक ने वकालत पास की थी। आपके दिमाग का आदमी यदि वकालत करने लगता तो सन्देह नहीं कि आज हाईकोर्ट की कुर्सी पर होता। कार्य क्षेत्र में उतरने के कुछ ही समय पीछे आप बम्बई की लेजिस्लेटिव कौंसिल के सभ्य हो गए थे—यह सब आपने छोड़ दिया, इसे तृणवत् त्याग दिया क्योंकि देश की परतन्त्रता के पहले यह सब कुछ आपको पाप प्रतीत होने लगा।

आप की लोकप्रियता का दूसरा कारण यह था कि आपने देश के लिए जितने कष्ट सहे हैं, उतने दूसरे किसी नेता ने नहीं सहे। दो चार या छः महीने का जेल बात दूसरी है। देश के जिन रत्नों ने देश हित में कष्ट सहे हैं, मैं उनकी तपस्या का महत्व नहीं कम करना चाहता, पर यह अवश्य कहूंगा कि दस पचास या सौ आदमियों के साथ कुछ दिनों के लिए जेल भोगना दूसरी बात है और सालों तक अकेले बन्धन का दुःख भोगना दूसरी बात है। सरकारी कोप के कारण जितना कष्ट लोकमान्य ने सहा है उतना दूसरे किसी नेता ने शायद ही सहा हो।

लोकमान्य का जीवन एक कर्मवीर योद्धा का जीवन था, जो लक्ष्य बना रखा था, उसके लिए सर्वस्व न्योछावर

कर दिया। जीवन का एक२ मिनट इसी के अर्पण कर दिया। यहां तक—कि जिन व्यक्तियों से पूरा प्रेम था, और पुराना परिचय था, जिन संस्थाओं के साथ मिल कर सालों काम किया था, और जिन में भारी श्रद्धा थी, जब उन्हें वे उद्देश्य की पूर्ति में उन्हें बाधक बनते देखा तो तिनके के समान दूर फेंक दिया, और आवश्यकता पड़ने पर उन्हें खाक में मिला दिया। मातृभूमि को स्वतन्त्र करना तिलक का लक्ष्य था राष्ट्र को बनाना उसका साधन था। यदि किसी व्यक्ति को, फिर चाहे कितना बड़ा ही बड़ा हो, उस लक्ष्य या साधन में विघ्न कारी समझा तो उसकी कड़ी आलोचना में कसर नहीं छोड़ी। यहां तक कि जिस रोज़ लोकमान्य को यह भान हुआ कि उनकी पुरानी कार्य भूमि कांग्रेस समय से पीछे रहती है और आगे नहीं बढ़ती उसी दिन पुराने साथियों की रत्ती भर भी पर्वा न करके और संस्था के प्रेम को दिल से दूर करके सूरत की ऐतिहासिक भूमि में कांग्रेस को तितरबितर कर दिया।

सूरत में कांग्रेस के भंग की एक घटना ऐसी है जो लोकमान्य के सारे चरित की व्याख्या कर देती है। माडरेटों के पण्डाल में कड़ुवादी पहरेदारों की पर्वा नहीं की, [illegible] चलनियों पर ध्यान नहीं दिया, सालों से मञ्च पर बैठे हुए सहयोगियों की उपेक्षा की, और देश की [illegible] को कोलाहल में परिणित कर के छोड़ दिया—[illegible] लोकमान्य की [illegible] [illegible] [illegible] था।

[illegible] भारत के उन वीरों राष्ट्रीय [illegible], देश के राष्ट्रीय दल के लिये [illegible] देनेवाली चोट है। जोसरी राज द्रोह के मुकदमे में जस्टिस दावर ने जब लोकमान्य को अपराधी करार देकर ७ साल की सजा दी तब लोकमान्य ने निम्न लिखित शब्द कहे हैं।

"In spite of the Vordict of the Jury Imaintain that I am innocent. There are higher powers that rule the destiny of things, and it may be the will of providence that the cause which I represent may prosper more by my Suffering than by remaing free"

उन्हीं शब्दों को कुछ [illegible] कर इस समय भी हम कह सकते हैं कि 'लोकमान्य मौत का फैसला हो जाने पर भी जीवित हैं' और शायद भगवान की यही इच्छा हो कि वह उद्देश्य, जो लोकमान्य को प्राणों से भी प्यारा था, [illegible] शरीर में रहने की अपेक्षा [illegible] से अधिक सफलता से पूर्ण हो जाय। यह असम्भव नहीं है। पर हम जैसे [illegible] की [illegible] के लिये यह दुःख [illegible] असह्य है दुःख ऐसा गहरा है चोट ऐसी भारी है, कि हृदय को पता है और जीभ थरथराती है और दिल सोचता है कि इस दुखिया भारतमाता का भविष्य क्या होगा?

हा! तिलक!!

हृदय फटता है! रुकता है रुधिर!! अन्धेरा छाता है!!
ये सच है? झूठ है? क्या है! समझ में कुछ न आता है!!! १
अरे! कुदरत! तुम्हारे रंग भी कैसे निराले हैं!
न कर पाता है कुछ इंसान! अभी आता है!! जाता है!!!॥ २ ॥
तुम्हारी माया क्या मन्शा तभी बस पूर्ण होती है!
कि झट उस को बुला ले हो जो अब कुछ कर दिखाता है ॥ ३ ॥
अजब! चुप हैं? सहते हैं न अपने हाथ में कुछ है!
तुम्हारी खेल होती है इधर झट काम आता है!!! ॥ ४ ॥
अभी था! वह तिलक भारत का! था! हैं! क्या! किधर! क्योंकर
गया! सचमुच! नहीं यह झूठ है कोई बताता है!!! ॥ ५ ॥
नहीं! यह ठीक है! क्यों! देख! जाता है!!!
अरे! ये कौन है जो यों हमारा दिल उठाता है!!! ॥ ६ ॥
अभी तो इसके माथे पर तिलक हम ने लगाना था!
बिना इसके छिपाता क्यों है? दबाता है!!! ॥ ७ ॥
संभल! इसको न ऐसे ही उठाना! देखना कुछ तो!
ये है जिसके लिये भारत भी सिर अपना उठाता है!!! ॥ ८ ॥
तू है दिल संग दिल! फटता नहीं क्यों चूर होकर के?
दिशाओ! व्योम! निश्चल हो? उधर देखो वो जाता है!!! ॥ ९ ॥
बचाना! भाग क्या आया है! हम गिरते हैं—घबराकर,
तिलक! आओ!! तिलक! आओ हमारा प्राण जाता है!! ॥ १० ॥

शान्ति सदन
गु० कु० कांगड़ी
"आनन्द"

(एक बादल को तरफ देखकर प्यारे तिलक की चिता के पास बैठी हुयी भारत-माता की आह!!!)

१

बतादो मुझको ए बादल! ये दामन ओढ़कर काला,
चले हो हाय! तुमरोते कहां आंसू बहाने को ॥

२

है छाती जल रही मेरी, बदन है टूटता जाता।
ठकोगे क्या नहीं मेरी, गरम आहें बुझाने को ॥

३

गरम हो कर बहा जाता है, दरया भी ये बरसाओ।
बची कोई नहीं वस्तु, ये दिल ठण्डा कराने को ॥

४

इधर देखो पड़ी है, लाश ये मेरे दुलारे की।
करोड़ों से मिले जिसका, यहां मातम मनाने को ॥

५

फ़क़त मेरे लिये हसने थीं, छोड़ीं चाहें दुनियां की।
महल शाही समझता था, ये ज़ालिम जेलख़ाने को ॥

६

हो इज़्ज़त मेरी दुनियां में, यही थी बस लगन इस को।
बंधा कुछ बेड़ियों में हाय! ये मेरी खुशी को ॥

७

नजाने मिटगया कैसे ये माथे का तिलक मेरा।
मिलेगा अब नहीं कोई, तिलक ऐसा लगाने को ॥

८

कहां प्यारा बदन उसका गया काफूर हो हो कर।
बची अब राख की ढेरी करोड़ों दिल दुखाने को ॥

९

है सिर भी और सीना भी, भुजायें भी है गर्दन भी।
नहीं है वो तिलक प्यारा, मगर माथा सजाने को ॥

१०

उसे भी देखने की चाह जीते जी तिलक मेरा।
गया पर बीच में ही यह तिलक फिसका कराने को ॥

११

बिना उसके मुझे सारी है दुनियां दीखती सूनी।
ए बादल! आ जरा आजा मुझे ढाढस बंधाने को ॥

निधिः

—:०:—

वज्रपात ! !

अरे! हृदय! यह क्या सुनता हूँ अन्तरिक्ष क्या टूट पड़ा?
भारत जननी की छाती पर वज्र कहीं से छूट पड़ा?
तिमिर विनाशक 'बाल' भानु पर काल राहु का कोप हुवा?
आर्यभूमि के मस्तक से सौभाग्य—'तिलक' का लोप हुवा ॥१॥
भावी भारत भव्य भवन का मूल स्तम्भ क्या भग्न हुवा?
बीच धार में छोड़ नाव को क्या नाविक जल मग्न हुवा?
समर भूमि में बढ़ते दलकी विजय ध्वजा का भङ्ग हुवा?
हाय हाय क्या कहें आज तो सभी रङ्ग बदरङ्ग हुवा? ॥२॥
हे दुर्भागी देश! अंधेरी तुझ पर कैसी छाई है,
जहां सुबह के समय छिपाया सूर्य अस्त-घिर आई है।
अर्धखिल लाल कमल कुमलाये, श्वेत कुमुद मुद पाते हैं,
चमगीदड़ फिर लगे घूमने उल्लू शोर मचाते हैं ॥३॥
दुर्दैव! क्या तूने हम को यह दिन भी दिखलाना था,
ठण्डी होती हुई चिता को फिर से यूं सुलगाना था।
क्षत विक्षत इन हृदयों पर ऐ। निर्दय! नमक लगाना था,
रोते हुवे हमें पहले ही इतना और रुलाना था ॥४॥
सम्हल सम्हल ऐ दिल! धीरज धर क्यों होता है चकना चूर,
ठहरो ठहरो आंखों! तुम भी मत हो आंसू से भर पूर।
क्या कहते हो "महा कठिन भी पत्थर आज हुवे शतखण्ड,
अब भी बादल-दल शोकाकुल बरस रहे हैं धार अखण्ड ॥५॥
हे भारत! अब कौन तुम्हारे बेड़ी बन्ध तुड़ावेगा,
"जीते जी स्वतन्त्र देखूंगा" ये शुभ शब्द सुनावेगा।
कौन तुम्हारे लिये जेल को अपना तीर्थ बनावेगा,
'बढ़ो बढ़ो' यह कह कह कर के धीरज हमें बंधावेगा ॥६॥
गर्ज गर्ज कर कौन आज दिल दुश्मन का दहलावेगा,
प्राण जाय पर आन बचा कर एक वीर कहलावेगा।
घूम घूम कर जो स्वराज्य की हरदम धूम मचावेगा,
युद्ध भूमि में अचल अटल हो आगे कदम बढ़ावेगा ॥७॥
धन्य धन्य हे मातृ भूमि के तिलक तिलक! तुम गये कहा;
क्या भारत की दशा सुनाने स्वर्ग लोक को चल वहां।
किन्तु हाय क्यों सभी पुराने नाते हम से तोड़ चले,
और सदा के लिए गोद को इस की खाली छोड़ चले ॥८॥

वागीश्वर (विद्यालंकार)

[पृ० ८ का शेष]

वाला यदि कोई था तो वह तिलक ही था परन्तु! अब उसका परिणाम देखने का अवसर आया तो वह स्वयं यहां से सिधार गया। खवैया के बिना मझधार में डूबते की जो हालत होती है वही अब हमारे देश की होगी।"

१४ वीं श्रेणी ब्रह्मचारी भीमसेन जी ने इन शब्दों के साथ इस प्रस्ताव का समर्थन किया "हम विद्यार्थियों के लिए लोकमान्य का जीवन क्या शिक्षा दे सकता है? उनकी कृतकार्यता का क्या रहस्य है? गीता के शब्दों में उनके जीवन की सब महत्व पूर्ण घटनाओं को जोड़ने वाली लड़ी रूप जो भाव काम कर रहा था वह "निष्काम कर्मयोग" का था। यही उनके जीवन का रहस्य है। "ईश्वर के प्रति प्रेम" यह दूसरी शिक्षा है जो कि उनके जीवन से मिल सकती है। सूरत की दुर्घटना के बाद हम उन्हें एक अलग कांग्रेस स्थापित करते हुए नहीं देखते जैसे कि आज कल कई मान्य नेता सम्मति भेद होने के कारण, कांग्रेस से अलग हो, अपनी कान्फ्रेन्स स्थापित कर रहे हैं। तिलक महाराज अपने बचपन से ही बड़े सहिष्णु, अन्याय न सह सकने वाले और असत्य का खण्डन करने वाले थे। उनके विचार मौलिक हुआ करते थे। ये सब गुण उन्होंने अपने माता पिता से प्राप्त किये थे जो कि स्वयं धार्मिक, सत्यवादी और विद्वान् थे। तिलक के जीवन पर विचार करते हुए उनका यह दृढ़ सिद्धान्त कभी नहीं भूलना चाहिये कि वे बाह्य पराजय से अधिक भयंकर और नाश कारक सभ्यता की पराजय समझते थे। अपने सम्पूर्ण जीवन में उन्होंने जो कुछ किया है वह इसी भाव से किया है। हमें भी उनका अनुकरण करने का प्रयत्न करना चाहिए।

श्री पं० गयाप्रसाद जी श्री हरि ने तिलक महाराज की प्रशंसा में एक गीती सुनाई जिस के बाद सब ने, मौनभाव से खड़े हो कर इस प्रस्ताव का समर्थन किया।

इस प्रस्ताव की एक प्रति समाचार पत्रों में भेजने के निश्चय के अनन्तर शान्ति पाठ के साथ सभा समाप्त हुई।

—:०:—

आवश्यक—निवेदन

अबतक वी.पी. द्वारा 'श्रद्धा' का भेजना बिलकुल बन्द था क्यूं कि कुछ सज्जन वी.पी. मंगा लौटा कर प्रतिज्ञा भंग के दोषी होते थे। पर अब हमें सज्जनों के आग्रह से बाधित हो कर वी.पी. भेजना शुरू करना पड़ा है। आशा है सज्जन लोग वी.पी. की आज्ञा पक्का निश्चय करके ही दिया करेंगे। वी.पी. लौटाने पर जहां लेखक प्रतिज्ञा भंग करता है हमें भी आर्थिक और मानसिक हानि उठानी पड़ती वहां है। वार्षिक मूल्य ३॥), ६ मास का २)। ६ मास से कम का वी.पी. नहीं भेजा जाता। प्रबन्धकर्ता—श्रद्धा

गुरुकुल-कांगड़ी

(बिजनौर)

गुरुकुल में शोक सभा

१८ श्रावण (२ अगस्त) सोमवार की प्रातः यहां पर राष्ट्र सूत्र धार, लोकमान्य तिलक महाराज की अकस्मिक मृत्यु का समाचार पहुंचा और कि क्षण मात्र में सब कुल में फैल गया। सबने इसे अत्यन्त वेदना और दुःख के साथ सुना। श्री मुख्याधिष्ठाता जी की विशेष आज्ञा द्वारा विद्यालय तथा महाविद्यालय की पढ़ाई, परीक्षाएं तथा अन्य सब विभागों के कार्यालय एक दम बन्द कर दिए गए।

सायंकाल, ६ बजे, यज्ञशाला में, एक शोक सभा मनाई गई जिसमें सब ब्रह्मचारी शिक्षक गण तथा अन्य कार्य कर्त्ता उपस्थित थे। सबके हृदय दुःख से भरे हुए और चेहरे शोक से कुम्हलाए हुए थे। जिह्वा पत्थर हो गई थी और आंखों से अनवरत अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी। श्री पूज्य आचार्य जी ने अत्यन्त विषण्ण हृदय और अश्रु जल पूर्ण नेत्रों के साथ सभा में प्रवेश किया। इस समय आपने निम्नलिखित संक्षिप्त पर सार गर्भित भाषण दिया।

"आज प्रातः काल ही यह शोक जनक समाचार आया है। उसके साथ विशेष विवरण नहीं दे सकते। शोक जनक क्यों कहूं—क्योंकि इस का परिणाम अभी तक अज्ञात है। क्या मालूम, न्यायकारी उस परमात्मा के राज्य में क्या घटना होने वाली है! परन्तु देश की इस समय की अवस्था को दृष्टि में रखते हुए एक ऐसे व्यक्ति का जिस पर सारा देश विश्वास रखता हो, जिसने जन्म से अन्त काल तक एक ही लक्ष्य रक्खा हो और सब आपत्तियों को झेलते हुए और उनके बीच में से गुजरते हुए भी इस लक्ष्य या ध्येय को अपनी दृष्टि से कभी ओझल न होने दिया हो—ऐसी महानात्मा वाले व्यक्ति का यहां से अचानक उठ जाना, उसका वियोग किए असाधारण पड़ना है। ऐसे समय में वाणी रह जाती है और हृदय ही अनुभव करते हैं।"

तदनन्तर श्री० पं० इन्द्र जी ने एक मनोहर और भाव पूर्ण व्याख्यान दिया जो कि लेख के रूप में अन्यत्र प्रकाशित है। इस भाषण के अन्त अपने निम्न प्रस्ताव उपस्थित किया:—

"गुरुकुल कांगड़ी सब निवासी लो० मा० तिलक की मृत्यु पर हार्दिक दुःख प्रकाशित करते हैं। असीम देशभक्ति, निश्चय पर अपूर्व दृढ़ता और न डगमगाने वाली सहिष्णुता का लो० मा० तिलक जीवन्त उदाहरण थे। भारत के नवयुवकों और भविष्य में आने वाले कार्य कर्त्ताओं के लिये लो० मा० का चरित एक उदाहरण स्वरूप होगा। नई राष्ट्रीय-जागृति के पिता के देहान्त पर सारा देश दुःखित होगा। गुरुकुल निवासी अध्यापक, ब्रह्मचारी और अन्य कर्मचारी गण अपनी हृदय वेदना को देश की हृदय वेदना के साथ मिलाते हुए आशा करते हैं कि इस महापुरुष की मृत्यु भी अन्य कार्य्यकर्त्ताओं के उत्साह और अध्यवसाय को दुगुना करके देश के कल्याण का कारण होगी।"

इस प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए श्री प्रो० सुधाकर जी एम ए, ने कहा:—

"वस्तुतः वर्तमान जागृति के पिता लोकमान्य तिलक हैं। यह तो ठीक है ही कि उनका हमारे हृदयों पर पूर्ण अधिकार था परन्तु इस के साथ यह भी ठीक है कि हमारे दिमाग़ों पर भी उन्हीं का ठप्पा लगा हुआ था। कई नेता जनता के हृदयों के ही मालिक होते हैं, कई दिमाग़ों पर ही ही मोहर लगाने वाले होते हैं परन्तु तिलक दिल और दिमाग़ दोनों का स्वामी था। यह उस के चरित्र की एक बड़ी भारी विशेषता है। हमारे हृदयों का अधिपति वह इस लिए था क्योंकि वह साधारण से साधारण भारतीय के भी दुःख को अपना ही दुःख समझता था। अपनी अपूर्व विद्वत्ता और अगाध ज्ञान के कारण उसने हमारे दिमाग़ों को भी काबू किया हुआ था। उसने ऐसी २ मार्के की पुस्तकें लिखी हैं जो सृष्टि के अन्त तक स्थिर रहेंगी और आने वाली सन्तति के लिए अभिमान का कारण होंगी। वर्तमान राजनैतिक आन्दोलन को पैदा करने वाले और उसे वर्तमान स्वरूप देने

(बाकी आगे पृ० ७ के नीचे)

भारतमाता! निराश मत होवे!!

नौकरशाही! बहुत खुश मत होवे!!

राष्ट्र-सूत्रधार तिलक फिर इस भौतिक देह में आवेंगे !!!

लोक मान्य ने, जगदम्बा की गोद में प्रयाण करते हुए गीता का यह श्लोक पढ़ा था:—

"यदा यदाहि धर्मस्य ग्लानि र्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥"

पुनर्जन्म के मानने वाले ए भारत सुपुत्रो! इस भावी "तिलक" का वास्तविक स्वागत यदि करना चाहते हो तो अब निद्रा छोड़ो! कमर कस लो! इस दासता से मुक्त होने का प्रयत्न प्रारम्भ कर दो!!

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिये छपा।

ओ३म्   Registered No. A. 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में भी श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० मं० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धावान करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | ३० श्रावण सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० १३ अगस्त सन् १९२० ई० | संख्या १७ भाग १.

हृदयोद्गार

प्यासा पपीहा

मोरि कौन बुझावे प्यास—टेक

बरसगई झरियां सावन की पूलन आवे कास ॥
स्वाति की बूंद बिना पपिहा के गललौं आवे सांस ॥
प्यास लगी मैं धूनि रमाई जगत् करत उपहास ॥
तुम सों प्रभु पुनि कैसे कहिये तुम स्वामी मैं दास ॥

"मराल"

रागिया!

सुनारहा है क्यों राग अपनी ऐ! रागिया मस्त हो यहां पर!
जहां पै बैठे हैं सुनने वाले भी देख कानों पै हाथ देकर ॥ १ ॥
बजा के अपनी हृदय की तारें तू झूम कर तान है उड़ाता,
इधर वे कहते हैं कौन पागल है गारहा सिर हिला हिला कर ॥ २ ॥
तुम्हारे ओठों पै भी हंसी है मधुर, सुकोमल, सुहावनी है,
इधर भी वे मुंह बिगाड़ कर के हैं हंस रहे खूब खिल खिलाकर ॥ ३ ॥
मज़ा है दोनों का क्या अजब है? यहां बनी है निराली संगत,
न जानते हैं जो रागक्या है? उन्हें सुनाता तू राग गाकर ॥ ४ ॥
पहेली तेरी जुबान होगी इधर से केवल है राग अच्छो,
जो पूछलोगे कि क्या कहा था तो टाल देंगे वे मुस्कराकर ॥ ५ ॥

शान्ति-सदन   आनन्द
गु० कु० कांगड़ी

उपालम्भ

(अस्त होते हुये सूर्य को कमल का)

हे! हे! हृदयाधिप रवि! तुम अब चले कहां पर जाते हो?
अपनी आभा अपनी शोभा किसे दिखाने जाते हो? ॥ १
क्या है कोई नूतन प्रेमी? जिसका चित्त चुराना है,
या मेरे इस खिलते दिल को तुमने हाय! दुखाना है ॥ २
तेरी ही इस प्रेम-सुधा पर सदा फूल कर खिलता था,
तुझ को एक रिझाने के हित हिलता, और मचलता था!! ॥ ३
पर ऐ! नाथ! मुझे अब तज कर तुमने आज किया प्रस्थान,
मेरे लिये भला इस जग में रहा दूसरा कैसा स्थान ॥ ४
अपने प्रेमी प्रिय को पाकर सज्जन खुश होजाता है,
वैसे इक तुझ को पाते ही मेरा मुख खिलजाता है ॥ ५
पर तेरे छिप जाते ही मुखड़ा बस मुरझावेगा,
बार बार इक तेरे हित ही मेरा दिल तरसावेगा ॥ ६
चाहे तुम मुझ को मुरझादो पर मैं तेरा ही गुण गान,
गाते गाते सदा मरूंगा दिल में रख तेरा सन्मान ॥ ७
क्या मैंने कुछ ऐसा प्यारे तेरा किया बड़ा है दोष,
जिस से तुम इस जले हृदय को ऐसा कड़क दिखाते रोष ॥ ८
पर ऐ! रवि इस नम्र हृदय में यदि कुछ भी माया का स्थान,
फिर भी जला जला कर मुझ को क्यों लेते हो मेरी जान ॥ ९
यदि मुझ से है सच मुच रूठा और न फिर तू आयेगा,
तो मेरा बस तुच्छ देह यह आज भस्म होजावेगा ॥ १० ॥
फिर यदि मुझे जलाने को तू अपना मुख दिखलायेगा,
बारम्बार मनाते भी यह कभी नहीं खिल पावेगा ॥ ११

शान्ति-सदन   "आनन्द"
गु० कु० कांगड़ी

ब्रह्मचर्यसूक्त की व्याख्या

आचार्यो ब्रह्मचारी ब्रह्मचारी प्रजापतिः ।
प्रजापतिर्विराजति विराडिन्द्रोऽभवद्वशी ॥१६॥

"ब्रह्मचारी आचार्य होता है, ब्रह्मचारी ही प्रजापालक (राजा) होता है; प्रजापति होकर विविध प्रकार से राज करता है (राष्ट्र से ऊपर उठता है) ऊंचा उठकर (प्रजा को) वश में कर मालिक होता है ।"

आचार्य पद के योग्य ब्रह्मचारी है। ऋषिदयानन्द इसी आशय को लेकर संस्कारविधि में लिखते हैं। "आचार्य उसको कहते हैं कि जो साङ्गोपाङ्ग (अङ्गों शिक्षा कल्पादि–और उपाङ्गों–न्याय वैशेषिक, साङ्ख्ययोग मीमांसा वेदान्तसहित) वेदों के शब्द अर्थ सम्बन्ध और क्रिया का जानने हारा, छल कपट रहित अति प्रेम से सबको विद्या का दाता, परोपकारी, तन मन और धन से सब को सुख बढ़ाने में जो तत्पर, महाशय पक्षपात किसी का न करे और सत्योपदेशष्टा सबका हितैषी धर्मात्मा जितेन्द्रिय होवे।" आचार्य के पास शिष्य किस उद्देश्य से आता है? इसका वर्णन यजुर्वेद २९ वें अध्याय के मन्त्र ४९ में किया है- ऋजीते परिवृङ्ग्धि नोऽश्मा भवतु नस्तनूः । सोमो अधि ब्रवीतु नेऽदितिः शर्मयच्छतु ॥ "हे आचार्य ! अपने तेज से हमारे (शारीरिक तथा मानसिक) रोगों को सब ओर से दूर कीजिए, हमारा शरीर चट्टान की न्याईं दृढ़ हो; अमृत और मृत्यु का हमें उपदेश कीजिए और हमारे लिए सुख का विधान कीजिए (अर्थात् मौत से छुड़ा कर अमृत पान कराइए)।" जिस में ऊपर कहे गुण निवास करते हों, जो सहज में ही उपरोक्त गुणों का धारण करने वाला हो वही आचार्य होने के योग्य है । जिस का अपना शरीर वज्र के तुल्य नहीं वह दूसरों का शरीर दृढ़ कैसे कर सकेगा जिसको स्वयं ज़िन्दगी और मौत का ज्ञान नहीं वह दूसरों को अमृत कैसे पिला सकेगा।

इसी लिए यहां अन्तिम बल इसी पर दिया है कि अब्रह्मचारी पुरुष या स्त्री कभी भी आचार्य के पवित्र आसन पर न बैठाए जायं । मक्कारी से जनता को धोखा देकर यदि कोई अब्रह्मचारी आचार्य बन भी जाय तब भी उसके प्रयत्न का परिणाम उसके वास्तविक रूपको प्रकाशित कर देता है । वृक्ष अपने फल से पहिचाना जाता है । जिस गुरु के चेले तपके जीवन में न ठहर सकें और स्वार्थ तथा भोग से न बच सकें, उस को ब्रह्मचारी न समझना चाहिए ।

जहां आचार्य पूर्ण ब्रह्मचारी हो वहां प्रजा का रक्षक राजा भी अवश्य ब्रह्मचारी ही होगा । एक सत्तात्मक राज्य या प्रजा तन्त्र राज्य दोनों में शासक ब्रह्मचारी ही होने चाहिएं । राजा या प्रधान पुरुष से लेकर चपरासी और चौकीदार तक सब प्रजा की रक्षा के काम में लगे हुए हैं । यदि प्रजा के "जान और माल की हिफ़ाज़त" वे नहीं करते तो उन्हें प्रजापति नहीं कह सकते । परन्तु क्यों ब्रह्मचारी ही प्रजापति बनने के योग्य है? इस लिए कि उसे राष्ट्र से ऊंचा उठना पड़ता । रक्षक वही हो सक्ता है जो अपने से रक्षित प्रजा से ऊंचा उठा हुआ है । निर्बलों की सहायता वही कर सक्ता है जो स्वयम् सबल हो, अन्यथा अन्धे को अन्धा गढ़े में ही गिरा देगा ।

जब शासक प्रजा से ऊपर उठा हुआ हो तभी सारे ऐश्वर्य का मालिक वह होता है । जो कामनाओं का दास है, सम्पत्ति का मालिक वह नहीं बन सक्ता । जो सम्पत्ति के पीछे स्वार्थ के मद से अन्धा हो कर दौड़ता है उस से सम्पत्ति कोसों दूर भागती है, परन्तु जो सम्पत्ति को लात मार कर ऊपर उठता है उस के पीछे सम्पत्ति भागी फिरती है । मुनिवर पतञ्जलि के शब्दों में अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम्-जो दूसरों के पदार्थ पर दृष्टि नहीं रखता उसके पास सारी दौलत हाथ बांधे खड़ी रहती है । गुसाईं तुलसीदास ने ठीक कहा है–"जिमि सरिता सागर महं जाहीं; जद्यपि ताहि कामना नाहीं । तिमि सुख सम्पति बिनहिं बुलाए; धर्म शील पहिं जाहिं सुभाए ।"–अपने अन्दर के पशु भाव पर विजय प्राप्त कर के ही स्वर्ग की प्राप्ति होती है । मर कर स्वर्ग प्राप्ति की लोकोक्ति के यही अर्थ हैं ।

तब शासक वही हो सक्ता है जो तप और सत्य के प्रभाव से साधारण प्रजा से ऊपर उठ जाय । तभी उस के वश में सारी प्रजा हो सक्ती है । इसी वेदाज्ञा का प्रभाव था कि भारत वर्ष में राजा के बेटे को राज गद्दी देने से पहले आचार्य कुल में रक्खा जाता था । एक दृष्टान्त से इस वेद मन्त्र के भाव को उत्तम रीति से स्पष्ट किया है । युवराज का गुरुकुल निवास का समय समाप्ति पर आया तो उस का पिता (राजा) उसे घर लाने के लिये आचार्य कुल में, सजे हुए घोड़े सहित गया । सारी दीक्षान्त की विधि पूरी होने पर आचार्य ने राजा से कहा कि अन्तिम एक शिक्षा बाकी है, उसके पूरा होते ही राजकुमार को उन के हवाले कर दिया जायगा । यह कह कर आचार्य कोड़ा हाथ में ले घोड़े पर चढ़गया और राजकुमार को साथ भागने को आज्ञा दी । आज्ञा पालक शिष्य साथ चल दिया । गुरु ने घोड़े को बहुत तेज कर दिया और जब राजकुमार पीछे रह ने लगा तो उस के कोड़े जमाता गया । राजा की आंखें क्रोध से लाल हो गईं । चक्कर काट कर गुरु ने राजकुमार को पिता का चरण छूने की आज्ञा दी और राजा को सम्बोधन कर के कहा–"राजन् ! शायद कल ही इस मेरे शिष्य को राजगद्दी मिल जाय और लाखों के जान और माल का रक्षक बने । तब अन्याय और अत्याचार से बचने के लिए इसे आज की शिक्षा काम आयगी, क्यों कि इस ने समझ लिया है कि पराधीनता और दासता में कितना कष्ट है ।" राजा सन्तुष्ट हो कर राजकुमार को घर लेगया । संसार इस समय नर्क कुण्ड इसी लिए बना हुआ है कि प्रजा के रक्षक ब्रह्मचारी नहीं हैं । शमित्योरेम्

श्रद्धानन्द सन्यासी

श्रद्धा

कोई किसी का स्थान नहीं लेता—

जब कभी किसी असाधारण पुरुष की मृत्यु होती है, तब पहला प्रश्न जो जनता के सामने आता है, यह है—"इसका उत्तराधिकारी कौन होगा?" जब 'पुलिटिकल सन्यासी' नामधारी गोपाल कृष्ण गोखले का देहान्त हुआ तब यही प्रश्न सामने आया था। गोखले महाशय अपना उत्तराधिकारी श्री निवास शास्त्री को बनागए थे। परन्तु क्या कोई कह सकता है कि शास्त्री जी ने उनका ठीक स्थान ले लिया। शास्त्री महोदय सच्चे देशभक्त त्यागी हैं, अपूर्व वक्ता हैं, समय आने पर न दबने वाले निर्भय राजधर्म सेवक है, परन्तु मैं यही कहूंगा कि वह गोखलेका स्थान नहीं लेसके।

आज लोकमान्यतिलक के विषय में भी वही प्रश्न उठ रहा है। अपनी अपनी बुद्धि के अनुसार सभी 'रमल' फेंक रहे हैं। माडरेटों के "अफलातून" मिस्टर सी.वाई. चिन्तामणी की सम्मति है कि छत्रपति तिलक महाराज का मणिमुकुट मिस्टर केलकर के शिर पर रख दिया जावे। अन्यों की अन्य विविध प्रकार की सम्मतिए होंगी और वह अपने अपने भाव के अनुसार होंगी। मिस्टर चिन्तामणि ने केलकर महोदय को क्यों चुना मैंने कारण कुछ मापा है। अमृतसर में जब संशोधित स्कीम के प्रस्ताव के विषय में महात्मा गान्धी एक संशोधन चाहते थे और उसके अस्वीकार होने पर कांग्रेस से अलग होने को तय्यार थे तो मैंने मिस्टर केलकर से कहा—"मैं मिस्टर सी.आर. दास को समझाने जाता हूं आप लोकमान्य तिलक को समझाइए।" उनका उत्तर विचित्र था। उन्हों ने कहा—"स्वामी जी! आप समझते हैं कि मेरा लोकमान्य पर कुछ प्रभाव है। उस कैम्प में तो मुझे प्रायः सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। परन्तु आपके कहने से मैं जाता हूं।" नागपुर के 'डाक्टर' "मूंजे" मेरे पास उतरे हुए थे। इस रहस्य पूर्ण उत्तर का मर्म पूछा। उन्हों ने उत्तर में कहा—"क्या आप ऐसी प्रसिद्ध बात नहीं जानते। मिस्टर केलकर तो माडरेटों के समान ही समझे जाते हैं।" बात चाहे यही हो कि जोशीले गरम आदमी प्रत्येक विचार शील को ही भीरू तथा संदिग्ध समझते हैं, परन्तु फिर भी यह घटना बतलाती है कि मनुष्य अपने हृदय का ही चित्र अपने कर्मक्षेत्र में खींच देते हैं। कोई हलौड मारामारी के समर्थक मिस्टर खापर्डे को ही लोकमान्य की गद्दी संभालने के योग्य और कोई किसी और को। मैं तो यहां तक कहने को तय्यार हूं कि यदि महात्मागान्धी को गद्दी दी जाय तो वह भी तिलका स्थान नहीं ले सके। गांधी जी भले ही उस गद्दी से एक बालिश्त ऊपर ठहर जायं परन्तु उस गद्दी पर नहीं बैठ सकेंगे।

यहतो असाधारण बड़े पुलिटिकल नेताओं का ज़िक्र है, धार्मिक, सामाजिक तथा अन्यक्षेत्रों का भी ऐसी ही हाल है। ब्राह्मसमाज में केशव के स्थान की पूर्ति किसने की? महर्षिदेवेन्द्रनाथ का उत्तराधिकारी कौन बना? रवीन्द्रनाथ ने संसारव्यापी यश प्राप्त किया परन्तु उन्हें महर्षि का उत्तराधिकारी नहीं कह सके। ऋषिदयानन्द की चर्चा जाने देते हैं। वहां तो इतना ही कहना पर्याप्त है कि ऐसे धर्माचार्य सैंकड़ों ही नहीं सहस्रों वर्षों के पीछे आया करते हैं। परन्तु गुरुदत्त विद्यार्थी के मरने के पश्चात् बीसियों ने स्वयं विद्यार्थी की उपाधि लेकर भी क्या उस महत्ता की गद्दी की ओर एक पग भी उठाया। वेदानुशीलन में अब भी कुछ उत्साही युवक लगे हुए हैं। परन्तु गुरुदत्त की बात ही और थी। वह छवि ही निराली थी। लाला साईंदास के पीछे कौन आया जिन की वक्तृता की विद्युत् एक की उपस्थिति में ही काम करती थी। लेखराम से पीछे कितनों ने 'आर्य्य मुसाफिर' की उपाधि धारण की, परन्तु क्या उनकी कोई तुलना लेखराम के साथ है। इतनी दूर क्यों जाय अभी-कल की बात है कि गुरुकुल कांगड़ी के स्वार्थ त्यागी और निष्काम सेवकों में से लाला बीरबर का देहान्त हो गया है। वह केवल स्टोरकीपर थे। परन्तु फिर भी बहुत सोचने पर भी उनका ठीक उत्तराधिकारी कोई नहीं मिलता है। तब क्या गुरुकुल के स्टोर का काम बन्द हो जायगा? बीरबर जी से भी शायद कई अंशों में उन्नत महाशय मिल जाय परन्तु मुख्याधिष्ठाता के मन की वह स्थिति न रह सकेगी जो बीरबर जी के समय में थी।

जिस प्रकार यह छोटा काम बन्द न होगा, इस प्रकार लोकमान्य के बिछोड़े पर उनका राजनीतिक काम बन्द न होगा। भेद केवल इतना रहेगा कि वह न होंगे।

क्या इस संसार में कोई भी किसी का उत्तराधिकारी हो सका है। मनुभगवान् तो यहां तक कहते हैं कि पुत्र भी पिता का उत्तराधिकारी नहीं हो सका वह लिखते हैं:—

"*नामुत्र हि सहायार्थं पिता माता च तिष्ठतः। न पुत्रदारं न ज्ञातिर्धर्मस्तिष्ठति केवलः॥* फिर लिखते हैं:—*मृतं शरीरमुत्सृज्य काष्ठलोष्टसमं क्षितौ। विमुखा बान्धवा यान्ति धर्मस्तमनुगच्छति॥*" 'परलोक में सहाय के लिए मा बाप नहीं रहते, न पुत्र न स्त्री। केवल एक धर्म रहता है। लकड़ी और ढेलासा मृतक शरीर भूमि पर छोड़कर भाई बन्द पीछे लौट जाते हैं—धर्म उसके पीछे जाता है।" तिलक महाराज का धर्म उनके साथ गया और जो काम धर्मानुसार वह यहां कर गए उस का परिणाम चिरस्थाई रहेगा। न वह किसी के उत्तराधिकारी थे और नही उनका कोई उत्तराधिकारी होगा। "*मुट्ठी बांधे आया बंद हाथ पसारे जात*"। वह न उधर से, सिवाय अपने पूर्वकर्मों के, कुछ लाए थे और यहां से सिवाय धर्म के, कुछ ले गए।

यदि लोकमान्य तिलक के सहायक मेरी बात मानें तो उनकी गद्दी संभालने के यत्न को छोड़ दें, और जिस हित और लगन से तिलक महाराज मातृभूमि की सेवा करते थे उसी को अपने अन्दर दृढ़ करें।

आर्य समाज को अब तक मैं प्रत्येक धर्म नीति में भारत वर्ष का पथ दर्शक समझता हूं। इस लिए प्रत्येक विषय पर लिखते हुए मेरे सामने आर्य समाज की अवस्था ही आखड़ी होती है कई बार आर्य समाज में द्वेषाग्नि को शान्त कर के एकता स्थापन करने का प्रश्न उठा, परन्तु उठते ही उबले हुए दूध की फेन की तरह थोड़े से छींटे खाकर ही बैठ गया। यह सर्द छींटे किधर से आते हैं? यह वही गद्दी का सवाल है। जो लोग समझते हैं कि अन्यों के बीच में आने से उनकी गद्दी छिन जायगी, वे बड़ी भूल कर रहे हैं। कोई व्यक्ति भी, चाहे कितना ही ऊंचा क्यों न उठा हो, दूसरे की गद्दी नहीं संभाल सकता यदि आदर्श मनुष्य समाज में—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चारों वर्णों की गुंजाइश है तो समझ में नहीं आता कि हर तरह से नेता की आर्य समाज के अन्दर क्यों गुंजाइश है। यदि यह मद मस्तिष्क से निकल जाय कि अकेले हम ही रहेंगे और उसका स्थान यह शुभ विचार ले लेवे कि इस विस्तृत क्षेत्र मे सब के लिए स्थान है तो आर्य समाज में आज सुलह हो जाती है।

मेरा दोहरा प्रोग्राम

असहयोग का चक्र कुछ नया नहीं चल रहा है। समाचार पत्रों में बीसियों बार दोहराया जा चुका है कि असहयोग भारत प्रजा का पुराना हथियार है। महात्मा गांधी का असहयोग का प्रोग्राम अवश्य विचारणीय है। उन का इस की आवश्यकता पर विश्वास है, और अन्यों का इस की आवश्यकता व उपयोगिता में सन्देह है। परन्तु इस से किसी को इन्कार नहीं कि सामयिक राज्यप्रबन्ध के साथ असहयोग प्रजा का अधिकार है।

महात्मा गांधी का असहयोग सीमाबद्ध है। यदि आज ब्रिटिश सरकार अपने मिन्त्रदल को रजा कर के खिलाफत के प्रश्न का फैसला गांधी जी के मतानुसार करदे, और भारतीय ब्रिटिश सरकार पंजाब में अत्याचार करने वाले अपराधियों को दण्ड दे दे, तो गांधी जी का असहयोग समाप्त हो जायगा। मेरी सम्मति में उस से भारत वर्ष के भविष्यत् भाग्य का कुछ भी निर्णय नहीं होता। गांधी जी के इस क्षणिक असहयोग से लाभ नहीं यह मेरा मत नहीं है, मेरा कहना केवल इतना है कि उस असहयोग के प्रचार से भारत माता के गौरव की पुनः पूरी स्थापना नहीं होती। गांधी जी का असहयोग एकतरफा है। उस में खंडन का ही स्थान है मंडन को नहीं। हां यदि उन का यह मत हो कि इस असहयोग से हिन्दु मुसलमानों की एकता दृढ़ हो जायगी तो किसी अंश में इस सहयोग भी वह समझते हैं।

मैं चाहता हूं कि खंडन और मंडन दोनों साथ २ चलें, असहयोग और सहयोग एक ही समय में काम करें। सत्याग्रह का घोषणापत्र लेकर जब गांधी जी मार्च सन् १९१९ के प्रथम सप्ताह में देहली आए थे, उसी समय मैंने उन के सामने यह प्रस्ताव किया था कि दो स्थिर असहयोग आरम्भ कर दिए जायं जिनका परिणाम बड़ा भारी सहयोग होगा। प्रथम यह कि नगर और ग्राम २ में उन के हिन्दू मुसल्मान सिक्ख ईसाई पारसी आदि सभी सम्प्रदायों के प्रतिनिधि लेकर पंचायती अदालतें बन जायं और ऐसा यत्न किया जाय कि कम से कम दीवानी का कोई भी मुकद्दमा अंग्रेजी अदालतों में न जाय। दूसरे एक स्वदेशी-वस्तुओं का ही भारत निवासी प्रयोग करें, और विदेशी वस्तुओं का सर्वथा बायकाट कर दिया जाय। उस समय गांधी जी ने यह कह कर मुझे चुप करा दिया था कि वह सत्याग्रह और असहयोग की विधि में निपुण (Expert) हैं, इस लिए उन्हीं के प्रस्तावित वर्जित साहित्य इत्यादि के बेचने से शीघ्र कृतकार्यता होगी। जब पल्वल के स्टेशन पर उन को गिरफ्तार कर लिया गया तो उस में उन्होंने स्वदेशी की घोषणा भेजी थी। स्वदेशी का तो प्रचार खूब होगया है, परन्तु मेरे पहले प्रस्ताव पर अभी तक विशेष ध्यान नहीं दिया गया।

देहली में जब गोली चली, और जब गांधी जी के गिरिफ्तारी पर हलचल मचा और १८, १९ दिन तक सभाएं होती रहीं, तो उन में भी मैं यह घोषणा देता रहा। फिर २३ जून को एक विशेष सभा करके, मैंने इस विषय में एक प्रस्ताव स्वीकार कराया, और एक प्रबन्धकर्तृसभा नियत कराई जिस के सभ्यों ने मिलकर कभी नियम ही नहीं किया।

मेरा प्रस्ताव है कि नगर नगर और ग्राम ग्राम में पंचायती अदालतें स्थापित की जावें। सब दीवानी मुकद्दमे उन्हीं के सामने उभय पक्ष की स्वीकृति से पेश हुआ करें। मैंने देहली में उन दिनों जब कि प्रजा का ही अधिकार और रामराज्य था, अनुभव कर के देख लिया था कि यदि पंचायती अदालतें चल निकलें, तो कोई भी मुकद्दमा अंग्रेजी अदालतों में न जाय। यदि यह स्थिर असहयोग चल जाय तो सरकार को सब न्यायाधीश मौकूफ करने पड़ें और फिर न जाने वह हकूमत किस पर करेगी। मेरा विश्वास है कि दीवानी मुकद्दमों को अंग्रेजी अदालतों में बचाने पर साधारण मारपीट के झगड़े जिन में वादी प्रतिवादी आपस में राजीनामा कर सकते हैं भी इन्हीं पंचायती अदालतों के सामने आने शुरू हो जावेंगे। यह तो इस असहयोग का अंश हुआ। दूसरा अंश सहयोग का है। जब कभी विविध सम्प्रदायों में सम्प्रदाय वा जातिसम्बन्धी कोई झगड़े उठेंगे, उन का फैसला परस्पर की सहायता से यह पंचायत करा सकेगी। और उस से न केवल हिन्दू-मुसल्मानों प्रत्युत सिक्ख पारसी ईसाई इत्यादि के अन्दर बड़ा दृढ़ एकता का बीज बोया जावेगा।

दूसरा बड़ा प्रस्ताव जिस को मैं जातीयता का बुनयादी पत्थर समझता हूं, करोड़ों से अधिक जातियों के साथ सहयोग है। अमृतसर कांग्रेस के अधिवेशन में मैंने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि जब तक उन भाइयों के साथ समता का व्यवहार नहीं होता, यहां तक कि रोटी बेटी का सम्बन्ध नहीं खोला जाता, तब तक कौम (Nation) की पुकार व्यर्थ है। यौरप की स्वार्थ परायण जातियां हमारे ६ करोड़ से अधिक भाइयों को हम से सदैव के लिए जुदा करने को तैयार हैं। अंग्रेजी पादरियों ने यहां की नौकरशाही के साथ सन्धि भी कर ली है, और अमेरिका में करोड़ों रुपया इसी शुभ संकल्प से जमा किया जा रहा है। यह लोग इस लिए ईसाई नहीं बनाए जाते कि वह मसीह को अपना बचाने वाला समझते हैं प्रत्युत इस लिए कि उनकी सामाजिक दशा सुधर जायगी। प्रिंसिपल रुद्रा और उनके साथ के सभ्य ईसाई मसीह पर ईमान लाकर भी अपने आप को भारत-पुत्र समझते हैं। परन्तु यह ६ करोड़ यदि अपना मन बेच बैठे तो समझना चाहिए कि डायरशाही के ६ करोड़ अंग और बढ़ गए।

ऊपर के विचारों से प्रेरित होकर मैंने निम्न-लिखित दो प्रस्ताव जातीय महासभा के संचालकों के पास कलकत्ते में भेजे हैं। मैं देखूंगा कि उनका भविष्य क्या होता है।

(क) इस कांग्रेस की सम्मति में भारत वर्ष के प्रत्येक ज़िले के सदर मुकाम पर एक पंचायती न्यायालय स्थापित करना चाहिए जिस में हिन्दू, मुसल्मान सिक्ख ईसाई, पारसी इत्यादि सब सम्प्रदायों के प्रतिनिधि मिल कर आपस के सब झगड़ों का निबटारा किया करें। ऐसे पंचायती न्यायालयों के नियम बनाने के लिए निम्नलिखित सज्जनों की एक उपसभा नियत की जाय जो नियमावली तय्यार कर कांग्रेस के वार्षिक साधारण अधिवेशन में पेश करें।

(१) श्री० सी आर दास (कलकत्ता)
(२) श्री० पण्डित मोतीलाल नेहरू (प्रयाग)
(३) श्री० मिस्टर जिन्नाह (बम्बई)
(४) श्री० विजयराघवाचार्य (मद्रास)
(५) श्री० लाला लाजपतराय (पंजाब)

(ख) इस कांग्रेस की सम्मति में वह समय आगया है जब कि उन जातियों के अधिकारों की उपेक्षा नहीं की जा सकती जिन्हें अछूत जातियों के नाम से पुकारा जाता है और इस लिए उन के सामाजिक अधिकारों को लक्ष्य में रखकर तत्काल ही उनकी सन्तानों का साधारण शिक्षणालयों में शिक्षण और उनका सर्व सभाओं के अधिवेशन में समाधिकार से प्रवेश आरम्भ कर दिया जावे और उनके साथ वैसा ही सामाजिक बर्ताव किया जावे जैसा कि हिन्दुओं के चार बड़े वर्णों और उन के उपविभागों में परस्पर प्रचलित है।

—०—

विचार तरंग

"थोड़ा सा"

(गतांक से आगे)

यह 'थोड़ासा' बहुत भयंकर वस्तु है। कभी इसको थोड़ा समझ उपेक्षा मत करना। केन्द्र से हिलते ही—थोड़ा या बहुत—सारे मंडल से सम्बन्ध बिगड़ जाता है। गुरुत्वाकेन्द्र से अतिरिक्त किसी भी अन्य स्थान पर वस्तु को संभाला नहीं जा सकता, वह स्थान फिर वहां से थोड़ी दूर हो या बहुत, इसी प्रकार संसार के व्यापी नियमों की सत्यरेखाओं से "थोड़ासा" भी हटने से जगत से हमारा संबन्ध बिगड़ जाता है और हम उसकी महान् रक्षा से तत्क्षण वंचित हो जाते हैं। अतः प्रश्न तो किसी काम के बिलकुल ही न करने या कर डालने में है, थोड़ा करने या बहुत करने में नहीं। और फिर यदि सुई की नोक से एक बार "थोड़ासा" भी छिद्र बना दिया गया तो उस से निकलने वाली धारा कुछ ही क्षणों में बढ़ कर एक भयंकर प्रवाह बहाने वाले मार्ग के रूप में आजाती है। थोड़ा कभी थोड़ा नहीं रह सकता। एक बार भी रस आजाने पर फिर उसे कौन छोड़ सकता है। मार्ग बन निकलने पर उसे कौन रोक सकता है। एक बार धारा में पड़ जाने पर फिर कौन वापिस लौट सकता है। इस लिये विचारने और संभलने का यदि कोई समय है तो तभी है जब कि प्रलोभन 'थोड़ासा, थोड़ासा' कहता हुवा हमें गढ़े में डालने के लिये पास आता है। उस समय कम से कम यह तो सोच लेना चाहिये कि जब मैं इस 'थोड़े से' को नहीं रोक सकता तो कब बढ़ जाने पर रोकूंगा। अब से यदि फिर कभी यह 'थोड़ासा' आवे तो कड़क के गंभीर स्वर से कह देना 'नहीं, कभी नहीं, बिल्कुल नहीं। क्या मैं इतना तुच्छ हूं कि इस 'थोड़सा' की बहकावट में आजाऊंगा। यह मेरे दृष्टिपात के भी योग्य नहीं है। मैं, जिस में महाशक्ति प्रवाहित हो रही है, अगाध, अटल हूं। मैं इस 'थोड़ेसे' से डिग जाऊंगा यह थोड़ासा ऐसा कह कर। इसे अस्वीकार करदो, लात मार दो, दूर फैंक दो।

किन्तु महा-आश्चर्य है कि प्रलोभन् के ही समय यह 'थोड़ेसे' का सिद्धान्त क्यों याद आता है। अच्छे कामों में 'थोड़ासा, थोड़ासा' क्यों नहीं किया जाता थोड़ा २ हम रोज़ क्यों न सत्संग करें, थोड़ा २ पढ़ने में प्रवृत्त हों……इत्यादि यहां भी थोडासा को कभी तुच्छ मत समझना। एक २ धूलिकण से हिमालय से पहाड़ खड़े हुवे हैं, एक २ बूंद से महासागर भरे हैं। एक एक पल से मिल कर यह अनन्त काल बना है, एक परमाणु में जुड़ कर यह विश्वब्रह्माण्ड खड़ा है। एक २ सत्कर्मों के पुष्पों से महात्माओं की चरित्रमालायें गूंथी गयी हैं, एक २ पग ऊपर रखने से उच्च से उच्च इन्द्रासन पहुंचे गये हैं। यही दिशा है जहां 'थोडासा' २ कर के जितना बढ़ा जाया उतना ही थोड़ा है। यदि इस 'थोड़ासा' के सिद्धान्त उचित प्रयोग है जिस के कि करते २ सहज में परम अभीष्ट प्राप्त किया जा सकता है। "शर्मन्"

—:o:—

श्रद्धा के नियम

१. वार्षिक मूल्य भारत में ३॥) विदेश में ५॥) ६ मास का २)

२. वी० पी० भेजने का नियम अब फिर कर दिया गया है। ६ मास से कम का वी० पी० नहीं भेजा जा सकता।

ग्राहकों से प्रार्थना

१. पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखा करें।

२. ३ मास से कम अवधि के लिए यदि पता बदलवाना हो तो अपने डाकखाने से ही प्रबन्ध करना उचित है। इससे कम समय के लिए हम बदलने में असमर्थ हैं।

प्रबन्धकर्त्ता श्रद्धा

डाक० गुरुकुल कांगड़ी (ज़िला बिजनौर)

———

(पृ० ८ का शेष)

हिन्दी मनोरंजन—सहयोगी का नया अगस्त अंक सुपाठ्य गल्पों के साथ निकला है। "कमंडल" और "उपहार इन दोनों का ढांचा (plot) बहुत उत्तम है। गल्पों के अतिरिक्त कवितायें भी बहुत भावपूर्ण हैं। "श्री० रामाराम शुक्ल की "भूला" यह कविता विशेषतः सुन्दर है। पाठकों के मनोरंजन के लिए एक पद्य हम यहां देते हैं:—

"सुन्दर तन का अभिमानी था।
समझा अपने को ज्ञानी था ॥
प्रभुवर! पर मैं अज्ञानी था।
दूध नहीं, उज्वल पानी था ॥
अब तो हाय मिटा जाता हूं ज्यों क्षणभंगुर
क्षुद्र बबूला।
मैं तुझको तू मुझको भूला ॥"

"हास्य विनोद" और "विविधविनोद' इन दोनों शीर्षकों के नीचे इकट्ठी की हुई विनोद सामग्री, पत्रिका के महत्व को और भी बढ़ा देती है।

गृह लक्ष्मी—सहयोगिनी पत्रिका का "चैत्र' का अंक इस समय हमारे सामने है। सरस्वती के आकार वाले ४०पृष्ठों में कई सुपाठ्य लेख हैं। "नवयुग का सन्देश" इस शीर्षक के नीचे लिखे गये प्रो० रामदेव जी के विचारों का संग्रह करने वाले श्री० बादरायण जी महाशय यदि और विचार से यह संग्रह करते तो अधिक उत्तम होता क्यों कि कई स्थलों पर उनके विचार कुछ अस्पष्ट भाषा में लिखे जाने से सर्वथा उलटे भाव के द्योतक होगये हैं। तथापि कवितायें और लेख साधारणतया अच्छे ही हैं। पत्रिका के संचालकों से हमारे दो निवेदन और हैं। एक तो यह कि कथा—कहानियों की अपेक्षा यदि महिलाओं के उत्तम २ लेखों को संग्रह करने में विशेष ध्यान दिया जावे तो अधिक उत्तम हो। और दूसरा यह कि संचालकों को यथा शक्ति, इसे ठीक समय पर प्रकाशित करने का प्रयत्न करना चाहिये। वैशाख के अन्तिम सप्ताह में चैत्र मास का अंक मिलना ग्राहकों को ज़रा खटकता है। तथापि पत्रिका स्त्रियों के लिए विशेषतः उपयोगी है।

संसार समाचार टिप्पणी

सहयोगी 'आनन्द' और सहयोग-त्याग

लखनऊ का सहयोगी "आनन्द" महात्मा गान्धी के सहयोग-त्याग से इस लिए विरुद्ध है क्योंकि इस से वैयक्तिक कष्ट होगा। यह बड़ी भद्दी युक्ति है। क्या सहयोगी संसार के इतिहास से एक मात्र प्राप्त इस शिक्षा को भूल गया कि बिना वैयक्तिक कष्ट उठाये कोई भी छोटे से छोटा आन्दोलन सफल नहीं हो सकता? जगत् के विस्तृत इतिहास में से यदि एक भी ऐसा उदाहरण सहयोगी पेश करेगा तो हम सहर्ष अपनी भूल मान लेंगे।

शोक जनक मृत्यु !!!

हमें यह लिखते हुए हार्दिक दुःख है गुरुकुल के प्रसिद्ध कार्यकर्त्ता श्री० ला० वीरबल जी का २५ श्रावण वा ७ अगस्त को देहली में देहान्त होगया। गत १३ वर्ष से आप निःस्वार्थ भाव और प्रेम से गुरुकुल की सेवा, केवल आजीविका मात्र पर, कर रहे थे। आप बड़े ही सरल चित्त धार्मिक और शान्तस्वभाव के व्यक्ति थे। अपने कार्य्य के प्रति आप को उत्साह और प्रेम होने के कारण गुरुकुल के अधिकारियों का आप पर अटूट विश्वास था। इसी कारण श्री मुख्याधिष्ठाता जी निःशंक होकर आप पर सब कार्य्य भार छोड़ते हुए कई सप्ताह बाहर रह सकते थे। उनकी अनुपस्थिति में आपने कई बार सहायक मुख्याधिष्ठाता का भी काम, बड़ी योग्यता के साथ किया था। पिछले मास आप अपनी धर्म-पत्नी का इलाज करवाने के लिए दिल्ली डा० विश्वदेव जी के पास गए थे। उनका इलाज करवाते २ आप स्वयं बीमार पड़ गए और क्रूरकाल ने इस तरह आपको हमसे छीन लिया। आपकी इस अकाल-मिक मृत्यु के कारण गुरुकुल को जो धक्का लगा है वह हम ही जानते हैं। आज कल जब कि गुरुकुल के लिए उत्साही सच्चे, निःस्वार्थ भाव से काम करने वालों की कमी है उस समय हमारे एक मुख्य कार्यकर्त्ता का इस तरह अचानक उठ जाना वस्तुतः कुल के लिए एक बड़ा भारी धक्का है। अन्त में आप के परिवार के साथ सहानुभूति प्रकट करते हुए हम ईश्वर से यही प्रार्थना करते हैं कि वह आपकी आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

स्वर्गवास !

हमें यह सुनकर बड़ा दुःख हुआ कि बम्बई के श्री वेङ्कटेश्वर प्रेस और पत्र के स्वामी श्रीयुक्त सेठ खेमराज जी का बम्बई में स्वर्गवास हो गया। वे बड़े ही धर्मनिष्ठ और परोपकारी सेठ थे। साहित्य व्यवसाय को अपनाकर उन्होंने समस्त देश में नाम पाया और सैकड़ों संस्कृतज्ञ पण्डितों और विद्वानों को आजीविका प्रदानकर पुण्य के भागी बने। सेठजी बड़े मिलनसार और सीधे साधे मनुष्य थे। मारवाड़ी जाति में जन्म लेकर उसका मुख उज्वल किया और देववाणी संस्कृत तथा मातृभाषा हिन्दी का बड़ा उपकार किया। मृत्यु के पूर्व ढाई लाख रुपये का दान सार्वजनिक कार्यों के लिये कर गये लोकमान्य के हाथ से बम्बई की सार्वजनिक सभा में आपको एक मानपत्र प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। हम परमेश्वर से उनकी सद्गति के लिये प्रार्थना करते हैं और उनके पुत्रों के साथ समवेदना प्रकट करते हैं।

सत्यवादी

'विजय' के नये सम्पादक

श्री० पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति ने, गुरुजनों की आज्ञानुसार दिल्ली छोड़ कर गुरुकुल में कार्य्य संभालने के कारण, सहयोगी 'विजय' की गति पिछले कुछ सप्ताह से, कुछ मन्द हो गई थी। हमें यह समाचार सुनकर, अब, हमें अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि हमारे स्नातक भाई श्री पं० सत्यदेव जी विद्यालंकार ने उसका सम्पादन—भार स्वीकार कर लिया है। हम द्वारा सम्पादित तिलक अंक को देख कर हम अब निःसंकोच कह सकते हैं कि 'विजय' फिर अपनी पुरानी शान को संभाल लेगा। अपने सहयोगी भाई पं० सत्यदेव जी की योग्यता 'परिश्रम' उत्साह और कार्यशक्ति से हम अच्छी तरह से परिचित हैं और हम विश्वास पूर्वक कह सकते हैं कि उन्हें इस कार्य में अवश्य ही सफलता होगी।

शैतान के घर दिवाली

हमारे हृदय सम्राट् लोकमान्य तिलक के देहावसान पर जहां न केवल भारत में अपितु इङ्गलैण्ड और अमेरिका में भी हा हा कार मच गया है वहां कुछेक गोरे पत्रों के घरों में सचमुच दिवाली की खुशियां मनाई जा रही हैं। कलकत्ते का 'स्टेट्समेन' और बम्बई का "टाइम्स आव इण्डिया" इस संकुचित और गर्हित नीति के ज्वलन्त उदाहरण हैं, "जिस पत्तल में खाया उसी में छेद किया" वाली कहावत के अनुसार ये हमारा खाते और हमारी ही जड़ें खोखली करते हैं। इसका एक ही उपाय है। अंग्रेज़ बनियों की जात है। वे जो कुछ करते हैं रुपये के लिए करते हैं। इस लिए जब कभी इनकी भरी हुई थैली पर आक्रमण होता है तब ये बुरी तरह से होश संभालते हैं। इनकी इस निर्बलता से लाभ उठाते हुए भारतियों को चाहिए कि वे इसे खरीदना और इस में विज्ञापन देना एक दम बन्द करदें। प्रसन्नता का अवसर है हमारे भाई इस मामले में सचेत हैं जिसका यह परिणाम है कि कलकत्ते आदि शहरों में धड़ाधड़ बहिष्कार के प्रस्ताव पास होरहे हैं।

—:०:—

ओ३म्

श्रद्धा ३० श्रावण १९७७ का क्रोड़पत्र

पुस्तक-परिचय

पाषाणी—यह नाटक बंगला के सुप्रसिद्ध नाटककार श्रीयुक्त द्विजेन्द्र लाल राय की प्रथम रचना है। उसका अनुवाद श्रीयुत रूपनारायण पाण्डेय ने हिन्दी में किया है जो कि अत्युत्तम हुआ है। मूल नाटक पद्यात्मक था किन्तु भाषान्तर गद्यपद्य मिश्रित किया गया है।

गौतम की पत्नी अहल्या की कथा ही इसका विषय है जिस से कि रामायण पढ़ने वाले सब परिचित हैं। महर्षि विश्वामित्र गौतम मुनि की परीक्षा लेने के लिये आते हैं तथा उन्हें पत्नी वियुक्त हो तपस्या करने के लिये चलने को कहते हैं। गौतम स्वीकार कर लेते हैं। दोनों तप के लिये चलेजाते हैं इस ही स्थान पर अहल्या के चरित्र की शिथिलता प्रथम२ प्रकट हो जाती है। वह नवयुवती थी उसकी सांसारिक सुखों के भोग की वासनायें तृप्त नहीं हुई थीं। वह एक मुनि के साथ विवाहित हो कर अपने आपको जंगल में बिखरी हुई शरच्चन्द्र की चन्द्रिका अथवा शुष्क वृक्ष पर चढ़ाई हुई चम्पक लता के समान हत भाग्य समझती थी।

एक तो अनिन्द्य सुन्दरी उस पर नवयौवन का विकास तीसरे पति का परदेश चले जाना चौथे अतृप्त वासनाओं का उल्लास—इन सब अवस्थाओं का जो अनिवार्य फल होना था वही हुआ। वह पतित हुई, इन्द्र के प्रेम में पड़ी, पुत्र शतानन्द का गला घोंट दिया, पवित्र पतिव्रत धर्म को तिलाञ्जलि दी और प्रेम पिपासा को बुझाने के लिये मृगतृष्णिका की ओर भागी। चञ्चल चित्त वाले इन्द्र ने अपनी पाप कामना पूर्ण कर बेचारी को धोखा दिया। स्वर्ग से गिरी तो पृथिवी पर भी जगह न मिली। नरक की भट्ठी में लुढ़क गई। मानवी से पाषाणी होगई। गौतम के पवित्र प्रेम से वञ्चित हुई उधर इन्द्र से सुख की आशा दुराशा मात्र रह गई। अन्त को श्री रामचन्द्र जी की चरण रज अर्थात् उनके उपदेशामृत से उसका उद्धार हुआ।

आजकल के बेमेल विवाहों के दुष्परिणाम का यह ज्वलन्त उदाहरण है। कवि ने अहल्या को शापसे पाषाणी नहीं किया किन्तु अपने परिताप तथा पश्चात्ताप से वह स्वयं शून्य हृदय अर्थात् पाषाणी होगई। यहां कवि की उत्कृष्ट कल्पना शक्ति का परिचय प्राप्त होता है परन्तु रामचन्द्र जी की साधारण बात चीत से उसकी अवस्था में एक दम परिवर्तन हो जाना अस्वाभाविक प्रतीत होता है। रामचन्द्र जी की बातों से उसके हृदय पर कोई विशेष प्रभाव पड़ता प्रतीत नहीं होता तथापि वह अन्त में अपना उद्धार मान लेती है। यह हमें कुछ खटकता है। अहल्या स्वयं चरित्र भ्रष्ट हुई थी यह नहीं कि उसने भूल से इन्द्र को गौतम समझ लिया था।

इन्द्र का चरित्र ठीक वह ही खींचा गया है जो कि पुराण में पाया जाता है। अहल्या को वश में करने के लिये काम देव को बुलाया गया है। उसको पढ़ते हुवे कवि कालिदास के कुमार संभव का तीसरा अंक याद आजाता है। कवि ने वहीं से यह भाव लिया है। इन्द्र और अन्धेर नगरी के दरबार में कोई भेद नहीं प्रतीत होता। इन्द्र तथा अहल्या का सम्बन्ध अत्यन्त शीघ्र होगया है जो कि अनुचित सा दीखता है तथापि ऐसी अवस्था में यह असम्भव नहीं। परिपूर्ण समुद्र चन्द्रमा के मुख को देखते ही विक्षुब्ध हो जाता है तथा मर्यादा को छोड़ देता है। अपने पाप का फल इन्द्र को अहल्या के हाथ से ही मिल जाता है। वस्तुतः परस्त्री लम्पटों की यह ही दुर्दशा होती है। कवि ने गौतम के चरित्र को उच्च दिखाने के लिये उस द्वारा आहत इन्द्र की सेवा करवाई है न कि पुराण प्रसिद्ध शाप दिलवाया है।

द्विजेन्द्र लाल राय की चरित्र चित्रण चातुरी को देख कर चित्त चमत्कृत हो जाता है। महर्षि गौतम का चरित्र कितना पवित्र है, वे गृहस्थी होते हुवे भी सर्वत्यागी मुनियों में परम श्रेष्ठ हैं। उनके सम्बन्ध से पापी पवित्र हो जाते हैं जैसे कि पारस के सम्पर्क से लोहा सोना बन जाता है। अन्त में अहल्या को क्षमा करने का दृश्य एक स्वर्गीय दृश्य है। इस दृश्य में उनका हृदय अपार पारावार के समान गम्भीर तथा विशाल हिमवान् के समान महान् दृष्टि गोचर होता है। विश्वामित्र उनके महत्व को देख कर मन्त्र मुग्ध हो होजाते हैं।

नाटक के सभी दृश्य अत्यन्त मनोरंजक तथा शिक्षा प्रद हैं। अनुवाद भी ऐसा उत्तम हुआ है कि कवि का भाव कहीं लुप्त नहीं होने पाया जैसे कि दर्पण में पूरा पूरा प्रति बिम्ब पड़ जाता है। यह पुस्तक हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय बम्बई से प्रकाशित हुई है मूल्य ॥।) आने।

"व"

जया जयन्त—गुजराती भाषा के महाकवि श्रीयुत नन्हालाल दलपतराम महोदयकृत 'जयाजयन्त' नामक नाटक का हिन्दी अनुवाद हमारे सामने है। श्री गिरिधर शर्मा जी इस के अनुवादक हैं। श्रीयुत नन्हालाल जी का यह प्रथम ही ग्रन्थ हमारे देखने में आया है। यह पद्यात्मक नाटक का पद्यात्मक हिन्दी अनुवाद है। अभी तक हिन्दी साहित्य में अतुकान्त कविता तथा पद्यात्मक नाटकों का प्रचार नहीं हुआ है, केवल एक दो ही पुस्तक इस प्रकार के प्रकाशित हुवे हैं। अन्य प्रचलित भाषाओं में इस प्रकार के अनेक नाटक तथा काव्य बने और बनते हैं किन्तु

हिन्दी भाषा में अभी तक इस प्रकार के साहित्य का प्राय: अभाव ही है। यह कार्य वस्तुतः कठिन है। तुकान्त कविता में यदि विशेष उत्तम भाव न भी हों तो भी वह बुरी नहीं मालूम होती किन्तु अतुकान्त कविता के लिये तो आवश्यक है कि वह विशेषतया भव्य भाव भूषित हो। जो फूल देखने में अत्यन्त सुन्दर होते हैं उन में चाहे मधुरगन्ध न भी हो लोग उन का कुछ न कुछ आदर करते हैं किन्तु जिन फूलों में बाह्य सौन्दर्य्य नहीं उन्हें आदर प्राप्त करने के लिये सुगन्धित होना अत्यावश्यक है। यह कहना नहीं होगा की कवि महोदय की अनुपम प्रतिभा रूप सुरभि से यह काव्य कुसुम कितना कमनीय होगया है। कोई समय आवेगा कि सहृदय हृदय इस के महान् महत्व को स्वयं समझेंगे। यह रचना साहित्य संसार में एक उज्ज्वल रत्न है, तारकित गगन मण्डल में चन्द्र लेखा तथा पुष्पित उद्यान में मालतीलता के समान है। इस को पढ़ते समय आत्मा मानुषीय संसार से कुछ ऊपर उठ जाता है। वह अपने आप को स्वर्ग के किसी प्रदेश में विहार करते पाता है। कभी तुषार शुभ्र कैलाश के शिखरों पर घूमता है, कभी कलकल करती हुई आकाश गङ्गा की तरंगों की उमंग में घूमता है कभी मानस विलासी राजहंसों की लीला में विलीन हो जाता है, कभी दिव्यवीणा की अनुपम तान में चेतना विहीन हो जाता है।

हम स्वयं गुजराती भाषा नहीं जानते जिस से कि हम यह निर्णय कर सकते कि अनुवादक महाशय अपने प्रयत्न में कहां तक कृतकार्य हुवे हैं तथापि हम उनका धन्यवाद किये बिना नहीं रह सकते जिन की कृपा से हमें इस सुचारु रचना के रसास्वदन का सौभाग्य प्राप्त हुवा है। किसी भी ग्रन्थ का—विशेष कर कविता का अनुवाद अथवा भाषान्तर करना कितना कठिन कार्य है यह किसी से छिपा हुवा नहीं है। प्रथम तो कवि के भावों को समझना ही सुगम नहीं उस पर भी उन को भाषान्तर में प्रकट करना तो महा दुष्कर है। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुवे हम एक दो बातें अनुवादक महाशय की सेवा में अवश्य निवेदन करेंगे (१) अतुकान्त पद्यात्मक नाटक का अतुकान्त पद्यात्मक अनुवाद करने के लिये हिन्दी का ही कोई अच्छा, गाने योग्य अथवा उच्चारण कर ने योग्य प्रचलित छन्द चुनते तो अत्युत्तम होता। (२) जहां २ विशेष तौर पर गाने की कवितायें रक्खी गई हैं उन्हें तुकान्त गेय छन्दों में ही अनुवाद करना चाहिये था। (३) हिन्दी अनुवाद में स्थान स्थान पर गुजराती ढंग की ही वाक्य रचना हो गई है जैसे—"बजाओ आप की वेणु, और जगाओ जीवन—का मन्त्र" (३९ पृ०) यहां पर 'आप की' के स्थान पर 'अपनी' होना चाहिये।

"अहा ! गावेगी तेरा–हंसों के आवाहन का गीत ?" (२५ पृ०) यहां भी 'तेरा' के स्थान में 'अपना' होना ठीक है। इसी प्रकार आगे "पिता ! अपराधी न करो, मुझे दुखी की है आपने" यहां पर "मुझे दुखी किया है आप ने" ऐसा होना चाहिये था–इत्यादि।

हमें आशा है कि अनुवादक महाशय हमारी इन दो तीन बातों पर ध्यान देंगे। हमें उन द्वारा हिन्दी साहित्य की बहुत कुछ सेवा होने की पूर्ण आशा है। "कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे" अर्थात् मधुर उपदेश द्वारा मनुष्य समाज के आचार को सुधारना ही काव्य नाटक आदि का मुख्य उद्देश्य है जिसे यह 'जयाजयन्त' नाटक अवश्य ही पूर्ण करेगा। पुस्तक अत्यन्त उपादेय है। मूल्य १) श्री गिरधरशर्मा नवरत्नसरस्वती भवन। झालरा पाटरन शहर राजपूताना से प्राप्त होती है। "व"

'जागृति' 'कवि' श्रीयुत मेलाराम अग्रवाल भिवानी, मिलने का ठिकाना, नरसिंहदास मेलाराम, कालबादेवी रोड़ बम्बई मूल्य ॥)

छोटे साइज़ के १८० पृष्ठों में श्रीयुत मेलाराम जी ने अपनी प्रतिभा का ख़ासा आविष्कार कर दिखाया है। ऐसे अच्छे काग़ज़ों पर, ऐसे साफ़ टाइप में, कविता देवी का ऐसा उपहास शायद ही कहीं मिले, कवि कालिदास, केवल शृंगार के कवि थे, भवभूति का करुणा में कमाल था, और बाण अद्भुत में चमत्कार दिखाता था—पर श्रीयुत मेलाराम वैश्य ने ईश्वर से लेकर रीडिंग रूम तक को अपनी प्रतिभा का शिकार बनाया है। कोई प्रचलित विषय शायद ही कवि ने छोड़ा है। सभी पर कविता कर डाली है।

लेखक के विचार उत्तम हैं। ग्रन्थ का आशय श्रेष्ठ है। बीच २ में मार्मिक वाक्य भी हैं। परन्तु वह बड़ा भारी साहसिक होगा जो इन १८० पृष्ठों में लिखी हुई पंक्तियों को कविता कहे कविता है या तुकबन्दी—यह फैसला करने की आवश्यकता तब पड़ती, यदि पद्यों के पद तुकबन्दी की कसौटी पर ठीक उतरते। पर यहां तो मात्रा भी गड़बड़ है। कहीं डेढ़ मात्रा अधिक है तो कहीं आधी मात्रा कम है। कुछेक चुने हुए नमूने लीजिये

(१) "वीणा बजा रहा है कौन (?) पास में हमारे"। इस पद्यार्ध में 'कौन' उड़ाने से पद ठीक हो सकता है।

(२) "कब चढ़े मैंढुक तुलाये तोल में आती नहीं"। यहां 'ये' हरतरह से फ़ज़ूल हैं।

(३) बने बनाये स्थान सभी हैं और रहता पुजारी

(४) मन्दिरों में पढ़ते विद्यार्थी पूर्वकाल के बीच।

इन पद्यों को स्वर से गाने के लिये गायक को जितना यत्न करना पड़ेगा, उसे सहृदय पाठक स्वयं समझ सकते हैं।

विचार सब श्रेष्ठ हैं, क्या यह आवश्यक है कि उन्हें छन्दोबद्ध ही किया जाय। कविता करना एक कठिन कार्य है। छन्द शास्त्र की सब शर्तें पूरी होने पर भी कविता पूरी नहीं होती। जब तक कि अर्थ विस्मय या आश्चर्य जनक न हो–रसात्मक न हो–परन्तु जब छन्दों की रचना भी पूरी न होतो फिर कविता करने का यत्न केवल उपहास्य ही नहीं दुःख जनक भी है,। हम अग्रवाल महाशय से और अन्य बहुत से धार्मिक समाजों के आशु कवियों से निवेदन करना चाहते

हैं कि वह उत्तम भावों को गद्य में ही प्रकाशित किया करें। उस में न उनका भाव बिगड़ेगा और न कविता देवी का अंग भंग होगा। जिस देवी की वह उपासना करने चलते हैं उसी का उपहास कर देने में क्या उन्हें सुख हो सकता है।

'र'

वैराग्य शतक—अनुवादक, श्रीयुत हरिदास वैद्य, प्रकाशक हरिदास एण्ड कम्पनी कलकत्ता मूल्य २)

हरिदास कम्पनी ने लोक प्रिय पुस्तकों के प्रकाशित करने में अच्छा नाम कमाया है। रूप रंग और छपाई में इस कम्पनी की पुस्तकें अनिन्द्य हैं। पुस्तक हाथ में लेकर पढ़ने को जी चाहता है। इस कम्पनी की पुस्तकों की एक विशेषता यह भी है कि प्रायः सब पुस्तकों में चित्र भी होते हैं। इस वैराग्य शतक में भी ऊपर कही हुई, सब विशेषताओं की रक्षा की गई है।

वैराग्य शतक के हर एक श्लोक का पहिले हिन्दी गद्य में अर्थ दिया गया है, फिर हिन्दी पद्य में और अंग्रेजी में उसका अनुवाद दिया गया है। हिन्दी के पद्य प्रायः उत्तम हैं। अंग्रेजी अनुवाद के लिए ग्रन्थकार ने किसी विद्वान अनुवादक की सहायता ली है या नहीं यह नहीं बताया गया है। भर्तृहरि के श्लोकों का अभिप्राय स्पष्ट करने के लिए और कहीं रौनक बढ़ाने के लिए तुलसी सूरदास गालिब ज़ौक आदि महाकवियों के समानार्थ वाक्य भी उद्धृत किए गए हैं। उनसे पुस्तक की मनोरंजकता बढ़ गई है। बीच २ में श्लोकों के अभिप्राय को स्पष्ट करने के लिए चित्र दिए गए हैं, जिनके बारे में इतना ही कहना पर्याप्त है कि जितने हैं, वह अच्छे हैं, और होते तो और भी अच्छा होता। भर्तृहरि ने वैराग्य शतक, इस उद्देश्य से बनाया था कि संसारी लोग वैराग्य द्वारा बन्धनों से छूट सकें। उस शतक को वैद्य हरिदास जी ने ऐसे लुभावने रूप रंग में प्रकाशित किया है कि हमें सन्देह होगया है कि लोग इसे पढ़कर संसार की माया से छूटेंगे—या उसके जाल में फंसेंगे। इतना निःसन्देह कहा जा सकता है कि वह इस रूप रंग को देखकर दो रुपयों के बन्धन से छूट जायंगे। सब वस्तुओं पर ध्यान देते हुए इस साड़ी सलवार से सुसज्जित वैराग्य प्रचारिणी वारवनिता के लिए दो रुपये में कुछ अधिक प्रतीत नहीं होते।

'र'

आर्यसमाज का इतिहास: (द्वितीय भाग) सम्पादक, पं० नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ। मूल्य १॥)

आर्य समाज के उत्तम इतिहास की आवश्यकता चिरकाल से अनुभव हो रही थी। पं० नरदेव शास्त्री के इस इतिहास ने उस आवश्यकता को और भी बढ़ा दिया है। एक प्रामाणिक इतिहास का अभाव जनता को खटक रहा था—इस पुस्तक के छपने से वह और भी अधिक ज़ोर से खटकने लगेगा।

इस इतिहास के एक बड़े हिस्से में आर्य्य समाज के गुण गाये गए हैं, दूसरे बड़े हिस्से में उस पर अपनी राय दी गई है, तीसरा हिस्सा प्रत्येक प्रसिद्ध आर्य्य समाजी को ग्रन्थ कर्त्ता की सम्मत्यानुसार सार्टिफिकेट देने में व्यय किया गया है। और शेष भाग में ऐसी कुछ घटनायें दी गई हैं जिन्हें इतिहास कहा जा सके।

यदि इसका नाम इतिहास है तो उस अभागे शब्द की कोई दूसरी ही व्याख्या करनी होगी। इसे कुछ संस्थाओं तथा व्यक्तियों का महत्व बढ़ाने या घटाने की दृष्टि से बनायी हुई आर्य्यसमाज की अधूरी डायरी कहें तो अधिक उचित होगा। अपनी राय में ग्रन्थकर्ता ने एक ही तीर से दो पक्षी मार दिये हैं—इतिहास भी लिख डाला है, और व्यक्तियों से पुराने हिसाब भी चुका लिये हैं। इस कार्य को कामयाबी से करने का उन्हें पूरा अधिकार था उस में समालोचक को कुछ कहना नहीं, कहना है इस बात पर कि ऐसा इतिहास 'न भूतो न भविष्यति' ग्रन्थकर्ता के हृदय के उद्वेग और विकार पुस्तक के एक एक पृष्ठ में झलक रहे हैं। शायद किसी समय में—शायद पौराणिक काल में—इस का नाम इतिहास होगा—परन्तु इस समय की वैज्ञानिक भाषा में इस का नाम इतिहास नहीं।

इस इतिहास (?) ने आर्यसमाज को उत्तम इतिहास की आवश्यकता को और भी बढ़ा दिया है।

'र'

पतित पावन:—लेखक श्री पं० श्रीराम-शर्मा, मिलने का पता, भगवद्दत्त बन्धु मण्डली बड़ौदा। आकार मझोला पृ० सं० १९२ मूल्य ।||-)

हमारे देश में इस समय लग भग ६ करोड़ दीन अछूत हैं जिन की बड़ी दुर्दशा है। प्रस्तुत पुस्तक में जहां देश के प्रसिद्ध नेता स्वर्गीय मि० गोखले, महात्मा गांधी, ला० लाजपतराय आदि २ के भाषणों से इसकी आवश्यकता दर्शायी गई है वहां "प्रमाण और इतिहास" इस अध्याय में ऐतिहासिक उदाहरण और शास्त्रीय प्रमाणों से भी पतितोद्धार की आवश्यकता पर बल दिया गया है। पुस्तक खोज और परिश्रम से लिखी गई है। वैदिक धर्मावलम्बियों को अपने प्रचार में यह पुस्तक सहायक हो सकती है।

"र"

सयाजी चरितामृत:—पूर्वोक्त लेखक और पूर्वोक्त ही प्रकाशक। आकार मझोला, दूसरा संस्करण, पृ० सं० २५५ मूल्य १॥)

१२ चित्रों के अतिरिक्त इस पुस्तक में बड़ौदा नरेश के विस्तृत जीवन और उत्तम २ व्याख्यानों का संग्रह किया गया है। गायकवाड़ जैसे कर्मशील और सुधारक नरेश का जीवन चरित्र सब हिन्दी प्रेमियों को पढ़ना चाहिए। "शासन काल" इस शीर्षक वाला अध्याय विशेष खोज और विवेचना से लिखा गया है। भाषा यदि और रोचक, सरल और शुद्ध होती अधिक अच्छा होता।

'र'

अर्जुन:—अनुवादक श्री० डा० कृष्ण-गोपाल माथुर, प्रकाशक हरिदास एण्ड को, आकार मझोला, पृ० सं० १५२,

मूल्य १।) है। चिकने कागज़ पर उत्तम छपाई है।

प्रस्तुत पुस्तक बंगला के प्रसिद्ध लेखक श्री० बा० योगेन्द्रनाथ गुप्त का स्वतन्त्र भावान्तर है। वीरशिरोमणि, नरपुंगव 'अर्जुन' का नाम कौन भारत सुपूत नहीं नहीं जानता? उस महावीर, महायोद्धा का सुमधुर, ललित, सरस शुद्ध और भावमयी होने के अतिरिक्त ओजस्विनी भाषा में यदि जीवन चरित्र पढ़ना हो तो प्रस्तुत पुस्तक प्रत्येक हिन्दी प्रेमी को अवश्य पढ़नी चाहिए। अनुवाद बहुत उत्तम हुआ है। पुस्तक में १० के लग भग रंगीन चित्र भी हैं जिससे इस का सौन्दर्य्य और भी बढ़ गया है। उत्सवों वा जन्मदिवसों पर पुस्तक भेंट देने के काम आ सकती है।

"द"

भूलोक का अमृत(दूध):—लेखक वैद्य-गोपीनाथ गुप्त हल्दौर (बिजनौर), प्रकाशक आर्य्य पुस्तकालय (हल्दौर), आकार मझोला: पृ० स० ६१, दाम ।-)

इस छोटसी पुस्तक में दूध के गुण उपयोग परीक्षा इत्यादि प्रश्नों पर विचार पूर्वक प्रकाश डाला गया है। पुस्तक पठनीय है और संग्रहणीय है।

'द'

जीवन निर्वाह:—लेखक श्री० बा० सूरजभानु जी वकील (सहारनपुर) प्रकाशक हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर—हीराबाग बम्बई। आकार मझोला, पृ० २०३ मूल्य १) है। छपाई और कागज़ उत्तम है।

इस पुस्तक में लेखक ने सभ्यता, मनुष्य, धर्म, समाज इत्यादि के भिन्न २ अंगों पर स्वतन्त्र रीति से विचार किया है। यद्यपि कई स्थलों पर लेखक के पक्षपात से काम लेने के कारण हम उनके विचारों से असहमत हैं पर तो भी पुस्तक मौलिक है और खोज तथा परिश्रम से लिखी गई है। "मन को अपने आधीन रखना" "इन्द्रियों को वश में करना" क्रोधादिकषायों को वश में रखना" "काम वासना" "कलियुग और पुरुषार्थ" इत्यादि अध्याय विशेषतया पठनीय हैं। पुस्तक पुस्तकालयों में रखने योग्य है।

"द"

वीर प्रहलाद —भक्त प्रह्लाद का जीवन-चरित्र उर्दू में नए ढंग से लिखा गया है। पुस्तक को रोचक बनाने में कोई कसर नहीं उठा रक्खी है। लाला जिंदीदास ऐसी ही लाभदायक ८६ पुस्तकें पहले छपवा चुके हैं, यह नं० ८७ है। पुस्तक महात्मा गान्धी के अर्पण की गई है। जिंदीदास पुस्तक भंडार लाहौर से मिल सकती है।

मेहरबानी के पाठ—इस नाम से एक ८ पृष्ठ का ट्रैक्ट फीरोजपुरकी पशु-मित्रसभा के मन्त्री लाला भक्तराम ने छपवाया है। मूल्य दो पैसे। पशुओं पर दया सम्बन्धी ४ छोटी कहानियां हैं। बच्चों को पढ़ा देनी चाहिएं।

अमृत—उर्दू का मासिक पत्र। रियासत पटियाला से निकलता है—सम्पादक महाशय धन्नाराम आर्य वैद्य—वार्षिक मूल्य ३)

वैशाख १९,, का अंक समालोचनार्थ आया है। वैद्यक सम्बन्धी लेखों और नोटों के अतिरिक्त वेद भाष्य पर एक विशेष कल्पनात्मक लेख है। तथा अन्य उपयोगी विषयों पर अच्छे नोट रहते हैं। उर्दू जानने वालों के मतलब का मासिक पत्र है।

हिन्दी शिक्षा की नवीन पद्धति (हिन्दी प्राइमर) वर्तमान पद्धति में बच्चे को प्रथम वर्णमाला के वर्ण घोटने होते हैं फिर उन वर्णों को मिलाकर सरल कर के शब्द बनाने होते हैं जो कि उस बाल-मस्तिष्क के लिये अत्यन्त कठिन कार्य है। इसी विचार को सामने रख कर महाशय बिहारीलाल जी अध्यापक नार्मलस्कूल लाहौर ने नवीन पद्धति से हिन्दी सिखाने के लिये 'हिन्दी—प्राइमर या बालोद्यान' पुस्तक लिखी है। कई वर्ष से आप शिक्षा विभाग में कार्य्य कर रहे हैं और इसी लिये आप ने बालकों के मस्तिष्क का पर्याप्त अध्ययन किया है। हमने पुस्तक को आद्यन्त देखा है। हम समझते है कि हिन्दी शिक्षा की यह एक उत्तम पद्धति है।

बालक पहले दीर्घ वर्ण सहज में उच्चारण करसकता है शनैः शनैः ह्रस्व उच्चारण करना सीखता है। प्रथम प्रथम ऐसे शब्द चुने गये हैं जो सार्थक हैं और दो वर्णों से मिलकर बने है जैसे आम—आम—बल—अन—आदि इसी प्रकार शनै शनै बालक को पदार्थ और पदार्थों के चित्र दिखाकर वर्ण माला तथा शब्द समूह का ज्ञान दिया गया है पुस्तक की उपयोगिता इसी से जानी जासकती है कि पंजाब सरकार की टैक्स्टबुक कमेटी ने इसे पसन्द किया है।

हिन्दी को उच्च श्रेणी की राष्ट्र भाषा बनाने के लिये आवश्यक है कि इस की शिक्षा पद्धति को सुगम बनाया जावे। इस क्षेत्र में महाशय बिहारीलाल जी का यह प्रथम प्रयत्न है और अत्यन्त सराहनीय है। आशा है शिक्षा प्रेमी इस पद्धति का हृदय से स्वागत करेंगे। मूल्य -)॥ और अतरचन्द कपूर एण्ड सन्स बुकसेलर्स, पब्लिशर्स और प्रिंटर्स से प्राप्य है।

नन्दकिशोर विद्यालंकार

प्राप्ति स्वीकार

—निम्न लेखकों की पुस्तकें आयी हुई। तदर्थ अनेक धन्य वाद

गुरुकुल का प्रसाद और सामायिक गीतावली:—दोनों पुस्तिकाओं के लेखक श्री० पं० शिवचरण लाल कालपी मूल्य -)

ब्राह्मण कौन है? लेखक श्री० स्वामी मंगलानन्दपुरी प्रयाग और उन्हीं से प्राप्त, मूल्य ३ पैसे।

गणराज त्रै:—ले० बा० प्रसाद गुप्त अलीगढ़ लेखक से प्राप्य मूल्य -)

पतितोद्धार: (उर्दू में) अनाथालय मुज़फ़्फ़रगढ़ की रिपोर्ट और वहीं से प्राप्य, मूल्य लिखा नहीं।

निस्नेह अर्थात् विनियोग. (उर्दू में) लेखक श्री० स्वामी ब्रह्मानन्द जी परमहंस पिलीभीत उन्हीं से प्राप्य मूल्य लिखा नहीं।

—:०:—

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिए छपा।

सार और सूचना

१. महाशय भगतराम मंत्री एनिमेल फ्रेंड्स सोसाइटी फिरोजपुर छावनी से पशुओं पर बहुत अधिक भार लादने से होने वाली हानियों को दरशाते हुये उन पर उचित भार लादने की ओर जनता का ध्यान आकर्षित करते हैं।

२ नजीबाबाद की मित्र सेवा समिति के मंत्री श्री बिहारी लाल जी शर्मा सूचना देते है कि इस समिति का वार्षिकोत्सव २५-२६-२७ सितम्बर को होना निश्चित हुआ है और साथ ही में रुहेलखण्ड डिविजन की समिति की कानफ्रेंस भी होगी जिसमें बहुत सी बातों पर विचार होगा। समितियों से पत्र द्वारा प्रतिनिधि और प्रस्ताव भेजने के लिए लिखा जारहा है। ठहरने और भोजन आदि का प्रबन्ध समिति की ओर से होगा।

३ गुरुकुल के सहायक मुख्याधिष्ठाता श्रीयुत पं० इन्द्र जी सूचना देते हैं कि गुरुकुल शिक्षक सम्मेलन अब गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ में न होकर गुरुकुल कांगड़ी में ही पुरानी तिथियों पर (अर्थात् ३२ श्रावण वा १५ अगस्त) होगा जिस में निम्न दो विषयों पर विचार होगा-

(१) गुरुकुल में अंग्रेजी की शिक्षा कब से प्रारम्भ हो—

(२,व्याकरण की पढ़ाई को कैसे सरल बनाया जा सकता है।

सब गुरुकुल शिक्षा प्रेमियों से पधारने की प्रार्थना की गई है—

भूल-संशोधन

पिछले सिलकाङ्क में "हा !! तिलक !!! वाली कविता कुछ अशुद्ध छप गई थी। हमें पूर्ण आशा है कि सहृदय पाठक उस को इस तरह मिलाकर पढ़ लेंगे।

तीसरे पद में—अजब हैं चुप हैं !!
ऐसा चाहिए।

दूसरे पद में—रंग की जगह ढंग चाहिए

छठे पद में—देख जाता है !! वो जाता
है !! ऐसा चाहिये।

सातवें पद में—बिना इसके छिपाता
क्यों है ?
क्यों नाहक रुलाता है !!!
ऐसा चाहिए।

उप सम्पादक

आर्य्य-सामाजिक-जगत्

क्या आर्य्य-विरादरी को आवश्यकता है?

यह प्रश्न कई बार उठ चुका है कि आर्य्य बिरादरी की आवश्यकता है वा नहीं। इतना ही नहीं, हमें याद है, कि पंजाब के कुछ दृढ़ और उत्साही आर्य्य-युवकों ने इसे कार्य में परिणित भी किया था परन्तु वे भी अपने प्रयत्न में विफल हुए। सहयोगी "आर्य्य-मित्र" ने अब यह फिर प्रश्न उठाया है। सहयोगी की सम्मति में आर्य्य बिरादरी अवश्य बननी चाहिए क्योंकि "हिन्दू बिरादरी ही आर्य्य समाज के लिए मौत है।" हम इस विषय में अपनी असहमति प्रकट किये बिना नहीं रह सकते। हम तो समझते हैं कि इस प्रकार अलग एक बिरादरी बनाने से जहां हमारा न केवल कार्य्यक्षेत्र अपितु विचार क्षेत्र भी संकुचित हो जावेगा वहां हम भारत में एक और उपजाति के पैदा करने वाले हो जावेंगे जब कि इस अभागे देश में पहले ही ३०० से ऊपर उपजातियां विद्यमान हैं। इस विषय में हमें ब्राह्मोसमाज के इतिहास से शिक्षा लेनी चाहिए। केशवचन्द्र सेन आदि कुछ ब्रह्म समाजियों ने मिलकर, इसी प्रकार, अपनी एक अलग बिरादरी स्थापित की थी। उस से जहां अन्य देश वासियों में एक दिवार खड़ी हो जाने से जातीय एकता में बाधा पड़ी वहां दूसरी ओर उनको अपने समाज में भी फूट पड़ गई और अवस्था यहां तक पहुंच गई कि अदालत के दरवाजे कई बार खटखटाने पड़े। ऐसी संकुचित बिरादरियों में यह बात स्वाभाविक होती है कि हरेक अपने को दूसरों से दृढ़ धार्मिक सिद्ध करने की इच्छा से दूसरों पर आक्षेप करता है और उनके छिद्र ढूंढता रहता है जिस का स्वाभाविक परिणाम फूट है।

ब्राह्मो समाज में यही हुआ और आर्य्य समाज में भी यही होगा यदि हमने भी, उनकी तरह, बिरादरी बनाने के लिए इतना उतावलापन दिखाया। इस समय हिन्दू-समाज पर आर्य्य-समाज का चुप चाप बहुत प्रभाव पड़ रहा है। ऐसे उदाहरण कम नहीं हैं जहां कि आर्य पति ने अपनी पत्नी को वा आर्य पत्नी ने अपने पति को आर्य्य, अपने दृढ़ सामाजिक चरित्र से, बना लिया हो। यदि हमने भी बिरादरी का जूआ अपने गले डाल लिया तो यह प्रशंसनीय कार्य जो कि केवल समय आप से आप हो रहा है, सर्वथा बन्द हो जावेगा। इन सब विचारों को दृष्टि में रखते हुए हम तो आर्य्य-बिरादरी की तनिक भी आवश्यकता नहीं समझते।

वेद प्रचार की सहायता करो

२. आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मन्त्री श्री० पं० ठाकुरदत्त जी शर्मा वैद्य ने हमारे पास वेद प्रचार फण्ड के लिए एक लम्बी अपील भेजी है जिस में ५० हजार रुपये की आवश्यकता दर्शाई गई है। इस के अतिरिक्त, ट्रैक्ट बांटने के लिए सभा ने तो १ हजार का बजट पास किया है परन्तु श्री० मन्त्री जी ने २ हजार की अपील की है। वेद प्रचार फण्ड की आर्थिक दशा कितनी शोचनीय है, यह किसी से भी छिपा हुआ नहीं है। उसमें सहायता देना प्रत्येक आर्य्य का प्रधान कर्त्तव्य है। यह कितने शोक का अवसर है कि प्रचार के उत्तम २ समय हमारी शिथिलता के कारण ही गुजर रहे हैं। अभी नासिक में कुम्भ का मेला था। जहां तक हमें मालूम है, किसी भी सभा वा प्रान्त की ओर से वहां प्रचार का कोई प्रबन्ध न था। मद्रास के कुम्भ कोणम् नामक स्थान में कुम्भ होने वाला है। फिर इस वर्ष के अन्त में हरिद्वार में अर्ध कुम्भी का का महामेला है। वैदिक धर्म प्रचार के लिए ये उत्तम २ अवसर यों ही चले जावेंगे यदि वेद प्रचार फण्ड और ट्रैक्ट विभाग के लिए पर्याप्त मात्रा में धन एकत्रित न हुआ।

आर्य समाजों को सचेत हो कर अपने कर्त्तव्य पालन की ओर अब कुछ ध्यान देना चाहिए। हम आशा करते हैं कि हमारा यह कथन व्यर्थ नहीं जावेगा और वेद प्रचार फण्ड की अपील का शीघ्र ही कुछ वास्तविक फल निकलेगा।

—:०:—

हिन्दी-साहित्य संसार

हमारे नवीन सहयोगी!

"आर्य्यादर्श—! बस्ती से इस नाम का एक नया मासिक पत्र निकलने लगा है जिस के सम्पादक एक साहित्य सेवी" महोदय हैं। पत्र का उद्देश्य "धर्म समाज, साहित्य, दर्शन, इतिहास, पुरा तत्व इत्यादि" विषयों पर उपयोगी लेख प्रकाशित करना है। इस का प्रथम अंक इस समय हमारे सामने है जिस में उत्तम लेख और कवितायें हैं। पत्र संचालकों का उद्योग सराहनीय है। आकार बड़ा, पृष्ठ संख्या लग भग ४० मिलने का पता हरिहरपुर-बस्ती। वार्षिक मूल्य ३)

२. भारती—बाबू सन्तराम जी बी. ए. के सम्पादकत्व में निकलने वाली कन्या महाविद्यालय जालन्धर की मुख-पत्रिका "भारती" वस्तुतः नारी संसार में बड़ी प्रशंसनीय कार्य कर रही है। बाबू सन्तराम हिन्दी संसार में कोई नये लेखक नहीं है। कुछ साल पूर्व आपने लाहौर से "उषा" पत्र निकाल कर पंजाब में हिन्दी प्रचार का कार्य्य प्रारम्भ किया था। अब आप के इस दूसरे उद्योग को देखकर हमारा चित्त अत्यन्त प्रसन्न हुआ है। पंजाब से एक हिन्दी पत्र को प्रकाशित करने में जितनी कठिनाइयें आती हैं उन्हें दृष्टि में रखते हुये यह निः संकोच कहा जा सकता है कि 'भारती' अपने ध्येय में सफल हो रही है। पत्रिका महिलाओं के लिए विशेषतया उपयोगी है। कन्या महाविद्यालय जालन्धर के समाचारों के अतिरिक्त अन्य भी कई उत्तम२ लेख और कवितायें होती हैं। आकार बड़ा, पृष्ठ संख्या—लग भग ३५; वर्षिक मूल्य ३) हैं। मिलने का पता कन्या महाविद्यालय जालन्धर।

हिन्दी—गल्प—माला—; इस नाम की एक नवीन पत्रि का काशी से प्रकाशित होने लगी है जिस की प्रवर्तिका श्री कौशल्यादेवी जी हैं। मुख्य पृष्ठ पर भारत महिला का एक सुरम्य चरित्र होने के अतिरिक्त अन्दर कई सामाजिक और शिक्षाप्रद गल्पें हैं। अगस्त के इस नये अंक में "कादिर के करघे" यह गल्प बहुत उत्तम लिखी गई है। हिन्दी में विनोद साहित्य की कमी को यह पत्रि का बहुत अंश तक पूर्ण करेगी। आकार छोटा पृ० सं० ४०; मिलने का पता काशी और वार्षिक मूल्य २॥) है।

कथा मुखी—:अयोध्या से प्रकाशित और श्री विष्णु ब्रह्मचारी जी द्वारा सम्पादित मासिक पत्र। पृष्ठ ४० वार्षिक मुल्य २॥)

नैतिक शिक्षा में उत्तम गाथाओं कितना महत्व है—यह किसी भी विज्ञ पुरुष से छिपा हुआ नहीं है। यद्यपि हिन्दी साहित्य में इस कमी को भी पूर्ण करने का प्रयत्न हो रहा है पर वह बहुत कम है। हमारी इस नई सहयोगिनी से इस कार्य के शीघ्र पूर्ण होने की आशा है क्यों कि इस का एक मात्र उद्देश्य नई, रोचक और उत्तम२ गाथायें प्रकाशित करना है। पत्रिका का ४ था अंक इस समय हमारे सामने है जिस में कई सरल, भाव पूर्ण, शिक्षाप्रद मनोहर गाथायें हैं। भाषा शुद्ध और परिमार्जित है।

भिषक्-आयुर्वेदिक सिद्धान्तों का प्रचार करने के लिए अजबगंज मुंगेर से यह मासिक पत्र प्रकाशित होने लगा है। सम्पादक महोदय का नाम ऊपर नहीं लिखा गया है। २४ पृष्ठ के इस मासिक पत्र में कई सुपाठ्य लेख रहते हैं! पत्र साधारण जनता और विशेषतः वैद्यों के लिए उपयोगी है। वार्षिक मूल्य १।) मिलने का पता अजबगंज मुंगेर है।

—:०:—

सामयिक साहित्यावलोकन

प्रभाः—कानपुर से प्रकाशित होने वाली—श्रावण मास की 'प्रभा' अपनी पूरी सजधज के साथ निकली है। चित्र और कवितायें एक दूसरे से बढ़ कर हैं। "नयन" इस विषय पर हिन्दी के सुप्रसिद्ध कविरत्न बाबू मैथिली शरण गुप्त की कविता बहुत भाव पूर्ण और मनोहर हुई है। पाठकों के मनोरंजन के लिए दो पद्य हम यहां देते हैं।

"चुन ले चला हमारा साथी सुमन कहां तू"
अली, कठोर माली;
केवल कराल कण्टक हैं छोड़ता यहां तू"
यह रीति है निराली ॥१॥
"हे बन्धु जा रहे हो तुम आज टूट कर यों"
पर अब नहीं तुम्हारा;
हम रह गये नहन में क्यों हाय! छूट कर यों,
चारा नहीं हमारा ॥२॥

इस के अतिरिक्त "समर्पण" इस विषय पर श्री० भगवती चरण शर्मा की कविता भी बहुत उत्तम और भावमयी हुई है। लेखों के विषय में हम इतना कहना ही पर्याप्त समझते हैं कि प्रायः सभी लेख मौलिक गवेषणा पूर्ण और विचार पूर्ण होने के अतिरिक्त सरल भाषा में लिखे गये हैं। प्रो० केदीलाल जी बैरिस्टर का "एशिया निवासियों के प्रति यूरोपियन लोगों का वर्त्ताव" श्री० हरिवंश सहाय का "स्वास्थ्य और स्वतंत्रता" और प्रो० रामदास गौड़ एम ए का "विज्ञान संसार" ये लेख विशेष महत्व पूर्ण हैं। हिन्दी साहित्य में नव जीवन उत्पन्न करने वाली इस पत्रिका के सम्पादकों और संचालकों को बधाई देते हुये अन्त में हम इस के प्रकाशकों से एक धृष्टता पूर्ण आवश्यक निवेदन कर देना अनुचित नहीं समझते और वह यह कि जहां२ भी अंग्रेजी उद्धरण दिये गये हैं वहां, प्रायः, शब्दों की, उन के हिज्जों की तथा अन्य कई छोटी मोटी अशुद्धियां रह गई हैं और कहीं बीच२ में अक्षर सर्वथा उड़ गये हैं जैसे पृ० ७६ पर हम देखते हैं। यद्यपि यह न्यूनता बहुत तुच्छ है पर एसी उत्तम पत्रिका में बहुत खटकती है। आशा है, हमारे निवेदन की ओर अवश्य ध्यान दिया जावेगा।

धर्माभ्युदय—सहयोगी धर्माभ्युदय के नये जून के अंक में वह शान नहीं जो कि हमने इसके विशेषांक में देखी थी तथापि लेखों की उत्तमता में कोई कमी नहीं आई है। इस बार की सम्पादकीय टिप्पणियां बहुत उत्तम लिखी गई हैं और "हा पेट!" इस शीर्षक के नीचे लिखी गई टिप्पणि विशेषतः मननीय है। लेखों में "जीवन के जटिल प्रश्न" यह विशेषतः पठनीय है। उत्तम कविताओं को प्राप्त करने की ओर यदि और अधिक ध्यान दिया जाता तो विशेष अच्छा होता।

(शेष पृ० ५ वें में देखो)

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिए छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 875

गुरुकुल कांगड़ी की वर्त्तमान दशा

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० मं० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! (इसी समय) हमको श्रद्धावान करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है

५ भाद्रपद सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० २० अगस्त सन् १९२० ई०

संख्या १८
भाग १

नाथ! अब भूलि रहे कोई ओर।

बिलपत कलपत तप्त हृदयपद
भारत दुःखनूनतोर (ध्रुव)

निठुर, निलज्ज, नृशंस नीतिच्युत,
शासन शासक घोर।
निज निःशस्त्र प्रजा को करते,
गन गोली बरजोर ॥ १ ॥

कुटिल, कलंकी, क्रूर, कुमति मति,
कलुषकीट, कटु कोर।
अबला बालन पर बरसत बम,
वायु यान के जोर ॥ २ ॥

जिस भारत ने युद्ध काल में,
जन, धन, दिया करोर।
फ्रांस भूमि निज रक्त से सींची,
मानव सौं मुखमोर ॥ ३ ॥

निरखत जो बहु आश पाश बश,
प्रभु तव मुखदूनजोर।
जलियाँवाला जले सबी के,
अबला बाल किशोर ॥ ४ ॥

सुतपति हीन दीन दुःखियों के,
बिरह वह्नि के ओर।
जब तक जल कर शुद्ध हुये नहिं,
वे पापी मनघोर ॥ ५ ॥

निरवलम्ब अवलम्ब तुम्हीं प्रभु,
क्यों पुनि विलम्ब अथोर।
अशरण शरण हुबे दुःख दारिद
करो हृदय अकठोर ॥ ६ ॥

नीरनिधि निमग्नमन निरखत,
नाथ ! कृपादृगकोर।
"श्रीहरि" बिन यह भारत नैय्या,
कौन करे तट ओर ॥ ७ ॥

पं० गयाप्रसाद (श्रीहरि)

भारतहितैषी श्री० सी० ऐफ० ऐन्डरूज *

भक्ति-सागर के उज्ज्वल रत्न,
तेज के पुञ्ज गुणों के धाम।
प्रेम-तरु शुचि भारत-उद्यान,
प्रसारित सौरभ अति अभिराम।
ब्रिटिश-जन कृत्य-तिमिर अतिघोर,
प्रकाशक द्रवित हृदय द्विजराज,
देव प्रेरित पावन सुर-दूत,
तुम्हारा शुभ स्वागत है आज।

दया के अनुपम पारावार,
सरलता-सींव, सुजनता-रूप,
तुम्हारा भारत-हित बलिदान,
हमारा है आदर्श अनूप।

(२)

स्वत्व-रक्षा, दीनों का मान,
तुम्हारे जीवन का है सार,
जगत के सब वैभव को छोड़,
किया है प्रेम-पन्थ स्वीकार।
तुम्हारा उच्चाशय सन्देश,
हमारा है आदर्श महान।
तुम्हारा जीवन क्या है देव,
प्रेम-वीणा की है शुभ तान।
भक्त श्री 'रवि' के प्रेम-स्वरूप,
कमल भारत-सर के सुकुमार,
शील के सिन्धु ज्ञान के सान,
परम सुकृती, गरिमा आगार ॥

(३)

हुआ जब अफ्रीका में प्रबल,
अन्यतम कुटिल स्वार्थ का ग्राह।
विकल हो धाये हो तुम तभी,
दिखाने भारत-गज को राह।
सुनी 'कुन्ती' की जभी पुकार,
किसी को किया तभी प्रस्थान,

(शेष पृष्ठ ७ वें में देखो)

* जब मिस्टर सी० ऐफ० ऐन्डरूज भारती-भवन फीरोजाबाद में कविरत्न पं० सत्यनारायण का चित्र खोलने गए थे उस समय उनकी सेवा में यह कविता अर्पित की गई थी।

ब्रह्मचर्यसूक्त की व्याख्या

ब्रह्मचर्येणतपसा राजा राष्ट्रंविरक्षति। आचार्यो ब्रह्मचर्येण ब्रह्मचारिणमिच्छते ॥ १७ ॥

ब्रह्मचर्य्य के तप से राजा राष्ट्र की विशेष रक्षा करता है आचार्य (भी) ब्रह्मचर्य्य से ही ब्रह्मचारी की इच्छा करता है।"

रक्षा का काम तपस्वी कर सकता है, भोगी नहीं और तप बिना ब्रह्मचर्य्य के असम्भव है। राजा का धर्म ही राष्ट्र का पालन है। आज कल राजा का अधिकार राजशासन है। इस समय अधिकारों की धूम है। इस लिए कर्त्तव्य पीछे पड़ गया है। वेद की आज्ञा है कि कर्त्तव्य पालन ही जीवन का मूल है। राजा को प्रजापति इसी लिए कहते हैं कि प्रजा का पालन उसका धर्म है! The king can do no wrong, 'राजा कोई अधर्म नहीं करसक्ता'—इस वाक्य का अर्थ क्या है? क्या इसका यह अर्थ है कि राजा जो भी पाप चाहे करे, वह दण्डनीय नहीं। ऐसा नहीं है। इङ्गलैण्ड के जिन देश हितैषियों ने प्रथम चार्लस को फांसी लगादी, क्या वे अन्यायी थे? कदापि नहीं। लोकोक्ति के अर्थ यह हैं कि जो अधर्म कर सक्ता है वह राजा होने के योग्य नहीं। जो स्वार्थी है, भोगी है, वह अधर्म से नहीं बच सक्ता। अधर्म से बचने के लिए पूर्ण ब्रह्मचारी होना ज़रूरी है।

वेद उदाहरण देता है। आचार्य ब्रह्मचर्य के बल से ही शिष्य को अपनी ओर खींचता है और उसका पालन, पोषण तथा शिक्षण करता है। पहले बतलाया जा चुका है कि पूर्व काल में आचार्य्य उसी को कहते थे जो दस सहस्र (१०,०००) शिष्यों का पालन पोषण करता हुआ, उनकी शिक्षा का प्रबन्ध करे। जिस प्रकार आचार्य ब्रह्मचर्य के तप से ही ब्रह्मचारी को आकर्षित करके अपने अधीन करता है, इसी प्रकार राजा भी ब्रह्मचर्य्य के तप से ही प्रजा को अपनी ओर खींचता और उसकी रक्षा करते हुए उन्हें अपने वश में रख सक्ता है।

आज उलटी गंगा बह रही है। राजा भोग के लिए राज संभालते हैं। जहां एक सत्तात्मक राज है वहां एक भोगी की इच्छा को संतुष्ट करना पड़ता है, जहां प्रजातन्त्र राज कहा जाता है वहां बहुतों की विषय कामना को तुष्टि देनी पड़ती है! कहीं व्यक्ति का स्वार्थ संसार में हल चल डाल रहा है और कहीं जाति का स्वार्थ संसार में हा हा कार मचा रहा है। इस अनाचार तथा अधर्म की जड़ जब तक न खुद जाय तब तक संसार में शासन और राजनीति के नाम पर अन्याय और अत्याचार होते ही रहेंगे। इस अधर्म की जड़ कैसे कटे?

बचपन में जैसी शिक्षा हो मनुष्य युवा हो कर वैसा ही बन जाता है। यदि अध्यापक और उपाध्याय (Teachers and professors ब्रह्मचारी हों, यदि उनकी इन्द्रियां अपने वश में हों, यदि वे सब प्रकार की बनावटों से मुक्त हों तो उन के दिन रात के सहवास का असर उन के शिष्यों पर भी अवश्य पड़े। और तब उन आचार्य्य कुलों से शासक भी योग्य निकल सकें।

जिस देश और जाति में शिक्षक स्वयम् चरित्रवान् न हों उनकी दशा कभी सुधर नहीं सकती। जो दिया स्वयम् जल नहीं रहा वह दूसरों को क्या जलायगा। जिस का हृदय स्वयं अन्धकार से आच्छादित है वह दूसरों को प्रकाश कैसे दिखलायगा। कहते हैं 'मशालची अन्धा' होता है परन्तु दूसरों को मार्ग दिखा देता है। परन्तु जहां गढ़ा आगे हो तो उसके गढ़े में गिरते ही उस के हाथ की मशाल बुझ जाती है और उसके पीछे चलने वाले उसी गढ़े में गिर पड़ते हैं। यही हाल उन शिक्षकों के अभागे शिष्यों का है, जो चरित्र-शास्त्रों की शिक्षा देते हुए स्वयं उसके विरुद्ध आचरण करते हैं। ऐसे शिक्षकों के नियन्त्रण से निकल कर जो राजकीय पुरुष शासन के काम में लगते हैं उन से रक्षा स्थान में राज की हानि ही होती है। पिता पालक को कहते हैं। राजा प्रजा का पालक, रक्षक होने से ही प्रजा का पिता कहलाता है। यदि पिता ही मद्यमांस का सेवन करने वाला और व्यभिचारी हो तो सन्तान का क्या ठिकाना रहे। राजा सारी प्रजा का पिता है। यदि वह व्यभिचारी हो तो धर्म का नाश ही हो जाय। अपनी धर्म पत्नी से सन्तानोत्पत्ति करने के अतिरिक्त जिस किसी अन्य स्त्री से वह सम्बन्ध जोड़ता है, वही तो उसकी पुत्री है। सारे संसार में इस प्रकार वर्ण संकरता का राज हो रहा है। इस घोर पर अशान्ति की जड़ जब तक न हिलेगी तब तक संसार में शान्ति नहीं फैल सकती। हिलना ही पर्याप्त नहीं—स्थिर शान्ति के लिए इस की जड़ ही कटक जानी चाहिए। परन्तु जड़ कैसे कटे!

आओ भारत वर्ष से ही पहल करो। स्वार्थी भोगी गवर्नमेन्टों से कुछ न होगा। जो आवश्यकता को अनुभव करते हों और शिक्षा देने की योग्यता रखते हों वे साधनों द्वारा स्वयं ब्रह्मचारी बनें और ब्रह्मचर्य्य रूपी तप के बल से विद्यार्थियों को अपनी ओर आकर्षित करें। जब ग्राम ग्राम में ऐसे सायम सन्ध्या शिक्षक काम करने लग जायंगे तो पूर्व काल में ब्रह्मचर्यप्रधान यह जाति ही संसार की जातियों की पथदर्शक बन सकेगी।

शमित्योम्—
श्रद्धानन्द सन्यासी

—:०:—

श्रद्धा

गुरुकुल कांगड़ी की वर्त्तमान दशा

आज जब मैं ये कुछ पंक्तियां लिख रहा हूं, भाद्रपद मास की पहली तिथि है। आज ही मैं गुरुकुल के लिए स्थिर राशि एकत्र करने के उद्देश्य से कुलभूमि से बाहिर जा रहा हूं। सम्वत् १९७७ के पहले सत्र की परीक्षाएं समाप्त हो गई हैं। स्नातक श्रेणी में इस समय १३ छात्र हैं। नियमानुसार उन सब का अधिकार है कि दो मास के दीर्घावकाश पर घर चले जावें। परन्तु उन में से दो ने तो मेरे साथ गुरुकुल की सेवा के लिए बाहर जाना स्वीकार किया है, एक ने एक विशेष आर्य समाज में एक मास तक धर्मोपदेश द्वारा सेवा का व्रत किया है। यह आर्य समाज उस के माता पिता के निवास स्थान से सैंकड़ों मील दूर है। दोने विशेष तय्यारी के लिए गुरुकुल भूमि में ही रहने की इच्छा प्रकट की है; कृषि के दो विद्यार्थी अपने उपाध्याय के साथ कानपुर, अलीगढ़, झांसी आदि स्थानों में कृषि का विशेष ज्ञान उपलब्ध करने जायंगे। शेष अपने घरों को जायंगे, परन्तु उन्होंने भी भी अवकाश का कुछ भाग अपने कुल की सेवा के समर्पण करने का व्रत लिया है। महाविद्यालय के शेष ब्रह्मचारी पर्वत यात्रा के लिए जायंगे।

मुख्य गुरुकुल कांगड़ी में इस समय सर्व विषयों के पढ़ाने के लिए पर्याप्त और योग्य उपाध्याय तथा अध्यापक मौजूद हैं और प्रबन्ध का कार्य भी ठीक चल रहा है। पण्डित इन्द्र विद्यावाचस्पति सहायक मुख्याधिष्ठाता हैं। जब से उन्होंने यह काम संभाला है मुझे प्रबन्ध के कार्य की ओर बहुत कम ध्यान देने की आवश्यकता होती है। श्री महाशय रामकृष्ण जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब अभी गुरुकुल भूमि में आए थे, और परसों ही यहां से लौटे हैं। उनकी सम्मति है कि पं० इन्द्र प्रबन्ध का काम अच्छा करेंगे। आर्य सिद्धान्त के उपाध्याय भी यही होंगे। सम्पत्तिशास्त्र तथा इतिहास के लिए प्रोफेसर शिवराम आय्यर एम.ए. आगए हैं। एम.ए. इन्होंने पाश्चात्य दर्शन (western philosophy में किया था। पर आंगल भाषा तथा सम्पत्ति शास्त्र भी बहुत अच्छी तरह पढ़ा सके हैं। कृषि के नए प्रोफेसर-देशराज जी लायलपुर के ग्रेजुएट हैं और परीक्षा में प्रथम रहे और प्रशंसा सहित अपने विषय में उत्तीर्ण हुए। पुराने उपाध्याय सब अपने काम मे निपुण हैं। प्रोफेसर देशराज जी के कारण वाटिका तथा गोशाला की दशा भी सुधर गई है और शेष सब कार्य भली प्रकार हो रहे हैं।

इन्द्रप्रस्थ गुरुकुल इसी महाविद्यालय का एक भाग है। कुरुक्षेत्र में भी इसी कुल की शाखा है। इन दोनों संस्थाओं का अभी निरीक्षण कर के मैं लौटा हूं। दोनों में काम उत्तमता से चल रहा है। अध्यापक परिश्रम से काम करते हैं। कुरुक्षेत्र में जिस दिन मैं रहा एक भी बीमार न था। अभी मटींडू गुरुकुल की परीक्षा लेकर उपाध्याय जयचन्द्र आए हैं। वह प० पूर्णदेव के कार्य की बड़ी प्रशंसा करते हैं। भैंसवाल के नए गुरुकुल के प्रबन्धकर्त्ता भी पूरे मन से अपनी संस्था को कृतकार्य बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं। मुलतान गुरुकुल के आचार्य इस समय महाशय चम्पतिराय एम. ए. हैं। उनके पत्रों से पता लगता है कि वह भी उस गुरुकुल को ठीक मार्ग पर चलाने का प्रयत्न कर रहे हैं।

पिछले ६ महीनों के लगातार प्रयत्न से गुरुकुल और उसकी शाखायें इस अवस्था में आ गई हैं, कि अब उन मे निरन्तर उन्नति हो सकती है। परन्तु उस उन्नति में धन की आवश्यकता पहले है। उसी आवश्यकता को लक्ष्य में रख कर मैं कलकत्ते में काम शुरु करूंगा। मेरा विचार यह है कि भारत–वर्ष का कोई कोना भी ऐसा न छूटे जहां भिक्षा के लिए मैं न पहुंच सकूं। मैं जानता हूं कि जातीय शिक्षा की आवश्यकता को शिक्षित भारत ने अनुभव कर लिया है। यदि अब से वे आर्थिक सहायता की मानसिक प्रतिज्ञा कर के गुरुकुल के निमित्त देवियां और सज्जन पुरुष अपनी सम्पत्ति का कुछ भाग जुदा करना आरम्भ कर दें तो कोई सदेह नहीं है कि शीघ्र ही मेरी इच्छित धनराशी जुदी इकट्ठी हो जायगी—और गुरुकुल को जिस आदर्श तक पहुंचाना चाहते हैं उसकी एक बड़ी भारी मंज़िल तै हो जायगी।

कलकत्ता से मद्रास जाकर मुझे कुछ दिन उस प्रान्त में सार्वदेशिक सभा की ओर से धर्म प्रचार करना और कराना होगा। और वहां से बम्बई टिक कर काम करूंगा। बम्बई से लौट कर कुछ दिन गुरुकुल में बिता ब्रह्मा देश में पहुंचने का विचार है। नवम्बर मास के मध्य से दिसम्बर के मध्य भाग तक वहीं रहूंगा। ब्रह्मदेश से लौट कर पंजाब के ग्राम २ और नगर २ में घूमने का संकल्प है। पंजाब की जनता में गुरुकुल के लिए असीम प्रेम है। गुरुकुल कांगड़ी ने देवियों के हृदय में विशेष स्थान लिया है। यदि आज से ही वह मुझे भिक्षा देने की तैयारी करने लग जायं तो आश्चर्य नहीं कि, ५, ६ लाख रुपया पंजाब से भी एकत्र होजाय। जगा देना और दान शीलता की ओर ध्यान दिला देना भिक्षुक का काम है और अपना कर्त्तव्य पालन करना दानियों के अधीन है।

सार्वदेशिक सभा की अपील सुनी गई

सार्वदेशिक सभा का बड़ा ऊंचा स्थान हो सकता था। आर्यसमाज की बिखरी हुई शक्तियों का इकट्ठा करने का काम, इसी सभा से होसकता था। परन्तु जब कभी किसी अधिकारी ने किसी सार्वदेशिक काम की आवश्यकता को अनुभव किया उसी समय धन के अभाव ने उस के हाथ बांध दिए। परन्तु धन कैसे आवे। बिना बच्चे के चिल्लाए माता भी दूध नहीं पिलाती, तब संसार के धन्धों और धर्म और समाज सुधार के अन्य कामों में लगे व्यक्ति कैसे हिल सक्ते हैं। पात्र को सहायता मिल ही जाती है, इस में संदेह नहीं। आर्य समाज का बडा जोर संयुक्त प्रान्त और पंजाब में है। जब मैं सद्धर्मप्रचारक का संचालक था तो मेरी आवाज इन दोनों स्थानों में में पहुच जाती थी। श्रद्धा को निकाले ४ मास हो गए अबतक उस की ग्राहक संख्या कठिनाई से २३५ हुई है। इन में भी अधिक ग्राहक गुजरात काठियावाड़ बंगाल और बिहार के हैं। पंजाब और यू० पी० के सज्जनों को यह पत्र पसंद नहीं आया। शायद इस लिए कि इस में इश्तिहार नहीं, वा पार्टिबाजी के समर्थक लेख नहीं, या कट्टर आर्यों के सिद्धान्तानुसार धर्मोपदेश नहीं होते और भी कारण होसकते हैं, यथा भाषा की अतेजस्विता वा असभ्यता।

कुछ ही कारण हो श्रद्धा का क्षेत्र परिमित है इस लिए मैंने प्रकाश, सद्धर्मप्रचारक और आर्यमित्र

द्वारा १००००) की अपील की। प्रकाश में अपील पढ़ते ही सदर आर्यसमाज रावलपिंडी की ओर से नीचा लिखा पत्र १००) के नोट सहित प्राप्त हुआ।

"श्रीमान् जी की अपील गत सप्ताह के प्रकाश में पढ़ी। रविवार के अधिवेशन में अपील की गई, और आपकी इच्छा अनुसार इस पत्र के साथ १००) का नोट मद्रास प्रान्त में प्रचार के लिये भेजा जाता है। रसीद से कृतार्थ करें।

हमें शोक है हम को अब तक पता न था कि सार्वदेशिक सभा ने यह कार्य अपने हाथ में लिया हुआ है और इसी कारण हमारी समाज के सभासदों ने एक अच्छी रकम ५० रुपि (म. बी.ए. की ५००) का अपील पर कालेज समाज में दे दी, नहीं तो हम एक अच्छी रकम (इस से दुगनी तो अवश्य) आप की सेवा में भेजते। असल में सार्वदेशिक सभा की कार्यवाही का समाजों को पता ही नहीं लगता। मैं आज आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब को भी इस बारे में लिखरहा हूं। यदि प्रतिनिधि सभा अपने कोश से रुपया न भी देवे तो भी केवल पंजाब से जहां १५० से अधिक समाजें हैं १००००) एकत्र करना कोई कठिन बात नहीं। आप प्रतिनिधि से यह अनुरोध करें कि अपने प्रान्त की समाजों में अपील करा कर इतना रुपया जमा करें जो कोई कठिन कार्य नहीं है।

भवदीय

धर्मदेव

उप मन्त्री"

मद्रास में पंडित सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार के काम का हाल इसी पत्र में पहले छप चुका है। आज के अंक में भी अन्यत्र उनके क्रिश्चियन डिश्चियन कालिज में व्याख्यान देने का हाल पाठक पढ़ेंगे। पं० देवेश्वर सिद्धान्तालंकार को मैं अपने साथ लेचला हूं और कुछ महीने काम के लिए टिका दूंगा। और भी काम करने वाले भेजे जा सकते हैं, परन्तु धन पहले आना चाहिए। मद्रास में पहुंच कर कुम्भकोणम के जाने वाले मेले का भी प्रबन्ध करना आऊंगा। फिर [illegible] में अर्ध कुंभी में प्रचार का प्रबन्ध अभी से सोचा जा रहा है। मैं इन सब कामों पर रुपया लगाता जाऊंगा इस आशा पर कि आर्य पुरुषों की [illegible] से धनाभाव के कारण कोई काम बन्द न रहेगा।

श्रद्धानन्द संन्यासी

—:०:—

'हमारी मद्रास की चिट्ठी'

ब्राह्मण अब्राह्मण-झगड़ा

(निजू संवाददाता द्वारा)

'स्वराज्य' की हलचल जिन दिनों अपने ज़ोर पर आयी उन दिनों मैं शायद गोरखपुर में था। जिस अख़बार को उठाता उसी में मद्रास की तरफ़ से उठी हुई एक विचित्र लहर दिखाई देती। 'हमें स्वराज्य नहीं चाहिये'—'हम ब्राह्मण बूरोक्रेसी नहीं चाहते' यह आवाज धीमी नहीं थी। दिनों दिन यह ज़ोर पकड़ती जा रही थी। और इस की मांग देने वाले मुल्ला हमारे प्रसिद्ध मदरासी डा० नायर थे। जितनी कशमकश उन बेचारों से हो सकती थी उन्होंने की अखबार निकाला लेक्चर दिये, इङ्गलैण्ड गये और अन्त में मैदान में लड़ते २ प्राण देदिये। यह सब कुछ उन्होंने 'नान-ब्राह्मणों' के लिये किया।

मुझे बड़ा आश्चर्य होता था। क्या ये लोग पागल हो गये हैं? क्या ये पिंजरे में रहते २ उसके आदी हो गये हैं? कुछ समझ नहीं आता था तिलक महाराज ने लखनऊ की कांग्रेस में समझाया कि तिकोनी लड़ाई क्यों लड़ते हो? पहले बाहर वाले का हिसाब चुका दो फिर आपस में समझौता कर लेना। किन्तु नहीं, नान ब्राह्मण इस बात के लिये राजी नहीं हुए। उन्होंने कहा कि 'इंगलिश बूरोक्रसी' हम पर इतने अत्याचार नहीं करती जितने 'ब्राह्मण बूरोक्रेसी' करती है। ब्राह्मणों के मुकाबिले में अंग्रेज़ हमारे मां हैं, बाप हैं, देवता हैं और ईश्वर हैं। बस फ़ैसला हुआ।

आज से एक साल पहले मुझे कोल्हापुर में एक साल तक रहने का मौका मिला वहां के 'नान ब्राह्मणों' के चेहरों से, उन की बात चीत में उदासी टपकती दिखाई दी। ऐसा मालूम हुआ कि वे अपने को एक भारी वायु-मण्डल में पाते हैं। वे उसे सहन नहीं कर सकते, किन्तु उसे दूर भी नहीं कर सकते। जिस का नाम मैं प्रातः स्मरणीय समझता था उसके लिये वहां रोज कानों पर गालियां पड़ती थीं। अमुक ब्राह्मण ऐसा है, अमुक वैसा है—इसका आचार ठीक नहीं, उसका विचार ठीक नहीं! विद्यार्थियों में ब्राह्मणाब्राह्मण का झगड़ा, उनके पिताओं में वही झगड़ा और उनके पिता के पिताओं में भी वही झगड़ा! हमारी तरफ़ स्कूलों और कालिजों में जो विद्यार्थी-जीवन दीख पड़ता है उसके चौथाई के चौथाई का चौथाई भी वहां नहीं दीख पड़ता है। वहां के विद्यार्थी मुर्दा हैं—उन में जान नहीं! मैं ब्राह्मण हूं, इस लिये मेरा काम 'नान-ब्राह्मणों' को गालियां देना है—यह प्रवृत्ति विद्यार्थियों में, संरक्षकों में और छोटे से लेकर बड़े में, सब जगह बड़ी ज़ोर से काम कर रही है। उनका खाना, स्नान करना; उठना बैठना; बात चीत करना; पढ़ना, लिखना; स्वराज्य मांगना और जूतों चाटना;—सब 'ब्राह्मणा-ब्राह्मण' के चक्कर पर घूम रहा है।

अब मुझे कोल्हापुर छोड़े लगभग एक महीना हो चुका है। इस समय मैं कुछ और आगे बढ़ा हूं और ज्यों २ मद्रास की तरफ़ चलता हूं त्यों २ वायु-मण्डल को क्रमशः भारी होता हुआ पाता हूं। यहां स्वराज्य की इतनी चर्चा नहीं जितनी ब्राह्मण और 'नान ब्राह्मण' की।

मुझे बैंगलोर में आये एक महीना ही हुआ है, परन्तु इतने में उपर्युक्त झगड़ों की इतनी बातें सुनी हैं जितनी कोल्हापुर में १२ महीनों में भी नहीं सुनी थीं! अभी परसों की ही बात है। मैं अपने एक मित्र से मिलने को गया। आप 'नान-ब्राह्मण' हैं। आप के यहां एक महाशय बैठे हुए थे, जो देखने में उन्हीं की बिरादरी के मालूम पड़ते थे। मैं गया और एक कुर्सी पर जाकर बैठ गया। बात चीत शुरू हुई। मुझ से प्रश्न किया गया, 'क्यों जी, आप के यहां ब्राह्मण लोग दूसरी जातियों से कैसा बर्ताव करते हैं?'—मैंने कहा, बहुत बुरा नहीं करते, आपके यहां कैसा करते हैं?'

मेरा प्रश्न सुनते ही मेरे मित्र के समीप बैठे हुए महाशय चिल्ला उठे 'कुत्तों से भी बदतर'

उन्हों ने अपने जीवन की घटनाएं मुझे सुनानी शुरू कीं। वे कहने लगे:— "जब मैं चौदह बरस का था तब मैंने एक दिन टांगों तक धोती पहन ली। गांव के सारे ब्राह्मण मेरे पिता के पास आये और कहने लगे कि अब तुम्हारे वंश का नाश होने वाला है। देखो तुम्हारा लड़का घुटनों तक धोती पहनने के बजाय पूरी धोती पहनने लगा है। मेरे पिता ने मुझे डांटा। मैं स्कूल में पूरी धोती पहन कर जाने लगा किन्तु गांव में प्रवेश करने से पहले उसे ऊपर कर लिया करता। ब्राह्मण-लड़कों को जूता पहनने की आज्ञा थी परन्तु हमें जूता पहनने की मनाई थी। मैं स्कूल के बाहर से गांव के बाहर जूता पहन के आता और फिर उसे बाहर ही छिपा कर गांव के अन्दर जाता था स्कूल में हमारे लिये अलग बेंचें लगी होती थी और ब्राह्मणों के लिये अलग। हम ब्राह्मणों के साथ नहीं बैठ सकते थे। जब कभी किस ब्राह्मणों के पास जाना हो और यदि वह बरामदे में कुर्सी पर बैठा हो तो मुझे बरामदे के फर्श के नीचे खड़ा रहना पड़ता था"।

उन्हों ने स्वराज्य के विषय में जो बातें कहीं वे नान-ब्राह्मणों के हृदय को वास्तविक अवस्था को दर्शाती हैं। कल्पना कीजिये कि आज अंग्रेजों ने भारत का शासन हमरे हाथ दे दिया। स्वभावत., जो ज्यादह दिमाग़ वाले होंगे उनके साथ में राज्य आयगा। ब्राह्मण निस्सन्देह अधिक विचार शील तथा पढ़े लिखे हैं। नान-ब्राह्मणों में शिक्षा का इतना प्रचार नहीं जितना ब्राह्मणों में है। इस तरह यदि ब्राह्मणों के हाथ में सारी मेशीनरी आगई तो वे मनमानी करने लगेंगें। अभी तक तो अपनी श्रुतियों के और स्मृतियों के ही कोटेशन दे २ कर मनमाना अत्याचार करते हैं, फिर तो (Penal Code) के हवाले देकर जैसा चाहेंगें करने लगेंगें क्यों कि उस का लगाना उन्हीं के हाथ में ही होगा। यहां के नान-ब्राह्मण अंग्रेजों के शासन को ब्राह्मणों के शासन से अच्छा समझते हैं। अंग्रेजों के लिये ब्राह्मण, नान-ब्राह्मण एक से हैं, परन्तु ब्राह्मणों के लिये नान-ब्राह्मण अत्याचार करने की सामग्री है। इस लिये स्वराज्य नहीं चाहिये' की आवाज़ उठी थी।

इस समय दक्षिणीय भारत का वायुमण्डल क्षुब्ध है। यहां एक ऐसी आंधी चल रही है जो कि भारत के जहाज़ को डांवाडोल कर रही है। यहां की समस्या विकटतर है। यहां के ब्राह्मण जितने मज़बूत हैं उतने ही नान-ब्राह्मण मज़बूत हैं। दोनों एक दूसरे के पीछे हाथ धोकर पड़े हुए हैं।

डा० नायर की मृत्यु के साथ 'स्वराज्य नहीं चाहिए" की भी मृत्यु हो गई। अब नान-ब्राह्मणों की क्रिया ने दूसरा रास्ता पकड़ा है और मुझे पूर्ण आशा है कि इसमें उन्हें कृतकार्यता होगी। इस जागृति के नेता "सर त्यागराय चट्टी' हैं। हाल ही की "नान-ब्राह्मण-कान्फरेन्स'के आप ही सभापति थे। मैं अपनी दूसरी चिट्ठी में इस नई लहर के विषय में कुछ लिखूंगा।

——:०:

प्रवासी भारतवासी

लेखक "एक भारतीय हृदय"

फ़िजी सरकार की-ओडायरशाही।

जांच की आवश्यकता

सातवीं जुलाई 'भारतमित्र' में फ़िजी से लौटे हुए प्रवासी भाइयों के जो उत्तर छपे हैं, उन्हें पढ़ कर प्रत्येक भारतीय को अत्यन्त दुःख और आश्चर्य होगा। दुःख इस बात पर कि हमारे प्रवासी भाइयों को फ़िजी में कैसे कैसे अत्याचार सहने पड़े, और आश्चर्य इस बात पर कि फ़िजी सरकार ने पंजाब का नाटक फिजी में कितनी सफलता और समानता के साथ खेला है। फ़िजी से लौटे हुए हमारे प्रवासी भाइयों ने कहा है "दो सौ के ऊपर मर्द और कुछ स्त्रियां भी पकड़ी गई। जब ये लोग पकड़े गये, तो नित्य ये लोग सवेरे छः से शाम के छः बजे तक धूप में खड़े किये जाते थे, और खाने के लिये रोटियों के टुकड़े इन लोगों की तरफ़ इस तरह फेंक दिये जाते थे मानों सब कुत्ते हैं! यह बड़ा ही भयानक कष्ट था, जिस की कल्पना आप नहीं कर सकते। इसके साथ ही और प्रकार से भी अत्याचार होता था। गोरे और जंगली सिपाही आकर स्त्रियों को मर्दों के सामने और मर्दों का स्त्रियों के सामने नंगा कर के तमाशा देखते थे! सिपाही संगीनों से स्त्रियों के लहँगो को चीरते थे!! कहां तक कहें, जो अत्याचार हुए उन के सामने मशीनगन भी कांप जायगी।

यदि ये बातें सत्य हैं — और इन के सत्य होने की बहुत कुछ सम्भावना है, — तो इस में कुछ सन्देह नहीं, कि फिजी की ओडायरशाही कुछ अंशों में पंजाब की ओडायरशाही से भी बाजी मार ले गई है। स्त्रियों को मर्दों के सामने और मर्दों को स्त्रियों के सामने नंगा कर के तमाशा देखना, एक ऐसा अमानुषिक अत्याचार है, जिसकी कल्पना और आविष्कार ब्रिटिश साम्राज्य के गोरे सिपाही ही कर सकते हैं। फिजी में भारतीयपुरुषों और स्त्रियों पर जो घोर अत्याचार हुए हैं, उन से हमारी मातृभूमी का भी अपमान हुआ है।

क्या हम इस अपमान को यों ही चुपचाप सहलेंगे? हमारा कर्तव्य है की हम तुरन्त ही एक कमीशन इन अत्याचारों की जाँच करने के लिये फिजी भेजें। हम जानते हैं कि इस डेपूटेशन या कमीशन के भेजने में हमारा चार पाँच हज़ार रुपया खर्च होगा, लेकिन इससे फिजीप्रवासी भारतीयों की जो भलाई होगी, उसे ख़्याल में रखते हुए यह रक़म कोई बड़ी भारी नहीं है।

इस समय फिजी सरकार यह समझे हुए हैं कि प्रवासी भारतवासियों पर चाहे कितने ही अत्याचार किए जावें, उनका पक्ष लेने वाला कोई नहीं है। फिजी के प्लान्टर और सी. एस. आर कम्पनी, विलायत के कालोनियल आफिस पर प्रभाव डालकर, चाहे जब घर जानी मनमानी कर सकते हैं, और कालोनियल आफिस सब कुछ देखते हुए भी कुछ नहीं देखता। सैकड़ों हिन्दुस्तानी स्त्री पुरुष फिजी में गिरफ़्तार हुए, सैकड़ों को ही

जेलखाना हुआ। उनके अगुओं को देश निकाला दिया गया, हिन्दुस्थानियों पर गोलियां चलीं, कितने ही मारे गए और पचासों ही घायल हुए, लेकिन इतने पर भी कालोनियल आफिस निष्पक्ष जांच की आवश्यकता ही नहीं समझता! भारत सरकार बिलकुल चुप्पी साधे हुए है, न कोई सूचना उसने निकाली है और न कुछ तसल्ली ही फिजी प्रवासी हिन्दुस्तानियों को उसने दी है। अब फिजी के हिन्दुस्तानी भारतवर्ष की जनता की ओर टकटकी लगाए हुए हैं। यदि जनता ने भी उन्हें निराश किया, तो ५५ हज़ार फिजी प्रवासी भारतीयों के कष्ट अनन्त हो जावेंगे। सरकार द्वारा कमीशन नियुक्त कराके हमें दूसरी हन्टर रिपोर्ट की आवश्यकता नहीं। हमारा उद्देश्य तो यही होना चाहिए कि फिजी प्रवासी हिन्दुस्तानियों पर पर किए गए अत्याचारों के वृत्तान्त को सम्पूर्ण देश के सन्मुख उपस्थित करदें। हमारे इस कार्य का फिजी की वर्तमान परिस्थिति पर बड़ा प्रभाव पड़ेगा और नैतिक प्रभाव की दृष्टि से भी यह बात बड़ी लाभदायक होगी; क्योंकि इससे फिजी सरकार भी यह समझ जावेगी कि आख़िर प्रवासी हिन्दुस्तानियों की भी कोई सुनने वाला है।

एक बार सन् १९१३ में ब्रिटिश गायना में भी इसी प्रकार की दुर्घटना हो चुकी है, जिसमें १५ हिन्दुस्तानी मारे गए थे और लगभग ३० घायल हुए थे। उस समय भी भारतीय जनता ने कुछ कार्य्य नहीं किया, अब फिर फिजी में उसी प्रकार के अत्याचार हुए हैं। यदि हम लोगों ने फिर भी वैसी ही अकर्मण्यता दिखलाई, तो २० लाख प्रवासी भारतीयों की परिस्थिति पर इसका अत्यन्त हानिकारक प्रभाव पड़ेगा। फिजी की इस ओडायरशाही की पोल खुलनी चाहिए और अवश्य खुलनी चाहिए। इस कार्य के लिए चार पांच हज़ार रुपये चन्दा कर लेना कोई कठिन बात न होगी।

क्या हम आशा करें कि भारतीय नेता इस ओर समुचित ध्यान देंगे?

गुरुकुल जगत्

"गुरुकुल-इन्द्रप्रस्थ"

ऋतु अच्छी है। वर्षा भी पर्याप्त हो गई है। जहां कुछ दिन पहिले चारों तरफ़ धूप के मारे पहाड़ झुलसा हुआ सा दिखाई देता था वहां अब हरियाली ही हरियाली नज़र आती है।

बरामदे का-फ़र्श न बनने से अबतक ब्रह्मचारियों को बड़ा कष्ट था अब वह भी बन गया है अतः जहां वह कष्ट दूर हो गया वहां आश्रम में भी बहुत स्वच्छता आगई है।

पं० जनप्रिय जी सिद्धान्तालंकार ने पंजाब में रेलों के बन्द हो जाने से अपनी छुट्टी अपने इसी कुल में व्यतीत की आप समय २ पर आवश्यकतानुसार आश्रम आदि में कई प्रकार की सहायता देते रहे हैं जिस के लिये वे धन्यवादार्ह हैं। इनके अतिरिक्त स्वामी सोमानन्द जी जो केवल भोजन मात्र पर छोटे २ ब्रह्मचारियों की सेवा में बड़े प्रेम से लगे हुए हैं उनका भी प्रेम सराहनीय है तथा वह धन्यवाद के योग्य हैं।

नये कुए का काम बराबर जारी है जिस ज़ोर से खुदाई का काम आरम्भ है उस से अवश्य आशा होती है कि शीघ्र ही इस कुएं से कुल वासियों का रहा सहा जल का कष्ट दूर हो जावेगा

इमारतों में विद्यालय के दो कमरे जो शेष रह गये थे बनगये हैं। केवल छत पड़नी शेष है जो शीघ्र ही समाप्त हो जावेगी।

गतमास में गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ के भूत पूर्व प्रबन्धकर्ता श्रीयुत म० विश्वम्भरनाथ जी अकस्मात् ही गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ में पधारे। विद्यालय का गहरी दृष्टि से निरीक्षण करते हुए आपने जो अपनी लिखित सम्मति दी है वह नीचे उद्धृत की जाती है—

"मैं यहां कल गुरुकुल देखने के वास्ते बिना किसी सूचना के आया। ब्रह्मचारी तथा अध्यापकगण बड़े प्रेमपूर्वक मिले। मुझे यह देख कर बड़ी प्रसन्नता हुई कि सब ब्रह्मचारी प्रसन्न चित्त हैं और अपने अधिष्ठाताओं और अध्यापकों से सन्तुष्ट प्रतीत होते हैं। आश्रम का नियन्त्रण बड़ा अच्छा है और सब कार्य नियम पूर्वक होते हैं। विद्यालय की पढ़ाई के समय जाकर भी देखा श्लोक, संस्कृत, गणित तथा वस्तुपाठादि पढ़ते देखा। यह देख कर बड़ी प्रसन्नता हुई कि नये ब्रह्मचारियों में गुजरात प्रान्त के ब्रह्मचारी थोड़े ही समय में हिन्दी भाषा अच्छी तरह पढ़ने लगगये हैं। सब से छोटा ब्रह्मचारी अपनी श्रेणी को अष्टाध्यायी के सूत्र याद कराता था। सिर्फ़ एक श्रेणी संस्कृत में कुछ कमज़ोर मालूम होती थी। गणित के प्रश्न लगभग सब ब्रह्मचारियों ने ठीक किये। सुलेख ब्रह्मचारियों का अच्छा है। मैंने यह प्रार्थना की है कि कुछ एक ब्रह्मचारी सुलेख में आलेख्य मिला कर लिखने का अभ्यास करें। पं० प्रियव्रत जी मुख्याध्यापक अपने कार्य में बड़े दत्तचित्त हैं। सब अध्यापक गण उनसे और आपस में सन्तुष्ट प्रतीत होते हैं। आश्रम के बरामदे का फर्श होते देख कर बड़ा सन्तोष हुआ, नयाकूप खुदरहा है—"

शाम को ५ १/२ बजे से सब अध्यापकों तथा अन्य कर्मचारियों ने म० विश्वम्भरनाथ जी के स्वागत में फल भोज किया। रात्रि को एक स्वागत सभा हुई जिस में सब अध्यापक तथा अन्य कर्मचारियों ने अपने २ आन्तरिक भावों के प्रकाशित करते हुए श्री मास्टर जी की प्रेम पूर्ण और उदार नीति से की हुई गुरुकुल की सेवा तथा सदुव्यवहारों के प्रति विशेष कृतज्ञता के भाव प्रकट किये। इसके पश्चात् ब्रह्मचारियों की मधुर स्वरमयी स्वागत गीति और शान्ति पाठ के साथ सभा समाप्त हुई।

षाण्मासिक परीक्षा लग भग १३ अगस्त तदनुसार ३० श्रावण १९७७ तक समाप्त हो जावेगी। १६ अगस्त तदनुसार १ भाद्र पद से सत्रान्तावकाश आरम्भ हो जावेंगे।

देहली निवासी श्रीमती देवकी देवी जी ने एक कमरे के लिये १५००) देने की प्रतिज्ञा की जिस में से ५००) उन्होंने गुरुकुल के कार्यालय में भिजवादिया है। शेष रुपया भी शीघ्र ही भिजवा देंगे

की प्रतिज्ञा की है। एक श्रीमती के नाम का कमरा बन रहा है। कुछ शेष है। इसी पर उनके नाम का पत्थर भी लगा दिया जावेगा। उनकी अभिलाषा शीघ्र ही यह प्रवेश संस्कार अपने सामने कराने की है और संस्कार में कुछ और भी दान देने का संकल्प किया है। उक्त-देवी जी गुरुकुल के हार्दिक धन्यवाद की पात्र हैं। परमेश्वर उन्हें चिरायु करे।

प्रियव्रत
आ० मुख्याधिष्ठाता

पृ० पहिले का शेष

अनेकों सहे यद्यपि अपमान,
न छोड़ी कुशलता की बान।
किया पंजाब-द्रौपदी चीर,
सहायक हुए बचाया चीर,
जयति जय कर्मवीर बलवीर,
जयति जय धर्मवीर रणधीर॥

(४)

न होने देते हरगिज़ कदापि,
स्वत्व दीनों के पूज्य महान,
सहन होता है तनिक न तुम्हें,
देवियों का इच्छक अपमान।
कहीं यदि होता है अन्याय,
व्यथित होते भारत-सन्तान,
लड़ा देते हो अपनी देह,
लड़ा देते हो अपनी जान।
दोष देते हैं स्वार्थी लोग,
तुम्हें है तनिक नहीं परवाह।
सत्य की खोज न्याय की चाह,
और बस भारत-हित की चाह।

(५)

हृदय-मन्दिर में सदा विराज,
रही है देव, तुम्हारी मूर्ति,
तुम्हारे शब्द तुम्हारे कार्य,
देश को देते हैं प्रस्फूर्ति।
जगाओ प्रिय भारत के भाग्य,
सुनाओ प्रिय रवीन्द्र-सन्देश,
तुम्हारे अनुकम्पामय कार्य,
मिटा दें माता के सब क्लेश।
उठे इस भारत में वह राग,
शिथिल हो कभी न जिस की तान।
जले तुम में जीवित ज्योति,
न जिसका बुझे प्रकाश महान।

ठाकुरप्रसाद बी. ए.

सार और सूचना

"नागरी प्रचारणी सभा लाहौर" के मन्त्री श्री—डा० नन्दलाल नैयड़ लिखते हैं कि १ जुलाई को डा० गोकुलचन्द नारंग के सभापतित्व में इस सभा का वृहदधिवेशन हुआ था जिस में यूनिवर्सिटी में हिन्दी—परीक्षा, इस सभा के सभासद बनने, गलीमुहल्लों में हिन्दी पाठशाला खोलने, हिन्दी में पत्र व्यवहार करने, डाकखानों में हिन्दी जानकर काम के और चिट्ठीरसा रखने, हिन्दी स्कूल खोलने के लिए म्यूनिसिपैलिटी खोलने इत्यादि विषयों पर प्रस्ताव पास हुये। पं० रघुवरदयाल शास्त्री एम.ए. प्रिन्सिपल सनातनधर्म कालिज, बख्शीराम हैडमास्टर, प्रो रामदेव जी बी.ए., धर्मदास सूरीवकील, ला० रामप्रसाद, पं० युधिष्ठर जी स्नातक गुरुकुल कांगड़ी, पं० दीनदयाल जी व्याख्यान वाचस्पति इत्यादि मुख्यवक्ता थे। प्रो० रामदेव जी सभा के प्रधान और श्री—नन्दलाल-नयड और पं० बख्शीरामरत्न मन्त्री चुने गये।

---

२. काशी आर्यसमाज के मन्त्री श्री—चन्द्रशेखर वाजपेयी जी सूचना देते हैं कि स्थानीय कन्या तथा पुत्र गुरुकुल का काशी—समाज से कोई सम्बन्ध नहीं है और पण्डित इन्द्रदत्त शर्मा के कार्मों का उत्तरदायित्व आर्यसमाज पर नहीं आ-सकता।

३. श्री स्नातक ईश्वरदत्त जी दक्षिण अफ्रिका में, नैरोबी समाज की ओर से, प्रचारका जो प्रशंसनीय कार्य कर रहे हैं, उसकी विस्तृत रिपोर्ट हमें प्राप्त हुई है। परन्तु चू कि यह सारी 'प्रकाश' और 'सद्धर्मप्रचारक' में छप चुकी है, अतः उसे पुनः प्रकाशितकरना आवश्यक नहीं है। वस्तुतः पं० ईश्वरदत्त जी दक्षिण अफ्रिका में वैदिक धर्म की जो सेवा कर रहे हैं, वह अत्यन्त सराहनीय है। आप के इस स्वार्थत्याग की जितनी प्रशंसा की जावे उतनी ही थोड़ी है।

४. मर्यादापुर (थानेश्वर) समाज के मन्त्री लिखते हैं कि पण्डित बालमुकुन्द जी शर्मा और म० कल्याणसिंह जी के प्रचार के कारण वहां समाज स्थापित हुआ और अधिकारीनिर्वाचन हुआ।

५. मटिण्डू ज़ि० रोहतक से म० महासुख जी वर्म्मा ने एक लेख में यह मत प्रकट किया है कि ज़मीदारों को कौंसिलों में अपने प्रतिनिधि उन्हें ही बनाकर भेजना चाहिये जो कि विद्वान् योग्य, दृढ़ और सच्चे देश भक्त हों।

—:o:—

संसार समाचार पर

टिप्पणी

हैदराबाद में गो-वधनिषेध

यह समाचार अत्यन्त प्रसन्नता के साथ सुनाजावेगा कि निज़ाम हैदराबाद ने ईद पर गोवध सर्वथा बन्द कर दिया है। यद्यपि निज़ाम ने आर्थिक कारणों से प्रेरित होकर ही ऐसी आज्ञा दी है पर तो भी उनका यह कार्य गो-वंश की रक्षा में अत्यन्त सहायक होगा।

क्या बालशवीक बहुत बुरे हैं?

बालशवीकों के अत्याचार और क्रूर-कर्मों का वर्णन गोरे पत्रों में हम प्रायः पढ़ते रहते हैं पर उनके कार्य, कभी २ इसके विरुद्ध ही साक्षी दिया करते हैं। एकताज़ा उदाहरण से हमारा अभिप्राय स्पष्ट होगा। मित्र दल ने जर्मनी के साथ सन्धि करते हुए जिन शर्तों को उपस्थित किया था और सोवीट रूस ने, अभी हाल ही में, पोलेण्ड के लिए जो शर्तें रक्खी हैं, उन से स्पष्ट ज्ञात हो सकता है कि नैतिक दृष्टि से मित्र दल ऊंचा है या बालशवीक! रूस ने पोलैण्ड का एक एक इंच ज़मीन पर भी अपना हक़ नहीं दिखाया अपितु है रूस साम्राज्य की छोटी २ रियासतों की भी स्वाधीनता स्वीकार की है। इस के विरुद्ध मित्र दल ने जर्मनी के साथ जिन शर्तों पर सन्धि की थी—वह आज सारा संसार जानता ही है।

क्या लेनिन क्रूर और नृशंस है?

हमें यह प्रायः कहा जाता है कि लेनिन बड़ा ही क्रूर, नृशंस' अभिमानी और चेंचुक व्यक्ति है परन्तु इङ्गलैण्ड के "नेशन" पत्र में रूस से लौटे हुये विशेष संवाददाता ने 'लेनिन' से

स्वयं मिल कर उसके विषय में जो सम्मति प्रकाशित की, वह इसके सर्वथा विरुद्ध है। वह कहता है—"..................... यह स्पष्ट है कि उसे ऐशो-आराम से बिलकुल प्रेम नहीं है। *वह बड़ा मृदु, मिलनसार सादा और अभिमान शून्य है।* एक अनजान आदमी उसके चेहरे को देख कर यह कभी नहीं कह सकता कि वह बड़ा शक्तिशाली या किसी भी अंश में, महात्मा है। *उससे कम अभिमान-शून्य व्यक्ति मैंने कोई नहीं देखा।* वह खूब हंसता है। अपने दर्शकों को वह गहरी और तेज नज़र से देखता है। वह सर्वथा शान्त, निर्भीक और असाधारण रूप से स्वार्थ-शून्य व्यक्ति है। एक अध्यापक की न्याईं वह अपनी थ्यूरी को समझाने अपने विरोधियों का पक्ष खण्डन करने और अपने विषय में अशुद्ध मत को दूर करने में वह बड़ा चतुर और सदा उत्सुक रहता है।" (टेढ़े अक्षर हमारे हैं)

क्या अब भी पंजाबी कौंसिलों का बहिष्कार नहीं करेंगे?

भारत हितैषी कर्नल वैज्वुड ने विशेष तार द्वारा भारत सचिव मि० मान्टेगू के उस कथन की सूचना दी है जो कि उस ने पंजाब के नेताओं के विषय में गत सप्ताह, हाउस आव कामन्स में किया है। इस के द्वारा पंजाब के वे नेता जो गत वर्ष मार्शललॉ के क़ैदी बने थे वे नई कौंसिलों के लिए उमेदवार नहीं बन सकते क्यों कि यद्यपि वे छोड़ दिये गये हैं पर उन्हें राजकीय घोषणा के अनुसार क्षमा नहीं किया गया है। पंजाब के साथ वस्तुतः, यह घोर अन्याय है। भारत सचिव को यह अच्छी तरह से समझ लेना चाहिये कि इस संकुचित नीति से सुधार स्कीम कभी कृतकार्य्य नहीं हो सकती। पर हमारा प्रश्न तो सीधा पंजाबियों से यह है कि अपने आत्मसम्मान का ख्याल करते हुवे क्या अब भी वे कौंसिलों का बहिष्कार नहीं करेंगे?

टिहरी और बेगार की प्रथा

गत ३ अगस्त के दिन टिहरी महाराज का जन्मोत्सव था। सहयोगी "गढ़वाली" कहता है कि उस दिन के उप लक्ष में महाराज ने टिहरी-रियासत से बेगारी के सर्वथा उठा देने की सद्घोषणा की। गढ़वाल और कुमांयू के पर्वतों की ओर जाने का हमें कई बार अवसर पड़ा है और हम अपने अनुभव से कह सकते हैं कि इस कुप्रथा के कारण वहाँ की ग़रीब असहाय और अशिक्षित पहाड़ियों पर अत्यन्त अत्याचार, कठोरता की जाती है। इस कुप्रथा को उठा देने के लिए उधर चिरकाल से आन्दोलन हो रहा है पर अभी तक उस का कुछ विशेष फल निकला था। टिहरी नरेश के इस कार्य्य की हार्दिक प्रशंसा करते हुये हम बृटिश सरकार से भी इस का अनुकरण करने का अनुनय करते हैं।

हाय! तिलक-तरु टूटा।
दरकी मातृभूमि की छाती,
भाग्य हिन्दुओं का फूटा॥
छाया-छत्र स्वराज्यवादियो!,
आज तुम्हारा छूटा॥
और सुफल की जो आशा थी,
उसे काल ने लूटा॥

मैथिलीशरण गुप्त

क्या गुरुकुल के स्नातक अङ्ग्रेज़ी नहीं बोल सकते?

हमारे पाठकों से यह छिपा हुआ नहीं है कि सार्वदेशिक सभा की ओर से श्री पं० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार वैदिक धर्म का प्रचार करने गये हुये हैं। वे वहां पर कितना उत्तम काम कर रहे हैं, यह इसी घटना से ज्ञात हो जावेगा कि गत शनिवार को उनका एक व्याख्यान "थियोलोजिकल कालेज" (Thealogical College) में "गुरुकुल में हमारा जीवन" इस विषय पर अंग्रेज़ी में हुआ। *सभापति* का आसन इसी कालेज के प्रिन्सिपल डा० *टार्गेन एल.एल. डी.* ने सुशोभित किया था। व्याख्यान के अन्त में स्नातक जी की प्रशंसा करते हुये उन्होंने ये शब्द कहे—

"*The government shoujd take the lesson from the graduates of the Gurukula.* Sonskrit is the first language in the Gurukula as the speaker said. Hindi is the second language and English is the third language. *The Gurukula graduates can speak English, though they have it as a third language, much better than the average number of the B. A. of the Madras University,*"

इसका आशय यह है—"*सरकार को गुरुकुल के स्नातकों से शिक्षा लेनी चाहिए।* वहां पर, जैसा कि वक्ता ने कहा, संस्कृत मुख्य भाषा है, हिन्दी दूसरे और अंग्रेज़ी तीसरे नम्बर पर है। *यद्यपि वहां पर अंग्रेज़ी तीसरी भाषा है पर तो भी गुरुकुल के स्नातक मद्रास-यूनिवर्सिटी के औसतन बी. ए. पासों से कई गुणा अच्छी अंग्रेज़ी* बोलसकते हैं।

एक निष्पक्षपात विद्वान् की यह सम्मति गुरुकुल के उन विरोधियों का मुंह बन्द करने के लिए पर्याप्त है जो कि हमारे स्नातकों की अंग्रेज़ी की योग्यता पर प्रायः आक्षेप किया करते हैं।

तिलक का संदेश

"आज हमारे सामने का राष्ट्रीय कार्य इतना बड़ा और विशाल है कि आपस में मिलकर उस से अधिक उत्साह और साहस से काम करने की आवश्यकता है जितना मैं दिखा सका हूं। यह कार्य स्थगित नहीं किया जा सकता। मेरी मातृभूमि प्रत्येक व्यक्ति का आह्वान करती और जागकर काम करने को कहती है। मेरा विश्वास है कि उसके पुत्र उसकी पुकार की उपेक्षा नहीं करेंगे। चाहे जो हो, मैं आप से प्रार्थना करना अपना कर्तव्य समझता हूं कि आप मातृभूमि की इस पुकार पर हाज़िर हों और हृदय से सब प्रकार के मतभेद मिटाकर राष्ट्रीय आदर्श की मूर्त्ति बनने की चेष्टा करें। अब ईर्षा द्वेष और भय के लिये स्थान नहीं है। भगवान् हमारे उद्योगों में फल लाने में मदद देगा और यदि हम नहीं ला सके तो यह निश्चय है कि इसके बाद आनेवाली सन्तानें अवश्य फल प्राप्त करेंगी।"

(नित्यमित्र)

ग्राहकों से प्रार्थना

१. पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखा करें।

२. ३ मास से कम अवधि के लिए यदि पता बदलवाना हो तो अपने डाकखाने से ही प्रबन्ध करना उचित है। इससे कम समय के लिए हम बदलने में असमर्थ हैं।

प्रबन्धकर्त्ता श्रद्धा
डाक० गुरुकुल कांगड़ी (ज़िला बिजनौर)

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिए छपा।

ओ३म्

Registered No A 575

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि ।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः ।।
(ऋ० मं० १० सू० १५१, म० ५)
"सूर्यास्त के समय में श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! हमको (इसी समय) श्रद्धामय कीजिये।"
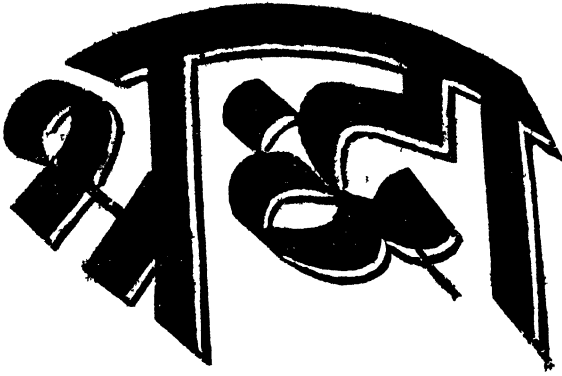
सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है { १२ भाद्रपद सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ । ता० २७ अगस्त सन् १९२० ई० } संख्या १६ भाग १

हे नाथ !

गुजर चुकी नाथ ! जिनकी मौसम—
वो फूल कब तक छिपे रहेंगे।
ये पश्चिमी मेघ और कब तक
इस आसमां में घिरे रहेंगे ॥ १ ॥
इन्होंने छोटी सी जिन्दगी में
हजारों मनमाने गुल खिलाये।
बिगुल धुओं के ये और कब तक।
बजा के यों नाचते रहेंगे ॥ २ ॥
पहिन के पोशाक काली आये।
हमें डराने उमड़ घुमड़ कर
कृपा के यों वेश असली अपना।
कहकते कब तक यहां रहेंगे ॥ ३ ॥
हवा के झोंके कहीं से लाकर
इन्हे यहां पर जमा गये हैं।
तो जिन्दगी भर हमी गरीबों
के सिर पे क्या ये खड़े रहेंगे ॥ ४ ॥
हजारों चोथे पहाड़ी नाले
भरे इन्होंने बरस बरस कर।
यों दिल दुखा कर महानदों के
ये भरते कबतक उन्हें रहेंगे ॥ ५ ॥
अब उन पहाड़ों पे बस चली जब
तो नाजुकों को लगे डराने।
ये ऐसे का (हा) यर यहां पे कबतक
कदम जमाये खड़े रहेंगे ॥ ६ ॥
गिराके ओ (लो) से इन्हों ने लाखों
यहां की जख्मी बनाए प्राणी।
बिना लिए बदला उसका कब तक
ये मेघ हंसते यहां रहेंगे ॥ ७ ॥
कृपा के सूरज को इनसे, जग में
इन्हो ने अन्धेर है मचाया।
ये धुआं पानी के ढेर कब तक
यों परदा बन कर पड़े रहेंगे ॥ ८ ॥
दिखादो ए नाथ ! सूर्य हमको
चमक न बिजली की चाहते हैं।
हटादे ये मेघ दूर, हमतो
इसी को "निधि" दिल नजर करेंगे ॥ ९ ॥

"निधि"

आश्चर्य !!!

हम तो जल जल के राख होते हैं।
एक तेरी अधार हवी होती ॥ १ ॥
छट पटाने से क्या हुआ मेरे।
कुछ तो उनको भी बेकसी होती ॥ २ ॥
"मेरे रोने मे बल है" यों मत भूल।
तेरी रोने पै वा हसी होती ॥ ३ ॥

आनन्द

घाम की विदाई

अब्र[१] के आने की बारी है तय्यारी हो चुकी।
रुखसत ऐ बादे समूम[२] अब तेरी बारी हो चुकी ॥ १ ॥
आबोतन गुलशन चमन नाला[३] है तेरे हाथ में।
तशरीफ अब ले जाइए, बस काफी यारी हो चुकी ॥ २ ॥
इन्तिहा अब हो चुका पर दिल अभी कुछ न टले।
तोपखाने तेरे अब गोला बारी हो चुकी ॥ ३ ॥
नेस्त होने के हैं हजरत अब के बारी आपकी।
आतिशबाजी[४] हो चुकी सीनाफिगारी[५] हो चुकी ॥ ४ ॥

---

१ बादल २ घाम ३ रोने वाले ४ अग्नि वर्षा ५ सीने फाड़ना

ब्रह्मचर्यसूक्त की व्याख्या

ब्रह्मचर्येण कन्या ३ युवानं विन्दते पतिम् ।
अनड्वान् ब्रह्मचर्येणाश्वोघासं जिगीर्षति । १८ ॥

"ब्रह्मचर्य से ही कन्या बलवान पति को प्राप्त करती है। सांड बैल और घोड़ा भी ब्रह्मचर्य पूर्वक घास खाकर ही खींचने में समर्थ होता है।"

पुरुष और स्त्री का सम्बन्ध वेद ने केवल सन्तानोत्पत्ति के लिए बतलाया है। जिस प्रकार अन्य इन्द्रियां उचित उपयोग लेने पर ही बलवती रहती हैं और अपने विषये में फंस जाने से दासता को प्राप्त होती हैं, इसी प्रकार जननेन्द्रिय को भी यदि स्वादेन्द्रिय बना लिया जाय तो वह भी नष्ट भ्रष्ट हो जाती है। प्रत्येक इन्द्रिय से तभी काम लेने में कल्याण है जब कि वह पुष्ट हो कर उस बोझ के उठाने योग्य हो जाय जो उस पर डाला जाता है। तब कौन पुरुष सन्तानोत्पत्ति करने का अधिकारी है? वही, जिसने कम से कम २५ वर्ष की आयु तक वीर्य रक्षा कर के उसे पुष्ट कर लिया हो और इस प्रकार जननेन्द्रिय को वशी भूत कर लिया हो। परन्तु यदि उसे पत्नी योग्य न मिले तो वह उत्तम सन्तान कैसे पैदा कर सकेगा। बीज कैसा ही उत्तम हो, उसके अन्दर कितनी ही उपजने की शक्ति क्यों न हो—यदि भूमि ऊसर है, यदि भूमि में बल नहीं है तो बीज निष्फल जायगा। उत्तम बीज के लिए दृढ़, स्वस्थ, उपजाऊ भूमि होनी चाहिए, तब वनस्पति रूपी सन्तान उत्तम और हर्ष दायक उत्पन्न होगी। इस लिए जहां पुरुष के ब्रह्मचारी होने की आवश्यकता है, जहां समावर्तन पूर्वक गुरुकुल से लौटा हुआ ब्रह्मचारी ही विवाह का पात्र है वहां उस ऐश्वर्य वान् इन्द्र को प्राप्त करने का अधिकार भी ब्रह्मचारी को ही प्राप्त है। अथर्ववेद में सकल विवाह सूक्त अर्थात आदित्या ब्रह्मचारिणी का ही किया है। ब्रह्मचारी का तेज जहां [illegible] व्यक्ति को जला देता है. वहां ब्रह्मचारिणी के तेज के साथ मिल कर वह नया तेजस्वी आत्मा का संसार में प्रवेश कराता है। ठीक है—प्राण को धारण करने की शक्ति रयि में ही है, पुरुष की व्यापकता को ग्रहण कर, अपने अन्दर लय करने की शक्ति प्रकृति में ही है।

मनुष्य ही नहीं, पशु सृष्टि में भी यही नियम वर्तमान है। वहां भी जीवन तथा वृद्धि के लिए ब्रह्मचर्य ही प्रधान है। मनुष्य की अवस्था में ब्रह्मचर्य शब्द के पूरे अर्थ लागू हैं। ब्रह्म नामी वेद और ब्रह्म नामी परमेश्वर का ज्ञान प्राप्त करना उनकी ओर चलना और उन्हें प्राप्त करना—यह मनुष्य में विशेषता है—धर्मोहितेषां अधिको विशेषः—परन्तु पशु में केवल अन्न रूपी संसार में सब से बड़े, प्राणीमात्र के, आधार का भक्षण ही ब्रह्मचर्य है। बैल और घोड़ा दोनों प्रकार के सांड ब्रह्मचर्य (इन्द्रिय संयम) केवल से ही तो अपने चारे को पचाते हैं, और उसी पचाकर गाय और घोड़ी में बलवती तथा दुर्दान्त स्नातक उत्पन्न करते हैं। इस नियम को मनुष्यों ने ऐसी गिरह दे ली कि बैल और घोड़े के बछड़ों की विशेष रक्षा कर के उन्हें ब्रह्मचारी रक्खा जाता है और उनकी पैत्रिक शुद्धि का विचार रक्खा जाता है। परन्तु मनन शील मनुष्य ने अपने सम्बन्ध में इस पवित्र नियम को भुला दिया है। जहां पशुओं को ब्रह्मचर्य नियम के अनुसार रखता है वहां स्वयं उसके गुण जानता हुआ भी अन्धा बन जाता है।

आर्य्यावर्त्त ही ब्रह्मचर्य्य प्रधान देश था और यहां ही मनुष्य इस समय अधिक अधोगति को प्राप्त हैं। नालिन्दा और तक्षशिला का जहां निशान भी मिट चुका था और जो विदेशियों ने खोद कर पुनः प्रकट किया है, वहां भी पशुओं के लिए ब्रह्मचर्याश्रम (अर्थात सांड के लिए नियमित काल) की प्रथा आज तक चली जाती है।

पशुओं की तो प्रकृति से स्वाभाविक ज्ञान मिला है। उन में तो 'मादा' ऋतु के बिना 'नर' को समीप नहीं आने देती। पशुओं में इसका प्रत्यक्ष प्रमाण मिलता है। यह भी मनुष्य की ही कृपा है कि जो पशु जंगल में ब्रह्मचारी अनुगामी रहते हैं वे आज कल के मनुष्यों के संसर्ग में आकर व्यभिचारी बन जाते हैं। उन्हें आज की मानवी सभ्यता ने प्रभावित कर छोड़ा है।

जिन जंगली मनुष्यों को भी आज कल की सभ्यता ने असभ्यता की उपाधि प्रदान कर रक्खी है उन जातियों में जननेन्द्रिय की रक्षा की प्रथा स्त्रियों के अन्दर अब तक विद्यमान है।

यूरोपियन डाक्टर साक्षी देते हैं कि जिन स्थानों में यूरोपियन लोग अब तक अपनी सभ्यता के चिन्ह—अर्थात शराब और 'सिफलिस' लेकर नहीं पहुंचे वहां अब तक गर्भस्थित होने के २½ वा ३ वर्षों पीछे तक गर्भवती अपनी जननेन्द्रिय की रक्षा करती और पुरुष को अपने समीप नहीं आने देती।

वेदाज्ञा अपनी सिद्धि के लिए अपने अन्दर ही हेतु रखती है। इस समय भी ईश्वरीय नियम वैसा ही ताज़ा है जैसा कि सृष्टि की आदि में था। वह कह रहा है कि जो व्यवस्था उस स्वाभाविक अनादि नियम मनुष्यों को दूर लेजा रही है वह त्यागने के योग्य है। जिसके देश वा जाति में ब्रह्मचर्य्य व्रत के पालन पुष्ट हो कर कन्या आदित्य ब्रह्मचारी को प्राप्त होती है उसी का जीवन चिर स्थाई होता है। शमित्योऽम्।

श्रद्धानन्द संन्यासी

—:०:—

श्रद्धा

असहयोग का साधन

सहयोग है

यदि तुम चलती हुई हवा के विरुद्ध जाना चाहते हो तो पहले अपने अंगों को सम्भालना पड़ेगा और कपड़ों को समेटना पड़ेगा। यदि तुम दूसरे पहलवान को कुश्ती में गिराना चाहते हो तो पहिले अपने सब अवयवों को एक दूसरे पर सहायक बनना होगा। यह नहीं हो सकता कि सिर पैर की सहायता न करे, भुजा गले की रक्षा के लिए न जायं और हाथ कमर छुड़ाने के लिए न लपके, और दूसरे पहलवान को भूमि पर पटक दिया जाय।

विरोधी शक्तियों का सामना तभी हो सकता है जब शरीर का अंग प्रत्यंग एक दूसरे की सहायता पर कटिबद्ध हो, और सब और एक मिल कर एक हो जायं, सामान्य दशा में भी एक शरीर के सब अंगों को परस्पर सहायता की आवश्यकता होती है पर उसका अभाव खटकता तभी है जब किसी विरोधी शक्ति से टाकरा पड़े। उस समय वही जी सकता है जिसका संगठन अच्छा है, जिस में लड़ने की शक्ति है, जिसके अंग एक दूसरे की मदद को भागते हैं, और जो सचमुच एक जीवित शरीर है।

भारतवर्ष, भारत वासी, और भारतीय सभ्यता ने बहुत युद्ध देखे हैं–बहुत विरोध देखे हैं और बहुत सी चोटें खाई हैं–और चोटें लगाई भी हैं। इतिहास चोट खाने और चोट लगाने की कथाओं की शृंखला है। संघर्षण बहुत हुए–जाति पर आक्रमण बहुत हुए पर इस समय जैसा भीषण संघर्षण उपस्थित है, और जिस प्रकार का अनिवार्य आक्रमण हो रहा है उसे देख कर कहना पड़ता है कि 'नभूतो न भविष्यति' ऐसा संघर्षण न कभी देखा न देखा जायगा। पहले संघर्षों में हम जीते भी और हारे भी–पर हारना और मरना एक न था, क्यों कि हम दस सदियों तक राजनैतिक पराधीनता में रह कर भी अठारहवीं शताब्दि में मनुष्य थे। पर इस बार का संघर्षण अपूर्व है–यह आक्रमण सब से अधिक भीषण है। इसबार हारना और मरना बराबर है। पहले आक्रमण नंगे हथियारों और शस्त्रों के आक्रमण थे–यह आक्रमण भावों आदर्शों और प्रलोभनों की ओट में छुपे हुए हथियारों का है। पहले आक्रमण की चोट स्पष्ट थी–इस की चोट स्पष्ट प्रतीत नहीं होती। इस समय कितना आवश्यक है भारतीय–शरीर का अंग प्रत्यंग एक दूसरे को अपनावे और एक दूसरे की सहायता के लिये हाथ बढ़ावे? इस आपत्ति समय में कितना जरूरी है? कि प्रत्येक भारत वासी शेष सब भारत वासियों को दुःखी समझ कर उसे अपना समझे? जब कि विदेशीय भाव और विदेशीय शास्त्र से असहयोग करने का उत्साह चारों ओर दिखाई देता है, तब क्या यह अत्यन्त आवश्यक नहीं है कि भारत निवासी और भारत निवासी में जो ऊंच नीच, पराये अपने, और छून अछूत के विचार हैं, उन्हें एक बार ही तिलांजलि दे दी जाय।

कितने दुःख से देखा जाता है कि जहां एक ओर हम लोग राजनैतिक उद्देश्य को सामने रख कर हिन्दू और मुसलमान के धार्मिक भेद भाव को दूर करने का यत्न कर रहे हैं वहां उन अछूतों के लिये हमारे हृदय के किसी कोने में स्थान नहीं निकलता, जो हमारे ही अंग हैं, हमारे ही भरोसे हैं, और हमारे ही सधर्मी हैं! क्या यह हमारी ना समझी और अदूरदर्शिकता का सबूत नहीं है कि जब हम भूमण्डल की सब से बड़ी राज्यशक्ति के साथ मुकाबिला करने की तय्यारी कर रहे हैं, तब हमारे घर में हजारों व्यक्ति पराया-मुख-ताक रहे हों और हमारी उन्नति में प्रसन्न होने की जगह उस से भय मानते हैं? अछूतों का प्रश्न नकेवल धार्मिक है, और नकेवल सामाजिक ही है, वह राजनैतिक भी है। ईसाईयों का उद्योग उसके प्रश्न को धार्मिक महत्व देता है, हमारी सामाजिक शिथिलता यदि देती उस प्रश्न को समाजिक महत्व है तो चतुर सरकार की बुद्धिमत्ता उसे राजनैतिक दृष्टि से भी बड़ा आवश्यक बना देती है। मद्रास में ब्राह्मण नोन-ब्राह्मण का जो राजनैतिक झगड़ा है वह उस झगड़े का एक नमूना मात्र है जिसे एक निपुण सरकार देश भर में पैदा कर सकती है।

प्रश्न ऐसा कठिन नहीं है जितना समझा जाता है। अत्यन्त अनुदार दल भी अब अनुभव कर रहा है कि अछूतों की ओर हमारी उपेक्षा का लाभ उठा कर ईसाई मिशनरी अपनी फसल काट रहे हैं। वह लोग भी अब कुछ २ अनुभव करते हैं कि अछूतों की ओर से लापरवाही एक भारी अपराध है। आवश्यकता यह है कि इस प्रश्न को हल करने के लिये एक बार जाति की इच्छा शक्ति को पूरे जोर से लगाया जाय। इच्छा शक्ति का प्रयोग होने से आधी समस्या स्वयं पिघल जायगी। इस समस्या के पिघले बिना हमारा जातीय संगठन अधूरा है–वह संघर्षण में आकर कभी देर तक खड़ा नहीं रह सकता।

आर्यसमाजिक जगत्

एकता के लिए यत्न

आर्यसमाज के दो बड़े दलों को परस्पर मिलने के लिए जो उद्योग आरम्भ हुआ था, वह शान्त हो गया है। उसके प्रत्यक्ष कारण तो यह हैं कि ला० सुशालचन्द्र भूमि को छोड़ कर पहाड़ पर चले गये हैं, और महात्मा हंसराज जी ने अपना मौनव्रत नहीं तोड़ा। पर परोक्ष कारण अनेक हैं, जिन की गहराई में न जाना ही अच्छा है। इतना कहना पर्याप्त है कि अभी बहुत से सामाजिक नेताओं का यह विश्वास ही नहीं है कि दोनों दलों का मेल कोई अभीष्ट वस्तु है। वह मेल से डरते हैं। वह समझते हैं कि मेल हो जाने से हमारी पार्टी का कोई भारी अहित हो जायगा। जब तक यह अविश्वास और सन्देह है तब तक मेल की क्या सम्भावना है?

यह एक बहाना है

जो सज्जन समझते हैं कि आर्य्यसमाज के दो दलों का मेल हो जाने से किसी हानि की सम्भावना है, बड़ी प्रसन्नता की बात हो यदि वह स्पष्टरूप से ऐसा कहदें, उस से जहाँ उनकी ईमानदारी प्रकाशित हो जाय वहां लोगों को भी एक होने न होने के हानिलाभ पर विचार करने का अच्छा मौका मिल जाय किन्तु जब स्पष्टरीति से कारण न लिखे जायं और असली प्रश्न को उलझाने का यत्न किया जाय तो अवश्य ही शोक होता है। क्या ही अच्छा हो यदि आर्यसमाज के भाग्य विधाता लोग प्रश्न को उलझन में डालना छोड़ कर एकता की हेयता या उपादेयता पर ही विचार करें। उस से अधिक लाभ की सम्भावना है।

पं० रामदेव जी का दौरा

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आर्य-प्रतिनिधि सभा की ओर से पंजाब की समाजों में पं० रामदेव जी दौरा लगा रहे हैं और समाजों की निद्रा को तोड़ने का यत्न कर रहे हैं। आप प्रकाश में दौरे का जो वृत्तान्त प्रकाशित कर रहे हैं, उस से ज्ञात होता है कि आप के सत्संग से सामाजिक पुरुषों को बहुत लाभ हो रहा है। पिछले साल की दुर्घटनाओं ने पंजाब में आर्यसमाज के कार्य को बहुत शिथिल कर दिया था। आशा है पं० रामदेव जी सभासदों को ऐसी अमृत घुट्टी पिला सकेंगे जो उनकी मूर्छा को दूर कर सके।

वैदिक मेगज़ीन को सावधान किया गया

पंजाब सरकार की ओर से वैदिक-मेगज़ीन के सम्पादक को सावधान किया गया है क्यों कि वैदिमेगज़ीन के आषाढ़ मास के अंक के कुछ सम्पादकीय नोटों को सरकार ने अनुचित समझा है। आज कल सरकार की ओर से सावधान किया जाना इस बात का सबूत होता है कि पत्र में जान है। वैदिकमेगज़ीन को भी अच्छा प्रमाण पत्र मिल गया है। हर्ष की बात है कि यह मेगज़ीन दिनों दिन उन्नति कर रही है। वह अब सार्वजनिक पत्रिका होती जाती है। उस में धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक सभी प्रकार के लेख और विचार रहते हैं। जो लोग समझते हैं कि धर्म को राजनीति स्पर्श से धोया जा सकता है, वैदिक मेगज़ीन उनके विचार का जीवित खण्डन है।

वैदिक धर्म

वैदिक धर्म नाम का मासिक पत्र औंध ज़िला सितारा से निकलता है। इस के सम्पादक आर्य जगत् के विदित पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर जी हैं। पण्डित जी वेद मन्त्रों के भण्डारी हैं। उन के पास कभी मन्त्रों की कमी नहीं रहती। वेदों पर दत्त चित्त होकर आपने जो परिश्रम किया है वह कम लोगों ने किया होगा। आप अपने दीर्घ परिश्रम का फल वैदिक धर्म पत्र द्वारा आर्य जनता के सम्मुख रख रहे हैं। आप जिस उत्तम परिश्रम में लगे हैं उस का मूल्य और भी बढ़ जाता है जब हमें ज्ञात होता है कि यह सब कार्य आप आर्थिक हानि उठा कर कर रहे हैं। जब तक ऐसे महानुभाव दृष्टि गोचर होते हैं तब तक आर्यसमाज के भविष्य से निराश होने के लिये कोई स्थान नहीं।

मद्रास में प्रचार

आख़िर मद्रास की भी सुध ली गई। आर्यसमाज के नेताओं की दृष्टि उस दूर वर्ती प्रान्त की ओर भी उठी है। स्वा० धर्मानन्द जी देर से वहां वैदिक धर्म की जोत जगाने का यत्न कर रहे हैं। कुछ महीनों से पं० सत्यव्रत जी सिद्धान्तलंकार स्वामी जी की सहायता के लिये जा पहुंचे हैं। खूब काम हो रहा है। कलकत्ते में धन संग्रह का कार्य समाप्त कर के श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी का डेपुटेशन मद्रास जायगा और महीना डेढ़ महीना वहां खूब प्रचार का कार्य होगा। श्री स्वामी जी के साथ पुअनहे के कार्य पर कुछ स्नातक और उपस्नातक भी गये हैं। आशा है कि इन दिनों के उद्योग से मद्रास में आर्यसमाज मज़बूत जड़ पकड़ जायगा और फिर काम कभी ढीला न पड़ेगा।

आर्यसमाज के कमीशन

भारत सरकार ने दो सालों में कई कमीशन बना डाले—तब भला आर्यसमाज बिलकुल पीछे कैसे रहता। पंजाब की प्रतिनिधि सभा ने गुरुकुल कमीशन की स्थापना की और संयुक्त प्रान्त की सभा ने उस का अनुकरण किया। परन्तु नकल कभी असल के बराबर नहीं होती। इन कमीशनों की कार्यवाही गुप्त रहीं—और यहां तक कि धीरे २ कमीशन ही गुप्त हो गये। यदि अनुकरण करने में कुछ अधिक सावधानता से काम लिया जाय, और दशाओं की अनुकूलता देखली जाया करे तो शायद हमारे कामों का ऐसा बुरा अन्त न हुआ न करे।

(इन्द्र)

(पृ० ६ का शेष)

यात्री

यद्यपि गंगा पर नमेड़ ही आने जाने का एक मात्र साधन है, तो भी यात्रियों का और दर्शकों का आना जाना बन्द नहीं है। प्रतिदिन चार पांच की औसत रहती है। जो दर्शक गुरुकुल भूमि में आते हैं वह यहां के दृश्य और कार्यक्रम देख प्रसन्न होकर जाते हैं।

बनारस में श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी

हमारे आचार्य और मुख्याधिष्ठाता श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी गत सप्ताह बनारस पहुंचे। वहां सांझ के समय आपका व्याख्यान हुआ, बाबू गौरीशंकर प्रसाद सभापति थे। श्री स्वामी जी ने असहयोग की व्याख्या करते हुए बताया कि शिक्षा में सरकार के असहयोग को परम कोटि तक पहुंचा देने का दावा यदि किसी का है तो वह गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी का है। उपस्थिति बहुत थी। दूसरे दिन श्री स्वामी जी हिन्दू यूनिवर्सिटी को देखने गये, जहां आपने ब्रह्मचारियों को उनके कर्त्तव्यों पर उपदेश दिया।

कलकत्ते में

बनारस से श्री स्वामी जी और उनके साथी कलकत्ते गये हैं। वहां आप आर्यसमाज के अतिथि हैं। समाज में उपनिषदों की कथा आरम्भ हुई है। श्री स्वामी जी का कलकत्ते में लगभग डेढ़ दो मास तक रह कर कार्य करने का विचार है।

रते नामें क्या होगा !

गायें कटेंगी, किन्तु दयालुतासे !!

—:o:—

दयालुता का भीषण चित्र !

मध्यप्रदेश और बरारके चीफ कमिश्नर माननीय सर फ्रंकजार्ज स्लोड, के० सी० एस० आइ०, आइ० सी० एस० गत १२ जुलाई को सागर पधारे थे। दूसरे दिन डिस्ट्रिक्ट कौंसिल और म्यूनसिपल कमिटी की ओर से उन को चांदी के गोल कास्केट में मान पत्र दिया गया। उक्त मान पत्र में एक स्थान पर कहा गया है, कि "कमिटी गाय बैलों के काटे जाने के सम्बन्ध में प्रजा के जो भाव हैं उन्हें आपके दयालु हृदय के सामने प्रकट करना चाहती है। प्रजा मवेशियों के काटे जाने को बड़ी घृणा की दृष्टि से देखती है। आप की जगह के एक भूतपूर्व अधिकारी ने कहा था कि गाय बैलों के काटने से सरकारका कोई संबन्ध नहीं है, उस का स्मरण रखते हुए अब यह सुनकर कि रतोना में एक बड़ा कसाई खाना सरकार की सहायता से बन रहा है, प्रजा को बहुत भारी नैराश्य हुई है।" इसके उत्तर में, हमारा सागरका संवाददाता लिखता है, चीफ कमिश्नर साहब ने फर्माया कि म्यूनिसिपल कमिटी के इन्तजाम से पहले से एक कसाईखाना चल रहा है, जिस से कमिटीकी माकूल आमदनी है। इस कसाईखाने में ढोर निर्दयता से मारे जाते हैं और उसका कच्चा माल (कच्चा चमड़ा आदि) बाहर भेज दिया जाता है, जिस से सागर को विशेष लाभ नहीं पहुंचता। ये सब बातें विचार कर ही मेरे पूर्व के चीफ कमिश्नर साहब ने नया कसाईखाना बनवाने और कच्चे चमड़े को यहीं पकवाने का इन्तजाम किया है। मुझे इस विषय में विशेष मालूम नहीं है परन्तु इस नये कसाईखाने में गाय बैल

"ह्यूमेनिटेरियन"

तरीके से अर्थात् दयालुता के साथ मारे जायगें। पक्का चमड़ा यहीं तैयार किया जायेगा, जिस से सागर जिले में औद्योगिक उन्नति होगी।" सहयोगी हितवाद में दिये हुए कंपनी के पट्टे में यह शर्त है कि, कंपनी दयालु ढंग से काटने का काम करेगी।" कंपनी के प्रास्पेक्टस में एक स्थान पर यह भी विश्वास दिलाया गया है, कि यूरोप में जो सब से humane and Sanitary दया और सफाई का तरीका माना गया है उस तरीके पर कसाईखाना बनाया जायगा। इस तरह का प्रबन्ध रहेगा कि एक जानवर दूसरे जानवरकी दृष्टि के सामने नहीं काटा जायगा।

दयालु क्रूरता

गायें काटी जायंगी; किन्तु कहते हैं, दयालुताके साथ! उस क्रूर हृदय में भी दया है! हमने सुना है, अफसोस कि हिन्दू होकर भी सुना है, कि गलेसे खून की और आंखों से आंसू की धाराएं छोड़ती हुई गायें किस तरह करुण स्वर से रंभा कर अन्तिम श्वास के साथ अपने इन दयालु हत्यारों को धन्यवाद दिया करती हैं; किस प्रकार चकित नयनों से, इन नर पिशाचों की चौड़ी चमकदार छुरी को देखकर वे सारे शरीर से कांपने लगती हैं और किस प्रकार उनका हृदय एक अनुभूत पीड़ा और घबराहट से धड़कने लगता है; और किस प्रकार वह छुरी का आघात खाकर छटपटाती हुई सिर डाल देती है और निःसहाय भावसे जीभ लटका देती है। हमारे पास हृदय नहीं जो उसकी यमयातनाका अनुभव कर सके, हमारे पास शब्द नहीं, जो उसकी करुणावस्था का वर्णन कर सकें, और हमारे पास रंग नहीं, जो सहसा संसार को लूटता हुआ देख सतृष्ण और अनन्त निराशांधकार पूर्ण नयनों का चित्र खींच सकें। हाय रे! हमारे पास शक्ति भी नहीं कि हम ऐसा दृश्य रोक भी सकें। यूरोप और उसका भाई अमेरिका इस क्रूरता में दयालुताका समावेश करने आया है। देखें

यह दयालुता कैसी है!

मि० जान फारेस्टर फ्रेजर "अमरिका ऐट वर्क" नामक पुस्तक में लिखते हैं. "चार बरस पहले मैंने आरमर के कसाई खानों में शास्त्रीय पद्धति से सूअर, गाय, बैल और भेड़ों का काटना देखा था। मैंने कसम खाई कि मैं कभी भी ऐसा दृश्य नहीं देखूंगा। मैं उस कसाईखाने से घबराकर बाहर निकल आया था। तोभी आज मैं फिर शिकागो (अमेरिका) में मेसर्स स्विफ्ट के कारखानों में आया हूं, मैंने अपना पतलून ऊपर चढ़ा लिया है और महोगनी लकड़ी के फर्श पर चल रहा हूं, फिसलने का डर है, क्यों कि उस पर गरम खून बह रहा है और मेरे मुंह और नाक में गरम खूनकी बदबू घुसी जा रही है। यहां पर मैंने देखा है कि एक घन्टे में ६०० सूअर मारे जाते हैं ६२० भेड़ों के गले काटे जाते हैं और शांत आंखों वाले मवेशी एक घन्टे में

२४० के हिसाब से अपना दुख भरा अन्तिम चीत्कार समाप्त करते हैं, यह सब काम ख़ूबसूरती—दयालुता के साथ, वैसी ही दयालुता के साथ जैसा वह हो सकता है, किया जाता है, परन्तु यह दृश्य दिन भर मुझे सताता रहा।" यह लेखक आगे चल कर सूअरों के कार्ड आनेका वर्णन करता है कि किस प्रकार वे भय से चींखते चिल्लाते हुए एक स्थान में लाये जाते हैं, फिर किस प्रकार उन तड़फते हुओं गले काटे जाते हैं और उनका प्राणान्त होता है। यह स्विफ्ट कम्पनी अपने ही कारखानों में प्रतिदिन २७,३८६ सूअर काटती है। इसी प्रकार फुर्ती के साथ गाय बैल भी मारे जाते हैं। एक घण्टे में २४० का काम तमाम होता है। मैं कसाई के चमकदार छूरों, पिचकारी के समान छहरते हुए खून और और उसके रंगे हुए लाल कपड़ों और उन खूंखार कसाइयों का वर्णन पाठकों की कल्पना पर ही छोड़ता हूं। पहले ये जानवर नहलाये जाते हैं, जिस में उनका शरीर कुछ ठंडा हो जाय बाद में वे तंग रास्ते में हांके जाते हैं। वहां ऊपर से दरवाजे नीचे दरवाजे खिसका कर दो दो जानवर अलग कर दिये जाते हैं, ऊपर प्लेटफार्म पर मजबूत भीमकाय मनुष्य लोहे के भारी हथौड़े लिये तैयार रहते हैं। गाय बैलों के इस प्रकार एक स्थान में बन्द होते ही ये नृशंस आगे बढ़ते हैं, और उनकी आंखों के बीच कपाल पर जोर से घुमाकर हथौड़ा मारते हैं। भयंकर आघात! वे दरवाजे ऊपर खींच लिये जाते हैं, और बेचारे पशु बेहोश होकर निर्जीव के समान नीचे ढेर हो जाते हैं। चार आदमी फुर्ती से उनकी पिछली टांग सांकल से बांध देते हैं अब वह जानवर ऊपर खींचा जाता है। बाद में उस की नसें काट कर खून निकाला जाता है। बढ़िया गोश्त इंगलैण्ड को भेजा जाता है। हड्डी और सींगो के कघे दस्ते आदि बनते हैं, खुरों से बटन तैयार होते हैं, चमड़ा जूते, बैग, जीन आदि के काम में आता है, और खून से ऐल्बूमन तैयार होता है तथा शक्कर साफ की जाती है। इस प्रकार ईश्वर का जीता जागता प्राणी विज्ञान की सहायता से देखते ही देखते शोरवा और कबाब बना कर सभ्यता की थालियां सजाता है, साबुन बना कर शरीर साफ करता है, रङ्ग बनकर वस्त्रों की शोभा बढ़ाता है, और कघा बनकर पुरुष तथा महिलाओं के केशपाश रचता इसी सभ्यता की भड़कीली मांग के लिये मध्यप्रान्त की सरकार गाय बैल काटने का कारखाना खोल कर सागर का व्यवसाय बढ़ावेगी जिस से मध्य प्रदेश का मुख उज्वल होगा। देखें इस खून खराबी और दयालु निर्दयता का दृश्य मध्यप्रदेश मध्य प्रदेश ही नहीं, सारे भारतवर्ष की प्रजा, हिन्दू और मुसलमान दोनों, किन आँखों से देखती है?

"कर्मवीर"

गुरुकुल—समाचार

(गुरुकुल कार्यालय से प्राप्त)

ऋतु परिवर्तन

वर्षा इस वर्ष इतने जोर से हुई है कि शायद इतने थोड़े दिनो में इतना अधिक पानी बहुत सालों से न बरसा होगा। कुछ महीनों तक लगातार मानसून चलती रही और दिन में दो एक बार पानी गिरता रहा। जिस शीघ्रता से पानी आया उसी शीघ्रता से गया भी। १५ सितम्बर तक बड़ी जोर दार वर्षा हुई—गंगा भी खूब बढ़ रही थी। यहां तक दो तीन घण्टों तक गंगा के किनारे कुछ मदद भी रखनी पड़ी—परन्तु पानी बढ़ता २ रुक गया और किनारे को नहीं छू सका। उस रोज़ वर्षा ऋतु यौवन पर दिखाई देती थी। परन्तु ऐसा भरा यौवन और ऐसा जल्दी बुढ़ापा भी कहीं न देखागया होगा। १६ अगस्त को आकाश साफ हुआ। उस दिन से आज तक कोई गम्भीर बादल नहीं आया और एक बार भी भूमि तर नहीं हुई। गंगा एक दम ऐसी कमजोर हुई है कि मानों इस साल बढ़ी ही नहीं। पानी सफेद चल रहा है। गदलापन जाता रहा, और नीला पन अभी दूर है।

स्वास्थ्य

यह दिन सारे देश में मलेरिया ज्वर के हैं। वर्षा के शीघ्र ही हटजाने से धूप बहुत कड़ी पड़ रही है। परन्तु ईश्वर की दया और साधनों के समय पर उपस्थित हो जाने के कारण इस समय कोई रोग का कोई बल नहीं है, साधारणतया दो एक को ज्वर हो जाता है। यदि यह दिन इसी प्रकार बीत गए तो आशा है कि अक्टूबर के आरम्भ में सर्दी आरम्भ होने पर ब्रह्मचारी बिल्कुल स्वस्थ और हृष्ट पुष्ट शरीरों के साथ कार्य आरम्भ कर सकेंगे। बीमारी का एक भारी कारण बूटी होती है जो बरसात में बहुतायत से उत्पन्न हो जाती है। वह उखड़वा दी गई है और मलेरिया के अणुओं के बढ़ने के अन्य साधनों को भी रोक दिया गया है। आशा है, सब कुशल ही रहेगा।

सुनसान

छुट्टियां प्रारम्भ होते ही महाविद्यालय के उपाध्याय एक दम घरों को चल दिए। विद्यालय के भी आधे अध्यापक चले गये हैं। महाविद्यालय के ब्रह्मचारी प्रो० सुखराम जी और पं० जयचन्द्र जी के साथ नैनीताल अलमोड़ा आदि की यात्रा के लिए चले गए हैं। इस कारण बहुत सी रौनक़ कम हो गई है। विद्यालय के ब्रह्मचारी अपनी खेल कूद और अभ्यास में लगे हुए हैं। तैरने का आनन्द अभी तक भी आ रहा है।

जन्मोत्सव

विद्यालय के ब्रह्मचारियों की साहित्योत्साहिनी और साहित्य संजीवनी नाम की दो सभायें हैं। दोनों के जन्मोत्सव ब्रह्मचारियों ने बड़े उत्साह से मनाये हैं। सभाओं के उत्सवों के साथ सहभोज भी किये गये, जिन से कार्य कर्ताओं के जोश का अनुमान हो सकता था। इसी उपलक्ष में ब्रह्मचारियों ने चन्द्रगुप्त नाटक और महाभारत के कुछ चुने हुए हिस्सों के दृश्य भी दिखाये जिन में उच्चारण और भाव को प्रधानता दी गई थी। सभाओं के जन्मोत्सवों से निबट कर अब विद्यार्थी अपने २ छुट्टियों के लिए दिए हुए कार्य के करने में लग गए हैं।

(शेष पृ० ५ वें के तीसरे कालम में देखो)

विचार तरंग

महाराजतिलक

(श्रद्धा के लिए विशेषतया लिखित)

१

आज महापुरुष तिलक भूतल पर नहीं है—भारत का तिलक मिट गया ऐसा कोई हजार क्यों न कहे किन्तु मेरा चित्त इसे मानने के लिए तय्यार नहीं होता। यह क्यों? इस लिये कि तिलक भारत में एक सत्यसिद्धान्त के सचमुच आत्म-भूत थे अतः वे सत्य थे। इस लिए कि उनका वचन था कि वे भारत को जीते जी स्वराज्य-स्थित हुआ देखेंगे और भारत अभी स्वराज्य-स्थित नहीं हुआ है; इस लिए कि भारत की स्वाधीनता के लिए किये हुए लोकमान्य के शक्ति शाली कर्म आज नष्ट नहीं हो गये हैं, उनका परिणाम तो चिरकाल तक निकलना है; इसलिए कि तिलक अपने आप को जानते हुए (Conscious) आत्मा थे—नहीं नहीं महात्मा थे। वे कभी भी बूढ़े होने वाले या मरने वाले न थे।

अतः अच्छा हो कि इस घटना पर न तो कोइ दुःख में बहुत शोकाकुल होवे और न दूसरा आनन्द में हुर्रे (Hurra) मचावे। क्योंकि ये दोनों ही काम दृष्टि हीन होने से होते हैं। जो कुछ हो रहा है और होगा वह अटल नियमों के अनुसार ठीक ही होगा।

२

जब बिलकुल अचानक मेरे कानों में यह पड़ा कि "लोकमान्य का देहपात हो गया" तो न जाने क्यों इस शब्द के अन्दर से टकरा कर प्रतिध्वनि सी निकली कि नौकरशाही (अस्वराज्य) का पात होगया। भारत के थामने वाले इस भारी स्तम्भ के एकाएक पतन हो जाने से फटते हुए अपने कलेजों को जिन हाथों से पकड़े बैठे हैं वे ही हाथ तिलक से अधूरे छुट गए कार्य को झट पट कर डालने के लिये व्याकुल हो रहे हैं। तिलक से सूने भारत को देख कर आज जहां आंखें विवश अश्रुधारा बहा रही हैं वहां वही आंखें न जाने क्यों किसी शीघ्र ही आने वाली अच्छाई को देखने के लिये आशा भरी प्रतीक्षा में उत्सुक हो रही हैं।

आज तिलक को न पाकर जी चाहता है कि फूट फूट कर रुदन क्रन्दन करें किन्तु दूसरी तरफ उन्हीं अपने महाराज लोकमान्य का भय होता है कि उन का हमें आदेश तो हमें शोक छोड़ कटिबद्ध होने के लिए आज्ञा दे रहा है।

३

भारत वासी! महाराज ने अपना संपूर्ण जीवन काल तेरे लिये ऐसे अनवरत घोर परिश्रमों में बिताया कि आज उन्हें बिलकुल थक कर सो जाना पड़ा। अब रोने से क्या होता है, जब कि श्रमकाल में उनका जी जान से हाथ नहीं बटाया। अब भी उन की भस्म माथे पर चढ़ा कर चतुर्गुणित पुरुषार्थ से अपने उस भवन के निर्माण में जुट कर लग जाओ जिस के कि पूर्ण करने के लिए ही उन की एक चेष्टा होती थी जिस से कि इस तिलक हीन रात्रि में ही यह इमारत बिलकुल तय्यार होजावे और जब तिलक महाराज फिर आवें तो सिवाय उन्हें इस मन्दिर में सिंहासनारूढ़ करने के और कोई कार्य्य शेष न रहे। जल्दी करो, अपनी कृतघ्नता का यह प्रायश्चित्त जितना जल्दी हो सके समाप्त करो। इस के सिवाय उसके महा ऋण से मुक्त होने का और कोई उपाय नहीं है।

४

मुझे लोकमान्य के कभी दर्शन नहीं प्राप्त हुए। चित्त में सोचा करता था कि कभी होजावेंगे किन्तु आज यह क्या सुन रहा हूं कि उन्हों ने अपने आप को सदा के लिए अन्तर्हित कर लिया है।

अच्छा, अब मैं समझ गया कि उन्होंने यह क्या किया। अब मैं उन के विराट्-रूप में दर्शन करूंगा अवश्य दर्शन करूंगा। अब विलम्ब नहीं सह सकता—"कभी दर्शन हो जावेंगे" ऐसी उपेक्षा नहीं कर सकता उन का मानसिक ध्येय (आत्म शासन नाम से) (राज नैतिक भारत में) जो शरीर धारण करने वाला है उसी में—उसी विराट् स्वरूप "मैं तिलक के शीघ्र ही दर्शन करूंगा। अब विलम्ब क्या है। इस परिमित देह बन्धन को तोड़ कर निकला हुआ तिलक का आत्मा (जीवन) एक एक भारतीय में समाजावे। भारत की एक एक झोंपड़ी में "भारत" का राज तिलक हो जावे। अब देर क्यों है। आंखें शीघ्र ही दर्शन करना चाहती हैं।

धर्मेन्द्र

गुरुकुल जगत्

गुरुकुल भटिण्डू समाचार

और खाण्डे में वैदिक धर्म प्रचार

षाण्मासिक परीक्षा आरम्भ होगई है। ४, ५ दिन पूर्व १६ ब्रह्मचारी रोग से ग्रस्त थे। अब केवल दो ब्रह्मचारी बीमार हैं।

वर्षा खूब हुई है। चारों ओर खेती लहलहा रही है। दया जति के बहुत से लोग गुरुकुल में एकत्रित हुवे। उसी समय गढ़ी कुण्डल के चौधरी हरनाम सिंह ने सर्व अध्यापकों का एक मास का वेतन दिया। गठवालों के मेल को देख कर दया के लोग भी जागने लगे हैं। स्थान २ से बुलावा आ रहा है। पहिला बुलावा खाण्डे से आया। खाण्डा सनातनीयों का गढ़ है। यहां पर १२ गावों के चौधरी रहते हैं। १२ गावों की सम्मिलित एक चोपाल है। (अर्थात् पञ्चायत भवन) आस पास के गावों में अगर गुरुकुल के पक्ष में किसी गांव के लाने की जरूरत थी तो उसी खाण्डे गांव की ही थी क्यों कि इसी के साथ ही १२ गांव और पक्ष में होते थे इसी लिये इस पर बहुत जोर दिया गया और दिया जा रहा है। कालूराम जी भजनीक ने अपने भजनों के प्रभाव से खाण्डे वालों को मोहित कर लिया। उसके बाद लोग यज्ञोपवीत लेने लगे और गुरुकुल

से मुख्याध्यापक लाला राम सिंह जी (घर माने) को साथ लेकर प्रचारार्थ गये। सनातनी पण्डित मौलड़ मिश्र का कई सालों से लोगों पर प्रभाव जमा हुआ था उसे बुलाकर संस्कृत में बात चीत आरम्भ कर दी। ½ घण्टा भी वह बात न कर सका। दो पहर को ला० रामसिंह जी के और रात को मुख्याध्यापक जी के व्याख्यान होने लगे। शास्त्रार्थ के लिये चैलञ्ज दे दिया। लोगों की भीड़ बेहद होती थी। रात को खुले मैदान में प्रचार होता था। औरतें भी रात को बहुत हिस्सा लेती थीं। कालूराम जी के भजनों ने मन्त्र की तरह लोगों को मुग्ध कर लिया। रात के १२ बजे तक प्रचार होता रहा—कई स्त्रियों ने यज्ञोपवीत मांगे। लावड़े में कोई ऐसा ठोला नहीं बचाया जिस में लोगों ने यज्ञोपवीत न लिये हों।

इस प्रचार के बाद मुख्याध्यापक जी तथा कालूराम जी लौट आये। ७, ८ दिन तक लावड़े में प्रचार बन्द रहा पर लोग ८, १० मिल कर लावड़े से गुरुकुल में आने लगे और प्रचार के लिये फिर बाधित करने लगे। इधर परीक्षा की तैयारी उधर प्रचार के लिए लोगों का उत्साह। अन्त में लोगों की ही जीत हुई। कालूराम जी को फिर भेजा गया उनका लावड़े से पत्र आया कि कई सनातनी शास्त्रार्थ के वास्ते तैयार हैं इस लिये पण्डित साथ लेकर आवें। इधर कई ब्रह्मचारी बीमार हो गये थे तथा परीक्षा पास थी फिर भी मुख्याध्यापक जी ने पण्डित शान्तिस्वरूप जी को तथा पण्डित रविदत्त जी को भेज दिया और घोषणा करवादी कि जो कोई पण्डित से संस्कृत में शास्त्रार्थ करना चाहे संस्कृत में कर ले अथवा जो भाषा में करना चाहे भाषा में कर सकता है। पर इन के जाने पर कोई मुकाबले पर न आया फिर लगातार १ मास तक लावड़े में ही प्रचार होता रहा। चौधरी पीरुसिंह जी भी लावड़े में पहुंच गये सब महानुभावों के बोलने से ही गले बैठ गये। इस प्रचार में दो बातें विशेष उल्लेखनीय हैं (१) समाज स्थापित हो गई, (२) पाठशाला गुरुकुल के आधीन खुल गई।

उसके बाद समाज के अधिकारी चुने गये।

पाठशाला में २५ लड़के एक दम दाखिल हो गये हैं। गुरुकुल की ओर से तुहीराम जी पढ़ाने के वास्ते भेजे गये हैं।

इधर कहोली ने रुख पलटा है। ५ गाड़ियां भूसे की पहिले भिजवादी ३०५ मन गेहूं तथा एक जोहड़ बेचकर ६००) रु० का एक मकान बनाने का प्रण किया है। २००) रु० नकद भेज दिया है। ४००) रु० नींव रखने पर भेज देंगे।

चोलका, सेहरी, भरोट, शेखूपुरा के लोगों ने भी बुलाया है और चन्दा एकत्रित करने का प्रण किया है। केवल लावड़े ने ही ७६५ मन गेहूं भेजे हैं सहरी ने २५५ गेहूं अभी हाल में इकट्ठे किये हैं तथा चोलके ने १६५ मन। उधर नोक्की तथा बेरी में पं० बस्तीराम जी प्रचार कर रहे थे। शास्त्रार्थ सनातनियों से होने वाला था अतः गुरुकुल से पण्डित बुलाये उपरोक्त दोनों पण्डितों (पं० शान्तिस्वरूप जी तथा पं० रविदत्त जी) को भेजा गया। खूब प्रचार कर के आये। उधर से भी बुलावा है। अब परीक्षा के बाद दीर्घ अवकाश होगा इस में प्रचार का अच्छा मौका मिलेगा।

पूर्णदेव.
प्रबन्धकर्त्ता

ग्राहकों से प्रार्थना

१. पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखा करें।

२. ३ मास से कम अवधि के लिए यदि पता बदलवाना हो तो अपने डाकखाने से ही प्रबन्ध करना उचित है। इससे कम समय के लिए हम बदलने में असमर्थ हैं।

प्रबन्धकर्त्ता श्रद्धा
डाक० गुरुकुल कांगड़ी (ज़िला बिजनौर)

भूतपूर्व लाटसाहिब पंजाब की आज्ञा

बेगार मत दो

पराधीन स्वपनेहु सुख नाहीं

[illegible]

जमींदारान दुकानदारान वा [illegible] पंजाब

चूंकि यह प्रथा प्रचलित है कि सरकारी मुलाज़िम दौरे के समय खाद्य पदार्थ बिना मूल्य प्राप्त करते हैं अथवा लोगों से बिना मजदूरी दिये लकड़ी या घास कटवाते हैं या अन्य सामान बिना मजदूरी पहुंचवाते हैं तुम को सूचित किया जाता है कि श्रीमान् लफ्टेनेण्ट गवर्नर बहादुर पंजाब ने इसको पूर्णतया मुमानियत करदी है और आज्ञा प्रकाशित करदी है कि यदि कोई राजकीय कर्मचारी (थानेदार तहसीलदार कलक्टर इत्यादि) इसके प्रतिकूल आचरण करेंगे तो उन से सख्ती के साथ बर्ताव किये जावेंगे।

जब कभी किसी राजकीय कर्मचारी के लिये जिस समय वह दौरे में हो वस्तु प्राप्त करना आवश्यक प्रतीत होगा तो तहसीलदार किसी व्यक्ति को पेशगी धन देकर प्रबन्ध करा देंगे। जिस शख्स से कोई वस्तु मूल्य ली जायगी अथवा किसी प्रकार की मजदूरी यहां तक सामान भी कैम्पतक पहुंचवाया जायेगा। कराई जायगी तो रुपया उसी समय दे दिया जावेगा और मूल्य धन निरख नामा तहसील जिसपर तहसील की मोहर लगी होगी जो की वस्तुयें मूल्य लेने के समय या मजदूरी कराने के समय उनको दिखाया जायेगा, के अनुकूल चुकाया जावेगा। (वह निरखनामा बाजार के अनुकूल हो) यदि कोई राजकीय पुरुष कहीं अदायगी मूल्य वस्तुएं देने के लिये कहीं अथवा मजदूरी करने के लिये कहें तो तत्काल इनकार करदेना चाहिये हरगिज उसको सख्ती से न डरो यह इनकार तुम्हारे लिये सनद होगा और राज्य तुम्हारी रक्षा करेगा।

(नोट) इस विज्ञापन में जो शब्द ब्रैकट में हैं वह मेरे अपनी ओर से हैं।

दौलतराम गुप्त
(उपमन्त्री डिस्ट्रिक्ट कांग्रेस कमेटी)
रोहतक।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिए छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 875

'रक्षा बन्धन का सन्देश' "रक्षा" की गांठ बांध लो'

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धा

श्रद्धां सूर्यस्य निमुचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० मं० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | १६ भाद्रपद सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० ३ सितम्बर सन् १९२० ई० | संख्या २० भाग १

हृदयोद्गार

भारत माता का विलाप

"दीनबन्धु! इस धराधाम में मुझसा कौन अभागा है,
अबतक भी जिसका इस जग में सुखसौभाग्य न जागा है।
कहां गई वो मेरी विद्या, कहां गये वो विद्यावान्,
स्वच्छ हृदय से सारे जग में जो करते थे इसका दान ॥ १ ॥"

"ऊंचे २ कोट जहां पर कभी भूमिपति रहते थे
बड़े २ नायक यश जिनका जग में गाते रहते थे।
गीदड़ रोते रोज़ वहां पर पड़े सांप फुंकार रहे
हुये आज वो नष्टो २ दीमक उनको चाट रहे ॥ २ ॥"

"मेरे सुन्दर महल धाम थी जिनकी सूरत से बढ़कर
जिनमें हीरे मोती पन्ने लगे हुवे थे जड़ जड़ कर।
मेरी वो सोने चांदी की कानें हाय कहां हैं आज
कोहनूर से मेरे हीरे कहां गये वो सुन्दर ताज ॥ ३ ॥"

"कहां गये विख्यात जगत् में मेरे प्यारे कारीगर
जिनने ताजमहल से अद्भुत महल बनाये अति सुन्दर।
कहां गई ढाके की मलमल कहां जुलाहे हैं वो आज
जिन के रचे पहिर कर कपड़े योरपभर बनता था साज॥ ४ ॥"

"कहां गई वो मेरी मीठी-गंगा यमुना की धारा
जिनके शीतल जल को पीकर सुख होता था जग सारा।
हाय नहर! तू कहां लेगई उनकी शोभा सारी
हीरे मोती कहां गये वह कहां गई रचना प्यारी ॥ ५ ॥"

"मेरे शान्त तपोवन जिन में कभी तपस्वी रहते थे
सिंह और मृग सुहृद्भाव से जिन में मिल कर रहते थे।
आज लोभ के मारे सूने और पड़े वो जंगल बन्द
हाय! वहां अब दीन मृगों की मृगया होती है स्वच्छन्द ॥ ६ ॥"

"मेरे चारों तरफ पड़े हैं चार राख के ऊंचे ढेर
अचल खड़े आंधी पानी में मानों कोई खड़े दिलेर।
कभी राज्य थे ये बलशाली राजाओं के अति सुविशाल
वो भी नष्ट हुवे पर उनके हाय! पड़े हैं ये कंकाल ॥ ७ ॥"

ओफ! उत्तुंग इधर देख ये है मीनार खड़ी कैसी!
कहते हैं इसके पाये की रचना और नहीं ऐसी।
छतरी किसने तोड़ी! जो तो मुकट समान सुहाती थी
कभी यहां चौहान की लाल ध्वजा फहराती थी ॥ ८ ॥"

लाल किला ये कितनी मिहनत इसके लगी बनाने में
ये बहिश्त था इस वसुधा का सचमुच किसी ज़माने में।
पर रे तख्ते ताऊस कहां है!! उतर गई यमुना प्यारी
मोती हीरे उखड़ चुके अब इसी किले की है बारी ॥ ९ ॥"

ऐसा कहते २ दोनों हाथ उठाकर नभकी ओर,
प्यारी भारतमाता रोकर लगी मचाने दुगना शोर।
दर्दनाक वह आह कभी भी जो प्राणी जन सुनलेगा
एक बार तो अलग बैठकर वह निश्चय ही रोलेगा ॥ १० ॥"

निधिः

ब्रह्मचर्यसूक्तकी व्याख्या

ब्रह्मचर्य्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत ।
इन्द्रो ह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वराभरत् ॥ १९ ॥

" ब्रह्मचर्य्य के तप से ही विद्वानों ने मौत को हटा कर नष्ट किया है । ब्रह्मचर्य्य से ही इन्द्र (जीवात्मा) ने देवों (इन्द्रियों) के लिए सुख को धारण किया है । "

सत्यमेवहि देवाः अनृतं मनुष्याः—साधारण अवस्था में मनन शक्ति रखने वाले की मनुष्य संज्ञा होती है; जब वह सत्यमानी, सत्यवादी और सत्यकर्मी हो जाता है, तब उस की 'देव' संज्ञा होती है । मौत को हटा कर ही अमृत की प्राप्ति हो सकी है और यही मनुष्य का परमोद्देश्य है । यद्यपि प्रकाश शरीरधारी जीवात्मा के अन्दर ही विद्यमान् है तथापि अन्दर की आंखें बन्द कर रखने के कारण वह उस से लाभ नहीं उठाता । देवता और राक्षस बनने के समान अन्दर ही मौजूद हैं । ब्रह्मचर्य्य से ही देव भाव का पशु भाव पर विजय होता है तब मनुष्य देवता बन जाता है। मौत को जीत कर अमर हो कर ही अमृत के भण्डार के अन्दर विचरने की शक्ति मिलती है—सत्येन लभ्यते—वह सत्य से ही प्राप्त होता है और सत्य को धारण करने की शक्ति ब्रह्मचर्य्य से प्राप्त होती है । सत्येन पंथा विततो देवयानः सत्य की सड़क पर ही देवताओं के वाहन चल सके हैं । देवता पद से ऊपर कोई पद जीवात्मा के लिए नहीं, तभी और कवि ने कहा है—सत्यमृतानि सर्वाणि सत्यान्नास्ति परम् धनम्-सत्य से बढ़ कर और क्या है ? और उस सत्य रूपी उच्चावस्था को प्राप्त करने के लिए ब्रह्मचर्य्य ही एक मात्र साधन है ।

देवों का राजा इन्द्र कहा गया । प्रजा का पालक राजा होता है । परन्तु पहले कहा जा चुका है कि प्रजा पालक बनने के लिए ब्रह्मचर्य्य मुख्य साधन है । इन्द्र ब्रह्मचर्य्य के बल से ही देवों के लिए सुख का सामान पैदा करता है ।

इन्द्र कौन है और 'देव' कौन हैं ? वह वेद के विवाह प्रकरण में आया है इमांत्वमिन्द्र मीढ्वः सुपुत्रां सुभगां कृणु । 'हे ऐश्वर्य युक्त पुरुष तू इस को श्रेष्ठ पुत्र और सौभाग्य युक्त कर !' तब इन्द्र जीवात्मा का ही नाम है क्यों कि जिस प्रकार सारे संसार में व्यापक होकर उस का मालिक होने से परमात्मा इन्द्र कहलाता है (यथा इन्द्र मित्रं इत्यादि वेद में और इन्द्रमेके परे प्राणमपरे ब्रह्म शाश्वतम् मनु में) इसी प्रकार निज शरीर में व्यापक होकर उस का मालिक होने से जीवात्मा भी इन्द्र कहलाता है । उस शरीर में देव कौन हैं ? ज्ञान का प्रकाश करने से मनुष्यों को देव कहते हैं ; मनुष्य की बनावट में ज्ञान का प्रकाश करने से 'चक्षुर्ज्ञानेन्द्रिय' को देव कहते हैं । प्रत्येक ज्ञानेन्द्रिय का एक एक विषय है—आंख का रूप, कान का शब्द नासिका का गंध, जिह्वा का रस, और त्वचा का स्पर्श—यदि कोई इन्द्रिय अपने विषय के अन्दर फंस जाय तो जीवात्मा के लिए उलटी हानि कारक होती है, अंधकार में फंसाने वाली होती है । प्रकाश अन्दर है, क्यों कि परमात्मा का सब से उत्तम मन्दिर यह शरीर (उपनिषद् में कहा भी है—इदं आत्मा शरीरम् वृहदारण्यक) जीवात्मा ही है । तब अन्दर प्रकाश है क्यों कि वहां चेतन जीवात्मा प्रकाश स्वरूप के सामने है परन्तु बाहर प्रकृति है, और वह अंधकारमय है । जो इन्द्रिय विषय में फंस जाती है वह मन को बाहर खींचलेती है क्यों कि इन्द्रिय मन पूर्वक ही काम करती है और मन एक समय में एक काम ही करता है । उसका लक्षण सब ही यह है युगपज्ज्ञानानुत्पत्तिर्मनसोलिङ्गम्—जब इन्द्रिय ने मन को बाहर खींचा तो उस ने जीवात्मा को बहिर्मुख कर दिया और बाहर अन्धकार ही अन्धकार है । अन्दर की आंखें बन्द हुई और प्रकाश के अन्दर निवास करते हुए भी अन्धेरा ही अन्धेरा छागया । यह अन्धेरा कब दूर हो ? अन्दर के पट खुलें जब बाहर के पट देंय । बाहर के पट कैसे बन्द हों ? जब अन्दर वाला ब्रह्मचर्य्य का अभ्यास कर के पूर्ण ब्रह्मचारी हो । मन वश में करे और उस के द्वारा इन्द्रियों को अपने आज्ञा पालक सेवक बना ले । अपूज्य जहां पूजे जायं, अचेतन जहां चेतन के पथ दर्शक बनें वहां कल्याण कहां रह सकता है । मालिक जहां दासों के वश में हो वहां मालिक और दास दोनों ही दुख पाते हैं । दासों का भी कल्याण इसी में है कि उन की बागडोर मालिक के हाथ में हो । इन्द्रियों का भी कल्याण इसी में है कि वे जीवात्मा के वशीभूत होकर रहें ।

यह कैसे हो सक्ता है ? इस का भी एक मात्र साधन ब्रह्मचर्य्य ही है । जिस जीवात्मा ने साधनों द्वारा अपने आप को पुष्ट कर लिया है उस की इन्द्रियां ही उस के वश में होजाती है जैसे रथ के घोड़े वीर्यवान् सारथी के वश में होते हैं ।

मौत के भय से बढ़ कर और कोई भय नहीं । यही भय मनुष्य को डांवाडोल कर के शोक सागर में डुबाए रहता है । परन्तु मौत है क्या ? जिस से इतना भयभीत जीवात्मा रहता है । मौत वियोग का नाम है । जिस के संयोग का आदि है उस का वियोग भी अवश्य होगा और पुनः संयोग भी हो सक्ता है । जब यह ज्ञान होजाय तो मौत भयावनी नहीं रहती । परन्तु इस ज्ञान का साधन क्या है ? निस्सन्देह इस का साधन ब्रह्मचर्य्य ही है । जीवात्मा को इन्द्र कब कहसक्ते हैं ? जब वह ऐश्वर्यवान् हो जावे । परन्तु ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए ब्रह्मचर्य्य रूपी संयम की आवश्यकता है । परमात्मा का बल ही इस में है कि वह शक्ति रूप अनादि ब्रह्मचारी है । तब उस का पुजारी जीवात्मा भी अपनी इन्द्रियों का सच्चा स्वामी ब्रह्मचर्य्य के तप से ही हो सक्ता है और तब तपस्वी रूप के सहवास में वह मौत को जीत लेता है । ओ३म् शान्तिः

श्रद्धानन्द संन्यासी

—:o:—

श्रद्धा

रक्षाबन्धन का सन्देश

अबलाओं की पुकार

माता का पुत्र पर जो उपकार है उस की संसार में सीमा नहीं। यही कारण है कि हर समय और हर देश में मातृ शक्ति का स्थान अन्य शक्तियों ऊंचा समझा जाता है। जहां ऐसा नहीं है वहां सभ्यता और मनुष्यता का अभाव समझा जाता है।

जब वह मातृ शक्ति ऊंचे स्थान पर रहती है तो वह श्रद्धा और भक्ति की अधिकारिणी होती है और जब वह बराबरी पर आती है तो बहन के रूप में भाई पर प्रेम और रक्षा के अन्य साधारण अधिकार रखती है। एक सुशिक्षित सभ्य देश में देश की मातायें पूजी जाती हैं, बहिनें प्रेम और रक्षा की अधिकारिणी समझी जाती है और पुत्रियां भावी मातायें और भावी बहिनें होने के कारण उस चिन्ता और सावधानता से शिक्षण पाती हैं, जो बालकों को भी नसीब नहीं होती। यह एक सभ्य और उन्नत जाति के चिन्ह हैं।

भारत के स्वतन्त्र सुन्दर प्राचीन काल में माताओं बहिनों और पुत्रियों का यथायोग्य पूजन रक्षण और शिक्षण होता था। यही कारण था कि भारत की महिलायें प्रत्युत्तर में पुरुषों को आशीर्वाद देती थीं, उन्हें नाम की अधिकारिणी बनाती थीं, उन्हें उनकी जन्मघुट्टी के साथ वीरता और स्वाधीनता का अमृत पिलाती थीं। उन्हीं पूजा पाई हुई माताओं का आशीर्वाद था, जिस से भारत वासियों में आत्म सन्मान था। पाण्डव वीर थे, पर यह न भूलना चाहिये कि उन्हें अपना 'पाण्डव' यह उपनाम उतना प्यारा न था, जितना प्यारा 'कौन्तेय' था, राम का सब से प्यारा नाम 'कौशल्या नन्दन' है। वे वीर माता के नाम से नाम कमाने अपमान न समझते थे—उसे अधिक अच्छा समझते थे, और यही कारण था उन पर माताओं का आशीर्वाद फलता था।

राजपूतों में स्त्री जाति की रक्षा करना आवश्यक धर्म समझा जाता था। रक्षाबन्धन उसका एक अधूरा शेष है। यह दिन बहिन और भाई देश की अबलाओं और वीर पुरुषों के परस्पर रक्षा रक्षक सम्बन्ध को दृढ़ करने का दिन है। जब भारत में स्वाधीनता आत्म सन्मान और यश का कुछ भी मूल्य समझा जाता था, तब देश के नवयुवक अपनी देश बहिनों की मान मर्यादा की रक्षा के लिये प्राणों की बलि देने में अपना अहोभाग्य समझते थे।

परन्तु आज क्या दशा है? पाठक यह समझ कर विस्मित न हों कि हम अब स्त्री शिक्षा और विधवा विवाह का रोना लेकर बैठेंगे। यह रोना रोते २ आधी सदी बीत गई—और अब उसका असर देश के सभी विचारशीलों पर है। हम तो आज अपने पाठकों केवल यह अनुभव कराना चाहते हैं कि स्त्री जाति के प्रति भारत वासियों के जो वर्त्तमान भाव हैं, वह कितने हीन और तुच्छ हैं। यह याद रखना चाहिए कि जो जाति माताओं को इतना हीन और तुच्छ समझती है, वह दासता की ही अधिकारिणी है। हमारे प्रत्येक व्यवहार में हमारे शहरों और गांव के प्रत्येक कोने में हमारे असभ्य और सभ्य नागरिकों के मुंह में दिन रात माताओं और बहिनों का नाम लेकर गालियां निकलती हैं। लड़ाई आपस की हो गाली और बे इज्ज़ती मां और बहिन के लिए। यदि किसी दूसरे को बदनाम करना है तो उसका सब से सहल उपाय उसकी बहिन या लड़की को बदनाम करना समझा जाता है। सामाजिक स्थिति में स्त्रियों को अछूतों से बढ़ कर गिना जाता है। हमारी सभा सोसाइटियों के योग्य उन्हें नहीं समझा जाता।

स्त्री जाति पर शत्रु का आक्रमण एक ऐसी घटना हुआ करती थी, कि उस पर हमारे वीर पूर्व पुरुषों के ही नहीं, साधारण लोगों के भी खून उबल पड़ते थे। राम ने रावण को मारा अपनी स्त्री की रक्षा लिए। पाण्डवों ने कुरुकुल का संहार किया—द्रौपदी के अपमान का बदला लेने के लिए। राजपूतों में कितने युद्ध केवल महिलाओं की मानरक्षा के लिये हुए और फिर महिलायें भी अपनी निजू बहिन या बेटी नहीं—अपितु जाति की। आज हम लोग अपनी माताओं और बहिनों के लिये गन्दी से गन्दी गालियां सुनते हैं और चुप रहते हैं। विदेशी लेखक अपने समाचार पत्रों और ग्रन्थों में हमारी स्त्री जाति के लिये निरादर सूचक शब्द लिखते हैं और हम उन्हें पढ़ कर चुप रहते हैं। इतना ही नहीं, पिछले साल की मार्शलला की घटनाओं को याद कीजिये। एक विदेशी अफसर आता है और भारत पुत्रों और माताओं को गांव से बाहिर बलात्कार से बुलाता है, उनका पर्दा अपनी छड़ी से उठाता है, उन पर थूकता है, उन्हें गन्दी गालियां देता है, और भारतवासी हैं, जो इस पर प्रस्ताव पास करते हैं। क्या किसी जीवित जाति में स्त्रियों पर ऐसा अत्याचार सहा जा सकता था? क्या किसी शानदार देश में ऐसा अपमान करने वाला व्यक्ति एक मिनट भी रह सकता? हम पूछते हैं कि क्या राम के समय के क्षत्रिय, क्या भीम और अर्जुन, क्या हम्मीर और सांगा के समय के राजपूत, और क्या शिवाजी के मराठे ऐसे जातीय अपमान को क्षण भर भी सहते? क्या भारत की भूमि ऐसे तिरस्कार के पीछे भी शान्त रहती? कभी नहीं, उस में वह भूडोल आता जिस में शासकों का गर्व और पापी का पाप चकना चूर हो जाता। पर हाय! वह आत्म सम्मान का भाव इस अभागे देश में बाकी नहीं रहा। माताओं और बहिनओं के लिए वह अतुल भक्ति और प्रेम का भाव अब भारत वासियों में नहीं रहा। रक्षा बन्धन उन्हीं भावों चिन्ह था। आज भी वह कुछ सन्देश रखता है। आज भी वह अबला की पुकार देश वासियों के कानों में डाल सकता है—पर यदि कोई सुनने वाला हो। जिनके कान हैं वह रक्षा बन्धन के सन्देश को और भारत की अबलाओं की पुकार को सुन सकते हैं। यदि वह भी नहीं सुन सकते तो फिर हे देशवासियो! अपने भविष्य में निराश हो जाओ। तुम्हारे जीने से न कोई भला है और न उसकी कोई आशा है। जिस जाति के पुरुष अपनी माताओं बहिनों और पुत्रियों के मान की रक्षा नहीं कर सकते, वह जाति इस भूतल से धुल जाने के ही योग्य है।

हमारी कलकत्ता की चिट्ठी

कलकत्ते में गुरुकुल-डेपुटेशन का कार्य्य

(निजू-संवाददाता द्वारा प्राप्त)

१६ अगस्त को हम सब गुरुकुल से चले-भागीरथी की शीतल धार में तमेड़ों की सैर का आनन्द अनुभव करते हुवे १२ बजे गुरुकुल मायापुर बाग में पहुंचे। वहां भोजनादि कर सांयकाल की सात बजे की ट्रेन से कलकत्ते के लिये प्रस्थित हुवे। १७ अगस्त को २ बजे बनारस पहुंचे। वहां स्टेशन पर बनारस के प्रसिद्ध प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने श्री स्वामी जी का बड़े समारोह से स्वागत किया। सायंकाल को ७ बजे श्री गौरीशङ्कर बारएटला जी के सभापतित्व में टाउन हाल के खुले मैदान में सभा हुई। इस सभा में श्री स्वामी जी ने धर्म और राजनीति में अभेद विषय पर प्रभावशाली व्याख्यान दिया व्याख्यान का सार इस प्रकार से है—

राज्य की आवश्यकता तभी होती है जब कि देश में अव्यवस्था हो। यदि मनुष्य अच्छे हों तो सरकार की कोई ज़रूरत नहीं है। भारतीयों को यूरोप का अनुकरण कर राजनीति को धर्म से पृथक् न करना चाहिये। यदि धर्म को राजनीति से अलग किया जावेगा तो भारत का कल्याण न होगा। यूरोप और भारत में बड़ा भेद है। वर्तमान समय में धर्म को न छोड़ते हुवे आत्मरक्षा के लिये निर्भय होकर बायकाट का आन्दोलन चलाना चाहिये यथासम्भव सब देशों का बायकाट करना चाहिये। २। पञ्चायती अदालतों की स्थापना करनी चाहिये। ३। हमें शर्तवाला असहयोग न करना चाहिये अपितु बिना शर्तों के जातीयशिक्षा के विषय में असहयोग करना चाहिये। वर्तमान शिक्षा ने हमारे नवयुवकों के दिमागों को दास बना दिया है। इसी दासता से हटाने के लिये शिक्षा विषय में असहयोग का आश्रय लेकर ही गुरुकुल की स्थापना की गई थी। इन उपायों द्वारा हमें अपने आप को उठना चाहिये। अगर आप इन के ज़रिये दोज़ख़ में भी पहुंच जावें तो भी कल्याण नहीं। देश की उन्नति के लिये हम सब को मिल कर ही रास्ता निकालना चाहिये। किसी को जिद्द न करनी चाहिये। अन्त में परमात्मा से प्रार्थना है कि वे हमें शक्ति दें जिससे हम धर्ममार्ग को कभी न छोड़ें।"

तदनन्तर शिवप्रसाद जी गुप्त ने कलकत्ता कांग्रेस में जाने के विषय में व्याख्यान देते हुए लोगों के सम्मुख असहयोग के अभिप्राय को स्पष्ट किया—और सभा समाप्त हुई।

१८ अगस्त को प्रातः काल प्रथमतः श्री रायसाहब ज्वालाप्रसाद जी तथा शिवप्रसाद जी के साथ बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय को देखा। विश्वविद्यालय को देख कर यही विचार उठता था कि इतना बड़ा स्वदेशी विश्वविद्यालय भी सरकारी छाप से मुक्त नहीं है। इस के अनन्तर १० बजे श्री स्वामी जी का सेन्ट्रल हिन्दू कालिज में ब्रह्मचर्य विषय पर एक उपयोगी और प्रभावशाली व्याख्यान दिया। इस का सार इस प्रकार से है। "प्राचीन शिक्षा और हमारा वैदिक धर्म शान्ति प्राप्त करने के लिये तथा उत्तम जीवन व्यतीत करने के लिये एक वर्णाश्रम धर्मरूपी साधन को बताता है। इसी में सारा धर्म सन्निहित है। इस का मूल ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचर्य का क्या अभिप्राय है इस के लिये बहुत दूर जाने की ज़रूरत नहीं है। यदि ब्रह्मचर्य शब्द की शब्दार्थ मीमांसा की जाय तो सब अर्थ स्पष्ट हो जाता है। व्याख्यान में ब्रह्मचर्य को स्थिर तथा सिद्ध करने के लिये साधन बताते हुवे तप सत्य और नियमपूर्वक जीवन बिताना तीन मुख्य साधन बताये।" तदनन्तर सभा समाप्त हुई। इसी दिन २½ बजे की ट्रेन से कलकत्ता के लिये चल पड़े। १६ को प्रातः काल कलकत्ता पहुंचे। प्रथम दो दिन तक तो आरामादि कर २१—२५ अगस्त तक आर्यसमाज मन्दिर में श्री स्वामी जी ने नियमपूर्वक वेद और उपनिषदों की कथा की। २२ अगस्त रविवार को प्रातः काल आर्यसमाज मन्दिर में साप्ताहिक अधिवेशन में स्वामी जी का "देव और असुर" विषय पर व्याख्यान हुये। इसी दिन मध्याह्नोत्तर हावड़ा में हाल ही में स्थापित आर्यसमाज की ओर से श्री पं० देवेश्वर जी सिद्धान्तालंकार का हिन्दी भाषा में प्राचीन ऋषियों का सन्देश विषय पर प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। व्याख्यान का सार इस प्रकार से है।

'जिस प्रकार साधारणतया हम देखते हैं कि ट्रेन को चलाने के लिये लाइन बनाई जाती है उसी प्रकार हमारे प्राचीन ऋषियों ने मनुष्य समाज के हित के लिये वर्णाश्रम धर्म की स्थापना की थी। आज यदि पुनः अपनी उन्नति करनी है तो हमें उन प्राचीन ऋषियों द्वारा निर्दिष्ट वर्णाश्रम व्यवस्था का पुनः अवलम्बन करना चाहिये।" २५ अगस्त को कालेज स्क्वेयर में ब्र० धर्मदेव जी का अंगरेज़ी में The Gurukul system and Education विषय पर व्याख्यान हुआ। व्याख्यान का सार यह है।

"वर्तमान सरकारी शिक्षण का उद्देश्य हमें शिक्षित करना नहीं था अपितु केवल मात्र अपने काम के लिये क्लार्क या नौकर बनाना है। सरकारी शिक्षा ने हमारी प्राचीन सभ्यता का नाश कर हमारे दिमागों को दास बनादिया है। यदि आप देश के सच्चे भक्त और प्राचीन सभ्यता के रक्षक करना चाहते हैं तो आप को उन प्राचीन आदर्शों को लेकर स्थापित किये गये जातीय विश्वविद्यालयों की सहायता कर उन्हें अपनाना चाहिये।"

तदनन्तर वहीं स्थापना पर ब्र० मोनवीन का संस्कृत में "दयानन्दस्य माहात्म्यम्" विषय पर व्याख्यान हुआ। व्याख्याता महोदय ने १९ वीं सदी की संसार की भयंकर स्थिति को दिखा कर स्वामी दयानन्द की आवश्यकता को दिखाया। स्वामी दयानन्द तथा अन्य सुधारकों का तुलनात्मक विचार कर दिखाया कि दयानन्द सार्वभौम भारतीय सुधारक था पर अन्यों के क्षेत्र परिमित थे। उसी दिन रात को आर्यसमाज में श्री स्वामी जी का "जातीय शिक्षा" विषय पर व्याख्यान हुआ।

व्याख्यान का सार निम्नलिखित है।

"शिक्षा बहुत महत्व का विषय है। जिस समय योरोप में युद्ध चलरहा था उस कठिन समय में भी इंगलैण्ड निवा-

सी हैल्डेन की अध्यक्षता में शिक्षा सम्बन्धी समाचारों के हल करने में लगे हुवे थे। हमारे देश में भी इस विषयक आन्दोलन चल रहा है। "जाति की शिक्षा जाति के हाथ में देनी चाहिये" इस सार्वभौम सिद्धान्त के अनुसार हम लोगों को जातीय शिक्षा की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। जातीय शिक्षा पर विचार करने से पूर्व अन्तर्जातीय शिक्षा पर विचार करना चाहिये। प्राचीन शास्त्रों में जो शिक्षा की विधि दी हुई है उस की ओर हम ध्यान नहीं देते। Education या शिक्षा का अर्थ मनुष्य को सर्वाङ्ग पूर्ण बनाना है। अन्तर्जातीय शिक्षा का प्रथम सिद्धान्त यह है कि शिक्षा का आरम्भ गर्भाधान संस्कार के समय से आरम्भ होना चाहिये। हमारे यहां के गर्भाधानादि संस्कार इसी व्यापक सिद्धान्त के पोषक हैं। आज बड़े २ पाश्चात्य विचारक भी इसी बात को स्वीकार कर रहे हैं। वर्तमान शिक्षाप्रणाली ने उपनयन संस्कार को बिलकुल उड़ा दिया है। जातीय शिक्षा का दूसरा अंग शिष्य और शिक्षकों का पितापुत्र भाव से एकत्रित होना है। हमारे देश में बिना पिता पुत्र के नाते के शिक्षा का पूर्ण विकास नहीं होता है। यह हमारा प्राचीन रिवाज है। आज भी मौलवी और पण्डितों के यहां इस भाव की झलक है। लोग कहते हैं कि ये प्रथा विद्यार्थियों में गुलामी के भाव पैदा करती है पर उन्हें ध्यान में रखना चाहिये कि यह सम्पूर्ण प्रथा श्रद्धा के सिद्धान्त पर आश्रित हो कर चल रहा है। जब तक शिष्य की गुरु में श्रद्धा या भक्ति नहीं है तब तक वास्तविक विद्यातत्त्व नहीं प्राप्त किया जा सकता। तृतीय जब तक शिष्य गुरु के पास रहे तब तक उसे घर से पृथक् रखना चाहिये। अन्यथा वह भी पारिवारिक शोक मोह के बंधनों में फंस जावेगा और एकाग्र चित्त से विद्या को न प्राप्त कर सकेगा। सब देशों और जातियों को इन अन्तर्जातीय सिद्धान्तों को स्वीकार करना चाहिए। जातीय शिक्षा के विषय में निम्नलिखित बातों पर ध्यान रखना चाहिये।

१. शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होना चाहिये। असली भाव इसी के द्वारा प्रकट किये जा सकते हैं। विदेशी लोग भारतीयों के अंग्रेजी भाषा द्वारा पढ़ाये जाने पर आश्चर्य प्रकट करते हैं पर शोक से देखते हैं कि आज हिन्दू विश्वविद्यालय तथा अन्य जातीय विश्वविद्यालयों में भी इस मौलिक सिद्धान्त की अवहेलना की गयी है। मातृभाषा या हिन्दी द्वारा शिक्षा का देना कोई असम्भव बात नहीं है। जो लोग इसे असम्भव समझते थे उन्हें भी गुरुकुल के पाठ प्रणालि को देख कर अपनी सम्मति बदलनी पड़ी है। लार्ड-हार्डिङ्ग तथा वायसराय चैम्सफोर्ड भी इसके महत्त्व को समझते हैं। वे इसको क्रिया रूप में करने को भी तय्यार थे पर उनका कहना है कि आपके राजनैतिक नेता ही इसके विरोधक हैं। वे कहते हैं कि सरकार हमें अंग्रेजी से वञ्चित कर आज़ादी के भावों से दूर रखना चाहती है। वास्तविक बात तो यह है कि ये लोग इस बात से डरते हैं कि यदि आज कौन्सिलों में मातृ भाषा का प्रचार होगा तो लोग हमारी अंग्रेजी लियाकत को न पूछेंगे। जैसा कि बंगाल में स्वदेशी आन्दोलन के समय में हुआ था। लोग विपिन बाबू की बंगला को खूब ध्यान से सुनते थे पर "Crowned King of Bengal" सुरेन्द्रनाथ बनर्जी को कौन पूछता था। कारण यही था कि उनकी oratory अंग्रेजी में हो चलती थी oratory में क्या धरा है। भाषा तो निर्जीव है यदि दिल में उत्साह है तो स्वयं भाषा में भी जोर आ जायेगा।

२. बुद्धि को दूसरों के आधीन नहीं बनाना चाहिये। पढ़ाई स्वदेशी दृष्टि से होनी चाहिये। अंग्रेजों द्वारा लिखे हुये पक्षपात पूर्ण भारतीय इतिहास को पढ़ कर देश भक्ति का भाव कैसे उत्पन्न हो सकता है।

३. हमारी शिक्षा सादी थी। "सादा रहना और ऊंचा विचारना।" का सिद्धान्त हमारी जातीय शिक्षा का मूल मन्त्र था। अब भी हमें उसी पर ध्यान देना चाहिये। अन्त "आब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम्" मन्त्र की व्याख्या कर वैदिक राष्ट्र का आदर्श बता कर उसके लिये प्राचीन ब्रह्मचर्य प्रणाली को ही साधन बतलाया। जातीय शिक्षणालयों के संचालकों को अपने चार्टर लौटा देने चाहिये। और स्वयं अपने निरीक्षण में अपने पुत्रों को शिक्षा देनी चाहिये। श्री महात्मा गांधी जी के शिक्षा सम्बन्धी असहयोग को सफल करने का भी यही एक उपाय है। इस से विद्यार्थियों के जीवन भी खराब न होंगे।"

पाठकगण! हमने आपके सामने कलकत्ता में जो कार्य हुआ उसका एक ओर का ही वर्णन किया है। आजकल यहां व्याख्यानों का बड़ा जोर है। आज इस पार्क में विपिन बाबू का व्याख्यान है तो दूसरे में बाबू ललित मोहन घोष का। इन सब का विस्तृत हाल लिखना मुश्किल है। पत्र बहुत लम्बा हो गया है अतः अब यहीं समाप्त करता हूं। अगले पत्र में आप सज्जनों के विनोदार्थ कलकत्ता की विलायती हलचल पर कुछ लिखूंगा—तथापि यहां की ऋतु आदि के विषय में यही कथनीय है कि यहां गर्मी भी बहुत है और वर्षा भी हर रोज़ पड़ती है। लोग कांग्रेस के लिये बड़ी प्रतीक्षा और उत्सुकता से आ रहे हैं। इस उत्सुकता से मैं भी खाली नहीं अतः अब आपसे विदाई ही लेता हूं।

(पृ० ७ का शेष)

की जन्म घुट्टी है जिस के कारण उनके अन्दर से आत्म सम्मान आत्म रक्षा और आत्म गौरव के उच्च और पवित्र भाव सर्वदा नष्ट हो गये हैं। पुरुष यदि उन्हें अपने स्वेच्छाचार के नीचे पद दलित करता है तो वे भी अपने आपको पतित समझती हैं। पुरुष यदि उन्हें जूती समझता है तो वे भी अपने आपको जूती की गद्दी या खुर ही समझती हैं। उनकी हिम्मत नहीं है कि वे सिर उठा कर अपने आत्म सम्मान और गौरव को रख सकें। यह इसी विषैले वायुमण्डल का प्रभाव है कि हमारी मातायें प्रायः डरपोक होती हैं और अपने बच्चों को भी डरपोक बना देती हैं।

× × ×

भारत की सम्पूर्ण महिला गण की प्रतिनिधि स्वरूप ए बहिनो! आज इस शुभ मुहूर्त में, जब तुम अपने भाइयों के कण्ठ पर, हार्दिक प्रेम और स्नेह के साथ, यह "राखड़ी" बांध रही हो तो उसी समय, नहीं २ उसी क्षण, अपने दुपट्टे में, अपने मन और आत्मा में दृढ़ प्रतिज्ञा की एक गांठ देलो, उसी मुहूर्त में, ईश्वर को साक्षी करके, एक प्रण करलो—किसका? इस बात का कि तुम कभी अपने को पराश्रित और पराधीन नहीं समझोगी, कि तुम आत्म-रक्षा और आत्म-सम्मान की प्राणपन से रक्षा करोगी! देखियो! अपने भाई के हाथ में इस स्नेह बन्धन को बांधते समय भारत की सम्पूर्ण रमणी-मण्डल की ओर से उसे कहदो कि आज से तुमने भी अपने जीवन में, अपने पवित्र हृदय में "आत्म रक्षा" वा "आत्म सम्मान" की एक अटूट गांठ देली है। बहिनो! बुद्धिमान लोग तुम्हारी इस गांठ का अवश्य स्वागत करेंगे।

विचार तरंग

युरोप का युद्ध तथा भारतीय दुष्काल

१

एक दिन शर्मन् पुस्तक हाथ में लिए अपने कमरे में बैठा था कि एक दम उस का ध्यान सामने दीवार पर आकर्षित होगया। ऐसा दिखाई दिया कि एक गहरी काली छाया सी धीरे २ दीवार पर चढ़ रही है। कौतूहल वश उस के पास जाकर देखने से मालूम हुआ कि कीड़ियों का एक बड़ा भारी समूह नीचे छेदों से निकल पड़ा है और इन निकली हुई असंख्या कीड़ियों से हमारे देखते ही देखते दीवार ऐसी ढक गई कि दूर से यही ज्ञात होता था कि वहां पर तारकोल पुती हुई है। इतनी अधिक संख्या में कीड़ियां शर्मन् ने पहिले कभी न देखी थीं और वह भी अन्य दर्शकों के समान इन के ऐसे वृहत् असाधारण समुदाय को देखता हुआ आश्चर्य में खड़ा था।

२

क्या आप जानते हैं कि इन्हें देख कर शर्मन् के मन में क्या विचार आया? भारतीय मन (जो कि पूर्वज ऋषियों के उच्च आत्मिक विचारों के पवित्र कणों से अवश्य कुछ न कुछ सम्बन्ध रखता है) कोई तुच्छ सांसारिक बात न सोचने लगा था। शर्मन् के मन ने किसी पाश्चात्य मन की तरह इन कीड़ियों को देख कर यह नहीं सोचा कि इन से formic Acid कैसे निकाला जाय किन्तु उसने एक आध्यात्मिक प्रश्न उठाया। उसने पूछा कि क्या इन सभी कीड़ियों में आत्मा है'। उत्तर तुरंत मिल गया। तो प्रश्न आगे बढ़ा 'यदि इन में से एक २ में आत्मा है तो इन अगणित कीड़ी देहों के लिए इतने आत्मा एक दम कहां से आए होंगे'?

३

इस प्रश्न को हल करने के लिए भी क्षण भर से अधिक समय की आवश्यकता न हुई। तत्क्षण ही (बिजली से भी अधिक) वेगवान् मन फ्रांस, जर्मनी, रूस आदि के युद्धक्षेत्रों में जा पहुंचा और वहां रुधिरांकित भूमि पर तड़फते पड़े हुए सहस्रों प्राणियों के मरने का दृश्य दिखाने लगा। इस (काले) कीड़ी देहों में आने के लिए क्या, आज भी आत्माओं की कोई कमी हो सकती है?। नहीं, आज तो जगन्नियन्ता के पास शरीर हीन आत्मायें बहुतायत में उपलब्ध हैं—विद्यमान हैं। उसे (जगन्नियन्ता को) ये यूरोप के क्षेत्र आज उसी तरह आत्माओं की उपलब्धि (Supply) करा रहे हैं जैसे कि भारत के खेत इंगलैण्ड को अपनी उपजों की उपलब्धि कच्चे माल (Raw material) के रूप में सदैव और सब दशाओं में कराया करते हैं। ये सामने हिलती जुलती हुई कीड़ियां इस प्रकार से वह तय्यार किया हुआ माल या Finished Products हैं जो कि विश्वपति के विशाल कारखाने (Factory) में युरोप से छीनी हुई आत्माओं के कच्चे माल से तय्यार की गई हैं। क्या आज शर्मन् अनुमान करसकता है कि वर्तमान योरुप आज इन आत्माओं रूपी कच्चे माल के चले जाने से वही दुःख, और दारिद्र्य अनुभव कर रहा होगा जो कि भारत—अभागा भूखा भारत–गेहूं रुई आदि अपनी प्राणाधार वस्तुओं (कच्चे माल!) से वञ्चित होकर अनुभव करता है।

४

अच्छा, वह इसे अनुभव करता हो या न करता हो, इसे जाने दो। किन्तु क्या यह सच है कि ब्रह्माण्ड में आत्माओं के शरीर परिवर्तन करने वाला विभाग आजकल जितना कार्य व्यग्र है उतना वह पहले सृष्टि के आदि से कभी नहीं रहा! अथवा क्या योरोप में आज सचमुच बहुत ही भारी नर संहार हो रहा है! अथवा क्या केवल दो वर्षों में १ करोड़ २० लाख (१२ मिलियन) मनुष्यों का मर जाना एक ऐसी घटना है जोकि मनुष्य जाति के इतिहास में पहिले कभी नहीं हुई?

५

इस प्रकार शर्मन् की तरंग में भंग आया। उस के अवयव २ में व्याकुलता अनुभव होने लगी। उसके मन ने अपनी गति की दिशा बदल ली। मन अब एक उसे भयंकर स्थान की तरफ भयाकुल राह से ले जाने लगा। वह नया दृश्य भी जहां कि उसका मन अब कांपता हुआ पहुंचता है एक भयावह युद्ध क्षेत्र का ही दृश्य है। किन्तु यहां एक बात जान लेनी चाहिए-कि यह घोर दृश्य सब लोगों के दृष्टिगोचर नहीं है। यह चतुराई से एक सुनहले पर्दे से ढका हुआ है, अतः लोग बिलकुल इसके समीप से गुजर जाते हैं किन्तु इसे नहीं देखते, इसकी आशंका तक नहीं करते।

मेरे पाठक! मेरे प्रिय पाठक! शर्मन् समझता है कि यदि चाहो तो तुम्हारा मन सहज से इस मनोहर आवरण के पार पहुंच सकता है, और उस परिच्छन्न वास्तविकता को देखसकता है—उस युद्ध के भीषण दृश्य को देख सकता है–जिसे इस समय शर्मन् की आंखे देख रही हैं।

६

मेरी मानसिक चक्षुओं के आगे इस समय उस युद्ध का करुणा जनक चित्र जो कि भारतवासियों ने पिछली दो शताब्दियों में एक बड़े ही असाधारण शत्रु के साथ लड़ा था–और अब भी वह लड़ाई थोड़ी वा बहुत चला ही करती है न तो भारतीय ही मर कर सब खतम होते हैं और नाहीं वह शत्रु समूल नष्ट होता है।

७

सामने देखो! कैसा लड़ाई का करुणा दृश्य है। क्या यह सामने दिखाई देने वाला निर्दय युद्ध दिल दहलाने वाला लोम हर्षण नहीं है? क्या इस पत्थर पसीजक दृश्य को देख कर तुम्हारा कलेजा नहीं फटता? क्या वर्तमान् योरोप का युद्ध इस से भी अधिक भीषण है, इस से भी अधिक घोर है इस से भी अधिक मर्मभेदक है। (क्रमशः)

—शर्मन्

---

* पाठक यह ध्यान रक्खे कि यह लेख युद्ध के दूसरे वर्ष में लिखा गया था।

"रक्षा" की गांठ दे लो !!

(लेखक–श्रीयुत सत्यभिक्षु)

'श्रद्धा' का यह अंक जब पाठकों की सेवा में पहुंचेगा तब तक 'रक्षा बन्धन का पवित्र त्योहार बीत चुका होगा; तब तक उनके पहुंचों में 'राखड़ी' पहुंच चुकी होगी। पर इससे क्या ? जिस गांठ को बंधवाना चाहता हूं, जिस तरह की 'राखड़ी' को मैं आवश्यक समझता हूं वह तब भी थी और अब भी है।

इस त्योहार की आवश्यकता, विशेषता, और महत्व पर मुझे कुछ विशेष नहीं कहना है। इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि इस त्योहार की तह में हमारे पूर्वजों की अपूर्व दूरदर्शिता, और गम्भीर बुद्धि, काम कर रही है। इतिहास इस विषय में हमें यहीं तक लेजाता है, कि राजपूत-काल में जब वीर माता का सच्चा पुत्र युद्ध में जाता था तब उस की बहिन, अपने कर कमलों से, उसकी कलाई पर कुछ तागे बांधती थी। पर ये केवल बाह्य चिन्ह मात्र थे उस हार्दिक-प्रेम पाश के जो कि उन दोनों भाई-बहिनों के अन्दर विधाता ने जन्म से ही रच दिया था। परन्तु इस से भी अधिक, सम्पूर्ण स्त्री जाति की प्रतिनिधि स्वरूप हो वह प्रेम भरी, 'राखड़ी' को आगे बढ़ाये, अपने भाई के सामने जब खड़ी होती थी जब वह उस से मातृशक्ति मात्र के लिए रक्षण और पालन की आशा करती थी। उसे विश्वास था कि न केवल युद्ध में अपितु शान्ति के समय में भी, न केवल विपत्ति में किन्तु सम्पत्ति में भी भाई का वह लाल प्राणपन से मातृ शक्ति का आदर करेगा, उसकी रक्षा और पालन करेगा।

× × ×

परन्तु अब वे बातें काफूर होगईं। 'राखड़ी' अब भी बांधी जाती है, भगिनियां अब भी अपने भाइयों की कलाइयों को इस पवित्र धागे से सुशोभित करती हैं, परन्तु जहां एक ओर बांधने वालों में वह आशा नहीं, वह विश्वास नहीं और सब से बढ़ कर अपने आत्मसम्मान के लिए वह उत्कट इच्छा नहीं, वहां बांधने वालों में भी वह दृढ़ता नहीं, वह वीरता नहीं, वह पुरुषत्व और पराक्रम नहीं और सब से बढ़कर रक्षा और पालन का वह उच्च भाव नहीं जो कि उस समय के नवयुवकों में होता था।

× × × ×

परन्तु इस से क्या ? क्या अब वे भाव और वे आदर्श नहीं उत्पन्न किए जा सकते ? यह ठीक है कि समय का रुख बहुत बदल गया है और यह भी ठीक है कि हमारी अपनी अवस्था और स्थिति ने भी अब कुछ और ही रूप धारण किया हुआ है परन्तु तो भी हमारे अपने हाथों में अभी तक बहुत शक्ति है, सामर्थ्य है और बल है।

× × × ×

'राखड़ी' के महत्व और पवित्रता को नष्ट करने में सारा दोष पुरुषों का है यह बात उतनी ही अशुद्ध है जितनी कि स्त्रियों को सर्वथा दोष मुक्त समझना, न्यूनता दोनों में है परन्तु इससे महिलाओं का अपना कर्तव्य, अपना उत्तरदातृत्व और अपना दोष किसी अंश में, कम नहीं होजाता।

× × × ×

तब महिलाओं का क्या कर्त्तव्य है ? देश और काल को दृष्टि में रखते हुए किन बातों के दूर करने और किन के पालन करने की ओर उन्हें विशेष ध्यान देना चाहिए। भिन्न २ दृष्टि से प्रधानतया चार रूप में महिलायें पुरुषों के जीवन का अंग बनती हैं—वात्सल्य प्रेम के कारण माता रूप में, गार्हस्थ्य धर्म के नाते से गृहिणी रूप में, ऐश्वर्य, पराक्रम और उन्नति में सहायक होने के कारण भगिनी रूप में और सन्तान रूप में रक्षा और पालन की इच्छा रखने के अधिकार से पुत्री रूप में। इस प्रकार एक ही मातृशक्ति ने इन चार मार्गों से पुरुष के दैनिक जीवन को जहां अपने प्रभाव का केन्द्र बनाया हुआ है वहां पुरुष भी पूजन समानाधिकार, सहायक अथवा रक्षण और पालन—इन चार साधनों द्वारा अपना कर्त्तव्यपालन करता है। पुरुष अपना ये कर्त्तव्य और उत्तरदातृत्व कहां तक निभाते हैं–यह आज के मुख्य लेख में बताया जा चुका है इस लिए उस पर विशेष विचार की आवश्यकता नहीं। प्रश्न तो महिलाओं का है।

× × × ×

परन्तु यदि महिलायें भी अपने इन चार रूपों को सदा दृष्टि में रक्खें तो उनका कर्त्तव्यपथ भी स्पष्ट होजाता है। फलतः माताओं को अपनी सन्तानों के प्रति आदर्श होना चाहिए। उन्हें कोई ऐसा कार्य नहीं करना चाहिए जिस से सन्तानों पर अनुचित प्रभाव पड़े, जिस से उनके हृदयों में उन के प्रति जो श्रद्धा और पूजा का भाव है वह कम हो जावे। गृहिणी के रूप में महिलाओं को गृहस्थ धर्म का पूर्ण रूप से पालन करना चाहिए। हर घड़ी सजग रहते हुये उन्हें अपने पातिव्रत और सतीत्व की रक्षा करनी चाहिए। भगिनी रूप से उन्हें अपने भाइयों के दुःख सुख में हाथ बांटते हुए उन के जीवन ऐश्वर्य और उन्नति में पूर्ण सहायक होना चाहिए। पुत्री रूप में उन्हें अपने माता पिता की आज्ञा और रक्षा में रहना चाहिए।

\+ × × ×

परन्तु प्रश्न फिर वही है कि "गांठ" किसकी बांधी जावे ? यदि इस तह में ज़रा और जावें तो यह भी झट समझ में आजाता है। भिन्न २ दृष्टि से महिलाओं के लिए मैंने जितने कर्त्तव्य बताए हैं उन सब की तह में एकही सिद्धान्त काम कर रहा है और यह है "आत्मसम्मान" वा "आत्म रक्षा" का भाव।

× × × ×

भारतीय महिलाओं के जीवन पर जब मैं विचार करता हूं तो सब से अधिक जिस भाव वा गुण की कमी पाता हूं वह यही आत्म सम्मान वा आत्मरक्षा का भाव है। हमारी महिलाओं को माता के दूध के साथ यदि कोई बात सिखाई जाती है तो *वह यही कि वह पराश्रित हैं, पराधीन हैं*। अर्थात् बचपन में वे माता पिता के, जवानी में पति वा ससुर के और बुढ़ापे में अपने पुत्रों के। यही पराधीनता का भाव है, यही पराश्रय

(शेष पृष्ठ ५ वें के तीसरे कालम में)

गुरुकुल—समाचार

(गुरुकुल कार्यालय से प्राप्त)

डेपुटेशन

गुरुकुल का डेपुटेशन कलकत्ते में कार्य्य कर रहा है। श्री-स्वामी जी ने समाज में उपनिषदों की कथा आरम्भ की है। इस के अतिरिक्त २५ अगस्त को श्री-स्वामी जी का जातीयशिक्षा पर एक व्याख्यान आर्य्यसमाज मन्दिर में हुआ, उसका विस्तृत विवरण फिर दिया जायगा। उसी रोज़ शाम के समय कालेज स्क्वायर में ब्र० धर्मदेव का अंग्रेज़ी भाषा में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली पर और ब्र० भीमसेन का 'युग का सब से बड़ा सुधारक ऋषिदयानन्द' इस विषय पर संस्कृत भाषा में व्याख्यान हुआ। उसका भी विवरण अलग दिया जायगा। धन संग्रह का काम अभी आरम्भ नहीं हुआ है। इस समय प्रचार के कार्य को ही मुख्य रखा गया है।

अन्य कार्य

साथ २ अन्य कार्य भी हो रहे हैं, बंगाली सज्जनों में गुरुकुल शिक्षाप्रणाली के लिये रुचि बहुत बढ़ रही है। श्री स्वामी जी के पत्रों से ज्ञात होता है कि दिन भर मिलने वालों से फ़ुर्सत नहीं मिलती। यह लक्षण शुभ हैं। जिस प्रान्त में अभी तक आर्यसमाज में जड़ नहीं पकड़ी, वहां के लोगों की अभिरुचि का इधर पलटना समय का चिन्ह है, और सत्य की महिमा को सूचित करता है। अन्य सार्वजनिक कार्य भी कुछ न कुछ समय लेते रहते हैं। २४ अगस्त को अल्फ्रेड थियटर में रतौना में बनने वाले कसाईखाने पर असन्तोष प्रकट करने के लिये एक सभा हुई, उसमें स्वामी जी ने गोहत्या बन्द करने करने के सम्बन्ध में निज़ाम की आज्ञा के लिये उसका धन्यवाद किया। २१ ता० को ही वोलिंग्टन स्क्वायर में क्रियात्मक असहयोग पर मि० ललित मोहन घोष का व्याख्यान था उस में सभापति का आसन स्वामी जी ने ग्रहण किया।

यात्रा मण्डली

गुरुकुल महाविद्यालय के ब्रह्मचारियों की यात्रा मण्डली बरेली ४ दिन ठहर कर नैनीताल पहुंच गई है। बरेली में मण्डली ने पागलखाना और अन्य संस्थाओं को देखा। कुछ स्कूलों के साथ हाकी आदि के मैच की तैयारी थी, परंतु अन्त में दूसरे पक्ष ने इन्कार कर दिया। आर्यसमाज की ओर से वर्णव्यवस्था पर शास्त्रार्थ का चैलेंज दिया गया था। कई प्रश्न किये गये, ब्रह्मचारियों ने बहुत ही सन्तोष जनक उत्तर दिये। जनता पर वैदिक सिद्धान्तों की सत्यता का बड़ा असर पड़ा।

रक्षाबन्धन—श्रावणी

रक्षाबन्धन या श्रावणी का उत्सव १४ भाद्रपद को खूब उत्साह से मनाया गया। प्रातः काल सब अध्यापक और ब्रह्मचारी यज्ञशाला में एकत्रित हुए। श्रावणी की विशेष विधि बड़ी सफलता से समाप्त हुई। अन्त में पं० इन्द्र ने आचार्य के प्रतिनिधि रूप में ब्रह्मचारियों तथा अन्य उपस्थित सज्जनों के सम्मुख श्रावणी के गौरव के सम्बन्ध में कुछ विचार रखे। वक्ता ने ब्रह्मचारियों को बताया कि श्रावणी का उत्सव वस्तुतः यज्ञोपवीत और वेदारम्भ की विधियों की पुनरावृत्ति है ताकि ब्रह्मचारियों को अपने अध्यापक आचार्य और आचार्यों के आचार्य परमात्मा से जो सम्बन्ध हैं वह उन्हें स्मरण हो आवें। उन सम्बन्धों को दृढ़ और स्थिर करने का यह समय है। गृहस्थियों के लिये रक्षाबन्धन का जो महत्व है उस पर भी भाषण में कुछ प्रकाश डाला गया।

टाईप राइटर का दान

दिल्ली के म० नारायणदत्त जी ने अपना लगभग ५००) का टाइपराइटर गुरुकुल कांगड़ी को दान दिया है जिसके लिए वे हमारे हार्दिक धन्यवाद के पात्र हैं।

सरस्वती—यात्रा

(निज संवाददाता द्वारा प्राप्त)

दो महीनों का अवकाश प्रारम्भ हो गया है। महाविद्यालय विभाग के कुछ सब ब्रह्मचारी नैनीताल की ओर यात्रार्थ गये हैं। हम सब २० रातको बरेली पहुंचे। हमें डा० श्यामस्वरूप सत्यव्रत जी ने बड़े प्रेम पूर्वक ठहराया। चार दिन तक रह कर उन्हों ने पागलखाना, फ़ैक्टरी स्कूल तारपीन तैल का कारखाना और अन्य दर्शनीय स्थानों का भली प्रकार निरीक्षण किया। अन्तिम दिन रात को आर्यसमाज में वर्णव्यवस्था पर एक बड़ा मनोरञ्जक विवाद हुआ—विवाद की घोषणा शहर में भली प्रकार की गई थी—सभापति का आसन बरेली आर्यसमाज के प्रधान पं० बुद्धदेव जी ने ग्रहण किया था। विवाद कोई ३ घण्टे तक होता रहा। कई प्रकार की दलीलें दोनों ओर से पेश की गई थीं। सनातनी पण्डितों ने भी इस में भाग लिया। अन्त में श्री-सभापति जी की वक्तृता बड़ी ही ओजस्विनी, गम्भीर और कवितामयी हुई।

बरेली से १० भाद्रपद को प्रातः हम हल्द्वानी पहुंचे। वहां आर्यसमाजी भाईयों ने जो हमारा आतिथ्य किया उसके लिये हम उनके अत्यन्त आभारी हैं।

इस समय सब ब्रह्मचारी नैनीताल में हैं। वहां के सज्जनों ने हमारा प्रेम पूर्वक जो आतिथ्य और अभिनन्दन किया है—उसके लिये हम अत्यन्त कृतज्ञ हैं। इन दिनों रामगढ़ के (जो नैनीताल से १५ मील फ़ासले पर है) आर्यसमाज का जलसा है। हम सब वहां जाने की तय्यारी में हैं।

श्रद्धा के नियम

१. वार्षिक मूल्य भारत में ३॥)
विदेश में ५॥) ६ मास का २)

२. वी० पी० भेजने का नियम अब फिर कर दिया गया है। ६ मास से कम का वी० पी० नहीं भेजा जा सकता।

प्रबन्धकर्ता श्रद्धा
डाक० गुरुकुल कांगड़ी (ज़िला बिजनौर)

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिए छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० मं० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो॥"
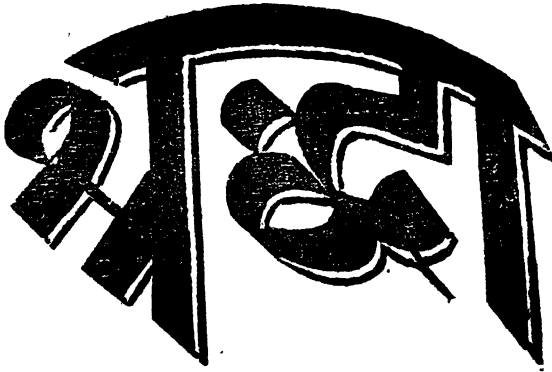
सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | २६ भाद्रपद सं० १९७७ वि० | दयानन्दाब्द ३७ | ता० १० सितम्बर सन् १९२० ई० | संख्या २१ भाग १

हृदयोद्गार

गरमियों की यादगार
(वाणी स्वतंत्र है)

(१)

कैसी कड़ी धूप है जिससे आग बरसती चारों ओर
आंधी भर भर नहीं फेंके विकट मचावे हू हू शोर।
धरती तवसे लगी गरम हो पथिक लोग सब अकुलाये
छाया में पशु बैठे बैठे हांफ रहे हैं मुंह बाये॥

२

चरागाह सब सूख गये औ लगीं लतायें मुरझाने
लोहू पीकर लगे केसरी शीतल घाटी में जाने।
व्याकुल हो मदवाले हाथी कहीं झूमते फिरते हैं
प्यासे मृग पानी के भ्रम में कहीं ढूंढते फिरते हैं।॥

३

देख ग्रीष्म की ऐसी सेना लगे विजेता भय खाने
अपने बंगले छोड़ लगे वो शिमला मंसूरी जाने।
शिमला कैसा! हाय यहां तो सड़ी झोंपड़ी नहीं नसीब
कड़ी धूप में लेटे लेटे मरते भारतपुत्र गरीब॥

४

गरमी! यद्यपि तेरी प्रभुता सारे जग ने है मानी
निस्सन्देह आज इस जग की बनी हुयी है तू रानी।
फिरभी एक चीज़ है जिस पर तेरा नहीं तनिक अधिकार
नहीं जगत में उसका कोई राजा या कोई सरकार॥

५

देख सामने इस निकुंज में यह कोयल जो गाती है
सुनकर इस की मीठी वाणी हृदयकली खिल जाती है।
कठिन धूप भी इस वाणी को गरम नहीं करसकती है
नभी सुनेगें, आंधी इसको बन्द नहीं करसकती है॥

६

तुमसे दयधाली पर कोई अत्याचार नहीं करना
इसे रोकने का ए मूरख! व्यर्थ यत्न भी मत करना।
इस पर ताला नहीं लगाना कहीं क्षणिक यौवनपर फूल,
यह स्वतन्त्र है, इसे रोकना होगी तेरी भारी भूल॥

निधिः

—:o:—

हा भारत तिलक।

बाल्य काल में उत्सुक होकर, शुभ चित्र दर्शन थे किये।
मुग्ध भाव से भक्ति मगन हो, जब पुष्प अर्पित थे किये॥ १॥
भव्य छटा से मन्त्र मुग्ध हो, चरित कमल में मग्न हुआ—
भ्रान्त भ्रमर से चञ्चल मनका, वेग जहां पर भग्न हुआ॥ २॥
निर्जीव चेतन चित्र केवल, था सहारा नाथ तब—
पर हाय वो भी छीन लीन्हा, क्या भला करता मैं तब॥ ३॥
यह क्रूर कुत्सित कर्म कर के, हर्ष अनुभव जिन किया
उन राक्षसों के सामने मैं, था पड़ा बेबस हुआ॥ ४॥
बस चाह अब थी दर्शनों की, था पड़ा चिन्तित हुआ,
भाग्य पलटे भक्त जन के, अमृत दर्शन होगया॥ ५॥
उस पुण्य दिन में भक्ति रस में, मग्न मेरा था हिया,
चरण परसन चाह बस थी, पर प्रभो यह क्या किया॥ ६॥
बलवन्त! कहां तुमहाय गये हम दीन बेबस क्या करें,
अबतो निराश हुये पड़े हैं, हा! प्राण धारें या मरें॥ ७॥

"निराश" भिक्षु,

हमारी मद्रास की चिट्ठी

(निजू संवाद दाता द्वारा)

यहां के 'नान-ब्राह्मण' शिक्षा में ब्राह्मणों से कोसों पीछे हैं। यदि ब्राह्मण १०० वर्ष तक सोये रहें और नान-ब्राह्मण, दिन रात, लगातार भागते रहें तो भी उन का ब्राह्मणों को पकड़ लेना मुश्किल दिखाई देता है। यदि पढ़े लिखों को ब्राह्मण कहा जाय तो यहां के जन्म के ब्राह्मण कर्म से भी ब्राह्मण हैं—यदि अनपढ़ों को शूद्र कहा जाय तो यहां के जन्म के शूद्र, कुछ एक को छोड़ कर, कर्म से भी शूद्र ही हैं। इसी लिये मैंने अपनी पहली चिट्ठी में कहा था कि यहां की समस्या बड़ी विकट है। वैसे तो यहां भी पकौड़े तलने वाले और रसोई-घर के आचार्य काफ़ी हैं और शायद काफ़ी से भी ज्यादह हैं, परन्तु शिक्षा की दृष्टि से ब्राह्मण और नान-ब्राह्मणों में ज़मीन आस्मान का फ़रक है। नान-ब्राह्मण अशिक्षित हैं, इतना ही नहीं, परन्तु वे जान बूझ कर अशिक्षित हैं। पढ़ने में उन की प्रवृत्ति ही नहीं। मैं अच्छी तरह समझता हूं कि इस का कारण ब्राह्मणों का नान-ब्राह्मणों को शताब्दियों तक शिक्षा देवी के मन्दिर में घुसने न देना ही है। बैंगलौर में ही एक संस्कृत-कालेज है, जिस में अध्यापकों से बात चीत करते हुए मालूम हुआ "अब्राह्मणानां प्रवेशः निषिद्धोऽस्ति"। "स्त्री शूद्रो नाधीयाताम्" की दुहाई तो यहां और हमारी तरफ़ एक सी ही है, परन्तु हां, यहां स्त्रियों को बड़ी छुट्टी मिलती जा रही है और कई बार तो वे हमारे ग्रेजुएटों से भी तेज़ गिट-पिट करती सुनाई देती हैं। नान-ब्राह्मणों का अशिक्षित होना और उन में शिक्षित होने की प्रवृत्ति का ही अभाव होना—ये दो बड़ी शोचनीय अवस्थाएं हैं। यद्यपि इन का कारण ब्राह्मण ही हैं तथापि इन अवस्थाओं की मौजूदगी से कोई इन्कार नहीं कर सकता।

यहां सरकार की तरफ़ से एक संस्था व्यायाम के लिये खोली गई है। कुछ २०० से ऊपर विद्यार्थी नित्य सायंकाल एकत्रित होते हैं परन्तु १०, १५ को छोड़ कर सब ब्राह्मण ही ब्राह्मण हैं। एक महीने से ऊपर हुआ कि विद्यार्थियों की प्रेरणा से मैंने एक हिन्दी स्कूल खोलने का विचार किया। २०० से ऊपर नाम आ गये। मैं फ़िकर में पड़ गया—इतनों का प्रबन्ध कैसे हो सकता है? दूसरे दिन मैंने सूचना भिजवा दी कि जो हिन्दी पढ़ना चाहें वे सरकारी स्कूल के हाल में जमा हो जावें। समय से पीछे आने वालों को क्लास में नहीं लिया जायगा। मैं ठीक समय पर हाल में पहुंच गया। देखा तो सभी ब्राह्मण विद्यार्थी मौजूद थे, नान-ब्राह्मणों का कहीं पता भी नहीं चला। २०० की संख्या ६० तक आ पहुंची।

अपनी इस कमज़ोरी को नान-ब्राह्मण स्वयं भी अनुभव करते हैं। इसे दूर करने के लिये इन्हों ने हाथ-पैर मारने शुरू किये हैं। शिक्षा के प्रचार के लिये भिन्न २ संस्थाएं खड़ी हो रही हैं। उनके शिक्षालय खुल रहे हैं, अखबार निकल रहे हैं और कान्फ़रेन्सें हो रही हैं। सत्यपाल राय यहां यद्यपि डा० नायर के चेले हैं और कभी २ भूलसे वैसी ही तानें छेड़ देते हैं तथापि उन के दिमाग में बहुत गर्मी नहीं। वे नान-ब्राह्मणों के वर्तमान नेता हैं और शिक्षा पर यथोचित ध्यान देने की कोशिश करते हैं। पिछली नान-ब्राह्मण कान्फ़रेन्स के अध्यक्ष की हैसीयत से जो वक्तृता आपने दी वह शुरू के २०, २५ पृष्ठों तक तो ब्राह्मणों को गालियां देने में ही खर्च की गयी है लेकिन उस के पिछले १०, १२ पृष्ठों में नान-ब्राह्मणों को भी कुछ नसीहतें दी हैं। शिक्षा का प्रचार उन में से एक है। पहली कोशिश इन लोगों में शिक्षा का प्रेम उत्पन्न करना है।

महात्मा गान्धी ने इस प्रश्न को खूब समझा है। 'लॉ कालेज' के कुछ विद्यार्थियों से बात चीत करते हुए इन्हों ने कहा, कि ब्राह्मणों को अब तक जो असाधारण अधिकार दिये गये उन से उन में ज़रा गरूरी आ गयी है। अब्राह्मणों को सुबह शाम ब्राह्मणों की पूजा तथा अक्षरों से द्वेष करने का ही पाठ पढ़ाया गया जिस से उन का आत्म-विश्वास जाता रहा। बरसों तक नान ब्राह्मण, ब्राह्मणों के पांव पकड़े आंखें मूंदे धरती पर पड़े रहे। अब वे उठने से घबराते हैं।

निस्सन्देह कभी २ नान-ब्राह्मण अपने ब्राह्मण देवता को अंगूठा भी दिखा देते हैं, परन्तु नान-ब्राह्मणों में ऐसी संख्या बहुत है जो कि ब्राह्मणों की गुलाम गिरी अपने जीवन का उद्देश्य समझती हैं। उन के अन्दर यदि किसी तरह से आत्म-विश्वास उत्पन्न किया जा सके तो किसी तरह की उन्नति की सम्भावना हो सकती है। एंग्लो-इण्डियन पत्र के सरपन कभी २ नान-ब्राह्मणों के नाम करते हैं। उन का प्रयत्न दोनों में लड़ाई कराना तथा नान-ब्राह्मणों को अपने साथ मिलाना है। परसों ही 'मद्रास-मेल' के संवाद दाता ने अपने खेल खेले हैं। उस का कथन है कि कोई भी अच्छे दिमाग का नान-ब्राह्मण असहयोग के कार्य में महात्मा गान्धी के साथ नहीं। बेचारे भोले भाले नान-ब्राह्मण बहुत बार इन चालाकों के चुगल में फंस भी जाते हैं। परन्तु उन्हें इस से बहुत बचने की ज़रूरत है। यदि ब्राह्मणों की तरफ़ से इस समय पहल हो तो काम बना बनाया है। प्रत्येक ब्राह्मण यदि वर्तमान झगड़ों को दूर करने की कोशिश में लग जाय तो 'मद्रास मेल, एण्ड को०,' के असार-गर्भित उपदेशों की जिल्द बांध कर उसे धन्यवाद पूर्वक वापिस की जा सकती है। हां कठिनता एक है। ब्राह्मण की खोपड़ी में सार्वभौम भ्रातृत्व का भाव घुस ही नहीं सकता! उस के लिये यह असम्भव है और कई बार असम्भव है। यही कारण है कि इस समय मद्रास प्रान्त दो भागों में विभक्त है। एक बड़ा हिस्सा ब्राह्मणों का और दूसरा नान-ब्राह्मणों का गर्म तथा नर्म दोनों के नेता तथा अनुयायी अधिकांश में ब्राह्मण ही हैं। और वे ही राजनीति में भाग लेते हैं अब्राह्मणों का टपड़ा-दल है। एंग्लो इण्डियन इसे गर्म करने की कोशिश कर रहे हैं लेकिन वह गर्मी और तरह की है। उस गर्मी से 'सन-स्ट्रोक' हो जाने का खतरा है। अस्तु।

यहां के ब्राह्मणों की कोशिश कुछ अंश में देश के लिये बड़ी अशुभ है। नान-ब्राह्मण यदि किसी के चुंगल में न फंस कर अपने पांव पर उठ खड़े होंगे तो देश का बड़ा कल्याण होगा। ब्राह्मणों की तरफ़ से नान-ब्राह्मणों को किसी तरह के अधिकार दिये जाने की मुझे कोई भी आशा दिखाई नहीं देती। नान-ब्राह्मणों को ही अब हिम्मत करनी होगी। यदि नान-ब्राह्मण अपने पराये का ख्याल रख कर ब्राह्मणों से लड़ेंगे और ज़बरदस्ती उन के हाथों से अपने अधिकार छीन लेंगे तब तो कृतकार्यता हो सकती है; परन्तु यदि वे अपने झगड़ों के मिटाने के लिये किसी बन्दर से आकर फैसला करवाना चाहेंगे तो 'बन्दर-बांट' की मसील के सिवाय अन्य कोई फल न होगा।

श्रद्धा

सुधार के नाम पर बिगाड़

एक नया खतरा

इस समय राउलट कमीशन की रिपोर्ट प्रकाशित हो चुकने के कारण कहा जाता है कि भारत की सरकारी शिक्षा का नया युग आरम्भ हो गया है। वह नया युग देखने में बहुत सुन्दर दिखाई देता है। भारत सरकार अब स्थान २ में यूनिवर्सिटियां बना रही है। पटना, ढाका, लखनऊ, आगरा, दिल्ली आदि शहरों को अपने २ विश्वविद्यालय मिल जायंगे। यह विश्वविद्यालय प्रायः residential होंगे। विद्यार्थियों को पढ़ना भी वहीं पड़ेगा—रहना भी वहीं। कम से कम सब शिक्षणालय एक ही स्थान पर एकत्रित हो जायंगे उन पर आंख अच्छी तरह रुकेगा। हरेक विश्वविद्यालय में विद्या और प्रकाश का एक विशेष जलवायु उत्पन्न हो जायगा। शिक्षण का सारा कारखाना विश्वविद्यालय के सञ्चालकों की दृष्टि में रहेगा।

यह रीति उत्तम क्यों नहीं—जबकि संसार के सब बड़े २ विश्वविद्यालय ऐसे ही हैं। आक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज ऐसे ही हैं। पेरिस की प्रसिद्ध यूनिवर्सिटी ऐसी ही है। भारत में जो लोग शिक्षा सुधार के लिए चिल्ला रहे हैं, वह भी सरकारी शिक्षा मे यही दोष बताते हैं कि वह बिखरी हुई है। शिक्षक लोगों का विद्यार्थियों पर निरीक्षण नहीं रह सकता।

इस प्रकार ऊपर की चर्म चक्षु से तो दिखाई देता है कि भारत सरकार ने आखिर अपनी भूल स्वीकार की है और शिक्षा के मामले को बुद्धिमत्ता से निबटाने का यत्न किया है। परन्तु जरा गहराई में जायं और उन उद्देश्यों पर विचार करें जिनसे प्रेरित होकर सरकार नई नीति का आश्रय ले रही है, और उन परिणामों पर ध्यान दें जो इस नीति के आवश्यक फल हैं तो प्रसन्नता बहुत कम हो जाती है। सरकार की नई शिक्षा नीति बिल्कुल दूसरे ही रूप में दिखाई देने लगती है और प्रबल सन्देह उत्पन्न हो जाता है कि नया शिक्षा युग कहीं पुराने शिक्षा युग से भी अधिक हानिकारक न हो।

सरकार की नई शिक्षा प्रणाली का असली उद्देश्य बिखरी हुई शिक्षा सम्बन्धी शक्तियों को एकत्र करना और एक प्रान्त के एक ही केन्द्र विश्वविद्यालय के शासन की एकत्र हुई शक्ति को बढ़ाना है। भिन्न २ स्थानों पर कालिज खुले रहते हैं उन पर सरकार पूरी दृष्टि नहीं रख सकती। उनके अध्यापकों और प्रोफेसरों को वह भली प्रकार काबू में नहीं कर सकती। इस रीति से यूनिवर्सिटियों के मुखिया, जो निःसन्देह अंग्रेज होंगे, हरेक कालिज के हरेक विद्यार्थी और अध्यापक पर गहरी नज़र रख सकेंगे। यह तो केन्द्री करण है। दूसरी कठिनाई सरकार के सामने यह है कि कलकत्ते और बम्बई के विश्वविद्यालय कभी २ सरकार का भी सामना कर देते हैं। उनकी बढ़ी हुई शक्ति के सामने सरकार की नहीं चल सकती। एक ही प्रान्त में अनेक विश्वविद्यालय बना देने से उन मुख्य विश्वविद्यालयों की शक्ति टूट जायगी। जुदा जुदा छोटे छोटे शिक्षणालयों को वश में रखना बड़े बड़े विश्वविद्यालय की अपेक्षा बहुत सहल है हम जानते हैं कि यदि सरकार का किसी प्रकार का दखल न हो, यदि यूनिवर्सिटियों के चान्सलर हमारे देश के बड़े बड़े राजनीतिक नेता हों, (जैसे इङ्गलैण्ड तथा अन्य स्थानों में होते हैं) यदि कालेजों के प्रिंसिपल देशभक्त भारतवासी हों तो सरकार के यह सुधार, देश के उद्धार के कारण हो सकते हैं क्योंकि उस दशा में शिक्षा भारतवासियों को अधिक भारतवासी बनाएगी। परन्तु वर्तमान दशा क्या है? सारी शिक्षा पर सरकार की छाप है। सारी मशीनरी सरकार के अवयवों से बनी हुई हैं। प्रिंसिपल, गोरी नौकरशाही के अङ्ग होंगे। चान्सलर प्रान्त के गवर्नर होंगे। ऐसी दशा में क्या यह समझना कुछ भूल है कि शिक्षा को जितना ही अधिक काबू में लाने का यत्न किया जायगा शिक्षकों को जितना ही अधिक दृष्टि में रहना पड़ेगा, विद्यार्थियों पर जितने ही अधिक गहरे प्रभाव पड़ेंगे—जाति की उतनी ही अधिक हानि है। जाति के हित में, जाति द्वारा, जाति के बच्चों की शिक्षा तो हो कम रुपया होने पर, थोड़ी योग्यता के अध्यापक होने पर और छोटी इमारत होने पर भी परिणाम जाति के लिए बहुत अच्छा हो सकता है। इस समय शिक्षा में जिस प्रकार के सुधार की आवश्यकता है, वह यह कि शिक्षा का माध्यम देश भाषा को बनाया जाय, विद्यार्थियों के जीवनों को ऊंचे बनाने का यत्न किया जाय, उनके राष्ट्रीय भावों को दृढ़ किया जाय, फिज़ूल साहित्यिक शिक्षा को हटा कर क्रियात्मक शिक्षा दी जाय। यह सुधार आवश्यक है—और जाति का धन यदि इन पर व्यय किया जाय तो वह सद्व्यय होगा। परन्तु यहां तो दशा ही दूसरी है। जो सुधार हो रहे हैं-वह वस्तुतः बिगाड़ है। शिक्षा की समस्यायें जातीय दृष्टि से अधिक गम्भीर हो जायंगी। हमारे भावी राष्ट्रीय जीवन पर सरकारी शिक्षा का जो बुरा प्रभाव होने को है उसकी घनता और भी अधिक बढ़ जायगी। जो भारतवासी सरकारी शिक्षा के नये युग का स्वागत कर रहे हैं, और एक एक यूनिवर्सिटी पर करोड़ों रुपये के व्यय को आवश्यक व्यय बता रहे हैं, वह भूलते हैं।

भारत में शिक्षा का एक ही सब से बड़ा आवश्यक सुधार है। वह सुधार यह है कि राष्ट्र की शिक्षा राष्ट्र के हाथों में हो। सरकार के अंगभूत मिनिस्टरों के हाथ में शिक्षा का होना राष्ट्र के हाथ में होना नहीं है। सरकार का प्रारम्भिक शिक्षा से सीधा सम्बन्ध हो—मध्यम शिक्षा में वह केवल सहायता रूप में रह जाय-और ऊंचे दर्जे की शिक्षा सर्वदा स्वतन्त्र होनी चाहिए। विश्वविद्यालय अपने चान्सलर, प्रिन्सिपल प्रोफेसर, संगठन, शिक्षा क्रम आदि निश्चय करने में स्वतन्त्र हों। यह सब से बड़ा आवश्यक सुधार है। हमारे जितने कदम इस ओर उठते हैं, उतना ही हम राष्ट्रीय मोक्ष के पास पहुँचते हैं और जितने कदम दूसरी ओर उठते हैं, हमारी ज़ञ्जीरें उतनी प्रबल होती जाती हैं।

आर्यसमाजिक जगत्

सामाजिक साहित्य

आर्यसमाज का सामाजिक साहित्य आज कल यदि बहुत निर्बल दशा में नहीं तो कुछ प्रबल दशा में भी नहीं है। सद्धर्मप्रचारक जो किसी दिन आर्यसमाज का सेनापति था आज कल बूढ़े पेन्शनर की हैसीयत को पहुंच गया है। आशा थी कि पं० ब्रह्मदत्त जी की सम्पादकता में वह खूब चमकेगा परन्तु कुछ दिनों तक चमक कर अब पत्र सुस्त पड़ गया है। अब प्रचारक में अधिक स्थान उद्धरण और स्थानीय समाचार लेलेते हैं क्या पत्र को कुछ दिनों तक जीवित रखनेका कोई उपाय नहीं हैं? लाहौर का प्रकाश चला जाता है पर पहले कीसी उस की दशा नही रही। पहले म० कृष्ण की सारी शक्ति प्रकाश में लगती थी अब वह प्रताप और प्रकाश मे बट गई हैं। कभी २ पुराने तरकश के दोएकतीर अब भी निकल पड़ते हैं, पर पुरानी बात जाती रही। आर्यमित्र को पं० धर्मेन्द्रनाथ जी ने बहुत कुछ जगाया है पर हमें डर है कि पण्डित जी भी कई झमेलों में फंसते जा रहे हैं कुछ असम्भव नहीं कि अन्य कार्य उन्हें अपनी ओर अधिक खैंच कर लेजायं। आर्यगजट 'यथा पूर्वमकल्पयत्' है। उसके सम्पादक महोदय आज कल पहाड़ की यात्रा पर गये हुए हैं बरेली का आर्य पत्र अपनी धुनका एक ही है—पर उस में उन्नति की गुंजायश बहुत है। आर्य प्रकाश जैसे पत्रों की दशा पूर्ववत् है—वह अपना २ प्रान्तीय कार्य निभारहे हैं। इस समय ऐसे पत्र का सर्वथा अभाव है, जिसका प्रभाव और नाम आर्यसमाज के बाहिर के संसार पर भी पूरा हो आगरे के मुसाफिर ने चोला बदल लिया है उस में हमें कुछ वक्तव्य नहीं। जब सम्पादक का कार्य क्षेत्र बदल गया, तो पत्र की नातिमें परिवर्तन आना ही था।

वैदिक धर्म और ज्योति

जहां साप्ताहिक सामायिक साहित्य बहुत शिथिल हो गया है, वहां मासिक साहित्य ने अच्छी उन्नति की है। औधसे पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर जी के सम्पादकत्व में 'वैदिक धर्म' नाम का पत्र कई महीनों से निकल रहा है। यद्यपि पत्र का आकार छोटा है, और लेख भी सब एक ही लेखनी के लिखे हुए होते हैं, तो भी उपयोगिता में सन्देह नहीं। पत्र में स्वाध्याय के लिये काफी मसाला होता है। लाहौर से श्री मती पण्डिता विद्यावती सेठ बी.ए. के सम्पादकत्व में 'ज्योति' नाम की पत्रिका निकल रही है। पत्रिका सार्वजनिक होती हुई भी आर्यसमाज और स्त्री शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दे रही है। अभी तक पत्रिका को बहुत उपयोगी बनाने का यत्न किया गया है और हर्ष की बात है कि अच्छे २ विद्वान् लेख भेज रहे हैं। आर्यसमाज में उत्तम मासिक साहित्य की बहुत ही आवश्यकता थी-जो धीरे २ पूरी हो रही है।

आर्य बिरादरी

श्रद्धा के सम्पादक महाशय ने कुछ सप्ताह हुए आर्य्य बिरादरी पर लिखते हुए यह विचार प्रकट किया था कि जुदा आर्य्य बिरादरी बनाने में आर्यसमाज के 'चुपचाप' प्रचार को हानि पहुंचेगी आर्य मित्र आर्य बिरादरी का प्रबल पक्षपाती है। उसकी राय है कि 'हिन्दू बिरादरी ही आर्य्यसमाज के लिए मौत है' श्रद्धा के सम्पादक को मित्र के सम्पादक ने आड़े हाथों लिया है। सब से बड़ा आक्षेप मित्र ने यह किया हैं कि श्रद्धा के तर्क के अनुसार ईसाई और मुसलमानों से हम मिलजायें तो उन पर भी इसी प्रकार क्या 'चुप चाप बहुत प्रभाव' न डाल सकेगा? मित्र की इस युक्ति की तह में मोहत्याभास है वह बहुत स्पष्ट है। एक धार्मिक सगठन के रूप में हिन्दुओं और वैदिक धर्मियों में जो सम्बन्ध है वह बहुत गहरा है। दोनों वेदों के अनुयायी हैं—वेद में श्रद्धा रखते हैं-दोनों के ऐतिहासिक संस्कार एकसे हैं- दोनों के त्योहार लगभग एकसे हैं—नाम एक हैं—साहित्य एक हैं-रहन सहन एक है। इन दशाओं में आर्य पुरुष या आर्य देवियों के हिन्दू समाज में मिश्रण द्वारा विचार क्रान्ति जिस शीघ्रता से हो सकती है, मुसलमानों या ईसाइयों में मिश्रण से वैसी क्रान्ति नहीं उत्पन्न हो सकती। इस समय आर्य समाज का बड़ा विस्तृत प्रभाव है—जहां सनातन धर्म का गढ़ है वहां पर भी एक युवक या एक कन्या के प्रभाव से वैदिक धर्म का दीपशिखा दिखाई देती रहती है- जो धीरे २ कई दीपशिखायें जला देने का सामर्थ्य रखती है। आर्य समाज हिन्दू बिरादरी में हो या नहीं शब्दों के बारे में कोई झगड़ा नहीं— पर इतना निश्चित है कि आर्यसमाज के के सभासद् हिन्दू समाज के साथ इतने सम्बन्धों से बंधे हुए हैं, कि धार्मिक दृष्टि से एक भी विचार में सुलहनामा न करते हुए भी उनका सामजिक दृष्टि से जुदा हो कर भाग जाना जहां एक ओर असम्भव है, वहां दूसरी ओर आत्म हत्या के समान है!

जातिभेद निवारण समिति

आर्य मित्र में पं० धर्मेन्द्रनाथ के बहुत से आन्दोलन पर गुरुकुल वृन्दावन उत्सव पर जातिभेद निवारण समिति की स्थापना हुई थी, जिसके मन्त्री पं० मदनमोहन सेठ और उपमन्त्री पं० धर्मेन्द्रनाथ जी बनाए गए थे। अब तक समिति कुछ अधिक कार्य नहीं करसकी। पं० धर्मेन्द्रनाथ जी ने आर्य मित्र में एक पत्र प्रकाशित किया है, जिस में अपने पर अधिक कार्य भार होने की शिकायत करते हुए सभासदों को दूसरा उपमन्त्री चुनने की प्रेरणा की है। मैं अपने भाई से निवेदन करना चाहता हूं कि इस समिति का प्रादुर्भाव उन्हीं के उत्साह का फल है। वह इसे न छोड़ें। यदि वह इस समिति से कुछ कार्य करना चाहते हैं तो इस के उपमन्त्री बने रहें। नहीं तो जैसे और बीसों सभा समितियां उत्पन्न हो कर मर गई, वैसे ही दशा इस समिति की भी होगी।

समाज मन्दिरों का सुधार।

आर्य प्रतिनिधि सभा के वर्तमान मन्त्री पं० ठाकुरदत्त जी के उत्साह और प्रो० रामदेव जी बी० एम एक आर ए० एस के उद्योग से आर्य समाजों के सुधार का बहुत कुछ यत्न हो रहा है। आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा ने अपन गत अधिवेशन में निश्चय किया है कि हरेक समाज मन्दिर में एक यज्ञशाला और उपासनालय जुदा बनना चाहिए जो सामान्यतौर पर पवित्र स्थान समझा जाय। यह प्रस्ताव बहुत ही उत्तम है। इस समय हमारे समाज मन्दिर धर्मशाला, पाठशाला, यज्ञशाला और विशेष उत्सवों तक भोजन शाला तक का काम दे देते हैं। इसका दूर होना उत्तम ही है। सभाने यह भी निश्चय किया है कि हरेक समाज मन्दिर पर एक 'ओ३म्' का झण्डा लगाया जाय।

इन्द्र

हमारी कलकत्ता की चिट्ठी

(निजू-संवाददाता द्वारा)

मध्याह्नोत्तर १२½ बजे जगदीश चन्द्रबोस के Research Institute को देखने गये। श्री प्रो० नाग जी ने बड़े प्रेम से सब कुछ अच्छी तरह दिखाया। यह संस्था प्रत्येक दृष्टि से देश भक्तों के लिये बड़े आत्म सम्मान की चीज है। व्याख्यान भवन के चित्र तथा सर्व भवन रचना अपने स्वदेशी स्वजाती पढ़ने से कीमती है। चारों ओर नाना प्रकार के वृक्ष लगे हुये हैं। इस संस्था में अनेक कुलीन नवयुवक बड़े परीश्रम से जगदीशचन्द्र वसु के निरीक्षण में स्वतन्त्र गवेषणायें करते हैं।

इस संस्था के लिये आवश्यक परीक्षण पत्रादि भी स्वयं तैयार किये जाते हैं। आज सायंकाल ५ बजे कालेज स्क्वेयर पर मि० पाल का खिलाफत विषय पर व्याख्यान हुआ इस में उन्होंने ब्रिटिश मुख्य सरकार की इजिप्त सम्बन्धी नीति का खुलासा कहते हुये बताया कि खिलाफत का मामला जहां एक ओर मुसलमानों के लिये धार्मिक दृष्टि से महत्व का प्रश्न है वहां हिन्दुओं के लिये राजैनतिक दृष्टि से इस का कम गौरव नहीं है अतः हमें इस में पूर्ण सहयोग देना चाहिये।

इसके अन्तर ७½ बजे से आर्यसमाज मंदिर में ब्र० धर्म देव जी का "देश भक्तों के प्रति वेद का सदेश" विषय पर व्याख्यान हुआ श्री स्वामी जी ने सभापति के आसन को सुशोभित किया था। व्याख्यान का सार इस प्रकार है:—

आज कल के नवशिक्षित, देश प्रेम के भाव को अंग्रेजों का सिखाया हुआ मानते हैं। पर अब हम वेद अनु शील न करते हैं तो वहां "नमोमात्रे पृथिव्या" इत्यादि मन्त्रों में स्पष्ट लिखा है कि हमें अपनी मात्र भूमि के लिये सब कुछ न्योछावर करने को तैयार रहना चाहिये देश सेवा के लिये तप और सत्य की परम आवश्यकता है। तदनन्तर श्री सभापति जी ने अपने भाषण में बताया कि ऐसे स्वतन्त्र विचारों को जो कि ब्रह्मचारी ने आपके सामने उपस्थित किये हैं बिना जातीय शिक्षा के नहीं पैदा हो सकते। अतः आप सब लोगों को जातीय शिक्षणालय की स्थिरता के लिये यत्न करना चाहिये।

आज रात को cornele of national educeetion की ओर से आर्यसमाज मन्दिर में श्री स्वामी जी का आंगल भाषा में जातीय शिक्षा पर बहुत प्रभाव शाली व्याख्यान हुआ सारा भवन खचा खच भरा हुआ था।

२६ ता० को ब्र० भीमसेन ने "वैदिक सभ्यता और भारत का भविष्य" विषय पर व्याख्यान दिया। व्याख्यान का सार यह है। इस समय देश अविद्या में है आज से १५० वर्ष पूर्व जिस सभ्यता को भारत ने स्वीकार किया था आज उसका आश्रय लेने पर भी उसे शान्ति नहीं मिली इस समय भविष्य के लिए भारत को कौन सा मार्ग लेना चाहिये व्याख्याता महोदय ने भारतीय इतिहास का निरीक्षण कर के दिखाया कि भारत निवासी हिन्दु जाति ने, आक्रमणों के होने पर भी अपने अस्तित्व को नहीं खोया था।

इस का कारण उस के नेताओं का वैदिक सभ्यता का अवलम्ब लेना था। महर्षि दयानन्द ने भी यही पाठ पढ़ाया। आज जापानादि भी इसी ओर आ रहे हैं वैदिक सभ्यता का मूल सत्य तप दम और कर्म में है। जिस जाति व व्यक्ति में ये धर्म नहीं रहते वह उन्नति नहीं कर सकती। वर्तमान प्रचलित आन्दोलनों को कृतकार्यता के लिये भी इन्ही चारों का आश्रय लेना चाहिये।

वैदिक आदर्श के अनुसार संसार में फिर शान्ति स्थापित करने के लिये वैयक्तिक, राष्ट्रीय और सार्वभौम शान्ति को साथ ही साथ स्थापित करना चाहिये।

बोलपुर का शान्ति निकेतन

पाठक गण! अपने बंगाल के शान्तिनिकेतन आश्रय का नाम बहुत बार सुना होगा। ३० अगस्त को हमें श्री स्वामी जी के साथ वहां जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। प्रातः काल को रेलगाड़ी से प्रस्थित होकर १० बजे बोलपुर स्टेशन पर पहुंचे। स्टेशन पर श्री पं० विधुशेखर जी महाशय और जगदानन्द तथा श्री पं० भूदेव जी विद्यालंकार शान्ति निकेतन के विद्यार्थियों के साथ उपस्थित थे। वहां से घोड़ा गाड़ियों पर सवार होकर सब लोग शान्ति निकेतन आश्रम में पहुंचे। मुख्य मार्ग के दोनों ओर विद्यार्थी खड़े थे। श्री मि० एन्ड्रूज़ तथा अन्य सहकारी वर्ग भी उपस्थित थे। सब आश्रम निवासियों ने श्री स्वामी जी का बड़े समारोह से स्वागत किया।

तदनन्तर शान्ति निकेतन भवन में हम सबको टिकाया गया। श्री पं० विधुशेखर जी भट्टाचार्य ने बड़े प्रेम से सारा आश्रम अच्छी तरह दिखाया।

२ बजे के लगभग कला भवन में सब आश्रम निवासियों ने मिलकर स्वामी जी की सेवा में अभिनन्दन पत्र समर्पित किया। अभिनन्दन पत्र—शान्ति निकेतन आश्रम के निपुण चित्रकारों द्वारा तैयार किया गया था।

तदनन्तर श्री स्वामी जी ने अभिनन्दन पत्र का उत्तर देते हुए बताया कि इस आश्रम के आदि संस्थापक महर्षि देवेन्द्र नाथ जी ब्रह्मसमाज और आर्य्यसमाज को मिलाना चाहते थे। उस समय उनकी ओर से इस कार्य को पूरा करने के लिए बलेन्द्रनाथ ठाकुर को पञ्जाब में भेजा। उनसे बात चीत कर दिल में निश्चय किया था कि इस आश्रम को अवश्य देखूंगा। आज वह चिरकी अभिलाषा पूरी हुई। आशा है दोनों संस्थाओं में परस्पर प्रेममय सम्बन्ध स्थापित रहेगा।

तदनन्तर श्री पं० विधु शेखर जी ने आश्रम की ओर से स्वामी जी का अभिनन्दन किया। उपस्थित सज्जनों के आग्रह पर श्री स्वामी जी ने गुरुकुल विषय पर अनुभव पूर्ण व्याख्यान दिया। तदनन्तर सभा विसर्जित हुई। रात को वहां के विद्यार्थियों ने श्री कवीन्द्र निर्मित वाल्मीकि प्रतिभा नाम का अभिनय किया। अगले दिन उनका प्रातः काल ईश्वरोपासना तथा पाठक्रम देखा। इसके अनन्तर ६॥ बजे की गाड़ी से कलकत्ता के लिए लौट पड़े।

इस संस्था की मुख्य विशेषतायें निम्नलिखित हैं।

(शेष पृष्ठ ७ वें पर देखो)

विचार तरंग

योरोप का युद्ध तथा भारतीय दुष्काल

(गतांक से आगे)

क्या नहीं देखते ! यदि नहीं दिखाई देता तो आखें खोलो अच्छीतरह खोलो और देखो (तुम देख सकते हो, और देखना चाहिये)—सामने मुरझाये हुवे भारत वासियों की अनगिनत लाशें भूमि पर जहां तहां बिछी पड़ी हैं। बुड्ढे एक तरफ पड़े अपने प्राणत्याग रहे हैं। जवान भी कुछ देर बाद पीले पड़ते है, निश्चेष्ट होते हैं और फिर मरणान्त व्यथा से अपने श्वास छोड़ने के लिये भूमि पर ठंडे पड़ जाते हैं। देखो वह कुलीन महिला, बच्चा गोद में लिये कैसी व्याकुल है, यह लो वह छटपटाने लगी, मूर्छित होगयी और वह और उसका बच्चा अकड़... ......

यह है वह हृदय विदारक भयंकर युद्ध जिसे कि भारतनिवासियों ने किसी आक्रान्ता शत्रु से १६ वीं प्रसिद्ध शताब्दि में लड़ा था।

८

कोई कहता हुवा सुनाई देता है कि इन दिनों तो ब्रिटिश सरकार की शान्ति पूर्णछाया में आराम करते हुवे भारत को किसी शत्रु से युद्ध लड़ने का भी कभी कष्ट नहीं उठाना पड़ा, फिर ऐसा युद्ध तो दूर रहा जिस में कि इतनी भारी भारतीय जनता इस बुरी तरह मृत्यु का ग्रास हुई हो। सच है बिलकुल सच है भारत उस समय सचमुच ब्रिटिशछाया की ऐसी ही अटल शान्ति में पड़ा हुवा था। और शर्मन् भी तो यही कहता है कि भारत पर तब ऐसी प्रगाढ़ शान्ति छारही थी कि अन्दर होता हुवा ऐसा भारी युद्ध भी उसे तनिक भी भंग न कर सका। समझे ?

(९)

क्या तुम पूछते हो कि "जब कि हमलोग अभीतक (बड़े भय के समयों में और साम्राज्य की रक्षा के लिये भी) शस्त्र धारण करने के योग्य न होसके हैं तो यह तो बताओ कि उस समय हमने कैसे शस्त्र धारण कर लिये होंगे या शस्त्र बिना मिले कैसे काम चला होगा।" तुम्हारी शंका बहुत ही युक्ति युक्त है किन्तु बात यह हुई कि हमारे और विशेषतया हमारे नवजिन्न शासकों के सौभाग्य से हम पर आक्रमण करने वाला शत्रु ही ऐसा आया था कि जिससे लड़ने के लिये शस्त्र अस्त्रों की—तोप बन्दूक तलवार चलाने की—ज़रूरत न थी क्योंकि वह विचित्र शत्रु हम पर ऐसे शस्त्रों से हमला न करता है। वह अलौकिक था उसका सब कुछ काम अमानुषीय था।

प्यारे पाठक ! क्या अब तक भी विश्वास नहीं हुवा कि ऐसा कोई युद्ध भारतीयों इन शताब्दियों में कभी लड़ा था ?

(१०)

इस अख़बारों के पन्ने क्या उलटाता है सब व्यर्थ है। यहां पर उस महायुद्ध का वृत्तान्त नहीं मिलेगा। इस छोटे से अख़बार से तो क्या 'Times' के असंख्य कालमों में भी इस संसार का कोई वर्णन कोई घटना तीक्ष्ण दृष्टि से भी ढूंढे न मिलेगी। तुम समझते हो कि संग्राम युद्ध के समाचारों की तरह जिससे कि आजकल संसार के सब अख़बार चारों तरफ से काले किये हैं उस समय भी उस महासमर के समाचार घटनाओं और रूटर के दैनिक तार सब पत्रों में प्रकाशित हुवा करते होंगे। किन्तु वहां तो बात ही और थी। वह युद्ध सर्वथा अविदित है। पढ़ने वालों को दुनिया भर की सब घटनायें ठीक ठीक बताने का दम भरने वाला इतिहास भी इस विषय में गूंगा है। उसे कोई नहीं जानता, कोई नहीं मानता। वह संसार को ऐसा बिलकुल अज्ञात है कि मानो जब वह युद्ध भारत में होरहा था तो सारा संसार आधीरात को गाढ़ी निद्रा में सोया पड़ा था।

११

जैसे कि पहिले निर्देश किया था हर एक आँख इस युद्ध को नहीं देख पाती। इसके देखने के लिये एक विशेष प्रकार की आँखों की ज़रूरत है — ऐसी आँखें जो कि उस सुन हले पर्दे के पास देखसकें, जो कि उसकी मनोहरता में उलझ कर न रह जांय किन्तु चीर कर पीछे पड़ी हुई सचाई (वह सचाई चाहे कितनी अमनोहर घोर रूप क्यों न हो) को ग्रहण कर सकें इसलिये उस युद्ध का वर्णन यदि किसी पुस्तक में पाना चाहते हो तो उन उत्तम ग्रन्थों को देखो जो की रमेशचन्द्रदत्त या डब्ल्यू डिग्बी जैसे सत्य की खोज कर देख सकने वालों अर्थात् उस पवित्र चक्षुओं के धारण करने वालों के रचे हुवे हैं। वहीं पर और केवल वहीं पर इस का वर्णन मिल सकता है, अन्यकिन्हीं भी छपे हुए काग़ज़ों में नहीं।

१२

क्या अब आपने अपने उस घोर वैरी को पहिचाना जिसके प्रसिद्ध २ या देश सर्वसंहारक हमले भारत पर पिछली शताब्दी में हुवे जिनमें कि करोड़ों भारतवासी देखते देखते मौत के ग्रास होगये। सीधी भाषा में, यह वैरी अकाल हैं (नहीं नहीं वह तो काल हैं—साक्षात् मृत्यु स्वरूप विकराल काल हैं, लोग इसे भूल कर 'अकाल' कहते हैं।) यही हमारा जानी दुश्मन है, यह हमारा इस से अधिक कट्टु वैर और प्राणों का प्यारा वैरी है जितना कि जर्मनी हालैंड का है या हालैंड जर्मनी का। यह बड़ा क्रूर और हत्यारा है। यही शत्रु है कि जिस के साथ भारतीयों ने वह मृत्युमय युद्ध लड़ा था जिस का कि चित्र पूर्ण दृश्य मेरे मन ने अभी मुझे दिखलाया है।

१३

उस युद्ध में भारतीयों को दमघोंट कर मारने के लिये शत्रु को किसी विषैले गैस के प्रयोग की ज़रूरत न हुई। उन का सांस आप ही आप बिना कुछ किये छुट जाता था और वे केवल क्षण भर तड़फड़ा कर भूमि पर लाश होकर रह जाते थे।

उस युद्ध में भारतीयों को भून डालने के लिये शत्रु का किसी १४ 'सेन्टीमीटरों' के आविष्कार करने का कष्ट न उठाना पड़ा। किन्तु वे बिना किसी तोप मशीनगन की अग्नि वर्षा के हुवे स्वयं अपने ही पेट की जाठराग्नि में प्रतिक्षण जल२ कर बिलबिलाते हुवे समाप्त हो जाते थे।

यही कारण है कि शर्मन् ने इस शत्रु को, अलौकिक 'असाधारण' की उपाधि दी है। "शर्मन्"

(पृष्ठ ९ का शेष)

१. शान्ति निकेतन आश्रम की सीमा के अन्दर कोई विद्यार्थी या आश्रमवासी मांस नहीं खा सकता।

२. यहां सब पढ़ाई आदि यथा सम्भव direct method सब पढ़ाई जाती है। पढ़ाई वृक्षों के नीचे ही होती है। प्रत्येक अध्यापक अपने २ विद्यार्थियों को लेकर वृक्षों की छाया में पाठ पढ़ाते हैं।

३. लड़के लड़कियां दोनों इकट्ठी ही पढ़ती हैं। यद्यपि लड़के आश्रम में नियम पूर्वक रहते हैं परन्तु लड़कियां अपने अध्यापकों को के यहां रहती है। पढ़ने तथा अन्य कामों के लिए वे लड़कों के साथ ही रहती हैं।

४. यद्यपि यहां के विद्यार्थी मैट्रिक परीक्षा देते हैं परन्तु आश्रम श्रेणी तक पाठविधि में प्रायः सब पुस्तकें कवीन्द्र द्वारा सञ्चित की गई ही पढ़ाई जाती हैं।

५. अन्य सरकारी स्कूलों की तरह यहां विद्यार्थियों को निर्जीव परीक्षा चक्र में नहीं पिसना पड़ता। अध्यापक लोगों को के कहने के अनुसार ही विद्यार्थियों को श्रेणी में चढ़ाया जाता है। इस परीक्षा विधि से यहां के विद्यार्थियों को बहुत लाभ पहुंचता है। यहां के विद्यार्थी मैट्रिक परीक्षा में बहुत ही कम संख्या में अनुत्तीर्ण होते हैं।

६. विद्यार्थियों को शारीरिक दण्ड नहीं दिया जाता।

७. विद्यार्थियों को २०), २२) और २५) देने पड़ते हैं। शेष अन्य वस्त्र पुस्तकादि का खर्च विद्यार्थी को स्वयं अपनी ओर से करना होता है।

८. भोजन के लिए दो किचन हैं। एक में बंगाली विद्यार्थी भोजन करते हैं दूसरे में पकाने वाले ब्राह्मण अन्य विद्यार्थी।

९. दिनचर्या इस प्रकार से है। प्रातःकाल ४ बजे उठते हैं। तदनन्तर आवश्यक क्रियायों से निवृत्त होकर स्नान करते हैं। जो इस समय स्नान नहीं करना चाहते वे ८, ९ बजे के लगभग स्नान करते हैं।

स्नान के अनन्तर सब विद्यार्थी अलग अलग १० मि० तक अलग अलग ध्यान करते हैं धार्मिक सहिष्णुता पर पूरा ध्यान रखा गया है। साथ ही आश्रम में एक ब्रह्म समाज का पूजा मन्दिर है। हिन्दू, मुसलमान सब अपने अपने धर्मानुसार पूजा ध्यानादि करते हैं तदनन्तर सब मिलकर दो २ मन्त्रों का उच्चारण करते हैं। प्रातराश के अनन्तर विद्यालय लगता है। विद्यालय लगने से पूर्व सब विद्यार्थी मिलकर ईश्वर प्रार्थना गीति रूप में गाते हैं। प्रातःकाल के अन्तर पढ़ाई होती है मध्यान्होत्तर ३ अन्तर पढ़ाई होती है। सायंकाल फुटबालादि खेलते हैं। रात को भोजनादि के अनन्तर अपना आराम करते हैं। विद्यार्थी गण प्रायः मनोविनोद के लिए अभिनय करते हैं। इस अभिनयनिदर्शन में बालक और बालिकायें दोनों ही भाग लेते हैं। सोने से पूर्व सब वैतालिक गान करते हैं।

६. इस आश्रम में मुख्यतया दो विभाग हैं। एक तो विद्यालय विभाग। इसमें विद्यार्थी लोग मैट्रिक की तैयारी करते हैं। दूसरा भाग महाविद्यालय है इसका नाम विश्व भारती है। इसमें हिन्दी भाषा, गान कला, चित्रकलादि विषयों का भी विशेषतया शिक्षण किया जाता है।

इस विभाग में मुख्यतया भारत की नचिन लुप्त चित्रात्मकला को पुनः उज्जीवित कराने का सराहनीय यत्न हो रहा। इसके Principle कर्मदक्ष श्री विधुशेखर जी महाचार्य पं० जातीय संस्थाओं को इस विषय में इस संस्था का यथा शक्ति अनुकरण करना चाहिये। इस संस्था के सफलता पूर्वक चलने का मूलमन्त्र यहां के ex studnt अपनी संस्था के प्रति अनन्य प्रेम का होना ही है।

प्राकृतिक शोभा तथा स्वास्थ्यादि की दृष्टि से यह आश्रम बहुत अच्छा है।

धनिक माता पिताओं के पुत्रों, और गवेषणात्मक कार्य करने वालों तथा कवितामय आनन्दमय जीवन बिताने से वालों के लिए ही यह संस्था बहुत उपयोगी है। तथापि प्रत्येक भारतीय को प्राचीन चित्रकला तथा गानविद्या को पुनर्जीवन करने में प्रवृत्त इस संस्था को अवश्य ही यथाशक्ति सहायता पहुंचानी चाहिए। अन्त में हम इस संस्था के सर्व अधिकारियों तथा विद्यार्थियों को हार्दिक धन्यवाद देते हैं जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर हम लोगों को अनुगृहीत किया।

—:०:—

सार और सूचना

१. भगवानपुर (मुरादाबाद) की प्रेम समिति के मन्त्री श्री—लाला गौरीशंकर जी सूचना देते हैं कि इस समिति ने लोकमान्य तिलक की यादगार में १०००) की लागत से एक धर्मार्थ आयुर्वेदीय चिकित्सालय खोलने का निश्चय किया है। धर्मात्मा सज्जनों से उनकी अपील की गई है।

२. मोगा (पंजाब) की सेवा समिति के प्रधान श्री चन्द्रलाल जी सूचना देते हैं कि रतोनामें गोवध के लिए सरकार की ओर से खुलने वाले कसाईखाने के विरोध में वहां एक सार्वजनिक सभा हुई थी।

३. मेरठ से एक संवाददाता लिखते हैं कि गुरुकुल कांगड़ी के ब्रह्मचारी विद्यारत्न जी ने यहां पर वैदिक धर्म का प्रचार प्रारम्भ कर दिया है। साप्ताहिक उपदेश के अतिरिक्त समाज में मनुस्मृति की कथा करते हैं और सत्यार्थप्रकाश पढ़ाते हैं। रतोनामें गोवध के लिए खुलने वाले कसाईखाने का विरोध प्रकट करने के लिए वहां एक सार्वजनिक सभा हुई थी जिस में ब्रह्मचारी जी का प्रभावशाली भाषण हुआ।

४. 'श्रद्धा' के १७ वें अंक के क्रोड़पत्र मे 'समाजपत्र इस पुस्तक के मिलने का पता ठीक नहीं छपा उसके मिलने का पता "राजपूताना हिन्दी साहित्य सभा झालरापाटन शहर" है।

५. गुरुकुल कांगड़ी में एक सेवा समिति स्थापित हुई है जिसके मंत्री श्री म० दीवानचन्द जी सूचना देते हैं कि अभी तक इसके १२ सभासद हैं इस समिति का मुख्य उद्देश्य रोगियों और निःसहायों की तन मन धन पूर्वक सेवा करना है। इसका प्रधान कार्यालय "केवल आश्रम" में है जहां इसके साप्ताहिक अधिवेशन भी होते हैं।

४. म० रामप्रतापलाल उपमन्त्री दानापुर-आर्यसमाज सूचना देते हैं कि इस समाज का ४३ वां वार्षिकोत्सव १२ १३-१४ आश्विन' वा २४-२५-२६ अक्टूबर को होगा।

५. भवानी से म० नेकीराम जी शर्मा सूचना देते हैं कि पंजाबसरकार ने ज़मींदारों, दुकानदारों और कमीनों के नाम एकजश्ती चिट्ठी प्रकाशित की है जिस के अनुसार उन्हें बेगार लेने से सर्वथा निषिद्ध किया गया है।

६. भेरा (पंजाब) से एक सज्जन सूचना देते हैं कि गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी के ब्रह्मचारी विद्यारत्न (१४ श्रे) जी अपनी छुट्टियों में यहां पधार गये हैं। वे यहां एक मास तक रहते हुये धर्मोपदेश और वैदिकधर्म का प्रचार करेंगे। २२ ता० को उन्हों ने यज्ञोपवीत संस्कार करवाया और समाज में व्याख्यान भी दिया।

७. बरवाला से एक सज्जन सूचना देते हैं कि बा० हरिकृष्णदत्त अग्रवाल बी० ए० एल० एल० बी० वकील हाईकोर्ट हिसार को ग़ैर-मुसलमानों की ओर से काऊन्सिल की उम्मेदवारी के लिए खड़े हुये हैं।

८. वैदिक मण्डल काशी के मुख्याधिष्ठाता श्री० स्वामी वेदानन्द तीर्थ सूचना देते हैं कि इस नाम की वहां एक संस्था स्थापित की जावेगी जिस में वैदिक धर्म के प्रचार के लिए धुरन्धर पण्डित तैयार किए जावेंगे। विद्यार्थियों के भोजन, वस्त्र आवास, पुस्तक आदि के लिए श्री स्वामी जी जनता से ५०००) की अपील करते हैं।

९. म० नानकचन्द उपदेशक अछूत जाति आर्यसमाज सिरसा जि० हिसार से लिखते हैं कि ९ अगस्त को सिरसा कस्बा में श्री० तिलक की मृत्यु पर जो शोक सभा हुई थी उस में वे अछूतों के प्रतिनिधियों की ओर से बोले थे जिस पर वहां के हिन्दुओं ने अत्यन्त असन्तोष प्रकट किया। उपदेशक जी कहते हैं कि उन्हें ऐसा करने का कोई अधिकार नहीं था।

मेरे प्यारे देशवासियों

इस प्यारी जन्म भूमी (भारतवर्ष) के कुछ भागों में बेगार व रसद जैसी गिरी हुई प्रथा कुछ समय से जारी है जो कि पूर्णतया राज नि.म के प्रतिकूल है इस के प्रतिकूल आवाज़ उठाना प्रत्येक भारतवासी का कर्तव्य है, मैं अपने जातीय तजरुबे के आधार पर बड़े बल के साथ कहता हूं कि अधिक तर ग्रामीण लोग इस अनुचित दुखदायी प्रथा से इतने दुखित हैं कि वह इसके हटजाने को ही स्वराज्य प्राप्ति समझेंगें।

अतः मैं देशवासियों को खबरदार कर देना चाहता हूं कि आप लोग हर एक किस्म की मुफ्त बेगार (गाड़ी घोड़ा ऊंट मजदूर इत्यादि) अथवा न्यून मूल्य पर रसद देना तत्क्षण बन्द करदें सम्भव है कि बहुत से सरकारी भेष धारी आपको निजु स्वार्थ के लिये अनेक प्रकार की दफा ३५ से डरावेगें परन्तु आपका कर्तव्य है कि आप इन फ़जूल बातों में हरगिज न आवें सरफ़िट्ज़ पैट्रिक आई सी.एस., के. सी. एस. आई., भूतपूर्व लाटसाहिब पंजाब ने जो विज्ञापन बेगार का निकाला था जिसका भावार्थ नीचे उद्धृत किया जाता है मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप इसको पढ़कर समझेगें कि बेगार रसद केवल सभ्यता के ही प्रतिकूल प्रथा नहीं हैं बल्कि कानून के खिलाफ है इस से यह मतलब नहीं कि पूरी कीमत लेकर भी सरकारी नौकरों का काम न करो या पूरी कीमत लेकर सामान न दो बल्कि पूरी मजदूरी लेकर काम करो और पूरी कीमत लेकर मालदो किसी के लिये रुकावट न हो।

(नोट) यदि कोई महाशय कुछ विशेष पूछना चाहे तो मुझ से पूछ सक्ते हैं।

भारत वर्ष का तुच्छ सेवक

—०:—

गुरुकुल प्रेमियों को सूचना

एक सज्जन धर्मात्मा दानी एक बालक को गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी में और एक बालिका को भावी कन्या गुरुकुल में अपने व्यय पर प्रविष्ट करना चाहते हैं। दोनों ऐसे हों जिन के शरीर तथा बुद्धि उत्तम हों और स्वदेश तथा स्वधर्म के लिए भविष्य में लाभदायक सिद्ध हो सकें प्रार्थना पत्र १५ अक्टूबर तक नीचे लिखे पते पर आने चाहियें। उससे एक महीने पीछे की तिथि नियत करके चुनाव होगा।

श्रद्धानन्द

मुख्याधिष्ठाता तथा आचार्य

गुरुकुल कांगड़ी

समाचार और विचार

मिश्र से भारत को शिक्षा

लण्डन के "टाइम्स" के आधार पर देशी पत्रों में यह समाचार प्रकाशित हुआ है कि ग्रेट-ब्रिटेन ने मिश्रको यद्यपि पूर्ण तो नहीं पर बहुत कुछ स्वाधीनता देने की घोषणा की है। यद्यपि ब्रिटिश अफ़सरों के विशेष अधिकारों को सुरक्षित रखने के लिए कई पाबंदियां रक्खी गई हैं पर तो भी इतना स्पष्ट है कि वहां की नौकरशाही अपने उच्च आसन से पर्याप्त नीचे उतर आई है मिश्र वासियों की इस कृतकार्यता पर प्रत्येक भारतीय हृदय उन्हें बधाई देगा। पर इस से भारत को क्या शिक्षा मिलती है? हमें याद रखना चाहिए कि मिश्र को यह सफलता लम्बे २ अरूदेव पत्रों के साथ भीख मांगने से नहीं मिली है किन्तु सहयोग त्याग की नीति का अवलम्बन करने से ही। भारतवासियों को भी यह सचाई हृदय में अंकित कर लेनी चाहिए कि राजनीति में 'उदारता' का कोई स्थान नहीं है और जान बल तभी झुकता है जब कि उसे झुकने पर बाधित किया जाता है।

मुसल्मानों में विधवा विवाह

सहयोगी 'हमदम' द्वारा ज्ञात हुआ है कि गया (बिहार) के उच्च घराने के मुसल्मानों में हाल ही में एक विधवा विवाह हुआ है। यह प्रसन्नता की बात है कि मुसल्मान भाई भी अब ऐसी कुरीतियों को दूर करने का प्रयत्न कर रहे हैं। यद्यपि इसका विरोध हो रहा है पर इस्लाम मत की दृष्टि से ऐसे विवाह की केवल आज्ञा ही है किन्तु वह प्रशंसनीय भी ठहराया गया है।

श्रद्धा के नियम

१. वार्षिक मूल्य भारत में ३॥) विदेश में ५॥) ६ मास का २)

२. वी० पी० भेजने का नियम अब फिर कर दिया गया है। ६ मास से कम का वी० पी० नहीं भेजा जा सकता।

प्रबन्धकर्त्ता श्रद्धा

डाक० गुरुकुल कांगड़ी (ज़िला बिजनौर)

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिए छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 875

श्रद्धां सूर्यस्य निमुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० मं० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | २ आश्विन सं० १९७७ वि० | दयानन्दाब्द ३७ | ता० १७ सितम्बर सन् १९२० ई० | संख्या २२ भाग १

हृदयोद्गार

भक्त की आकांक्षा

दिन धन्य आयेंगे क्या वे भी कभी हमारे।
आसन जमायेंगे हम गंगा के जब किनारे॥ १॥

आकाश ही हमारे सिर पर करेगा छाया।
हद दुर्ग से हिमालय होगा बना बनाया॥ २॥

पृथिवी पलंग होगी बिस्तर ये घास देगा।
शीतल पवन का पंखा हर वक्त पास होगा॥ ३॥

जगमग जलेंगे दीपक ये सूर्य चन्द्र तारे।
होगा कुटुम्ब प्यारा-पशु पक्षि वृन्द सारे॥ ४॥

भोजन पवित्र इनके फल कन्द मूल होंगे।
कुटिया शरीर होगी वल्कल दुकूल होंगे॥ ५॥

रिपु काम क्रोध लोभ होंगे न क्लेश कारी।
बहता सदा रहेगा आंखों से प्रेम वारी॥ ६॥

तेरे ही ध्यान में जब लग जायेगी समाधी।
बस तीसरा न होगा होगी न कोई आधी॥ ७॥

पीयेंगे गाय सिंह जब एक घाट पानी।
महिमा वहीं अहिंसा की जायेगी बखानी॥ ८॥

तेरे ही दर्शनों की बस प्यास लग रही है।
कुछ और मैं न चाहूं इक आस लग रही है॥ ९॥

तेरे वियोग में मैं तन छीन हो रहा हूं।
जल हीन मीन जैसा अति दीन हो रहा हूं॥ १०॥

निज भक्ति भक्त वत्सल, अब दान दीजियेगा।
है बार बार विनती स्वीकार कीजियेगा॥ ११॥

मत दूर करना मुझको मैं आपड़ा चरण में।
जाऊंगा छोड़ तुझको किस की भला-शरण में॥१२॥

"योगीश्वर विद्यालंकार"

—:•:—

सरस्वति! फिर भी दर्शन दीजो

इस अंधेरी गहन गुफा में दीपशिखा धर दीजो॥१॥

देर हुई जब तव मन्दिर का मैं था एक पुजारी।
बहुत तुच्छ अनजान मूढ़ था, तो भी सदा सुखारी॥२॥

आंधी का कुछ झोंका आया बहा लेगया मुझ को।
नया घास नूतन था पानी, वहां न देखा तुझ को॥ ३॥

तन्दिर्दीप को जलते देखा, देखा जगत पसारा।
पर तेरे दर्शन बिन सूखी हृदय स्रोतों की धारा॥४॥

एक बार फिर घूम घाम कर तव मन्दिर में आया।
पर अभाग्यवश अबलों दर्शन नहीं पाया॥५॥

कोप छाड़, स्निग्धभाव धर, तनिक दिखादो झांकी।
वही वही अनुपम अति सुन्दर, सुललित चितवन बांकी॥६॥

"रसिक"

———

धर्म यात्रा का प्रथम पथ

(लेखक श्री० पं० युधिष्ठिर जी विद्यालंकार आर्योपदेशक)

वैदिक धर्म का पुनरुद्धार करने वाले महर्षि दयानन्द का ऋण एक बहुत बड़ा ऋण है जिसके उतारने के लिए प्रत्येक आर्य्य भाई को अपनी बहुत सी सम्पत्ति और शक्ति अर्पण करनी चाहिए। किन्तु जिस आर्य पुत्र को सच्ची तपस्विनी माता, वैदिक धर्म की निष्काम सेवा करने वाला पिता और जिस सौभाग्यशील को आर्यसमाज और आर्यवर्त्त के सर्व मान्य नेता महात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज (भूतपूर्व महात्मा मुन्शीराम जी) आचार्य के आधीन अद्वितीय परम-पवित्र संस्था गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी में शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ हो और जो आर्यपुत्र आर्यसमाज एवं आर्य्यावर्त्त की आंखों के तारों और लाडले लड़कों में से एक हो, उस पर तो अपना तन मन धन जीवन प्राण एवं सब कुछ इस ऋण को उतारने के लिए ही न्यौछावर कर देना चाहिए। इस ऋण को उतारने के लिए और इसी कर्त्तव्य कर्म का परिपालन करने के लिए मैंने गुरुकुल कांगड़ी की स्वामिनी आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के आधीन होकर आर्योपदेशक बनना अपनी हार्दिक अभिलाषा पूर्वक आवश्यक समझा है।

इस आवश्यक कार्य की पूर्त्ति के लिए लिए जो यात्रा करनी प्रारंभ की है उस का नाम धर्म यात्रा रखता हूं। उस धर्म-यात्रा का यात्री होकर उसके कांटों ऊंचे नीच स्थानों तथा विषमताओं को जड़ समेत उखाड़ने के लिए मैं प्रतिक्षण सत्य-प्रेम रूपी परम पवित्र और तीव्रता शस्त्र का भिखारी हूं। यह सत्य प्रेम मुझे कहां से प्राप्त हो?—सत्य प्रेम पीयूषपयोनिधि-परमात्मा से, सत्य प्रेम प्रचारक महर्षि दयानन्द के आदर्श जीवन से वा लेखों से और वैदिक धर्म से पूर्ण प्रेम करने वाले आर्य भाइयों तथा आर्य बहिनों के सुजीवनों वा उपदेशों से ही मुझे यथेष्ट सत्य प्रेम की प्राप्ति हुआ करेगी। सत्य प्रेम को पाकर अपने कर्त्तव्य कर्म के प्रत्येक अंश का स्वागत करने के लिए पूर्ण प्रयत्न कर सकूंगा चाहे उस के साथ कितने ही विघ्न संकट और दुःख क्यों न चिपटे हुए हों। क्योंकि मुझे विश्वास है कि मैं अपने कर्त्तव्य कर्म के साथ जितने सत्य प्रेम से चिपटता जाऊंगा, उस के साथ पहले से चिपटे हुए विघ्नों को उतना ही उतारता भी जाऊंगा।

मेरे पूजनीय और प्यारे आर्य्य भाइयो! आपकी सेवा करने के लिए सब से पहले मुझे फिरोजपुर के जिले में वैदिक धर्म का प्रचार करने की आज्ञा प्राप्त हुई। अतएव मेरी धर्मयात्रा का प्रथम पथ जिला फिरोजपुर ही है। इस प्रथम पथ का पथिक होकर और इस जिले के आर्य लोगों की हृदयमयी संगति पाकर मैंने जो बड़ी बड़ी शिक्षायें प्राप्त की और जिन छोटी २ सेवाओं को करने का प्रयत्न किया उनका संक्षिप्त वर्णन आप की सेवा में उपस्थित करता हूं। इस वर्णन में स्थान का निर्देश केवल उसी अवस्था में करूंगा जब उसकी आवश्यकता होगी।

(१) इस जिले में जाकर मुझे यह शिक्षा प्राप्त हुई कि आर्यसमाज की दो पार्टियों का एक होना अति कठिन है। अपने जीवन से प्रेम की वर्षा करने वाली और वैदिक धर्म की निष्कामभाव वा सात्विक भाव से सेवा करने वाली कई विशेष प्रभावशाली व्यक्तियां मिल कर ही इस कार्य में सफलता प्राप्त कर सकेंगी। ऐसी व्यक्तियों की सामान्य चेष्टा पर्याप्त न होगी किन्तु इन के दीर्घोद्योग से ही साध्य की सिद्धि हो होसकेगी।

(२) फिरोजपुर छावनी में इधर बहुत से भाइयों को प्रति दिन प्रातः सायं हवन करने की आवश्यकता समझाने का प्रयत्न करता था और उधर प्रति दिन प्रातः सायं और दुपहर शौचशालाओं (टट्टियों) के समीप ईंटों के दीवारों से बने हुए बड़े २ कुंडों में अग्नि प्रदीप्त करके उसकी ज्वालाओं में शौच की सामग्री से आहुति दी जाती थी ताकि शौच की सारी दुर्गन्ध वायु में फैल कर सब भाई बहिनों को थोड़ी २ प्राप्त हो सके। यह कार्य सरकार की विशेष आज्ञा से हो रहा था। एक ओर मैं मांस भक्षण का परित्याग करने के लिए निवेदन करता था और दूसरी ओर मार्ग में चलते हुए प्रतिदिन देखा करता था कि कई बैल गाड़ियें गोमांस से लदी हुई आरही हैं और गो मांस आदि एक अलग मार्केट भी बनी हुई है जहां से छावनी के साथ हत्यारे लोग बड़ी सुगमता से गोमांस का भक्षण कर सकें। यह कार्य भी सरकार की आज्ञा को पालने के लिए ही होरहा था। इन दोनों अधर्म पूर्ण कर्मों को हटाने के लिए सरकार की सेवा में निवेदन करने के विषय में मैंने आर्यभाइयों से प्रेरणा की, पर उन्होंने इस प्रेरणा पर ध्यान देकर भी इस के अनुसार कर्म करने का प्रयत्न नहीं किया।

(३) विद्यार्थियों को शौकीनी, लड़ाई झगड़ा, झूठ आदि छोड़ने और उच्च व्यायाम ब्रह्मचर्य के नियमों का पालन करने के विषय में जो कुछ कहा गया उसको उन्होंने केवल वाणी से ही स्वीकार नहीं किया किन्तु उस के अनुसार कर्म भी करना प्रारम्भ कर दिया इन विचारों को जैसी शिक्षा दी जाती है वैसे ही बन जाते हैं। केवल न्यूनता यही है कि अच्छे सुचरित्र शिक्षक नहीं मिलते। वे तभी मिलेंगे जब कि वैदिक धर्म तथा सदाचार का प्रचार अधिकाधिक बढ़ेगा और गुरुकुलों की प्राचीन परम पावन-पद्धति के अनुकूल शिक्षा दी जावेगी।

क्रमशः

श्रद्धा

सहयोग बिना असहयोग

निरर्थक है--

कलकत्ते से मेरा विचार धर्म प्रचारार्थ मद्रास प्रान्त की यात्रा का था। कलकत्ता में बराबर व्याख्यानों तथा निजू बात चीत द्वारा ब्रह्मचर्य तथा वैदिक वर्णाश्रम व्यवस्था का प्रचार करते तथा स्पेशल कांग्रेस के विचारों में भाग लेते हुए मैं ऐसा अस्वस्थ हो गया कि मुझे कलकत्ते से सीधा गुरुकुल लौटना पड़ा। जीवन शेष है तो मद्रास को फिर कभी अनुकूल ऋतु में जाऊंगा।

मैं ने कलकत्ता जाते हुए दो प्रस्ताव कांग्रेस की स्वागत कारिणी सभा के पास भेजे थे, जिन का विस्तृत वर्णन ३० श्रावण के "श्रद्धा" पत्र में करचुका हूं। प्रथम प्रस्ताव यह था कि भारत वर्ष के प्रत्येक जिले में "पंचायती न्यायालय" स्थापित करने चाहिएं। जो सब दीवानी तथा साम्प्रदायिक झगड़ों का का निबटारा किया करें।

मेरे प्रस्ताव को मेरे शब्दों में तो स्वागत कारिणी सभा में नहीं रक्खा प्रत्युत अपने प्रस्ताव के साथ उसे स्थान दिया। महात्मा गांधी के प्रस्ताव का भी वह एक भाग बन गया। मेरा प्रस्ताव यह था कि चाहे वकील वकालत छोड़ें वा न छोड़ें, परन्तु पंचायती न्यायालय अवश्य स्थापित हों। महात्मा गांधी का प्रस्ताव यह है कि वकील शनैः शनैः वकालत छोड़ते जायें और ज्यों ज्यों वे वकालत छोड़ते जायं त्यों त्यों उनकी सहायता से पंचायती न्यायालय स्थापित होतेजावें। मेरा प्रस्ताव अपने भाइयों के साथ सहयोग का था। उस में असहयोग की गंध भी न थी। उस में हिंसा का भाव भी न था। महात्मा गांधी 'बायकाट' (boycott) शब्द के विरुद्ध इस लिए थे कि उस से मानसिक हिंसा की गंध आती है। परन्तु पंचायती अदालतों सम्बन्धी प्रस्ताव में उन्होंने राजीनामा करते हुए 'बायकाट' शब्द का प्रयोग मान लिया। प्रस्ताव का (d) भाग इस प्रकार है:—

"gradual *boycott* of British couts by lawyers and litiguntp and establishment of private arbitration courts by their aid for the settlement of private disputes"

मेरा प्रस्ताव केवल इतना था:—"इस कांग्रेस की सम्मति में भारत वर्ष के प्रत्येक जिले के सदर मुकाम पर एक पंचायती न्यायालय स्थापित करना चाहिए जिस में हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, पारसी इत्यादि, सब सम्प्रदायों के प्रतिनिधि मिलकर आपस के सब झगड़ों का निबटारा किया करें।" मेरे प्रस्ताव में एक तो मानसिक हिंसा का गन्ध तक नहीं है और दूसरे उस पर अमल होने से जहां वकालत पेशा सज्जन बिना हमारे प्रयत्न के वकालत छोड़ने के लिए बाधित हो जाते वहां बृटिश सरकार के भी शीघ्र होश ठिकाने आजाते। अस्तु, अब तो कांग्रेस ने जो प्रस्ताव पास कर दिया वही ठीक है। परन्तु जो समझौता 'निखिल भारतीय कांग्रेस कमिटि' (All India Congress commitee) के १० सेप्टेम्बर वाले अधिवेशन में मालवीय जी तथा गांधी जी में हुआ है उस के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार है कि कांग्रेस में रहते हुए भी कांग्रेस के प्रस्ताव के विरुद्ध काम करता रहे। तब जो लोग, मेरी तरह, यह समझते हों कि गान्धी जी का प्रस्ताव हिंसा-त्मक है, वे बिना वकीलों के वकालत छोड़ने की प्रतीक्षा किए ही पंचायती अदालतों की स्थापना का कार्य आरम्भ करदें तो उनका ऐसा करना उचित ही है।

मेरा दूसरा प्रस्ताव यह था कि जिन जातियों को अविद्या वश अछूत कहा जाता है उनके साथ सामाजिक व्यवहार उसी प्रकार का आरम्भ हो जाना चाहिए जैसा कि अन्य जातियों के साथ होता है। इस पर कोई ध्यान ही नहीं दिया गया। महात्मा गांधी जी ने भी इस समय यही नीति ठीक समझी कि इस प्रश्न को न हिलाया जाय। परन्तु ये बड़ा भारी भूल थी। विरोधिनी जाति के साथ पूरा असहयोग तभी हो सक्ता है जब कि आपस में पूरा सहयोग हो। कांग्रेस की बागडोर जिन नेताओं के हाथ में, महात्मा गान्धी की सहायता से, आगई है उन्हें समझलेना चाहिए कि जब तक वे अपने ७ करोड़ भाइयों को सन्तुष्ट करके अपना न लेंगे तबतक उनका असहयोग सर्वथा कृतकार्य न होगा। तिलकमहाराज ने अपने जीवन काल में ही कह दिया था कि यदि अछूतों के साथ भोजन करने से मातृभूमि का कल्याण होता हो तो वह उनके साथ भोजन करने को तय्यार हैं। तिलकमहाराज '*यदि*' का प्रयोग न करके अछूतों के सह भोज में सम्मिलित हो गए होते तो आज उन जातियों की ओर से कांग्रेस का इतना विरोध न दिखाई देता जिसे आज हमलोग देख रहे हैं। गांधी महाराज १२ महीनों के अन्दर स्वराज्य दिलाने के यत्न में लग जावें—ठीक है। उन्हें बृटिश गवर्नमेन्ट को शिथिल गात्र (paralyze) कर के स्वराज्य प्राप्त करने का अवसर पूरा दिया जाय; परन्तु उनके साथ ही उन लोगों को, जो अभिमानी ऊंची जातियों के वर्ताव को घृणित समझते हैं, चाहिए कि अपने ७ करोड़ भाइयों को अपनाने के काम में लग जावें। वह समय अब नहीं रहा जब इन भाइयों को केवल एक फर्श पर बैठने का अधिकार देने से वे अपनाए जा सकते थे। इस समय तो तभी काम चलेगा। जब उनको सब समाधिकार दिए जावें।

देश के सामने ये दो बड़े भारी काम हैं। तीसरा काम जाति की शिक्षा अपने हाथों में लेने का है। महात्मागान्धी के प्रस्ताव में तीन प्रकार के शिक्षालयों से छात्र निकाल लेना है:—(१) गवर्नमेन्ट के शिक्षालय, (२) गवर्नमेन्ट से सहायता लेने वाले शिक्षालय, (३) गवर्नमेन्ट के अधीन शिक्षालय। इन में से शनैः शनैः जाति की सन्तान को निकालने का शायद यह मतलब है कि पहले जातीय (National) स्कूल और कालिज स्थापित कर लिए जाय और पीछे अपनी सन्तान को अलग किया जाय। परन्तु यह भूल है। हमारे जातीय शिक्षालय तो इस समय भी चल रहे हैं। पहले पंजाब को लीजिए। लाहौर में दयानन्द एंग्लो वैदिक कालेज, दयालसिंह कालेज, सनातन धर्म सभा कालेज, इसलामिया कालेज और इन से सम्बन्धित सारे स्कूल, तथा रावलपिन्डी और जालन्धर के डी.ए.वी. कालिज तथा सारे पंजाब के प्राइवेट और एडेड-स्कूल्ज—ये सब जातीय शिक्षालय होने का दावा कर के ही सर्व साधारण से सहायता पाते रहे है। जनता की मेहनत की कमाई से ये शिक्षालय वर्तमान अवस्था को पहुंचे हैं। इन सब के सचालकों को बाधित किया जाय कि गवर्नमेन्ट से यदि कोई सहायता लेते हों तो एक दम लेना छोड़दें और युनिवर्सिटी को लिखदें कि उसके साथ अब उनका कोई सम्बन्ध नहीं। ऐसा करने से सात दिनों के अन्दर ही आपके जातीय शिक्षालय गवर्नमेन्ट और मिशनरियों के शिक्षालयों से दुगने नहीं तो डेवढ़े अवश्य हो जावेंगे। इन में से जिस संस्था के सचालक जाति का कहना न

मानें उन्हीं को सहायता देना सर्वथा बन्द करदें, और उनके शिक्षालयों में लड़के लड़कियां उठा लें। तब गवर्नमेन्ट स्कूलों और कालिजों के बेंच खाली हो जावेंगे। फिर हमारे स्कूलों और कालिजों में पाठविधि भी अपने अनुकूल बनाई जा सकेगी।

कांग्रेस के प्रधान पद का अनुचित लाभ उठाते हुए लाला लाजपतराय ने, उस समय जब कि उनका कोई उत्तर न दे सकता था, कह दिया कि शिक्षा गवर्नमेन्ट का काम है, कोई भी अपनी सन्तान को सरकारी शिक्षालयों से मत उठाना और कि वर्तमान गुरुकुल और प्राइवेट कालेज या स्कूल कोई जातीय नहीं। उन्होंने अभिमान पूर्वक यह भी कहा कि जातीय शिक्षा का मर्म उनके बिना कोई समझा नहीं। मेरी सम्मति में लाला जी स्वयं नहीं समझ सके कि भारत वर्ष के लिए जातीय शिक्षा क्या है। जिस समय जिस के संसर्ग में रहते हैं उसी का रंग उन पर चढ़ जाता है। वह अभी अमेरिका से आए हैं। बरसों वहां रहते हुए युरप और अमेरिका के भोग प्रधान देशों के रंग से वह रंगे गए हैं। वह भूल जाते हैं कि इस देश का जीवन ही तप और निस्स्वार्थता में रहा है और रहेगा। शिक्षा चाहे मुसल्मानी शिक्षालय में हो, चाहे हिन्दू या ईसाई शिक्षालय, में आवश्यक यह है कि गुरु शिष्य का पिता पुत्र वाला सम्बन्ध हो तथा उनके जीवन तपमय हों। इस समय विशेष आवश्यकता है जब कि शताब्दियों की दासता की सांकल तोड़ कर जाति स्वतन्त्र होना चाहती है।

मेरा मत यह है कि प्राइवेट और एडेड सब स्कूलों और कालेजों को एक दम युनिवर्सिटी की दासता से अलग कर लेना चाहिए। एक तो विदेशियों की मानसिक दासता से हमारी सन्तान मुक्त हो ही जायगी और फिर किसी फ़र्क-आनमन का हौसला न पड़ेगा कि दो घन्टों की मोहलत देकर, परीक्षा में न बैठने देने की धमकी सुना, हमारे शिक्षालयों के प्रिन्सिपलों को बाधित करे कि वे अपने शिष्यों को निरपराध जानते हुए भी, उनको दण्ड के लिए पेश करें, और न केवल स्वयं अपमानित हों प्रत्युत अपने शिष्यों को भी अपमानित कराएं। आज इतना ही काफ़ी है, शेष फिर सही। अन्त में फिर इसी पर बल दूंगा कि अपने भाइयों के साथ सहयोग करते हुए ही मातृभूमि का तिरस्कार करने वालों के साथ असहयोग फलीभूत हो सकता है।

कन्या गुरुकुल की तय्यारी

कन्या गुरुकुल का सदेश देर से सुनाया नहीं गया था। कारण यह कि सुनाने का कुछ था नहीं। बदरपुर से आगे, मथुरा की सड़क पर भूमि का सौदा होगया था, परन्तु उसकी रजिस्टरी कठिन थी। पंजाब का कानून है कि कोई कृषिकार भी अपनी भूमि अकृषिकार के पास नहीं बेच सके जब तक डिपुटी कमिश्नर आज्ञा न दें। उस आज्ञा की प्राप्ति में महीनों लग गए। अब समाचार मिल गया है कि लग भग २८० बीघे भूमि की रजिस्टरी प्रधान तथा मन्त्री सार्वदेशिक सभा के नाम हो गई है और भूमि पर 'कब्ज़ा' हो गया है। इमारत भी शीघ्र शुरू होगी केवल नक़शों की अन्तिम स्वीकृति बाकी है। ईंटों का भट्ठा लगाने का प्रबन्ध हो रहा है। भूमि के मूल्य तथा हदबन्दी पर ५,०००) व्यय होगया। ५०००) शेष सभा के हाथ में है। ४०,०००) इमारत के लिए सेठ रघुमल जी और देंगे। परन्तु इमारत के लिए और भी धन चाहिए। जिन महाशयों ने कन्या गुरुकुल के लिए धन देने की प्रतिज्ञाएं की थीं उन्हें अब अपना प्रतिज्ञा किया धन शीघ्र भेज देना चाहिए। बालकों के गुरुकुल बिना पर्याप्त इमारत बनवाए ही प्रायः आरम्भ हो जाते हैं, परन्तु बालिकाओं का शिक्षालय खोलने से पहले सब उपयोगी इमारतें बन जाय तभी ठीक काम हो सकेगा। सब धन लाला नारायणदत्त जी मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, एस्प्लेनेड रोड (esplanade Road) देहली के पास भेजिए और जिस काम के लिए दान दिया हो उसका स्पष्ट पता लिख दीजिए।

दो छात्र वृत्तियां

'श्रद्धा' के गतांक में विज्ञापन निकला है कि एक दानी महोदय १ बालक १ बालिका को अपने व्यय पर गुरुकुल में प्रविष्ट कराना चाहते हैं। अब उन्होंने कह दिया है कि इस समय दो बालक ले लिए जायं। जब कन्या गुरुकुल खुल जायगा तब कन्या के प्रविष्ट कराने की आज्ञा देंगे। पत्र मेरे नाम आने चाहिए।

श्रद्धानन्द सन्यासी

—:०:—

सहयोगी प्रताप दैनिक रूप में:- हमें यह लिखते हुए अत्यन्त हर्ष है कि कानपुर के सहयोगी प्रताप, अपने साप्ताहिक रूप के साथ, इस विजयादशमी (२२ अक्टूबर) से शीघ्र ही दैनिकरूप में भी प्रकाशित होगा। अभ्युदय के आकार के ८ पृष्ट रहेंगे और वार्षिक मूल्य १८) होगा। राष्ट्रभाषा हिन्दी में इस प्रकार उच्च कोटि के दैनिक पत्रों की संख्या को बढ़ते देख किसे प्रसन्नता न होगी। साप्ताहिक प्रताप ने अपनी निर्भीक और स्पष्ट नीति से राष्ट्रीय दल के सिद्धान्तों के प्रचार में बहुत सहायता दी है। इस के लेखों ने देहातों के अशिक्षितों में एक विशेष जागृति उत्पन्न करदी है। हमें पूर्ण आशा है कि दैनिक-प्रताप की भी यही नीति रहेगी। राष्ट्र प्रेमियों को शीघ्र ही ग्राहक बन प्रकाशकों का उत्साह बढ़ाना चाहिए। वी० पी० भेजने का नियम नहीं है।

सुफ़ेद चमड़ी का भार मि० एफ़. ओ. ब्रायन ने "White shadows in the South seas" पुस्तक लिखी है। आफ्रिका के एक प्रदेश का हाल लिखता हुआ वह कहता है कि—"पहिले यहां १६०००० मार्केसैन्स (वहां के आदिम निवासी) थे पर अब केवल २,१०० ही रह गए हैं।" पुस्तककर्ता इस ह्रास का कारण ईसाई मत के प्रचार के साथ श्वेतांगो का सम्पर्क होना बताता है। यह कहता है कि इसी कारण उनमें से खेलने कूदने और स्वच्छन्द विहार करने की भी स्वाभाविक बुद्धि का सर्वथा नाश हो गया है। पुराने रीति-रिवाजों को छोड़ने के लिए बाधित किये जाने के कारण उनका आध्यात्मिक सत्व सर्वथा नष्ट हो गया है। लेखक के शब्दों में वे अब केवल "प्रसन्नता शून्य मैशीन या "जीवन से निराश" मनुष्यों की तरह रह गए हैं। इसी सुफ़ेद चमड़ी के भार के नीचे दबाये जाते हुए हम भारतीयों का भी सत्व क्षीण हो रहा है।

—:०:—

आर्यसमाजिक जगत्

गुरुकुल वृन्दावन के आचार्य्य

ज्ञात हुआ है कि प्रो० ज्वालाप्रसाद जी के जुदा हो जाने पर आर्यप्रतिनिधि सभा युक्त प्रान्त की अन्तरंग-सभा ने श्रीयुत पं० रामदेव जी बी.ए.एम.आर.ए.एस. को गुरुकुल वृन्दावन का आचार्य चुना है। अभी तक यह ज्ञात नहीं हुआ कि उन्होंने स्वीकार किया या नहीं परन्तु इस में सन्देह नहीं कि गुरुकुल वृन्दावन को प० रामदेव जी से योग्यतर आचार्य मिलना कठिन है। आपकी विद्वत्ता, धर्म भक्ति और अनुभव शालिता से यदि गुरुकुल वृन्दावन लाभ उठा सकेगा तो हम युक्तप्रान्त को बधाई देंगे। परन्तु प्रश्न यह है कि क्या पं० रामदेव जी अपने उस सुधार के जबर्दस्त कार्य को अधूरा छोड़ जायंगे, जो उन्होंने पंजाब की आर्य्यसमाजों में शुरू किया है? आशा है, शीघ्र ही इसका उत्तर मिल जायगा। जब तक पं० रामदेव जी वृन्दावन पहुंचे तब तक के लिये वहां के स्नातक पं० द्विजेन्द्र और पं० धर्मेन्द्र ने कार्य सम्भाल लिया है।

• कन्या गुरुकुल, काशी

सहयोगी आर्य्यमित्र ने संस्था की रक्षा के लिये पिछले दो सालों में बहुत उद्योग किया है। उसी उद्योग में उसने काशी के कन्या गुरुकुल के सम्बन्ध में भी टिप्पणी की है। मित्र का आशय यह है कि कोई संस्था किसी प्रान्त में ऐसी न होनी चाहिये जो संगठन के साथ सम्बन्ध न रखती हो। संसार का अनुभव सिद्ध करता है कि जहां एक ओर हरेक समाज में भिन्न २ व्यक्तियों को जीने और फलने फूलने का पूरा अधिकार होना चाहिये, वहां हरेक व्यक्ति और व्यक्ति समूहों को तितर बितर होने से या परस्पर टकराने से बचाने के लिये उनका कोई एक केन्द्र भी होना चाहिये। आर्यसमाज में बीसियों प्रकार की संस्थाओं का रहना उपयोगी होने पर उनका एक केन्द्र की ओर बंधे रहना भी आवश्यक है। मित्र में जो समाचार छपे हैं, और कन्या गुरुकुल कमेटी के अधिकारी की ओर से जो सूचना निकली है, उनमें कुछ परस्पर विरोध पाया जाता है। दूर बैठने वालों को एक बात पर पहुंचने के लिये अभी काफी सामग्री उपस्थित नहीं है-तोभी इतना हम अवश्य कह सकते हैं कि कन्या गुरुकुल का किसी सम्बन्ध से चाहे वह कैसा ही शिथिल हो-सभा से बंधे रहना गुरुकुल के लिये लाभदायक होगा।

मुसाफिर आगरा पर

नाराजगी

इन पंक्तियों के लेखक की आर्यसमाज सम्बन्धी नीति आगरे के डा० लक्ष्मीदत्त जी की नीति से प्रायः सदा ही भिन्न रही है। कई बार पत्रों में उसे मुसाफिर के साथ रुद्र युद्ध में उतरना पड़ा है। इस लिए यह समझाना उचित न होगा कि लेखक को डा० लक्ष्मीदत्त के लिए कोई खास पक्षपात है। यह होते हुए भी मेरी सम्मति है कि इस समय डा० लक्ष्मीदत्त के राजनीतिक क्षेत्र में उतर आने पर उन पर जो आक्षेप हो रहे हैं, वह बिल्कुल निर्मूल हैं। दोनों ही काम आवश्यक हैं—दोनों ही में पाप नहीं। मैं समझता हूं कि राजनीति में अनाप शनाप टांग अड़ाने और दूसरी ओर पता रखने की अपेक्षा एक ओर पड़ जाना बहुत उत्तम है। मुसाफिर के डा० लक्ष्मीदत्त सम्पादक हैं—जहां तक जनता को पता है मालिक भी आप हैं। ऐसी दशा में यदि मुसाफिर उनकी प्रतिच्छाया होतो कोई हानि नहीं। कोई व्यक्ति किसी क्षेत्र में काम करे—उसका सर्वोत्तम निश्चायक वह स्वयं है। ऐसे मौकों से काम लेकर पुराने फफोले फोड़ना केवल अपने जीवन क्षेत्र को विषैला और कड़वा बनाना है। पूर्व और पश्चिम—दोनों ओर की तलवार के हाथ मारने से खुले दिल से एक ओर हाथ मारना कुछ कम गुण युक्त नहीं है।

एक अनुदारता

यहां पर एक और प्रकार की अनुदारता की ओर ध्यान खेंच देना भी अनावश्यक न होगा। जब आर्यसमाज के किसी पुराने सेवक के चित्त में सिद्धान्त सम्बन्धी कोई शंका उत्पन्न होती है तब हम लोगों की टिप्पणियां ऐसी होती हैं कि यह सठिया गया है। इसे नए गुरु बनने का शौक चढ़ गया है। इस ने आर्यसमाज से आगे बढ़ कर कृतघ्नता करदी है, और इज्जत पाकर समाज को लात मार दी है। प्रश्न यह है कि क्या ईमान्दारी का ठेका दो चार के पास है? क्या अपने सन्देह या मतभेद का प्रकट करना कोई पाप है? क्या आर्य सिद्धान्तों में सन्देह रखते हुए या उनकी ओर से बिल्कुल आलामी रहते हुए भी सिद्धान्तों का दम भरते रहने की अपेक्षा अपने सन्देह को साफतौर से प्रकट कर देना कहीं उत्कृष्ट कार्य नहीं है? ऐसे प्रश्न हैं जिन परहमें गम्भीरता से विचार करना चाहिये।

चकरौते में धर्म विचार

पिछले सप्ताह चकरौता आर्यसमाज के मंत्री का गुरुकुल में तार आया कि चकरौते में शास्त्रार्थ की सम्भावना है। पण्डित भेजो। गुरुकुल से उसी समय पं० दीनानाथ सिद्धान्तालंकार के साथ ब्र० यशपाल और ब्र० आत्मदेव को रवाना किया गया। वहां जा कर देखा तो सनातनी पं० छज्जूराम ने आर्यपुरुषों का नाकों दम कर रखा है क्यों कि अभी आर्यसमाज का कोई पण्डित नहीं आया था। गुरुकुल मण्डली के पहुंचते ही शास्त्रार्थ का समय निश्चित होने लगा। कुछ समय का आगा पीछा होने पर पं० छज्जूराम जी तय्यार हुए और मृतक श्राद्ध पर शास्त्रार्थ हुआ। आर्यसमाज का अपूर्व प्रभाव पड़ा। विशेषतया इस बात का कि जहां प० छज्जूराम जी ने अपनी युक्तियों की पुष्टि कड़वी भाषा से की वहां ब्र० आत्मदेव ने शान्ति से काम लेते हुए केवल प्रमाणों और युक्तियों से काम लिया। निष्पक्ष-पात जनता ने वैदिक धर्म के महत्व को खूब भली प्रकार समझ लिया।

इन्द्र

———

विचार तरंग

योरोप का युद्ध तथा भारतीय दुष्काल

(गतांक से आगे)

(१४)

यह बड़े आश्चर्य से कहा जाता है कि इस युद्ध में कहीं २ स्त्रियां भी मैशीनगनें चलाती हैं और एक बार जर्मनी के स्कूलों के लड़के भी मैदान में आकर एक लड़ाई में लड़े थे। वे इस पर बड़ा अचम्भा करते हैं। किन्तु उन्हें मालूम नहीं कि भारतीय युद्ध में कुछ और कई नहीं किन्तु सभी स्त्रियें और बालक (जैसे कि सभी पुरुष) लड़ाई कर रहे थे—जी जान से प्रतिक्षण लड़ाई कर रहे थे। उस समय देश के जीवित प्राणियों-पुरुषों स्त्रियों, और यहां तक पशुओं-में से कोई भी ऐसा न था (छोटे बच्चे से लेकर बड़े बुड्ढे तक) जो कि इस दुःख दायी शत्रु के क्रूर प्रहारों का शिकार न हो रहा हो। भारतीय युद्ध में हर एक ही प्राणी निर्दयता से बध किया जा रहा था। इस लिये यह कोई बड़ी चिन्ता की बात या अभूत पूर्व क्रूरता का कृत्य नहीं कि यदि आज इस योरोप के युद्ध में लंडन या अन्य स्थान पर कुछ स्त्रियें या बालक ऊपर जेपलेनों से फेंके बमों से अचानक जख़्मी हो जाते हों या मर जाते हैं। उस युद्ध को देखो जिस में कि भारत के नौजवान जैसे मैदान में धराशायी होते थे वैसे बेचारे बुड्ढे, स्त्रियें और बालक भी मर कर गिरते थे—शत्रु के चारो तरफ़ छोड़े हुवे प्रखर तीर जहां युवाओं तथा अन्य सब प्राणधारिओं को प्राणान्त घायल करते थे वहां वे बिना किसी झिझक के गर्भ में अज्ञात बालक के भी कोमल हृदय को जा चीरते थे। जब अकेली माता निर्जीव होकर पड़ जाती थी तो स्तन मुख में लिये उस का दो मास का बच्चा भी कुछ काल के लिये व्यर्थ आशा में इन्हें मुग्धता से हिला कर माता की उस लकड़ाई हुई छाती पर ही वह नींद सो जाता था जिस से कि फिर कभी उठना नहीं होता।

इस प्रकार उस शत्रु के लिये प्रत्येक ही भारतवासी (चाहें वह बालक हो, वृद्ध या गर्भस्थ) एक ही समान वैरी थे, और एक ही समान उसकी क्रूरताओं के शिकार पात्र हो रहे थे।

(१५)

इंग्लैंड में आज Conscription है। हर एक समर्थ पुरुष का नाम जबर्दस्ती लिखा जाता है और उसे लड़ने के लिये समुद्र पार किसी युद्ध क्षेत्र में जाना होता है। और जो ऐसे लोग अपनी जान जाने से डरते हैं वे किसी डाक्टर के पास जा कर उस से अपनी लड़ने में अशक्तता का प्रमाण पत्र किसी तरह ले सकते हैं और लेते हैं या किसी अन्य बहाने से बच रहते हैं।

किन्तु भारतीय युद्ध में आप ही आप बड़ा Conscription था। बिना कोई ऐसा कानून बने या सरकारी आज्ञा निकले हर एक ही भारतीय (समर्थ हो या असमर्थ) लड़ने को बाधित था—उसे अवश्य लड़ना था, 'जीतना था या मरना था'। और उस युद्ध के सिपाहिओं को लड़ने के लिये किसी सात समुद्र पार रण भूमि में न पहुंचना होता था किन्तु तब इस देश का एक २ घर ही युद्ध भूमि बना हुआ था। उन्हें मरने के लिये किसी अन्य रण भूमि ढूंढने का कष्ट न करना होता था किन्तु किसी भी जगह एक भारतीय बैठा हुवा, लेटा हुवा या फिरता हुवा या किसी भी अन्य दशा में और चाहे वह किसी सुदूर सुनसान गहन जंगल में जा छिपे या बीस तालों के अन्दर किसी अन्धेरी कोठड़ी में बन्द हो जाय वह शत्रु के हमले से किसी तरह नहीं बच सकता था। इस घातकी शत्रु के जादू अस्त्र उसी स्थान पर जा पहुंचते थे और उस का प्राण लेकर शून्य में सड़ती हुई लाश छोड़ जाते थे। किसी सिविल सर्जन के सर्टिफिकेट कि "यह रोगी है या अशक्त है" उस की जान नहीं बचा सकते थे।

ऐसा था वह भारतीय युद्ध जिसमें कि किसी विशेष युद्ध की जगह को नहीं किन्तु भारत के घर घर को इस प्रकार श्मशान भूमि बना दिया था।

(१६)

आप जानते हैं कि वर्तमान युद्ध में एक बार एक बेल्जियन लोभ में आकर अपने राजा को शत्रुओं के हाथ में पकड़ाने लगा था। इस विश्वासघात के घोर पाप के लिये वह क्यों प्रलोभित हुवा था ?। इस लिये कि वह 'धन का भूखा था' (चाहें प्रतिदिन कई बार पेट में भरने के लिये उस के पास बहुत पर्याप्त था।) किन्तु यह और ऐसी घटनायें उस के लिये कुछ भी नहीं है जिसे कि यह मालूम हो कि भारत में एक ऐसा युद्ध हुवा था जिस में कि हर एक प्राणी 'साधारण भोजन के लिये भूखा था' भूखों मर रहा था, कि उस कठिन समय में एक को अपनी असहाय क्षुधा को किसी तरह मिटाने के लिये तड़फड़ाती हुई अपने पुत्र को आग में भून कर खाने को तय्यार देखी गयी थी, कि उस समय भूख के मारे बेसुध बहुत से लोग क्षुधा की असहनीय व्याकुलता में दूसरे की की हुई कै (वमन) और थूकी हुई बेर की गुठलिओं तक चाटने लिये सस्पृह दौड़ते फिरते थे। क्या पेट के लिये इस से भी अधिक घृणित और घोर कृत्य कभी किये जा सकते हैं ? क्या सम्पूर्ण संसार में कभी किसी अन्य शत्रु ने भी किसी को ऐसे नाच नचाये हैं—ऐसा बेचैन कर कर के तड़फाया है ?।

(१७)

ओ ! संसार के प्रभावशाली जनहितवादियो ! क्या तुम्हारा दिल भारत में होते हुवे उन दारुण तम दृश्यों को देख कर भी कभी पसीजा था ?। ऐ शान्तिप्रियो ! जो कि आज शान्ति के लिये चिल्ला रहे हो और मित्र दल तथा जर्मनी में किसी तरह संधि हो जाने के प्रबल अभिलाषी हो ! क्या तुम्हारे मन ने उन दिनों भी कभी भारत और उस के उस सर्व संहारक शत्रु के बीच किसी तरह की सुलह होजाने की आवश्यकता भी अनुभव की थी ?

(क्रमशः)

धर्मेन्दु

गुरुकुल जगत्

"गुरुकुल मटिण्डू समाचार"

खाण्डे पर आक्रमण

खाण्डा विजित

सेहरी कब्जे में

दहिया-गोत्र का संगठन

जैसा कि पहिले लिखा जा चुका है कि खाण्डे में १२ गांव की चोपाल है इसी लिये गुरुकुल की ओर से खाण्डे को केन्द्र बना कर वहां तथा आस पास के गांवों में वैदिक धर्म का प्रचार करना आरम्भ किया। खाण्डे में सनातनी ब्राह्मणों ने जब जाटों को अपने हाथ से निकलते हुवे देखा तो मुन्शीराम को शास्त्रार्थ के वास्ते बुलाया (वह मुन्शीराम जो कि पहिले आर्यप्रतिनिधिसभा का उपदेशक था पर बदचलनी के कारण उपदेशकी पद से पृथक किया गया था अब फीस खोर सनातनी उपदेशक बन गया है) पहिले ४,५ दिन उसने खाण्डे में खूब हल्ला किया लेकिन गुरुकुल की ओर से जब पं० निरञ्जनदेव जी विद्यालंकार, पं० शान्तीस्वरूप जी तथा पं० रविदत्त जी गये तो गुरुकुल के पण्डितों के आने का समाचार सुन कर उसके होश उड़गये और शास्त्रार्थ वास्ते मुकाबले पर न आया और अपना बोरिया बिस्तर उठा कर चलता बना। उसका जाटों पर अच्छा प्रभाव पड़ा उपरोक्त तीनों पण्डितों ने खूब प्रचार किया, थोड़े घरों को छोड़ प्रायः सबने यज्ञो पवीत लेलिये। उधर सेहरी से भी गुरुकुल में मांग आई। खाण्डे वालों ने गुरुकुल के सब ब्रह्मचारियों को दो दिन भोजन खिलाया उधर खाण्डे के उत्सव तथा आसपास के गांवों का रुख देख कर यही निश्चय किया कि दहिया गोत के लोगों को इकट्ठा कर के गुरुकुल का स्थिर प्रबन्ध कर लिया जावे। अतः गुरुकुल कमेटी के मंत्री की हैसीयत से मुख्याध्यापक ने दहियागोत के गांवों के मुख्य २ आदमियों तथा कमेटी के मेम्बरों को पत्र लिखे और १४ अगस्त तारीख निश्चित की गई। अच्छे कामों में विघ्न पड़ता ही है। खाण्डे के ब्राह्मणों ने यह अच्छा मौका देखा। उन्हीं ने २५ गांवों के ब्राह्मणों को इसी तिथि पर खाण्डे बुलाया जिसके कारण खाण्डे तथा आसपास का कोई आदमी गुरुकुल की कमेटी में सम्मिलित न हो सका। लेकिन फिर भी कमेटी में २५०,वा३०० के लगभग आदमी शामिल हुवे लेकिन जिस उद्देश्य से लोगों को बुलाया था वह पूरा नहीं हो सका अगर खाण्डे के लोग शामिल हो जाते तो इस में कुछ सन्देह नहीं था कि जिस उद्देश्य से दहिया गोत के लोगों को बुलाया था वह पूरा हो जाता इस वृहदधिवेशन में, जिस के सभापति चौ० छोटूराम जी वकील बनाये गये थे, गुरुकुल भटिण्डू के मुख्याध्यापक ने ५० सहस्र की अपील की थी। चौ० छोटूराम जी तथा और अमृतसिंह जी ठेकेदार होरा ने एक एक कमरा प्रदान किया तथा चौ० अमृतसिंह जी ने १००) रु० देकर जीवन भर सभासद कमेटी के बने।

साथ ही मण्डलीयां बनाई गई। कई आदमीयों ने अपना एक मास तथा दो मास सेवार्थ दिये।

चौ०	सुरजनसिंह जी	आसन	२ मास
चौ०	सूरजनसिंह जी	टीकरी कलां	१ मास
„	कलहसिंह जी	„	„
„	मर्तसिंह „	जिण्डोठी „	
„	मायाराम „	मोरखेड़ी „	
„	लज्जे „	„	„
„	राजरूप „	„	„
„	तुलसी मुगलपुरी	„	„
„	नेकीराम फतौली		„

कमेटी के और बहुत से सभासद बन गये।

अगले दिन खाण्डे के समाचार पता लगे। २५ गामों के जो ब्राह्मण इकट्ठे हुवे थे उन्हीं ने ये प्रस्ताव पास किये:—

(१) जो कोई ब्राह्मण जनेऊ वाले जाटों के हाथ की रोटी खाये उसे जाति से वहिष्कृत किया जावेगा।

(२) जो कोई जाट ब्राह्मण को जिमाना चाहे पहिले उसे ५०) रु० जुर्माना देने पड़ेंगे क्यों कि उसके भाइयों या उसने आर्यों के हाथों से यज्ञोपवीत लिये। उस पर एक जाट जिसने अभी तक जनेऊ नहीं लिया था वह इन ब्राह्मणों के पास गया कि मुझे तुम ही जनेऊ दे दो मैं आर्यों से नहीं लूंगा ब्राह्मणों ने कहा कि "शूद्रों को जनेऊ का अधिकार नहीं।" उपरोक्त वाक्य को सुन कर रहे सहे सभासदों ने भी जनेऊ ले लिया। तब आस पास के गांवों में खूब धूम मच गई। चारों तरफ से वैदिक धर्म के प्रचार के वास्ते बुलावा आने लगा पर प्रचारक इतने नहीं जो मांग को पूरा कर सकें। पहिला बुलावा सेहरी से आया जिस के साथ पांच गांव लगते हैं। सर्व अध्यापकों तथा ब्रह्मचारियों सहित मुख्याध्यापक जी वहां गये। रात के १ बजे तक प्रचार होता रहा। मंढौरी तथा धौसे से भी लोग भजनीक तथा उपदेशक बुलाने वास्ते आये। कालूराम जी ने ५,६ दिन का अवकाश लेकर घर गये हैं उनके आने पर फिर प्रचार जोर से आरम्भ होगा। रोहणा, आशौदा, गंगाने से भी बुलावा आया है। पं० बस्तीराम जी को गंगाने भेज दिया है। इधर दीर्घ अवकाश के होने पर भी पढ़ाई नियम पूर्वक जारी रक्खी है ताकि पढ़ाई की कमी दूर की जावे। इस वर्ष छुट्टीयों में अध्यापकों ने घर जाना बन्द कर दिया ताकि ब्रह्मचारियों की पढ़ाई भी अच्छी हो जावे और प्रचार की मांग को भी पूरा कर सकें।

पूर्णदेव

गुरुकुल—जगत्

गुरुकुल मैंसवाल (कलां)

ऋतु साधारण तथा अच्छी है। दिन में गर्मी और रात को कुछ २ ठंड भी पड़ती है। जो कि ब्रह्मचारियों के स्वास्थ्य को कुछ बिगाड़ देती है। इस समय चिकित्सालय में कोई रोगी नहीं है। श्री पंडित वासुदेव जी विद्यालंकार इस समय चिकित्सा का काम मुफ्त करते है। जिनसे अन्य ग्राम वासी भी पूरा लाभ उठाते हैं। और श्री पंडित जी की सब ही प्रशंसा करते हैं। पीछे ४ या ५ दिन हुये एक दम ८ ब्रह्मचारी ज्वराक्रान्त हो गये थे जो पंडित जी की कृपा से दूसरे दिन ही अच्छे हो गये।

२. गुरुकुल के कार्य्य कर्त्ता बड़ी लगन से कार्य्य कर रहे हैं। पंडित शान्तिस्वरूप जी आंखों के दुःख ने तथा बिगाड़ जाने के कारण दो मास के अवकाश पर गये थे। वे भी अब लौट आये हैं। और अपना कार्य्य कर रहे हैं। गुरुकुल में अभी कोई स्थिर अध्यापक नहीं है। श्री पं० रामचन्द्र जी जो पीछे मेरी अनुपस्थिती में गुरुकुल की सहायता के लिये आये थे। अध्यापन का कार्य्य बड़ी योग्यता से कर रहे हैं आप बच्चों को पढ़ाने में अत्यधिकदक्ष हैं। और बड़ी जल्दी ही उन्हें अक्षराभ्यास-करा देते हैं। गुरुकुल उन के इस कार्य्य के लिये कृतज्ञ है।

(३) अभी तक बहुत परिश्रम करने पर भी पाचक तथा कहारों का एवं अन्य भृत्यों का प्रबन्ध नहीं हो सका है। यदि कोई सज्जन इन का प्रबन्ध कर सके हों तो गुरुकुल के स. मुख्याधिष्ठाता से पत्र व्यवहार करें।

(४) पढ़ाई-खूब चल रही है। ब्रह्मचारियों को अब स्वयं पढ़ने का भी शौक़ हो गया है। वे स्वयं ही पहाड़े आदि याद करते रहते हैं।

५. मकानात ब्रह्मचारियों के रहने के लिये पक्के बनेंगे भट्टा लगवाने की तज़वीज़ हो चुकी है। कुआ भी खुदने वाला है।

६. चन्दे का कार्य्य कुछ ढीला पड़ा हुआ है जिस का कारण भृत्यों की कमी है। जिन्हों ने चन्दे का कार्य्य करना था वे गुरुकुल में ही भृत्यों के काम को बड़े प्रेम और उत्साह से कर रहे हैं।

७. गुरुकुल की आवश्यकताओं—गुरुकुल को इस समय जहां भृत्यों की आवश्यकता है वहां साथ ही साथ कुछ अन्य सामान की भी अत्यन्त आवश्यकता है। जिस की तरफ़ दानी महाशय ध्यान देकर पुण्य तथा कीर्ति लाभ करेंगे। गुरुकुल को इस समय एक तोलने की मशीन की आवश्यकता है। जिस से हर मास ब्रह्मचारियों के स्वास्थ को जानने के लिये उन्हें तोला जा सके। साथ ही एक आटा पीसने की मशीन की भी आवश्यकता है। यदि कोई महाशय इस मशीन को दान कर सकें तो ब्रह्मचारियों को नित्य ही नया पिसा आटा खिलाया जा सके।

गुरुकुल सम्बन्धी सब पत्र व्यवहार स. मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल मैं भैंसवाल (कलां) डाकखाना गुहाना जिला रोहतक से ही होना चाहिये।

भवदीय
शान्तिस्वरूप शर्मा
स. मुख्याधिष्ठाता

एक लोहार की

असह योग—हम नहीं कर सकते। हम इस का सिद्धान्त मानते हैं; पर कम से कम पचास साल तक इस पर अमल नहीं कर सकते। लेकिन स्वराज्य? हां स्वराज्य तो हमें आज ही चाहिए!!!')

फिजी में अत्याचार

श्रीमन्

भारत सरकार ने जो असन्तोष जनक उत्तर फिजी के विषय में दिया है, उसे आपके पत्र के पाठक जानते ही हैं। इधर तो भारत सरकार ने फिजी गवर्नर के 'विस्तृत वृतान्त' को ब्रह्मवाक्य समझ कर स्वतन्त्र जांच कराने से साफ इनकार कर दिया है और उधर फिजी में अत्याचार बराबर जारी है।

१२ जुलाई के फिजी टाइम्स और हैरल्ड से ज्ञात हुआ कि अनेक भारतीयों को कठिन कारावासका दण्ड दिया गया है।

रामश्री और मुहम्मद हुसैन को अठारह अठारह महीने की सपरिश्रम जेल हुई है। गनपत को दस महीने कठिन कारावास की। इन पर यह अपराध लगाया गया है कि इन्होंने ११ फर्वरी को तुराक में जेम्स ब्राउन नामक गोरे को चोट पहुंचायी।

सेवज साहब के मुकद्दमे में गुराई और मुहम्मद को पांच पांच वर्ष की सजा दी गयी। नमकू को दो वर्ष की, रहीमन और फुलकुंवर को (ये दोनों औरतें हैं) अठारह महीने की, और धनपतिया को १२ महीने की सजा हुई है। कैल्डवैल साहब के मुकद्दमे में मुकुन्दाउको तीन वर्ष की सजा हुई है। फिजी की 'मार्शललॉ' के दिनों में १२, १३, और २० फरवरीको जो आज्ञाएं निकाली गयी थीं वे चार महीने बाद २६ जूनको रद्द कर दी गयी। अब भारतवासी बिना आज्ञा पत्र के घर से बाहर निकल सकेंगे। इन आज्ञाओं को रद्द करते हुए फिजी सरकार ने कहा है "हिन्दुस्तानियों को यह बात ख्याल में रखनी चाहिये कि आर्डीनेन्स (पबलिक सेफ्टी इन टाइम्स आव सिविल कमोशन आर्डीनेन्स) अबतक स्थिर है और आवश्यकता पड़ने पर बराबर काम में लाया जा सकता है" लेकिन हमारी समझ में फिजी गवर्नमेण्ट को यह धमकी देने की कोई आवश्यकता नहीं थी। फिजी सरकार प्रवासी भारतवासियों पर मनमाने अत्याचार कर ले उन विचारों की सुननेवाला तो कोई है ही नहीं। उधर विलायत का कालोनियल आफिस कान में उंगली दिए हुए बैठा है, इधर भारत सरकार फिजी गवर्नर के खरीते को ब्रह्मवाक्य मानकर जांच की आवश्यकता नहीं समझती, अब रहे हम लोग सो इस विषय में अठारह वर्षों के कर्तव्य भ्रष्ट सिद्ध हो ही चुके हैं। इस सुअवसर से भला फिजी सरकार लाभ क्यों न उठावे? बिचारी निस्सहाया रहीमन और फूलकुंवर को अठारह अठारह महीने के लिए जेल की हवा खिलाने के वास्ते इससे अच्छा अवसर फिजी सरकार के हाथ फिर कब आवेगा?

फिजी सरकार के कारनामें सुनते सुनते हम तंग आगए, अब सवाल यह है कि आखिर फीजी में यह जोड़ावार शाही कब तक अपनी कर्तव्य भ्रष्टता का परिचय देती रहेगी? और हम कब तक हाथ पर हाथ धरे बैठे रहेंगे?

एक भारतीय हृदय

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिए छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 875

श्रद्धां सूर्यस्य निमृचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० म० ३ सू० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते है। हे श्रद्धे! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है { ६ आश्विन सं० १६७७ वि० | दयानन्दाब्द ३७ | ता० २४ सितम्बर सन् १६२० ई० } संख्या २३ भाग १

हृदयोद्गार

नाथ !

हे! खिलाड़ी! खेल तुझ से खेलनी।
सब मुसीबत भी हैं आखिर झेल लीं॥ १॥
आन पहुंचा हूं तुम्हारे द्वार अब।
खटखटी बेशक है तूने भेड़ ली॥ २॥
मत समझना लौटकर मैं जाऊंगा।
एक टक जब वो झटक है देख ली॥ ३॥
मैं न रुकता देह यह रुक जायगा।
तूने दिल—डोरी वहीं पै खेंच ली॥ ४॥
अब न मिलने में रही कुछ देर है।
जब सभी चीज़ें तुम्हीं में मेल लीं॥ ५॥

शान्ति सदन
गुरुकुल कांगड़ी } —:o:— "आनन्द"

प्रबोध !!

इन झाड़ियों में भौंरे, अब क्यों भटक रहा है।
सूखी कटीली डालों, में क्यों अटक रहा है॥ १॥
फिर तो नहीं खिलेंगी, मुरझागई कली जो।
किस आस से तू इन में, सिर अब पटक रहा है॥ २॥
खिल खिल बहार इक दिन, की थे दिखा गये गुल।
परदा बिछोह का अब, इन पर लटक रहा है॥ ३॥
ऐसा फिरा है पानी, सब ढल गई जवानी।
अब वो न-रंग फ़ानी, इन में चटक रहा है॥ ४॥
समझा इसे जिन्हों ने, प्यारा व इक सहारा।
उस ही हवा का झोंका, इन को झटक रहा है॥ ५॥
कुछ सोच तो ज़रा तू पागल क्यों बन रहा है।
चितवन पै किस की भूला, अब तक मटक रहा है॥ ६॥
कांटों से इनके छिध कर, लोहू लुहान होकर।
जायगा मर तू दिल में, मेरे खटक रहा है॥ ७॥

पं० वागीश्वर विद्यालंकार

श्रद्धा के नियम

१. वार्षिक मूल्य भारत में ३॥), विदेश में ५॥), ६ मास का २)।

२. ग्राहक महाशय पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।

३ मास से कम समय के लिए यदि पता बदलना हो तो अपने डाकखाने से ही प्रबन्ध करना चाहिए।

प्रबन्धकर्त्ता श्रद्धा
डाक० गुरुकुल कांगड़ी (ज़िला बिजनौर)

ब्रह्मचर्यसूक्त की व्याख्या

आपधयो भूत भव्यन होरात्रे वनस्पतिः। सम्वत्सरः सहर्तुभिस्ते जाता ब्रह्मचारिणः ॥ २० ॥

"ओषधें और वनस्पति, भूत और भविष्यत् जगत, दिन और रात, ऋतुओं के सहित वर्ष—ये सब ब्रह्मचारी से ही प्रसिद्ध हैं।" वनस्पति अर्थात् वन के वृक्ष जो विना पुष्प लाए फल देते तथा ओषधी जो पुष्प से पूरित हो कर पालन करते हैं—दोनो प्रकार के उद्भिद् प्राणी भी ब्रह्मचारी के तपोबल से ही फलदेने वाले होते हैं। इसी लिए वेद में जो आर्यों अर्थात् श्रेष्ठ पुरुषों के लिए नैतिक कर्म का उपदेश है उस में वनस्पति की रक्षा का भी विधान है। यदि मनुष्य इन्द्रियों को वशीभूत करने वाला न हो तो एक भी वनस्पति अपनी पूर्ण आयु को प्राप्त न हो। माली ब्रह्मचर्य व्रत की सहायता से ही, प्रलोभनों से बचता हुवा, वृक्ष और पौद की रक्षा करता है और पकने से पहिले फलों को तोड़ने से बचता है।

भूत और भविष्यत, व्यतीत होगए और आने वाले—दोनों—समयों का निर्माता ब्रह्मचारी ही है। बीते हुए अनुभवों से जहां ब्रह्मचारी ही लाभ स्वयम् उठा तथा संसार को दिला सक्ता है वहां जगत् का भविष्य भी वही सुधार सक्ता है। जो इन्द्रियों का दास है, उसके लिए वर्त्तमान ही सब कुछ है। उसका भविष्य कुछ हो ही नहीं सक्ता। ब्रह्मचारी रामने जहां से संसार के भविष्य में धर्म की मर्यादा स्थापन कर दी, वहां रावण के कारण लंका का भविष्य ही कुछ न रहा। ब्रह्मचर्य विना-न भूत है और न भविष्यत्। दिन और रात का चक्र भी ब्रह्मचर्य के आश्रय पर ही चलता है। व्रत पालन का आदर्श ब्रह्मचारी है और सूर्य की (अपनी परिधि पर घूमने और अपने सामने आई भूमि को प्रकाश देने की) शक्ति पर ही दिन रात के विभाग निर्भर है। ऋतुओं के सहित सवत्सर भी उस व्रत का परिणाम है जो संसार चक्र में कार्य कर रहा है। जिनकी इन्द्रियां वश में नहीं, जिन्हें इन्द्रियां घुमाए फिरती हैं, उन्हें दिन और रात में, विवेचना शक्ति की शक्ति नहीं रहती। वे न रात में विश्राम ले सक्ते और न दिन में सूर्य की किरणों से अपने अन्दर प्राण शक्ति को धारण कर सक्ते हैं। कामी के लिए न कोई दिन है और न रात, उसके लिए सारा समय केवल अन्धकार मय है। कामी उलूक के समान रात को ही सावधान होता है। कामी तुकबन्दों (उन्हें कवि नहीं कह सक्ते) ने कामातुरों का यही विशेषण दिया कि वे दिन और रात में तमीज ही नहीं कर सक्ते। उन्हें ऋतुओं में भी कोई भेद नहीं प्रतीत होता। उनके लिए "सब धान बाइस पंसेरी" है

लोक में प्रसिद्ध है कि जिन्हें परलोक की लग्न हो, जिन्हें मुक्ति की तलाश हो वे भले ही ब्रह्मचर्य का साधन करें। दुनियां दारों के लिए ब्रह्मचर्य का उपदेश नहीं। ऐसी लोकोक्ति के अनुयाइयों को इस वेद मन्त्र के भाव पर गाढ़ विचार करना चाहिए। जिस जूही और और चम्पा चमेली और बेला पर तुम मस्त हो रहे हो, उसकी भीनी खुशबू तुम्हारे मस्तिष्क को तरावट न देती यदि माली ने इन्द्रियों को दमन करके उसकी रक्षा न की होती। यदि माली प्रलोभन में फंसकर विना खिली कली को ही तोड़ लेता और अपनी स्वार्थ सिद्धी में ही लग जाता तो तुम्हें खिले हुए फूल की सुगन्धी तथा सौन्दर्य से तृप्ति लेने का अवसर कैसे मिलता। यदि भूत समय में ब्रह्मचारियों ने सदाचार तथा परोपकार की बुनियाद न डाली होती तो आज तुम्हें, अपना तथा अपने भाइयों का भविष्य सुधारने के लिए, कौन प्रोत्साहित करता। मनुष्यों की ही नहीं, वनस्पति की भी जान ब्रह्मचर्य के हाथ में ही है। वनस्पति की ही क्यों काल और दिशा और उनके विभागों तथा उपविभागों की जान भी ब्रह्मचर्य ही है। आज ब्रह्मचर्य्य अस्वाभाविक मालूम होता है। जिन्हों ने दिन का काम रात के सपुर्द कर दिया हो, जिन्हों ने विश्राम के स्थान में आलस्य को अपना लिया हो, जिन्हों ने उलटी गंगा बहाने का व्यर्थ परिश्रम अपने जीवन का उद्देश्य बना रक्खा हो, जिन्हों ने जान बूझ कर आंखें बन्द कर रक्खी हों उन्हें आंखे खोलते हुए अवश्य कष्ट प्रतीत होता है। परन्तु इस क्षणिक कष्ट के भय से अपने जीवन के भविष्यत् को ही तिलांजलि दे देना बुद्धिमानों का काम नहीं है। जड़ और चेतन में मनुष्य, पशु और वनस्पति में राजा और रंक में सब में ब्रह्मचर्य का राज्य है। जिस प्रकार प्रान्त के राजा और उसके राजनियम को भुला कर उस राज्य में निवास कठिन है उसी प्रकार समय के राजा ब्रह्मचर्य के न्याय शासन को भुला कर संसार में जीना कठिन है। प्रभु बल दें कि ब्रह्मचर्य का यथावत् पालन हो सके। शमित्योश्म्।

श्रद्धानन्द सन्यासी

(८वें पृ० का शेष)

हो वहां सब से आगे आर्य्यसमाजी रहे। जहां देश की स्वाधीनता के लिए सिरकटाना हो वहां पहला कटने वाला सिर आर्य्यसमाजी का हो। जहां दुःखित मनुष्य जाति की सेवा के लिए सेवक आवश्यक हो, वहां पहला स्वय 'सेवक आर्य्यसमाजी पहुंचे। न केवल भारत अपितु ससार के सचाई और स्वाधीनता के धम युद्धों में सेनापति का बिल्ला आर्य्यसमाजी की छाती पर ही दिखाई दें। सारांश यह कि सब स्थानों में, सब दशाओं में शुभ यश के ऋत्विक् आर्यसमाजी ही जिस दिन दिखाई देंगे, उस दिन ही यही कहा जा सकेगा कि ऋषिदयानन्द का उद्देश्य पूर्ण हुआ है। जब तक यह नहीं, जबतक समाज के साप्ताहिक अधिवेशनों और वार्षिकोत्सवों की सफलता से आर्यसमाज की सफलता समझी जाती है तब तक यह कहना कठिन है कि हम ने ऋषि के हृदय को समझा है या आर्यसमाज की स्थापना की तह में जो भाव, है उन्हें पहिचान लिया है।

इन्द्र

श्रद्धा

अपनों के साथ सहयोग करते तो आज असहयोग की शरण न लेनी पड़ती।

इस समय जितने भी आन्दोलन (धार्मिक, समाजिक वा राजनैतिक) होरहे हैं, उन सब का अगुआ आर्यसमाज ही रहा है। आर्यसमाज का प्रवर्तक दयानन्द था; इस लिए कह सकते हैं कि आज की सर्व गतियों का प्रथम हिलाने वाला दयानन्द था। और यह है भी ठीक क्यों कि कौन सी भारतवर्ष की तहरीक है जिस पर प्रथम स्वच्छ सम्मति दयानन्द ने नहीं दी।

अपरिछिन्न स्वराज्य जातीय महासभा ने कलकत्ते में मांगा है। ऋषि दयानन्द आज से ४० वर्ष पहिले लिख गए- "कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि होता है।" महात्मा गांधी आज कहते हैं कि "स्वराज्य मिलने पर चाहे कुछ दिन अव्यवस्था रहे तब भी मैं परवा नहीं करता परन्तु ऋषि ४० वर्ष पहले लिख गए—"मतमतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराए का पक्षपात शून्य, प्रजा पर पिता माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।" महात्मा गांधी ने आज विदेशी राज्य की संस्था से विद्यार्थियों को उठाने की अनुमति दी है, ऋषि दयानन्द आज से ४५ वर्ष पहले आर्यों को उपदेश दे गए कि बालकों और बालिकाओं के लिए गवर्नमेन्ट की दासता से मुक्त पाठशालाएं खोली जायं। महात्मा गांधी ने पंचायती न्यायालयों का विचार थोड़े काल से ही उठाया है और कांग्रेस ने उसे अभी कल स्वीकार किया है ऋषि दयानन्द अपने अनुयायियों को आज से ४४ वर्ष पहिले "आर्यसमाज के उपनियमों" द्वारा बतला गए कि आर्यों का कोई झगड़ा भी अंग्रेजी अदालतों में न जाय प्रत्युत अपने न्यायालयों में ही उनका निबटारा हुआ करे। कहां तक लिखें वर्तमान जातियों के राग द्वेष से तंग आकर जिस (League of nations) 'अन्तर जातीय संगठन' का आश्रय युरुप लेना चाहता है उसकी आवश्यकता ऋषि दयानन्द अपने सत्यार्थप्रकाश के षष्ठ समुल्लास में जतला गए। वहां यह बतलाकर कि थाना, तहसील, जिला, कमिश्नरी, सूबा और राजसभा की व्यवस्था पाश्चात्यों ने भी मनुस्मृति से ली है, ऋषि दयानन्द लिखते हैं—"और ये सब राजसभा महाराजसभा अर्थात् सार्वभौम चक्रवर्ती महाराज सभा में सब भूगोल का वर्त्तमान जनाया करें।" और इस में सन्देह नहीं कि जब आज कल की स्वार्थपरायणता का नाश होकर वास्तविक "सार्वभौम चक्रवर्त्ति महाराज सभा" स्थापित होगी तभी संसार में शान्ति का राज्य स्थापन होगा।

२२½ वर्ष हुए जब वकालत का काम करते हुए मैंने प्रत्यक्ष अनुभव किया कि मैं बृटिश अदालतों को अन्याय करने में सहायता दे रहा हूं और उसी समय मैंने वकालत के काम को तिलाञ्जलि देदी थी। फिर चिरकाल के जागे सरकार दृढ़ हो गए कि वर्त्तमान सरकारी वा अर्ध-सरकारी स्कूल हमारी सन्तानों को मानसिक दास बना रहे हैं। तब से बृटिश सरकार की छाया से परे गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के लिए कुछ मास पीछे काम करना शुरू किया और २० वर्ष से चिल्लाकर कहता रहा कि इस विष भरी शिक्षा के जाल से अपनी सन्तानों को निकालो। सारा भारत काव्य सुनकर जब व्यास भगवान् को भी यह कहना पड़ा कि—ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येषः नच कश्चिच्छृणोतिमम्। धर्मादर्थश्च कामश्च सधर्मः किं न सेव्यते—जब द्वापर के अन्त में व्यास भगवान् की बात किसी ने न सुनी तो मेरी आवाज़ कौन सुनता। ऋषि दयानन्द का सिंहनाद पहले ही बहरे कानों पर पड़ चुका था। यदि ऋषि के उपदेश को पहले सुनते और सावधान होकर तदनुसार आचरण करते तो आज यह समय देखने में न आता। कवि ने सच कहा है—"दुख में तो सब कोई भजै सुख में भजै न कोय। एक बार सुख में भजै तौ दुख कबहूं न होय॥"

आज दुख में सब कुछ स्पष्ट दीख रहा है। महात्मा गांधी अपना असली असहयोग का प्रोग्राम पेश कर रहे हैं और सब पर चलने के लिए उत्सुक है। जिन्हें कलकत्ते में कुछ सकोच था वे इम्पीरियल काउन्सल की कार्यवाही देख कर पग आगे उठा रहे हैं।

'श्रद्धा' के गतांक में मैं तीन सहयोग बतला चुका हूं—प्रथम 'पञ्चायती न्यायालय' एक दम स्थापित करदो। बायकाट का घृणित नाम न लो। जब जनता के सब अधिकतः झगड़े जातीय न्यायालयों में जाने लगे तो न्यायालय आप से आप बन्द होजायंगे। तब बैरिस्टरों और वकीलों से चिरौरी करने की क्या आवश्यकता होगी कि "भगवान् के लिए पेशा छोड़दो" द्वितीय-तुम्हारे जिन भाइयों को अछूत कहा जाता है उन्हें शीघ्र अपनालो। बृटिश और अमेरिकन ईसाई मिशनों ने तो यह संकल्प किया है कि आगामी ५ वा ६ वर्षों में ७ करोड़ को ईसाई बना कर उन्हें नौकरशाही गोरीगवर्नमेन्ट के लंगर बनादेंगे, तुम उन्हें अपने गले लगा कर भारत मात के लिए ७ करोड़ प्राण अर्पण करने वाली सन्तान बढ़ा दो। तृतीय काम मैंने यह बतलाया था कि पढ़ने वाले विद्यार्थियों को बिना हिलाए सर्व प्राइवेट तथा एडेडस्कूल्ज़ का सम्बन्ध युनिवर्सिटी से तोड़ लो। फिर देखो कैसा आनन्द होता है। बायकाट कहने की आवश्यकता क्या? एक सप्ताह में तुम्हारे स्कूल और कालिज गवर्नमैन्ट के दुगने वा डेउढ़े हो जायंगे। तब गवर्नमैन्ट स्कूलों और कालिजों की बेंचें स्वयम् खाली हो जायंगी। मैंने गताङ्क में पंजाब के कालिज गिन दिये थे। उन में आधे कालिज और आधे से अधिक स्कूल दयानन्द ऐंग्लोवैदिक कालिज लाहौर से सम्बन्धित हैं। उस संस्था का आर्गन आर्यगज़ट लिखता है—"हमारे स्कूलों और कालजों में तालिम नहीं दी जाती बल्कि महज़ ज़बांदानी सिखाई जाती है और अफसोस

हद भी नामुकम्मिल........इस लिए उस्तादानी छोड़ कर क़ौमी तालीम की जानिब आना ज़रूरी है।" इस के पश्चात् उद्योगी शिक्षा की आवश्यकता बतला कर मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने पर ज़ोर दिया है—"जब क़ौमी ज़बान को ही पूरी वक़अत न दी गई तो क़ौमी तालीम कब और कहां मुमकिन है ....तालीम को मुफ़ीद बनाने के लिए अव्वल और मुक़द्दम अमूल यह है कि तालीम बज़रिया क़ौमी ज़बान हो.........अब क़ौम ने महात्मा गांधी के प्रोग्राम को अपना प्रोग्राम बना लिया है लिहाज़ा हर एक बशर का फ़र्ज़ है कि उस पर खुद अमल करे और दूसरों को अमल करने के फ़वायद बतलाए।"

इस से बढ़ कर और क्या आशा की झलक हो सक्ती है कि जिस संस्था के हाथ में पंजाब की आधी शिक्षा है उस का आर्गन स्पष्ट शब्दों में काम के मैदान में उतरने की उत्तेजना देता है। मुझे आशा है कि दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालेज के संचालक ऊपर की पुरजोश आवाज़ को सुनेंगे और पञ्जाब युनिवर्सिटी को अन्तिम नमस्ते कह कर एक दम शिक्षा का माध्यम मातृभाषा को कर देंगे। फिर अपनी युनिवर्सिटी बनी बनाई है। ऋषिदयानन्द का पुरुषार्थ भी उसी दिन सफल होगा जब इस काम में भी आर्य-समाज ही अगुआ होगा।

सार्वदेशिक सभा अब दृढ़ हो सक्ती है।

ऋषि दयानन्द ने आर्यसमाज का संगठन भी उसी नीति पर निर्धारित किया था जिस पर कि राज नैतिक राष्ट्रों की बुनियाद बतलाई थी। ऋषि के आदेशानुसार ही सार्वदेशिक सभा की बुनियाद स० १९०८ ई० के अन्तिम भाग मे रक्खी गई थी। यद्यपि पहले भी इस सभा को एक जीवित शक्ति बनाने का यत्न हुआ, परन्तु उस में कई कारणों से कृतकार्यता न हुई। इस समय कन्या-गुरुकुल का काम इस सभा के आधीन चलने लगा है। दिल्ली में सभा का मुख्य स्थान है। एक २५ सहस्र की लागत का मकान भी लालकिले के सामने मिला हुआ है। मद्रास में प्रचार इसी सभा की ओर से शुरू है। विशेष अवसरों पर इसी सभा के द्वारा ठीक प्रचार हो सक्ता है। इस समय यदि इस सभा का कोष भरण कर दिया जाय तो आगे बहुत से काम, जो प्रान्तिक सभाएं नहीं कर सक्तीं, इस के द्वारा हुआ करेंगे।

मद्रास में पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार काम कर रहे थे। अब स्नातक देवेश्वर सिद्धान्तालंकार को भी वहीं भेजा है। कुम्भकोणम् का कुम्भ माघ में होगा। उस समय भी मौखिक तथा लेख बद्ध प्रचार होगा। वैशाख १९७८ की अर्ध कुम्भी पर हरिद्वार में प्रचार होगा। एक और बात है। जो गुरुकुल के योग्य स्नातक अन्य किसी सभा के अधीन काम करने को तय्यार नहीं वे सार्वदेशिक सभा के अधीन बड़ी उत्सुकता से काम करने को तय्यार हैं। उन से काम लेने के लिए भी उन्हें अन्न वस्त्र देना तो आवश्यक ही होगा। मैंने अभी केवल १०,०००) के लिए अपील की थी। परन्तु १ आश्विन तक केवल ५०१) आया है। बड़े आर्यसमाजों ने इधर ध्यान ही नहीं दिया। अन्य आर्यसमाजें भी प्रायः मौन साधे हैं। १००) मा० रोशनलाल स्पोर्टस वालों ने दिया है जो मेरी किसी अपील पर भी १००) से कम नहीं देते। पंजाब में से केवल शुजाबाद आ.स. ने ५०), संयुक्त प्रान्त में से मथान आ.स. ने ५०) मारवाड़ से सोजत आर्यसमाज ने ४०) भेजे हैं। शेष व्यक्तियों का दान है। यदि एक सौ सज्जन वा आर्यसमाज एक एक सौ भेज दें तो सहज में १०,०००) इकट्ठा हो जाता है। यद्यपि 'श्रद्धा' के ग्राहक कम हैं तथापि यदि प्रत्येक ग्राहक दूसरों को प्रेरित करे तो एक वर्ष के काम का मसाला जमा हो सक्ता है। फिर शायद मद्रास वहां के प्रचार का भार स्वयम् उठा सके।

श्रद्धानन्द संन्यासी

निरपराधी को बेंत !

मंसुरी एक पहाड़ी स्थान है। यहां सरकारी छावनी भी है जहां पादड़ियों के कई गिर्जाघर हैं। इन में से एक का नाम "चैपलिन सेण्ट पाल चर्च" है। इस के पादड़ी साहब हैं रेवरेण्ड बी० एम० मेनार्ड। आप ४ जुलाई, १९२० को प्रातः काल साढ़े सात बजे गिरजे के सहन में फूल तोड़ रहे थे, उसी समय कुछ कुली राजपुर से घोड़े लेकर गिरजे के सामने के मैदान की सड़क से जारहे थे। कुछ लोग मार्ग भूल कर दूसरे मार्ग पर चले गए, इस लिए एक कुली ने, जो सब से पीछे था, उनको ज़ोर से पुकारा। बस कुली का भारी अपराध यही था। पादड़ी साहब तो जामे से बाहर होगए और सड़क पर आकर उन्होंने बेचारे कुली को बेंत से खूब पीटा। बेचारा कुली क्या कर सकता था, अपना सा मुंह लेकर चला गया।

इन बेचारों के पास न तो इतना धन है कि अदालत की शरण लें, इस पर यदि कोई ऐसा करे भी तो उसका फल "टांय टांय फिस" होता है।

ईसामसीह की आज्ञा है कि "यदि कोई तेरे एक गाल पर तमाचा मारे तो तू दूसरा भी उसकी ओर फेर दे" इसी का यह नमूना है।

सा० वि० हज़ारीलाल "शंकर"

(अभ्युदय)

वी. पी. मंगाने वाले सज्जनों से प्रार्थना

गत १ सितम्बर से डाक विभाग ने बिना रजिस्ट्री किए वी. पी. लेना बन्द कर दिया है। रजिस्ट्री करके वी. पी. भेजने से मंगाने वालों को प्रति वी. पी. =) अधिक देने पड़ेंगे। इस के अतिरिक्त, वी. पी. का रुपया देर से मिलने के कारण हमें पत्र भी देर से जारी करना पड़ता है। इस लिए ग्राहकों से प्रार्थना है कि अच्छा हो, वे यदि मनीआर्डर द्वारा ही धन भेज दिया करें। इस से ग्राहकों के जहां =) बच जावेंगे वहां उन्हें पत्र भी शीघ्र मिल सकेगा।

प्रबन्धकर्ता
'श्रद्धा'

समाचार और टिप्पणी

पायोनियर की दुधारी तलवार

असहयोग का अवलम्बन करने के कारण जिन्होंने सरकारी नौकरियों से इस्तीफे दिए हैं उनकी संख्या, होम मेम्बर के कथनानुसार, २८४ है। इसमें अधिक संख्या चपरासियों और पुलिस के सिपाहियों की है। इस पर टिप्पणी करता हुआ पायोनीयर कहता है कि इस्तीफा देने वालों में से कोई भी महत्व पूर्ण पद पर नहीं था। क्या पायोनीयर इससे यह भाव प्रकट करना चाहता है कि शिक्षित दल इस आन्दोलन के साथ नहीं है? यह भी विचित्र युक्ति है। अब तक कांग्रेस, स्वराज्य इत्यादि के आन्दोलनों को पायोनीयर एण्ड को "थोड़े से पढ़े लिखों की हलचल" कह कर धुत्कार देती थी, अब जब अनपढ़ भी साथ देने लगे तो शिक्षितों को दूर हटाते हुए "अनपढ़ों की बेसमझ" कह कर उड़ा दिया। गोरे पत्रों की इस दुधारी तलवार का थोथापन किसी से छिपा हुआ नहीं है।

कीचड़ से कमल

मित्र दल ने टर्की के साथ जो कु-व्यवहार किया है उसके लिए हम कई बार खेद प्रकट कर चुके हैं परन्तु इससे एक ऐसा लाभ भी अवश्य हुआ है जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। वह यह है कि इस अत्याचार के कारण एशिया में एक नवीन जागृति आ गई है। ईरान, अरब, मैसेपोटोमिया, भारत, अफ़ग़ानिस्तान, चीन इत्यादि में सर्वत्र प्रतिनिधि सत्तात्मक राज्य, जातीयता और राष्ट्रीय आन्दोलन के भाव पैदा होरहे हैं और जनता अपने अधिकारों का महत्व समझने लगी है। एशिया को इस एक दम नवीन जागृति को देख युरुप वाले बड़े घबरा रहे हैं और एक अंग्रेज लेखक ने तो यहां तक कह दिया है कि "एशिया ने ३० साल में वह उन्नति की है जो कि युरुप कई सौ साल में नहीं कर सका।" लेखक की सम्मति में एशिया में इतने बड़े और तेज परिवर्तन हो रहे हैं कि युरुप उसके मुकाबले में बिल्कुल ठहरा हुआ प्रतीत होता है। यदि यह सम्मति ठीक है, जैसा कि सर्वथा ठीक प्रतीत होती है, तो यह क्या कोई कम लाभ है?

कौन्सिलों का बायकाट और ला० लाजपतराय

ट्रिब्यून के प्रतिनिधि से भेंट करते हुए ला० लाजपतराय ने कहा कि कांग्रेस के प्रस्ताव के अनुसार अब हरेक को कौन्सिलों का बहिष्कार करदेना चाहिए। यहां तक हम भी उनसे सहमत हैं पर आगे उन्हो ने कहा कि "शेष तीन बातें प्रत्येक के लिए बाधित रूप से नहीं है।" ऐसा क्यों? प्रश्न यह है कि कांग्रेस का असहयोग का प्रस्ताव आज्ञा रूप से है वा सलाह रूप से। यदि तो आज्ञा रूप से है तब तो वह प्रस्ताव सम्पूर्ण रूप से, प्रत्येक के लिए, बाध्य है। उस अवस्था में लाला जी का यह कोई अधिकार नहीं है कि वे उसके टुकड़े २ करके किसी को बाधित और किसी को एच्छिक का जामा पहिना दें। और यदि यह प्रस्ताव सलाह रूप से है तब भी लाला जी का यह कथन सर्वथा अशुद्ध ठहरता है क्योंकि सलाह की बात प्रत्येक के लिए बाधित कैसे हो सकती है? लाला जी के पास इसका क्या उत्तर है?

"सुबह का भूला शाम को घर पहुंच गया।"

भारत सचिव मि० माण्टेग्यू ने, पिछले दिनों, एक प्रश्न के उत्तर में कहा था कि मार्शल-ला के जो क़ैदी मुक्त किए गए हैं, उन्हें चूंकि राजकीय क्षमा का अभयदान नहीं दिया गया है, इस लिए वे नई कौन्सिलों के लिए उम्मेदवार नहीं बन सकते। इस पर पञ्जाब में तथा अन्यत्र भी खूब आन्दोलन हुआ। परन्तु भारत सकार की चुप्पी में इससे कोई बाधा नहीं पड़ी। अब उसे अपनी भूल मालूम हुई और उसने एक विज्ञप्ति द्वारा शिमला की ऊंची चोटियों से क्षमा का अमृत-बिन्दु बरसाया है जिससे तृप्त हो वे सब व्यक्ति अब उम्मेदवारी के लिए, निःशंक, खड़े हो सकेंगे। पता नहीं, चेम्सफोर्ड की सरकार लोकमत के साथ चलना कब सीखेगी। खैर, फिर भी "सुबह का भूला हुआ शाम को घर पहुंच जावे" तो भी भला ही है।

इटली में उपद्रव

इधर इङ्गलैण्ड, आयरलैण्ड, पोलैण्ड, जर्मनी, रूस इत्यादि में अशान्ति के समाचार सुन कर नहीं थके थे कि इस सप्ताह इटली से भी भयंकर उपद्रव के समाचार आरहे हैं। मंत्री मण्डल में गड़बड़ है; मज़दूर दल ने पुतलीघरों पर अधिकार कर लिया है और शासन की बागडोर बहुत कुछ उपद्रवकारियों के ही हाथ में है। देखें ऊंट किस करवट बैठता है?

क्या इङ्गलैण्ड दिवालिया हो गया?

भारत का प्रभु इंगलैण्ड की जल शक्ति और सैन्य शक्ति दोनों ही अत्यन्त प्रबल है। उस की यह बलशालिता सभी को स्वीकार करनी पड़ती है। इनके आधार पर वह जिस देश को चाहे दबा सकता है। नहीं २ वह सचमुच दबाता भी है इतना होने पर भी वह अपने आधीन देशों को संभालने में न जाने आज कल क्यों असफल हो रहा है? उसके पड़ोस में रहने वाले आयरलैण्ड में उपद्रव है जिसे वह अभी तक दमन नहीं कर सका। मैसेपटोमिया का सुफेद हाथी अभी तक उसकी नकेल से बाहर है। ईरान उसकी सैन्य-शक्ति का खम ठोक कर मुकाबला कर ही रहा है। इस विचित्र अवस्था को देख कभी २ यह सन्देह हो जाता है कि इङ्गलैण्ड कहीं दिवालिया तो नहीं हो गया? क्या वर्तमान अवस्था का कारण प्रभुता का मद तो नहीं है?

— विज्ञानाचार्य सर. जे. सी. बोस स्वीडन की राजधानी स्टाकहालम में व्याख्यान देने के लिए गए हैं।

—नदी में कूद कर जान देने की तैयारी में ही एक उड़ीसन, आत्म हत्या के अपराध में पकड़ा गया था। मैजिस्ट्रेट के पूछने पर उसने आत्महत्या का कारण ६ दिन से अन्न का न मिलना बताया। मैजिस्ट्रेट ने अदालत से २०) दिलवा कर उसे छोड़ दिया। सच है—

"बुभुक्षितः किन्न करोति पापम्"। ओ! भारत की भयंकर दरिद्रता!

विचार तरंग

योरोप का युद्ध तथा

भारतीय दुष्काल

(गतांक से आगे)

(१७)

पोप ! यह सच है कि आज तुम्हारी शान्ति के लिये अपीलें (Appeals) तोपों की घड़ घड़ाहट में किसी भी लड़ने वाली शक्ति ने न सुनीं किन्तु शर्मन पूछता है कि क्या उस निःशब्द युद्ध में विपद्ग्रस्त भारतीयों को उनकी क्लेशमय यातनाओं से निकालने के लिये भी जातियों से ऐसे अपीलें करना तुम्हें कभी स्मरण आया था ? । ओ दयालुओ ! तरस खाने वालो ! जो कि आज योरोप में मनुष्य जाति के रक्तपात पर अनुकम्पित होते हो क्या कभी तुम्हारा हृदय भारत के उन अभागों पर भी करुणा से पिघला था (वे जो कि भूखे और नंगे हैं, मुख म्लान है, देह बिलकुल कृश है, चमड़ी सूख कर काली पड़ गई है, पेट रीढ़ की हड्डी से लगा हुआ, आंखें अन्दर धंसी हुई, हाथ और पैर सूखे हुवे कांटे के समान रहगये हैं; केवल अस्थि पंजर शेष है जो कि उन्हें मनुष्याकृति बनाये हुवे है) जो कि लाखों के बाद लाखों निरपराध चुप चाप मरते चले जारहे थे । क्या संसार के एक अज्ञात कोने में इस तरह नष्ट होती हुई उस मनुष्य जाति की शोचनीय दशा पर भी तुमने कभी चार आंसू बहाये थे ? या तुम्हारी गणना में वे भारतखंड के निवासी, जो कि इस प्रकार बूचड़खाने में भेड़ बकरिओं के समान वध किये जा रहे थे, मनुष्य जाति में ही नहीं हैं।

(१८)

लोगों को आज योरोप में बहुत ही भारी जनता नष्ट होती हुई दिखाई देती है। वे कांपते हैं जब कि वे सुनते हैं कि इस महा युद्ध में केवल दो वर्षों के बीच में (७ युद्ध आसक्त जातिओं के) १२०००१०० मनुष्य मर गए। यह सुनकर वे सचमुच कांप जाते हैं और इस युद्ध को संसार की प्रलय कहने लगते हैं। परन्तु, हाय, उन्हें यह मालूम नहीं (इस विषय में वे घोर अन्धकार में रहे हैं) कि भारत में दुष्काल के मुख्य २ बाईस हमलों में से केवल एक ही हमले में (१७७० में) और अकेले बंगाल के प्रान्त में १०००००० भारतवासियों की आत्मायें अपने मृतक शरीरों को इस सम्पूर्ण भूमि पर बिछे हुये छोड़कर प्रयाण कर गईं। क्या तब यह संसार की प्रलय न हुई थी ? और फिर उनको यह विदित नहीं है कि जितने मनुष्य सम्पूर्ण संसार के सब संग्रामों में सौ वर्षों के अन्तर में मरे हैं उस से दस गुने मनुष्य केवल दस वर्षों में अकेले भारत में भूखों-भूख की असीम पीड़ा में बिलबिलाते और छटपटाते हुए—मर गए। उन्हें मालूम नहीं कि इस प्रकार इस पिछली शताब्दि में प्रति मिनट ४, प्रति घण्टे २४६ और प्रति दिन ५७०० की चाल से अकाल पीड़ित भारतवासी १० वर्षों तक लगातार बिना ठहरे मरते चले गये।

(१९)

उस समय भी, ओ मनुष्य जाति पर रहम खाने वालो ! उन दीन, क्षुधा विह्वल, बिल्कुल निरपराध अपने जानें गंवाते हुवे भारतीयों पर कुछ आंसु गिराये जा सकते थे।

उस समय भी भारत में मानव जाति का एक असहनीय ह्रास—करोड़ों मानव प्राणिओं का विनाश—हो रहा था।

उस समय भी एक संग्राम हो रहा था वह भारतीय संग्राम—जो कि वर्त्तमान संग्राम से कहीं बढ़कर करुणा जनक और हृदय विदारक था।

(२०)

यदि तुम्हें उसका कुछ मालूम नहीं है तो यह मत समझो कि भारत में कोई ऐसा अतिहिंस्र, प्रलयकारी युद्ध नहीं हुआ।

यदि उसमें भारतवासियों ने मरते हुए कोई शोरशराबा नहीं किया और संसार में कोलाहल नहीं मचा दिया तो यह मत समझो कि उनकी जानें नहीं निकल रहीं थीं।

और यदि वे चुपचाप थे और शान्त बने रहे तो यह मत समझो कि उनके हृदय असह्य व्यथाओं से फट नहीं रहे थे, तीक्ष्ण शूल वेदनाओं से छिद नहीं रहे थे।

(२१)

वास्तव में एक युद्ध वहां भी लड़ा जा रहा था और उसमें वर्त्तमान युद्ध की अपेक्षा नर संहार भी कई गुना अधिक हो रहा था। किन्तु भेद केवल इतना था कि (१) यह युद्ध संसार प्रसिद्ध है। हर एक मनुष्य इसे जानता है। इसके विषय में बातें करता है। इस से चिन्तित होता है। किन्तु वह युद्ध अप्रतीत था। उस से दुनियां में कोई शोर या हलचल न मची थी। उसकी तरफ किसी का ध्यान नहीं जाता था। वह संसार के एक ऐसे कोने में हो रहा था जो कि सब से उपेक्षित रहता है। वह युद्ध चुप था, गुम था, दबा हुआ था।

(२) इस युद्ध में आज बड़ा रक्तपात हो रहा है। युद्ध भूमियां मृतकों और घायलों के रुधिर से लाल हुई पड़ी हैं। किन्तु वह युद्ध बिना रुधिर बहाए हुआ था। शत्रु को भारतीयों की जानें लेने के लिए कोई अंग छेदन या घायल करने की जरूरत न थी किन्तु उनका समूचा ही देह बिना कोई चोट खाये निर्जीव शव होकर भूमि पर पड़ रहता था और इस प्रकार उस युद्ध में शरीर से विदा होती हुई आत्मायें अपनी मातृभूमि के निष्कलंक मुख पर कोई खून का धब्बा न छोड़ जाती थीं।

(३) आज बड़े लड़खड़ धड़धड़ और विशाल तोपों के गर्जित घोर नादानुनादों से आकाश फटा जा रहा है। किन्तु उस निःशंक युद्ध में केवल पीड़ितों की दुःख भरी आहों और दबे हुए दुर्बल क्रन्दनों द्वारा दुःख और करुणा की निकलती हुई कंपपूर्ण लहरों से व्याप्त होकर एक बार समस्त आकाश मंडल अनन्त वेपथी में परथरायमान होगया था। (क्रमशः)

"शर्मन"

गुरुकुल जगत्

गुरुकुल कांगड़ी

(गुरुकुल कार्यालय से प्राप्त)

श्री आचार्य जी

कलकत्ते से श्री स्वामी जी को अस्वस्थता के कारण लौटना पड़ा था। अब आप का स्वास्थ्य पहले की अपेक्षा बहुत उत्तम है।

ऋतु

ऋतु न इधर है न उधर। दिन को धूप काफ़ी कड़ी होती है, और रात को सर्द हवा भी खूब बहता है। ऐसी ऋतु में ज्वर के कोई न कोई रोगी चिकित्सालय में पड़े ही रहते हैं। तो भी शहरों से दशा बहुत अच्छी है।

यात्रा

महाविद्यालय के ब्रह्मचारी यात्रा से लौट रहे हैं। कुछ ब्रह्मचारियों को अस्वस्थ होकर लौट आना पड़ा। श्रेणी मण्डली भी दो एक दिन में लौट आयगी। विद्यालय के ब्रह्मचारी यात्रा के लिये जा रहे हैं।

उपाध्याय गण

अवकाश के दिन होते हुए भी उपाध्याय गुरुकुल में लौटे आ रहे हैं। प्रो. लालचन्द्र एम. ए. बाहिर गये ही नहीं, गुरुकुल में ही रहे। कृषि के उपाध्याय प्रो. देवराज जी लौट आये हैं और कृषि के ब्रह्मचारियों को हांसी हिसार के खेत दिखाने ले गये हैं। प्रो. नन्दलाल बी. ए. कलकत्ते से एम. ए. की परीक्षा दे कर लौट आये हैं। प्रो. शिवराम अय्यर के भी शिघ्र ही आजाने की सम्भावना है, इस प्रकार छुट्टियों में भी गुरुकुल जन शून्य नहीं हैं।

रास्ता

गंगा बहुत कम हो गई है, और ठेकेदार ने किश्ती चलाना उचित समझा है। चण्डी घाट पर यात्रियों के लिये किश्ती दिन भर चलती है। गुरुकुल की तर्में भी यथा पूर्व चल रही हैं।

सार और सूचना

१. गुरुकुल सभा काशी के मन्त्री श्रीयुत इन्द्रदत्त शर्मा, अपनी एक लम्बी गश्ती चिट्ठी द्वारा, काशी–आर्यसमाज के व्यवहार को अनुचित ठहराते हुवे उसकी शिकायत करते हैं। इसके अतिरिक्त कन्या गुरुकुल काशी के विषय में आर्यमित्र में दो लेख प्रकाशित होने के कारण उन्होंने आर्यप्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रान्त के प्रधान से तद्विषयक प्रश्न पूछे हैं। महाशय इन्द्रदत्तशर्मा उनके उत्तर की प्रतीक्षा करते हैं।

२. संयुक्त प्रान्त हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्वागत कारिणी समिति के मंत्री श्री ज्वालादत्त शर्मा सूचना देते हैं कि सम्मेलन की बैठक ३०, ३१ आश्विन रविवार और सोमवार (१०,११ अक्टूबर) को होगी। स्वागत कारिणी समिति सगठित होगई है जिस के प्रधान लब्ध प्रतिष्ठ रईस श्री साहूराजकुमार चुने गये हैं। सम्मेलन में महात्मागांधी लालाजपतराय, मालवीय जी आदि देश के नेताओं के आने की पूरी सम्भावना है। इस सम्मेलन के सभापति के विषय में हमारी दृढ़ सम्मति यह है कि बनारस के प्रसिद्ध रईस शिवप्रसाद गुप्त ही इस पद के सर्वथा योग्य हैं। आपने गत कुछ वर्षों से अपने तन मन और धन द्वारा हिन्दी साहित्य की जो सेवा की है वह किसी भी हिन्दी प्रेमी से छिपी हुई नहीं है। आप द्वारा संस्थापित काशी का 'ज्ञान मण्डल' स्थिर साहित्य की प्रशंसनीय सेवा कर रहा है। उत्तम २ पुस्तकों के प्रकाशन के अतिरिक्त वहीं से "स्वार्थ" नाम का एक अत्यन्त उच्चकोटि का मासिक पत्र और "आज" नाम का एक बढ़िया दैनिक पत्र निकलता है। आशा है, स्वागत समिति इस परामर्श की ओर उचित ध्यान देगी। सर्व हिन्दी प्रेमियों से प्रार्थना है कि वे इस सम्मेलन में अवश्य पधारें।

३. फ़िरोज़पुर की 'पशु मित्र सभा' के मंत्री श्री भगतराम जी, एक पत्र द्वारा गधों पर विशेष रूप से दया करने की प्रार्थना करते हैं। गधों के साथ लोग बहुत निर्दयता से व्यवहार करते हैं और उन्हें अनुचित रीति से मारते हैं। जनता से उचित ध्यान के लिए प्रार्थना है।

४. श्री गंगाराम जी सन्यासी मुख्याधिष्ठाता संस्कृत पाठशाला रायकोट सूचना देते हैं कि भिन्न २ स्थानों से उनकी पाठशाला को १२०), १००), १५) ४०) और ३०) प्राप्त हुये हैं जिस के लिए वे दानियों को धन्यवाद देते हैं।

५. देशीराज्यों में जिस अन्धेरखाते और नादिरशाही के साथ काम होता है उसका वृत्तान्त हम समय २ पर पाठकों को सुनाते रहते हैं। पर अब यह इतना आवश्यक विषय हो गया है कि उसके लिए एक स्वतन्त्र रूप से आन्दोलन की आवश्यकता है। हमें यह उद्घोषित करते हुए अत्यन्त हर्ष है कि इस कुरीति का मुख्य तथा अन्य सुधारों के लिए गौण रूप से प्रबल आन्दोलन करने के लिए "देशी राज्य और संयुक्त भारत नाम का एक साप्ताहिक पत्र शीघ्र ही अजमेर से प्रकाशित होने वाला है जिस के सम्पादक दैनिक भविष्य के सहकारी सम्पादक "श्री सत्य भक्त" होंगे। वार्षिक मूल्य ३) हैं। सर्वसाधारण और विशेषतया देशी राज्यों की प्रजा को शीघ्र ही ग्राहक बन प्रकाशकों का उत्साह बढ़ाना चाहिये।

६. सहयोगी 'सभ्यता' के सम्पादक श्री शेरसिंह जी आर्योपदेशक सूचना देते हैं कि विजय दशमी के अवसर पर इस मासिक पत्रिका का एक "विजय-अंक" या "भरत मिलाप अंक" निकलेगा। मूल्य १) होगा। जनता से ग्राहक होने की प्रार्थना की गई है।

७. भादरा (बीकानेर) सेवा समिति के मंत्री सूचना देते हैं कि ता० ३ को यहां रतोना में खोले जाने वाले कसाई खाने के विरुद्ध सभा हुई थी। विरोध सूचक प्रस्ताव भी पास हुए।

आर्य्य सामाजिक जगत्

मद्रास प्रचार

मद्रास में वैदिक धर्म का सन्देश पहुंचाने के लिए जो उद्योग होरहा है, उसमें अच्छी सफलता हो रही है। पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार और स्वामी धर्मानन्द जी पहले से ही यथा शक्ति उद्योग कर रहे थे। अब पं० देवेश्वर जी सिद्धान्तालंकार को भी उनकी सहायता के लिए भेज दिया गया है। श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी का विचार कलकत्ते से मद्रास जाने का था, परन्तु स्वास्थ्य ठीक न रहने से उन्हें गुरुकुल लौटना पड़ा है। जो समाचार आरहे हैं उनसे ज्ञात होता है कि प्रचार मण्डली को अच्छी सफलता हो रही है।

उत्सवों की सफलता

शिमला आर्य्यसमाज का उत्सव बड़ी सफलता से समाप्त हुआ। सफलता के दो चिन्ह थे। उपस्थिति हर साल से अधिक थी, और चन्दा १२ सहस्र से अधिक हुआ। शिमला आर्य्यसमाज के अधिकारी इस सफलता के लिए बधाई के पात्र हैं। बधाई देने के अनन्तर, यदि अयोग्य न हो तो इतना पूछना और शेष है कि क्या सचमुच उपस्थिति की अधिकता समाज के उत्सव की सफलता का कोई चिन्ह हो सकता है? आज कल जन-साधारण की साधारण तौर पर सभा सोसाइटियों में जाने की ओर अधिक प्रवृत्ति रहती है। उसी प्रवृत्ति का प्रभाव यहां भी पाया जाता है। आर्य्य समाज के उत्सवों की सफलता उनके प्रभाव की गहराई से नापी जानी चाहिये। यह अगला साल बतला सकेगा कि सचमुच इस उत्सव से शिमला समाज की दशा में कुछ अच्छा परिवर्तन आया या नहीं? पिछले कुछ वर्षों से इस प्रतिष्ठित समाज की आन्तरिक दशा ऐसी असन्तोष जनक रही है कि यदि यह उत्सव शुभ परिवर्तन का चिन्ह है तो इससे अधिक प्रसन्नता की क्या बात हो सकती है।

सद्धर्म्म-प्रचारक की पुनरावृत्ति

सद्धर्म्म-प्रचारक के बारे में हमारा अनुमान ठीक निकला। अब उसकी बागडोर स्वयं मास्टर लक्ष्मण जी ने फिर सम्भाली है। जिस दशा से निकालने का उसे प० ब्रह्मदत्त जी ने यत्न किया था, वही फिर उपस्थित होती दिखाई देती है। प्रचारक का नया अंक स्टार प्रेस के वैदिक मिशन का विज्ञापन लेकर आया है। असहयोग के बारे में प्रचारक निम्नलिखित सम्मति देता है—

"परन्तु नहीं, आर्य्यसमाज के असहयोग का रहस्य कुछ और ही है। हमारा असहयोग हिन्दुओं से है, हमारा असहयोग मुसलमानों से है, हमारा असहयोग ईसाईयों से है, सरकार से है। इत्यादि"

इस प्रकार प्रतीत होता है कि आर्य्य समाज का संसार में किसी से भी सहयोग नहीं है। आर्य्य-समाज का बुराई के साथ असहयोग है—और सारे संसार में, सब धर्म्मों में, बुराई ही बुराई है। इसलिए सद्धर्म-प्रचारक की राय में बुराई के कारण आर्य्यसमाज का बुरी से—सारे संसार से—असहयोग है। हमें यह ज्ञात नहीं कि इस प्रतिष्ठित स्थिति को कितने आर्य्य पुरुष पसन्द करेंगे।

पं० नरदेव शास्त्री और वेदभाष्य

वेद भाष्यों के सम्बन्ध में आर्य्य मित्र में प० नरदेव शास्त्री ने कुछ विचार प्रकट किए थे। उनमें कुछ ऐसा भाव झलकता था कि यदि ऋषि दयानन्द अब तक जीवित रहते तो उनका वेद भाष्य कुछ न कुछ परिवर्तित रूप में पाया जाता। इस पर बहुत आक्षेप किए गए हैं। यह ठीक है कि ऋषि दयानन्द ने वेदभाष्य सम्बन्धी जो मूल सिद्धान्त स्थापित किये थे, वह सत्य थे। इसमें सन्देह नहीं कि अपने वेद भाष्य में ऋषि ने उन सिद्धान्तों को निभाया है, परन्तु यह भी असन्दिग्ध है कि ऋषि के वेदभाष्य का एक २ पृष्ठ चिल्ला चिल्ला कर कह रहा है कि "मेरे लिखने में समय की बहुत तंगी थी" ऋषि ने छोटे से क्रियात्मक जीवन में जो भारी काम किया वह असाधारण था। ऐसे क्रियात्मक जीवन में, जिसका एक २ मिनट भरा हुआ था, वेदभाष्य जैसे भारी काम के लिए भी बहुत परिमित समय दिया जा सकता था। ऋषि की भाष्य पद्धति अन्य भाष्यकारों की पद्धतियों से उत्तम थी, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि यदि उन्हें इस से अधिक अवकाश मिलता तो भाष्य को अधिक परिपुष्ट किया जा सकता था। यदि पं० नरदेव शास्त्री का का यही भाव है तो जो लोग आक्षेप करते हैं, उनकी भूल है। परन्तु यदि वेदतीर्थ जी का भाव यह हो कि ऋषि कुछ समय पीछे अपने भाष्य सम्बन्धी मूल सिद्धान्तों को पलट देते तो उनसे सहमत होना सम्भव नहीं है।

आगे ही आगे

आर्य्यसमाजी का सब से बड़ा चिन्ह यह होना चाहिए कि वह हरेक अच्छे कार्य्य में आगे हो। आर्य्य-समाज का मुख्य उद्देश्य वैदिक-धर्म का जीवनों में ढालना है। वैदिक धर्म मनुष्य को आदर्श के समीप ले जाने वाला हर एक तरफ, जीवन के हरेक भाग में, समाज हित के हरेक कार्य्य में, परोपकार के हरेक समारोह में आर्य्य-समाजी अन्य सब से आगे रहेगा। ऋषि दयानन्द ने आर्य्य-समाज की स्थापना इसलिये की है कि आर्य्य पुरुष संगठन द्वारा उन्नति करते हुए मनुष्य जाति का नेतृत्व कर सकें, वह जहां हैं वहीं नेता बनें। हरेक अच्छे कार्य्य में अग्रसर, हरेक धर्म युद्ध में झण्डा उठाकर आगे बढ़ने वाले, हरेक तूफान में छाती अड़ाकर खड़े होने वाले यदि कोई दिखाई दें तो आर्य्यसमाजी। जहां निजू जीवन की पवित्रता का प्रश्न हो वहां पहला नम्बर आर्य्यसमाजी का हो। जहां राष्ट्र की उन्नति की समस्या

(शेष पृष्ठ ५ के अन्त में)

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिए छपा।

ओ३म्

Registered No. A 871

श्रद्धा

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः॥
(ऋ० मं० १० सू० १५१, मं० ५)
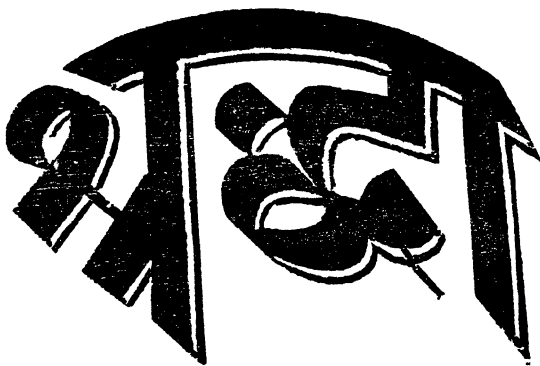
सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | १६ आश्विन सं० १९७७ वि० दयानन्दाब्द ३७। ता० १ अक्टूबर सन् १९२० ई० | संख्या २४ भाग १

हृदयोद्गार

श्री कृष्णाष्टमी

हे ! श्याम ! अपनी जगादो ज्योती
घिरी गगन मे है मेघमाला।
डरा रहा है उमड़ घुमड़ कर
यं घोर तम पश्चिमीय काला ॥ १ ॥
तुम्हारी बंशी की तान सुन कर
गरज दबे घोर-पाप घनकी।
बजादो मोहन ! उठें तरङ्गें
हृदय में जीवन की हो उजाला ॥ २ ॥
हुआ है पापों का राज जब से
छुपा है तेरा वो भक्त प्यारा।
घुमादो कट जाय पाप का सिर
चक्रो हो फिर राज धर्मवाला ॥ ३ ॥
तुम्हारी उपदेश की सुधा से
हुआ था यह तृप्त देश भारत।
तुम्हीं ने इस में था नाथ ! आकर
वो दिव्यतम एक तेज डाला ॥ ४ ॥
अनाथ रक्षक ! तुम्हीं को सारे
ये दीन दुखिया पुकारते हैं।
यही था दिन आओ फिर प्रकट हो
कटे विषम फांसकूर काला ॥ ५ ॥

"आनन्द"

पिछली यादगार !!

वे और ही दिन थे चमन में रङ्ग ही कुछ और था,
वे और थे माली कि जिनका ढंग ही कुछ और था ॥
चहकती थी कुमारियां जब हर शजर पर मौज से,
तब देख कर कुदरत को होता ढंग ही कुछ और था :
पर हाय अब तो याद ही उन की दिलों में रह गई,
अब वे कहां हैं हम कहां वह सग ही कुछ और था ॥
फिर चार आंखें गर हुई कहना पड़ेगा हाथ मल,
थे और ही हम तुम जिनारे गङ्ग ही कुछ और था ॥

पं० वागीश्वर विद्यालंकार

श्रद्धा के नियम

१. वार्षिक मूल्य भारत में ३॥), विदेश में ४॥), ६ मास का २)।

२. ग्राहक महाशय पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।

३ मास से कम समय के लिए यदि पता बदलना हो तो अपने डाकखाने से ही प्रबन्ध करना चाहिए।

प्रबन्धकर्त्ता श्रद्धा
डाक० गुरुकुल कांगड़ी (जिला बिजनौर)

ब्रह्मचर्यसूक्त की व्याख्या

पार्थिवा दिव्याः पशव आरण्या ग्राम्याश्च ये।
अपक्षाः पक्षिणश्च ये ते जाता ब्रह्मचारिणः ॥ २१ ॥

"पृथिवी और आकाश के पदार्थ, और जंगल और ग्राम के पशु हैं, जो बिना पंख वाले और पंखवाले जीव हैं-वे (सब) ब्रह्मचारी से प्रसिद्ध होते अर्थात् (ब्रह्मचर्य प्रभावाद् उत्पन्ना इत्यर्थः-सायण) ब्रह्मचर्य के प्रभाव से उत्पन्न होते हैं।"

पार्थिव पदार्थ जिनका गंधवती पृथिवी के साथ ही विशेष सम्बन्ध है, जैसे पत्थर मट्टी औषधि अन्न, जलों के नदी नाले आदि और आकाश में रहने वाले वायु और बाष्प इत्यादि सब की उत्पत्ति और स्थिति ब्रह्मचर्य के प्रभाव से ही है। जो नियम मनुष्य सृष्टि में प्रचरित है उसीका प्रसरण पशु तथा कीट पतङ्ग वनस्पति सृष्टि के अन्दर भी है। ब्रह्मचर्य का संयम एक गुण है और संयम के बिना एक तिनका भी अपना काम पूरा नहीं कर सकता। सूर्य की गति संयम का ही परिणाम है, पृथिवी में षड् ऋतु का परिवर्तन संयम पर ही निर्भर है। जिस देश के निवासियों में संयम का अभाव है उस में न भूमि फल देती है और न प्रजा की रक्षा होती है। उपजाऊ भूमियों के निवासी संयम रहित होकर भूखों मरते हैं और संयमीपुरुष, ऊसर भूमि को कमाकर, धन धान्य से पूरित हो जाते हैं। जिस भारत वर्ष में अनाज के कोष भरे रहते थे और जिस पवित्र भूमि पर दूध की नदियां बहती थीं, उसी भारत भूमि में आज बच्चे दूध बिना बिलक बिलक कर मर रहे हैं और जनता के तीसरे भाग को भर पेट खाने को नहीं मिलता कारण वही संयम का अभाव और ब्रह्मचर्य का ह्रास है। ब्रह्मचर्य के आदर्श तक पहुंचने के लिए मार्ग का पहिला पड़ाव यम नियम का पालन है। जो हिंसा से मुक्त नहीं, जो असत्य के गढ़े में गिरा हुआ है, जो दूसरों के अधिकारों की आकांक्षा नहीं छोड़ता, जिसने अपनी कर्म और ज्ञान की इन्द्रियों को वश नहीं किया और जो विषयों का दास है वह ब्रह्मचर्य की ओर पहला पग भी उठाने की शक्ति नहीं रखता। प्राचीन आर्यों की प्रार्थना नित्य यह होती थी कि पृथिवी लोक अन्तरिक्ष लोक और द्यौःलोक उन के लिए सुख कारी हों। प्राचीन शास्त्रों में मन वाणी और कर्म तीनों द्वारा प्रार्थना करने का विधान है। इस लिए शान्ति पाठ भी उन का ऐसा ही होता था। मन से उन की इच्छा होती थी किसी लोक में जो कुछ भी है उन के लिए शान्ति दायक हो, वाणी से भी वह इसी की विधि का अध्ययन तथा अध्यापन करते थे और कर्म भी ऐसे ही करते थे जिस से संसार की सब शक्ति उन के अनुकूल हो।

पृथिवी लोक अनुकूल हो, शान्ति दायक हो—इस का क्या तात्पर्य है? इस का तात्पर्य है कि भूमी हमारे अनुकूल अनाज फल और औषध उत्पन्न करे उस के लिए आवश्यक है कि वर्षा समयानुकूल हो जहां ऐसी वर्षा नहीं वहां परिश्रम से खेती को तालाब और कूप के जल से सेंचा जाय। फिर खेती के गिर्द बाड़ कर के उस की जङ्गली जानवरों से रक्षा की जाय; और बाहर के लुटेरों से राष्ट्र की सेना उस की रक्षा करे। परन्तु सब से बढ़ कर आवश्यक यह है कि कृषिकार स्वयम् कच्ची खेती को ही खाना शुरू न कर दें। अब तक किसानों में प्रसिद्ध है कि जो किसान प्रलोभन वश बीज में हीं लेनी खाने लग जाता है उसकी खेती में 'बरकत' नहीं होती। ऐसे किसान को उसी पुरुष से उपमा देनी चाहिए जो वीर्य परिपक्व होने से पहिले ही उसका नाश करने लगता है। कोई भी पेशा करने वाला हो, जो "अमानत में खयानत" करता है, जो अपने कर्त्तव्य पालन में विश्वासघात करता है उसके काम में बरकत नहीं हो सक्ती। हलवाई का शागिर्द जब आते जाते डालते निकालते, स्वयम् मिठाई मुंह में डालने लगता है तो उसकी दुकान का दिवाला निकल जाता है। फिर जिस देश का राष्ट्र ही रक्षक के स्थान में प्रजा का भक्षक बन जाय उसदेश का क्या ठिकाना है। पहले कह आए हैं कि शिक्षक और राजा दोनों संयमी ब्रह्मचारी होने चाहिए। यदि राजा कर लगाने में कड़ा हो, यदि राजपुरुष प्रजा को लूटना ही अपना अधिकार बनालें, यदि प्रजा राजा के लिए न कि राजा प्रजा की सेना के लिए समझी जाय तब मनुष्य समाज में विप्लव रहने में सन्देह क्या है।

जो अवस्था पृथिवी लोक की है वही अन्तरिक्ष और आकाश की है। वहां की सृष्टि का आधार भी ब्रह्मचर्य ही है। अप्रकाशमान पृथिवी प्रकाशमान सूर्यादि लोकों से ही प्राण शक्ति को ग्रहण कर के अपने गर्भ से मनुष्यों को निहाल कर देती है। परन्तु यदि सूर्य्य में संयम न हो तो पृथिवी उस से क्या लाभ उठा सके। और यदि वही ब्रह्मचर्य का नियम अन्तरिक्ष में काम न करता हो तो सूर्य्य और इस के गिर्द घूमने वाले ग्रह, एक दूसरे के साथ टकरा कर टुकड़े टुकड़े हो जांय। और अन्तरिक्ष और द्युलोक के नियम जानने के लिए ब्रह्मचर्य पालन की कितनी आवश्यकता है! वास्तव में यह है कि "ज़मीन और आसमान" केवल ब्रह्मचर्य नियम के आधार पर ही खड़े (स्थित) हैं।

सारांश—जिस देश में ब्राह्मण ब्रह्मविद्या के जानने वाले शिक्षक हों। वीर्यवान् संयमी क्षत्रिय राष्ट्र के रक्षक हों, जिस में धर्मानुसार प्रजा पालन के सामान प्रजा तक पहुंचाने में वैश्य लगे हुए हों और इस लिए जहां शूद्र शुद्ध भाव से सेवा व्रत का धारण किए हों—उस देश में कल्याण और शान्ति का राज्य फैलता है। शमित्योऽ३म्—

श्रद्धानन्द संन्यासी

—:०:—

श्रद्धा

जीत या मौत ?

इस समय भारतवर्ष के लिए विकट स्थान आगया है। वह अपनी सुधार यात्रा मे ऐसी जगह आ फसा है, जहां आगे कदम रखने में अनन्त और प्रतिष्ठित विजय है, और पीछे कदम रखने से मे निरादर युक्त मृत्यु है। यह सदा का नियम है, कि आगे कदम रखना कठिन है, परिश्रम साध्य है, और पीछे कदम रखना सहज है, परिश्रम से बचाने वाला है, इस कारण आगे का मार्ग बहुत श्रेष्ठ होता हुआ भी कठिन है।

हमारी अवस्था यह है। देश की आंखे खुल गई हैं हम आर्य दयानन्द के शिष्य हैं। हम बड़ी प्रसन्नता से कह सकते हैं कि हमने सान्ते पीछे भारत के राष्ट्रीय नेताओं ने मिलकर वह स्कीम तय्यार की है, जिसकी घोषणा देते २ ऋषि दयानन्द का जीवनान्त हुआ। आज देश के नेता कांग्रेस के प्लेट फार्म पर से शुद्ध स्वराज्य की घोषणा देरहे हैं। ऋषि दयानन्द ने ने आधी सदी पूर्व ही दिया था कि कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि होता है।"

कांग्रेस आज अपने देशीय न्यायालयों और विश्वविद्यालयों की घोषणा देरही है ऋषि दयानन्द ने अपने सत्यार्थ प्रकाश मे अपनी धर्मार्य सभा विद्या सभा की स्कीम बनादी थी; आज राष्ट्र के नेता स्वदेशी चलाने के लिए सादगी की आवश्यकता बता रहे हैं और कोटपैंट वाले मि० सी० आर० दास भी धोती दुपट्टा पहिनने पर बाधित किए जा रहे हैं ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का सार यही है कि ब्रह्मचर्य और सादगी के अभाव मे आर्य जाति का नाश हुआ और उन्हीं के फिर से साधन से उद्धार होगा। भावार्थ यह कि उस काल दर्शी ऋषि की सच्ची बात आज महात्मा गांधी और उनके शिष्यों के मुखों से बल पूर्वक निकल रही है।

हम उस दशा पर पहुंच गये हैं जब जाति सचाई को जान लेती है, भली प्रकार पहिचान लेती है। अब तक राष्ट्र की आंखे बन्द थीं। वह शोर गोगन का नाम आन्दोलन समझे हुए था, विदेश के अन्धे अनुकरण का नाम उन्नति जाने हुए था और दूसरों की आशा के सहारे खड़ा होने नाम उदारता माने हुए था। समय के थपेड़े खाकर, अपमान पर अपमान सहकर और निरन्तर निराशा का सामना करके जाति ने सत्य को पहिचान लिया है और वह इस परिणाम पर पहुंची है कि यदि जीना है तो अपनी आजादी जिन्दगी, नहीं तो नहीं जीना, इस समय देश के सामने जो स्कीम पेश है, उस की कई शाखाये हैं। तप है, सत्याग्रह है, असहयोग है, स्वदेशी है, राष्ट्रीय संगठन है। इन सब का मूल तत्व एक है। वह यह कि अब भारतीय राष्ट्र अपनी स्वतन्त्र बिल्कुल आजाद-जिन्दगी बिताना चाहता है।

यह तत्व बड़ा भारी है। इसके पाने का मार्ग बड़ा विकट है। तपस्या, निराहार, कारागार या मृत्यु—यह सब प्रकार के कष्ट हैं जो देश वासियों के सामने हैं। परन्तु दूसरी ओर मृत्यु है। आज तक हमारा राष्ट्रीय जीवन अधार्मिक था अस्वाभाविक था। आगे राष्ट्रीय जीवन धार्मिक और स्वभाविक होगा। इस स्थान से लौटने का तात्पर्य है मृत्यु और तिरस्कार युक्त मृत्यु। आगे चलना चाहे कितना ही कठिन है, पर जीने का केवल एक यही उपाय है।

आगे भारत वासियों के सन्मुख जो मार्ग है उसे केवल राजनीतिज्ञ लोग असहयोग आदि संकुचित शब्दों में पुकारते हैं, परन्तु मनुष्य जाति को दार्शनिक और धार्मिक दृष्टि से देखने वाला व्यक्ति उस की तह में तप स्वार्थ त्याग सत्य स्वाभिमान आदि सिद्धान्तों को काम करते हुए देखता है। वह इन सब नई स्कीमों को देश की आत्मिक जागृति समझता है, और जानता है कि इन स्कीमों को कार्य मे लाने का अभिप्राय यह है कि देश पाप के राज्य से निकल कर धर्म की सत्ता को स्वीकार कर रहा है। वह इस मे किसी राजनीतिक दल का विजय नहीं देखता, वह धर्म के उन अटल नियमों का आविष्कार देखता है जिन की महिमा एक ऋषि के पीछे दूसरे ने और एक पैगम्बर के पीछे दूसरे पैगम्बर ने गाई है। एक वैदिक धर्मी को इस काल में वेदों के उन सच्चे सिद्धान्तों का विजय दीखता है, जिनकी व्याख्या ऋषि दयानन्द ने की है। यदि तप ब्रह्मचर्य सादगी कष्ट सहन सत्य और स्वाभिमान का नाम धर्म नहीं, तो धर्म कोई वस्तु भी नहीं।

आगे धर्म का विकट मार्ग है तप का कटीला जंगल है और उस जंगल के आगे धर्मराज्य स्वराज्य या परमात्मा का साम्राज्य है। पीछे कदम रखने में बेइज्जती गिरावट और उसके कलंक से कलंकित मृत्यु है। यह भारत वासियों के हाथ मे है कि वह इन दोनों दशाओं में से किसे अच्छा समझ कर चुनते हैं।

आवश्यकता

दो ऐसे हिन्दी पढ़ाने वालों की आवश्यकता है जो कुछ संस्कृत भी जानते हो तथा अंग्रेजी लिखने बोलने की भी अच्छी शक्ति रखते हो। दो दो वर्ष के लिए अपनी सेवा अर्पण करें। आर्य सिद्धान्तों के जानने वाले हो। केवल गुजारे के लिए चालीस चालीस रुपए मासिक दे सकूंगा।

प्रार्थना पत्र वही भेजें जो त्याग भाव से काम करने को उद्यत हो। शीघ्र ही निश्चय करना है।

श्रद्धानन्द
प्रधान सार्वदेशिक आ० प्र० सभा
स्थान गुरुकुल कांगड़ी

आर्यसमाजिक जगत्

दो पार्टियों का मेल

सरकारी कमीशनरों की रिपोर्ट की भांति आर्यसमाज के दो बड़े दलों के मेल का प्रस्ताव यदि रद्दी की टोकरी में नहीं तो मेज़ के दराज़ में अवश्य बन्द हो गया है। प्रस्ताव अच्छा था-जुदायगी की अपेक्षा मेल सदा ही अच्छा होता है—पर शायद आर्य जगत् की ओर से प्रोत्साह न मिलने कारण, या शायद ऊपर के दबाव के कारण प्रस्ताव इच्छा का प्रकाश मात्र रह गया है, और आन्दोलन शान्त हो गया है। प्रस्ताव उत्तम था, उसे उठाना था तो पूरा कर के ही छोड़ना था। अधूरे यत्नों से बड़ी हानि की सम्भावना होती है। लोगों के दिल में यह विचार जम जाता है कि मेल असम्भव है। वह देखते हैं कि मेल के प्रस्ताव होते हैं और दो चार सहानुभूति के लेखों के पीछे मर जाते हैं। जनता के हृदय में ऐसे विचार जम जाने का परिणाम बुरा होता है, और मेल के विरोधियों का पक्ष बहुत मज़बूत हो जाता है। हम आशा करते हैं कि जिन महानुभावों ने इस उत्तम प्रस्ताव को उठाया था, वह मित्रों की टेढ़ी आंखों और विरोधियों के पैने तीरों से न डरेंगे और उठाये हुए प्रस्ताव को कम से कम दो चार पग आगे लेजाकर ही छोड़ेंगे।

मेल और महात्मा हंसराज जी

मेल का प्रस्ताव आर्य गज़ट ने किया था। प्रकाश ने प्रस्ताव को तो उत्तम कह कर स्वीकार किया पर यह प्रश्न उठाया था कि महात्मा हंसराज जी मेल के विषय में अपना विचार क्यों प्रकट नहीं करते। प्रकाश की राय थी कि जब तक हंसराज जी मेल के सम्बन्ध में अपनी सम्मति प्रकाशित न करें तब तक आगे विचार करना असम्भव है। महात्मा हंसराज जी आर्यसमाज के एक बड़े भाग के नेता हैं, उनका ऐसे आवश्यक प्रश्न पर बोलना आवश्यक है, परन्तु मान लीजिये कि वह मेल के पक्ष में नहीं हैं। क्या उस पक्ष में जो आर्यसमाजी दोनों दलों के मेल को आवश्यक और सम्भव मानते हैं क्या उनका यह कर्त्तव्य नहीं कि वह मेल के प्रस्ताव को और भी अधिक वेग से उठावें और प्रबलता से आन्दोलन करें? कठिनाइयों को कौन नहीं मानता पर आर्यसमाज की दो पार्टियों का मेल इंग्लैण्ड और फ्रांस को मेल की अपेक्षा और हिन्दू मुसलमानों के मेल की अपेक्षा अधिक कठिन नहीं है। महात्मा हंसराज जी यदि मेल के पक्ष में आवाज़ उठावें तो बहुत शीघ्र मेल हो सकता है पर उनका न बोलना इस सिद्धान्त को झूठा नहीं बना सकता कि बिखरी हुई शक्तियों की अपेक्षा मिली हुई शक्तियां अधिक प्रबल होती हैं। जो लोग इस सचाई को मानते हैं उनके लिये यह बहाना नहीं चल सकता कि मेल के पक्ष में महात्मा हंसराज जी क्यों नहीं बोलते?

बहुतायत या कमी

प्रायः शिकायत की जाती है कि आर्य समाज में काम करने वालों की कमी है इस शिकायत में कुछ अत्युक्ति दिखाई देती है। आर्य समाज में काम करने वालों की संख्या में इतनी कमी नहीं है। जितनी कमी उनके संगठन की है। संगठन का तात्पर्य यह है कि हरेक कार्य कर्त्ता अपने २ स्थान पर नहीं है। एक मकान बनाने के लिए ईंटें काफी से ज्यादा हो सकती हैं पर यदि वह यथा स्थान न रखी तो मकान कैसे बनेगा? मकान तो तभी बनेगा जब हरेक ईंट अपने स्थान पर रखी जायगी। आंखें उठा कर देखिये तो यह कहने को जी न चाहेगा कि आर्य समाज में कार्य कर्त्ताओं की कमी है। योग्य पुरुष बहुत हैं, ऐसे लोग भी बहुत हैं जो आर्य समाज की सेवा में जी जान देने को तय्यार हैं पर कमी यह है कि वह अपने स्थान पर नहीं। दृष्टान्त लीजिये। गुरुकुल वृन्दावन को इस समय आचार्य या मुख्याधिष्ठाता की आवश्यकता है। संयुक्त प्रान्त में बा० गंगाप्रसाद एम. ए., डा० घासीराम एम. ए० आदि कई महानुभाव ऐसे हैं, जो न केवल यही कि गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता या आचार्य हो सकते हैं, वस्तुतः उनका स्थान भी वही है। परन्तु वह सज्जन गुरुकुल के लिये आचार्यों के चुनाव करने तक ही अपना कर्त्तव्य पूरा समझते हैं, 'राजपाट' त्याग कर के बनवास को तय्यार नहीं होते। इसी प्रकार अन्य विभागों की दशा है। योग्य व्यक्तियों की ऐसी कमी नहीं है जैसी कमी कि व्यक्तियों को यथा स्थान बिठा देने की है।

सिरों का भिड़ना

आर्य समाज के घेरे में जो झगड़े होते हैं, उन्हें देखकर कभी २ तो यह भी विचार उठता है कि शायद आर्य समाज में काम करने वाले और आगे बढ़ने की उमङ्ग रखने वाले उत्साही नवयुवक बहुत अधिक हैं और कर्मक्षेत्र, जिसमें शक्तियों का प्रयोग किया जाता है थोड़ा है। उमङ्ग को पूरा करने का स्थान कम है, उमंगी बहुत हैं। स्थान थोड़ा है, सिर बहुत हैं। इसी लिए वह प्रायः परस्पर टकराया करते हैं। इस टक्कर को दूर करने के दो ही उपाय हैं। एक तो यह कि आर्य समाज का कार्यक्षेत्र खूब विस्तृत किया जाय और दूसरा उपाय यह है कि उमंगी नवयुवक आर्य समाजी रहते हुए भी अन्य राजनीतिक साहित्यिक आदि क्षेत्रों में कार्य करें। उमङ्ग पूरा हो जाने पर यह असम्भव नहीं है कि यह टक्कराहट दूर हो जाय।

इन्द्र

—:•:—

(पृ० ५ का शेष)

अभी मैंने १०, १२ लेख यहां के एक अंग्रेज़ों के अर्ध साप्ताहिक अखबार में गुरुकुल के विषय में दिए थे। बहुतों ने मुझे पत्र लिखे। बहुतों ने मुझसे मौखिक बात चीत की। कई अक्लमन्दों ने मुझे समझाया कि यदि मद्रास प्रान्त में गुरुकुल खोलना चाहते हो तो ब्राह्मणों के लड़कों को ही लेना अच्छा होगा। अब्राह्मणों की वेदों में गति नहीं हो सकती।

ब्राह्मण बड़ी भूल में हैं। वे अपने को जितना बड़ा समझते हैं वे अन्दर से उतने ही छोटे हैं।

ब्राह्मण तथा अब्राह्मणों के झगड़ों के शान्त होने की एक ही आशा है। यदि आर्य्यसमाज मद्रास में लगातार काम करता रहे तो सम्भव है कि कौफी-हौसों के ऊपर जो 'केवल ब्राह्मणों के लिए' का फट्टा लटका रहता है उसे हटवाया जा सके और धीरे २ उन्नति की तरफ पग बढ़ाया जा सके।

———

हमारी मद्रास की चिट्ठी

(निजूसंवाददाता द्वारा प्राप्त)

मैं अपनी पिछली चिट्ठीमें बतला चुका हूं कि ब्राह्मण अब्राह्मण का झगड़ा मद्रास प्रान्त में उचित सीमा को उल्लङ्घन कर चुका है। इस झगड़े में दोनों ओर से भूलें हुई हैं और लगातार होती चली जा रही हैं। आज की चिट्ठी में उन्हीं भूलों की कुछ व्याख्या करने की मेरी सलाह है।

'अ-ब्राह्मणों' का कुछ हिस्सा तो ब्राह्मणों के दबाव में आकर आत्मविश्वास को सर्वथा खो चुका है। उनकी समझ में यह आता नहीं सकता कि दुनियां में कोई ऐसा भी ब्राह्मण है जो इन के साथ बैठकर भोजन करसके। कॉफ़ी उड़ाने और १०,२० फल डकार जाने का यहां प्रश्न नहीं है। यह तो चलते फिरते सपाटे में हो ही जाता है। हां, एक ब्राह्मण अ-ब्राह्मण के साथ बैठकर पेट भर चावल खा जाय—यह नहीं हो सकता। ऐसे अ-ब्राह्मणों को मेरी दृष्टि में बहुत देर तक सामाजिक जीवन की आशा छोड़ देनी चाहिये। उनका दूसरा हिस्सा बड़े तेज़ मिज़ाज़ का है। उस विचार के लोग कहते हैं कि हम वर्ण भेद को अब इस ज़मीन पर जीता नहीं छोड़ेंगे। ब्राह्मण-क्षत्रिय वैश्य-शूद्र का भेद हम नहीं चाहते। हमें वेद नहीं चाहिये, गायत्री नहीं चाहिये, यज्ञोपवीत नहीं चाहिये—इन्हीं से तो अब तक अत्याचार होता रहा, जान बूझ कर उसी भूल को अपने सिर पर क्यों मढ़ावें। आर्यसमाज वर्ण व्यवस्था के विरुद्ध नहीं, आर्यसमाज गुण कर्म से वर्णव्यवस्था मानता है। अब्राह्मण कहता है कि इसे से फिर पुराने झगड़े खड़े हो जायेंगे तुम एक ब्राह्मणी राज्य को हटा कर दूसरे ब्राह्मणी राज्य की स्थापना करना चाहते हो! बस, ब्राह्मण शब्द को मुख से मत निकालो।

अब्राह्मण, ब्राह्मण के अत्याचारों से दिक आचुका है। ऊपर की दी हुई अब्राह्मण की वर्ण-व्यवस्था के विरुद्ध दी हुई युक्ति यद्यपि बहुत ही निकम्मी है तथापि ऐसी युक्ति देने का कारण उस का अपनी परिस्थिति से बाधित हो जाना है। 'ब्राह्मण' शब्द की धीमी सी गूंज भी उस के मन में अत्याचार की लड़ी की लड़ी को जगा देती है। वह क्या करे? उस के लिए ब्राह्मण और अत्याचार का एक ही अर्थ है।

इस समय भारत वर्ष में इग्लैंड का हवड़ा चल रहा है। इस मार में कई पीठ पकड़े खड़े हैं, कई धरती पर बिछ चुके हैं कई अन्तिम सांस ले रहे हैं और कई मट्टी का ढेर हो चुके हैं। ऐसी अवस्था में भी मौका पड़ने पर ब्राह्मण अब्राह्मणों पर और अब्राह्मण ब्राह्मणों पर अपना हवड़ा चला देने में नहीं चूकते। जब सिर दबाये सभी अपनी २ जान की फ़िकर में हैं तब भी देसी-हवड़ा चल पड़ता है; जब विलायती हवड़ा रुक जायगा तब ग़रीब अ-ब्राह्मणों को और उस से भी ज़्यादह अछूतों की क्या दशा होगी—इसे मेरे पाठक खूब विचारें। इसी लिये अब्राह्मण ब्राह्मणों पर हल्ला बोलते हुए कभी २ स्वराज्य पर भी हमला कर दिया करते हैं।

यद्यपि अब्राह्मणों पर किये गये अत्याचारों को देख और सुन कर उन की हरेक हरकत के पक्ष में ही युक्ति देने को जी चाहता है तथापि उन के बहुत से काम भूल हैं और भारी भूलें हैं। ब्राह्मण के नाम से ही खिज जाना, स्वराज्य के विरुद्ध चिल्ला उठना भूलें ही हैं। जिन को मद्रास में अब्राह्मण कहा जाता है उन्हें महाराष्ट्र में मराठा कहा जाता है। जिस दृष्टि से ब्राह्मण मराठे को देखता है उसी दृष्टि से मराठा अछूत को देखता है। ब्राह्मणों की एकता और सभ्यता की अपीलें प्रायः एक तर्फी होती हैं। वे स्वयं ब्राह्मणों के से समाजिक अधिकार पाना चाहते हैं परन्तु एक बड़े समाज को स्वयं घृणा की दृष्टि से देखते हैं। यह मतलबी सौदा है और यह भी अब्राह्मणों की बड़ी २ भूलों में से एक है। ब्राह्मण अपने आपको जितना बड़ा समझते हैं उतनी ही बड़ी २ भूलें कर रहे हैं। ब्राह्मण-वृत्ति यदि आज वे धारण करलें तो कोई भी झगड़ा न रहे। ब्राह्मण का मुख्य काम त्याग है। सायण, माधव ने विजय नगर को म्लेच्छों के हाथ से छीन कर स्वयं उसका उपभोग नहीं किया। यदि वह चाहता तो उसे रोकने वाला कौन था? किन्तु नहीं, उसने हरि हर बुक्काराय को गद्दी पर बिठलाया और अन्त में सन्यास लेकर विद्यारण्य स्वामी के नाम से ११ वें शंकराचार्य के आसन को अलंकृत किया सच्चे ब्राह्मण दक्षिणप्रान्तों में ऐसा उत्तम आदर्श रख चुके हैं लेकिन उनसे शिक्षा लेने वाला कोई दिखाई नहीं देता। इस समय ब्राह्मणों की आंखें पर रुपये का जादू चढ़ चुका है। पैसा देखते ही उन के मुख से लार टपक पड़ती है। लोभ की मात्रा उन में बढ़ती जा रही है। दक्षिण प्रान्तों में बहुतायत से पैसे की खानें—ऊंची नौकरियें—ब्राह्मणों की ही मलकीयत बनी हुई हैं। ब्राह्मण भी कहलाना और पैसे की थैलियों पर भी बैठना—सन्यासी भी कहलाना और इस कदम पर रनवास भी रखना इसे न तो अ-ब्राह्मण ही पसन्द कर सकता है और न मैं ही पसन्द कर सकता हूं।

अ—ब्राह्मण कहता है कि दुकान्दारी और पैसा पैदा करना तो मेरा काम है। ब्राह्मण ने यह काम सम्भाल लिया, इसी लिए मेरी दुर्गति हो रही है। अ—ब्राह्मण ने तो माता के गर्भ से पैसे की मुहारनियां पढ़ी हैं। उस के देखते २ ब्राह्मण उस के शिकार को उड़ा ले जाय, यह उस से भला कब सहन हो सकता है?

और कुछ नहीं तो एक बात तो ठीक ही है। यदि ब्राह्मण को भी पैसे की भूख लग गई है तो वह अपने को ब्राह्मण कहना छोड़ दे। पैसा भी खाते जायं और 'ब्राह्मण' 'ब्राह्मण' भी जपते जांय यह कहां का न्याय है? निकम्मे ब्राह्मणों का तो यह हाल है सो है ही परन्तु महाजनी ब्राह्मण इन से भी दो कदम आगे हैं।

इस भूल के साथ २ ब्राह्मण लोग एक और बड़ी भूल कर रहे हैं। वे अब्राह्मणों को वेद पढ़ने के सर्वथा अयोग्य समझते हैं। अपने को सातवें आस्मान का फ़रिश्ता समझते हैं।

(शेष पृ० ४ के अन्त में)

विचार तरंग

योरोप का युद्ध तथा
भारतीय दुष्काल
(गतांक से आगे)

(२२)

वह युद्ध चाहें कितना विचित्र था, किन्तु घातकता में कभी कम न था। वह शान्त था, किन्तु उस शान्ति के ही सन्नाटे में करोड़ो जानें निकल रहीं थीं। उस दिन अनगिनत ही भारतीय आत्मायें शरीरहीन होकर जारही थीं। अकेले भारत ने उस युद्ध में वीरगति को जितनी आत्माओं की उपलब्धि करायी थी उतनी आज योरोप के सात लड़ते हुवे देश मिलकर भी और आपस में तोपों, बन्दुकों, गैसों, गोलों तथा अन्य भीषणतम अस्त्रों से एक दूसरे को मारते हुवे भी नहीं करा सके हैं। कोई बात नहीं यदि वह भारत द्वारा आत्माओं की उपलब्धि ऐसी चहल पहल जोश खरोश और हल्ले गुल्ले के साथ न कराई गई हो जैसे कि यह वर्त्तमान युद्ध करा रहा है, किन्तु निःसंदेह वह थी इस से बहुत २ अधिक। ठहर जाओ, मन ! अब बस करो !! समाप्त करो। मुझे काफी दूर ले आये अब, अधिक नहीं। अब बस, और केवल मुझे अब एक बार उन निर्दोष आत्माओं को संबोधित करलेने दो जो कि निष्प्रयोजन ही उस युद्ध में शरीर छोड़ परलोक सिधार गए।

(२३)

हे उस युद्ध में बलिदान हुवे आत्माओ ! ऐ इस प्रकार वीरगति को प्राप्त हुवे दीन भारतीय भाइयो ! तुम बिना कुछ कहे सुने, संसार से बिल्कुल बेवास्ता चुपचाप बिदा हो गए, तुमने 'कोई विक्टोरिया क्रॉस' पाने की इच्छा न रखी और नाहीं कुछ देर प्रतीक्षा की कि कोई अवसर पा कर हमारी परम सहन शीलता और वीरता की कभी प्रशंसा करे। इस लिए यदि आज संसार तुम्हें (तुम्हारे विषय में कुछ भी) जानने से इनकार करता है, तो ऐसा ही सही। यदि संसार की दुरूप्युक्त आंखे आज हमारी विपत पर आंसू बहाने के लिए तय्यार नहीं है, तो कोई नहीं—ऐसा ही सही। और यदि तुम्हारा इतनी भयंकर संख्या में और ऐसी असीम वेदनाओं के साथ तड़फ तड़फ कर मरजाना सुन कर कोई हृदय नहीं पिघलता या सहानुभूति तथा करुणा के भाव से नहीं आविष्ट होता, तो नहीं सही। तुम्हें इसकी भी कुछ परवाह नहीं। इस लिए शर्मन भी इस विषय में अपने को झंझट में नहीं डालता। वह तुम्हारी चिन्ता का भार उस भगवान् को सौंप देता है वही करुणानिधान जिसने कि तुम्हें तुम्हारी इस दुःख की पराकाष्ठा के समय अपनी शरण में उठा लिया है। शर्मन कि अन्त में केवल एक यही वांछा और याचना है कि उस की आंखें तुम्हारी उन विपदग्रस्त किन्तु एक विचित्र सौन्दर्य से भरी मूर्त्तिओं को कभी न भर सकें और उसके कान तुम्हारे उस गुप्त उपदेश के सुनने के लिये सदा खुले रहें जोकि तुम अपनी जानें गवांते हुवे अपने अन्द मुखों से संसार को सुनाते हुवे चले गये थे।

(समाप्त) "शर्मन्"

—:०:—

(क्रोड़ पत्र का शेष)

रामा सुन्दरी—अनुवादक—पं० रामेश्वर प्रसाद पाण्डेय। प्रकाशक—हरिदास एण्ड कम्पनी। कम्पनी से ही १॥।) में प्राप्य। यह उपन्यास श्री प्रभात कुमार मुखोपाध्याय बी. ए. बारिष्टर की इसी नाम की बङ्गला-पुस्तक का हिन्दी अनुवाद हैं। पुस्तक मनोरञ्जक है, पढ़ते समय मन लगता है, शीघ्र छोड़ने को जी नहीं चाहता। कई एक स्थल मन को मन्त्र मुग्ध भी कर लेते हैं। पर "पुस्तक पढ़ते पढ़ते हृदय—तन्त्री के सूक्ष्म से सूक्ष्म तार एकाएक झन झना उठते हैं" यह मानने का साहस हम नहीं कर सकते। कई एक घटनायें अपूर्ण हैं और उन के क्रम में भी पर्याप्त न्यूनतायें हैं। अनुवाद साधारण तौर पर अच्छा हैं, पर 'दुर्दान्त' 'पालित' 'अभावनीय' 'दोर्दण्ड' आदि शब्द कई स्थानों पर बहुत अधिक खटकते हैं। साधारण बातचीत का रूपान्तर करने में अनुवादक ने अच्छी सफलता प्राप्त की है। पुस्तक का रंग, ढंग, कागज, छपाई आदि सब उत्तम है, चित्रों से पुस्तक का सौन्दर्य और भी बढ़ गया है।

चिकित्सा चन्द्रोदय, लेखक—हरिदास वैद्य। प्रकाशक—हरिदास एण्ड कम्पनी। पृष्ठ संख्या ३५१+१४+६। मूल्य ३) चिकित्सा का साधारण ज्ञान सब मनुष्यों के लिए आवश्यक है, इस के बिना स्वास्थ्य रक्षा के साधारण नियमों से परिचित रहना सम्भव नहीं है। वैद्यक जैसे कठिन, परिश्रम साध्य परन्तु आवश्यक विषय का, सरलता पूर्वक सर्वसाधारण को ज्ञान कराने वाली पुस्तकों का हिन्दी भाषा में सर्वथा अभाव था। इस अभाव को इस पुस्तक ने बहुत कुछ दूर कर दिया है। अभी इस पुस्तक का पहला भाग प्रकाशित हुआ है, आशा है कि दूसरा भाग भी शीघ्र ही प्रकाशित होजायगा। इस पहले भाग में चिकित्सा के अनेक ज्ञातव्य विषयों को अच्छी प्रकार सरल ढंग से समझाया गया है। सर्वसाधारण इस पुस्तक के द्वारा चिकित्सा का न केवल साधारण—पर आवश्यक ज्ञान उपलब्ध कर सकते हैं। शरीर रचना के भाग को अनेक रंगीन चित्रों द्वारा अधिक उपयोगी बनाने का यत्न किया गया है। रोग, निदान, चिकित्सा, त्रिदोष, धातु, ऋतु, औषधि आदि सभी कठिन विषयों का सरल भाषा में अच्छा वर्णन किया गया है।

पुस्तक की छपाई कागज आदि के विषय में लिखने की कोई आवश्यकता नहीं; 'हरिदास एण्ड कम्पनी' का नाम ही पुस्तक की सुन्दरता के लिए अच्छा प्रमाण है। पुस्तक हर प्रकार से उपयोगी है, और वैद्यक के शिक्षणालयों में पाठ्य पुस्तकों के रूप में रखी जा सकती है।

———

ओ३म्

श्रद्धा १६ आश्विन १९७७ का क्रोडपत्र

हिन्दी—साहित्य-संसार

स्त्रियों का स्वर्ग—

आकार मझोला पृष्ठ संख्या ४३५, मूल्य २) मिलने का पता मैनेजर स्वर्ग-माला चेतगंज, बनारस छपाई और कागज़ साधारण।

मूल पुस्तक गुजराती में हैं जिसका हिन्दी अनुवाद महावीर प्रसाद गहमरी जीने किया है जो कि 'स्वर्गमाला' की मानवीं पुस्तक है। इस में कथा रूप से स्त्री उपयोगी उपदेशों का समावेश करने के अतिरिक्त सामाजिक कुरीतियों के त्याग करने के ढंगों पर भी प्रकाश डाला गया है। यद्यपि कहीं कुछ अरोचकता की गन्ध अवश्य है पर तथापि पुस्तक देवियों के हाथों में देने योग्य है। पुरुषों के हित के लिए भी कई बातें होने से इसका महत्व और भी बढ़ गया है। गहमरी जी हिन्दी के पुराने लेखक हैं, इस लिए आप द्वारा किये गये अनुवाद की भाषा के विषय में हमें कुछ विशेष वक्तव्य नहीं है।

संस्कार विधि-मण्डनम् (अर्थात् महर्षि-दयानन्द कृत संस्कार विधि पर किये आक्षेपों का उत्तर) लेखक, पं० राम-गोपाल शास्त्री धर्माध्यापक, लाहौर आकार बड़ा, पृ० सं० ८६, मूल्य ||) मिलने का पता, रामदास बधवा मैनेजर, शहालमी दरवाज़ा; बाज़ार मच्छी हट्टा, लाहौर।

महर्षिदयानन्द की 'संस्कारविधि' पर अन्य मतावलम्बी प्रायः आक्षेप किया करते हैं। वे आक्षेप प्रायः निर्मूल ही हैं और इतने प्रसिद्ध हैं कि उनके वर्णन की यहां कोई विशेष आवश्यकता नहीं है। आर्यसमाज के पण्डितों की ओर से यद्यपि उन आक्षेपों का उत्तर दिया जाता रहा है पर तथापि ऐसी पुस्तक अभी तक कोई नहीं देखने में आई जिस में उन सब आक्षेपों और उत्तरों के संग्रह के साथ २ उन पर ज़रा गहरी दृष्टि से विचार किया गया हो। हमें यह लिखते हुए हर्ष होता है कि वर्तमान पुस्तक के प्रकाशन से यह अभाव प्रायः पूरा हो गया है। ग्रन्थकर्त्ता ने महर्षि दयानन्द के कथनों का अन्धाधुन्ध ही समर्थन नहीं किया है किन्तु युक्ति पर तोलते हुए प्रमाणों से पुष्ट किया है। प्रमाणों के विस्तृत संग्रह को देखते हुये यह निसंकोच कहा जा सकता है कि ग्रन्थकर्त्ता ने खोज और परिश्रम के साथ पुस्तक लिखी है। इस सफलता के लिए हम लेखक महोदय को हार्दिक बधाई देते हैं।

कौंसिल की मेम्बरी—लेखक पं० राधे-श्याम मिश्र आकार छोटा पृ० सं० ६३; मूल्य ।), मिलने का पता- माधवी साहित्य भवन (इटावा)।

कौंसिल की मैम्बरी के लिए आज-कल जो धूम मची हुई है, उस पर पं० राधेश्याम मिश्र ने यह एक छोटा सा नाटक लिखा है। इस में हास्यरस का भी कहीं कहीं समावेश किया गया है।

धाम—लेखक श्री लक्ष्मीनारायण दीन-दयाल अवस्थी। आकार मझोला, पृ० सं० ७६, मिलने का पता हिन्दी साहित्य भण्डार; लखनऊ। सद्विचार ग्रन्थमाला की यह १२ वीं पुस्तक है। प्राचीन शास्त्रों के अशुद्ध ज्ञान के कारण भारत वासियों में आलस्य, निष्कर्मण्यता और देव के ऐसे विचार फैल गये हैं जिनके समूलोन्मूलन की अत्यन्त आवश्य-कता है। प्रस्तुत पुस्तक इसी उद्देश्य से लिखी गई है। इस में कर्म का महत्व और उसकी वास्तविक व्याख्या की गई है। पुस्तक संग्रहणीय है।

[गीतानुशीलन]—लेखक और प्रकाशक श्री० गणेशचन्द्र, प्रामाणिक। आकार; बड़ा, पृ० सं० ४८ मूल्य। ।)॥

[मढ़ा पाटक] [खड़गपुर] से लेखक से प्राप्य।

गीता पर श्री० प्रामाणिक जी ने प्रश्नोत्तर रूप से "सायानन्दी" नाम की स्वतन्त्र रूप में विस्तृत व्याख्या प्रारम्भ की है जो कि खण्ड रूप से प्रकाशित होगी। इसका प्रथम खण्ड हमें प्राप्त हुआ है। व्याख्या साधारण है। गीता-प्रेमियों के लिए शायद यह उपयोगी हो सके।

रत्नमंजूषा (ज्ञान रामायण)

लेखक और प्रकाशक—भद्र गुप्त वैद्य आयुर्वेद विशारद; रस शास्त्री। पृ० सं० ८६, मूल्य ।=), गणेश औषधालय तिलहर ज़ि० शाहजहांपुर से प्राप्य।

तुलसी रामायण का हिन्दी साहित्य में जो उच्च स्थान है और हिन्दू मात्र में जितना उसका विस्तृत प्रचार है, वह किसी से भी छिपा नहीं है।

इस पुस्तक में वैद्य महोदयने उसी तुलसी रामायण में से भिन्न २ विषयों पर उपदेशों का संग्रह किया है। संग्रह उत्तम होने से उपयोगी है।

मासिक पत्र

[सौरभ].—इस नाम का एक मासिक पत्र झालरा पाटन राजपूताना से निक-लने लगा है जिसका प्रथम अंक इस समय हमारे सामने है। पत्र में उत्तम, रोचक और सुपाठ्य लेख रहते हैं। सम्पाद-कीय टिप्पणियां भी अच्छी होती हैं; इस अंक में समरांगण नीति और सौर मण्डल—ये दोनों लेख विशेष खोज के साथ लिखे गए प्रतीत होते हैं। वार्षिक मूल्य ५)

फिज़िकल-कल्चरिस्ट:— इस नाम का एक अंग्रेज़ी मासिक पत्र बंगलोर (मैसूर) से निकलने लगा है जिसका दूसरा अंक हमें समालोचनार्थ प्राप्त हुआ है। पत्र में शारीरिक-उन्नति के भिन्न २ साधनों पर उपयोगी लेख होते हैं। इस देश के नौजवानों की क्षीण शारीरिक दशा को उन्नत करने में यह पत्र बहुत सहायक हो सकता है। मिलने का पता - डाक० बसावान गुड़ी (बंगलोर) वार्षिक मूल्य ३॥) है।

[गुप्त धन]—[प्रकाशक] [मन्नालाल] प्रकाशक, [ज्ञानमण्डल] काशी। मूल्य सजिल्द २)

अंग्रेज़ी में 'सिलस मरनर' नाम की एक पुस्तक है उसी के आधार पर इस की रचना हुई है। जिस प्रकार वो पुस्तक इस समय अत्यावश्यक है, उस में [illegible] है। हर्ष की बात है कि

धर्म यात्रा का प्रथम पथ

(लेखक श्री० पं० युधिष्ठिर जी विद्यालंकार आर्य्योपदेशक)

(गतांक से आगे)

(४) एक २० वर्ष के पुराने आर्य के घर में गया। वहां जाते ही उन की बैठक में ऐसी तसवीरें दिखाई दीं जिन का आर्य गृह में होना सर्वथा अनुचित है। एक आर्य जीवन चाहे कितना ही उच्च क्यों न हो पर उस की बैठक में बुरी तसवीरें होने पर उसके विषय में पहला अनुमान यही होता है कि ये तसवीरें उसको अवश्य भाती होगीं तथा उसके मन का झुकाव इसी ओर होगा और बुरी वा अच्छी तसवीरों का प्रभाव मन पर बुरा वा अच्छा अवश्य पड़ता है। इस भांति निवेदन करके उन्हें बुरी तसवीरें त्यागने और उनके स्थान में अच्छी तसवीरें लगाने के लिए प्रोत्साहित किया। उन्होंने मेरे निवेदन पर ध्यान दिया पर उतना नहीं जितना कि देना चाहिए।

(५) एक स्थान पर आर्य्यकुमार सभा और आर्य्य बाला सभा दोनों थीं। उन की उन्नति के लिए उत्साह दिलाया। मन में विचारा कि प्रत्येक समाज के साथ आर्यकुमार सभायें और आर्यबाला सभायें होनी चाहियें, किन्तु इन सभाओं को खुला छोड़ देना वा उच्छृंखल कर देना योग्य नहीं। इस से प्रायः उन्नति के स्थान में अवनति और लाभ के स्थान में हानि ही होती है। इन की उन्नति के लिए इन के ऊपर प्रत्येक अधिवेशन में न्यून से न्यून एक अधिष्ठाता होना आवश्यक है। कुमारों का अधिष्ठाता कोई धार्मिक विद्वान् प्रभावशाली आर्यपुरुष होना चाहिए और बालिकाओं की अधिष्ठात्री कोई धर्मात्मा विदुषी प्रभावशालिनी स्त्री होनी चाहिए। यदि सुयोग्य स्त्री न मिले तो उत्तम गुणयुक्त वृद्ध पुरुष को बाला सभा का अधिष्ठाता बनाना हितकर है। जब कुमार २५ वर्ष के युवक और १६ वर्ष की युवती हो जावें उस समय वे नियमानुसार इन सभाओं के सभ्य न रह सकें। इस अवस्था को प्राप्त होते ही युवक लोग आर्य्यसमाज में और युवतियें आर्य स्त्री समाज में नियमपूर्वक प्रविष्ट हुआ करें।

(६) एक सिख भाई आर्यसमाज में आकर भी बड़ी भक्ति और और पूर्ण प्रीति से व्याख्यान सुनते थे और अपने गुरु नानक देव तथा गुरुग्रन्थ साहब आदि पर भी बहुत श्रद्धा रखते थे तथा कभी कभी कई प्रभावशाली आर्य व्याख्यान सुनकर सन्देह में पड़ जाते थे कि मैं क्या मानूं? जब उनका यह स्वरूप मेरी समझ में आगया तो मैंने उन से ३ घन्टा तक इस विषय पर वार्त्तालाप किया कि मनुष्य को धर्म का ग्रहण किस प्रकार से करना चाहिए। उन्हें समझाया कि प्रत्येक मनुष्य को वही धर्म ग्रहण करना चाहिए जिस में वह पूर्ण सत्यता पाता हो अथवा अन्य मतों की अपेक्षा अधिक सत्य पाता हो—यह नहीं सोचना चाहिए कि क्योंकि मेरे पिता और मेरी माता का यह मत है, इस लिए मैं भी यही मानूं। प्रत्येक हिन्दु प्रत्येक सिख प्रत्येक मुसलमान और प्रत्येक ईसाई को इस विषय पर भली भान्ति विचार करना चाहिए कि मैं किस धर्म को ग्रहण करूं। जिसको जो धर्म अधिक सत्यपूर्ण समझ में आता हो उसे वही धर्म स्वीकार करना और उसी के बताए हुए नियमों के अनुसार आचरण करना चाहिए। इस प्रकार से बहुत कुछ कहने सुनने से अन्त में उस ने आर्य धर्म को ही सत्य पूर्ण जाना और माना किन्तु बिरादरी के डर से केशों को कटवाना अभी शीघ्र ही उचित न समझा। वैदिक धर्म के सिद्धान्त केवलमात्र सत्य से परिपूर्ण हैं। अतएव प्रत्येक सुविचार शील भाई को सत्य धर्म का अन्वेषण करते हुए वैदिक धर्म के सिद्धान्त ही मन वचन तथा कर्म से स्वीकार करने पड़ेंगे।

यदि संसार के सब शिक्षित मनुष्य इसी नियम को पालन करना प्रारम्भ कर दें कि जिस मत वा धर्म में पूर्ण सत्य वा अधिक सत्य होगा उसी को स्वीकार करेंगे, मातापिता आदि से प्राप्त हुए सम्प्रदाय को नहीं और इस के लिए सत्य के अन्वेषण में निरन्तर तत्पर हो जावें तो वह दिन शीघ्र ही आसकता है जब संसार भर के सब शिक्षित मनुष्य वैदिक धर्म वा आर्य धर्म के अनुयायी बन जावेंगे और प्रत्येक नगर तथा प्रत्येक ग्राम में आर्यसमाजें बन जावेंगी। कृपालु परमात्मा की कृपा से वह दिन शीघ्र ही आवे जब कि सकल भूमण्डल में केवल मात्र एक अद्वितीय वैदिक धर्म की संस्थापना हो जावे।

(७) इस प्रथम पथ, का पथिक होते हुए—१—'जीवन सुधार की आवश्यकता' - २—'शरीर सुधार के साधन'—३—'इन्द्रिय सुधार के साधन'—४—'मन को सुधारने के साधन' ५—'सोने से पहले बोलने योग्य मन्त्र'- ६—'ब्रह्मचर्य के नियम'— इन विषयों पर व्याख्यान दिये ताकि वेद की आज्ञा के अनुसार अपना जीवन बनाने की ओर आर्य भाई तथा आर्य बहिनें विशेष ध्यान दें। परमात्मा कृपा करें कि प्रत्येक के मन में अपने जीवन को अधिकाधिक उच्च एवं पवित्र करने की स्थिर वा दृढ़ अभिलाषा उत्पन्न हो और उस अभिलाषा के अनुसार सब का जीवन बन जावे और उनके द्वारा वैदिक धर्म का प्रचार प्रति दिन अधिकाधिक बढ़े जिस से समस्त आर्य्यवर्त्त में तथा सकल देश देशान्तरों में सत्य सुख सच्ची शान्ति और सात्विक आनन्द का संचार हो ॥ ओ३म् शम् ॥

सार और सूचना

१. मंत्री आर्य्यसमाज सूचना देते हैं कि पं० सीताराम जी शास्त्री की अकालमृत्यु के कारण वहां एक सभा हुई जिस में उन के परिवार वालों के साथ सहानुभूति प्रकट की गई।

२. मंत्री आर्य्यसमाज धौलपुर लिखते हैं कि ३०-१ ८-२० को समाज ने रतौना में खोले जाने वाले कसाई खाने के विरुद्ध प्रस्ताव पास किया।

समाचार और टिप्पणी

पति निलामी पर !!

भारत में आज कल जितनी महंगी है, उससे कई गुणा अधिक यूरुप और अमेरिका में है। इसी से बाधित हो, पिछले दिनों, कई महिलाओं ने अपने पतियों को बेचने का विज्ञापन दिया है जिसकी आमदनी से वे अपना पेट भरेंगी ! इस सप्ताह की विलायती डाक से जो समाचार आया है, उसे सुन हमारे पाठक बहुत ही चकित होंगे। और वह यह कि मिसेज़ रसेल नाम की एक महिला ने अब अपने पति को निलाम करने की सूचना दी है। वह कहती है कि मुझे इससे २० हज़ार पाउण्ड की आमदनी होगी। भारतीय महिला जिन पापों के लिए स्वप्न में भी नहीं विचार सकती, पाश्चात्य महिलाएं वे ही कुकर्म डंके की चोट करती हैं। ये ही तो घटनायें हैं जो पूर्व और पश्चिम के वास्तविक भेद को दिखाती हैं।

क्या डायरशाही समाप्त हो गई ?

ब्रिटिश पूर्वीय-अफ्रिका के असली निवासियों पर अंग्रेज़ों ने, कुछ मास हुए जो अत्याचार किए थे वे अभी तक सर्व साधारण से छिपाकर ही रक्खे गए थे। परन्तु सर एम, एच. जी. इन्स्टन नामक एक उदाराशय अंग्रेज़ सज्जन ने उन्हें प्रकाशित कर, वस्तुतः बड़ा उपकार किया है। उनके कथनानुसार नडुरू नामक स्थान से, वहां के निवासियों पर, इतनी कठोरता से बेंत मारे गए और भयंकर अत्याचार किए गये कि, डाक्टरों के कथनानुसार, उन गरीबों के पुट्ठों के अन्दर का मांस तक बाहर फूट निकला। और कई अवस्थाओं में "घाव लगने और अन्य दण्ड दिये जाने के कारण उन्हें प्राण देना पड़ा।" अंग्रेज़ों की "न्याय और स्वतन्त्र प्रियता का यह एक ताज़ा नमूना है। हम आशा करते थे कि "डायर शाही" अब फिर दुबारा न होगी पर प्रतीत होता है कि डायर चक्र अभी चल रहा है।

अमेरिका में कुछ अंग्रेज़ महिलाओं का व्यर्थ क्रोध

कलकत्ते का 'माडर्न' रिव्यू इस समाचार के लिए उत्तर दाता है कि गत जून के महीने में 'सान फ्रान्सिस्को' में मि० सुरेन्द्र कार नाम के एक भारतीय सज्जन ने व्याख्यान देते हुये भारत में ब्रिटिश शासन की कड़ी समालोचना की। इस पर कई अंग्रेज़ महिलायें आपे से बाहर हो गईं और, व्याख्यान की समाप्ति पर वक्ता के सिर पर गन्दी गालियों की बौछाड़ करदी। एक ने कहा "तुम्हें फांसी पर लटका देना चाहिए" दूसरी चिल्लाई "तुम्हें देश निकाले का दण्ड मिलना चाहिये" तीसरी ने हल्ला मचाया कि "जेल ही तुम्हारे लिए उपयुक्त स्थान है" इत्यादि। इतना ही नहीं, कई स्त्रियोंने मुक्का दिखा कर अपने वीरत्व का परिचय देना चाहा जिस का उत्तर मि० कारने मीठी मुसकराहट से दिया। जान बुल की पुत्रियों ने इतने पर भी सन्तुष्ट न हो कर केलिफोर्निया-यूनिवर्सिटी के प्रेज़िडेन्ट के पास मि० सुरेन्द्र कार से डिप्लोमा छीन लिये जाने के लिए प्रार्थना पत्र भेजा। प्रेज़िडेण्ट ने घृणा पूर्वक उसे अस्वीकृत कर दिया। भारतवासियों में "सहन शक्ति" न होने का प्रायः दोष लगाया जाता है। पाश्चात्यों में इसकी कितनी मात्रा है उसके लिए यह उदाहरण पर्याप्त है।

गोरक्षा का आन्दोलन

रतोना में खोले जाने वाले कसाईखाने का विचार यद्यपि सरकार ने स्थगित कर दिया है पर उससे जनता को इतना तो अवश्य ज्ञात हो गया है कि इस मामले में सरकार के कितने भयंकर विचार हैं। फिर कभी सरकार ऐसा करने का साहस न कर सके, इसके लिए प्रबल आन्दोलन के साथ कुछ क्रियात्मक कार्य्य की भी आवश्यकता है। प्रसन्नता का अवसर है कि देश के गण्य मान्य सज्जनों के उत्साह और परिश्रम से कलकत्ते में एक करोड़ रुपये की पूंजी से एक "गो रक्षक सभा" स्थापित की गई है जिसके २६ लाख से ऊपर हिस्से बिक चुके हैं। गो-वंश नाश में चारागाहों की कमी एक प्रधान कारण है। यह कम्पनी इस कमी को दूर करने की ओर विशेष ध्यान देगी। देश के अन्य भागों में भी इस आन्दोलन की आवश्यकता है—

इङ्गलैण्ड में कोयला क्रान्ति

मैशीन-प्रधान सभ्यता में कोयले का कितना महत्व है—यह बताने की आवश्यकता नहीं। इस की इतनी प्रधानता को देख कर ही एक विद्वान् ने आज कल के समय को "कोयले की दासता" का युग कहा था। यदि किसी आधुनिक सभ्य देश में जमाने के मालिक इस कोयले के व्यवसाय में ही गड़बड़ पड़ जाए तो उस देश की शोचनीय दशा का अनुमान करना कठिन नहीं है। इङ्गलैण्ड में यह अवस्था अब शीघ्र ही उपस्थित होने वाली है क्योंकि कोयले की खानों में काम करने वाले मजदूर, वर्त्तमान वेतन से असन्तुष्ट होने के कारण, हड़ताल करने की तैयारी में हैं। प्रधान मन्त्री मि० लायड जार्ज के बीच में दखल देने के कारण यद्यपि हड़ताल स्थगित करदी गई है तथापि मामला अभी सुलझता नहीं दीखता।

योग्यतम पिता का योग्य पुत्र।

स्वर्गीय राष्ट्रसूत्रधार लो० मा० तिलक के सुपुत्र "श्रीधर-बाल तिलक ने, जो पूना कालेज की बी० ए० श्रेणी में पढ़ता था, अपना नाम इसलिए कटवा लिया है क्योंकि वह कालेज सरकार से सहायता लेता है। वह कहता है कि कांग्रेस के विशेषाधिवेशन के निश्चय के अनुसार वह ऐसे कालेज में नहीं पढ़ सकता। बिहार तथा अन्य प्रान्तों से भी, इसी तरह, कई छात्रों ने स्कूलों और कालेजों से अपने नाम कटवा लिए हैं। देश के लिए ये लक्षण शुभ हैं।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के मन्दिर और, पब्लिशर शादीराम के लिए छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० मं० ३ सू० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | २३ आश्विन सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० ८ अक्टूबर सन् १९२० ई० | संख्या २९ भाग १

हृदयोद्गार

बीते दिनों की स्मृति

(दिल्ली का सत्याग्रह)

ओह! कैसा वो दिन था कोई पारसमणि की थी माया
जिसने छूते ही लोहों को सोना सोना चमकाया।
शोक दिवस में भी उस दिन थी कोई झलक उठी बांकी
या बीते स्वर्गीय दिनों की वह थी इक मीठी झांकी ॥ १ ॥

माता के हर एक लाल पर चढ़ा हुआ था कोई रंग
उस दिन इनकी योग नींद को तोपें कर न सकी थी भंग।
सुनते थे सब काम लगा कर दक्षिण की वीणा झंकार
लहरें सब में मार रहा था देश भक्ति का पारावार ॥ २ ॥

बन्द हुईं दुकानें सारी कारोबार हुवे सब बन्द
छुरियों की भी मिटी क्रूरता गौवें घूम रहीं स्वच्छन्द।
भोजन छोड़ा, चढ़ना छोड़ा यद्यपि फिरतीं ट्राम अनेक
सत्याग्रह की खेल रही थी सब में ज्योति अनूपम एक ॥ ३ ॥

ऐसी भोली शान्त प्रजा पर छूटी गोली की बौछार
बेकसूर लोगों पर पापी! इतना भीषण अत्याचार।
माता की छाती पर गिरने लगे उसीके प्यारे लाल
आर्तनाद उठ लगा फैलने भूखी प्रजा हुई बेहाल ॥ ४ ॥

एक ओर निःशस्त्र प्रजा है एक ओर संगीन चढ़ीं
इधर बहे आंसू की धारा उधर तोप तैनात खड़ीं।
कैसा हत्या काण्ड मचाया! उठा प्रजा में हाहाकार!
देख रहे थे सिद्ध गगन से सन्नाटे में था संसार ॥ ५ ॥

कितने पड़े शहीद यहां पर हुये देश पर जो कुरबान
मरने पर भी शान वही है, ऐसी भारत की सन्तान।
आंसू बरसे, श्रद्धा बरसी, बरसा नभ से जय जय कार
माता! अमर पुत्र ये तेरे नमस्कार इनको सौवार ॥ ६ ॥

निर्दय! ये तेरे ही कारण अत्याचार हुआ बलवान
पीछे तो खंजर है खींची! सन्मुख कैसी मीठी तान।
तेरे ही कारण भारत के नष्ट हुवे धन बल व्यापार
इतने पर भी लाज नहीं तो सौ सौ बार तुझे धिक्कार ॥ ७ ॥

निधिः

स्वराज्य ही एक मात्र औषध है !!

भारत हितैषी मि. सी. एफ़ एन्ड्रूज़ ने, सोलपुर से, हमारे पास निम्न सन्देश भेजा है—

"मैंने अपनी आंखों से पञ्जाब, फ़िजी, पूर्वी अफ्रिका और दक्षिण आफ्रिका में भारतवासियों को अपमानित होते हुए देखा है, और टर्की के सन्धि पत्र की वजह से हिन्दुस्तान का जो अपमान हुआ है उसे भी मैंने बड़ी शर्म के साथ अनुभव किया है। इस से मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि जब तक भारतवासी स्वराज्य के लिये-जो मिश्र देश के स्वराज्य से कम न हो, अपना अधिकार पेश न करें तब तक मुझे आशा नहीं कि हमें आत्म गौरव किसी तरह भी प्राप्त हो सकेगा। इस उद्देश्य की सिद्धि के लिये हमें पूर्ण नैतिक एकता की आवश्यकता है, समझौते की नहीं और न किसी तरह की कमज़ोरी की ही। मुझे इस बात का खेद है कि इस संकटमय अवसर पर मैंने दक्षिण अफ्रिका से हिन्दुस्तानी मज़दूरों के वापिस बुलाने का समर्थन किया और इस तरह अपमानित भारतवर्ष के हृदय को और भी दुःखित किया।"

ब्रह्मचर्यसूक्तकी व्याख्या

पृथक् सर्वे प्राजापत्याः प्राणानात्मसु बिभ्रति ।
तान्त् सर्वान् ब्रह्म रक्षति ब्रह्मचारिण्याभृतम् । २२

"सब परमात्मा के उत्पन्न किए प्राणी अपने अन्दर प्राणों को जुदा जुदा धारण करते हैं (अर्थात् जुदी जुदी प्रकृति रखते हैं) । उन सब को (आचार्य मुख द्वारा) ब्रह्मचारी में भरा गया राग वेद ज्ञान पालता है ।"

एक मनुष्य की प्रकृति दूसरे से मिलती नहीं । सब अपने जुदे जुदे संस्कार साथ लेकर उत्पन्न होते हैं । सब के एकसी ही शक्तियां नहीं और न एक से उद्देश्य हैं । उनके कर्मानुसार उनकी रुचिएं पृथक् पृथक् हैं । सब एकही रस्सी में बांधे नहीं जा सकते । कवि ने ठीक कहा है—भिन्न रुचिर्हिलोकः । कह सकते हैं कि जितने मनुष्य उतनी ही उनकी लग्न हैं । उन विविध रुचियों का प्रादुर्भाव कैसे होता है ? यदि शिक्षक इन सबको गडरिये की तरह हांकने वाला हो तो उनके अन्दर कोई शक्ति हो दिखाई नहीं देती । वे भेड़ों के गल्ले की न्याईं चल देते हैं और जब शिक्षक रूपी गडरिया एक पल के लिए भी उनसे ओझल होता है तो उनके लिए सीधे रास्ते चलना कठिन हो जाता है ।

जीवात्मा मानसिक वाचिक और कायिक कर्म करने में स्वतन्त्र है । केवल उन कर्मों का फल भोगने में वह परतन्त्र है । इस स्वतन्त्र कर्त्ता के अन्दर स्वतन्त्र ही प्राण शक्ति है । यदि उसे दबा दिया जाय तो 'जीवत शव समान वह प्राणी' की लोकोक्ति उस पर घट जाती है । वह स्वाभाविक के तुल्य हुई शक्तियां किस प्रकार लाभदायक हो सकें ? उनके लिए आवश्यक यह है कि आचार्य अपने शिष्यों में वेद ज्ञान के भरने का यत्न करे । उनको अपनी मानसिक शक्तियों का दास बनाने की चेष्टा न करे । फिर किसी प्रकार की चिन्ता नहीं रहती । आचार्य का स्वभाविक रीति से ब्रह्मचारी में भरा वेद ज्ञान स्वयम् उन के विकास का साधन बनता है ।

बालक के अन्दर उसकी प्रकृति के अनुसार ही विचित्र पुष्प उत्पन्न होते हैं । मूर्ख अध्यापक उनको दबाने की चेष्टा करता है । प्रत्येक अध्यापक अपना गौरव स्थिर रखने के लिए आवश्यक समझता है कि अपने आप को अपने शिष्यों के सामने सर्वज्ञ सिद्ध करे। वह भूल जाता है कि शायद उसके हवाले ऐसा बालक किया गया है जो पूर्व जन्म में उस से कहीं अधिक उन्नति कर चुका है । यदि शिष्य की बुद्धि गुरु की अपेक्षा तीव्र है तो ऐसे बनाव से उस को बड़ा गहरा धक्का लगता है । यह भूल नहीं जाना चाहिए कि आचार्य का काम केवल शिक्षा देना ही नहीं, शिक्षा ग्रहण करना भी उसका कर्त्तव्य ही नहीं अधिकार है । अपने बीस वर्षों के अनुपूर्वीय अनुभव से मैं कह सकता हूं कि जिन शिक्षकों ने जीवात्मधारी बालकों को केवल जड़ यन्त्र समझ कर उनको गल्ले बान की तरह हांकने का यत्न किया उन्होंने न केवल अपने अधीन विद्यार्थियों की उन्नति ही रोकदी प्रत्युत अपने आप को भी अवनत किया। परन्तु जिन्होंने इन आत्मा सम्पन्न प्राण धारियों को केवल मार्ग दिखाना ही अपना कर्त्तव्य समझा उन्होंने न केवल अपने शिष्यों के आत्मा को विचित्र प्रकार से विकसित किया प्रत्युत अपनी दैवी शक्तियों को भी प्रादुर्भूत किया । इसका विशेष कारण भी है । जो वाणी पर ही सारा निर्भर न कर के कर्म का आश्रय लेते हैं उन्हें अपने शिष्यों का मार्ग दर्शक बनने के लिए उन गुणों का अनुकरण स्वयम् करना पड़ता है जिन्हें वे विद्यार्थियों के मनों में भरना चाहते हैं ।

वेद ज्ञान, ब्रह्मचारी के अन्दर क्यों भरना चाहिए ? इस लिए कि वैदिक शिक्षाओं में से वह अपनी प्रकृति के अनुसार स्वयं मार्ग चुनलेवे । गुरु का परिमित, एक देशी ज्ञान शायद ही एक दो शिष्यों के लिए उपयोगी हो, वेद ज्ञान में इतनी लचक है कि उसे प्रत्येक मनुष्य अपनी आवश्यकता के अनुसार उपयोगी बना सकता है । गुरु परम्परा से जिस ज्ञान को ग्रहण करते आए हैं उस में जो बल है वह एक व्यक्ति के कृत्रिमरीति से उपार्जन किए ज्ञान में नहीं हो सकता । इस लिए वेद द्वारा भगवान का आदेश है कि जिस मनुष्य-जाति के अन्दर ज्ञान प्राप्त करने का विशेष करण (बुद्धि) विद्यमान है उस की भलाई इसी में है कि उस करण को स्वाभाविक रीति से पुष्ट तथा विकसित करने के लिए उसे हिला दिया जाये, उसे बलात्कार से खींच कर किसी एक ओर लगाने का यत्न न किया जाय- जब तक संसार में ब्रह्मचर्य के मूलसाधनों को फैलाने का यत्न न होगा तबतक बढ़ा हुआ राग द्वेष उस संसार को जिसे उस के निर्माताने उन्नति का धाम बनाया था नरक कुण्ड ही बना रहेगा । शमित्योऽ३म् ।

श्रद्धानन्द सन्यासी

—:o:—

वी. पी. मंगाने वाले सज्जनों से प्रार्थना

गत १ सितम्बर से डाक विभाग ने विना रजिस्ट्री किए वी. पी. लेना बन्द कर दिया है । रजिस्ट्री करके वी.पी. भेजने से मंगाने वालों को प्रति वी. पी. =) अधिक देने पड़ेंगे । इसके अतिरिक्त, वी. पी. का रुपया देर से मिलने के कारण हमें पत्र भी देर से जारी करना पड़ता है । इस लिए ग्राहकों से प्रार्थना है कि अच्छा हो, वे यदि मनीआर्डर द्वारा ही धन भेज दिया करें । इससे ग्राहकों के जहां =) बच जावेंगे वहां उन्हें पत्र भी शीघ्र मिल सकेगा ।

प्रबन्धकर्त्ता
'श्रद्धा'

श्रद्धा

वैदिक धर्म और वर्तमान

आर्यसमाजी-

वैदिक धर्म सार्वभौम और सार्वदेशिक है। इसका कोई आदि न कोई अन्त। जिस धर्म का सदैव राज्य रहा है, जो उस समय था जब कि वर्तमान सृष्टि न हुई थी, जो प्रवाह से अनादि चला आता है, जिसका सृष्टि क्रम समर्थन करता है-वही वैदिक धर्म है। इस पवित्र धर्म का पुनरुद्धार तथा रक्षण हो, इस लिए ऋषि दयानन्द ने आर्य समाज की बुनियाद रक्खी। वह सत्यार्थप्रकाश के अन्त में लिखते हैं-"मैं अपना मन्तव्य उसी को जानता हूं कि जो सब काल में सब को एकसा मानने योग्य हो। मेरा कोई नवीन कल्पना वा मत-मतान्तर चलाने का लेश मात्र भी अभिप्राय नहीं है किन्तु जो सत्य है उसको मानना मनवाना और असत्य है उसको छोड़ना छुड़वाना मुझ को अभीष्ट है·········जो जो बात सब के सामने माननीय है उस को मानता······ और जो मत मतान्तर के झगड़े हैं उनको मैं पसन्द नहीं करता क्यों कि इन्हीं मतवालों ने अपने मतों का प्रचार कर मनुष्यों को फंसाकर परस्पर शत्रु बनादिए हैं।" (पृ० ६२६ तथा ६३९)

पिछले १२ वा १३ वर्षों से मैं इस सचाई पर अपने व्याख्यानों तथा लेखों में बराबर बल देता रहा हूं। कि जब उपजाऊ भूमि का जोतना बोना भुला कर किसी प्रजा ने उसे जंगल बनादिया हो तो पहला काम, एक सच्चे माली का, यह है कि एक हाथ में कुल्हाड़ा और दूसरे हाथ में अग्नि लेकर चले। आग से झाड़ी बूटी इत्यादि को जलाता जाय और कुल्हाड़े से बड़े २ वृक्षों को काटता जाय। परन्तु जब भूमि साफ हो जाय और बुद्धिमान माली उस जोत बो चुके और उस में से कोमल पौदे निकल आवें, उस समय आग और कुल्हाड़े का स्थान खाद और पानी और नलाई और बाड़ों के हवाले कर देना चाहिये। इसी प्रकार जब धर्म रूपी उपजाऊ भूमि के गिर्द अन्ध विश्वास के कारण अविद्या-जन्यरिवाजों का फूस और जंगल उग खड़ा हो तब एक धार्मिक संशोधक को खन्डन रूपी अग्नि और आचारसुधार रूपी कुल्हाड़े से काम लेना पड़ता है। परन्तु जब अन्ध विश्वास के स्थान में श्रद्धा को स्थापन करके शताब्दियों की अविद्या को दूर कर दिया जाय तब वाणी और कर्म द्वारा खन्डन की आवश्यकता नहीं रहती।

जब खन्डन की आवश्यकता थी, मैंने भी कुछ कम खन्डन नहीं किया। जब दुराचारों से बचाव की आवश्यकता थी, उस समय मैंने और मेरे साथियों ने भी कुछ टाल नहीं की थी। परन्तु कुछ वर्षों से लोगों की आंख प्रायः खुल चुकी हैं। जो संशोधन के कार्य आर्यसमाज ने आरम्भ किए थे वही दूसरे करने का यत्न कर रहे हैं। जहां कट्टर से कट्टर पौराणिक भी मूर्ति पूजा से स्वयम् लज्जित होजाय, अपनी पुत्रियों का विवाह १६ वर्षों की आयु से कम में और अपने पुत्रों का विवाह २०, २२ वर्षों की आयु से कम में करने की कुप्रथा को छोड़ते जाय, क्या पुरानी लकीर पीट कर उनका खन्डन करने में व्यर्थ समय गवाकर मित्रों को शत्रु बनाना कहीं धर्म के लक्षण में आता है। मैंने एक आर्य समाजिक समाचार पत्र के लेखक का इस बात पर शोक करते पढ़ा कि जिस आर्य समाज में "रामचन्द्र की जय बोलना पाप समझा जाता था वर्तमान समय में आर्यसमाजी उस जय के बुलाने में लज्जा नहीं अनुभव करते।" प्रथम तो यह कल्पना ही निर्मूल है। सं० १८८७ ई० में ठाकुर नवलसिंह ने एक गीति बनाई थी जिस की टेक थी-"हैं धन्य भाग इस नगर और इस मन्दिर के। जहां गुण वर्णन हो रहे रामचन्दर के।" यदि मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र से आर्यों को घृणा होती तो उनके विषय में आदि कवियों में से एक ऊपर की कविता अमृतसर और लाहौर आर्य समाजों के मन्दिर में न गाने पाता। फिर कहाजाता है कि जब खन्डन ही छूट जावेगा तो आर्यसमाज की हस्ती ही क्या रहेगी। यह भी बड़ी भूल है। मन्डन पर तो मैं और सब विचारशील आर्य बल दे रहे हैं और कहते हैं कि स्वमत के मन्डन का इस समय आर्य-समाज में अभाव शोचनीय है।

शेष रहा खण्डन सो उसकी तब आवश्यकता होती है जब जनता की आंखें न खुली हों। जब मुसलमान हिन्दुओं को येन केनप्रकारेण कलमा पढ़ा कर और गो मांस खिला कर "महम्मदी" बनाना अपना कर्तव्य समझते थे उस समय गो रक्षा के लिए महम्मदी मत का खण्डन आवश्यक था। परन्तु जब काबुल और दक्षिण हैदराबाद से राजाज्ञा मिलती है कि गाय की कुर्बानी मत करो क्योंकि इस से उनकी हिन्दू प्रजा का दिल दुखता है, जब खिलाफत कुमेटियां स्वयम् गो वध बन्द कराती फिरती हैं, जब मुसल्मान धर्माचार्य यह व्यवस्था दे रहे हैं कि दोनों दीन अपने अपने मन्तव्य परबिना रोक टोक चलें और किसी का भी दिल न दुखाया जाय, जब मुसलमान अपने हिन्दू भाइयों के साथ एक स्वर हो कर गौ को माता की पदवी दें और रत्तोना के बूचड़ खाने के घोरविरोध में सम्मिलित हो गवर्नमेंट को विवश कर दें कि वह अपनी आज्ञा को लौटा ले, जब मौलाना शौकत अली और महम्मदअली न केवल गो मांस भक्षण को तिलाजली ही दे दें प्रत्युत गो रक्षा में हिन्दुओं के साथ शरीक हो जाय, जब यदि आर्य सामाजिक सन्यासी मुसलमानों की धर्म पुस्तक का नाम सत्कार के साथ लेता हुआ उनकी उसे मस्जिद में, जहा पहले कभी गैर मुस्लिम को निमाज के समय घुमने की इजाजत न हो, "कुरान मजीद" का हवाला देता हुआ धर्म वीरों के लिए प्रार्थना करें तो मुसलिम मौलवी आर्यों की धर्म पुस्तक को "वेद-ए-मुकद्दस" का खिताब देता हुआ उस के नाम पर एकता के लिए अपील करे-उस स्वर्गीय समय में खण्डन के दिनों को याद करके "आहसर्द" भरना विचित्र प्रकार का आर्यत्व है।

यदि आर्य समाज में सचमुच धर्म की तलाश होती तो इस समय को गनीमत समझ कर सब अपने धर्म को क्रिया में लाने का यत्न करने लग जाते। पहले जब कभी धर्म कर्म के लिए बल दिया जाता तो उत्तर मिलता था कि जब चारों ओर अविद्या फैल रही है तो उसे बिना दूर किए संयम में कैसे लगें? परन्तु जब यमनियमादि के साधनों के लिए पूरा समय मिला है तो चकित से रह गए हैं और सूझता नहीं कि क्या करें। मैंने आर्यसमाज के कुछ प्रचारकों की बात चीत सुनकर यह परिणाम निकाला है कि उनका संतोष तब होता जब ऊपर लिखित अवस्थाएं उन के व्याख्यानों का परिणाम होतीं। ऐसे लोगों की अवस्था ठीक उस जुलाहे की तरह है जिसकी कथा मुझे जालन्धर के एक स्वर्ग वासी मुख्तार सुनाया करते थे—बस्तीशेख का एक जुलाहा प्रत्येक तीसरे दिन एक थान बुन कर जालन्धर शहर के बाज़ार में लाता और पांच वा साढ़े पांच रुपये में बेचकर चला जाता

परन्तु हर बार बड़ी झञ्झट से थान बिकता। जुलाहा ७॥) वा ८) से आरम्भ करता और खरीदार ३) वा ३॥) से और बड़ी 'रद्द-ए बदल' के पीछे ५) वा ५॥) पर फैसला होता। इस प्रकार उसे बाजार में २½ वा ३ घन्टे लग जाते। एक बार उसे कोई धर्मात्मा खरीदार मिल गया। मूल्य पूछने ही जुलाहे ने ७॥) बताए, खरीदार ने ७॥) उस के हाथ पर रख कर थान लेना चाहा। जुलाहा रुपये परखने लग गया। जब गिरा बजा कर उन्हें ठीक पाया तो थान देना ही पड़ा। जुलाहा हक्का बक्का रह गया। उसे प्रसन्नता के स्थान में चिन्तासी हो गई। पैर लौटने की ओर अब नहीं पड़ते थे। उसे समझ में नहीं आता था कि दो अढ़ाई रुपए अधिक प्राप्त करने पर भी उस के अन्दर असन्तोष है। उसे इतनी जल्दी लौटते भी लज्जा आई। मार्ग में एक वृक्ष को देखते ही ठहर गया और सिर की पगड़ी उतार वृक्ष के गिर्द बांध दी और एक कोना उसका अपनी दाढ़ी में बांध दिया और लगा दाढ़ी को झटके देने—*'साढ़े सात लूंगा साढ़े तीन दूंगा अच्छा.......कहो जा ७) से कमले बाप का बेटा न हो जो ४) से अधिक दे इत्यादि-इत्यादि'* जुलाहा दो घन्टों तक इसी प्रकार बोलता रहा, तब कहीं उस का मन शान्त हुआ और वह अपने घर को गया।

मैं देख रहा हूं कि विचार शील आर्य समाजी तो यह जान कर प्रसन्न होते हैं कि जिस मत मतान्तरों के झगड़े से मुक्त अवस्था को ऋषि दयानन्द लाना चाहाते थे वह अवस्था समीप पहुंच गई है और इस लिए आर्यसमाज आपने मन्तव्य का प्रचार करके अब लोगों को उसके अनुसार चला सकता है। कोई समय था जब कि आश्रम और वर्णव्यवस्था की बात, समझता तो कौन, सुनना भी पढ़े लिखे लोग पसन्द नहीं करते थे। आज समय है कि ब्रह्मचर्य के गौरव, गृहस्थ के कर्तव्य और सन्यास के कर्मफल त्याग की महिमा को हिन्दू मुसलमान, सिक्ख जैन, ईसाई सभी सुनने और उस पर अमल करने को तय्यार हैं। कोई समय था था जब जातीयमहा सभा ((National Congress) की वेदी से धर्म और सदाचार के नाम अपील करना पाप समझा जाता था जब कि प्रसिद्ध व्यभिचारी पुरुषों को 'बायकाट' करने का हौसला किसी विरले महानुभाव को ही होता था और ऐसा करने वाले पर खिल्ली उड़ाई जाती थी, आज समय है कि गुप्त में यह सिद्धान्त रखने वाले नेता, कि राजनीति चाल बाजी और युक्ति कौशल्य का खेल है, भी भरी सभा में यही कहने के लिए बाधित होते हैं कि राजनीति को धर्म के सत्य से जुदा नहीं किया जा सकता था। जिस एक बड़े ब्रह्म की उपासना पर आर्यसमाज का आग्रह था उसके नाम की घोषणा कांग्रेस के पण्डाल से गूंज रही है। जिन सचाइयों को सिद्धान्त रूप से इस समय जनता, बिना मत भेद के, मान रही है उस का क्रियात्मक प्रचार आर्य समाज के धर्म प्रचारकों का कर्तव्य है।

इस से बढ़ कर और कौनसा अधिकार हो सकता है। राजनैतिक इस समय असहयोग का प्रचार कर रहे हैं। आर्य समाज ने अधर्म और दुराचार और कृतघ्नता और अन्याय के विरुद्ध अपने जन्मदिवस से ही असहयोग की घोषणा कर छोड़ी है। आर्यसमाज के प्रवर्त्तक ने आज से ३८ वर्ष पहले लिख दिया था—

"जैसे पशु बलवान् होकर निर्बलों को दुःख देते और मार भी डालते हैं, जब मनुष्य शरीर पाके भी वैसा ही कर्म करते हैं तो वे मनुष्य स्वभाव युक्त नहीं किन्तु पशुवत् हैं। और जो बलवान् हो निर्बलों की रक्षा करता है वही मनुष्य कहता है और जो स्वार्थवश हो कर पर हानिमात्र करता रहता है वह जानो पशुओं का भी बड़ा भाई है।"

यह सत्यार्थप्रकाश की भूमिका में, और अन्त में लिखा है—"मनुष्य उसी को कहना कि मनन शील हो कर स्वात्मवत् अन्यों के सुख दुःख और हानि लाभ को समझे, **अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे।** इतना ही नहीं किन्तु **अपने सर्व-सामर्थ्य से धर्मात्माओं की, चाहे वे महा अनाथ निर्बल और गुण रहित क्यों न हो, रक्षा, उन्नति प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ महाबलवान् और गुणवान् भी हो तथापि उसका नाश अवनति और अप्रिया चरण सदा किया करे अर्थात् जहां तक हो सके वहां अन्यायकारियों के बलकी हानि और न्याय कारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करें; इस काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दुख प्राप्त हो चाहे प्राण भी भले ही जावें परन्तु इस मनुष्य पन रूप धर्म से पृथक कभी न हो.........."**

गान्धी जी जिस सिद्धान्त पर शनैः शनैः अनुभव करते हुए अब तक भी पूर्ण रूप से नहीं पहुंचे हैं उस के सर्वाङ्ग दृढ़ स्वरूप का दर्शन आर्यसमाज के प्रवर्त्तक, अपनी दिव्य दृष्टि से देख कर, ३८ वर्ष पहले ही करा गए। आर्य वीरो! अन्य लोग अभी वाणी द्वारा प्रचार का घाटी तक ही पहुंचे हैं, परन्तु तुम्हारे आगे यह घोषणा ३८ वर्ष से चली आती है। इस समय बोलना दूसरों का अधिकार है परन्तु उस को कर्तव्य में लाना तुम्हारा कर्तव्य है। तुमने २८ वर्ष से यह शब्द उठाया और १९ वर्ष हुए जब उसे क्रिया में लाकर दिखा दिया कि विदेशी ढंग की शिक्षा 'विष' है। महात्मा गान्धी ने इसी सत्य को पांच छ वर्ष पहिले स्वीकार किया और कलकत्ते में यह सम्मति देते हुए कि एक लड़का वा लड़की को भी सरकारी स्कूलों और कालिजों से नहीं उठाना चाहिए श्री लाला लाजपतराय ने लाहौर में कह दिया कि "अगर महात्मा गान्धी आर्ट्स कालिजों (Arts Colleges) के बायकाट को अपने प्रोग्राम का हिस्सा बनाते तो मैं इस की पूरी हिमायत करता क्योंकि मैं आर्ट्स कालिजों की तालीम के मुखालिफ हूं।" जिन लाला लाजपतराय ने अपने जीवन का बड़ा भाग डी० ए० वी० आर्ट्स कालिज के खड़े करने और उसकी आर्थिक सहायता में लगाया, उनकी यह सम्मति है। क्या आर्य समाजी नेताओं का कर्तव्य नहीं कि डी० वी० वी० कालिज लाहौर और उसकी रावलपीण्डी और जालन्धर की शाखों का सम्बन्ध एक दम युनिवर्सिटी से अलग करलें? और क्या कानपुर के कालिज को भी इन्हीं का अनुकरण नहीं करना चाहिए? ऋषि दयानन्द की शिक्षा पर अमल करने का यह समय है। क्या निर्भय हो कर आर्य पुरुष आचार्य की आज्ञा का पालन करेंगे?

श्रद्धानन्द सन्यासी

—:o:—

डी० ए० वी० कालिज कमेटी से अपील

आज हम आर्य जाति और आर्यसमाजिक संसार की ओर से डी० ए० वी० कालिज कमेटी लाहौर की सेवा में एक अपील लेकर उपस्थित हुए हैं। आशा है कमेटी के अधिकारी उसकी ओर ध्यान देंगे—और स्वीकार करके न केवल वर्तमान भारत के अपितु आने वाली भारत सन्तानों का भी धन्यवाद कमायगे।

अभ्यार्थना यह है। आर्यसमाज जिस सचाई का सालों से अनुभव करता था, जाति आखिर उस पर आपहुंची है। आर्यसमाज ने यह देर हुई जब अनुभव कर लिया था कि जाति के सुधार का एक मात्र यही उपाय है कि उसकी शिक्षा अपने हाथों में हो। डी० ए० वी कालिज उसी अनुभव का फल था। गुरुकुल उसी का पूरा परिणाम था। इतने दिनों तक आर्य समाज के प्रचारक जाति को राष्ट्रीय शिक्षा के नाम पर अपील करते रहे—और कुछ न कुछ कामयाब भी हुए। कुछ आर्यसमाज के यत्न से, कुछ ईश्वर कि दया से, और अधिकतया देश में वास्तविक जागृति उत्पन्न हो जाने से वह शुभ घड़ी आगई जब भारत की सब से बड़ी राष्ट्रीय परिषद् ने यह घोषणा देदी है कि भारतवासियों के बच्चे सरकारी स्कूलों और कालिजों में न भेजे जायें। दूसरे शब्दों में इसका तत्पर्य यह कहा जासकता है कि कांग्रेस की सम्मति में वह समय आगया है जब देश को अपने बच्चों की शिक्षा अपने हाथों में ले।

यह शुभ घड़ी आर्य समाज के विजय की घड़ी है। इस की सालों से प्रतीक्षा थी। हमारे सौभाग्य से वह आज पहुंची है। इस समय आर्य समाज के सामने प्रश्न यह है कि क्या वह इस समय राष्ट्रीय शिक्षा के मैदान में आगे बढ़ कर अपने विजय को संभालेगा या पीछे ही लटकता दासों की पंक्ति में गिना जायगा। जाति ने यह इच्छा प्रकट की है कि वह अपनी शिक्षा को स्वयं संभालेगी। सरकार से सम्बद्ध स्कूलों और कालिजों से भारतवासी अपने लड़कों को उठारहे हैं। और उठायेंगे। इस समय ऐसी संस्थाओं की आवश्यकता है जो उन उठाए हुए बालकों और युवकों को शिक्षा दे सकें। क्या आर्य समाज खम ठोक कर बहादुरों की भांती आगे आयगा या कायरों की भांती पीछे लटकता रहेगा?

डी० ए० वी० कालिज कमेटी से हमारा यह निवेदन है। न केवल सारे पंजाब में, अपितु सारे देश में यदि कोई शिक्षा सम्बन्धी ऐसा संगठन है जो एक झटके में सरकारी जंजीरों को तोड़ सकता है और साथ ही बहुत से बालकों की शिक्षा को अपने हाथ में ले सकता है तो वह डी० ए० वी० कालिज कमेटी का है। डी० ए० वी० कालेज कमेटी के सम्बन्ध में जितने स्कूल हैं, उतने शायद सरकारी यूनिवर्सिटी को छोड़ और किसी भी एक संस्था के सम्बन्ध में नहीं हैं। यदि डी० ए० वी० कालिज कमेटी आज सरकार से सम्बन्ध तोड़ कर दयानन्द राष्ट्रीय विश्वविद्यालय स्थापित करने का संकल्प करे तो हमें इस में कुछ भी सन्देह नहीं है, कि महात्मापार्टी के सब स्कूल सरकार से सम्बन्ध तोड़ कर नये राष्ट्रीय विश्वविद्यालय से सम्बन्ध जोड़ लेंगे। आर्य समाज की ओर से इस में कोई भी कठिनाई पैदा होने की सम्भावना नहीं है। आर्य समाज तीस साल से डंके की चोट कहता आया है कि जाति के मोक्ष का एक मुख्य साधन यह है कि जाति की शिक्षा जाति के हाथों में हो। डी० ए० वी कालिज के लिए अधिकतर अपीलें कौमी तालीम के नाम पर ही की जाती रही हैं। अब तक डी० ए० वी० कालिज कमेटी की कौमी तालीम सापेक्षक थी। पर अब अवसर आगया है कि बची हुई सरकारी जंजीर को तोड़ कर उसे शुद्ध कौमी बना दिया जाय।

आर्यसमाज और आर्य जाति की आंखें डी० ए० वी० कालिज कमेटी की ओर लगी हुई है। यह स्वर्गीय समय है। इस समय जाति की शिक्षा की बागडोर हम अपने हाथ ले सकते हैं। आर्यसमाज सच्चे अर्थों में अब जाति का अगुआ बन सकता है परन्तु यह सब डी० ए० वी० कालेज कमेटी के निश्चय पर अवलम्बित है। हम कमेटी के सभ्यों और अधिकारियों से आग्रह पूर्वक अपील करते हैं कि वह आर्य जाति की इच्छा को सुनें, आर्य समाज के शब्द को सुनें, अपने आत्मा का शब्द सुनें, और अन्त में मातृभूमि के विजय नाद को सुनते हुए सरकारी बन्धनों को तोड़ कर एक विशाल राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना के पुण्य भागी बनें। इसी में दयानन्द के नाम का गौरव है, इसी में आर्यसमाज का यश है, इसी में आर्य जाति का भला है।

इन्द्र

—:०:—

(पृष्ठ ७ का शेष)

आर्यसमाज स्थापित होगी

आर्य भाइयों को यह सुनकर प्रसन्नता होगी कि मि० एम० जी० शर्मा और स्नातक देवेश्वर जी के निरन्तर उद्योग और उत्साह का ही यह फल है कि इस रविवार को मदुरा में एक आर्यसमाज स्थापित कर देने का दृढ विचार है जिस का सम्बन्ध किसी विशेष प्रान्तीय सभा से न हो कर सीधा सार्वदेशिक सभा से होगा।

इन पिछले कुछ मासों में इन चार आर्यवीरों ने जो प्रशंसनीय कार्य किया है, उसकी आवश्यकता और महत्त्व पर हमें विशेष बल देने की आवश्यकता नहीं है। परन्तु इस के साथ साथ हमारे आर्यभाइयों का भी कुछ कर्त्तव्य है। वे यदि उसके पालन करने में आलस्य करेंगे तो प्रचार का यह कार्य सर्वथा बन्द हो जावेगा। इस लिए न केवल आर्य्यसमाजियों को ही किन्तु हिन्दी प्रेमियों को भी तन, मन, धन से

आर्थिक सहायता

देकर कार्य्यकर्त्ताओं का उत्साह बढाना चाहिये। हमें पूर्ण आशा है कि वैदिक मताव लम्बी और हिन्दी प्रेमी सज्जन अपनेही आलस्य और प्रमाद से इस शुभ काम को नष्ट नहीं होने देंगे।

पाश्चात्य सभ्यता के कुछ प्रभावों पर विचार

(स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से)

व्याख्यानों और लेखों में पाश्चात्य-सभ्यता की निन्दा हम प्रायः सुना करते हैं। इसके अतिरिक्त, भारतीय-सभ्यता के साथ तुलना भी सब के लिए आज कल साधारण बात हो है। इसकी सारता या असारता पर विचार न करते हुए हम केवल यही दिखाना चाहते हैं कि इतना होने पर भी पाश्चात्य सभ्यता के कुछ प्रभाव इतने स्पष्ट हैं जो कि आंख से कभी ओझल नहीं किए जा सकते। पाठकों के विनोद के लिए कुछ यहां पर हम उपस्थित करते हैं—

मद्य और मासः—शारीरिक हानि के अतिरिक्त इससे कितनी मानसिक और आत्मिक हानि होती है—यह बताने की हम कोई विशेष आवश्यकता नहीं समझते। देशी और विदेशी--प्रायः सभी चिकित्सकों ने इसकी निन्दा की है। इतना होने पर भी, भारत में इसका प्रचार घट गया है, यह मानने को हमारा दिल नहीं चाहता। यह ठीक है कि श्वेतांगो के साथ संसर्ग होने से पूर्व भी इस देश में मद्य मांस तथा अन्य मादक द्रव्यों का प्रचार था परन्तु इसके साथ यह भी ठीक है कि पाश्चात्य-सभ्यता के आगमन से इसका प्रचार आगे से बहुत अधिक बढ़ गया है।

(२) चायः—का प्रयोग आज कल बहुतायत से होता है। अंग्रेजों के आने से पूर्व इसका प्रचार बहुत कम था। "नव्य-भारतीय" समाज में अब यह एक फैशन समझा जाता है। शराब चूंकि महंगी है और ज्यादा नशा करती है, इसलिए उसका प्रयोग हरेक प्रकार का व्यक्ति नहीं कर सकता। परन्तु, चाय चूंकि सस्ती है, इस लिए गरीब-अमीर-सभी इसे बड़े शौक़ से पीते हैं। पर इससे इसकी हानि कम नहीं हो जाती। एक प्रसिद्ध देशी चिकित्सक की यह दृढ़ सम्मति है कि 'चाय अपचन का एक मुख्य कारण है।" इसी प्रकार अन्य भी चिकित्सकों का मत उद्धृत किया जा सकता है। इङ्गलैण्ड जैसे ठण्डे प्रदेश में यह लाभदायक हो पर भारत के लिए इसकी कुछ उपयोगिता नहीं है।

(३) भारत में पहिले कच्चे मकानों का प्रचार था पर अब शहरों में आकाश से बातें करने वाले पक्के और शानदार मकान हमारी "उन्नति" का परिचय देने लग गए हैं। ग्रामों में भी इनका धीरे २ आविर्भाव हो रहा है। परन्तु स्वास्थ्य रक्षा की दृष्टि से कच्चे मकान अधिक उपयोगी हैं। कई एक देशी चिकित्सकों का यह मत है कि भारत में क्षय रोग के बढ़ने का एक कारण पक्के मकानों का होना है। इसका कारण यह है कि कच्चे मकान जहां अच्छे हवादार होते थे वहां उनकी दिवारों और फर्श पर प्रति दिन गोबर का लेप होने से धूल वा मिट्टी के इकट्ठे होने की बहुत कम सम्भावना होती थी। परन्तु दूसरी ओर पक्के मकानों में, सुफेदी के बहुत देर से किए जाने और फर्श पर बिछी हुई दरी वगैरह की प्रतिदिन सफाई न होने के कारण धूल जमा रहती है। इसके अतिरिक्त, उनके अन्दर रहने वाले हमारे नये ज़माने के बाबू शीशेदार खिड़कियों और रोशनदानों को प्रायः बन्द रखते हैं जिसने उन के अन्दर गन्दी हवा भरी रहती है। क्षय रोग के लिए और क्या चाहिए ?

(४) भारत में पहिले घरों में तुलसी और नीम के पेड़ों को लगाने का रिवाज था। स्वास्थ्य रक्षा की दृष्टि से यह रिवाज बहुत ही उत्तम था। इन दोनों के पत्ते, फूल बहुत ही उपयोगी होते हैं और मौसमी बुखार का नाश करने वाले होते हैं। कुछ वर्ष हुए, एक अंग्रेज़ यात्री ने यह लिखा था कि "उत्तर भारत के जिन गांवों में नीम के वृक्ष हैं वहां के लोग मौसमी बुख़ार की पकड़ में नहीं आते"। परन्तु आज कल इन उपयोगी और स्वास्थ्य दायक वृक्षों की जगह मौसमी फूल और बेलें ही हमारे "उन्नति शील" देश वासियों के मकानों को सुशोभित करती हैं। साधारण सौन्दर्य्य के अतिरिक्त इन से और कोई लाभ नहीं है। इतना ही नहीं, अंग्रेजों की नकल में आज कल एक और रिवाज चल पड़ा है। और वह बरामदों की छतों के साथ फूलों वाले गमले लटकाना। इस से लाभ के स्थान में हानि ही है। और वह यह कि, हवा के खुले तौर पर आने जाने में ये जहां बाधक रूप होते हैं वहां, दूसरी ओर, हवा में गीलापन वा सील भी पैदा करते हैं जो कि स्वास्थ्य के लिए हानि कारक है।

(५) इस देश में पहिले भोजन घर की देवियां स्वयं पकाया करती थीं। इस से कई अन्य लाभों के अतिरिक्त भोजन उत्तम और स्वादु होता था। यद्यपि अभी तक यह रिवाज सर्वथा नष्ट नहीं हुआ तथापि हमारे "उन्नति शील" भाइयों में अब नौकरों से पकवाने की प्रथा प्रचलित हो रही है। सभी दृष्टियों से यह हानि कारक है। उचित निरीक्षण न होने से भोजन का महत्व बहुत कुछ नष्ट हो जाता है।

(६) भोजन पकाने के लिए पहिले लकड़ी का प्रयोग होता था जिससे धीरे २ भोजन पकने के कारण वह उत्तम होता था और प्रायः पच जाता था। अब लकड़ी की जगह कोयले का प्रयोग किया जाने लगा है। इस से जहां भोजन उत्तम नहीं बनता वहां उस का धूंआ भी आंखों के लिए अत्यन्त हानिकारक होता है।

(७) लैम्पों और दिओं की उचित और ठण्डे प्रकाश की जगह बिजली के लैम्पों का घर २ प्रचार हो रहा है जो कि नेत्रों के लिए हानिकारक होते हैं।

(८) यह ठीक है कि हुक्का पीना बुरा है, स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। परन्तु हुक्के की जगह अब सिगरेट का प्रचार हो रहा है जो कि उससे भी अधिक नाशक है। पहिले हुक्के का प्रचार होने से चलते फिरते वा कहीं बाहर जाते हुये इसका पीना अत्यन्त कठिन सा ही होता था पर अब सिगरेट का प्रयोग सब जगह किया जा सकता है जिससे अपरिमित हानि होती है।

(९) प्रातः सूर्य्योदय के बाद उठना, बिस्तर पर पड़े रहना, बिना नित्यकर्मों से निवृत्त हुये चाय आदि पीना, व्यायाम न करना, स्वयं बहुत अधिक कपड़े पहिनना और बच्चों को पहिनाना इत्यादि सब दोष भी पश्चिम से ही आये हैं और इनकी हानियां इतनी स्पष्ट हैं कि हमें उन पर कुछ विशेष कथन की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती।

इस लेख को यहीं समाप्त करते हुए हम ज़माने की लहर में बहते हुए शिक्षित पुरुषों से प्रार्थना करेंगे कि वे पाश्चात्य-सभ्यता के स्वास्थ्य नाशक इन दोषों से छूटने का प्रयत्न करें।

—:०:—

मद्रास में वैदिक-धर्म प्रचार

सार्वदेशिक सभा का प्रशंसनीय उद्योग

गुरुकुल के स्नातकों का सराहनीय कार्य्य

ब्राह्मणों का कुछ विरोध और अब्राह्मणों की सहानुभूति

पिछले कई सालों से मद्रास में वैदिक धर्म प्रचार के लिए आन्दोलन हो रहा था। पाठक जानते ही हैं कि श्रीमती सार्वदेशिक-सभा ने इस काम को अपने हाथ में ले गत कई मास से वहां क्रियात्मक काम प्रारम्भ करवा दिया है। इस नवीन आन्दोलन से पूर्व आर्यसमाज के दो स्वतन्त्र उपदेशक श्री-स्वामी धर्मानन्द जी और मि० एम० जे शर्मा वहां बड़ी लगन के साथ वैदिक धर्म का प्रचार कर रहे थे। परन्तु चूंकि कार्य बहुत था, इस लिए उक्त महानुभावों की सहायतार्थ सार्वदेशिक सभा ने दो और महानुभावों को भेजा जो कि गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक हैं। अब प्रचार का कार्य अधिक जोश और प्रयत्न के साथ, मद्रास प्रान्त के दो केन्द्रों में हो रहा है। 'मदुरा' में मि० एम० जी शर्मा और स्नातक देवेश्वर जी सिद्धान्तालंकार और बैंगलोर में श्री-स्वामीधर्मानन्द जी और स्नातक सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार प्रशंसनीय कार्य कर रहे हैं। पिछले कुछ दिनों में हमें इन दोनों केन्द्रों से कुछ समाचार प्राप्त हुये हैं जो कि हम आज अपने आर्यभाइयों को सुनना चाहते हैं। इस से उन्हें पता लगेगा कि हमारे आर्यवीर किस प्रकार आर्थिक कष्ट को सहते हुए भी वहां तन-मन धन से प्रचार में लगे हुये हैं—

बैंगलोर:—श्री स्वामी धर्मानन्द जी और स्नातक सत्यव्रत जी के लगभग प्रतिदिन ही वैदिक-धर्म के विषय में वहां सार्वजनिक व्याख्यान होते हैं। २५ और २६ सित० को उक्त महानुभावों के एक स्कूल के बड़े कमरे(हाल) में दो अत्यन्त प्रभावशाली व्याख्यान हुए। श्री स्वामी जी ने "वैदिक धर्म" और श्री स्नातक सत्यव्रत जी ने "जातीय शिक्षा" पर भाषण किया। वहां की "वैश्य-सभा" में स्नातक जी ने "वैश्यों के कर्त्तव्य" और श्री स्वामी जी ने "वर्णाश्रम व्यवस्था" पर व्याख्यान दिया। व्याख्यानों के अतिरिक्त वहां एक होटल में ही हिन्दी सिखाने का काम स्नातक सत्यव्रत जी ने प्रारम्भ कर दिया है। इस श्रेणी में नियम पूर्वक पढ़ने वाले लगभग ४० व्यक्ति हैं जिन में कई अच्छे ग्रेजुएट भी हैं। हिन्दी के साथ २ उन्हें सन्ध्या और हवन के मंत्रों का अभ्यास भी कराया जाता है। २९ ता० को "खिलाफत कमेटी" ने स्नातक सत्यव्रत जी का जातीय शिक्षा पर अंग्रेजी में व्याख्यान कराया। यह उस कार्य की रिपोर्ट है जो कि उक्त दोनों महानुभावों ने इस मास में किया है। उस से पूर्व वहां जो कार्य किया गया है वह हम 'श्रद्धा' के १४, १५ १६ और १७ वें अंक में लिख चुके हैं, इस लिए उसके पुनः लिखने की कोई विशेष आवश्यकता नहीं प्रतीत होती। परन्तु इस मौखिक प्रचार के अतिरिक्त स्नातक सत्यव्रत जी ने लेखनी द्वारा प्रचार करने में भी कोई कसर नहीं छोड़ी है। वहां के अर्ध साप्ताहिक पत्र "कर्नाटक" और मासिक पत्र "फिजिकल कल्चर मेगज़ीन" में आपके गुरुकुल और आर्य समाज विषयक निरन्तर लेख प्रकाशित हो रहे हैं। ये लेख बड़े महत्व पूर्ण होते हैं।

मदुरा:—मि० एम० जे० शर्मा वहां अकेले होते हुये भी अत्यन्त उत्साह, दृढ़ता और निस्वार्थ भाव से वैदिक-धर्म के प्रचार का कार्य कर रहे थे। व्याख्यानों के अतिरिक्त उन्होंने अपने पास से कई हज़ार ट्रैक्ट छपवा कर बंटवाये हैं जिस से जनता में और विशेषतः अब्राह्मणों में आर्यसमाज के प्रति विशेष सहानुभूति पैदा होगई है। यहां तक कि, वहां के प्रसिद्ध २ अब्राह्मण नेताओं ने "महर्षि दयानन्द" की जय बुलवाई है। इस के अतिरिक्त शर्मा जी ने वहां कई स्कूलों के विद्यार्थियों को हिन्दी सिखलाने के साथ २ सन्ध्या-हवन के मंत्र और कई उत्तम २ आर्य सामाजिक भजन भी कण्ठस्थ करवाये हैं। यद्यपि ब्राह्मणों ने पादरियों के साथ मिलकर उनके काम में रुकावटें डालने का प्रयत्न किया है तथापि शर्मा जी, अब तक सब प्रकार के कष्टों को सहते हुए भी अकेले सिंह की न्याई उनका मुकाबिला करते रहे। उन का यह धैर्य, उत्साह, दृढ़ता और निःस्वार्थभाव अत्यन्त प्रशंसनीय है। परन्तु अब स्नातक देवेश्वर जी के वहां पहुंच जाने से प्रचार दुगने उत्साह और दृढ़ता से प्रारम्भ होगया है। स्नातक जी ने वहां जाते ही व्याख्यान माला प्रारम्भ करदी हैं। संस्कृत कालेज में उन्होंने श्री कृष्णमाचार्य एम० ए० के सभापतित्व में "वैदिक धर्म की महिमा" इस विषय पर संस्कृत में व्याख्यान दिया। व्याख्यान के बाद वहां के कुछ सज्जनों ने वर्णव्यवस्था पर शंकायें की जिनका स्नातक महोदय ने अत्यन्त सन्तोष जनक उत्तर दिया। मद्रास का अब्राह्मणदल वैदिक धर्म के "वर्णव्यवस्था" विषयक सिद्धान्तों को अत्यन्त प्रसन्नता और श्रद्धा से देखता है।

२६ और २७ सित० को स्नातक जी के एक बड़े—पब्लिक-हाल में "गुरुकुल शिक्षाप्रणाली" और "आर्यसमाज का भारत पर अधिकार" इन दो विषयों पर प्रभावशाली व्याख्यान हुवे जिस से जनता में आर्यसमाज और गुरुकुल के प्रति इतनी श्रद्धा और भक्ति पैदा हो गई है कि कुछ नवयुवकों ने अपने आपको वैदिक धर्म की सेवा के लिए समर्पित भी कर दिया है। स्नातक देवेश्वर जी ने हिंदी की पाठशाला भी खोल दी है जिस में वे स्वयं हिन्दी पढ़ाते हैं। इस के साथ ही सन्ध्या श्रेणी का भी कार्य प्रारम्भ हो गया है जिस में सन्ध्या अर्थ सहित सिखलाई जाती है। २८ ता० को "साऊथ इण्डियन रेल" पत्र के सम्पादक श्री आदिशेष नायडू के सभापतित्व में स्नातक जी ने "आर्यसमाज" पर व्याख्यान दिया। सभापति जी ने अपने अन्तिम भाषण में आर्यसमाज, गुरुकुल और श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी के कार्य की अत्यन्त प्रशंसा की। २९ ता० को "तामिल संगम" नामक स्थान में उन्हों ने "गुरुकुल के उद्देश्य और जीवन" पर भाषण किया। शिक्षित जनता ने व्याख्यान को बहुत पसन्द किया।

(शेष पृष्ठ ५ के अन्त में)

समाचार और टिप्पणी

चूहों से हानि

चूहा छोटा सा जीव है पर इस द्वारा की गई हानि पर जब हम विचार करते हैं तब सचमुच दांतों तले अंगुली दबानी पड़ती है। डा० कुनहार्ड ने इस विषय में खोज कर के यह पता लगाया है कि भारत में इस समय ८० करोड़ (८०० मिलियन) चूहे हैं अर्थात् कुल मनुष्य संख्या से २½ गुण अधिक! औसतन प्रत्येक चूहा वर्ष भर में ३ सेर (६ पाउण्ड) अन्न खाजाता है। परन्तु इस में वह खर्च शामिल नहीं है जो कि वह बोये हुवे अनाज और बोरी इत्यादि में से निकाल २ करता है। इन चूहों के भोजन का बिल, इस प्रकार, १५ करोड़ रुपया वार्षिक है! गत २० वर्षों में चूहों से हमारी जो जातीय आर्थिक हानि हुई है, उसका हिसाब यह लगाया गया है—रोग और मृत्यु जो कि चूहों के कारण हुई, उसपर ६३ करोड़ रुपया, अन्न इत्यादि को हानि पहुंचाई वह ६० करोड़ रुपये की, चूहों को मारने और प्लेग को रोकने में जो कुछ व्यय हुआ वह ३६½ करोड़ रुपया सर्व योग १,२४२½ करोड़ रूपया! पुरानी विनियम दर के हिसाब से यह बराबर है ४२८,०००,००० पाउण्ड के परन्तु वर्त्तमान सरकारी विनियम दर के अनुसार यह धन नाश १,२४२,५०० ००० पाऊण्ड के बराबर है। इस महा युद्ध से पूर्व भारत पर जो ऋण था, उस से यह धन राशि लगभग ५ गुणा है। गरीब भारत में से इतना धन नाश हुआ और अब भी हो रहा है, तो भी हम 'दयालु' बने हुवे हैं! धन्य है, हमारी यह दयालुता!

राजाराम मोहनराय और असहयोग

गत सप्ताह बंगलोर में राजाराम मोहनराय का ८७ वां जन्मोत्सव मनाया गया। राजा के जीवन और कार्य पर व्याख्यान देते हुवे मि० रेड्डि ने कहा कि राजाराम मोहनराय प्रथम पुरुष थे जिसके अन्दर सहयोग त्याग के सिद्धान्त काम कर रहे थे। यह भी खूब! वह व्यक्ति जिसने बिना पढ़े ही हमारे प्राचीन आगाध ज्ञान और विद्याभण्डार पर थूकते हुवे उस अंग्रेज़ी शिक्षा को, बड़े उत्साह के साथ, भारत में निमन्त्रित किया जिस की दासता से मुक्त करना ही असहयोग सिद्धान्त का एक मुख्य भाग है; ऐसा व्यक्ति भी यदि सहयोग त्यागी कहा जा सकता हैं तो प्रेस एक्ट के पास कराने में मुख्य भाग लेने वाले मि० गोखले को भी हम, निःसंकोच, सहयोग त्यागी कह सकते हैं। हम तो यह समझते हैं कि मि० रेड्डि के इस अशुद्ध नवीन आविष्कार से राजा राम मोहनराय का तोमहत्व कुछ नहीं बढ़ता पर हां इतना अवश्य प्रतीत होता है कि कम से कम असहयोग के सिद्धान्तों का तो जनता में इतना अधिक प्रचार हो गया है कि वह किसी भी व्यक्ति के महत्व पर इसी दृष्टि से विचार कर सकती है।

आयरलैण्ड में सैनिक अत्याचार

आयरलैण्ड के उपद्रव का दमन करने के लिए भेजी हुई इङ्गलैण्ड की सेना ही, वस्तुतः, इस समय सारी बग़ावत कर रही है। "शान्ति और न्याय की" मालिक पुलिस और सेना ही इस समय अपने पाशविक अत्याचारों के कारण, इस अशान्ति को बढ़ा रही है। एक उदाहरण ही हमारे कथन की सत्यता को स्पष्ट कर देगा। बाग़ियों से लड़ाई करते हुए सेना ने दो 'टाऊन हाल' पर आग लगा दी जिससे आस पास के कई मकान और दूकानें भी राख हो गई। लोग डरके मारे पास के जंगलों और पहाड़ों में जा छिपे। इस तरह के पाशविक अत्याचारों से आयरलैण्ड में कभी शान्ति नहीं हो सकती। इंगलैण्ड यदि आज ही सेना वापिस बुला ले तो हम समझते हैं कि शीघ्र ही शान्ति हो जावेगी क्योंकि उपद्रव का दमन उपद्रव से नहीं हो सकता।

एक बूझन

हैंटर समिति की रिपोर्ट प्रकाशित होने से देश भर में आन्दोलन मच गया है परन्तु वह रिपोर्ट, भारत—हित की दृष्टि से, कैसी होगी यह हमारे पाठक स्वयमेव जान लेंगे यदि वे इन दो बूझनों को बूझ देंगे?

(१) इस समिति के मुख्य सदस्य एक ऐसे "उदाराशय" अंग्रेज सज्जन थे जिन्होंने भारत के सब आन्दोलनों और शिक्षित व्यक्तियों के साथ "अत्यन्त स्नेह" रखने और गत वर्ष पंजाब की घटनाओं के कर्त्ता हर्त्ता-धर्त्ता होने कारण "अत्यन्त यश" प्राप्त किया था।

(२) इसी समिति के एक और सदस्य काले होने से ऊपर से यद्यपि "भारतीय" हैं पर उनका हृदय सर्वथा "श्वेतांगमय" है। वे जन्म से ही कट्टर "देश भक्त" और "देश हितैषी" हैं। पंजाब की पिछली घटनाओं में उन्होंने भी अपने हृदय की "दयालुशतो" का अच्छा परिचय दिया था।

बूझो, जो इनके नाम बूझ सकता है!

क्या अब भी असहयोग नहीं करोगे?

कलकत्ते से एसोसिएटेड प्रेस के सवाद-दाता ने समाचार भेजा है कि भारत सरकार ४ लाख टन गेंहूं करांची की बन्दरगाह द्वारा, अगले मार्च तक विदेश में भेज देने के लिए अभी से इकट्ठी कर रही है। सरकार की इस संकुचित नीति का हम प्रबल विरोध करते हैं। अभी आस्ट्रेलिया की "प्रतिनिधि सभा" में वहां के प्रधान मंत्री मि० हग्स ने कहा था कि उस देश में २½ मिलियन टन गेहूं फालतू हैं। इस अवस्था में हम नहीं समझते कि भारत जैसे दरिद्र देश से क्षीण विदेश में अन्न भेजने की क्या आवश्यकता है जब कि न केवल आस्ट्रेलिया किन्तु अर्जेन्टाइन भी भेजने को तैयार हैं। किन्तु इस दशा में हम अपने देश भाइयों से एक प्रश्न करना चाहते हैं। वह यह कि क्या आप अब भी उस सरकार से सहयोग त्याग नहीं करेंगे जो कि आपका और भूख से छटपटाते आपके नन्हें नन्हें बच्चों के मुख का एक २ कौर छीनने का प्रयत्न कर रही है? क्या आपको विदेशी सरकार अधिक प्यारी है या अपना और अपने बच्चों का पेट?

---:०:---

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिए छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 87

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यंदिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० म० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! यहां (इस समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | ३० आश्विन सं० १९७७ वि० | दयानन्दाब्द ३७ | ता० १५ अक्टूबर सन् १९२० ई० | संख्या २६ भाग १

हृदयोद्गार

ईश प्रार्थना

दयामय दास हूं तेरा, दया कुछ दास पर कीजै ॥
मेरा मन है बहुत चञ्चल, कुमारग पर रहे तत्पर।
इसे वश में करने का, मुझे सामर्थ्य अब दीजै ॥ १ ॥
नहीं न्हाया यह मनमेरा, परम प्रभु प्रीति गंगा मे।
रंगूं मैं बस उसी रंग में, दयामय ऐसा बल दीजै ॥ २ ॥
सदा जलता है मन ईश्वर, भलाई देख औरों की।
जलन पैदा न हो जिस से, मुझे वो शान्त रस दीजै ॥ ३ ॥
मेरा कल्याणकारी मन, कृपाकर के करो भगवन्।
करे बर्ताव सुखदाई, मुझे वरदान यह दीजै ॥ ४ ॥
दया यह कीजिये भगवन्, बनाऊं मैं सफल तन को।
करूं उपकार जिस से कुछ, मुझे बल बुद्धि वह दीजै ॥ ५ ॥
मैं वारूं राख जिस तन की, सदा इस जन्मभूपर ही।
करूं अवलम्ब इक प्रभु का, कृपा श्रीकान्त यह कीजे ॥ ६ ॥

लक्ष्मीकान्त

—०—

कुछ दोहे—

समुझि नगारा रिक्त यह ना भरि इस में बात।
दुगुनो सोर गुंजाइगो जब होगो आघात ॥ १ ॥
फूल कहै विधिने किया अरे बड़ा अन्याय।
दे सुरूप जब पास ही कांटा दिया उगाय ॥ २ ॥
कभो न पीजै नीर तुम प्रेम सरोवर जाय।
ज्यों ज्यों प्यास बुझात हैं त्यों त्यों देत बढ़ाय ॥ ३ ॥
होंहि नम्र पूरे नहीं बड़े होंय अभिमान।
यासे यह दुविधा पड़ी पावें किम विधि मान ॥ ४ ॥
कभी न फूलो देखिके अरसिक शीस झुमात।
करे वाह वाही वही पर समुझै नहिं बात ॥ ५ ॥
सुख दुख को उपजाइ है दुख सुख को उपजाइ।
खरा कौन या सोचि के तुम ह्वां देत बताइ ॥ ६ ॥

आनन्द

श्रद्धा के नियम

१. वार्षिक मूल्य भारत में ३), विदेश में ५), ६ मास का २)।

२. ग्राहक महाशय पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।

३ मास से कम समय के लिए यदि पता बदलना हो तो अपने डाकखाने से ही प्रबन्ध करना चाहिए।

प्रबन्धकर्त्ता श्रद्धा

डाक० गुरुकुल कांगड़ी (जिला बिजनौर)

ब्रह्मचर्य सूक्त की व्याख्या

देवानामेतत् परिषूतमनभ्यारूढं चरति रोचमानम् । तस्माज्जातम् ब्राह्मणं ब्रह्म ज्येष्ठं देवाश्च सर्वे अमृतेन साकम् ॥ २३ ॥

"प्रकाशमान लोकों का सर्वथा ग्रहण (वश में) करने वाला, दूसरों से न हमला किया गया, यह स्वप्रकाश-स्वरूप (परमात्मा) सब के ऊपर विचरता है। उस से सब में उत्तम वेद रूपी ब्रह्मज्ञान प्रकट होता है और सब देव अमरपन के साथ होते हैं।"

इस से पहले मन्त्र में वेद-ज्ञान ब्रह्मचारी के अन्दर भर देना ही आचार्य का कर्त्तव्य बतलाया है। यह क्यों? इस का हेतु इस मन्त्र में बतलाते हैं। कल्पना करो कि एक बड़ा भारी यन्त्र है जिस में बहुत सी कलें चलरही हैं, सैंकड़ों पहिए चक्कर काट रहे हैं और बीसियों प्रकार की लाभकारी वस्तुएं तय्यार हो रही हैं, यदि कोई साधारण मनुष्य को उस कलाघर में अपना काल-यापन करना है तो क्या आवश्यक नहीं है कि कलाघर में प्रवेश करने से पहले वह उस यन्त्र के एक एक पुर्जे से वाक़िफ़ हो जाय इस काम के लिए कौन उत्तम शिक्षक हो सक्ता है? यदि कलाघर के निर्माता एञ्जिनियर की निर्मित तद्विषयक पुस्तक का पाठ कराने वाला योग्य शिक्षक मिल जावे और एक एक वर्णन को कलाघर पर घटाता चला जाय, तभी कलाघर का पथगामी कलाघर से लाभ उठा सक्ता है। अन्यथा पहियों के चक्कर में फंस कर जान दे बैठने के अतिरिक्त और क्या हो सक्ता है।

यह संसार सब से बड़ा (मनुष्य के लिए) असीम कलाघर है। इस के अन्दर, मानवी कलाघरों की तरह, केवल निर्जीव जड़ सृष्टि ही नहीं प्रत्युत चेतन सृष्टि भी भ्रमण कर रही है। इस विचित्र कलाघर में दिव्य सृष्टि सब अनादि निर्माता ने ही निर्माण की है। आठोंवसु जिस के अन्दर ही सारी सृष्टि निवास करती है, ग्यारह रुद्र जिस के मिले रहने से स्थिति और जिस के बिछुड़ जाने से मौत और रोना होता है, संवत्सर के बार हों आदित्य, विद्युत और यज्ञ ये-सब उसी प्रकाश स्वरूप से होते हैं जिस ने इन सब को प्रकाशित कर छोड़ा है। और फिर उन देवों में अमरपन भी उसी ने डाला है। ये सब प्रकाशक देव जहां अपना प्रकाश उसी स्व-प्रकाश-स्वरूप से प्राप्त करते हैं, वहां इन्हें प्रवाह से अनादि भी इसी ने बना छोड़ा है। प्रलय के पश्चात जब जब सृष्टि होती है तब तब ही ये शक्तियां अपना काम करती हैं—"सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथा पूर्वमकल्पयत् । दिवञ्च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ।" विधाता ने सूर्य चन्द्र, अन्य प्रकाशमान लोकान्तर तथा पृथिवी, अन्तरिक्षादि पूर्व कल्प की तरह ही निर्माण किए हैं। इन सब का रचयिता, इस कलाघर का निर्माता स्वयम् कैसा है? जगत के सब प्रकाशमान लोक उस के वश में हैं। सांसारिक एञ्जिनियर तो कलाघर निर्माण कर के अलग हो सक्ता है, परन्तु यह एञ्जिनियर अपने निर्माण किए कलाघर में व्यापक है इस लिए यह कलाघर कभी बन्द नहीं होता। कलाघर के निर्माता मनुष्य को पकड़ कर अलग करदें तो उस के कलाघर की समाप्ति हो जाती है, परन्तु यह ऐसा संसार रूप माया का स्वामी मायी है कि इसे कोई पराजित नहीं कर सक्ता। यह स्व-प्रकाश-स्वरूप सब के ऊपर विचरता है। यह जहां सूक्ष्म से सूक्ष्म इतना है कि सूक्ष्मतर पदार्थों के अन्दर भी विद्यमान है वहां इतना बड़ा है कि सब पदार्थों को घेरे हुए है। इसकी लपेट से बाहर कोई नहीं।

जो ऐसा ब्रह्म सब से बड़ा सबका स्वामी है, जिस से संसार रूपी यह विचित्र 'कलाभवन' न केवल निर्माण ही किया गया प्रत्युत जिसके आश्रय पर ही यह स्थित है—तज्ज+तल्ल+तदन्—उसी से सब सृष्टि होती, उसी पर स्थित रहती और उसी में लय होती है वह सबका प्रकाश देता हुआ और सबका आधार होता हुआ, स्वयम् किसी आधार की अपेक्षा नहीं रखता। उसी ने इस रूपी ब्रह्माण्ड का रच कर उसका ज्ञान मनुष्य को दिलाने के लिए वेद का प्रादुर्भाव किया। जिसने आंख पीछे दी, पहले उसे दिखलाने के लिए सूर्य का निर्माण किया, उसी ब्रह्म ने मनुष्य की बुद्धि को प्रदीप्त करने के लिए सत्यज्ञान का संसार में प्रचार किया।

निस्सन्देह सांचे मार्ग पर चलाने के लिए योग्य ब्रह्मचारी सांसारिक आचार्य की आवश्यकता है, परन्तु यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति के लिए ज्ञान के प्रसारक परमात्मा और जिज्ञासु के बीच में कोई तीसरा पर्दा नहीं आना चाहिए। वहां आत्मा की ही पहुंच है, इस लिए धन्य हैं वे नररत्न जो सत्य विद्या की प्राप्ति का मार्ग सांसारिक आचार्य से देख कर साधे परमेश्वर की शरण में जाते हैं क्योंकि उसी में जीवन ढूंढने से मनुष्य को प्राप्ति होती है। ओमित्योश्म्

श्रद्धानन्द सन्यासी

वी. पी. मंगाने वाले सज्जनों से प्रार्थना

गत १ सितम्बर से डाक विभाग ने बिना रजिस्ट्री किए वी. पी. लेना बन्द कर दिया है। रजिस्ट्री करके वी. पी. भेजने से मंगाने वालों को प्रति वी. पी. =) अधिक देने पड़ेंगे। इसके अतिरिक्त, वी. पी. का रुपया देर से मिलने के कारण हमें पत्र भी देर से जारी करना पड़ता है। इस लिए ग्राहकों से प्रार्थना है कि अच्छा हो, वे यदि मनीआर्डर द्वारा ही धन भेज दिया करें। इससे ग्राहकों के जहां =) बच जावेंगे वहां उन्हें पत्र भी शीघ्र मिल सकेगा।

प्रबन्धकर्त्ता
'श्रद्धा'

श्रद्धा

असहयोग की देवी

सहायता

जब जल का प्रवाह वेग से चल रहा हो और उसे रोकने का यत्न किया जाय तो ज्यों-ज्यों सामने बन्द खड़े किए जाय त्यों त्यों उसका बल बढ़ता है और सब बन्दों को तोड़कर पानी अधिक वेग से चल निकलता है। गङ्गातट पर रहने से मुझे इस घटना का बहुत अनुभव है। वाइसराय महोदय ने असहयोग को 'मूर्खतम' तहरीक बतलाया। यदि इसी पर चुप रह जाते तो शायद बड़ी हरकत न होती। फिर मिस्टर शास्त्री तथा सुरेन्द्रबाबू से मुहरनी दिलाई और माडरेटों को प्रेरित किया कि इसका क्रियात्मक विरोध करें। लार्ड विलिङ्गडन ने मद्रास में असहयोग को unconstitutional और disloyal movement कह कर जनता को और भी भड़का दिया है। महात्मा गान्धी का प्रस्ताव अब जाति का प्रस्ताव हो गया है, एक आदमी का प्रस्ताव नहीं रहा। यदि इस के कारण किसी नेता पर भी हाथ डाला गया तो वही होगा जो कुछ समझदार सम्पादकों ने लिख छोड़ा है।

क्योंकि धमकियां नीतिमान नहीं दिया करते इन्डियन बृटिश गवर्नमेन्ट में कोई नीतिमान दिखाई नहीं देता। ज़फ़रअलीखां को कैद कर दो, लकाउल्ला आदि को हवालात में लेजाओ— क्या यह धमकी लोगों को डरादेगी? कैसी मूर्खता है! जहां सहस्रों बेड़िया पहिरने को तय्यार बैठे हैं, ऐसी गीदड़ भबकियों से क्या वे मैदान छोड़ कर भाग जायेंगे? मिस्टर मान्टेगू तक ने वाइसराय को गांधी के लिए खुले बन्दों छोड़ दिया और वाइसराय चेम्सफोर्ड होम मेम्बर के सब घोषणापत्रों पर, "बूबेशाह वाली मुहर" लगाने को तय्यार हैं। छोटों पर हाथ डाल कर शायद ये लोग जाति की नाड़ी देख रहे हैं। और इस समय माडरेट लोग नौकर शाही को, उनकी हां में हां मिलाकर, अधिक भड़का रहे हैं और साहसी बना रहे हैं।

जब गांधी जी ने सत्याग्रह का घोषणा पत्र निकाला तो शास्त्री महोदय उनके विरुद्ध manifesto निकालने को तय्यार हुए। मैंने उन्हें मना किया परन्तु उन्होंने न माना और अपना घोषणा पत्र निकाल ही डाला। मेरी सम्मति यह है कि ९ अप्रेल १९१९ को जो गान्धी जी पलवल के स्टेशन पर गिरिफ्तार हुए उसके मुख्य कारण माडरेट लीडर ही थे। और उस गिरिफ्तारी के कारण जो कुछ उपद्रव हुआ चाहे सात आठ गोरे बेरहमी से मारे गए और चाहे सैंकड़ों निरपराध बाल, युवा और वृद्ध हिन्दू, सिक्ख और मुसलमानों ने तड़फ तड़फ कर प्राण देकर, जलियां वाले बाग को अमर तीर्थ बना दिया— उन सारे उपद्रव के पाप के भागी भी वही हैं। अब फिर शास्त्री जी ने सब कुछ प्रत्यक्ष देख कर भी, कि मिस्टर चिन्तामणि का अनुकरण किया है और इसका जो परिणाम होगा उस के लिए भी ये लोग ही उत्तर दाता हैं। सुरेन्द्रबाबू की अवस्था तो समझ में आजाती है, परन्तु शास्त्री जी से त्याग मूर्ति विद्वान् का इस समय का अमल सर्वसाधारण की समझ में नहीं आता।

मैंने बहुत सी घटनाओं में मिस्टर चिन्तामणि की मानसिक बनावट का स्वाध्याय किया है। और मेरी सम्मति यह हुई है कि माडरेटों में बहुत से विचारशील पुरुष होते हुए भी उन में ऐसी हरकतें इसलिए होती हैं कि मिस्टर चिन्तामणि उन को चिन्तित करके उल्टे मार्ग में चला देते हैं। सच पूछा जाय तो मिस्टर चिन्तामणि माडरेट पार्टी के evil genius हैं।

यह सच है कि मिस्टर शास्त्री के घोषणापत्र ने "सत्याग्रह" को बहुत हानि पहुंचाई। परन्तु वह समय ही और था। उस के पश्चात् जनता साधन–सम्पन्न होगई है। क्या पुरानी अवस्था होती तो इन गिरिफ्तारियों पर जनता भड़क न उठती। बीसियों हड़तालें हुईं, सैंकड़ों जलूस निकल चुके, फ़ौज और पुलिस की ओर से भड़काने में भी कसर नहीं रही, परन्तु मुसलमान बहादुर और हिन्दू वीर खुली पेशानी मुसकराते हुए इन दलों को निराश कर गए। गांधी जी को जिस दिन पकड़ा जायगा उस दिन माडरेटों और गवर्नमेंट–दोनों की आंखें खुल जायंगी। वह आश्चर्य से देखेंगे कि करोड़ो गलों से आह्लाद से भरे "जय जयकार" के गम्भीर नाद तो निकलेंगे परन्तु और तरह से एक पत्ता भी तो न हिलेगा। तब क्या पंजाब की गतवर्ष वाली घटना की तरह भयभीत हो कर प्रजा शिथिल गात हो जायगी? यह नहीं होगा। अपने हृदय की साक्षी से मैं कह सकता हूं कि एक गांधी के पकड़े जाने पर सैंकड़ों उन का काम चलाने को तय्यार होंगे और इतने वीर बेड़ियां पहिरने को तय्यार होंगे कि बृटिश गवर्नमेंट के पास न तो इतनी हथकड़ियां ही निकलेंगी और न ही उन के बन्दीगृहों (जेलखानों) में स्थान देने की गुंजाइश रहेगी।

और तब क्या सरकारी कालिजों और स्कूलों के बेंच भरे ही रहेंगे और हिन्दोस्तानी मुकद्दमें वाले कचहरियों के अहातों में ही घूमते दिखाई देंगे! तब उपाधि धारियों की उपाधियों की क्या कदर रहेगी! फिर क्या भारत जातीय महा सभा को "असहयोग" का नियमानुसार प्रस्ताव पास करने की आवश्यकता रहेगी? माडरेट और उनके मित्र भले ही रिक्त स्थानों को संभाल लें, परन्तु बृटिश गवर्नमेन्ट के हिन्दोस्तानी सिविल और मिलिटरी नौकर ऐसी गुलामी से जेल जाना बदरजहा बेहतर समझेंगे। भारत की शान के लिए माता के मान के लिए क्या सहस्रों तप का जीवन व्यतीत करना और मौत को भी हंसते मुख से स्वीकार करना अपना कर्त्तव्य समझेंगे? यदि शासकों और उनके खुशामदियों की समय पर होश ठिकाने आगई तब भी और यदि डायर-शाही का चक्कर चला तब भी दोनों अवस्थाओं में भारत का बेड़ा पार होगा।

मद्रास प्रचारनिधि

आर्य समाजों के नाम मैंने छपे अपील भेज दिए हैं। पिछले सप्ताह में जो पत्र उत्तर में आये हैं उन से कुछ आशा बन्धती है कि मेरी अपील बहरे कानों पर नहीं पड़ी। परन्तु काम, जहां तक हो सके शीघ्रता से होना चाहिए। आवश्यकता और आदमी शीघ्र भेजने की है। मदुरा में चार लेकल उपदेशक रक्खे जासके हैं। बङ्गलौर में आदमी शीघ्र भेजना चाहिए। यदि धन पर्याप्त हो जाय तो गुरुकुल कांगड़ी के दीक्षान्त संस्कार से पीछे दो तीन नवस्नातकों को भेजा जासक्ता है।

अभी तक मैं कुछ बनजा नहीं सका परन्तु जो समाचार आ रहे हैं उन से पता लगता है

कि यदि हमारे पास १०,०००) व्यय करने को होजावें तो आगे का सब काम स्वामी भाई स्वयम् करलेंगे । वे इतनी आर्थिक सहायता देंगे कि जब तक वे स्वयम् सारा काम न संभाल ले तब तक इधर से भेजे उपदेशकों का भी व्यय वो चला सकें ।

जाति शिक्षा में गुरुकुल की सहायता

मेरे पास बहुत पत्र आरहे हैं जिनका भाव यह है कि लोग अपने नए बच्चे सरकारी वा अर्ध सरकारी स्कूलों में दाखिल नहीं करना चाहते इस लिए उन के लिए गुरुकुल की शाखाएं खोल दी जायं । मैं इस आवश्यकता को स्वयम् अनुभव करता हूं । जिन जिन प्रान्तों में ऐसी आवश्यकता अनुभव हुई है वहां के सज्जन गुरुकुल के स्थानापन्न मुख्याधिष्ठाता से पत्रव्यवहार करते रहें । मैं महादेश से लौट कर ऐसे सब स्थानों में पहुंच कर अपनी बुद्ध्यनुसार ठीक मार्ग बतला दूंगा ।

श्रद्धानन्द सन्यासी

—:०:—

(पृष्ठ ५ का शेष)

(३) साप्ताहिक अधिवेशनों में कभी २ केवल स्त्रियों के लिये ही व्याख्यान हुआ करें ।

(४) स्त्रियों के लिए कथा की रीति प्रारम्भ की जाय ।

(५) पारिवारिक उपासना का क्रम जारी किया जाय ।

(६) समाज की ओर से हफ्ते में कम से कम एकबार गलियों में प्रचार हुआ करें ।

(७) बात चीत द्वारा भी आर्य पुरुष अपनी स्त्रियों को वैदिक धर्म सम्बन्धी ज्ञान देने का यत्न करें ।

यह सातों सलाहें अच्छी हैं । केवल सलाह सं० ३ की कुछ अधिक उपयोगिता प्रतीत नहीं होती । यदि समाजें इन सम्मतियों पर ध्यान दें तो विशेष लाभ हो सकता है ।

मुसाफ़िर आगरा

आगरे के मुसाफ़िर ने दो सप्ताह से फिर आर्यसमाज की सुध ली है । आशा है इस के साथ ही साथ डा० लक्ष्मीदत्त जी भी आर्यसमाज के मैदान में लौट आयेंगे । इस घटना को आर्यसमाजी समाचार पत्र अपनी २ भावना के अनुसार रंग देंगे । कोई सन्तुष्ट होगा-कोई असन्तुष्ट । भिन्न रुचि र्हि लोकः । जगत की रुचियां भिन्न भिन्न हैं ।

इन्द्र

—:०:—

(पृ० ८ का शेष)

सर दोराब जी ताता ने कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी को इञ्जिनियरिंग स्कूल की स्कीम फिर से बनाने के लिए २५००० पौण्ड (२५०००० ढाई लाख रुपये) का दान किया है । भारतीय दानी दान करना तो अब तक भी नहीं भूले हैं परन्तु पात्रापात्र का विचार सर्वथा छोड़ बैठे हैं । अभी तक जितनी भी दान की बड़ी रकमें शिक्षा के क्षेत्र में भारतीय महादानियों द्वारा उत्सर्ग की गई हैं प्रायः सब को दान करते समय जाति की आवश्यकता का बिलकुल ध्यान नहीं रखा गया है, इस वर्ष देश में बहुत सी कम्पनियां औद्योगिक उन्नति के लिए खोली गई हैं और देश की पराधीनता तथा निर्धनता को देखते उनकी स्थिति बहुत प्रसन्नता का कारण हो रही है ऐसे समय में औद्योगिक शिक्षा की कितनी आवश्यकता है ये प्रत्येक देश भक्त अनुभव कर रहा है । तब न जाने ताता महाशय ने यह दान देश को न देकर विदेश में क्यों उत्सर्ग किया है । यह भी इस भारतवासियों के दुर्भाग्य का ही सूचक है ।

भारतीय गणना विभाग के अनुसार गत अगस्त मास में ब्रिटिश भारत में ११६५ मोटरकार विदेश से आये इनमें से संयुक्त राज्य अमरीका से ८०६ के लगभग; संयुक्त राज्य (United kingdom.) से १३६ और कैनाडा से ३२ आए । १९२० ई० एप्रिल से अगस्त तक पांच महीनों में ६४६७ मोटर आये जिनका मूल्य २५२ लाख था । इन्हीं महीनों में १९१९ ई० में २०६६ मोटर आये जिनका मूल्य ५८ लाख था । इस गणना से यह स्पष्ट ज्ञात हो रहा है कि देश के दिन दिन बढ़ते हुए धन के निर्यात को रोकने के लिए औद्योगिक शिक्षा की और स्वदेशी के व्रत की कितनी आवश्यकता है ।

संयुक्त प्रान्तीय व्यवस्थापक सभा की ८ अक्तूबर की बैठक में पञ्चायत बिल पास होगया । पं० गोकरणनाथ मिश्र ने प्रत्येक ऐसे ग्राम वा ग्रामसमूह में जहां कोई सरकार से नियन्त्रित स्कूल हो पञ्चायत के अवश्य स्थापित किए जाने तथा पञ्चों के ग्रामवासियों द्वारा चुने जाने के आशय के दो संशोधन पेश किये थे जो कई माननीय सदस्यों द्वारा अनुमोदित किए जाने पर भी, जैसी सम्भावना थी, पास न हो सके । किन्तु सरकारी सदस्य कीन द्वारा पेश की गई युक्ति बड़ी विचित्र है । उनने कहा कि लोगों में परस्पर झगड़े होते हैं और चुने हुए व्यक्ति पक्षपात से शून्य न हो सकेंगे इस लिए ये संशोधन स्वीकार्य नहीं हैं । जनता के प्रतिनिधि पक्षपाती होंगे और सर्वसाधारण से सर्वथा अनभिज्ञ कलक्टर वा कमिश्नर से नामज़द किए गए न्यायी होंगे—क्या अच्छा तर्क है ।

"सहायक संरक्षक सभा गुजरात प्रान्त का कर्तव्य"

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के श्री मुख्याधिष्ठाता जी ने महा० गांधी के असहयोग के विषय में लिखते हुए "गुरुकुल की विशेषता" के विषय में जो कुछ लिखा है उसमें श्रद्धा के पाठकों ने पढ़ा होगा कि गुरुकुल कांगड़ी को धन की सहायता की कितनी आवश्यता है और स्वामी श्री श्रद्धानन्द जी महाराजने आवश्यकता पूरी करने के लिए पर्यटन शुरू किया है । स्वामी जी महाराज हरेक नगर में तो जा नहीं सकते हैं इस लिए संरक्षकों का फर्ज है कि वो अपने नजदीक के स्थानों में से द्रव्य एकत्रित करके स्वामी जी को भेज देवें । गुजरात प्रान्त के लग भग साठ (६०) ब्रह्मचारी गुरुकुल कांगड़ी और उसकी में शाखों में पढ़ते हैं । गुरुकुल संरक्षकों से खान पान का शुल्क लिया है शिक्षा मुफ्त दी जाती है । शिक्षा का सारा खर्च विशेष करके पञ्जाब प्रान्त की जनता से चलता है । क्या गुजरात प्रान्त की जनता का कर्तव्य नहीं है कि वे गुरुकुल को सहायता देवें । गुजरात की जनता जरूर सहायता करेगी, कामकरने वालों की जरूरत है । सहायकसंरक्षक सभा से मेरी प्रार्थना है कि अपनी सभाके उद्देश्यानुसार वे सहायता पहुंचाने के लिये तयार हो जावें । सभा के प्रधान और मन्त्री से प्रार्थना है कि वे अपनी सभा बुलाकर एक डेप्युटेशन बनाकर काम करना शुरू कर दें ।

विजलपुर — आपका सेवक

६।१०।२० — भीमा भाई ।

हम गुजरात के पाठकों का ध्यान इस पत्र की ओर विशेषरूप से आकर्षित करते हैं । गुरुकुल ही इस समय सच्ची जातीय शिक्षा देने वाली एक मात्र संस्था है

सं० श्रद्धा

—:०:—

आर्य समाजिक जगत्

अकेला बुद्धिमान्

सद्धर्मप्रचारक आर्य समाज और राजनीति के सम्बन्ध की व्याख्या करता हुआ लिखता है—'आर्य समाज में बहुत थोड़े पुरुष दिखाई देते हैं जिनसे आजकल हमारी सम्मति मिलती हो' बात ठीक है। सद्धर्मप्रचारक की प्रकार की राय रखने वाले लोग आर्यसमाज में नहीं मिलते उसका एक नमूना उसी लेख में मिलता है। प्रचारक लिखता है--'हमारी सम्मति यह है कि आर्यसमाजी होते हुए भारतवासी तो हम हैं ही, और सच्चे आर्यसमाजी होते हुए ही हम भारत माता की वास्तविक सेवा कर सकते हैं। परन्तु भारतवासियों के साथ वर्तमान पालिटिक्स में सम्मिलित होते हुए हम सच्चे आर्य समाजी नहीं रह सकते'। इस रुचि से सहमत होने वाले आर्य समाजी यदि संख्या में कम हों तो आश्चर्य नहीं क्योंकि इसको मान लेने पर आर्य समाज को वेद के सम्पूर्ण राजप्रकरण से मुंह मोड़ना पड़ेगा और सत्यार्थप्रकाश का दशम समुल्लास अप्रामाणिक मानना पड़ेगा। हरेक समझदार आर्य समाजी जानता है कि सच्ची राजनीति भी धर्म का एक अंग है।

आर्यसमाज और आर्यसमाजी

यह स्मरण रखना चाहिए कि आर्यसमाज दूसरी वस्तु है, आर्यसमाजी दूसरी वस्तु हैं। आर्यसमाज उन सभासदों के संगठन का नाम है, जिन्होंने वैदिक धर्म के सिद्धान्त को सत्य मानकर समाज के सभ्य बनना स्वीकार किया है। आर्य समाज में वह लोग आते हैं जो वैदिक धर्म को मानते हैं, और चाहते हैं कि संसार में वैदिक धर्म फैले। आर्यसमाज उनकी धार्मिक इच्छाओं का केन्द्र है। किन्तु यह ध्यान में रहे कि आर्य समाज में आता हुआ कोई भी आदमी यह प्रतिज्ञा नहीं करता कि वह जीवन भर केवल आर्यसमाज का प्रचार कार्य करेगा, वह यही कहता है कि सिद्धान्तों का मैं केवल शब्द से प्रचार करूंगा। मनुष्य के जीवन के कई भाग हैं। वह कई सम्बन्धों से अन्य मनुष्यों से बंधा हुआ है। वह परमात्मा की प्रजा है, राष्ट्र का अंग है, अपनी जाति का टुकड़ा है, मातापिता का पुत्र है, और जिस समाज साहित्य और विचार मण्डल में उत्पन्न हुआ है, उसका प्रतिबिम्ब है। इतने और इन से भी अधिक सम्बन्ध हैं, जो मनुष्य को मनुष्य समाज से बांधते हैं। आर्यसमाज में प्रवेश करता हुआ कोई आर्य समाजी इन सम्बन्धों को तोड़ नहीं सकता। वेदोक्त सब सम्बन्ध-धर्मों का पालन करना उसका कर्तव्य है। इस लिए जो लोग यह उपदेश देते हैं कि आर्यसमाजियों को अन्य किसी भी सभा संगठन में कार्य न करना चाहिए, या अन्य किसी भी आन्दोलन में भाग न लेना चाहिए, वह भूलते हैं।

कुछ दृष्टान्त

दो एक स्थूल दृष्टान्तों से बात समझ में आजायगी। ऋषि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना कर देने पर भी परोपकारिणी सभा का जुदा संस्था बनाना अनुचित नहीं समझा। ऋषि ने गो रक्षा के कार्य को बढ़ाने के लिये गो रक्षिणी सभाओं की स्थापना भी उपयुक्त ही जानी। वर्तमान समय में देखिये। ईसाई लोग ईसाई धर्म पर पक्के रहते हुए यदि देश की ख़ातिर जान दें, तो ईसाई धर्म के मरने का ख़तरा नहीं,। न ख़िलाफ़त आन्दोलन की तीव्रता के कारण इस्लाम के नाश का भय है, परन्तु एक आर्य समाजी के अपनी मातृभूमि के प्रति कर्तव्य पालन करने का यत्न करते ही बीसियों बोझल सिर हिलने लगते हैं। इस पर भी पं० रामभजदत्त म० कृष्ण जी, मुख्शीटेकचन्द्र जी, डा० लक्ष्मीदत्त जी आदि आर्य महानुभावों ने गतवर्ष आन्दोलन में जो भाग लिया है, उससे उनके लिए साधुवाद ही कहने को जी चाहता है, और निराशा के लिए कोई स्थान नहीं प्रतीत होता। यह सज्जन किसी दूसरे महानुभाव से कम आर्यसमाजी नहीं हैं—

गतवर्ष के आन्दोलन में अगुआ बन कर इन्होंने आर्य समाज के कार्य को इज्जत ही दी है। आर्य समाज का गौरव कम नहीं बढ़ाया ही है।

एक मीठा सपना

यदि कोई इन पंक्तियों के लेखक से पूछे कि तुम्हारा सब से अधिक मीठा सपना कौनसा है, उसका उत्तर यह होगा।

"भारत में धर्म, देश और समाज की भलाई के लिए जितने आन्दोलन हैं, उन का नेतृत्व आर्य समाजियों के हाथ में हों। एक ईश्वर की उपासना का जयनाद सुनाने का समय आये तो सब से आगे आर्यसमाजी हो; यदि देश की समाजिक कुरीतियों को दूर करने की समस्या उपस्थित हो, और विरोधियों के तीरों की बौछार हो, तो सब से आगे छाती तानने वाले आर्य समाजी हों; यदि देश की स्वतन्त्रता का युद्ध प्रारम्भ हो तो देश की सेनामें अधिक सिपाही ऋषि दयानन्द के शिष्य हों, और तो क्या, यदि कभी कोई भारतीय प्रजा तन्त्र राज्य हो तो उसके स्तम्भ वैदिक धर्म के अनुयायी हों आर्यसमाज रहे और फूले फले परन्तु उसका यह यत्न न हो कि उसके फूल फल बाग़ की सीमा के अन्दर ही पड़े २ सड़ जावें। बाग़ का यश इसी में है कि उसके फूलों का सुगन्ध दिग्दिगन्त में फैले और उसके फलों का गुणगान देश विदेश में हों। इस लेखक को ऐसे विस्तृत प्रभाव शाली आर्यसमाज का दृश्य एक सम्प्रदायभूत संकुचित गिरोह की अपेक्षा बहुत उज्ज्वल प्रतीत होता है।

आर्य समाज और स्त्री जाति

लाहौर के प्रकाश ने आर्यसमाज और स्त्री जाति के सम्बन्धों का वर्णन करते हुए निम्नलिखित क्रियात्मक सलाहें दी हैं—

(१) आर्य पुरुष अपनी स्त्रियों को साप्ताहिक अधिवेशनों में लेजाया करें।

(२) व्याख्याता लोग स्त्रियों की मौजूदगी का ध्यान रखें और कठिन भाषा न बोलें।

(शेष पृष्ठ ४ के पहिले कालम के नीचे)

गुरुकुल जगत्

गुरुकुल कुरुक्षेत्र

पठन पाठन का द्वितीय सत्र प्रारम्भ हो गया है। छुट्टियों में घर गए हुए सब अध्यापक और ब्रह्मचारी लौट आये हैं और नये तथा बढ़े हुए उत्साह से अपने कार्य में लग गए हैं। आलेख्याध्यापक की कमी थी उसको रणजीत राय जी ने, जो एक उत्साही सज्जन हैं, पूर्ण कर दिया है।

ऋतु अत्यन्त सुहावनी है और ब्रह्मचारियों का स्वास्थ्य भी उत्तम है। मलेरिया ज्वर का प्रकोप अब नहीं रहा है और केवल दो ही ब्रह्मचारी औषधालय में हैं। गुरुकुल कुरुक्षेत्र अपने जल वायु के लिए सब गुरुकुलों से उत्तम है। इस वर्ष छुट्टियों में अन्य गुरुकुलों के कई सज्जन यहां स्वास्थ्य सुधार के लिए पधारे थे। गुरुकुल भैंसवाल के और इन्द्रप्रस्थ के प्रबन्धकर्ता भी कुछ दिन निवास कर गए हैं।

आए हुए गण्य व्यक्तियों में से एक श्री० स्नातक देवराज सिद्धान्तालंकार भी हैं आपका पाठकों से सुपरिचित सत्संग सम्मेलन में ब्रह्मचर्य पालने के नियमों पर एक सरल उपदेश हुआ था।

वर्षा के अभाव के कारण इस वर्ष अन्न के समान जल की भी कमी है। पहिले गुरुकुल के पशु जंगल में तालाबों से पानी पी आते थे किन्तु अब घास और जल दोनों का ही अभाव हो गया है। विचार है कि बाहिर के कुएं के पास इस प्रयोजन के लिए एक पक्का हौज़ बनवा दिया जाये जो ग्रामों के पशुओं के लिए भी लाभप्रद होगा। किन्तु यह केवल धनाभाव के कारण नहीं हो सकता।

आज जहां देश में "गो रक्षा" के लिए बड़े २ प्रयत्न हो रहे हैं और लाखों रुपया इकट्ठा हो रहा है वहां पशुओं के पानी पीने के लिए एक चहबच्चे का बनवा देना कोई बड़ी बात नहीं है। हमें आशा है कि कोई दानवीर इस छोटी किन्तु आवश्यक कमी की ओर ध्यान देने की कृपा करेंगे।

नौबतराय
प्रबन्धकर्ता

गुरुकुल मटिण्डू समाचार

हसन गढ़ में वैदिक धर्म का नाद

ब्राह्मणों का चीखना

प्रचार कराने में मुसलमानों की मदद

ऋतु साधारणतया अच्छी है दिन को खूब गरमी रात को सर्दी और ओस पड़ती है इस समय ब्रह्मचारी सब निरोग हैं। फूंस की झोपड़ियों के रहने के कारण रहने के स्थान का कष्ट था अब दो लम्बे कमरों पर छत डलजाने के कारण सब कष्ट दूर हो गया है।

चौधरी कालूराम जी छुट्टी से वापिस आगये हैं और खूब धूम धाम से वैदिक धर्म का प्रचार करना आरम्भ कर दिया है पहिले पहिल चौधरी जी को सेहरी की तरफ भेजा गया आपने सेहरी तथा उसके साथ लगते पांच ग्रामों में खूब प्रचार किया इसका असर यह हुआ कि सेहरी के लोगों ने अध्यापकों सहित सर्व ब्रह्मचारियों तथा आस पास के सर्व ग्रामों को दो दिन के वास्ते निमन्त्रित दूज और तीज के दिन किया। ६ दिन पूर्व कालूराम जी उपरोक्त संदेशा लेकर गुरुकुल लौट आये, गुरुकुल में चौ० पीरुसिंह जी तथा चौ० जुगलाल जी पधारे हुये थे सांयकाल के समय प्रस्ताव हुआ कि कल माल पुए बनाए जावें अतः रात के समय हसन गढ़ से मक्खन बनिये की दुकान से तवो मंगवाई गई कालुराम जी ने अपने समय को सदुपयोग में लाना चाहा और खड़ताल लेकर हसनगढ़ पहुंचे क्योंकि दिए तले अन्धेरा था। बनिये की दुकान पर जाकर तवी तो लेली पर साथ ही यह भी कहा कि "भाई मक्खन, लोग भजन सुनना चाहें तो हम एक दो भजन तेरी दुकान के सामने सुनादें" क्योंकि उस की दुकान बाजार के बीच में है तीनों तरफ रास्ता जाता है। मक्खन बोला अगर किसी को भजन आते हैं तो एक दो सुना दो और एक मूढ़ा लाकर आगे धर दिया। बस फिर क्या था कालूराम की धारा प्रवाह लगे भजन पर भजन बोलने। उधर से मुसलमान भाई भी अपने ताजीये उठा कर ला रहे थे वे भी भजन सुनने के वास्ते ठहर गए रात के १२ बजे तक प्रचार होता रहा। सब भाइयों ने (बनियों, ब्राह्मणों तथा मुसलमानों ने) ४,५ दिन लगातार प्रचार करने के वास्ते कहा। अगले दिन मुख्याध्यापक जी चतुर्थ, पञ्चम षष्ठ श्रेणियों को लेकर हसन गढ़ पहुंचे उसी दिन कालूराम जी के खण्डन मण्डन के भजन होने लगे जो कि बनियों ने खूब पसन्द किए। बीच२ में यदि कोई ब्राह्मण बोल भी पड़ता था तो बनिए झट कह देते थे कि कनागत पास आरहे हैं और तुम्हारी बन्द करदेंगे। उधर से कई लोग भी काम में आर कर कहने लगे कि महाराज १ मास तक प्रचार करावें जलसा भी होजायगा और चन्दा भी होजायगा। उस दिन पण्डित रविदत्त जी का व्याख्यान भी हुआ अगले दिन मुख्यापक को छोड़ कर सर्व अध्यापक नौकर और कालूराम जी प्रचार के लिए गये। १२½ बजे तक प्रचार होता रहा ब्राह्मणों ने कहा कि कल शास्त्रार्थ के वास्ते तैयार होकर आना अगर शास्त्रार्थ नहीं होगा तो शस्त्रार्थ तो जरूर ही हम करेंगे। मुसलमान भाइयों ने बड़ा हौसला दिया कि महाराज आप ने डरना नहीं प्रचार जरूर करें हम आपका सब तरह से साथ देंगे।

चौथ दिन सर्व अध्यापक तथा ऊपर की तीनों श्रेणियों के ब्रह्मचारी कालूराम जी सहित गए उस दिन यह विशेषता थी कि ब्रह्मचारियों की चार २ की पंक्ति बनाई गई और बाजार में नगर कीर्तन करते हुए दुकान पर पहुंचे चारों तरफ से लोग आ २ कर इकट्ठे होगए। रोहणी के आर्य जाटों ने भी खूब हिस्सा लिया सब से पहिले गुरुमाध्यापक जी ने खड़े होकर कहा कि शास्त्रार्थ के लिए जो कोई भी भाई आना चाहे आसकता है। पर शस्त्रार्थ का जो चैलेंज दिया है उसके वास्ते निवेदन है कि धर्म का प्रचार करते २ यदि हमारे प्राण भी हमारे भाई द्वारा चले जायं तो हम अपना सौभाग्य समझेंगे पर हम अपनी तरफ से हाथ न उठावेंगे। तत्पश्चात् चौ० कालूराम जी के भजन खण्डन मण्डन के होने लगे बीच में ब्राह्मणों ने शोर म-

चाना आरम्भ किया। १०, १५ मिन्ट तक, खूब शोर रहा। स्त्रियों को मण्डली एक तरफ बैठी थी। सारे लोग खड़े होगये मुसलमान भाई लाठियां लेकर हमारी रक्षार्थ चारों तरफ खड़े होगये। उधर अहीरों जाटों ने ब्राह्मणों तथा कुछेक बनियों को धमका कर वहां से उठवा दिया ब्राह्मणों तथा कुछ एक बनियों ने मक्खन बनिए को धमकाया कि क्यों तुमने अपनी दुकान पर जगह दी कालूराम जी को गालियां भी दीं और बाजार में प्रचार करने से बन्द भी किया। उस समय मुख्याध्यापक जी मूड़े पर खड़े हो कर लोगों को शान्ति पूर्व बैठजाने के लिए कहने लगे साथ हा कहा कि प्रचार बन्द नहीं होसकता जा भाई न सुनना चाहें वे जा सकते हैं जो धमकीयां हमें दीगई हैं इन धमकीयां में हम नहीं आते आप सब भाई शान्ति पूर्वक बैठ जावें। लोग सब बैठ गये फिर बहुत जोर से पोपों के खण्डन के भजन होने लगे बीच में कई बनिए और सुनार भी मुख्याध्यपक के कान में आकर कहने लगे कि महाराज आपने इतना मत रोज आकर प्रचार करें। हमने उन्हें कहा कि भाई अगर डरना होता तो तीन मील से चल कर राम को आने की क्या ज़रूरत थी बीच में तीन दिन प्रचार मेहरी में होगा बाद फिर हसनगढ में डेरा जमावेंगे। बाद पण्डित रविदत्त जी का व्याख्यान होने लगा लेकिन बीच में फिर शोर होने लगा और ब्राह्मण चौकीदार को बहका कर ले आए और वह काम बन्द करने वास्ते कहने लगा मुख्याध्यापक जी ने व्याख्याता को अपने व्याख्यान को जारी रखने वास्ते कहा और चौकीदार से कहा कि भाई तू नाम लिख कर चले जा पर प्रचार बन्द नहीं करेंगे। उस दिन रात के १ बजे तक प्रचार रहा। अगले दिन के लिए मुसलमान भाईयों ने अपनी चोपाल के पास प्रचार के वास्ते कहा जो कि उन की प्रार्थना स्वीकृत हुई।

पाचवे दिन तीसरी चतुर्थ, पञ्चम षष्ठ श्रेणियों को लेकर मुख्याध्यापक जी तथा पण्डित रविदत्त जी कालूराम जी सहित ६ बजे रात के मुसलमानों की चोपाल की तरफ जाने लगे लोग बहुत दूर लेने वास्ते आये हुवे थे और अहीर लोग जो खेतों में पानी भरने वास्ते जा रहे थे वे भी लौट आवे। पांचवें दिन की हाजरी बेहद थी ब्राह्मण बनिये १५०, २०० औरतें, अहीर, जाट, माली, मुसलमान सबके सब लोग इकट्ठे हुवे। कालूराम जी के १ भजन होने पश्चात् मुख्याध्यापक जी ने १ घन्टे तक व्याख्यान एकता विषय पर दिया और मुसलमान भाईयों को धन्यवाद दिया। १ घन्टे तक भजन होने के बाद पण्डित रविदत्त जी ने पुराणों पर व्याख्यान दिया और बाद फिर भजन होने लगे। आज दो बजे तक प्रचार रहा। प्रचार के पश्चात् अहीरों ने कहा कि महाराज आप मेहरी के बाद जरूर आकर फिर प्रचार करें हम सब भाई जनेऊ लेंगे। अब से कनागतों के समय हम ब्राह्मणों को खीर नहीं खिलावेंगे।

अब मेहरी की तय्यारी हो रही है पाठकों की सेवा में मेहरी के सब समाचार आगामी श्रद्धा के अङ्क में दिये जावेंगे।

पूर्णदेव

पत्रों का सार.

रायकोट, (पटियाला) से गंगागिरि सन्यासी लिखते हैं कि यहां की संस्कृत 'पाठशाला के ब्रह्मचारियों ने रायकोट के मेले में आमजनों का अन्न वितरण का काम किया जिस से यात्रियों पर 'आर्यसमाज का उत्तम प्रभाव पड़ा'।

साहस कार्यालय झांसी, से हमें सूचना मिली है कि यद्यपि 'प्रेस आदि का सारा प्रबन्ध हो चुका था' और 'साहस गत जन्माष्टमी को ही निकल गया होता किन्तु डिकलेरेशन की मन्जूरी न मिली थी। अब महीने बाद जाकर १००० की जमानत का हुक्म मिला है' 'और विजय दशमी से पत्र प्रकाशित होने लगेगा'।

आर्यसमाज, मुल्तान छावनी के मन्त्री सूचना देते हैं कि लाला श्रीकृष्ण जी के सुपुत्र कुशल की कुसमय मृत्यु का समाचार जान कर यहां की आर्यसमाज में शोक सभा की गई और सम्बन्धियों को सहानुभूति का तार भेजा गया।

आ.प्र. सभा मध्य देश व बरार, नरसिंह पुर के स० मंत्री श्री म० शंकरलाल उक्त सभा के डा० रामप्रसाद--स्मारक आर्य अनाथालय के लिये मध्यप्रदेश वासियों से धन की सहायतार्थ अपील करते हुए लिखते हैं कि "इस समय अनाथालय का मासिक व्यय २५०) के लगभग है"। "बच्चों के दैनिक भोजन वस्त्रों के अतिरिक्त अनाथालय को एक बृहत मकान बनवाने के हेतु धन की अत्यन्त आवश्यकता है। निजी मकान बहुत ही छोटा है। उसी के साथ एक शिल्प विद्यालय भी खोलने का विचार है"। वह आशा करते हैं कि जनता उनको निराश न करेगी।

झांसी से बैजनाथ कोठी के सम्पादकत्व में "योगी" नामका मासिक पत्र ठीक दिवाली के दिन से सरस्वती के आकार में निकलना प्रारम्भ होगा इस में मानस शास्त्र और आत्मविज्ञान के लेख रहा करेंगे।

बेगार विरोधिनी सभा के अधिवेशन २४,२५ अक्टूबर की शाम को अम्बाला प्रादेशिक परिषद् के पण्डाल में होंगे। चमार, धानुक, कुम्हार आदि जातियों को, जो बेगार देते हैं बुलाने का विशेष प्रबन्ध किया गया है। बहुत से मान्य नेता भी पधारेंगे।

के. ए. देसाई

अम्बाला कमिश्नरी की राजनैतिक परिषद् आश्वीन सुदी ११-१२-१३ (२३,२४,२५ अक्टूबर) को होगा। मन्त्री जी लिखते हैं कि महात्मा गांन्धी इत्यादि बड़े २ नेताओं के आने की सम्भावना है।

म० कृष्णाराम जी. चितलिया ने सेवाश्रम अमरेली मे भाद्रपद बदी १२ (६ अक्टूबर) शनिवार को होने वाले महात्मागांधी जी के जन्मोत्सव का समय विभाग बनाया है जिस में नित्य कर्म सम्बन्धी १५ कर्त्तव्य बताये गये हैं। इनमें स्वदेशी वस्तु पहरना, स्वावलम्बी बनना, सेवा करना, अन्तः करण के अनुकूल कार्य करना—ये विशेष ध्यान देने के योग्य हैं

फिरोजपुर की पशु—मित्र सभा के मन्त्री श्री म० भगतराम जी एक पत्र द्वारा माता पिता से बच्चों को दया धर्म सिखाने का विशेष अनुरोध करते हैं।

गुरुकुल की मायापुर वाटिका (कनखल) में यात्रियों को ठहरने का जो कष्ट होता है, उसे दूर करने का भार गुरुकुल भक्त स्वामी ज्ञानानन्द जी ने अपने सिरपर उठाया है। आपने २० हजार रुपया एकत्रित करने की प्रतिज्ञा की है और इसके लिए आप पंजाब में दौरा लगा रहे हैं। प्रसन्नता का अवसर है कि आर्यजनता दान देकर उनका उत्साह बढ़ा रही है। सहारनपुर, अमृतसर, रावलपिण्डी, स्यालकोट इत्यादि में स्वामी ज्ञानानन्द जी को पर्याप्त कृतकार्यता हो रही है।

—:०:—

सामयिक विचार

मुरादाबाद कानफ्रेन्स के सभापति का भाषण प्रकाशित हो गया है। बाबू भगवानदास जैसे शान्त, सरल-प्रकृति और विद्वान् हैं वह किसी से छिपा नहीं है। आपके भाषण में ये सब गुण स्पष्ट झलक रहे हैं। आपके भाषण की बड़ी विशेषता यह है कि इस में राजनैतिक दुर्बोध विषयों को भी सर्व-साधारण के समझने योग्य बना दिया गया है। साधारणतया सभापतियों का भाषण लम्बा होकर थकाने वाला और अरुचिकर हो जाया करता है इस में वह बात नहीं है। इतने पर भी कोई आवश्यक बात छूटी नहीं है। किस प्रकार हमारे देश और जाति के दुःख प्रारम्भ होकर बढ़ते हुए वर्तमान अवस्था में आ पहुंचे हैं, उनसे छुटकारे के क्या क्या उपाय हैं, जो उपाय बतलाये जा रहे हैं वह कहां तक ठीक हैं इत्यादि का प्रदर्शन और परीक्षा संक्षेप में किन्तु अत्यन्त स्पष्ट किया गया है। असहयोग के प्रश्न पर विचार करते हुए कानूनन और गैरकानूनन (Constitutional and unconstitutional) की व्याख्या बहुत भली भान्ति की गई है। यहां आपकी विद्वत्ता का खूब प्रकाश हुआ है। प्राचीन भारतीय नीतिशास्त्रों से दिखाया गया है कि शासन-सिद्धान्त का आदर्श क्या है। हम प्रत्येक पाठक से अनुरोध करेंगे कि वह इस भाग को (दूसरे अध्यायको) अवश्य पढ़ें।

एक ताजा उदाहरण इस बात का मिला है कि किसी भी अंग्रेज़ को हिन्दुस्तान में कानूनन अपराधी नहीं ठहराया जा सकता। उपर्युनिर्दिष्ट सभापति महोदय ने भी इस बात पर बहुत बल दिया है कि कानून की व्याख्या ऐसे बेजवाबदेह-शासक के हाथ में होती है। यह कुछ सूत्र बन गया है कि कोई हिन्दुस्तानी यदि किसी अंग्रेज़ द्वारा मारा जाएगा तो उस की तिल्ली बढ़ी हुई होगी या अन्य किसी कारण से उसको परलोक सिधारना पड़ेगा। आगरे में कुछ दिनों हुए ब्रैमैन नाम के गोरे ने अपने पंखा कुली को मार दिया, डाक्टर की साक्षी दी गई, तिल्ली एक दम इतनी बढ़ी कि ८ वा नौ गुणा हो गई, बस साहब निर्दोष सिद्ध हो गये और रिहाई पागये। सूत्र भला अशुद्ध कैसे हो सकता था?

ईशर कमिटी के संगठन पर विचार करते हुए हम पिछली बार निर्देश कर चुके हैं कि यह रिपोर्ट कैसी होगी। यह बात अब स्पष्ट होगई। आजकल भारतीय सेना का खर्च युद्ध के पहिले की अपेक्षा दुगुना है। इस कमेटी ने जो नये प्रस्ताव किए हैं उनको कार्य में लाने के लिए और भी अधिक धन की आवश्यकता होगी। और कितने अधिक धन की आवश्यकता होगी, इस का निश्चय स्वयं समिति को ही नहीं है उनको तो केवल अपने प्रस्तावों का निश्चय है कि गोरे सैनिकों के सुख के लिए जीवन का दर्जा ऊंचा करदेना चाहिए। है भी ठीक उन्हें इस की पर्वाह ही क्यों हो, भारतीय कर देने वाले किसान अपने और अपने देश के लिए कमाई थोड़ा ही करते हैं!

केवल इतना ही नहीं किन्तु अभी तक भारतीय सेना ब्रिटिश राज्य के पूर्ण सदुपयोग में न आसकती थी। अब वह सीधे ब्रिटिश सैनिक विभाग के शासन में होगी जिस से वह इङ्गलैण्ड की नई कमाई (मैसोपोटामिया ईराक आदि) पर भली भान्ति पहरेदारी कर सके। इंगलैंड स्वयं तो अपने मन्त्रिदल को न धन की सहायता देगा और न जन की श्रम जीवी और सम्पत्ति शाली स्पष्ट ही धमकी दे चुके हैं। और अपने व्यय की आवश्कता भी क्या है जब तक दूसरों की ही लूट से और उन के ही खून बहाने से काम चल सकता है!!!

आपस में सहयोग करने की इस समय विशेष आवश्यकता है। ईशर समिति ने जो आपत्ति देश पर लाने का प्रस्ताव किया है उसके विरोध में हम समझते है, कि किसी भी नरम वा गरम का मत भेद न होगा। देश में स्थान २ पर हड़तालें हो रही हैं। बम्बई में डाक, तार, सवारी की ट्राम और मोटर गाड़ियां, गैस का प्रकाश आदि और कलकत्ते में भी ट्राम और प्रकाश की हड़ताल है। मद्रास में शान्ति नहीं है—रेलवे के एजण्ट को मारने के लिए हजारों आदमियों ने जान माल की पर्वाह न कर पटरी उखाड़ी गई—बंगाल नागपुर रेलवे और जी० आई० पी रेलवे में शान्ति नहीं है—इसप्रकार चारो ओर अशान्ति ही अशान्ति दिखाई दे रही है। यह सब किस लिए? मेस्टन समिति की प्रस्तावित नई आर्थिक व्यवस्था का प्रायः सारी शिक्षित जनता विरोध कर रही है। नई टैरिटोरियल फोर्स के स्थापन का रहस्य ईशर समिति के प्रस्तावों से खुल चुका है। वाइसराय पंजाब की दुर्घटनाओं पर अधिक प्रकाश नहीं पड़ने देना चाहते। ऐसे समय सुधारों के लड्डू की प्रसन्नता में सब कुछ भूले रहना और अपनों की ओर दृष्टिपात न करना कहां तक चतुराई का काम है? पंजाब में गतवर्ष आपस में असहयोग करके हमने जो फल पाया है वह सभापति बाबू भगवानदास के भाषण को पढ़ने से स्पष्ट है। अब नयी कौन्सिलों के चुनाव की तिथियां प्रकाशित हो गई हैं—और सम्भावना है कि ये परस्पर कई विवाद का कारण बनेंगी—यही अवसर है कि इन तिथियों से पहिले पहिले हम अपने कार्य क्रम को निश्चय करलें और सब एक स्वर से इसमें भाग लेने से इन्कार कर दें।

इंगलैण्ड के सरकारी पत्रों को मानसिक और आत्मिक बल पर विश्वास आही नहीं सका। कार्क के लार्डमेयर ५४ दिन उपवास के बाद भी अभी अपनी ठोढ़ी स्वयं बनाने में और समाचार पत्र शौक से पढ़ने में समर्थ हैं यह सुनकर बहुतसे लन्दन के पत्रों को सन्देह हो रहा था कि वह अवश्य चुपके चुपके कुछ खाते हैं। सरकारी सूचना ने उनका यह सन्देह निवृत्त कर दिया है। परन्तु उन में से बहुतेरे उस सूचना को भी मिथ्या जानते हैं। भोगी को तपस्वी के तपोबल पर विश्वास कब हो सका है?

रूस और पोलैण्ड की आरिज़र सन्धि (Armistice) २५ दिन के लिए हो गई है। जो शर्तें अब तक सुनने में आई हैं उनसे पता लगता है कि रूस को बाधित हो कर यह अपमान सहना पड़ा है। पोलैण्ड ने फ्रांस की खुली और इंगलैण्ड की गुप्त सहायता से यह विजय पा लिया है किन्तु लोभी और स्वार्थी मित्र कब तक पोलैण्ड का साथ देंगे और क्या पोलैण्ड की विजय में अपनी सहायता का हिस्सा न चाहेंगे? देखें घटनाचक्र इस का क्या उत्तर देता है।

(शेष पृष्ठ ४ के दूसरे कालम से)

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शालीराम के लिए छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० मं० १ सू० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो॥"
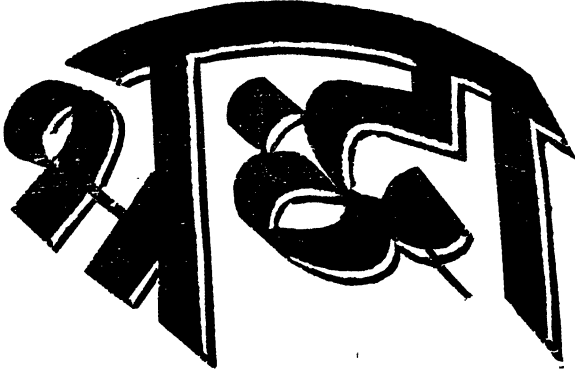
सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | ७ कार्तिक सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० २२ अक्टूबर सन् १९२० ई० | संख्या २७ भाग १

हृदयोद्‌गार

विजय—दशमी

जय--माला

(१)

भक्ति-प्रेम से पगी हर्ष की अश्रुधार से धुली हुई,
कोमल, सुन्दर, सुरभित, नूतन कुसुमावलि से बनी हुई।
तेरे श्यामल कण्ठ देश में पहिराने को कर तय्यार,
अयोल्लास में लाया हूं यह माला—क्या होगी स्वीकार॥

(२)

बहती तेरी देख विमल यह विजय—वैजयन्ती अभिराम,
भरी गर्व से उठती गर्दन होते नयन अचलअविराम।
मरा पाप-सरताज धर्म की चहुंदिशि होती जय जय कार।
उमड़ रहा है सब के हिय में अगम प्रेम का पारावार॥

(३)

आर्य-जाति के नायक! प्यारे! मर्यादा पुरुषोत्तम! राम!
मुझ में साहस कहां—तुम्हारे, आगे आऊं हो उद्दाम।
किन्तु आज इस धर्म--विजय पर अमित दर्प में हो कर चूर,
आया हूं निज सीस उठाकर तेरे सम्मुख बनकर शूर॥

(४)

उन्नत मस्तक कर में लेकर—यह छोटा अभिनव उपहार,
डालूंगा इस श्याम—कण्ठ में रघुपति तेरी कर जय कार।
नव—शोभा को देख एक-टक—फिर दूंगा चरणों में डार,
अपना सिर, गर्वोन्नत का मेरे यों होगा प्रतिकार॥

शान्तिसदन गुरुकुल कांगड़ी } —:०:— { (आनन्द)

श्रद्धा के नियम

१. वार्षिक मूल्य भारत में ३॥), विदेश में ५॥), ६ मास का २)।

२. ग्राहक महाशय पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।

३. मास से कम समय के लिए यदि पता बदलना हो तो अपने डाकखाने से ही प्रबन्ध करना चाहिए।

प्रबन्धकर्त्ता श्रद्धा
डाक० गुरुकुल कांगड़ी (जिला बिजनौर)

ग्राहक ध्यान से पढ़ें

ग्राहक संख्या ४४ और ६२ का ६ मास का चन्दा इस अंक के साथ समाप्त हो गया है। इस लिए प्रार्थना है कि अपने अगले निश्चय से वे हमें शीघ्र सूचित करें।

प्रबन्धकर्त्ता

—:०:—

ब्रह्मचर्य सूक्त की व्याख्या

ब्रह्मचारी ब्रह्म भ्राजद् बिभर्ति तस्मिन्देवा अधि विश्वे समोताः । प्राणापानौ जनयन्नाद् व्यानं वाचं मनो हृदयं ब्रह्म मेधाम् । २४ ॥

"प्रकाशमान् ब्रह्मचारी ब्रह्म (परमात्मा) को धारण करता है। उस से सब देव यथावत ओत प्रोत होते हैं। वह प्राण और अपान को और व्यान को वाणी को, मन को, हृदय को, वेद को और मेधा (धारणवती बुद्धि) को प्रकट करता हुआ प्रसिद्ध होता है।"

ब्रह्म में जिस की गति हो उसी को ब्रह्मचारी कहते हैं। ब्रह्म तेजस्वरूप है; जो स्वयम् तेजस्वी न हो उसकी तेज स्वरूप में गति कैसे हो सकती है। वेद में इसी लिए आदेश है कि तेज स्वरूप परमात्मा से तेज की याचना पहले करो—तेजोऽसि तेजो मयि धेहि—जब तक ब्रह्मचारी के ज्ञान चक्षु खुल नहीं जाते तब तक वह ज्ञान स्वरूप का न ज्ञान प्राप्त करता है न उसकी ओर गमन कर सकता है और नहीं उसको प्राप्त होता है। परन्तु जब ब्रह्म को प्राप्त हो जाता है तब उस ब्रह्म के निर्मित सब देव [वसु× रुद्र×आदित्य×विद्युत×यज्ञ] उस ब्रह्मचारी में ओत प्रोत हो जाते हैं—अर्थात् ब्रह्मचारी उनके यथार्थ स्वरूप को समझने लगता है। उन में से एक एक के तत्त्व को खोल कर रख देता है और उस ज्ञान की सहायता से वह अपने तथा अन्य मनुष्य के जीवन के लिए प्रकाश प्राप्त करता है। लोग ब्रह्मचारी को उसके गुणों से जानते हैं और तब उसके पीछे चलते हैं।

प्राण, अपान और व्यान—प्राणों की गति का ज्ञान सबसे पहले होता है। वह प्राणों को वश करना सीखता है। प्राणों द्वारा अन्दर के विकारों को बाहर कैसे फेंकना, बाहर की शुद्ध प्राण वायु को कैसे लेजाना, सारे अन्दर वायु की समान गति को कैसे स्थिर करना इस सारी क्रिया पर ब्रह्मचारी ही प्रकाश डाल सकता है। और संसार की सारी गति प्राणों की गति पर ही निर्भर है। एक जापानी वीर, शारीरिक व्यायाम प्रारम्भ करने से पहले क्यों दीर्घश्वास प्रश्वास का अभ्यास करता है? इस लिए कि प्राणों की गति ठीक होने से ही व्यायाम द्वारा शरीर कमाया जा सकेगा। एक बोझ उठाने वाला पहलवान चारमन की मुंगरी पर हाथ डालने से पहले प्राणों को क्यों वश में करता है? इस लिए कि वह जानता है, कि मुंगरी को उठाकर स्थित रखने के लिए प्राणों का साधना आवश्यक है। जिन वक्ताओं ने प्राणों को वशी भूत करना नहीं सीखा वे पानी पीते गला और स्वास्थ्य सब कुछ व्याख्यान पर न्यौछावर कर देते हैं। एक प्रबन्धकर्त्ता आई हुई विपत्तियों का सामना नहीं कर सकता यदि प्राण उसके वश में न हों। और आत्मा को परमात्मा में जोड़ने का साहस भी प्राणों को वश में करके हो सकता है। इसी लिए उपनिषत् कार ऋषि ने कहा है—प्राणस्येदं वशे सर्वं त्रिदिवे यत्प्रतिष्ठितम् । मातेव पुत्रान् रक्षस्व श्रीश्च प्रज्ञां च विधेहि—"तीनों लोकों में जो कुछ अवस्थित है वह सब प्राण के वश में ही है। [हे प्राण?] पुत्रों की माता जैसे रक्षा करती है वैसे तुम हमारी रक्षा करो, हमारे लिए शोभा और ज्ञान की वृद्धि करो।"

जब प्राण वश में हुए तभी वाणी वश में होती है और इसलोक और परलोक दोनों—की सिद्धि के लिए वाणी का वशीभूत होना बड़ा भारी साधन है। यजुर्वेद में वाणी की महिमा इस प्रकार बतलाई गई है—साविश्वायु, साविश्वधाया, साविश्वकर्मा—वाणी ने जहां मनुष्य को चक्रवर्ती राज्य दिलाया वहां वाणी के दुरुपयोग ने बादशाहतों के तख्ते पलट दिए। उस वाणी को ब्रह्मचारी ही कल्याण कारिणी बना सकता है। तब मन वश में आता है। जिसने वाणी के दुरुपयोग से शत्रुओं की संख्या बढ़ाली हो वह शान्त चित्त हो कर नहीं बैठ सकता। जिस मन को संसार का विजेता बतलाया है—मन के हारे हार है मन के जीते जीत परमातम को पाइए मन ही की परतीत—ऐसे बली मन को क्रमशः साधनों के पीछे ब्रह्मचारी ही काबू कर सकता है। तब हृदय की विशालता का प्रादुर्भाव होता है। संकुचित हृदय संसार यात्रा में पग पग पर ठोकरें खाता है—और जिसका मन चंचल विविध नाच नचाता है। वह हृदय को महान् कैसे बनायगा। ओ३म् महः पुनातु हृदये—हे परमेश्वर? अपनी महानता से हमारे हृदयों को पवित्र करो। यह शिष्य की प्रार्थना कैसी महत्व पूर्ण है। जब तक हृदय उदार नहीं तब तक उस महान् परमेश्वर की महिमा को समझना कैसे हो सकेगा? उसके विस्तृत जगत का मर्म बतलाने वाले वेद अपने भेद को उसके लिए कैसे प्रकट कर सकेंगे?

बाल ब्रह्मचारी वेद के भेद को खोलकर सर्वसाधारण के सामने रख सकते हैं। वह वेद नहीं जो लेखनी और मसी पत्रों में बन्धी हुई है प्रत्युत वह वेद जो देश और काल की सीमा से परे है। व्याकुल संसार ने जब तक ब्रह्मचारी के दर्शनार्थ हृदय से प्रार्थना की तब तब बाल-ब्रह्मचारी ने दर्शन दिए। अब फिर प्रजा व्याकुल होकर बालब्रह्मचारी की बाट जोह रही है। दयामय प्रभो यदि आप के प्रकाश से तेज धारण करने में कोई ब्रह्मचारी निमग्न है तो उसे शीघ्र तेज प्रदान करो जिस से वह संसार से सन्देह और अविद्या के बादलों को छिन्न भिन्न कर के उड़ादे। शमित्योइम्।

श्रद्धानन्द संन्यासी

—:०:—

आवश्यक सूचना

जिन दो हिन्दी के अध्यापकों के लिए विज्ञापन दिया था अब वे स्थान रिक्त नहीं हैं। अब कोई महाशय प्रार्थना पत्र न भेजें।

श्रद्धानन्द

प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

—:०:—

श्रद्धा

विजयादशमी

क्या तुम मर्यादा पुरुषोत्तम रामके वंशज हो?

कैकई ने राजा दशरथ से अपने दो वर मांग लिए—भरत के लिए अयोध्या का राज्य और राम के लिए चौदह वर्ष का 'वनवास' रात को राम पिता की आज्ञा-प. राज्याभिषेक की तय्यारी करके सो गए। प्रातः उठतेही सुमन्त कैकई के गृह में उन्हें लिवा ले गए। दशरथ भूमि पर बेसुध पड़े हैं। हा राम! हा राम! कह कर कैकई के पैर पकड़ने चले—

नजीविते मेऽस्तिकृतः पुनः सुखं विना त्मजेनात्म वतां कुतोरतिः।
ममाहितं देवि न कर्तुमर्हसि स्पृशामि पादाव-पि-ते प्रसीद मे ॥

राजा पुत्र के वियोग के भय से व्याकुल स्त्री के पैर छूने नीचे हुए और उस अविश्वासग्रस्त दुष्टाने पैर खींच लिया। पैर न मिलने पर, हा राम! कह भूमि पर गिर पड़े। राम बाहर से बुलाते, हिलते हैं, पर वहां तो राम अन्दर विराजमान हैं, राजा बोले कैसे? माता से पूछते हैं—"हे माता! पिता अप्रसन्न क्यों हैं?" उत्तर मिलता है कि तुम्हारे भय से नहीं बोलते मेरा भय क्यों! मैं तो पिता की आज्ञा से आग में कूदपड़ूं। हर्ष से विष ग्रहण करलूं, समुद्र में कूद पड़ूं, हे देवि! मुझे स्पष्ट बतला **रामो-द्विर्नाभिभाषते**—राम दो बात नहीं कहता। विमाता सब कहानी सुना देती है उसका राम पर क्या प्रभाव पड़ता है? कविवर वाल्मीकि लिखते हैं—

"नवनं गन्तु कामस्य त्यजतश्च वसुंधराम्।
सर्वलोकाति गस्येव लक्ष्यते चित्तविक्रिया ॥

"राज त्याग कर वन को जाते हुए राम के मन में वसुन्धरा छोड़ने का कोई विकार उत्पन्न नहीं हुआ; जैसे संसार को छोड़ते हुए वीतराग पुरुष के चित्त में कोई विकार उत्पन्न नहीं होता।"

राम चल दिए, देवी सीता भी साथ हो लेती हैं। जब पति चलदे तो धर्म पत्नी, पीछे कैसे रह सकती है? उसने तो सप्तपदी में यह प्रतिज्ञा की थी कि पति के साथ छायावत् रहूंगी। राम वन के भय दिखाते हैं, सास ससुर की सेवा का याद दिलाते हैं। परन्तु वहां से उत्तर मिलता है—"दोनों लोक में नारी की गति एक पति है—न पिता न भ्राता न माता और न सखीजन। यदि तुम अभी भयङ्कर वन के लिए प्रस्थान करोगे तो मैं तुम्हारे आगे घास और कांटों को हटाती हुई चलूंगी। यदि तुम्हारे बिना स्वर्ग भी निवास को मिलेगा तो भी उसमें मेरी रुची न होगी। तुम अपने पिता का वचन पालन करने चले हो—मेरे पिता की आज्ञा यह थी कि छायावत् तुम्हारे साथ लगी रहूं फिर अपने पिता की आज्ञा का उल्लंघन में कैसे करूं।"

राम क्या उत्तर दे सकते थे, सीता को साथ ले लिया। विचित्र पति पत्नी के पवित्र सम्बन्ध का दृश्य है। फिर भाई का प्रेम लक्ष्मण भागे आते हैं और साथ चलने को तय्यार हैं। भाई के नाते से नहीं, सेवक के नाते से लक्ष्मण राम के समझाने पर उत्तर देते हैं—

> गुरु पितु मातु न जानउं काहू।
> कहउं सुभाउ नाथ पति आहू ॥
> जहंलग जगत सनेह सगाई।
> प्रीति प्रतीति निगम निजुगाई ॥
> मोरे सबइ एक तुम स्वामी।
> दीन बंधु उर अन्तर जामी ॥

राम निरुत्तर हो गए—"जाओ माता से पूछ आओ, आज्ञा दें तो साथ चलो। माता सुमित्रा क्या आज्ञा देती है?—"रामं दशरथं विद्धि मां विद्धि जनकात्मजा। अयोध्या मटवीं विद्धि गच्छ तात यथा सुखम्।"

ये तीनों तो वन को चल दिए। राम से बिछुड़ कर राजा प्राण कैसे रखते। 'बिना राम के मेरा जीवन नहीं' यह दिखलाने की बात न थी। उधर सुमन्त्र खाली रथ लेकर लौट आया और इधर महाराजने प्राण त्याग दिए। भरत और शत्रुघ्न ननसाल में थे। दूत उन्हें वहां से अयोध्या लाता। अनायास सारा राजपाठ मुट्ठी में आता है। अपना उसमें कुछ दोष नहीं परन्तु भरत उसे ठोकर मार कर अलग करदेते है सारे अवध को साथ लेकर और राज्याभिषेक का सामान इकट्ठा कर के राम के पीछे चल देते हैं। माताएं, गुरुजन, नगर निवासी सभी वन को अयोध्या बना देते हैं। जनक भी सेना सहित आ पहुंचे हैं। दिनों तक विचार रहता है, परन्तु कोई प्रलोभन भी राम को हिला नहीं सकता। राम अटल स्थित हैं। अयोध्या निवासियों की आशा यह था कि वे राम को लौटा ले चलें, परन्तु जब राम दृढ़ रहे तो उन की मानसिक दशा क्या थी। आदि कवि वाल्मीकि कहते हैं—

"तदद्भुतं स्थैर्यमवेक्ष्य राघवे समंजनो हर्षमवाप दुःखितः।
नयात्ययोध्यामिति दुःखितोऽभवत् स्थिर प्रतिज्ञत्वमवेक्ष्य हर्षितः"

राम की दृढ़ता देख कर सब को हर्ष और शोक हुआ। शोक इस लिए कि राम अयोध्या नहीं लौटते और हर्ष इस लिए कि वह अपनी प्रतिज्ञा में स्थिर है।

राम की इस अपूर्व कहानी और राघवमण्डल के इस विचित्र चरित्र ने, गिरे से गिरे हुए समय में, भारतीयों के चरित्र संगठन में सहायता दी है। क्या इस समय उस से बढ़ कर कोई सहारा भारत निवासियों को मिल सकता है? हम सब राम की ही सन्तान तो हैं। भारत वर्ष की ७ करोड़ मुसलमान प्रजा में से कितने हैं जो भारत विभिन्न देशों से आकर बसे हैं। और फिर क्या वे भी उन्हीं आर्यों की औलाद नहीं जिनने ईरान (आर्यदेश) और अरब को जा बसाया था। जिनने भाई हैं जो बाहर से आकर बसे हैं? और उन में से भी कौन युरोपियन है जो जो आर्यवंशज होने से इनकार कर सकता है! सीता, राम, लक्ष्मण और भरत इन सब के ही तो पूर्वज थे। इस राघवेन्द्र की जीवनी से उपदेश लेने का इन सबका ही अधिकार है।

स्वदेश की [illegible] विचित्र दशा है। अन्दर और [illegible] से आक्रमण हो रहे हैं। [illegible] व्यापारियों को [illegible] प्रकार की [illegible] जंजीरों में [illegible] के लिए तय्यार हैं। वे जानते हैं कि यदि [illegible] सावधान [illegible] उनके [illegible] यह 'काम धेनु' [illegible] और भय [illegible] भाइयों को भय भीत कर रहे हैं। वे समझ रहे हैं कि यदि ब्रिटिश नौकरशाही का विजय हुआ तो उनको हड्डियां चूसने को [illegible] और यदि अन्य को भारत का आर्थिक विजय हुआ तब भी धर्मात्मा विजयी उनको भाई समझ कर हिस्सेदार बना ही लेंगे।

ऐसे नाजुक समय में यदि मातृभूमि के सपूत, जिन्होंने माता को [illegible] कराने का बीड़ा उठाया है, दृढ़ प्रतिज्ञ रहें और कैद, हवाई जहाज और [illegible] से न डरें तो जहां नौकर [illegible] काट कर भी हार माननी पड़ेगी [illegible] खुशामदी भाइयों के हौसले भी बढ़जायेंगे और वे भी भारत माता के सपूत सिद्ध होजायेंगे। हे राम! जो सहस्रों वर्षों से इस पवित्र भूमि के एक एक रोम रोम में रम रहे हो फिर से इस जाति के अन्दर जीवन डालदो जिस से डावां डोल हृदय स्थिर होजाय और आर्यवर्त्त वही पुरानी पवित्र भूमि बन जाय जिसके सपुत्रों के चरणों पर बैठ कर सारे भूमण्डल के लोग चरित्र संगठन की शिक्षा लिया करते थे।

श्रद्धानन्द सन्यासी

—:०:—

राष्ट्रीय-गानका पुरस्कार और

हमारा—वक्तव्य

[ले० श्रीयुत आनन्द]

कुछ सालों से वेनी माधव खन्ना (बुद्धा देवी कानपुर के) कविताओं में पुरस्कार रखते हैं। इस साल उन्हों ने 'राष्ट्रीय-गान' के लिये अपनी थैली का मुंह खोला था इस में सन्देह नहीं कि यह विषय ऐसा न था कि जिस के लिये पुरस्कार रक्खा जाता-यह विषय हृदय से अधिक सम्बद्ध है—पुरस्कार रखने से हृदय के मर्म खुल कर बाहर नहीं आपड़ते वह तो कवि के हृदय के भाव सागर में ज्वार भाटा आने पर कभी कभी बाहिर निकल पड़ते हैं। आप से आप बन जाने पर इनाम दे दिया जाता तो बहुत उत्तम होता। इनाम—रक्खा गया, समय भी पर्याप्त दिया गया बहुत सी कवितायें भी आगईं और निर्णय भी होगया किंतु अब उन के सम्मुख आने पर कविता के राष्ट्रीय होने के कारण बहुतों की मन कामनां सेतुष्टित ही नहीं हुई। आक्षेप हुये किसी ने उन में भाषा की अशुद्धि निकाली—किसी ने यह कहा किये गीत शाक भाजी बेचने वाले कूंजड़ों के से गानो के छन्द में हैं इस में सन्देह नहीं कि राष्ट्रीय गानें की जैसी आशा थी वैसे वे न थे।

हम भी बड़ी आशा में थे, हमने भी सुना था कि 'वन्दे मातरम्' की टक्कर के हिन्दी गीत बन रहे हैं। किन्तु ज्यों ही वह अखबारों में छपे हमारी आशा पर पानी फिर गया। हमारी समझ में राष्ट्रीय गानो में जो विशेषतायें होनी चाहिये थी उनमें से एक भी उन में न थी। न मातृभूमि की मनो मोहनी मूर्ति के भव्य चित्र को शब्दों में खींचा गया था न भक्ति पूर्ण हृदय को झुमाने वाले ऊंचे भाव थे न उत्तम छन्द था—न भाषा माधुरी थी। या क्या वे ही सब कवियों के रगड़े हुये भाव "तू हमारा देश है—हम तुझ पर मरजावेंगे कट जावेंगे" और क्या मातृ भूमि जननी 'यार' तक के रूप में कही गयी थी। खन्ना जी ने वन्दे मातरम् के गीत में यह कहा था कि इस में संस्कृत बाहुल्य है तो सब कवि एक दम उर्दू की ओर मुंह उठाकर टपक पड़े। ठीक है या इस किनारे या उस बीच में भला किश्ती काहे को टिकाई जाय।

जो कवितायें सबसे अच्छी समझी गई हैं पहिले हम उन्हीं के विषय में कुछ कहेंगे।

वीर कवि की कविता का टेक है "है यह हिन्दुस्तान हमारा"-पहिले ही भारी शब्द "है" रक्खा गया है। जो कि गाते समय कानों को काटता है—फिर राष्ट्रीय गान में कम से कम 'हिन्दुस्तान' शब्द हमें भला नहीं मालूम होता। कहां भारतीयों की यह आदत कि मातृभूमि को जननी तुल्य स्तुति करना और कहां एक दम "है यह हिंदुस्तान हमारा" क्या हमारे कवि महोदय भारतवर्ष से हिन्दुस्तान नाम को बहुत अच्छा समझते हैं। और या वे इसे संस्कृत का नाम समझते हैं। सारी कविता में भक्ति बिचारी तो कहीं फटकने नहीं पाई है।

भारत की टेक के बाद एक दम तीन पंक्तियों में भारत की अन्तिम सीमा को कहते हुए कवि ने बड़े जोर से लिखा है सारा हां सारा का सारा" शायद राष्ट्रीय गान बनाते हुए एक दम उन के दिल में आशंका हुई कि कोई कहदे कि नहीं तो? अतः उन्होने एक बार 'सारा' कहके ओर से फिर कहा 'हां सारा का सारा'। इस प्रकार उन्होने सब हिंदुस्तान को अपना कह कर फिर इसके मगल रूप-वर्णन करने का उप क्रम बांधा। बार बार—

'प्यारी, प्यारी कहदेने से देश की भव्य मूरति सन्मुख नहीं आती। जिस देश के अन्दर एक मात्र ६ ऋतुओ का पूर्ण विकास है जिसकी अद्वितीय शोभा और विलायती देशों की तरह मई मास में ही नहीं किंतु सभी ऋतुओं में होती है उस देश का एक मात्र नदियों और पहाड़ों के सामने प्यारी, प्यारे लगादेने से भव्य-रूप नहीं चित्रित होता। जो देश कृषि प्रधान है जिसके मैदानों में हरे—धान हमेशा लहलहाते हैं—जिसके बागों की शोभा उषा काल में, सूर्योदय होने पर, तथा चन्द्रोदय होने पर और की और होजाती है उसका भव्य रूप एक मात्र प्यारी, प्यारे कह देने से नहीं होजाता-वहां तो ऐसे ही शब्द शोभा देते हैं—

"सुजलां सुफलां मलयजशीतलां सस्य
श्यामलां मातरम्
शुभ्र ज्योत्स्नां पुलकित यामिनीं
फुल्ल कुसुमित द्रुम दल शोभिनीम्
सुहासिनीम्

आगे कविवर देश पर कुर्बान होने को तय्यार हुये हैं—यद्यपि यहां पंक्तियां अच्छी हैं-किन्तु फिर भी अगर कविवर 'अपमान होने पर, ऐसा भाव डाल देते तो पंक्तियें अत्युत्तम होजाती—हम यह कहसकते हैं इन पक्तियों से उतना हृदय में वीररस का सञ्चार नहीं होता जितना कि वंकिम के "त्रिंशकोटिकण्ठ—

या—

होती जंह मानहानि, १
उठते एक साथ पाणि
देते बलिदान जान तुच्छ प्राण सारे॥

आगे कवि नें सब जातियों से देश निवासियों के सब भारतीय धर्मों से हिन्दुस्तान को अपनाया है तथा उसकी जय जयकार कराई है।

कहां "वन्देमातरम्" का गीत और कहां यह राष्ट्रीय गान। वन्देमातरम् के भक्ति भरे भाव

"तुमि विद्या, तुमि धर्म
तुमि हृदि तुमि मर्म"
\+ + +
त्वं हि प्राणा शरीरे
तोमारई प्रतिमा गड़ि मन्दिरे २
मन्दिरे इत्यादि

कहीं भी गान में झलकने तक नहीं पाये हैं।

आगे श्रीधर पाठक जी की कविता की समालोचना 'प्रताप' में काफी और समुचित निकल चुकी है अतः हम उसे दुहराया नहीं चाहते—

मालूम होता है इस बार नामों का प्रभाव बहुत हुआ है। शेष-कवितायें इनाम-तो क्या किसी भी काम की नहीं है। हम समझते हैं कि शायद हमने यह लिख कर बड़ा भारी दुस्साहस किया है। किन्तु हमें जैसा लगा है हमने वैसा लिखा है यदि यह किसी को बुरा लगे तो हम उनसे विनय पूर्वक क्षमा प्रार्थी हैं।

---

१. यह जर्मन देशीय 'राष्ट्रीय गान के एक टप्पे का अनुवाद है जो कि सरस्वती में छपा था।

गुरुकुल-समाचार

चहल पहल

गुरुकुल भूमि से बेरौनकी के दिन विदा होगये हैं, और अब चारो ओर चहल पहल दिखाई देती है। प्रति दिन सुनसान पड़े हुए मार्ग राहियों से आरहे हैं। अगस्त के अन्त में जैसे निकास जारी था, वैसे ही अब आगम जारी है। उन दिनों यही प्रश्न रोज होता था 'आज कौन गया?' आज कल यही प्रश्न हर जिह्वा पर है कि 'आज कौन आया?' श्री आचार्य जी ने अपनी मण्डली सहित सितम्बर के अन्त में कलकत्ते से लौट कर गुरुकुल की सूनी कुटियाओं को सनाथित किया फिर ब्रह्मचारी यात्रा से लौट ने लगे। महाविद्यालय के ब्रह्मचारी पर्वत यात्रा से लौट आये यद्यपि उनका लौट आना नैपोलियन के मास्को से लौट आने के समान था-पर तो भी वह सूनी गुरुकुल भूमि में जीवन संचार के हेतु हुए। उनके पीछे विद्यालय की सप्तम वह अष्टम और नवम दशम श्रेणियां यात्रा समाप्त कर के लौट आई। इधर अध्यापकों और उपाध्यायों का रंगस्थली में फिर प्रवेश आरम्भ हुआ है। उपाध्यायगण लौट कर आ रहे हैं-और उनके आने से अब प्रतीत होने लगा है कि गुरुकुल की मशीन के पुर्जे पूरे होगये हैं, बस अब सिर्फ इशारे की आवश्यकता है कि कल पूरे जोर से चलने लगे।

धन्यवाद

ब्रह्मचारी लोग यात्रा पर जिन २ स्थानों में भ्रमणार्थ गये, उन २ स्थानों के आर्य सज्जनों ने जिस प्रेम और निजूपन से उन की सहायता की है, उस के लिये गुरुकुल की ओर से उन का जितना धन्यवाद दिया जाय कम है। विशेषतया बरेली नैनीताल अल्मोड़ा दिल्ली आगरा भरतपुर और मथुरा के आर्य पुरुष धन्यवाद के पात्र हैं। इन्द्रप्रस्थ वृन्दावन और कुरुक्षेत्र के गुरुकुलों में ब्रह्मचारियों को जो सुख मिला वह तो वैसा ही सुख था जैसा घर वालों को अपने घर में साधिकार सुख मिलता है। उस के लिये न कोई धन्यवाद लेता है और न देता है। उन सब महानुभावों के नाम लिखने कठिन हैं जिन्हों ने यात्राओं में ब्रह्मचारियों की सहायता की, क्योंकि उनकी संख्या बहुत अधिक है। आशा है। इस सामान्य धन्यवाद को वह सज्जन स्वीकार करेंगे।

तय्यारी और परिवर्तन

उपाध्यायों, और ब्रह्मचारियों के आजाने पर नियम पूर्वक पढ़ाई प्रारम्भ होने की तय्यारी जारी हो गई है। विद्यालय और महाविद्यालय के समय-विभाग तयार होगए हैं। इस सत्र के आरम्भ में दो एक परिवर्तन हुए हैं, जो आवश्यक थे प्रो० बालकृष्ण के बिलायत जाने पर अर्थशास्त्र और इतिहास की पढ़ाई का सन्तोष जनक प्रबन्ध नहीं रहा था अब प्रो० शिवराम अय्यर एम.ए. के आजाने से वह कमी पूरी हो गई है। पिछले सत्र भर आचार्य जी पर अन्य बहुत से बोझों के सिवा आर्य सिद्धान्त की पढ़ाई का भी बोझ रहा इस सत्र से आर्य सिद्धान्त की पढ़ाई का कार्य पं० इन्द्र के सुपुर्द किया गया है। विद्यालय में अंग्रेजी ८ वीं ७वीं को अंग्रेजी पढ़ाने का काम जो मास्टर करते थे, उन्हें ने जाना उचित समझा इस लिए गुरुकुल के पुराने श्रद्धालु प्रेमी पं० रामचन्द्र जी फिर आ गये हैं। आप उसी पुरानी गुरुकुल सृष्टि के प्रतिनिधि हैं, जिन्हों ने गुरुकुल को इस फलती फूलती दशा तक पहुंचाने का कार्य किया है।

विजय दशमी

इधर सत्र का मंगलाचरण विजय दशमी की धूमधाम के साथ हुआ है। १९ अक्टूबर से दसहरे की खेलें शुरू हो गई हैं। वही क्रीड़ा क्षेत्र--वही शामियाना--और थोड़े से परिवर्तन के साथ वही खिलाड़ी। सब कुछ पुराना होते हुए भी इस साल विजय दशमी की खेलों में नया जोश, और नया उत्साह दिखाई देता है। ऐसा ज्ञात होता है कि यह उत्सव कई सालों के बाद इसी साल फिर से किया गया है। इस की तह में केवल मनुष्य की कल्पना शक्ति ही काम करती है या यथार्थ में इस वर्ष उत्सव का जोश ही विशेष है--यह कहना कठिन है। विजय दशमी का पूरा वृत्तान्त अगले सप्ताह दिया जायगा--इस बार इतनाही बतादेना पर्याप्त है कि पुराणे विजय की याद में या नये विजय मनवाणी कर्म द्वारा स्वागत में गुरुकुल वासी किसी से भी पीछे नहीं हैं।

लहरों का असर

भारत वर्ष में इस समय जीवन का समुद्र वेग से उमड़ रहा है। नये और पवित्र जीवन की लहरें इधर आकाश से बातें कर रही हैं तो उधर किनारों पर अवश्य टक्करें लगा रही हैं। गुरुकुल में उनका क्या असर है? कुछ भी नहीं और बहुत अधिक है। कुछ भी नहीं इस लिए कि गुरुकुल के लिए उस में कुछ नया नहीं, उसके लिए इस तूफान से कोई खतरा है। गुरुकुल जिन आदर्शों को लेकर बनाया है, यह तूफान उन आदर्शों के समीप पहुंचने का यत्न है। गुरुकुल इस तूफान से हिलता नहीं उस में किसी प्रकार की चंचलता की सम्भावना है। वह इस जीवन रूपी आंधी को देखता है और मुस्कराता है "क्योंकि जिन सचाइयों का गुरुकुल प्रतिनिधि है, उनका विजय उसे राष्ट्रीय जागृति में दिखाई देता है। इस अंश में गुरुकुल पर इन जीवन की लहरों का कोई असर नहीं जो अलीगढ़ अमृतसर या लाहौर के शाही कालिजों की दीवारों से टकरा कर सिंहनाद कर रही हैं, परन्तु दूसरी ओर यह सब लहरें गुरुकुल वासियों से बहुत, गहरा सम्बन्ध रखती हैं। यह लहरें गुरुकुल के उपाध्यायों और ब्रह्मचारियों की पुकार २ कह रही हैं कि 'संसार तुम्हारे यत्न की ईमानदारी को तुम्हारे आदर्शों के महत्व को समझ रहा है।" अब समय है। कि तुम सिद्ध करो कि तुम उन यत्नों और आदर्शों के योग्य हो" समय का सन्देश यह कि गुरुकुल वासी उपाध्याय अध्यापक अधिष्ठाता और ब्रह्मचारी अपने २ कर्तव्य का पहले से भी अधिक पाल न करें और निराशा को तिलांजलि देदें।

श्रीस्वामी जी ब्रह्म देश को

गुरुकुल के आचार्य जी इतने दिनों आराम करके ब्रह्मदेश को चल दिए जब यह पत्र पाठकों को मिलेगा तब श्री स्वामी जी बर्मा के लिए रवाना होचुके होंगे। आपका वहां महीना भर रहने का विचार है। जाने का उद्देश्य वैदिक धर्म का प्रचार है। बर्मा वासियों का बहुत वर्षों से आग्रह चला आता था अब समय अनुकूल देख कर और गुरुकुल के आन्तरिक प्रबन्ध से निवृत्त होकर श्री स्वामी जी ने जाने का निश्चय किया है। मांडले रंगून में आपके स्वागत के लिए स्वागतकारिणी सभायें बन चुकी हैं।

इन्द्र

विचार तरंग

(श्रद्धा के लिये विशेषतयालिखित)

उद्बोधन

१

उठो, राजपुत्र ! वन्दिगण तुम्हें मंगल गीतों से जगा रहे हैं। स्वप्न छोड़ जाग्रत में आओ और अपनी राजपुत्रता अनुभव करो। इस विशाल साम्राज्य के स्वत्वधारी राजपुत्र ! उठो, बन्दी गण खड़े तुम्हारे स्तुति गीत गा रहे हैं।

सेना नायक ! क्यों नैराश्य ग्रस्त पड़े हुये हो ? । यह देखो सब शिथिल बिखरी पड़ी हुई दिव्यशस्त्रों वाली अनन्त सेना तुम्हारी ही है। उठो और खड़े हो कर एक बार अपना रणशंख बजादो (सुनादो) कि ये दिग्विजयी सेनायें सन्नद्ध होकर भुवनों को कंपाती हुई और आकाश पाताल को एक करती हुई तुम्हारी आज्ञा में खड़ी होजांय। देवाधिराज ! उठो, जागो, दृष्टि उठा कर देखो कि ये सब तेंतीस करोड़ देव तुम्हारे चारों तरफ हाथ बांधे खड़े हैं। इन्हें अपने आदेश सुना सुना कर अनुगृहीत करो- कृतार्थ करने की कृपा करो।

हे पुरुष ! उठो देखो चारों तरफ दिखाई देने वाली प्रकृति यह विश्वरूपा ओर अनन्ता प्रकृति-तुम्हारे ही लिये अनादिकाल से प्रवृत्त हो रही है। इसे अपना कुछ भी नहीं सिद्ध करना है, यह जो भी कुछ है सो सर्वथा तुम्हारे ही लिये है। पुरुष ! उठो इसे जानो और अपना पुरुषार्थ लाभ करो।

२

हे शरीरी ! तू तो पवित्र आत्मा है। उठ, इस पाप कीचड़ से ऊपर उठ। तू निर्लेप है तेरे पास पाप का क्या काम, पाप तुझे स्पर्श भी नहीं कर सकता। उठ, विशुद्ध आत्मा ! ऊपर उठ।

हे मनुष्य ! तू यहां विषय भोगों में कहां अंधा पड़ा है। तू दिव्य अपवर्ग का अधिकारी, वैराग्य के पवित्र मार्ग द्वारा ब्रह्मानन्द को पहुंचाने के अधिकारी ! तू क्या इस दशा में पड़ने के लायक है। उठ, तू मनुष्य है-पशुओं की असंख्यों भोग योनिओं से ऊपर उठ कर इस मननशील योनि को प्राप्त हुआ है।

३

ऐ मौत के मारे हुवे ! ज़रा आंख खोल कर देख कि यहां मौत कहां है। तू अमृतपुत्र, जगत् की वरिष्ठ सत्ता, तू अनादि काल से कब मरा है या मर सकता है। ऐ दुःख क्लेशों के आठों पहर सताये हुवे ! अब उठ कर खड़ा होओ और आंख उठाकर चारोंतरफ खुल कर देख कि जो दुःख दिखाई दे रहे थे वे अब क्या हैं। अरे, यह तो भगवान का जगत है जो कि 'आनन्द से उत्पन्न होता है आनन्द में स्थित है और आनन्द में ही लीन होता है'। यहां दुःख का कहां स्थान है ? ।

ऐ घोर अन्धकार से पीड़ित जिसे कि इस भयंकर तिमिर में कुछ भी सुझाई नहीं देता ! ज़रा उठ कर एक बार अपने बन्द किवाड़ों को खोल और फिर देख सारा ब्रह्माण्ड स्वयंज्योति सूर्य की भसमान किरणों से चकाचौंध हो रहा है कि नहीं।

ऐ असंख्यों चिन्ताओं के भार से व्याकुल ! तुझे यह भार लादने को किसने कहा है। उठ; उस अपने सर्व रक्षक सर्व चिन्तक के सर्वधारक कन्धों पर इन्हें परमश्रद्धा से अर्पित कर निश्चिन्त क्यों नहींहोजाता। अरे मूर्ख ! जिस की सर्वंगक्षिमनी माता हर समय पास जाग रही है उसे कैसी फिकर, किस की चिन्ता। क्यों नहीं, उस की गोद में बेफिकरी में मस्ताना हो कर लोटता फिरता ?

४

यहां पुरुष ! तुम यहां साधारण पुरुषों की भांती कहां घूम रहे हो। सब दुःखित पाप मग्न संसार तुम्हारे चरणार्पण की प्रतीक्षा कर रहा है। तुम जानते नहीं कि तुम्हें क्या बनाना है-अपनी भावी ऐतिहासिक महत्ता का तुम्हें कुछ ज्ञान नहीं। कर्मवीर ! उठो, तुम्हारे लिये संसार का कार्यक्षेत्र खुला पड़ा है। तुम जिस छोटे से भी काम को हाथ में लोगे तुम्हारे स्पर्श से वही महत्वपूर्ण बन जायगा। तुम दीनों के उद्धार (धर्मसंस्थापन) के लिये आये हो। तुम में महान् शक्ति गर्भित है, किन्तु पवनसुत को मालूम नहीं कि वह इस पारावार को लांघ सकता है। उठो, लोक तुम्हारी घोर आवश्यकता अनुभव कर रहा है। अंधकार ग्रस्त जगत तुम से प्रकाश पाने के लिये व्याकुल हो रहा है, सूर्य ! उदित होओ-अपनी तमोभेदक किरणों का विकास करो। उठो, तुम से लोक का भारी कल्याण होने वाला है।

यह कौन जंगल में लात पर लात धरे मस्त सोया पड़ा है। अरे तेरे तो सब लक्षण चक्रवर्ती के से हैं। उठ, तू यहां कहां !, तू तो देशों पर शासन करने के लिये पैदा हुवा है। प्रसुप्त पंचानन ! उठो, देखो कि चारों दिशायें तुम्हारे प्रताप से व्याप्त हो रही हैं। सब जंगल के अधिपति ! अपनी तेजस्वी विशाल आंखों को खोलो। उठो।

महाराज ! जागो, बन्दीगण खड़े तुम्हारे स्तुति गीत गारहे हैं ॥

शर्मन्

—:०:—

वी. पी. मंगाने वाले सज्जनों से प्रार्थना

गत १ सितम्बर से डाक विभाग ने विना रजिस्ट्री किए वी. पी. लेना बन्द कर दिया है। रजिस्ट्री करके वी. पी. भेजने से मंगाने वालों को प्रति वी. पी. ≈) अधिक देने पड़ेंगे। इसके अतिरिक्त, वी. पी. का रुपया देर से मिलने के कारण हमें पत्र भी देर से जारी करना पड़ता है। इस लिए ग्राहकों से प्रार्थना है कि अच्छा हो, वे यदि मनीआर्डर द्वारा ही धन भेज दिया करें। इससे ग्राहकों के जहां ≈) बच जावेंगे वहां उन्हें पत्र भी शीघ्र मिल सकेगा।

प्रबन्धकर्त्ता
'श्रद्धा'

हमारी मद्रास की चिट्ठी

मद्रास में वैदिक धर्म प्रचार की नींव

एमा० देवेश्वर सि० आ० द्वारा लिखित

दक्षिण भारत के जिस शहर में मुझे प्रथम आकर काम करना पड़ा है, इस में कम से कम ७०, ८० वकील काम कर रहे हैं। यह वकील अधिक कर के ब्राह्मण जाति के लोग हैं, जिन का दावा है कि परमेश्वर का सारा आध्यात्मिक ज्ञान का दान उन्हीं के लिए है-वही उस को प्राप्त करने के अधिकारी हैं अन्य नहीं। भारतीय दक्षिण जन सीमा का यह भारी शहर जिस का मैं आप के सामने वर्णन कर रहा हुं 'मदुरा" नाम से प्रसिद्ध है। साउथ इन्डियन रेलवे का यह एक प्रसिद्ध जंकशन् स्टेशन है। यह मदुरा अपने पौराणिक काल में बने हुए हज़ार स्तम्भों के दिव्य महान् मन्दिर के लिए प्रसिद्ध है। यह वही मदुरा शहर है जिस के मन्दिरों के दर्शन के लिए दूर २ से भारतीय शिल्प शास्त्र के प्रेमी आते हैं। और इस को प्राचीन भारत की कारीगरी के लिए प्रमाण रूप से उपस्थित करते हैं। यह वही मदुरा शहर है जिस में हिन्दुओं के प्राचीन महाराजा त्रिमलनायकर का चकित करने वाला महल लग भग १ मील वर्ग क्षेत्र के घेरे में बना हुआ था-जिस की सुन्दरता, विशालता, और दृढ़ता की साक्षी उस का एक एक अंश अब भी सारे संसार को दे रहा है—जिस में आज कल चीफ़-कोर्ट, सेशनजज़ कोर्ट और अन्य ज़िले के कोर्ट लगते हैं। इस मदुरा शहर को देख कर यह निश्चय होने लगता है कि सारे भारत में मूर्तिपूजा इसी शहर से फैली है। इस में संदेह नहीं कि दक्षिण भारत के सम्पूर्ण मंदिर इसी मंदिर की नकल में बनाए गए प्रतीत होते हैं। न केवल उन की बाहर की रचना ही इस बात को सिद्ध करती है, किन्तु पत्थर की मूर्तियां उन की आकृति और चित्रकारी भी इस बात की साक्षि देती है। एक दर्शक साम्प्रदायिक हिन्दुओं के भेदों को पंजाब और संयुक्त प्रान्त में साधारण तथा पता नहीं लगा सकता परन्तु यहां यह बात नहीं है; यहाँ शैव शाक्त माध्व, रामानुज और शंकर के अनुयाईयों में एक विदेशी यात्री भी भेद मालूम कर सक्ता है। यह भेद बाहर के रीतिरिवाज, चिन्ह और त्योहारों में स्पष्ट मालूम होता है।

एक आदमी की पुजा का ढङ्ग दूसरे से नहीं मिलता। एक के माथे की रेखायें और चित्रकारी एक दूसरे से निराली है। एक का नमस्कार का ढंग दूसरे से भिन्न है। एक "राम राम" दूसरा "नमो नारायण" पुकारता है। यही कारण है कि धर्म गुरु ब्राह्मण अपने जीवन से औरों में श्रद्धा और पुजा का भाव उत्पन्न करने के स्थान में द्वेष पैदा कर रहे हैं। ब्राह्मण और अब्राह्मणों का झगड़ा इसी का परीणाम है। यह तो पाठक गण दक्षिण भारत के लोगों के दुर्गुण हुए हम पर अन्याय का दोष आयगा यदी हम उन के गुणों का वर्णन न करेंगे। पंजाब की तरह यहां हिन्दुओं के जीवन में मुसल्मानों के रहने सहने का प्रभाव बहुत कम पड़ा है। हाई कोर्ट के जजों और डि० कलेक्टरों तक को मैंने अत्यन्त सादे लिबास में देखा है। यहां के लोग यद्यपि किसी बात को युक्तियों से देर में मानते हैं पर जब एक बार स्वीकार करलें, तो उसे दृढ़ता से पकड़े रखते हैं, चाहे उनके साथी उनके बारे में कुछ भी सम्मति क्यों न बना लें। देशी मस्तानी के अनेक बदलते हुए रंगों को देख कर अन्य प्रान्त वाले उसकी आध्यात्मिक ऊंची २ डींगों और देशभक्ति के लम्बे उपदेश से मुंह फेर बैठे हैं पर उस विलक्षणदेवी के बड़े शिक्षित मद्रासी चेले अब भी उस के साथ चिपटे हुए हैं। उन्हें उसकी प्रत्येक राजनैतिक सम्मति बिना युक्ति किए ही आर्ष वचन वत् मान्य है -और उसके वकील भक्तजन किसी भी धर्म प्रचारक के मुख से इस आयरिश देवी की ब्रह्मविद्या के विरुद्ध एक शब्द भी सुनना नहीं चाहते। अभिप्राय यह है कि मद्रास मस्तिष्क वा हृदय संभव है किसी सिद्धान्त वा मत को देर में पकड़े पर जब पकड़लेता है तब जल्दी नहीं छोड़ता।

ईसाईयों के भी चेले जितने पक्के यहां है अन्यत्र जगह कठीन ही मिलेंगे। कैथोलिक पादरी ७ वीं सदी से मद्रास में काम कर रहे हैं। मदुरा सब प्रकार के अंधविश्वास का घर है।

यद्यपि इस पौराणिक हिन्दु धर्म के गढ़ और नवीन क्रिश्चियन मत के एक पक्के मोर्चे को गिराना कठिन है—पर यदि आर्यसमाज के प्रचारकों ने इस पर विजय पाली तो समझ लीजिए कि सारे मद्रास में वैदिक धर्म की जड़ जम जावेगी ईसाईयों का यहां क्या और कितना काम है उसका क्या प्रभाव और कितनी शक्ति लग रही है, यह हम फिर कभी पाठकों को सुनायेंगे। आज हमें एक बात ही विशेष रूप से कहनी है। एक सच्ची घटना हम पाठकों की भेंट करना चाहते हैं जिस से यह स्पष्ट हो जायगा कि दक्षिण भारत में गुरुकुल और आर्यसमाज के काम के लिए कितनी प्यास है। अभी दो दिन हुए हमें दक्षिण भारत के तीन प्रसिद्ध नेताओं से बात चीत करने का मौका हुआ जो मदुरा में असहयोग के सिद्धान्त का प्रचार करने आए थे। प्रथम महोदय का नाम डा० पी० वर्धराजुलु नायडू हैं। ये दक्षिण भारत के दूसरे महात्मा गांधी हैं। बात चलते चलते आप ने आर्यसमाज की दक्षिण भारत में आवश्यकता बताई। इस पर एक अन्य नेता ने कह दिया कि यहां आ०स० का प्रचार नहीं हो सकता—जिस पर आपने कहा कि "ऋषि दयानन्द को भी लोग यही कहा करते थे कि तुम असंभव के पीछे लगे हो—अब देखिए उत्तर भारत में क्या दृश्य दीखता है"। आप ने कहा "भारत में ईसाईयों के जवाब में यदि सगठित और नियम से कोई धार्मिक और सामाजिक सेवा कर रहा है तो वह आर्यसमाज है"। डा० वी.एस. राजम् और सी. राजगोपालाचार्य बी.ए.बी.एल. आपके साथ थे। श्री राजगोपालाचार्य ने हम से गुरुकुल हरिद्वार के विषय में घंटा भर बात चीत की और सब हाल सुना। अन्त में यह प्रार्थना कि आप स्वामी श्रद्धानन्द जी से प्रार्थना करदें और इस वर्ष हमारे मद्रासी ३० लड़कों के लिए अपने गुरुकुल में स्थान रखवालें। श्री-स्वामी जी यहां से गुरुकुल से वापिस जाते हुए हमारे छात्र वहां ले जावें। आर्यपुरुषों को जानना चाहिये और अपना कर्तव्य समझना चाहिये। आपने गुरुकुल खोल कर सारे भारत का ध्यान ऋषियों के प्राचीन जीवन तथा आध्यात्मिक सभ्यता की तरफ़ खींच दिया है। अब आपका कर्तव्य है कि आप उन्हें मार्ग दिखलावें जिन्हें आपने अनुगामी बनाया है। इस कर्तव्य पालन का कौनसा सर्वोत्तम साधन है? यही कि अपने प्यारे गुरुकुल को सफल बनाओ और उसे तन मन धन से सहायता दो।

—:०:—

सामयिक–विचार

लोकमान्य तिलक की यादगार

लो० मा० तिलक की यादगार के विषय में, कांग्रेस के विशेषाधिवेशन के नियमानुसार, मि० पटेल ने अपनी सम्मति प्रकाशित कर दी है। उनकी सम्मति में २० लाख के रुपये से लण्डन, पेरिस और न्यूयार्क में ऐसे "प्रचार मण्डल" स्थापित किये जावें जो कि भारत के अधिकारों का ही आन्दोलन करें। इस से ३ या ४ वर्ष में पूर्ण स्वराज्य प्राप्त हो जाने की आशा है।

पाठकों को याद होगा कि लग भग इसी आशय का प्रस्ताव हमने भी 'श्रद्धा' के "तिलकांक" में किया था। हम इस प्रस्ताव से पूर्ण सहमत हैं, परन्तु हमारे प्रस्ताव का एक और मुख्य अंश था जिसकी ओर कांग्रेस के अधिकारियों का ध्यान हम विशेष रूप से खेंचना चाहते हैं। वह यह कि प्रत्येक जिले और गांव में 'राजनैतिक' विद्यालय स्थापित किये जावें और इन सब विद्यालयों के ऊपर एक "तिलक जातीय विश्वविद्यालय" हो। इन सब विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में जातीय शिक्षा के साथ २ उच्चकोटि की वह राजनैतिक शिक्षा भी दी जावे जिसका आजन्म प्रचारक लो० मा० तिलक रहे हैं। इस प्रकार की शिक्षा की विशेष आवश्यकता इस लिए है क्योंकि भारतीय नवयुवकों में राजनैतिक ज्ञान बहुत कम है। इस के अतिरिक्त यदि "तिलक राजनीति" का ज्ञान भारत की नई सन्तति को विशेष रूप से नहीं करवाया जावेगा तो उसके अनुयायियों की कमी हो जाने से उसके सर्वथा लुप्त हो जाने की आशंका है। एक बात और है। तिलक के स्वराज्य विषयक सिद्धान्तों का प्रचार करके हम ३-४ वर्ष में स्वराज्य प्राप्त की अभिलाषा रखते हैं। हम समझते हैं कि मि० पटेल का यह अभिप्राय कभी न हो सकता कि कुछ वर्षों के बाद यह आन्दोलन बन्द हो जावे। परन्तु वह आन्दोलन स्वयमेव मन्द पड़ जावेगा यदि उसे आगे बढ़ाने वाले उत्साही नवयुवक कार्य क्षेत्र में नहीं उतरेंगे। परन्तु नवयुवक भी तब तक कार्य्यक्षेत्र में नहीं आसकते जब तक कि, विशेष प्रकार से, इन्हें उन्हीं राजनैतिक सिद्धान्तों, आदर्शों और सचाइयों में से गुजारा नहीं जावेगा। इस महत्वपूर्ण कार्य्य के लिए, यह आवश्यक और स्पष्ट है, ऐसे जातीय विद्यालय और महाविद्यालय और विश्वविद्यालय स्थापित किये जावें जिनमें नई उठती हुई भारतीय सन्तानों को देश सेवा के लिए तैयार किया जावे। आशा है, देश के नेता हमारे इस कथन की ओर ध्यान देंगे।

आधुनिक शिक्षणालयों में छुट्टियां

पिछले सप्ताह इलाहबाद के म्यूरसेन्ट्रल कालेज के प्रिन्सपल ने विद्यार्थियों के कहने पर, पढ़ाई के कुछ दिनों में छुट्टियां करदी थीं जिसके विरुद्ध कई संरक्षकों ने आवाज उठाई है। प्रिन्सिपल महोदय संरक्षकों के आक्षेपों का अभी तक समुचित उत्तर नहीं देसके हैं। प्रिन्सिपल ने अपने पत्र में, जो कि "लीडर" में प्रकाशित हुआ था लिखा है कि विद्यार्थियों की "प्रतिनिधि सभा" के कहने पर उसने ऐसा किया था। इस पर यह पूछा जासकता है, जैसा कि पूछा भी गया है, कि लो० मा० तिलक के स्वर्गवास पर जब इस "प्रतिनिधि सभा" की ओर से कुछ मात्र छुट्टी मांगने गए थे तब प्रिन्सिपल महोदय ने इस की बात क्यों नहीं सुनी थी? सच तो यह है कि अंग्रेजी शिक्षणालयों में पढ़ाई के दिन बहुत कम होते हैं और छुट्टियों की संख्या इतनी अधिक होती है जिस से अंग्रेज अध्यापक इङ्गलैण्ड में अपने इष्ट मित्रों से मिल आसकें। इस शिक्षा प्रणाली का यह भी एक ऐसा दोष है जिस की उपेक्षा नहीं की जासकती। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली में ऐसा कभी नहीं हो सकता। यहां पर छुट्टियां उतने ही दिन होती हैं जो कि अनिवार्य रूप से आवश्यक हैं।

पुस्तक प्रकाशकों की धमकी

हम 'श्रद्धा' का एक अलग कोष्ठक निकाल कर पुस्तकों की विशेष रूप से उचित समालोचना इस लिए किया करते हैं जिससे हिन्दी साहित्य शुद्ध रहे और निकम्मी पुस्तकों के लिए ही प्रसिद्ध न रहे। इस कार्य के लिए हमें यदि पुस्तक प्रकाशकों से पुस्तकें मंगवानी भी पड़ें तो उस में भी हम नहीं चूकते। पक्षपात शून्य होकर हमें इस काम में कभी २ ऐसे भी शब्द लिखने पड़ते हैं जिन से प्रकाशक महोदय नाराज होजाते हैं। इन्हीं दिनों हमें एक ऐसे ही रुष्ट प्रकाशक का पत्र मिला है। उसका कुछ अंश निम्न लिखित है

"आपने हमारी पुस्तकों की समालोचना अर्थात् दुर्दशा की है। आपका इस तरह किताबें मांगने और उनका एक मात्र दोष प्रदर्शन करने का ढंग अतीव अद्भुत और प्रशंसनीय है! आपको इस तरह उपयाचक होकर पुस्तक मंगाने के अन्तर ऐसी कारवाई नहीं करनी थी।"

विदेश के बड़े २ समाचार पत्र जिस तरह पुस्तकें मंगवाकर उनकी उचित समालोचना किया करते हैं वही ढंग हमने भी रक्खा हुआ है परन्तु इस का यह अभिप्राय नहीं कि हम समालोचना के स्थान में विज्ञापन देने वालों का काम करें। इस लिए ऐसे प्रकाशक महोदयों से हम स्पष्ट रूप से यह निवेदन कर देना चाहते हैं कि–उन के आर्थिक लाभ के लिए हम अपने आदर्शों को नहीं छोड़ सकते और नांही हिन्दी साहित्य को अपवित्र बनाने के भागी हो सकते हैं। पक्षपात शून्य होकर हम अपना कर्त्तव्य पालन करेंगे।

राष्ट्रीय भाव पर पुरस्कार--

दिया जा चुका है। जिन कविताओं पर यह पुरस्कार दिया गया है, उस पर विवेचन करने का अधिकार प्रत्येक हिंदी भक्त को है। इस अंक में हमने एक लेख श्रीयुत 'आनन्द' कवि जी का प्रकाशित किया है। अगले अंक में हम एक अन्य कवि महोदय का इसी विषय पर लेख प्रकाशित करेंगे। आशा है पाठक ध्यान से पढ़ेंगे।
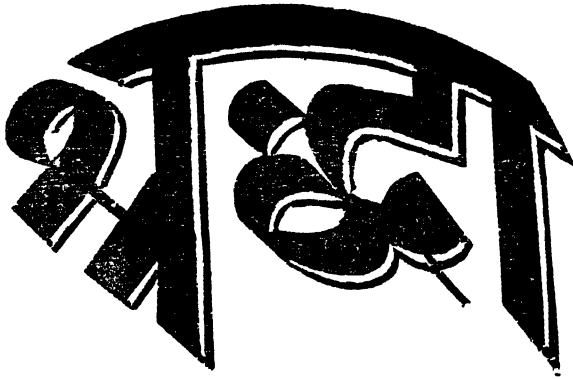
—:०:—

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शालीराम के लिए छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 875

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० मं० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! इसी
समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है { १४ कार्तिक सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७} ता० २९ अक्टूबर सन् १९२० ई० } संख्या २८ भाग १

हृदयोद्गार

विजय-दशमी
पर
भारतवासियों की पुकार

करहिं हम, केहि विधि—मंगलाचार-टेक
राम! हमारे परम पियारे! तेरा जय जय कार॥

(१)

एक दिन तुम ने अमित तेज से किया पाप-संहार।
धर्षित, दीन, अघ—पाश दुखित अब रो रो करत पुकार॥

(२)

नगर सजावे, कलश, पताका, तोरण, बन्दन वार।
लुटे रहा नहीं कुछ भी अत्र तो होता हा हा कार॥

(३)

थे स्वाधीन मुदित मन से तब कीन्हा मोद अपार।
कर्क हाथ हैं, रुकी जीभ है, पराधीनता—मार॥

(४)

भक्ति हृदय से प्रेम मगन हो आरति तेरि उतार।
गावें गीत करहिं अब हम क्या वे नहीं भाव, विचार॥

(५)

दीन दयालु! लखहु तव भारत रोवत आंसू ढार।
करहु विजय कर पाप दलन फिरि होवे जय जय कार॥

*शान्तिसदन
गुरुकुल कांगड़ी } —:०:— { (आनन्द)

कबतक!!

दोहा—विजयादशमी आगई, हर्षित प्रजा अपार।
रघुवर को कर याद यूं, कहती बारंबार॥

तुम्हारी ये जन्मभूमि राजन्! रहेगी कैदी समान कब तक।
इसे छुड़ाने को दुख से अब, न लोगे तीरोकमान कब तक॥
घटा घटा का घमण्ड भारी, प्रभात की होचुकी तयारी।
न दूर है सूर्य की सवारी, छुटेगी अब ये निशा न कब तक॥
ज़माना बेढब निकल चुका है, पुराना चक्कर ये गल चुका है
जो शेर करवट बदल चुका है, रहेगा सोकर वो शान कब तक॥
प्रचण्ड पापी पिशाच राक्षस, सब तरफ से उमड़ रहे हैं।
तुम्हारे हाथों से युद्ध में अब, मिलेगा इनका न मान कब तक॥
स्वतन्त्रता की सुरम्य तानें, झुमक्कु झंकार कर रही हैं।
ये देश भारत हमारा फिर भी, बनेगा सुख की न खान कब तक॥
विजय हुई आज थी तुम्हारी, उसी की फिर हो रही तयारी।
मिलेगा अब राम राज्य हमको, वो होगा उत्सव यहां न कब तक॥

वागीश्वर (विद्यालंकार)

———

ब्रह्मचर्य सूक्त की व्याख्या

चक्षुः श्रोत्रं यशो अस्मासु धेह्यन्नं रेतो लोहितमुदरम् ॥ २५ ॥

"[हे आदि ब्रह्मचारी !] हमलोगों में आंख, कान, यश, अन्न, वीर्य, रुधिर और उदर धारण कर।"

तानि कल्पद् ब्रह्मचारी सलिलस्य पृष्ठे तपोऽतिष्ठत् तप्यमानः समुद्रे। स स्नातो बभ्रुः पिङ्गलः पृथिव्यां बहु रोचते। २६ ॥

"ब्रह्मचारी उन (कर्मों) को करता हुआ समुद्र के समान गंभीर तप से तेजस्वी हुआ जल से ऊपर स्थित हुआ है। वह स्नान किए [स्नातक ब्रह्मचारी] पोषण करने वाला और बलवान होकर पृथिवी पर बहुत प्रकाशमान होता है।"

स पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्—वह पूर्वजों का भी आचार्य, गुरुओं का भी गुरु हम सबको क्रमशः ब्रह्मचर्य की अन्तिम सीढ़ी पर लेजाता है। सब से पहले आंख को दृढ़ करना है, फिर श्रोत्र और उसके साथ अन्य सब इन्द्रियों को नित्य सन्ध्या में इसी लिए ऋषियों ने सब शुद्धी की प्रार्थना बतलाई है--वाणी, प्राण, चक्षु, श्रोत्र नाभि हृदय, कण्ठ शिर, बाहु और हाथों को सावधान कर के और उनको वश में रखने की प्रतिज्ञा कर के प्रार्थी हम सब की पवित्रता के लिए याचना करता है। यही सन्ध्या का मार्जन मन्त्र है। उस में शुद्धी का ठीक प्रकार बतलाया है—भूः पुनातु शिरसि- प्राणेश्वर परमात्मा शिर को पवित्र करे-प्राणों की गति का साधन शिर ही है। भुवः पुनातु नेत्रयोः—दुःखों से अलग रखने वाला परमेश्वर आंखों को पवित्र करे दुःखों का आरम्भ ही आंखों के बिगड़ने पर होता है। आंखें बिगड़ने न पाए। स्वः पुनातु कण्ठे—सारे सुख का स्थान कण्ठ है। उसकी पवित्रता के सुखस्वरूप परमात्मा से प्रार्थना है। महः पुनातु हृदये अपनी महानता से हृदय को पवित्र [विशाल] करे जनः पुनातु नाभ्याम्—अपनी जनन शक्ति से परमेश्वर स्त्री और पुरुष दोनों की जननेन्द्रियों को पवित्र करे जिस से वे उन्हें स्वादेन्द्रियगण बनावें तपः पुनातु पादयोः—तप शक्ति हमारे पैरों में आवे—सत्यं पुनातु पुनश्शिरसि—सत्यरूप परमात्मा फिर से शिर को पवित्र करे जिस से मस्तिष्क में ठीक सोचने की शक्ति आवे, और खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र--चारों ओर ऊपर, नीचे व्यापक परमात्मा शुद्ध करे [रक्षा करे] ऊपर के २५ वें मन्त्र में सिलसिला और है—आंख और कान में सब इन्द्रियां आगई। जब वे पवित्र हैं। तब अपयश नहीं होता पुण्यका पालन होने से यश बढ़ता है। यश से अन्न प्राप्त होता है। शुद्ध अन्न यशस्वी को ही मिलता है। पवित्र अन्न का उपभोग करने वाले का वीर्य शुद्ध होता है। वीर्य का अन्न पर ही आधार है। वीर्य ठीक होने से रुधिर की गति ठीक रहती है। वीर्य हीन पुरुष का रुधिर नियम में नहीं रहता। रक्त की शुद्धि का साधन प्राण वायु है और उसमें वीर्य की अरक्षा से विकार आजाता है। इन सब शुद्धियों पर उदर की शुद्धि निर्भर है और उसकी शुद्धि बिना मनुष्य की सारी बनावट अशुद्ध हो जाती है।

यह सारा शुद्धि का क्रम ब्रह्मचर्य के यथावत् पालन पर ही निर्भर है। ब्रह्मचारी इन सब मंजिलों से पार होकर समुद्र के समान गम्भीर हो जाता है और इतना तेज धारण करता है कि सर्व साधारण से ऊंचा उठ जाता है जिस प्रकार पर्वत पर चढ़ कर महात्मा पुरुष मर्त्यलोक के निवासियों के मार्ग दर्शक बनते हैं, इसी प्रकार ब्रह्मचारी अपने तपो बल से तेजस्वी हो कर ऊपर उठता है। तब विद्या रूपी समुद्र में स्नान से तेज धारण किया हुआ ब्रह्मचारी अपने प्रकाश से सर्व साधारण को अपनी ओर खींचता हुआ उनकी शुद्धि का साधन बनता है।

इस ब्रह्मचर्य का जब भारत में प्रचार था उसी समय यह देश सारे संसार का शिरोमणि था और सारे संसार के लोग अपनी आचार शुद्धि के लिए इसी "देव निर्मित" देश की शरण में आया करते थे। अब भी यदि संसार की गिरी हुई दशा का सुधार होगा तो ब्रह्मचर्य से ही पुनरुद्धार से। शान्तिरोश्म्।

श्रद्धानन्द संन्यासी

आवश्यकता

गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ के लिये एक ऐसे सुयोग्य शास्त्री की आवश्यकता है जो संस्कृत पढ़ाने के अतिरिक्त आश्रम में अधिष्ठाता का काम भी कर सकें। पढ़ाने में अनुभवी और सामाजिक ख्याल के हों वेतन योग्यतानुसार दिया जावेगा।

प्रार्थना पत्र १५ नवम्बर तक मिल जाने चाहियें। इस से पीछे आने वालों पर विचार न हो सकेगा।

प्रियव्रत
आ० मुख्याधिष्ठाता
गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ
डा० बदरपुर
देहली

श्रद्धा का विशेषांक !!

दीपमाला पर प्रकाशित होगा ॥

इस में उत्तम २ लेख और कविताएं होंगी। भारत के प्रसिद्ध २ नेताओं के विचार और सन्देश होंगे।

प्रत्येक भारतीय को यह अंक अपने घर में रखना चाहिये।

एक अंक का दाम =)॥ होगा—

दीनानाथ सिद्धान्तालंकार
उप—सम्पादक 'श्रद्धा'

वी. पी. मंगाने वाले सज्जनों से प्रार्थना

गत १ सितम्बर से डाक विभाग ने विना रजिस्ट्री किए वी. पी. लेना बन्द कर दिया है। रजिस्ट्री करके वी. पी. भेजने से मंगाने वालों को प्रति वी. पी. =) अधिक देने पड़ेंगे। इसके अतिरिक्त, वी. पी. का रुपया देर से मिलने के कारण हमें पत्र भी देर से जारी करना पड़ता है। इस लिए ग्राहकों से प्रार्थना है कि अच्छा हो, वे यदि मनीआर्डर द्वारा ही धन भेज दिया करें। इससे ग्राहकों के जहां =) बच जावेंगे वहां उन्हें पत्र भी शीघ्र मिल सकेगा।

प्रबन्धकर्त्ता
'श्रद्धा'

श्रद्धा

आर्य्यसमाज में खण्डन

कुछ सप्ताह हुए श्रद्धा में श्री स्वा० श्रद्धानन्द जी ने 'आर्यसमाज में खण्डन' पर अपने विचार प्रकट किये थे। स्वामी जी के इस सम्बन्ध में विचार सब को विदित ही हैं। उन्हें वह लगभग ८ वर्षों से प्रकट कर रहे हैं। वह नये नहीं—और न उन की तह में कोई नया उद्देश्य है।

श्रद्धा के उस लेख को प्रकाश के सम्पादकीय लेख के लेखक महाशय ने बहुत ही हानिकारक समझा है और लेख और लेखक का नाम लेकर खण्डन करने की आवश्यकता समझी है। यह कोई साधारण बात नहीं है। जब किसी बात को साधारण समझा जाय, और उस से कोई विशेष हानि होने की सम्भावना न हो तो प्रायः उस की उपेक्षा की जाती है, और यदि उपेक्षा न की जाय तो ऐसे ढंग पर उत्तर देदिया जाता है कि उत्तर भी देदिया जाय और किसी विशेष लेख या लेखक को बीच में न लाया जाय। लेख और लेखक के नाम को बीच में घसीटने की आवश्यकता तब होती है, जब प्रकट किये गये विचार बहुत हानिकारक हों, और उनसे समाज को हानी होने की सम्भावना हो। प्रकाश के सम्पादकीय लेख के लेखक ने जब लेख और लेखक को बीच में लाकर आर्यसमाज में खण्डन की अनावश्यकता का खण्डन किया है, तब यही समझना पड़ता है कि स्वामी जी ने जो विचार प्रकट किये थे, वह बहुत खतरनाक थे, और उन से समाज की बहुत हानि पहुंचने की सम्भावना है।

क्या सचमुच वह विचार ऐसे ही खतरनाक थे? क्या सचमुच उन के फैल जाने से समाज को बहुत धक्का पहुंचने की सम्भावना है? विचारों का सार यह है। स्वामी जी की सम्मति है कि पहले पहल आर्यसमाज के संस्थापक को और समाज के अन्य प्रचारकों को अन्यमतों के कठोर खण्डन की आवश्यकता थी। जब फोड़ा खूब पका हो तो चीरा देना आवश्यक होता है। उस समय खण्डन का वही उद्देश्य होता है जो फोड़े के चीरने का उद्देश्य है। अच्छा वैद्य समय और आवश्यकता होने पर फोड़े को चीरने में आगा पीछा नहीं करता, परन्तु जब फोड़े को चीर दिया तब मरहम पट्टी आवश्यक है। जब जंगल साफ कर दिया तो भूमि में हल जोत कर बीज बोना जरूरी है। एक ही नीति सदा नहीं रह सकती। समय और अवस्था के साथ कार्य नीति में परिवर्तन आना आवश्यक है। जो लोग इस सचाई को स्वीकार करते हैं वही इस परिवर्तन शील संसार में कामयाब हो सकते हैं। परन्तु जो लोग दशा बदल जाने पर अपनी कार्य नीति को उस के अनुसार नहीं बदल सकते उन्हें सफलता प्राप्त नहीं होती। आज का भारतवर्ष १० वर्ष पूर्व के भारतवर्ष से बहुत भिन्न है। इस समय नौकर शाही पर सब से बड़ा आक्षेप यह है कि वह बहुत जड़ हैं और बदले हुए भारत के शासन के लिये जिस नीति परिवर्तन की आवश्यकता है, उस के करने में संकोच कर रही हैं। जो बदलते हुए काल को देख कर धर्म और समय के अनुसार अपनी कार्य नीति पर पुनर्विचार नहीं कर सकते, वह स्थिर सफलता प्राप्त नहीं कर सकते।

ऐसे हरेक समाज को, जो कुछ कार्य करना चाहता है और केवल बातों के ज़ोर से संसार-विजय की आशा नहीं रखता, समय और आवश्यकता को देख कर अपनी कार्य नीति का निश्चय करना चाहिये। ऋषि दयानन्द के तपो बल और परिश्रम से, ऋषि के शिष्यों के स्वार्थ त्याग और उद्देश्य से, और उन शक्तियों के प्रभाव से जिन्हें परमात्मा ने भारत की भलाई के लिये उत्पन्न किया है, इस समय का भारत ४० साल पूर्व के भारत से बहुत भिन्न हो गया है। शिक्षा का प्रचार आगे से अधिक है, सामाजिक कुरीतियों से घृणा पहले से बढ़ चुकी है, केवल पुरानी वस्तुओं से इस लिये प्रेम कि वह पुरानी हैं, शिथल हो चुका है, पण्डितों और मौलवियों का अन्धा कट्टरपन बहुत कुछ ढीला होगया है, उन्नति और सुधार की कामना सार्वजनिक दिखाई देती है। पहले लोगों को दुर्दशा का अनुभव कराकर सुधार की आवश्यकता दिखाना अभीष्ट था।

उसका सर्वोत्कृष्ट साधन यही था कि उनके हानि कारक विश्वासों का ज़ोरदार खण्डन किया जाता। अब दशा में परिवर्तन आगया है। स्वा० श्रद्धानन्द जी की राय है कि दशा परिवर्तन को स्वीकार कर के आर्यसमाज अपनी कार्य नीति में भी परिवर्तन करे।

हमें इस राय में कुछ भी भयंकरता की बू नहीं आती। प्रत्युत प्रतीत होता है कि यदि आर्यसमाज अपनी उपयोगिता को कायम रखना चाहता है, और यदि वह पुराना निकम्मा और स्वयं भी सनातनी नहीं बन जाना चाहता तो आवश्यक है कि वह अपने प्रचार के रंग को, संगठन को, और कार्य प्रणाली को बदली हुई दशाओं के अनुसार बदले और नये रोगों पर पुरानी दवा लगाकर रोगी की मृत्यु का कारण न हो।

आर्यसमाज ने लोगों को बताया है कि तुम्हारे विश्वास झूठे हैं-क्या अब उसका कर्तव्य नहीं कि वह अब उनके स्थान में सच्चे सिद्धान्तों के बीज बोने पर अधिक ध्यान दे? आर्य्यसमाज ने लोगों को कहा है कि तुम्हारे माने हुए धर्म ग्रन्थ पौरुषेय हैं, क्या उसका कर्तव्य नहीं कि उनकी पौरुषेयता सिद्ध करने का परिश्रम कुछ कम कर के वेद के सरल और सुबोध अनुवाद सब भाषाओं में प्रचारित कर के उन्हें बतावे कि ईश्वरीय धर्म क्या है? आर्य्यसमाज ने लोगों को सिखलाया है कि वर्तमान मतमतान्तर लड़ाई झगड़े और वैर विरोध के मूल हैं। क्या अब उसी का यह कर्तव्य नहीं है कि वह अपने प्रचार और व्यवहार से यह दिखलादे कि वैदिकधर्म प्रेममय धर्म है, वैदिक धर्मी विरोध के स्थान में मेल उत्पन्न करने वाले हैं और आर्य्यसमाज लगे हुए घावों को बढ़ाने का साधन नहीं उन में मरहम भरने वाला वैद्य है?

हम पूछते हैं कि क्या आर्यसमाज का यही कर्तव्य है कि वह लोगों के हृदयों में अभिलाषा उत्पन्न करदे, पहले धर्म से असन्तोष करदे, और उसकी जगह पर खाली जगह छोड़दे।

यह ठीक है कि आर्यसमाज ने बहुत लोगों के हृदयों से पुराण इंजील आदि को खेंच लिया है—पर क्या प्रकाश के सम्पादकीय लेख का लेखक हृदय पर हाथ रख कर कह सकता है कि आर्यसमाज ने उनके स्थान पर वेद के मन्त्रार्थ रखने का सामान पैदा किया है? वही अपने हृदय पर हाथ रख कर कहे कि कितने आर्यसमाजियों ने वेद पढ़ा है? आर्यसमाज ने वेद के सरल अर्थ बतलाने वाले कितने अनुवाद प्रकाशित किये हैं? यह ठीक है कि आर्यसमाज ने बहुत पुरुषों और स्त्रियों के हृदयों में से शिव या गंगा के लिये श्रद्धा निकालदी है परन्तु हमें पता नहीं कि उनके स्थान में यह श्रद्धा का कौनसा केन्द्र उत्पन्न कर सका है। श्रद्धा और भक्ति का आर्यसमाज में बहुत थोड़ा और तुच्छ स्थान रह गया। आर्यसमाज ने पुराना मकान गिरा दिया है, पर अभी तक नया मकान खड़ा करना आरम्भ नहीं किया। अभी पुराने मकान के खण्डहर पड़े हैं, जो उसकी कुदाली का यश गा रहे हैं पर वह दीवार दिखाई नहीं देती जो उसकी कारीगरी का भी गुणगान करे। स्वामी जी का उद्देश्य यही है कि आर्यसमाज का ध्यान इस ओर ले थे। जो खाली स्थान आर्यसमाज के खण्डन से उत्पन्न हो गया है उसे भरने की ओर आर्यजनता का ध्यान खेंचना ही उनका लक्ष्य प्रतीत होता है। जो आदमी सरसरी नज़र से भी उनके लेख को पढ़ेगा वह इसी परिणाम पर पहुंचेगा।

परन्तु प्रकाश के सम्पादकीय लेख के लेखक को उस ख़तरनाक लेख में बहुत से हानि कारक सिद्धान्तों का गन्ध आ गया है। उसकी राय में खण्डन बहुत आवश्यक है—पर जब तक वह यह न सिद्ध कर दिखाये कि अब भी आर्यसमाज में मण्डन की अपेक्षा खण्डन की ही अधिक आवश्यकता है तब तक उसका लेख प्रयोजन हीन है। यह कह कर स्वामी जी के लेख का खण्डन नहीं हो सकता कि खेत में बोने का काम करने वाले किसान को भी नलाई के लिए हाथ में खुर्पा रखना पड़ता है। यदि प्रकाश का लेखक यह मान गया है कि अब जंगल काटने की अपेक्षा बीज का बोना अधिक आवश्यक है तो स्वामी जी के लेख का उद्देश्य पूर्ण हो गया है। बोने और नलाई के लिये जिन २ औज़ारों की आवश्यकता है, उनकी उपयोगिता कौन नहीं मानता, जो लोग खण्डन की अपेक्षा मण्डन को अब अधिक आवश्यक बताते हैं वह तो यही कहते हैं कि अब जङ्गल कट चुका—जीवन ठीक कर के नये बीज बोना आरम्भ करो। यदि प्रकाश का लेखक इस बात को नहीं मानता तो हमें आशा है कि वह स्पष्ट रीति से यह लिखने की कृपा करेगा और तब हम उसके हृदय का सन्तोष करने का यत्न करेंगे। यदि वह स्पष्टतया लिखने को तैयार न हो तो यही समझना होगा कि वह स्वा० श्रद्धानन्द जी के लेख का अभिप्राय नहीं समझा और बिना विचारे अपने प्यारे खण्डन कार्य में प्रवृत्त हो गया।

कालिजों में तहलका

और गुरुकुल

अलीगढ़ कालिज में महात्मा गान्धी और अलीबन्धुओं के जाने पर कालिज के विद्यार्थियों ने सरकार से असहयोग की घोषणा देदी है—इस एक घटना ने देश भर के कालिजों में तहलका मचा दिया है। हरेक कालिज के संचालक अपने २ घर की नब्ज देख रहे हैं। पंजाब में भी असहयोग की लहर पहुंच गई है—और शीघ्र ही यह समाचार मिलने की आशा है कि ख़ालसा कालिज और इस्लामिया कालिज सरकार से सम्बन्ध तोड़ लेगें। असम्भव नहीं कि साथ ही यह समाचार भी सुनने को मिले कि डी. ए. वी. कालेज और दयालसिंह कालिज असहयोगियों की संख्या में मिल गये हैं।

इस तहलके में यदि सुरक्षित है—और अपनी स्थिति को अभिमान और सन्तोष से देख सकता है तो वह गुरुकुल है। जिस सचाई पर आज राजनीतिज्ञ लोग बरसों की ठोकरें खाकर पहुंचे हैं, और जिस के सामने कालिजों को जबर्दस्ती सिर झुकाना पड़ रहा है, उस का अनुभव गुरुकुल के संचालकों ने कई साल पूर्व कर दिया था। न केवल अनुभव किया था—अपितु कार्य में भी परिणित कर दिखाया था। सचाई यह है कि सच्ची शिक्षा कभी बंधन को नहीं सह सकती। जाति अपनी बालकों की शिक्षा अपने ढंग पर दे—यही अभीष्ट है। जहां जाति की इच्छा पर सरकारी ताला लग जाय वहां उत्तम शिक्षा की आशा करना फजूल है। गुरुकुल द्वारा समाज को एक विशेष प्रकार की शिक्षा देना अभीष्ट था। कई प्रलोभन होने पर भी गुरुकुल के संचालकों ने उसे बन्धन में पड़ने से बचाकर स्वाधीन दशा में रखा। यही कारण है कि इस समय वह कांपते हुए शीशा कालिजों के बीच में चट्टान की तरह स्थिर और निश्चिन्त खड़ा है। उसे देखकर अन्य शिक्षणालय उत्साह लाभ कर सकते हैं।

आर्यसमाजिक जगत्

आर्यसमाज, लाहौर

आर्यसमाज लाहौर का वार्षिकोत्सव बहुत समीप आगया है। लग भग एक मास शेष है। परन्तु अभी तक उसके लिये शोर शार नहीं मचाया गया न कोई सूचना—न समय विभाग। लाहौर आर्यसमाज का उत्सव एक विशेष समारोह है, जिस की तय्यारी काफ़ी होनी चाहिये। कारण ज्ञात नहीं कि इस वर्ष इतनी चुपचाप क्यों है?

दीपमाला

दयानन्द का स्मरण कराने वाली, दीपमाला भी समीप आरही है। १० नवम्बर को दीवाली का त्योहार है। ऋषिदयानन्द ने उस दिन अपना इहलोक का जीवन समाप्त किया था। उस दिन उन्होंने अपना बोझ आर्यपुरुषों के कन्धों पर डाला था। १० नवम्बर को आर्यसमाज को और आर्यपुरुषों को

यह हिसाब लेना होगा कि क्या वह उस बोझ को उठा सके हैं ? जिस जायदाद के संभालने का कार्य ऋषि आर्यसमाज के सिर पर डाल गया क्या वह सुरक्षित है ? क्या आर्यसमाज और आर्यपुरुषों ने अपने को ऋषि का योग्य अनुयायी सिद्ध किया है ? इन सब प्रश्नों के उत्तर देने के लिये अपने हृदयों को परखने का अवसर दीपमाला है। आर्यपुरुषों को इस परीक्षा के लिये पहले से तय्यार होना चाहिये। ऐसा न हो कि हृदयों की कालाना परीक्षा का समय आपहुंचा और हम लोग बिलकुल तय्यार न हों।

प्रचारक का नकली युद्ध

ईश्वर से प्रार्थना कर के, और आर्यदेवताओं से आशीर्वाद लेकर दिल्ली का सद्धर्मप्रचारक 'नकली' युद्ध के लिये अवतीर्ण हुआ है। प्रचारक की विजय कामना इतनी बढ़ी हुई है कि कोई विपक्षी सामने न होने पर वह बनावटी शत्रुओं का दलन करने के लिये तुरही बजाने को तय्यार हुआ है। ऐसा कुछ विचार आर्यजगत में फैल गया है कि वही समाचार पत्र आर्यसमाज में जीवित रह सकते हैं, जो घरेलू युद्ध जारी रखें। प्रचारक की लोक प्रियता इस समय बहुत गिर गई है। आर्यसमाज का पुराना केशरी अभागी दशा में फंसगया है। इसके भाग्यों को सुधारने के लिये प्रचारक के स्वामियों ने यही उचित समझा प्रतीत होता है कि खूब ज़ोर शोर से घरेलू युद्ध के दृश्य दिखाये जायं असली विरोधी नहीं, तो नकली विरोधी बनाये जायं परन्तु दृश्य दिखाना इतना आवश्यक समझा है कि असमय का रणतावडव दिखाने में कुछ भी संकोच नहीं किया।

हवा में तलवारें

नकली युद्ध में तलवारों की चोट हवा को ही सहनी पड़ती है। प्रचारक ने भी तलवार के जो हाथ दिखाए हैं वह हवा में ही चले हैं। 'वेद का उद्धार करने वाला कोई नहीं रहा' यह नहीं पता लगा कि ऐसा कौनसा आर्यसमाजी दूसरे काम में लगगया जो पहले वेद का उद्धार किया करता था। 'आर्यसमाज को राजनीतिक बनाया जारहा है' भले आदमी ने यह नहीं बताया कि किसने कहा या लिखा है कि आर्यसमाज राजनीतिक सभा है, या आर्यसमाज का उद्देश्य राजनीतिक है। 'आर्यसमाज का नाश हो चला है' वह कैसे ? इस प्रकार बिना किसी निमित्त के 'शेर आया' 'शेर आया' का शोर मचा कर प्रचारक का सम्पादक फतवे देता है कि लाला हंसराज लाला लाजपतराय, स्वा० श्रद्धानन्द-सब निकम्मे आदमी हैं। इन्होंने आर्यसमाज का नाश किया है शायद आर्यसमाज का इस समय जितना गौरव है वह सब मा० लक्ष्मण जी की बदौलत है। महात्मा गान्धी बिल्कुल निकम्मा आदमी है। देश का नाश करने पर उतारू हुआ है। यह सब फतवे हैं—जिन्हें देकर प्रचारक के वर्तमान मालिक ने अपनी ओर से आर्यसमाज की रक्षा की बुनियाद रखदी है। प्रचारक ने वार तो किये हैं—पर शोक है कि वह किसी शत्रु पर नहीं पड़ सकते। यदि मज़ा ही लेना है तो बनावटी शत्रु बना कर उन पर वार करने से युद्ध का वह मज़ा नहीं आता-जो असली युद्ध में आता है।

उपहास्य

मा० लक्ष्मण के मोटे २ "हैडिंग, भद्दे शीर्षक, टूटी फूटी अनघड़ भाषा, असम्बद्ध विचार, आर्यसमाज में घरेलू युद्ध करने के थोथे यत्न केवल, बड़े बड़े आदमियों को भला बुरा कह कर प्रचारक की ग्राहक संख्या बढ़ाने का व्यर्थ उद्योग यह सब कुछ यदि उपहास्य न होता तो निस्सन्देह बड़ा चिन्ता जनक होता। अब यह केवल उपहास्य है तो भी आर्यसमाज को सावधान रहने की आवश्यकता है। आजतक यों तो उस दिवार से टकराने का यत्न कर रहे हैं, परन्तु कोई नहीं चाहता कि इस बार भी वैसा परिणाम पैदा हो। क्या ही उत्तम हो यदि प्रचारक के संचालक चट्टान से सिर पटकना छोड़ कर असली लड़ाई के दृश्य दिखाने का काम छोड़दें—और किसी उचित उपाय से आर्यसमाज की सेवा के कार्य में लगें।

स्थिति

इतना लिखना आर्यसमाज को सावधान करने और मा० लक्ष्मण को व्यर्थ उद्योग से बचाने के लिए आवश्यक था। आर्यसमाजियों के लिए इतना पर्याप्त है, पर आशा नहीं होती कि मा० लक्ष्मण जी इतने से ही अपने उद्योग की विफलता समझ जायगे। तो भी अपना कर्तव्य था—पालन कर दिया। एक बार पालन कर दिया—समझना न समझना दूसरों का काम है। स्वा० श्रद्धानन्द जी अपनी शुभ आप लेसकते हैं, उनको सम्मतियों की पुष्टि के लिए यहां लिखने की आवश्यकता नहीं है। उनके सम्बन्ध में कोई चिन्ता भी नहीं—चिन्ता है तो बेचारे प्रचारक और उसके सम्पादक की—जो अपनी रही सही उपयोगिता खो रहे हैं।

दयानन्द विश्वविद्यालय

लगभग चार साल हुए आर्यसमाज लाहौर के वार्षिकोत्सव पर डी० ए०वी कालेज के लिए अपील करते हुए महात्मा हंसराज जी ने कहा था कि डी० ए० वी० कालिज में प्रतिदिन उन्नति की जायगी और वह दिन दूर नहीं है जब यह कालिज एक डी० ए० वी० यूनिवर्सिटी का केन्द्र होगा। उस समय सारा मण्डप तालियों से गूंज उठा था। वह एक प्रतिज्ञा थी, जिसे सुन कर हरेक आर्यसमाजी का चित्त प्रफुल्लित हो उठा था। अब उस प्रतिज्ञा को निभाने का समय है। इस से अच्छा अनुकूल अवसर शायद ही फिर मिले। बहुत थोड़े यत्न से, इस समय डी० ए० वी० कालिज के संचालक स्वतन्त्र डी० ए० वी कालिज की बुनियाद रखसकते हैं। विद्यार्थी तय्यार है देश तय्यार है केवल महात्मा हंसराज और उनके सहयोगियों के तय्यार होने की आवश्यकता है। डी० ए० वी कालिज के संचालकों के साहस और देश का समय उपस्थित है क्या वह इस परीक्षा का समय उपस्थित है—क्या वह इस परीक्षा में अनुत्तीर्ण रहा। यह ध्यान में रहना चाहिए कि स्कूलों और कालिजों का जितना समूह इस समय डी० ए० वी० कालिज कमेटी के पास है, उतना और सरकारी किसी भी एक कमेटी के पास नहीं। क्या इस पर भी आर्यसमाज को यह गौरव प्राप्त न होगा कि वह एक साल के अन्दर ही अन्दर स्वतन्त्र दयानन्द विश्वविद्यालय की स्थापना होजाय ?

इन्द्र

विचार-तरङ्ग

हिम-शोभा

(श्रद्धा के लिए विशेषतया लिखित)

लेखक श्रीयुत "आनन्द"

(१)

हिमालय की निम्न प्रान्तस्थ शुभ्र हिम श्रेणी! तेरी इस अपूर्व आनन्द प्रद मनोहारिणी धवल छटा को देख कर किस का चित्त प्रमुदित नहीं होता। तेरे ऊपर से जब सुनील जलधर की पंक्ति तेरी गौर चोटी को चूमने की अभिलाषा से प्रेम से उमड़ती हुई तेरे ऊपर से गुजरती है और तेरा स्वच्छ श्वेत प्रतिबिम्ब उसमें पड़ता है और इधर से सायंकाल डूबते हुए रवि की रक्त रश्मियों से उसका आरञ्जन होता है उस समय उसकी क्या शोभा होती है इसे कौन वर्णन कर सकता है। तेरे नीचे इन ऊंचे विशाल पर्वत रूपी दुर्गों के प्राकार जो आकाश से हमेशा छूते हुए प्रतीत होते हैं अपनी अनुपम शस्य-श्यामल भूमि से उसके सौन्दर्य को द्विगुणित कर देते हैं। सनसनाती हुई हवा चपल उठती है और वृक्षों को खेल से झुलाने लगती है-पक्षी आनन्द से गाने लगते हैं प्रति ध्वनियां ताल देती हैं और देखने वाले का मन एक दम नाच उठता है।

(२)

किन्तु यह शोभा, यह दृश्य देर तक रहने नहीं पाते। क्षण भर में प्रकृति नाटक के दृश्य आकाश-पर्वत-रंग मञ्च पर और ही होजाते हैं। पहिले पर पर्दा पड़ता है और फिर once more की साधना ही रह जाता है। निशाकाल में जब कौमदी-नाथ चन्द्र महाराज तेरे पास से अपनी नव ज्योत्स्ना के साथ उदित होते हैं तो तू अपनी अमित शुभ्र छटा के प्रतिबिम्ब से उनके कलंक को दूर कर देता है—उनसे प्रतिबिम्ब तेरा चमकीला रजत चांदी के समान एक दम जगमगा उठता है-तेरे नीचे बहने हुए सोत अत्यन्त कृष्ण वर्ण का रूप धारण कर लेते हैं और जब उन में झिलमिलाते हुए तारों का प्रतिबिम्ब पड़ता है, कौमदी छटा का शनैः शनैः ह्रास होता है तो उनका भी एक दम उछलने लगता है कुमुद खिल उठते हैं और राजहंस आनन्द कल कल से दिशाओं को गुंजा देते हैं। दृश्य फिर बदलता है-आंखे खुली रह जाती हैं मन की तृप्ति होने में दो नहीं आती।

(३)

प्रातः काल जब सूर्य भगवान् अपने रथ पर आरूढ़ हुये तेरे ऊपर से गुजरते हैं और उनका द्युति पूर्ण भास्वर पीत रक्त प्रतिबिम्ब तुझ में पड़ता है उस समय तू उज्ज्वल कलधौत के समान चमचमाता हुआ अपने देह को सुवर्णमय बना देता है। हिमालय! तू पवित्र भारत देश का का मुकुट कहा जाता है। उस समय सचमुच तेरे सुवर्ण-किरीट होने का निश्चय होजाता है। यही नहीं जब सूर्य की इन द्युतिमय किरणों से खिझ कर नीलकाय बादल उस को पूर्णतया ढक लेते हैं तो उस समय उनके मुंह झांकने से तू दूर से नीलम का पहाड़ मालूम होता है? वास्तव में तुझ में अमित सौन्दर्य है यह किस में सामर्थ्य है कि तेरा वर्णन कर सके।

(४)

महा कवि कुल गुरू कालिदास ने तेरी इस अनूठी शोभा को देख कर ही तेरे सुन्दर वर्णन द्वारा अपनी वाणी को पवित्र किया। तुझे ही क्या? तेरे ऊपर लटकते उड़ते हुए बादलों को अपूर्व शोभा को देख कर अपनी प्रतिभा से मेघ दूत की कल्पना कर डाली। आहा! तू सौन्दर्य का निधान है इसी लिए तुझ पर देवता निवास करते हैं ऐसी कल्पना की जाती है। तेरी दिव्य छटा की शोभा की उपमा जब हृदय सोचने लगता है तो महा कवि-भूषण तुलसीदास जी की एक उक्ति कुछ बदलते हुए रूप में इस प्रकार दिल से निकल पड़ती है—

> "देखि मनोहर शोभा तोरी।
> सादर उपमा सकल ढढोरी॥
> देत न बनहिं निपट लघुलागी।
> इक-टक-रही रूप अनुरागी॥

(५)

सुन्दरता! इस में सन्देह नहीं कि तू क्षणिक है। कइयों का कहना भी है कि सुन्दरता में विशेष आनन्द ही इस लिए आता है क्यों कि यह क्षणिक है। कुछ भी हो इन दृश्यों में हृदय की तृप्ति होती है और मन न जाने किन अलक्ष्य कल्पनाओं में लीन होजाता है। प्रकृति नाटक के लेखक नटनागर चतुर चितेरे भगवान् की महिमा का भान होता है। जिह्वा गाने लगती है-कान सुनते और आंखें मुंद जाती हैं।

—:०:—

पत्रों का सार

१. आर्यसमाज बल्लभगढ़ जि० गुड़गांव के मंत्री सूचना देते हैं कि इस समाज का वार्षिकोत्सव कार्तिक बदी १० ११,१२, (५,६,७, नवम्बर) को होगा।

२. सहयोगी 'प्रकाश' (लाहौर) के सम्पादक म० कृष्ण बी०ए० सूचना देते हैं कि इस पत्र का "कृष्णांक" गत वर्षों की न्यांई, इस वर्ष भी बड़ी सजधज के साथ निकलेगा। उत्तम २ लेख और कवितायें होंगी।

३. हिन्दी साहित्य सम्मेलन (प्रयाग) के परिक्षा मंत्री श्री गोपालस्वरूप भार्गव सम्मेलन की परीक्षाओं का सर्वसाधारण में अधिक प्रचार करने की हिन्दीप्रेमियों से प्रार्थना करते हैं। मातृ भाषा प्रेमियों को इस प्रचार में अवश्य सहायता देनी चाहिए।

४. म० ज्वालादत्त शर्मा लिखते हैं कि प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन मुरादाबाद में कृतकार्यता पूर्वक हुआ। पं० पद्मसिंह जी शर्मा का भाषण अत्यन्त प्रभाव शाली था। कई उत्तम २ प्रस्ताव पास हुए और और सरकार से प्रार्थनायें की गईं। परन्तु अब समय प्रार्थना का नहीं है किन्तु कुछ कार्य करने का है। सम्मेलन को यह शिक्षा शीघ्र ही लेनी चाहिए।

५. भारतवर्षीय-आर्यकुमार-परिषद् के मंत्री सूचना देते हैं कि परिषद् का वार्षिक अधिवेशन दशहरे से हट कर दिवाली पर मिरजापुर में होगा। धार्मिक और समाजिक विषय पर निबन्ध पढ़े जाने अतिरिक्त खेलें भी होंगी जिनमें पारितोषिक दिया जावेगा।

६, आर्यसमाज छावनी मुलतान का वार्षिकोत्सव १९,२०, २१, २२ नवम्बर को मनाया जावेगा।

७, रियासत नाभा में श्री० गंगागिरि सन्यासी जी ने १४ से १९ अक्तूबर तक तक वैदिक धर्म का प्रचार किया। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब से वहां के लिए एक स्थिर उपदेशक की प्रार्थना की गई है।

८. म० मंगलसेन जी (वानप्रस्थ से) लिखते हैं कि रियासत नलौर नाहन (अम्बाला) में उन्होंने एक वैदिक आश्रम खोला है जिस में मिडिल तक उर्दू अंग्रेजी पढ़ाने के साथ २ सत्यार्थप्रकाश इत्यादि भी पढ़ाया जावेगा। दानियों को दान देने और वृद्ध सज्जनों से वानप्रस्थी बनकर वहां रहने की प्रार्थना की गई है।

पत्र प्रेषकों को सूचना

म० होतीलाल जी वर्मा !

आपका लेख अनावश्यक रूप से लम्बा होने के कारण नहीं छप सकता। क्षमा करें।

'सम्पादक श्रद्धा'

शिक्षा-जगत्

(इस शीर्षक के नीचे हम कभी २ शिक्षा के भिन्न २ प्रश्नों पर गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की दृष्टि से विचार किया करेंगे। हम आशा करते हैं कि हमारे पाठक इस में पर्याप्त दिलचस्पी लेंगे। सं० श्र०)

पत्तों को तराशने की जगह जड़पर कुल्हाड़ा

राजनैतिक आन्दोलन की बागडोर महात्मागान्धी के हाथ में आजाने से देश में एक नवजीवन आगया है। भाषणों प्रस्तावों, सभाओं और प्रार्थनाओं की जगह अब जनता अपने नेताओं का उनकी स्थूल कार्य शक्ति पर परखती है। देश की इस वर्तमान परिस्थिति से हमारी शिक्षा अछूत नहीं रह सकी है। महात्मागान्धी के असहयोग नीति के कार्यक्रम में शिक्षणालयों के सुधार को आवश्यक स्थान दिये जाने के कारण उसकी उपयोगिता पर आज कल बड़ा विवाद चल रहा है।

युक्तियां दोनों ओर से दी जा रही है परन्तु हमें उस से कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। हमें तो यह देख कर प्रसन्नता होती है कि देश के नेता पत्तों को तराशने की जगह अब असली जगह कुल्हाड़ा रखने लगे हैं। इस भूलका ज्ञान उन्हें अब हुआ कि राजनैतिक दासता का वास्तविक कारण वह दिमागी दासता है जो कि आधुनिक अंग्रेजी शिक्षणालयों (वस्तुतः मैशीनरियों) में हमारे नवयुवकों के अन्दर जबरदस्ती घुसेड़ी जाती है। जाति की उन्नति के लिए शिक्षा का जाति के हाथ में होना आवश्यक है। कलकत्ते की इस विशेष कांग्रेस के सभापतित्व का अनुचित लाभ उठाते हुवे श्री-ला० लाजपतराय जी ने भाषण में, यह कहा था कि राष्ट्रीयशासन के बिना राष्ट्रीय शिक्षा होना असम्भव है। परन्तु यह एक हैत्वाभास है। वे नवयुवक जिन्होंने पराजित की तरह शिक्षा पाते हुवे दिल दिमागों को पाया है, क्या वे उसी किस्म भरे दिल और दिमाग से स्वतन्त्रता और देश भक्ति की उच्च कल्पनाओं और विचारों के साथ उसे प्राप्त करने के गूढ़ साधनों को ढूंढ सकते हैं? आयरलैंड परतन्त्र है पर तब भी जिस कौमी के जातीय शिक्षणालयों की वहां कमी नहीं है। वस्तुतः सचाई यह है कि जहां शासन को राष्ट्रीय बनाने का प्रयत्न किया जावे वहां, साथ २ शिक्षा को भी राष्ट्रीय बनाना चाहिये। यही उच्चभाव था जिसे दृष्टि में रखते हुवे गुरुकुलों तथा अन्य जातीय संस्थाओं की नींव रक्खी गई। गुरुकुल की एक २ ईंट उसके राष्ट्रीय और जातीय शिक्षालय होने का प्रमाण दे रही है, उसका प्रत्येक सिद्धान्त असहयोग का सच्चे अर्थों में भाष्य कर रहा है। अब से कुछ वर्ष पूर्व इस प्रणालि के महत्त्व को समझ कर यदि उसे कार्य में परिणित कर लिया जाता तो असहयोग का कार्यक्रम आज कुछ भिन्न ही होता।

कलकत्ता विश्वविद्यालय की स्वास्थ्य परिक्षा और ब्रह्मचर्य्य

कलकत्ता विश्वविद्यालय ने सब छात्रों की, विशेष डाक्टरों द्वारा, स्वास्थ्य परिक्षा करवाई थी जिसका परिणाम अब प्रकाशित होगया है। इसके अनुसार ५० प्रति शतक तक को नेत्र सम्बन्धी और ७० प्रतिशतक को कान दांत इत्यादि के रोग हैं। ऐसी स्वास्थ्य परीक्षाओं की वास्तविकता में हमें बहुत सन्देह है। इन में केवल, ऊपर २ से, आंख-नाक-दांत कान इत्यादि की ही परीक्षा की जाती है पर उनके कारण स्वरूप वास्तविक गुप्त रोगों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। इन शिक्षणालयों में यदि छात्रों के सदाचार और ब्रह्मचर्य्य रक्षा पर विशेष ध्यान दिया जावे; ब्रह्मचर्य्य नाशक प्रलोभनों और दुर्व्यसनों से बचाया जावे तो बाह्य इन्द्रियों के रोग बहुत कम हो सकते हैं;

मि० सी० एफ़ एन्ड्रूज़ का भाषण

बिहारी छात्र सम्मेलन में सभापति की हैसीयत से भारतहितैषी मि० सी० एफ़ एन्ड्रूज़ ने जो, हाल ही में भाषण दिया है वह प्रत्येक छात्र और शिक्षा प्रेमी के लिये मनन करने योग्य है। हमें इस भाषण की एक प्रति प्राप्त हुई है जो की यथावसर प्रकाशित करने का हम प्रयत्न करेंगे। हमारे नवयुवक मातृभूमि की सेवा किस प्रकार कर सकते हैं इस प्रश्न का उत्तर बड़ी योग्यता और विद्वत्ता पूर्वक दिया गया है। मि० एन्ड्रूज़ के निम्न शब्द प्रत्येक भारतीय नवयुवक को अपने हृदय में अंकित कर लेने चाहियें—!

"अब यदि आप फिर मुझ से यह प्रश्न पूछें कि "मैं किस प्रकार मातृभूमि की सेवा करूं?" तो मैं आप से भी यही कहूंगा "तलाश कीजिए, आपको मार्ग मिल जावेगा, परमात्मा से प्रार्थना कीजिए आपको वह मार्ग अवश्य प्राप्त होगा, द्वार खटखटाइये वह अवश्य खुलेगा-" अपने शान्ति सदन को तलाश करें, जहां पर आप शान्ति पूर्वक 'परम सत्य' का अनुभव कर सकें।"

पाश्चात्य सभ्यता से भटकाए हुए हमारे युवक भाइयों के लिये यह उपदेश अवश्य सन् मार्ग का प्रदर्शक बन सकता है।

विलसन कालेज और धार्मिक शिक्षा

बम्बई के पास मिशनरियों का एक "विल्सन कालेज" है। इस में बाईबल सब विद्यार्थियों को अनिवार्य रूप से पढ़नी पड़ती है। इस पर कुछ विद्यार्थियों ने एतराज किया। कुछ सुनाई न होने पर वे श्रेणी में पढ़ने न गये जिसका परिणाम यह हुआ कि उन में से कुछ एक को कालेज से बहिष्कृत कर दिया गया। कालेज के अधिकारियों का यह कार्य किसी भी अंश में प्रशंसनीय नहीं है। हम नहीं समझते कि जब सारा जमाना उदार शिक्षा की ओर जा रहा है, उस समय इस प्रकार की साम्प्रदायिक और संकुचित शिक्षा देने की क्या आवश्यकता है? एक बात और है। यदि कालेज सरकार से तनिक भी सहायता न लेता तब हम शायद यह मान जाते कि वह जैसा चाहे अपने विद्यार्थियों को शिक्षा दे परन्तु जब वह सरकार से कुछ कम नहीं किन्तु पर्याप्त सहायता प्राप्त करता है—जो कि वास्तव में भारतियों का ही धन है-तब उसका कोई अधिकार नहीं है कि वह हमारे नवयुवकों की शिक्षा में बाधा डाले। यह भी समझ लेना चाहिए कि लड़कों को कालेज से निकालने में अन्तिम हानि कालिज को ही पहुंचेगी और जबरदस्त पहुंचेगी।

"भिक्षु"

सामयिक-विचार

मजदूरों का अनुकरण करो

यह समाचार देश में प्रसन्नता के साथ सुना जावेगा कि बम्बई के मजदूरों ने चाय का बहिष्कार कर दिया है, अर्थात् अब से चाय न पिया करेंगे। हमारे गरीब मजदूरों की रोजी का जो बहुत हिस्सा चाय तथा अन्य इसी प्रकार के व्यसनों में नष्ट होता है, उसे बचाने का यही एक ढंग है। आर्थिक दृष्टि के अतिरिक्त नैतिक दृष्टि से भी यह व्यसन बुरा ही है। हम श्रद्धा के २५ वें अंक में 'चाय' की हानियों पर पर्याप्त लिख चुके हैं, इस लिए उन्हें पुनः दोहराना व्यर्थ है। परन्तु चाय से बढ़ कर एक और व्यसन हमारे मजदूरों में फैला हुआ है। वह है शराब का। इस व्यसन के कारण देश को अत्यन्त हानि पहुंच रही है। हमें आशा है कि चाय की तरह कभी इसका भी अवश्य बहिष्कार होगा। मजदूरों द्वारा दिखाये गये इस मार्ग का अनुकरण शिक्षित दल को भी शीघ्र ही करना चाहिये।

"मूर्ख या धूर्त"

मशेद (ईरान) से लौटे एक अंग्रेजी अफसर ने वहां का वृत्तान्त लिखते हुवे कहा है कि 'मशेद का प्रत्येक शिक्षित पुरुष हमें मूर्ख या धूर्त समझता है।' नई प्रकार की सन्धियों और उप-सन्धियों के झंझट में ईरानियों को फंसाकर कार्य करने वाला इङ्गलैण्ड वस्तुतः क्या है—मूर्ख है या धूर्त यह अभी भविष्यत् के ही गर्भ में है। पर इस कथन से एक सचाई तो अवश्य टपकती है; और वह यह कि ईरान में अपनी सफलता के जिन गीतों को गाते गाते ब्रिटिश मन्त्री मण्डल नहीं थकता वस्तुतः वे बाह्य जगत् को लुभाने के लिए ही हैं।

"रोब" का भूत !

इसी अफसर ने आगे यह कहा है कि केवल "मशेद में ३० करोड़ रुपये [२ करोड़ पौंड] की राशी इस प्रकार से खर्च की गई थी कि सुगमता से बचाई जा सकती थी। अर्थात, यह सब प्रकार से व्यर्थ खर्च था। परन्तु वस्तुतः बात तो यह है कि ब्रिटिश सरकार को इस समय एशिया में "रोब" (Prestige) जमाने का भूत सवार हुआ है। इसी "रोब" की खातिर वह न केवल "मशेद" किन्तु सारे ईरान, ईराक और अरब में रुपये को पानी की तरह बहा सकती है और बहा रही है। कहां तक सफलता होगी— इस विषय में अभी हम चुप हैं।

क्या इङ्गलैण्ड असभ्य नहीं हो जावेगा ?

इङ्गलैण्ड की अवस्था इस समय अत्यन्त विचित्र है। कोयले के खनिकों के हड़ताल कर देने के कारण सब उद्योग धन्धों को बड़ा धक्का पहुंच रहा है। बेकारी बढ़ रही है। "खाली को शैतान नचाता है" इस कहावत के अनुसार बेकार मजदूर उपद्रव और क्रान्ति के लक्षण उपस्थित कर रहे हैं। 'डेली हैरल्ड' के सम्पादक मि० जार्ज लैन्सबरी ने कुछ दिन हुवे कहा था कि "क्रान्ति करवाने के लिए क्रान्ति के विचार फैलाने चाहियें।" मजदूर दल के दूसरे मि० लैमीअरी के कथन के साथ निकट सम्बन्ध रखते प्रतीत होते हैं। परन्तु कोयले की विपदा से अभी ब्रिटेन छुटकारा पाता नहीं दीखता था कि 'त्रिरूप सन्धि' के अनुसार रेलवे और बिजली वाले भी इन्हीं का साथ देने को तैयार हो रहे हैं। यदि उन्होंने भी हड़ताल करदी तो सभ्यताभिमानी इङ्गलैण्ड कुछ दिन के लिए तो, असभ्य हो ही जावेगा।

इतना मालूम है

ब्रिटेन की विपत्ति इतने पर ही समाप्त नहीं हो जाती। घर के आदमियों ने जहां सरकार के नाकों दम कर रक्खा है वहां पड़ोस में रहने वाले आयरलैण्ड में इसी भांति अशान्ति हो रही है। पुलिस की ओर से इतना उपद्रव होने पर आयरलैण्ड में यद्यपि अभी तक कोई स्थान "जलियां वाला बाग" नहीं बना तथापि "न्याय" और 'शान्ति" की मालिक सेना की क्रूरता, पाशविक अत्याचारों से कम नहीं है। इसी आयरलैण्ड के मामले को लेकर ही उस दिन की हाउस आव कामन्स में मि० आस्क्विथ और उसके दल ने सरकार पर "अविश्वास" का प्रस्ताव पेश कर दिया था। यदि प्रस्ताव पास हो जाता तो मि० लायड-जार्ज का मंत्री मण्डल तीन तेरह हो जाता और नई सरकार बनती। देश का सौभाग्य ही समझना चाहिये कि प्रस्ताव पास न हो सका। परन्तु इस से प्रस्ताव का महत्व कम नहीं हो सकता। इस से इतना तो स्पष्ट प्रतीत होता है कि हाउस आव कामन्स में एक ऐसा जबरदस्त दल है जो कि सरकार पर विश्वास न रखता हुआ उसके विरुद्ध प्रस्ताव उपस्थित करने का साहस कर सकता है। हमें कोई आश्चर्य नहीं होगा यदि किसी दिन यह दल सफल मनोरथ हो जावे। यह सब घटना चक्र बतलाता है कि इङ्गलैण्ड इस समय कैसा डांवाडोल हो रहा है।

पञ्जाब सरकार फिर

पिछले मार्शलला की घटनाओं से, प्रतीत होता है, भारत सरकार वा पंजाब सरकार ने अभी तक पर्याप्त शिक्षा नहीं ली है। हाल ही के समाचारों से ज्ञात हुआ है कि उसने फिर लाहौर, अमृतसर और शेखूपुरा के जिलों में "राजद्रोह सभा कानून" जारी कर दिया है जिसके अनुसार इन जिलों में कोई राजनैतिक सभा न हो सकेगी। दुनिया में स्वतन्त्रता और स्वाधीनता के विचार फैल रहे हैं और इधर हमारी सरकार अभी तक पुरानी लकीर को ही पीट रही है। न जाने हमारी नियामती सरकार को अकल में यह बात कब समाएगी कि इन दमनकारी कानूनों से कभी स्वाधीनता के विचार नहीं दब सकते।

सिक्खों ने क्या सुध ली !

सिक्ख अभी तक सरकार की कठपुतली बने हुए थे परन्तु खास कर लाहौर से लौट कर और सिक्खों और गुरुद्वारों के मालिकों से कोरा जवाब पाकर उन्हें भी सुध आगई यह देश के लिये अत्यन्त प्रसन्नता की बात है। लाहौर में होने वाली "सिक्खलीग" इस सुध का एक स्पष्ट और ताजा उदाहरण है। सरदार खड्गसिंह और सरदार सरदूलसिंह के भाषणों ने न केवल सिक्खों में अपितु पंजाबभर में नवजीवन फूंक दिया है। परमात्मा, इन भावों को दृढ़ रक्खे।

ओ३म्

श्रद्धां प्रातर्हवामहे श्रद्धां मध्यन्दिनं परि ।
'हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा को बुलाते हैं।'

श्रद्धा

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः ॥
(ऋ० मं० १० सू० १५१, मं० ५)
'सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धा! इसी समय (इस लोक में) हमको श्रद्धावान् करो।'

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | २१ कार्तिक सं० १९७७ वि० दयानन्दाब्द ३७ ता० ५ नवम्बर सन् १९२० ई० | संख्या २६ भाग १

हृदयोद्गार

सत्याग्रही वीर की प्रतिज्ञा

न डालो क्या सराकत से मुझे कुछ डर नहीं तन का
पड़ी सर पर तेज तलवारें लगी मैशीनगन भी हों ॥ १ ॥
हटाऊंगा कदम अब भी न पीछे प्राण के भय से
रहूंगा मैं डटा सच पर अगर तजना ये तन भी हो ॥२॥
है नश्वर देह ये सारे अनश्वर धर्म्म ही केवल ।
टलेगा प्रण नहीं मेरा अगर तजना ये तन भी हो ॥ ३ ॥
छुपाई क्या छिपेगी हम तुम्हारे पाशविक बल से ।
नहीं अन्याय देखूंगा अगर तजना ये तन भी हो ॥ ४ ॥
कहूंगा दूध को खालिस और पानी को निरा पानी
न दूंगा मैं इन्हें मिलने अगर तजना ये तन भी हो ॥ ५॥
नहीं आतमा यह कच्ची हैं जो जल्लाद खञ्जर से ।
मिटायेंगे वचन अपना अगर तजना ये तन भी हो ॥ ६ ॥
सतर से जान को लेकर हैं वीर अपनी हथेली पर ।
उन्हें परवाह फिर क्या हो अगर तजना ये तन भी हो ॥७॥
वचन से, कर्म से, मन से वे करते सत्य का पालन ।
करोड़ों जुल्म हो डर क्या अगर तजना ये तन भी हो ॥८॥

'केशवदेव'

— ० —

श्रद्धा का विशेषांक!

कम से कम २० पृष्ठ होंगे!

दीपमाला पर निकलेगा!!

अपने ढंग का निराला होगा!

क्यों कि इसमें, बाबू भगवान दास, भारत हितैषी श्री एफ एण्ड्रूज, मौलाना शौकत अली, पं० मोतीलाल नेहरू, प्रो० शिवराम एय्यर एम, ए० (भूतपूर्व सहायक सम्पादक "हिन्दू") और श्रीयुत "शर्मन्" इत्यादि २ देश के प्रसिद्ध नेताओं और लेखकों के—

महर्षि दयानन्द आर्यसमाज, गुरुकुल, हिन्दु-मुसलमान ऐक्य इत्यादि विषयों पर उत्तम २ लेख होंगे—

'क्योंकि इसमें श्रीयुत 'आनन्द" "निधि" "वागीश्वर" (विद्यालंकार) "प्राणी" "श्री हरी' "इन्दुकवि" इत्यादि प्रसिद्ध २ कवियों की कवितायें होंगी

प्रत्येक हिन्दू और मुसलमान को यह अंक पढ़ना चाहिये। प्रत्येक आर्य गृह में यह रखा जाना चाहिये। थोड़े ही अंक छपवाये जावेंगे इस लिए आर्यसमाज के मन्त्रियों को अभी से अधिक कापी की आज्ञा भेज देनी चाहिये।

एक अंक का दाम =)॥ होगा।

दीननाथ सिद्धान्तालंकार
उप सम्पादक "श्रद्धा"

— ० —

परमात्मने नमः ।

मानव धर्म शास्त्र की व्याख्या

पहिला अध्याय

स्वयंभुवे नमस्कृत्य ब्रह्मणे अमिततेजसे । मनुप्रणीतान्विविधान्धर्मान्वक्ष्यामि शाश्वतान् ॥ १ ॥

अर्थ—अनन्त तेजस्वी, स्वयम् सत् ब्रह्म को नमस्कार कर के, मनु के कहे सनातन विविध धर्मों का वर्णन, मैं, करूंगा।

टिप्पणी—पण्डित तुलसीराम स्वामी जी लिखते हैं:— "३० प्रकार के प्राचीन लिखे पुस्तकों में से १९ प्रकार के पुस्तकों में एक श्लोक अधिक पाया जाता है, और श्लोक संख्या उस पर नहीं है। इस से भी पाया जाता है कि वर्त्तमान में जो मनुस्मृति का पुस्तक मिलता है, यह मनुप्रोक्त नहीं, किन्तु अन्य का बनाया है।" यह वही अधिक श्लोक है।

यह श्लोक मङ्गलाचरण रूप से लिखा गया है। अनन्त तेज परमेश्वर के बिना किसी व्यक्ति विशेष में नहीं कहा जासकता, और बिना अन्य सहारे की स्थिति भी उसी की है। जीवात्मा अपने कर्मों का फल परमेश्वर के न्यायानुसार पाता है और प्रकृति का विकास तथा लीन भी उसी के नियमानुसार होता है—ये दोनों (जीव और प्रकृति) सत् हैं परन्तु स्वयम् सत् नहीं हैं। इस लिए यहां "ब्रह्मा" नामी व्यक्ति विशेष से मतलब नहीं है।

मनु कौन है? इस का आगे चल कर पता लगेगा।

मनुमेकाग्रमासीनमभिगम्य महर्षयः। प्रतिपूज्य यथान्यायमिदं वचनमब्रुवन् ॥ २ ॥

अर्थ—एकान्त में स्थित मनु के पास जाकर महर्षि लोग, उन का यथोचित प्रति पूजन कर, यह वचन बोले।

टि० धर्म शास्त्र की ठीक व्याख्या एकान्त में विचार करने से ही हो सकती है और उस (धर्म शास्त्र) का निर्माण भी निरुद्वावस्था में ही निष्पक्ष नियमों पर अवस्थित होना संभव है। वर्त्तमान सभ्य राष्ट्रों के लिए यह शैली अनुकरणीय है।

मनु ने महर्षियों का सत्कार किया, उन्हों ने श्रद्धा पूर्वक मनु महाराज का पूजन कर के प्रश्न किया। यह पुराना शिष्टाचार है। जहां श्रद्धा न हो वहां जिज्ञासा से प्रश्न नहीं हो सकता। और जब प्रश्न किया तो श्रद्धा पूर्वक उस के उत्तर पर मनन करना चाहिए।

भगवन्सर्ववर्णानां यथावदनुपूर्वशः। अन्तरप्रभवाणां च धर्मान्नो वक्तुमर्हसि ॥ २ ॥

अर्थ—हे पूज्यपाद! सम्पूर्ण वर्णों और वर्ण संकरों के धर्मों का यथावत् क्रम से हम लोगों को उपदेश करने में आप समर्थ हैं।

टि०—बिना श्रद्धा के प्रश्न नहीं होना चाहिए। महर्षियों को विश्वास था कि मनु महाराज वर्णादि के धर्मों के मर्मज्ञ हैं; इस लिए प्रश्न किया।

त्वमेको ह्यस्य सर्वस्य विधानस्य स्वयंभुवः। अचिन्त्यस्याप्रमेयस्य कार्यतत्त्वार्थवित्प्रभो ॥ ४ ॥

अर्थ—मनुष्य की चिन्ता और माप में न आने वाले अनादि परमात्मा के इस सारे विधान (वेद) के कार्य के यथार्थ प्रयोजन को जानने वाले, हे स्वयम् उत्पन्न हुए! आप एक ही हो।

टि०—स्वयंभुव का विशेषण यहां मनु महाराज के लिए आया है। मनु शब्द "मन्" धातु से बना है जिस के अर्थ मनन् करने के हैं। 'मनुष्य' शब्द भी उसी धातु से बना है। स्वयम्भुव मनु उस मनुष्य का नाम हो सक्ता है जो सृष्टि के आदि की अमैथुनी प्रजा में उत्पन्न हुआ हो। 'स्वयम्भुव' विशेषण "ब्रह्मा" के लिए भी आया है। 'ब्रह्मा' का अर्थ है—ब्रह्मनामो वेद का पूरा ज्ञाता। चारों वेदों के ज्ञाता को ब्रह्मा कहते हैं। इसी लिए "यज्ञ" के मुख्य पुरुष को भी ब्रह्मा कहते हैं। मुण्डकोपनिषद में लिखा है—ब्रह्मादेवानां प्रथमः सम्बभूव विश्वस्य कर्त्ता भुवनस्य गोप्ता। सब्रह्म विद्यां सर्वविद्या प्रतिष्ठामथर्वाय ज्येष्ठ पुत्राय प्राह। देवताओं (अर्थात् दिव्य सृष्टि) में प्रथम पुरुष ब्रह्मा हुआ—जिस ने सर्व श्रेष्ठ ब्रह्मविद्या का अपने ज्येष्ठ पुत्र (शिष्य) अथर्वा को उपदेश दिया और उस से आगे ब्रह्मविद्या की परम्परा चली। "विश्वस्य कर्त्ता" यह पद यहां भ्रम पैदा कर देता है परन्तु यतः ब्रह्मा जी स्वयं स्वयम में शरीरधारी हुए हैं इस लिए "विश्व" के अर्थ "सर्व धर्म" करें तो उन के प्रचारक आदि उत्पन्न देव ब्रह्मा जी अर्थात् धर्म शास्त्र के कर्त्ता मनु को ही मानना पड़ेगा। ब्रह्मा देहधारी अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न हुए थे। यह श्वेताश्वतरोपनिषत् के नीचे लिखे प्रमाण से भी सिद्ध है—

यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं, यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै। तं ह देवमात्म बुद्धिप्रकाशं मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये ॥ ६ ॥

मुक्ति के अभिलाषियों की शरण वही प्रकाशस्वरूप परमात्मा है जिस ने ब्रह्मा को पहिले रचकर उसे वेदरूपी ज्ञान का दान दिया।

स तैः पृष्टस्तथा सम्यगमितौजा महात्मभिः। प्रत्युवाचार्च्य तान्सर्वान्महर्षीञ्छ्रूयतामिति ॥ ५ ॥

अर्थ—इन महात्माओं से प्रश्न किए गए उस (मनुभगवान्) ने उन सब महर्षियों का सत्कार कर के कहा कि आप लोग सुनिये।

टि० प्रश्न कर्त्ता की ओर से जब श्रद्धा का प्रकाश होता है तो वक्ता को भी उन का सत्कार कर के ही उत्तर देना चाहिए; तात्पर्य यह है कि जिस सरलता से जिज्ञासा की गई है, उसी सरलता से उत्तर मिलना उचित है।

सर्वस्यास्य तु सर्गस्य गुप्त्यर्थं स महाद्युतिः। मुखबाहूरुपज्जानां पृथक्कर्माण्यकल्पयत् ॥ ६ ॥

अर्थ—उस महा तेजस्वी (परमात्मा) ने, इस सारी सृष्टि की रक्षा के लिए, मुख बाहु आदि स्थानी उत्पन्न हुओं के कर्मों को पृथक पृथक बताया।

ब्रह्मानन्द सन्यासी

श्रद्धा

गुरुकुल और महात्मा हंसराज

लाहौर में असहयोग की व्याख्या कर चुकने पर महात्मागांधी ने विद्यार्थियों से शंकाओं की निवृति के लिये कहा। कालिजों के विद्यार्थियों ने बहुत से प्रश्न किये, जिनके उत्तर महात्मागांधी ने दिये। उस प्रसंग में महात्मा जी ने गुरुकुल की भी चर्चा की और जो लोग समझते हैं कि शिक्षा का प्रबन्ध केवल सरकार ही कर सकती है, उन का अच्छा उत्तर दिया। देश भर में गुरुकुल ही एक ऐसा विश्वविद्यालय है जो केवल भारत वासियों के लिए हैं, और केवल भारतवासियों का। जातीय शिक्षा के प्रसंग में उसका वर्णन होना स्वभाविक था।

महात्मागान्धी के उपदेश का असर हुआ। लाहौर में असहयोग की आंधी आगई। कालिजों के विद्यार्थी इस परिणाम पर पहुंचे कि उन्हें देश की मानरक्षा के लिये कटिबद्ध हो जाना चाहिये। अन्य कालिजों की भांती डी·ए.वी. कालिज में असहयोग की सभा स्थापित हुई और उसने कालिज को सरकारी बन्धनों से छुड़ाने का यत्न जारी किया। डी.ए.वी. कालिज के होस्टल में विद्यार्थियों की एक सभा हुई जिस में उसी कालेज के एक ग्रेजुएट सभापति थे। सभा ने स्वीकार किया कि यदि कालेज के अधिकारी सरकारी यूनिवर्सिटी से सम्बन्ध न तोड़ें तो उसका बायकाट किया जाय। इस प्रस्ताव से डी·ए.वी. कालेज के संचालकों में बहुत खलबली पैदा हुई। उसे दूर करने लिये महीनों से चुप बैठे हुए महात्माहंसराज जी ने विद्यार्थियों को समझाने के लिये एक उपदेश दिया, जिस में आपने असहयोग का विरोध किया। असहयोग का विरोध करना कोई पाप नहीं। इसकी हमें शिकायत भी नहीं क्यों कि असहयोग का विरोध करने वालो की संख्या देश में कुछ कम नहीं। जो लोग ईमान्दारी से असहयोग को हानीकारक समझते हैं उन्हें पूरा अधिकार है-बल्कि उनका कर्तव्य है कि वह असहयोग के दोष दिखायें। परन्तु शोक यह है कि म० हंसराज जी ने अपने उपदेश में व्यक्तियों और संस्थाओं को रगड़ना आवश्यक समझा। आपने विद्यार्थियों को यह समझाने का यत्न किया कि आप महात्मागान्धी से बहुत पहले स्वदेशी हैं। आपने यह भी बताया कि गुरुकुल एक नाकामयाब संस्था है। यह सब युक्तियां देकर आपने विद्यार्थियों को कालिज को साथ देने के लिये प्रेरित किया।

यह समय घबराहट का है। घबराहट में आकर म० हंसराज जी ने जो व्याख्यान दिया है, हमें पूरी आशा है कि उन्हें स्वयं उस पर पछतावा होगा। यह व्याख्यान किसी ओर से भी उस उद्देश्य को पूरा नहीं कर सकता, जिस के लिये दिया गया है। और व्याख्यान देकर भी जनता को इस समय म० हंसराज जी यह विश्वास नहीं दिला सकते कि उनका स्थान राष्ट्र में महात्मागान्धी से ऊंचा है। तब यह सिद्ध करने का अपने मुख से यत्न करना अपने पक्ष को निर्बल करना और उपहास बनाना है। यह सूचित करता है कि महात्माहंसराज जी ने वह भाषण बहुत घबराहट की दशा में दिया था। गुरुकुल पर आपने जो चोटें की, वह भी उसी घबराहट का परिणाम था। गुरुकुल पर चोटें करने से कोई भी समझदार आदमी यह आशा नहीं कर सकता कि वह असहयोग की बाढ़ को रोक लेगा। गुरुकुल जिन आदर्शों और सचाइयो को लेकर उत्पन्न हुआ है, उनके प्रकाशित होने का समय आया है, अब भारतवर्ष उनके सामने सिर झुका रहा है। इस समय उन से टकराना अपनी हानि करना है, गुरुकुल को हानि पहुंचना सम्भव नहीं है। उसका स्पष्ट प्रमाण यह है कि म० हंसराज जी डी.ए.वी. कालेज के विद्यार्थियों को असहयोग में शामिल होने से न बचा सके।

इस अवसर पर ऐसा अनुदार व्याख्यान देकर महात्माहंसराज जी ने अपनी स्थिति को बहुत धक्का पहुंचाया। कहां तो यह आशा थी कि वह स्वतंत्रता डी. ए. वी. यूनिवर्सिटी की घोषणा दे कर अन्य कालिजों के सामने एक दृष्टान्त रखेंगे, और कहां उन्हों ने यह व्याख्यान दिया जो ऋषिदयानन्द के प्रतिनिधि भूत आर्यसमाज के लिये अत्यन्त लज्जा का उत्पन्न कर ने वाला है। देश को जो निराशा हुई है, उस की क्या कहें– आर्यसमाज को इस व्याख्यान से भारी चोट पहुंच ने का भय है। हम आशा करते हैं कि म० हंसराज जी का हृदय स्वयं अपने इस व्याख्यान के लिये शान्ति के समय में पश्चात्ताप करेगा। जिस समय देश के सामने जीने और मरने का प्रश्न हो, जिस समय धर्म रूपी आग की भट्टी में सब भेद भाव पिघल कर एक उच्च मनुष्यता उत्पन्न होने की आशा हो रही है, उस समय पुरानी और व्यर्थ दल बन्दीयों की याद कराकर गिरते हुए मकान को खड़ा रखने का यत्न करना कहां तक उचित है–इस पर जब महात्मा जी विचार करेंगे–तब वह भी हमारे साथ सह मत होंगे।

तप से हो मोक्ष मिलेगा

भारत वर्ष का बोझ सदा तप से ही हल्का होता रहता है। ऋषियों के तप का ही फल था कि मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र ने रावण का संहार किया। यह भी देव गण के तप का ही प्रभाव था कि कृष्ण ने कंस का बध किया। बीसियों अत्याचारी राजा हुए जिन का नाश तपो बल से हुआ। क्षत्रियों के हथियार थे–पर प्रजा का तप था। भारत ने जब कभी मोक्ष लाभ किया है तो तप से ही किया है।

भारत की ही क्या–यह सभी देशों की दशा है। कोई भी देश कष्ट सहन किये बिना, तप किये बिना, दुखों से मुक्त नहीं हुआ, न स्वतन्त्रता का सुख लाभ कर सकते हैं। जो लोग समझते हैं कि केवल व्याख्यान दे कर, प्रस्ताव पास कर के या शब्दों का आन्दोलन कर के सामाजिक या राज नीतिक उन्नति हो सकती है,

वह भूलते हैं। केवल शब्द में यह बल नहीं है। इतिहास पढ़े तो निश्चय हो जाता है कि सब प्रकार के मोक्ष का द्वार तप - कर्तव्य धर्म के लिये सहज है।

... शब्द प्रधान आन्दोलन का परीक्षा पूरा कर लिया है। गत ५० सालों में अनन्त व्याख्यान और प्रस्ताव हुए हैं - परिणाम यह है कि बीसियों तरह की दिखावटी तड़क भड़क होते भी हम वैसे ही प्रत्युत उस से भी अधिक बंधे हुए हैं जैसे पहले थे। हमारे शरीर पर कसी हुई जंजीरें प्रतिदिन कसती जाती हैं-ढीली नहीं होतीं। कारण यह कि शब्दों में जंजीरें ढीली कर ने की शक्ति नहीं है।

जंजीरें ढीली कर ने की शक्ति तप में हैं। यह प्रसन्नता की बात है और शुभ लक्षण है कि आखिर भारत के सामने भी रोग का ठीक इलाज पेश किया गया है। इलाज यह है कि भारत वासी यदि सामाजिक और राजनीतिक पराधीनता दूर करना चाहते हैं तो आवश्यक है कि वह आत्मा मन और शरीर से तप करें। कभी यह तप क्रियात्मक धर्म के रूप में पेश किया जाता है-कभी सत्याग्रह के रूप में और कभी असहयोग के रूप में। ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश में स्पष्ट लिख दिया था कि जब तक भारतवासी ब्रह्मचर्य और संयम का अभ्यास नहीं करते तब तक वह मोक्ष नहीं पा सकते। इस समय उसी अभिप्राय को सत्याग्रह आदि कई शब्दों द्वारा प्रकट किया जा रहा है। नाम कोई हो-पर बात यही है कि कोई जाति तप किये बिना पराधीनता के बन्धन नहीं काट सकती।

रोगी के सामने रोग का ठीक इलाज रख दिया गया है। बालक से लेकर बूढ़े तक सब भारत वासियों का कर्तव्य है कि वह अपने जीवन को तपो-मय बनावें। केवल ऐश और विलास का जीवन बिताने कोई जाति कभी संसार में सिर ऊंचा नहीं उठा सकती-यदि उठाना चाहेगी तो अधिक ज़ोर से गिरेगी। क्या भारत वासी इस सत्य को तन मन और कर्म से स्वीकार करेंगे? इस प्रश्न का उत्तर तो भविष्य देगा पर इस में सन्देह नहीं कि यदि स्वीकार करेंगे तो देश को सच्ची स्वाधीनता प्राप्त होगी-अन्यथा नहीं।

आर्यसमाजिक जगत्

स्वामी श्रद्धानन्द जी

रंगून के तार से ज्ञात हुआ है कि श्री स्वा० श्रद्धानन्द आनन्दपूर्वक वहां पहुंच गए हैं।

स्वामी जी दानापुर में

श्री स्वामी जी जाते हुए रास्ते में दानापुर के वार्षिकोत्सव पर भी ठहरे थे। वहां स्वामी जी के दो व्याख्यान हुए। पहले व्याख्यान का विषय था—वैदिक वर्ण व्यवस्था। इस व्याख्यान में रामायण तथा अन्य ऐतिहासिक ग्रन्थों के उदाहरणों से मनुष्य समाज का आदर्श बतलाया गया था। दूसरे व्याख्यान का विषय 'गुरुकुल शिक्षा प्रणाली' था। गुरुकुल की विशेषता में बताते हुऐ श्री स्वामी जी ने बतलाया कि भारत का भविष्य उसी शिक्षा प्रणाली के हाथ में है।

आर्यसमाज, लाहौर

एक सप्ताह और बीत गया—और नवम्बर आरम्भ हो गया। अभी तक आर्यसमाजिक समाचार पत्रों में आर्यसमाज लाहौर के उत्सव की तय्यारी के कोई समाचार नहीं छपने आरम्भ हुए। प्रतीक्षा है।

आर्य समाज में मेल का प्रस्ताव

पंजाब के आर्यसमाजों में न जाने कौनसी बुरी घड़ी में फूट का बीज बोया गया था। उसे दूर करने के लिए ज्यों २ यत्न किया जाता है, त्यों २ मामला बिगड़ता है। पिछले दिनों लाहौर के आर्य्य गज़ट ने महात्मा और कालिज पार्टि के मेल का प्रस्ताव उठाया था-उस समय जो लोग समझते थे कि मेल आवश्यक है, उन्होंने प्रस्ताव का समर्थन किया। परन्तु साथ ही बहुत से महानुभावों ने यह प्रश्न उठाया था कि जब तक ला० हंसराज जी मेल के पक्ष में आवाज़ न उठावें तब तक व्यर्थ की शुभ कामनाओं से कोई लाभ नहीं। इन पंक्तियों के लेखक ने उस समय भी लिखा था-और अब भी उसकी सम्मति है कि आर्यसमाज का भला यदि अभीष्ट है तो किसी भी एक व्यक्ति से चाहे वह व्यक्ति कितना ही बड़ा क्यों न हो—पक्ष या विपक्ष में होने की पर्वा न करके आन्दोलन जारी रखना चाहिए। म० खुशालचन्द्र जी पहाड़ पर चले गए और मामला ठण्डा पड़ गया।

म० हंसराज जी रंगस्थली में

प्रस्ताव अच्छा था। उसके ठण्डे पड़ जाने का मेल के सब पक्षपातियों को शोक था। अब वह फिर जागा है-पर शोक है कि बिल्कुल उल्टी तरह जागा है। म० हंसराज जी के उस व्याख्यान ने जो उन्होंने डी० ए० वी० कालेज के विद्यार्थियों के सामने दिया है। किस समाज हितैषी को इस बात का दुःख न होगा कि आर्यसमाज के वर्तमान सुनहरे कार्य पर कलंक की भांती लगाई हुई इस फूट को धोने का जो यत्न आरम्भ हुआ था वह इस प्रकार शीघ्र ही मर गया।

गुरुकुल वृन्दावन का कमीशन

यह ज्ञात हुआ है कि गुरुकुल वृन्दावन की दशा पर विचार करने के लिये जो कमीशन नियत हुआ था, वह रोक दिया गया है। युक्तप्रान्त की प्रतिनिधि सभा के प्रधान कुंवर हुकमसिंह जी ने कमीशन को लिख दिया है कि उसके कार्य से गुरुकुल को हानि पहुंच रही है, इस लिए कार्य बन्द कर दिया जाय। इस पर 'प्रकाश' की यह टिप्पणी बहुत कुछ बल रखती है कि सभा के स्थापित किए हुए कमीशन का कार्य रोकने का अधिकार प्रधान को न होना चाहिए। यह ठीक है कि कमीशन जब बिठाया गया है तो उसका कुछ परिणाम निकलना ही चाहिए। यदि कुछ शिकायत है तो यह कि कमीशन अपना कार्य शीघ्रता से पूरा नहीं करते। कमीशन के बनने से वैसी हानि नहीं होती, जैसी उसका कार्य लम्बा हो जाने से होती है। हमारे कमीशनों की बैठकें होती हैं—कभी कहीं जलसे पर, कभी किसी लम्बी छुट्टी में। महीनों पर महीने गुज़र जाते हैं—न कोई अधिवेशन होता है, न काम आगे चलता है। जो लोग असन्तोष प्रकट करने

के मार्ग ढूंढने चाहते हैं, उन्हें अभीष्ट वस्तु मिल जाती है। कोई लेख लिखता है—कोई पैम्फलेट छापता है। कहना यही रहता है कि कमीशन का ध्यान खेंचना है। ठीक यह है कि कमीशन निरन्तर एक मास बैठ कर दूसरे तीसरे महीने अपनी रिपोर्ट प्रकाशित कर दिया करे। यदि यह सम्भव न हो तो कमीशनों से लाभ की अपेक्षा हानि की अधिक सम्भावना रहती है। प्रतिनिधि सभाओं को चाहिए कि कमीशन की बनाई हुई रिपोर्ट को पेश करने की दो या तीन महीने की अवधि निश्चित कर दिया करें।

कांग्रेस पर प्रचार

यह जान कर प्रसन्नता हुई कि नागपुर में कांग्रेस के समय आर्यसमाज का भी प्रचार होगा। आशा है आर्यसमाज का प्रचार अपना महत्व कायम रखेगा। अमृतसर में कांग्रेस से दूसरे दूसरे समाज के प्रचार की धूम धाम थी, वह शान नागपुर में भी कायम रहनी चाहिये।

आर्य

आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब की ओर से आर्य नाम का मासिक पत्र निकाला गया है। प्रसन्नता है कि वह "आर्यभाषा में निकला है। शायद वह निकल भी इसी लिए सका कि वह आर्य भाषा में था। सभा की ओर से उर्दू पत्र निकालने की बात कई बार उठी पर इस आक्षेप के कारण गिरती रही कि पत्र न चल सकेगा। आशा है 'आर्य' चल निकलेगा, और आर्य समाज की सेवा करने में किसी से पीछे न रहेगा। सम्भवतः पत्र का एक साल के पीछे साप्ताहिक करना पड़े, उस दशा में सभा अपना प्रेस भी करलेती तो बहुत अच्छा हो।

भारतोदय

भारतोदय का फिर उदय हुआ है। अब के बागडोर पं० महादेव शास्त्री के हाथ में है। जिस नीति की घोषणा दी गई है उसे देखते हुए आशा पड़ती है कि भारतोदय से उदार पत्रों की संख्या में वृद्धि होगी। ईश्वर इस आशा को पूर्ण करें।

इन्द्र

—:०:—

विचार तरंग

(श्रद्धा के लिए विशेषतया प्रेषित)

मैं हंसता हूं

(१)

सब तरफ हंसी और प्रमोद का राज्य है, जिस चीज़ को देखता हूं हंसता ही पाता हूं। विशाल प्रकृति देवी अपने एक २ अंग से चहुं ओर मुस्करा रही है। ऊपर आकाश, कभी श्याम मेघों से आवृत, कभी नील निर्मल और कभी तारों से जटित, अपनी छवि में आठों पहर शोभायमान है। भूतल पर दिगन्तों तक हरे खेत लहरा रहे हैं, इधर पहाड़ उचक रहे हैं, उधर चमकीली नदियां उछलती कूदती दौड़ रही हैं। कहीं पक्षिओं के गीत, हिरणों की सांयकालिक छलांगें, और भौंरों के नाच हैं, और कहीं हरी पोशाक में सजे हुवे तरुगण अपने रंग बिरंगे फूलों से प्रफुल्लित मंद हास कर रहे हैं। आहा! आनन्द खुशी और हंसी की लहरों में, यह देखो, कैसे सारा संसार समुद्र उमड़ रहा है। यह अद्भुत हास्य सम्मेलन न जाने किस अज्ञात काल से हो रहा है।

समय था जब अपने अधिक बालकपन के दिनों में मुझे यह विशाल हास्य भयानक हंसी प्रतीत हुआ करती थी और मैं समझता था कि ये सब चारों ओर के हंसने वाले निरन्तर मुझ पर ही हंसा करते हैं, इस लिए तब मैं नीचे मुख किये सदैव उदास और दुःखी बना रहता था।

किन्तु 'ये सब तो मुझे हंसाने के लिए ही हंस रहे हैं, और मुझे भी इनके साथ मिल कर हंसना चाहिये' यह मंगल संदेश जब से मुझे पहुंचा है, तब से मैं हंसता हूं और तब से हंसा ही करता हूं।

× × × ×

(२)

यह एक विचित्र जीवित जागृत महान अद्भुतालय है, जिस में रक्खी हुई एक २ चीज़ (एक २ कण) बड़ी ही अद्भुत हंसाऊ है। मैं यहां की किसी भी चीज को ध्यान से देखता हूं (या जानता हूं) तो बिना हंसे नहीं रहा जाता। कहीं होमरूल आन्दोलन, कहीं युद्ध पिपासिनी पर सर्वस्वसमर्पण—एक ओर योग निद्रा में लीन होना, दूसरी ओर अज्ञान की घोर रात्रि में चादर तान सोना—इधर शोर शराबा, उधर श्मशान का सन्नाटा। दिन रात मैं खिल खिलाता रहता हूं। मुझे मालूम पड़ने लगता है कि मुझे यहां कुछ और नहीं करना है, मैं इस अद्भुतालय में केवल हंसने के लिये ही भेजा गया हूं, यदि मेरा इस जगत् में 'मिशन' है।

लोगों ने योग से, रसायनौषध पीने से, गंगा नहाने से, मंत्र जपने से तथा और भिन्न २ विधियों से मोक्ष में पहुंचने के प्रबन्ध किये हैं, परन्तु मुझे तो मालूम पड़ता है कि यहां की चीजों को देख हंसते २ ही मेरे लिए एक दिन मोक्ष के किवाड़ खुल जायंगे और पास पोर्ट मिल जायगा।

× × × ×

(३)

जब कोई कहता है कि इसकी 'फिलोसफी' बतलाओ, तो मैं हंस देता हूं। दूसरा कविता बनाने को कहता है पर मैं हंस देता हूं। सचमुच हंस लेने के सिवाय मुझे कोई और कविता बनानी या 'फिलासफी करना' नहीं आता।

× × × ×

(४)

एक कहता है कि तुम्हारे 'विचार' सारी दुनिया से निराले हैं, मैं मन ही मन हंसता हूं।

वह ज़ोर से कहता है कि बतलाओ कि तुम्हारी ये विचित्र बातें कैसे सत्य हैं, मैं आज्ञा पालने के लिये हंसने लगता हूं।

यदि वह बलात् शास्त्रार्थ पर उतर आता है, तो मैं उसे कैसे समझाऊं?। ईश्वर की कृपा से मैं निरुत्तर रह जाता हूं और तब खूब जी खोल कर हंसता हूं।

× × × ×

(५)

मैं अपने पर हंसा करता हूं। बड़ी हंसी आती है, जब सोचने लगता हूं कि 'मैं क्या चीज़ हूं', 'कौनसी बला हूं' किधर की चिड़िया हूं' तब पेट भर कर देर तक हंसता रहता हूं। मुझे इस हंसने पर भी हंसी आती है। अवश्य ही यह हंसी अनन्त कालिक हो जाया करे, इस पर आवर्त का बिन्दु लगजाय यदि, दुनिया में इसे रोकने के लिये अन्य [illegible] न हुआ करें।

× × × ×

वास्तव में मैं सदैव हंसता हूं। मैं निरन्तर हंसता ही रहता हूं। हे चारों ओर की चीज़ो! जिस समय तुम मुझे हंसता न पाओ या दुःखी और उदासीन देखो तो यह न समझो कि मेरे अन्दर का हंसी का दीपक बुझ गया है। निःसंशय तुम यदि ज़रा इधर उधर से झांक कर देखोगे तो इसका प्रकाश तुम्हें ज़रूर मिलेगा। सच तो यह है कि बाहर के आपद् और कष्टों की आंधी के झोंकों से इसे बचाने के लिये ही मैं स्वयं इसे उस समय छिपा लिया करता हूं—केवल ढक लेता हूं। वास्तव में मैं सदैव ही हंसता हूं।

यह सत्य है कि देर तक अन्य मनस्क रहने से इस दीप की बत्ती कभी २ नीची हो जाया करती है परन्तु ध्यान आते ही मैं तुरन्त इसे ऊंचा कर लेता हूं और एवं मेरा दीपक सदैव जलता ही रहता है। मेरी हंसी कभी बन्द नहीं होती। मैं निरन्तर हंसता ही रहता हूं।

× × × ×

सृष्टि के गहन रहस्यों का जब कुछ नहीं सूझ पड़ता, तो न जाने क्या सोच मैं कहकहा मार कर हंसने लगता हूं। जिस दिन प्रातः से कोठरी में बन्द क़लम से जुटे रहने पर भी शाम को देखता हूं कि चिन्ता भार रत्ती भर भी नहीं घटा सका हूं, तो विवश कापी बन्द कर देता हूं और सब कुछ भुला हंस पड़ता हूं। मैं हंसने के सिवाय और क्या करूं, जब ख़बर आती है कि 'मेरी सारी ज़िंदगी का कमाया धन नष्ट हो गया' मेरा प्यारा भाई आज दुनिया से चल बसा'।

मुझे तो हंसी छूटती है जब मैं देखता हूं कि वह घोर पाप मैंने आज फिर कर डाला, जिसके न करने के लिये पहिले हज़ारों बार दृढ़ प्रण कर चुका हूं।

× × × ×

मेरे हंसने में कोई भेद नहीं आता, जिस समय पीड़ित बालकों और अबलाओं के आर्तनाद तथा मर्म भेदी आक्रन्दन मेरे कानों को फाड़ते हैं। मैं हंसता ही जाता हूं जब कि उन ख़ून चूसी अत्याचारों को पढ़ता हूं जो कि विदेशी शासकों ने अपने अधीनों पर क्रूरता से किये। मैं कराहते हुवे रोगी पर पंखा झलता हुवा मन ही मन हंसता हूं। मुझे खूब हंसी आती है जब युद्ध में पड़े सिसकते हुवे और छटपटा कर मरते हुवे लोगों का हाल सुनता हूं।

× × × ×

कनखल में एक अरथी निकलती देख मैं ज़ोर से हंस पड़ता, यदि चारों ओर के साथिओं का एक दम ध्यान न आजाता।

और भी हंसी आने लगती है जब ध्यान में लाता हूं कि मैं भी एक दिन ऐसे ही अरथी पर पड़ा हूंगा। हां हां, अपनी मृत्यु के सायंकाल को भी मैं हंसना न भूल सकूंगा। मरने बाद भी मेरे दांत निकले होंगे। नहीं नहीं, मेरी तो चिता की राख से भी हंसी के फूल झड़ेंगे, जिन्हें लेने के लिये लोग, कभी यदि चाहेंगे तो, मेरी राख ढूंढेंगे।

× × × ×

इस सर्वव्यापी हास्य के स्रोत! हे सब को हसाने वाले! हे सर्वमय! तेरे अनगिनत दानों में से मैंने आज इस एक हंसी के दान को पहिचाना है और अपनाया है। हे दाता! इस से मुझे कभी वियुक्त न करना। मुझे अयोग्य देख चाहें अन्य सब दान भले ही मुझ से छीन लेना परन्तु हे करुणानिधान, इस हंसी दान को तो, अपने स्मृति चिन्ह के तौर पर ही सही, इस गरीबदास के पास रहने ही दीजिये और अपराधों के दण्ड में मुझ से सारी समर्थ्य हरण कर लेने पर भी इतनी, केवल इतनी मात्र सामर्थ्य, (और कुछ चाह नहीं है), छोड़ देना कि जिस से आप की दी हुई इस हंसी को प्रकट कर सकूं, जिस से अपने पापों और अधर्मों के बदले आई हुई आपदाओं और क्लेशों में मैं मुस्कुरा सकूं—इस तेरी भेंट द्वारा उन्हें पवित्र कर सकूं—इस तेरे उपहार पुष्प के संसर्ग से अपने सारे कंटीले रस्ते को सुरभित कर सकूं। यही नाथ, एक प्रार्थना है। इस लोक में, परलोक में, वर्षा में या धूप में, दिन हो या रात यह तेरा उपहार पुष्प इस तुच्छ पौधे पर सदैव विकसित रहे; कभी भी म्लान न हो। हे प्रभो! कभी भी म्लान न हो।

अर्जुन

—:०:—

गुरुकुल-जगत

गुरुकुल कांगड़ी

(गुरुकुल कार्यालय से प्राप्त)

सत्र आरम्भ होगया। पढ़ाई नियम पूर्वक चल रही है। घड़ी की सूइयों तरह हरेक व्यक्ति समय पर कार्य करने में लगा हुआ है।

ऋतु बहुत उत्तम है। परिणाम यह है कि डाक्टर जी को पढ़ाने के सिवा दूसरा काम नहीं के बराबर है। ब्रह्मचारी नीरोग और प्रसन्न हैं।

श्री आचार्य जी गुरुकुल के प्रचारक के लिये बर्मा गये हैं। उनके वहां आनन्द पूर्वक पहुंचने का तार आगया है। आशा है शीघ्र ही वहां के कार्य के समाचार भी गुरुकुल प्रेमियों को सुनाये जा सकेंगे।

खेलें नियम पूर्वक आरम्भ हो गई हैं। उन में एक नया जीवन पड़ने की आशा है। ब्रह्मचारियों का खेलों में उत्साह पूर्ण है।

एक त्यौहार हो गया दूसरे की तैयारी है। दशहरा कई सालों के पीछे इस उत्साह से हुआ। उपाध्यायों और अध्यापकों ने भी खेलों में भाग लिया। विद्यालय और महाविद्यालय के परस्पर सान्मुख्य खूब मनोरंजक रहे। बाहिर के कई दलों को निमन्त्रण दिया गया था पर कोई न आसका। विजय दशमी के सभा में राम के जीवन पर महत्व पूर्ण भाषण हुए।

यात्री लोग बड़ी संख्या में आरहे हैं पर कठिनाई है गुरुकुल तक पहुंचने की ठेकेदार महाशय ने पुल तो क्या अभी कनखल के सामने किश्ती लगाने की भी कृपा नहीं की। चांदीघाट से ही जाना पड़ता है, पर जिनका गुरुकुल से प्रेम है, उन्हें रास्ते की लम्बाई नहीं दीख पड़ती। जहां चाह वहां राह। जाने वाले जाते ही हैं चाहे रास्ते में खाई या पर्वत ही क्यों न हो; विघ्नों की पर्वा नहीं करता। इसी प्रेम के बल पर गुरुकुल आज तक चला और चलता रहेगा।

—:०:—

गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ

ऋतु बड़ी सुहावनी है न बहुत गर्मी न बहुत सर्दी है। ब्रह्मचारियों का स्वास्थ्य इस समय बहुत अच्छा है। चिकित्सालय में सिवाय दो तीन साधारण ज्वर वाले रोगियों के कोई विशेष रोगी नहीं।

छुट्टियों पर गये हुए सब अध्यापक तथा अन्य कर्मचारी विजय दशमी से पूर्व ही लौट कर आगए थे। नई ऋतु के साथ २ गुरुकुल के भी सारे कार्य नये जोश और नये उत्साह से आरम्भ हो गए हैं। अगामी सत्र का स्वागत पहिले ही विजयदशमी ने किया अतः आशा है कि सारे भावी कार्य विजय में ही समाप्त होंगे।

विजयदशमी का त्योहार इस बार अपूर्व समारोह से गुरुकुल में मनाया गया। विजयदशमी को सफल और उत्तम बनाने के लिए ब्रह्मचारियों ने तथा अध्यापक वर्ग ने विशेष उत्साह से भाग लिया। ब्रह्मचारियों के प्रत्येक खेल में अध्यापकों ने भी हाथ बटाया। जिन्होंने आजतक कभी क्रिकेट का बैट न पकड़ा था उन्हें भी विजय दशमी के विजयोत्साह ने मैदान में उतार दिया और ऐसे उत्साह से उतारा कि सचमुच विजय लाभ कर के ही मैदान छोड़ा।

१९-१०-२० से २२-१०-२० तक यह त्योहार मनाया गया। क्रिकेट, फुटबाल हाकी, बेसबाल, छिक्का, कबड्डी, गेंद फेंकना, दौड़, सेक दौड़, सेक कूद आदि सारी खेलें बड़े उत्साह से हुई। इन खेलों में विशेष उत्साह और जोश और भी बढ़ गया जब ब्रह्मचारियों को मालूम पड़ा कि अच्छे खेलने वाले को वैयक्तिक-रूप से तथा विजियन दल को समष्टि रूप से पारितोषिक भी मिलेंगे।

२१-१०-२० की रातको ऊपर की ३ श्रेणियों का लंका विजय हुआ। २२-१०-२० को सायंकाल वृहद् हवन के पश्चात् श्र. मुख्याधिष्ठाता के सभापतित्व में रामदर्शन सभा हुई जिस में ब्रह्मचारियों और अध्यापकों के कई अच्छे २ व्याख्यान हुए। बीच २ में ब्रह्मचारियों की और गुरुकुल के अनन्य भक्त मु० रामसिंह जी की सुमधुर गीतियां भी होती रहीं। ब्र. आनन्द स्वरूप ५म श्रे० पं० वासुदेव जी विद्यालंकार (जो इन्हीं दिनों गुरुकुल में आगरे से आते हुए पधारे थे) प० बालकृष्ण जी शास्त्री मुं० रामसिंह जी तथा पं० मदनमोहन जी के भाषण विशेष शिक्षा प्रद थे। सभा के पश्चात् सर्व ब्रह्मचारियों अध्यापक वर्ग तथा अन्य कर्मचारियों का सहभोज हुआ। अभी तक भी विजय का रंग हलका न पड़ा था। सहभोज के बाद वहीं बैठे २ ब्रह्मचारियों में से प्रत्येक प्रान्त के ब्रह्मचारी खड़े हो गये और अब श्लोक शास्त्रार्थ का मैदान गरम हुआ। अपने २ प्रान्त की लज्जा रखने के लिये तथा विजय का सेहरा अपने प्रान्त के माथेपर बांधने के लिये प्रत्येक प्रान्त के ब्रह्मचारी ने लज्जा को त्याग कर मधुर स्वर से श्लोक बोलने आरम्भ कर दिये। पहिले गुजरात प्रान्त के श्लोक आरम्भ हुए फिर यू.पी. उसके बाद राजपूताना, फिर पंजाब फिर बंगाल और सबके अन्त में सुनते सुनाते दिल्ली वालों को भी जोश आगया किन्तु उसदिन सेहरा ब्र० चिरञ्जीनन्द ५ म श्रे० के प्रयत्न से राजपूताना के ही माथे बांधा गया। ब्रह्मचारियों का तो शास्त्रार्थ समाप्त हुआ अब ब्रह्मचारियों के कहने पर अध्यापकों को भी अपने २ प्रान्त के लिये अड़ना पड़ा। अन्त में पंजाब और यू.पी. रहे बराबर गरह आखिर समाप्ति न होते देख कर बाधित हो कर उठाना ही पड़ा। इस तरह कोई ९½ बजे के बाद विजय दशमी का त्योहार अपने विजय के चिन्ह और गुरुकुल वासियों में नवीन उत्साह को छोड़ कर शान्त हो गया जहां त्योहार की सफलता में समष्टि रूप से सभी भागी है वहां इसका विशेष श्रेय श्री मुख्याध्यापक पं० रामचन्द्र जी विद्यालंकार को ही दिया जा सकता है क्यों कि वे इस में विशेष उत्साह से भाग लेते रहे।

२३-१०-२० को खेलों से थक जाने के कारण विद्यालय बन्द रहा इस दिन ब्रह्मचारियों ने पूर्ण विश्राम किया। २४-१०-२० से फिर नियम पूर्वक पढ़ाई नये जोश और उत्साह से आरम्भ हो गई है।

विजय दशमी में वैयक्तिक रूप से जिन्हों ने पारितोषिक प्राप्त किये हैं उनको दिवाली पर पारितोषिक दिये जावेंगे।

इस समय कुल में सर्वथा शान्ति है। मालूम पड़ता है विजय दशमी की राम की धर्म विजय के साथ २ विघ्न राक्षसों ने भी विजय के पैरों पर सिर झुका दिया है।

अभी तक नयी इमारतों का काम बन्द था अब पुनः आवश्यक कार्य आरम्भ करा दिये गये है। अभी तक पुस्तकालय भवन न होने से पुस्तकें न मंगाई जा सकी थी किन्तु अब पुस्तकालय के नये भवन का बनाना आरम्भ हो चुका है। उक्तभवन बनजाने से बड़ा सुभीता होगा।

अन्य आवश्यक कर्मों के साथ २ गौशाला की विशेष चिन्ता है। गौशाला का कोई मकान अभी तक न होने से सर्दियों के दिनों में गौओं को बड़ा कष्ट होता है। अनेक सज्जनों ने गुरुकुल में गौ दान दी है। क्या कोई सज्जन ऐसे न होंगे जो गौओं को सर्दी से बचाने के लिए गौशाला बनवादें। हमें आशा है कि दिल्ली के हिन्दू दानी गौओं के इस दुःख पर अवश्य ध्यान देकर शीघ्र इस दुःख को दूर कर के पुण्य के भागी होंगे।

प्रियव्रत
स० मुख्याधिष्ठाता

ग्राहकों को सूचना

दिवाली के उपलक्ष में अगले सप्ताह "श्रद्धा" की छुट्टी रहेगी। ५ मार्गशीर्ष शुक्रवार के दिन हम विशेषांक के साथ पाठकों की सेवा में उपस्थित होंगे। पृष्ठों की कमी इस अंक में पूरी करदी जावेगी।

दीनानाथ सिद्धान्तालंकार
उप सम्पादक
"श्रद्धा"

राष्ट्रीय गीत।

राष्ट्रीय गीत के सम्बन्ध में, इधर बहुत विवाद उठ खड़ा हुआ था। उस से प्रकट यह होता है कि हिन्दी-संसार के कुछ कविगण तथा हितैषी, निर्धारित गानों की अपेक्षा अच्छे गानों की आवश्यकता समझते हैं, और उन्हें यह भी विश्वास है कि, हिन्दी-संसार में ऐसे कुछ कवि हैं जो सर्वांग-पूर्ण राष्ट्रीयगान लिख सकते हैं। हमें इस से अधिक कुछ नहीं चाहिए। यदि, और अच्छे गान बनाये जा सकते हैं, तो उनका भी हम हृदय से स्वागत करने के लिए तैयार हैं। इस लिए, हम वर्तमान विवाद अलग करने के लिए, यह सूचना सहर्ष प्रकाशित करते हैं कि, अब की बार बसन्त पञ्चमी तक जो कवि महोदय राष्ट्रीय गान लिख करभेजेंगें, । उन में से सर्वोत्तम लेखक को एक हजार रुपये की विनीत भेंट और एक स्वर्ण-पदक सादर समर्पित किया जायगा। अभी तक जिन सज्जनों की कविताएं आई हुई हैं, अथवा जिन्हें पुरस्कार मिल चुका है वे अपनी वही कविता या कोई अन्य कविता भी भेज सकते हैं। आये हुए गानों की जांच विद्वानों की एक समिति द्वारा कराई जायगी जिन के नाम पूर्व ही प्रकट कर दिए जांयगे। प्रत्येक गान भेजने वाले महाशय को यह अधिकार है कि वह एक कविता-मर्मज्ञ विद्वान का नाम लिख भेजे जिसे कि वे उस निर्णय-समिति में सम्मलित कराना चाहते हों, इन आये नामों में से बहुमत प्राप्त दस सज्जन उस निर्णय समिति में रखे जावेंगे। यदि गीतों में निर्णय-समिति के बहुमत से दो गीत एक ही योग्यता के समझे जावेंगे तो पुरस्कार समान भागों में बांट दिया जावेगा। किन्तु स्वर्ण-पदक पृथक २ उपरोक्त पुरस्कार प्राप्त प्रत्येक लेखक को दिये जावेंगे। अन्त में हिन्दी काव्यों से हमारी पुनः प्रार्थना है कि, वे इस बार गीत लिख कर भेजना अपना कर्तव्य समझें, और ऐसा ही समझ कर शीघ्र अपनी २ रचनायें भेजें।

विनीत

वेनीमाधव खन्ना,

सुद्धादेवी कानपुर

श्रीस्वामी श्रद्धानन्द जी को पटना के दैनिक अंग्रेजी पत्र "सर्चलाइट" से भेंट"

प्रश्न-आपकी असहयोग के विषय में क्या सम्मति है?

उत्तर-मैं अपनी सम्मति समाचार पत्रों में प्रकट कर चुका हूं। मैं महात्मा गान्धी जी के प्रस्ताव का समर्थक हूं परन्तु उनके विदेशीय ब्रिटिश वस्तुओं के बहिष्कार सम्बन्धी भाग से मैं सहमत नहीं हूं, क्योंकि यह क्रिया में नहीं लाया जासकता स्वयं महात्मा गान्धी जी भी इस के अनुसार कार्य नहीं कर सकते।

प्रश्न--आपकी सम्मति में यह आन्दोलन सफल होगा वा नहीं?

उत्तर-सफलता का होना सन्दिग्ध है। मेरी सम्मति में दस सच्चे आदमियों का ईमानदारी से इसके अनुसार कार्य करना इसकी सफलता का अर्थ है। यद्यपि इसकी असली सफलता नागपुर की कांग्रेस में ही पता लगसकेगी तथापि मेरी सम्मति में यह भी सफलता ही है कि अब लोग स्वावलम्बित होने के लिए तय्यार होगए हैं। परन्तु पूर्ण सफलता प्राप्त करने के लिए हिन्दूजनता को अपने अछूत भाइयों को अपने में मिलाना आवश्यक है। इस समय जाति को अपने ७ करोड़ अछूत भाइयों को उठाना चाहिए इसके बिना असहयोग केवल मंत्र दिखावा मात्र ही होगा।

प्रश्न-क्या आपकी सम्मति में इस असहयोग द्वारा सरकार को पेरेलाइज़ किया जासकता है? और क्या इसके द्वारा १२ महीनों में हम स्वराज्य प्राप्त करलेंगे।

उत्तर-इस से सरकार पेरेलाइज़ हो या न हो परन्तु मेरी सम्मति में शिक्षा को अपने हाथ में लेने तथा पञ्चायतों को पुनः स्थापित करने से सरकार निकम्मी होजायगी। यद्यपि सरकार अपनी हार नहीं मानेगी तथापि साधारण जनता में आत्माभिमान का भाव अवश्य ही जागृत हो जायगा। यदि स्पेशल कांग्रेस द्वारा स्वीकृत प्रस्तावों को पूर्ण रूप से पाला जावेगा तो १२ महीने क्या १२ दिनों में प्राप्त होसकता है।

प्रश्न आपका नयी कौन्सिलों के विषय में क्या विचार है? क्या यह सम्पूर्ण स्वराज्य प्राप्ति का साधन हो सकेगी?

उत्तर- बहुत समय हुआ इस विषय में मैं अपनी सम्मति प्रकट कर चुका हूं। जब तक रौलेट एक्ट से अत्याचारी कानून रहेंगे जब तक वायसराय को भावी मिनिस्टरों के अधिकारों को निकम्मा करने का अधिकार होगा तब तक ये रिफार्म किसी काम के नहीं होंगे। जब तक शासन सभा व्यवस्थापक सभा द्वारा नहीं चुनी जाती और इसके प्रति उत्तरदायिनी नहीं होती तब तक ये सुधार भारतवर्ष के लिए किसी काम के नहीं हैं। मेरी सम्मति में वह ब्रिटिश जनता जो कि गत ८०० वर्षों से अपने नीति चक्रों के कारण संसार के राजनैतिक दल बल में प्रसिद्ध है भारतवासियों को कुछ नहीं देसकती। भारतीयों के लिए सुरक्षित रस्ता यही है कि वह भारतीय जनता की सम्मिलित आवाज के अनुसार निर्धारित सम्पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति के लिए यत्न करना चाहिए।

प्रश्न-आपका हंटर कमेटी रिपोर्ट के विषय में क्या विचार है।

उत्तर-सारी रिपोर्ट का अभिप्राय ब्रिटिश सेना को अधिक शक्त कर प्रति जिले में इसको संगठित कर विद्रोहियों को दबाना है; सरकार का कमिटी से सहमत होकर इसके अनुसार कार्य करना बड़ा अनिष्ट होगा इसके कारण भारतियों में असन्तोष और भी बढ़ जावेगा। यदि आज भी ब्रिटिश डोमिनियन में असली राजनैतिक हों गे तो भारतीय सरकार इसके अनुसार कार्य करने से पूर्व अवश्य ही विचार कर लेगी।

प्रश्न -लार्ड सिन्हा की नियुक्ति के विषय में आपका क्या विचार है।

उत्तर- मैं विपनचन्द्रपालादि से सहमत नहीं हूं। मेरी सम्मति में बिहारियों को चाहिए कि वे लार्ड सिन्हा को पूरा मौका दें। परन्तु लार्ड सिन्हा की नियुक्ति से यह अभिप्राय निकालना कि भारतीयों को कोई नया अधिकार मिल रहा है ठीक नहीं है।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिए छपा।

लीला

जीवन का मतलब तुम समझो, और जगत को समझाओ।
क्षणभंगुर नश्वर है सब कुछ, यह हमको मत बतलाओ।
पानी के बुल बुले, घड़ी भर, उठते हैं फिर मिल जाते।
हम अपनी यह नाश-शीलता, कभी नहीं मन में लाते॥
जीवन का आलोक फैल, जाता है जब नभ मण्डल में।
उसकी अल्प ज्योति धारण कर, लेते हम वक्षस्थल में।
हम सब जग के सुख में मिल कर करते क्षणभर खूब विनोद
कुछ परवाह नहीं, कब तक यह रहे हमारा मोद प्रमोद॥
है ऊपर अनन्त, नीचे भी है—अनन्त का ही आभास।
उस अनन्त के ही ऊपर हम सब बुद्‌बुदों का होता वास।
उठती है भीषण तरंग, सागर भी हो जाता है क्षुब्ध।
पर हम निर्भय नृत्य किया, करते हैं, हो जाते हैं मुग्ध॥
खेल कूद कर दो पल होगा, फिर तब तो होगा अन्त।
उस अनन्त के ही भीतर, हम हो जावेंगे लीन तुरन्त।
इस भव सागर में मरने--जीने का हमको खेद नहीं।
उस लीलामय की लीला, में हो सकता है भेद कहीं॥

इलाहाबाद } पद्दुमलाल पन्नालाल
बख्शी

—:०:—

विचार तरंग

दयानन्द-दर्शन

(लेखक "श्रद्युत शर्मन")

१

ऋषे! तुम्हें केवल लंगोटी धारी विशाल देह देखकर मैं पहिले पहिल बड़ा ही आश्चर्यित हुआ क्यों कि जब मैं सुना करता था कि दयानन्द नाम का एक 'रिफार्मर' भारत में लेकचर देता घूमता है तो मैं यही समझता था कि दयानन्द कोई कोट पतलून धारी, सभ्यता पूर्वक कालर नकटाई सजाये, नाजुक देह वाला 'जेन्ट लमैन, होगा, न कि ऐसा ही दूढाँग और नग्न। [illegible] तु अब अपनी उस समझ को याद [illegible] मैं [illegible] में डूब जाता हूं। हे महात्मन्? तुम्हारा सदुपदेश पाकर अब मैंने वह [illegible] सभ्य कारखानों का [illegible] रंगीन चश्मा उतार दिया है और अब [illegible] देख सकता हूं कि सच्चे सुधारक का रूप सचमुच एक लंगोटी [illegible] हो है जिसके कि शरीर [illegible] और आत्मा मन [illegible] और तेज से परिपूर्ण हैं"।

२

सब का हृदय से कल्याण चाहने वाले! सत्यवीर! मैं कभी २ बड़े विस्मय से सोचने लगता हूं कि तुम्हारा निराभरण देह जो कि शरीर रक्षक (Body guards) या लोह कवच तो दूर रहे किसी चलते से ढकने से भी रक्षित नहीं है तुम्हारे अनन्त (अज्ञानकृत) शत्रुओं से निरन्तर फेंके हुए नानाविध तीरों की मार कैसे सहता होगा। किन्तु जब दूसरी तरफ तुम्हारे उस ब्रह्मचर्य के कठोर तपों का ध्यान आता है जो कि तुम सम्पूर्ण जीवन करते रहे तो मेरे सब संशय विलीन हो जाते हैं और कुछ भी विस्मय नहीं रहता।

३

"तुम संसार के सब पापों दोषों, बुराइयों के विरुद्ध अकेले खड़े हुए थे। तुम्हारा साथ देने वाला उस समय कोई अन्य सहायक न था" ऐसा कहते हुवे मेरा हृदय भय से कांप जाता है कि कहीं तुम्हारे वे अदृष्टि गोचर महान् सहायक अप्रसन्नीकृत न हो जायं; क्योंकि यदि मुझे दिव्य दर्शन प्राप्त हो तो मैं देख सकता हूं कि वे सर्वशक्ति सर्वगत प्रभु जो कि महाराजों के महाराज और रक्षकों के भी रक्षक हैं सदा तुम्हारे साथ थे। उनकी मंगल छत्रछाया तुम्हारे ऊपर थी। उन की सत्यता तुम्हारा अटल आधार था। उनका सर्व व्यापक परित्राण तुम्हें सब ओर से रक्षित कर रहा था। उनकी रक्षा में स्थित अपने को जानते हुवे ही तुम भूतल में किसी का भी भय न लाते हुवे निर्भय कर्तव्य करते थे। फिर मैं कैसे कह सकता हूं कि तुम इस संसार में अकेले थे—सहाय हीन थे।

हे परम सुधारक, सच्चों के सच्चे, साक्षात देवर्षे! तुम्हारा यह ब्रह्मचर्य से देदीप्यमान चेहरा मुझे कभी विस्मृत न हो। तुम्हारी यह भव्य, पवित्र, विशाल मूर्ति (जिसे कि तुमने आजीवन अनित्य और विनश्वर समझा मेरे लिए नित्य और अविनाशी होकर) सदा सन्मुख दीखती रहे—सदा मार्ग दर्शक बनी रहे। हे मेरे ब्रह्मचर्य के एक आदर्श! तुम्हारा ध्यान मुझ में ब्रह्मचर्य का आधान करे, तुम्हारा चिन्तन मुझ में—मेरे अङ्ग २ में—तेजोमयी सजीवता का संचार करे। यही मेरी अभिलाषा है।

प्रातःस्मरणीय सन्यासिन्! जब कभी मानव चक्षुओं के सन्मुख मुझे तुम्हारे पूर्ण रूप में दर्शन हो जाते हैं तो मेरा मस्तक तत्क्षण अवनत हो तुम्हारे चरणों में आप गिर जाता है। संसार के वे लोग जो कि मुझे अपने आगे बलात् झुकवाना चाहते हैं अवश्य आश्चर्य करते और कारण पूछते हैं। किन्तु मैं रुद्धकण्ठ उन्हें क्या उत्तर दूं, हे स्वामिन्! तुम्हारे चरण ही उन्हें उत्तर देवेंगे।

—:०:—

"फिर तेरी शरण में"

(लेखक श्रीयुत सत्यभिक्षु)

(१)

दुनिया के रंगीले रंगों में फंस मैंने तुझे सर्वथा भुला दिया । तुझ ज्योति स्तम्भ से ही ज्योति ले मैंने अपना तुच्छ दीपक जलाया था पर जवानी की चांदनी रात की अस्थिर और कृत्रिम छबीली छवि पर लट्टू हो उसे बुझा दिया । इस दुर्गम कानन में तेरे ही चरणचिह्नों पर चलते हुवे मुझे काम और मोह की भयंकर आंधी ने पछाड़ दिया और मार्ग से विचलित कर दिया । अब मैं भटक रहा हूं, अब मैं अंधेरे में हूं ।

× × ×

कई वर्ष बीत जाये पर अवस्था वही है । शान्ति और सुख पाने के लिए, तुझ तक पहुंचने के लिए मैंने सब कुछ ढूंढा, दुनिया के सब रंग देखे, सब घाटों का पानी पिया पर हाथ कुछ न आया । लोग कहते हैं कि धन प्राप्ति में सुख है, जिसके घर लक्ष्मी का निवास है उस के सामने सुख हाथ बांधे खड़ा रहता है । कइयों का सिद्धान्त है कि धन की अपेक्षा मान में ही सुख है । कुछ एक ने मुझे बताया कि विद्या पढ़ कर आदमी बड़े मजे में जीवन यात्रा व्यतीत कर सकता है । परन्तु मैं अपने जीवन के अनुभव से जिस सिद्धान्त पर पहुंचा हूं वह यह है कि धन, मान और विद्या—इनमें से कोई भी सुख देने वाला नहीं है ।

× × ×

कई चोले भी बदले । कभी ईसाई, कभी मुसल्मान, कभी यहूदी और कभी पारसी - पर हालत दुरुस्त होने के स्थान पर और भी खराब हो गई । शान्ति और सुख मृग तृष्णा के समान ज्ञात होने लगा ।

× × ×

जब तक तू मेरा आदर्श था, जब तक मैं तेरे ही नाम की माला फेरता और तेरा ही जप करता था तब तक चित्त शान्त था, जीवन सुखमय था । परन्तु जब से इस दुनिया की लिमिटेड कम्पनी के झंझट में फंसा हूं, मेरे चित्त कई अभेद्य दुर्गों में फंसगया है । सांसारिक उपायों में से कोई भी चित्त दावानलको न बुझा सका, तीक्ष्ण तीरों से बिंधे कोमल हृदय के घावों पर कोई मरहम न लगा सका । चित्त अभी तक वैसा है, घाव अभी तक हरे हैं ।

× × ×

हंसी मखौल की बात नहीं । सच कहता हूं कि मेरे चित्त सरोवर की दशा अत्यन्त शोचनीय है । जीवन दूभर मालूम होता है, संसार बुरा लगता है । प्रकृति रूठी हुई प्रतीत होती है । हंसी में भी रोने की झलक दीखती है ।

× × ×

(२)

एक वर्ष के बाद कार्तिक की आज अमावस फिर आई है । यह रात साधारण नहीं परन्तु विशेष है । इसकी विशेषता उस संदेश में है जो कि इस के पास है । आज के दिन ही, हे पूज्य दयानन्द ! मैंने तेरे चरणों में बैठ तुझ से शिक्षा ली थी । आज के दिन ही मैंने तेरे ज्योति स्तम्भ के उज्वल प्रकाश से अपने तुच्छ जीवन की जोत चमकाई थी । आज के दिन ही मैंने तेरा अनुकरण करने की प्रतिज्ञा ठानी थी । पर शोक ! मैं स्थिर न रह सका । मेरी निर्बल टांगे इस कठिन व्रत के पर्वत पर लड़खड़ाने लगीं, सांसारिक प्रलोभनों की प्रबल आंधियों के सामने यह निर्बल शरीर अधिक देर न ठहर पछड़ गया । उमड़ते हुवे बादलों की इस घटा में इसने तुझ ज्योति स्तम्भ को आंखों से ओझल कर दिया ।

× ×

पर आज य[illegible] सौभाग्य की घड़ी है । आज भटकते [illegible] और अन्धेरे में टटोलते को प्रकाश [illegible] गया । जिस सत्पथ से मैं विचलित [illegible] था, जिस ज्योति स्तम्भ के प्रकाश को मैं [illegible] दिया था, कई वर्षों के बाद, कई वर्षों की भटक और टटोलके बाद, आज फिर पा लिया । सचमुच भाई यह क्षण धन्य है, यह दिन पवित्र है ।

× × ×

हे पूज्यतम आचार्य दयानन्द ! हे ऋषिवर ! शिष्य की इस अवनति पर, इस कुपथ गामिता पर और इस गुमराही पर कुपित न हो कर आज उसे फिर अपने चरण युगल की रज में लोटने दो । आज से वह फिर तुम्हें ही अपने जीवन का आदर्श समझने, तुम्हें ही इस अन्धकारमय और दुर्गम जीवन पथ का प्रकाश स्तम्भ बनाने और तुम्हारे ही सन्मार्ग का अनुकरण करने की प्रतिज्ञा करता है । अपनी निर्बलता और मूर्खता पर पश्चाताप करता हुआ मैं आज "फिर तेरी शरण में" हे यतिवर ! आता हूं । इसे स्वीकार करो !

× × × ×

४

प्रियसुहृद ! आज की रात रमणीय है । आज—अमावस की गहरी अन्धेरी रात में—ब्रह्मचर्य और तप के तेज से प्रकाशमान महर्षि ने फिर दर्शन दिये हैं । यह बड़ा दुर्लभ दिन है, यह बड़ी अनमोल घड़ी है । इसे यों ही मत जाने दो । सांसारिक झंझटों से जरा अलग हो अपने गिरेबान में मुंह डालकर देख कि तू किधर जा रहा है? क्या तेरा ध्येय है और क्या तेरा उद्देश्य है? क्या तू उसी का अनुकरण कर रहा है, क्या तू उसी के चरण में बैठा उस की शिक्षा को अपने जीवन में ढाल रहा है वा विषय और प्रलोभन की दलदल में फंसा और सांसारिक उलझनों में उलझा हुआ अपना जीवन नष्ट कर रहा है? यदि तुम भी मेरे जैसे हो तो प्यारे ! आज फिर उसी महर्षि की शरण में "आजावो !!!

--:o:--

मेरी दृष्टि में स्वामी दयानंद

(लेखक श्रीयुत पं० मोतीलाल नेहरू-इलाहबाद)

"स्वामी दयानन्द जी महाराज स्वर्ग वासी के दर्शन मैंने केवल एक बार किये और बहुत छोटी आयु में। उस के पश्चात् फिर कभी अवसर नहीं हुआ। मैं कानपुर के गवर्नमेन्ट स्कूल में शिक्षा पाता था और मेरी आयु लग भग १५ वर्ष की थी उस समय स्वामी जी महाराज ने परेड के मैदान(Parade Ground)में जो गवर्नमेन्ट स्कूल के हाते से मिला हुआ है, एक व्याख्यान सांयकाल के समय दिया। मैं क्रिकेट खेल कर मकान को पैदल वापिस जा रहा था। शमियाने के नीचे भीड़ भाड़ देख कर मैं भी उस भीड़ में शामिल हो गया। धीरे २ आगे बढ़ कर स्वामी जी के बिलकुल समीप जा पहुंचा। वह मूर्ति पूजन के विरुद्ध एक मनोरंजक व्याख्यान दे रहे थे। मैं देर तक बहुत ध्यान से उन का व्याख्यान सुनता रहा। इस अवसर में स्वामी जी की दृष्टि मेरे ऊपर कई बार पड़ी। मुझ को केवल खड़े रहने के लिये जगह मिली थी। मुझ को उन्हों ने इशारे से बुलाया। लोगों ने मेरे लिये स्थान कर दिया और मुझ को उन्हों ने अपने समीप बैठने का आदेश किया। मैं बैठगया और उन का व्याख्यान सुनता रहा।

इतने ही में शामयाने में लोगों ने बाहर से पत्थर फेंकने आरम्भ किये। कुछ पुरुषों को जो वहां बैठे हुए थे थोड़ी सी चोट भी आई जिस पर यका यक जलसा तितर बितर हो गया। लोग भागने लगे परन्तु मैं उसी स्थान पर स्थित रहा। थोड़ी देर में लोग फिर एकत्रित हो गये. परन्तु स्वामी जी ने थोड़ी सी वक्तृता दे कर शीघ्र समाप्त कर दिया। जिस समय लोग इधर उधर भाग रहे थे स्वामी जी ने मेरा नाम पूछा और मेरे पढ़ने लिखने के विषय में कुछ प्रश्न किये। यह सुन कर कि मैं संस्कृत नहीं पढ़ता उन्हों ने शोक प्रकट किया और कहा कि अंग्रेज़ी फारसी के साथ संस्कृत भी अवश्य पढ़नी चाहिए।

व्याख्यान समाप्त होने के पश्चात मुझ से उन्हों ने कहा कि क्या मुझ से तुम को कुछ पूछना है? मैंने कहा कि आप तो मूर्ति पूजन ही के विरुद्ध हैं मैं तो प्रत्येक प्रकार के पूजन के विरुद्ध हूं और मुझे तो परमेश्वर की सत्यता में भी सन्देह है। इस पर वह बहुत हंसे और कहा कि यह अंग्रेज़ी शिक्षा का प्रभाव है। मुझसे फिर मिलना तो बात चीत होगी।

मैं उस समय एंट्रेन्स में पढ़ता था परन्तु दौर्भाग्य से उस के पीछे फिर कभी उन के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। यह घटना सन् १८७५ के लग भग की है। विशेष वक्तव्य यह है कि उन का व्यक्तित्व इतना प्रभावशाली था कि उस समय की बात चीत का प्रभाव मेरे हृदय पर उसी तरह विद्यमान है।"

(पण्डित मोतीलाल नहरू इस समय उन थोड़े से देश भक्तों में से हैं जिन्हों ने मातृ भूमि के लिए बड़ा भारी त्याग किया है। मुझे मालूम है कि पंजाब के मामले में काम करते हुए उन्हों ने कम से कम डेढ़ दो लाख आमदनी की हानि उठाई थी। वह न होते तो पंजाब का मामला दबा ही रहता। अब "असहयोग" का प्रस्ताव पास होते ही आपने वकालत को लात मार कर देश सेवा आरम्भ कर दी है। डेढ़ लाख के मेहनतानों की ओर दृष्टि नहीं की और यदि दो तीन "मुअक्किल" आग्रह न करते तो उन की फ़ीसें भी लौटादेते।)

(मैं ने पण्डित मोतीलाल जी से प्रार्थना की थी कि ऋषिदयानन्द को जो एक बार वह मिले थे—उस के विषय में अपने भाव लिख दें। उन्होंने उपर्युक्त लेख लिखा है:—

ऊपर के वर्णन में दो बातें स्पष्ट हैं। एक तो यह कि बड़ी भीड़ में से भी ऋषिदयानन्द काम के मनुष्य को पहिचान लेते थे और संस्कृत की उन्नति का उन्हें हर समय ध्यान रहता था। दूसरे यह कि जिस ने उन के एक बार दर्शन कर के उन से कुछ भी सुना वह बिना प्रभावित हुए न रहा)

श्रद्धानन्द सन्यासी

—:०:—

कैसी दिवाली!

पके हैं कान सुन सुन कर दिवाली आने वाली है।
अरे भारत के माथे पर अंधेरी छाने वाली है॥
इधर दीपक तो हंस हंस कर लगे श्री राम को जपने।
उधर धन के गले पर ओह! छुरी सी चलने वाली है॥
रसम जो पड़ गई खोटी बनी वह लीक पत्थर की।
दिवाली हिन्द में भारी मुसीबत लाने वाली है॥
नहीं है पास कौड़ी भी मगर क्यों कर जुआ छूटे।
इन्हीं के घर तो सोमेकी सवारी आने वाली है॥
जुआरी हैं इधर इक तो, है तिस पर रातअंधियारी
अमावस पर सियाही की कली अब फिरने वाली है॥
जो सोते हों जगा देना उन्हें मुश्किल नहीं होता।
मगर मचले हुये की आंख क्यों कर खुलने वाली है॥
करोड़ों मर चुके इन की दशा पर हाय! रो रो कर।
मगर ये सूरतें वो हैं नहींजो टलने वाली हैं॥
अकेले शकुनि ने उस दिन अरे! चौका वो फेरा था।
कमी जिस की न सदियों तक भी पूरी होने वाली है॥
मगर सोचो ज़रा उस की बनेगी हाय क्या हालत
जहां पर शकुनियों की फौज ही इक आने वाली है॥
कहें क्याहाय! भारत के हैं बिल्कुल भाग्य ही फूटे
सवारी फिर युधिष्ठिर की बनों में जाने वाली है॥
चलो इस बदनसीबी पर बहादो एक दो आंसू।
मगर इस ऊंट की गर्दन न सीधी होने वाली है॥

"निधि"

—:०:—

सत्य अर्थ का प्रकाश

Truth, How to interpret it.

(लेखक श्री पं० देवराज, सिद्धान्तालंकार)

यह एक नियम है कि मनुष्य अपने कर्म से जाना जाता है जो कुछ वह वास्तव में है। कर्म सदा अपनी समझ के अनुसार किया जाता है। समझ उसको अपने ज्ञान के अनुसार आती है। जिसका ज्ञान जितना विस्तृत और परिमार्जित होगा उसका कर्म उतना ही परिष्कृत होगा। जिसका कर्म जितना परिष्कृत होगा उसकी आत्मा या सत्ता उतनी ही ऊंची, शक्ति सम्पन्न वैभव युक्त होगी। कर्म परिष्कार के लिए समझ और समझ के लिए ज्ञान चाहिए। कर्म के परिष्कार की पराकाष्ठा अर्थात् सर्वथा भूल चूक से रहित होना वहां ही हो सकता है जहां ज्ञान की सर्व क्षेत्रों और सर्व कालों में पराकाष्ठा हो। ईश्वर जिसके लिए देश और काल का कुछ भेद नहीं, जिसके कर्म को जानना ही हमारा ज्ञान है, जहां ज्ञान और कर्म का अभेद भाव है, एक ही रूप है वहां ही ज्ञान और कर्म की पराकाष्ठा है।

उस ईश्वर के प्रकाश में जो जितना दृष्टि निक्षेप करता है उसे उतना ही तथ्य प्रकट होता है। जो उसके प्रकाश को देखता २ स्वाभाविकतया अपने देखने के भाव को भी भूल जाता है वह तल्लीन होने से सत्य को सत्य ज्ञान को, ईश्वर को अनुभव करता है और वह ही यथार्थ अर्थ के प्रकाश करने योग्य बनता है, यथार्थ अर्थ को प्रकाशित कर सकता है।

इस प्रकार अवश्य प्राप्तव्य निर्बाध ज्ञान और कर्म की उपासना का लाभ मनुष्य को एक ही आयु में वा थोड़े से काल में नहीं हो जाता इस के लिए पर्याप्त काल आवश्यक है। काल की विशेष दीर्घ मात्रा के लाभ के लिए जीवन के स्थिर नियमों का अनुसरण करते हुए प्रयत्न करना पड़ता है।

मनुष्य सृष्टि के आरम्भ में जबकि ह्रास की मात्रा विशेष नहीं बढ़ी थी, जीवन स्वभाव से ही जीवन विधा के नियमों के अनुकूल होते थे, उस समय की सामयिक अवस्था के अनुसार जब कि ईश्वरीय शक्तियों का प्रादुर्भाव उन में था बिना प्रयत्न के भी दीर्घ जीवन होते ही थे तो उन्हें ज्ञान कर्म की उपासना के लाभ का पर्याप्त शुभअवसर प्राप्त होता था। परन्तु अब जब कि संसार, चक्र परिवर्तन के अनुसार ऐसी अवस्था को पहुंच गया है कि उस के चक्र में वर्तमान स्वाभाविक ह्रास के अनुसार न वे दीर्घ जीवन हैं, न वे बुद्धियां और सामर्थ्य हैं, नाहिं संस्कार शुद्धता है और न उच्चपरिस्थिति है, तो किस प्रकार थोड़े से समय में अल्प प्रयत्नों से, ज्ञान कर्म की उपासना का लाभ हो सकता है?

इस संसार चक्र के परिवर्तन में बहुत दूर पड़जाने से सत्य की समझ और प्रकाश यथार्थ रूपमें नहीं होते, इसी लिये अयथार्थ ज्ञान के कारण ज्ञानी पुरुषों के ज्ञान ग्रन्थों को भी उतना ही अयथार्थ समझते हैं। इस ईश्वरीय प्रकाश में उस की कोई २ ही मूर्ति होती है जो यथार्थता का अनुभव कर के सत्य अर्थ का प्रकाश फिर से प्रदान करती है।

सत्य अर्थ का प्रकाश जिसने करना हो पहले उस के अपने अन्दर सत्य का प्रकाश होना चाहिए। उस को सत्य से पूर्ण प्रेम होना चाहिए। सत्य के प्रकाश के लिए उस के सामने विस्तृत और स्पष्ट क्षेत्र होना चाहिए। जिन के लिए सत्य का प्रकाश करना हो उन से भी उस को प्रेम होना चाहिए। जैसे मनुष्य अपनी उन्नति के लिए सत्य का प्रकाश अपने अन्दर करता है। अपने ही अन्दर सत्य का प्रकाश होने से सन्तुष्ट नहीं होता। मनुष्य समाज को भी अपने सदृश समझता है, नहीं! अपना स्वरूप समझता है, तभी समाज के लिए अपने को समर्पण करता है।

स्वामी दयानन्द का लक्ष्य, उस के जीवन को आन्दोलन करने से स्पष्ट प्रकट है कि एक मात्र सत्य के सत्य स्वरूप को अन्वेषण करना था। यही जन्म मृत्यु के प्रश्न का हल था। इसी की सिद्धि से उन की मुक्ति थी। इसी की सिद्धि में सत्य की प्राप्ति थी। इस का एक मात्र साधन उच्चकोटि की अन्तर्दृष्टि था जिसकी पूर्णतय्यारी में उन्होंने अपना यौवन काल, जीवन का सब से अच्छा भाग लगादिया, जिसे संसार नाना प्रकार के भोगों और व्यसनों में लगाता है। इसी लिये वे अपने उद्देश में सफल हुए और दूसरों को उधर प्रेरणा करने में तय्यार हो सके।

आर्य जाति, जिसका विकास स्थान पूर्णता है, परिवर्तन चक्र के नियम से ह्रास को प्राप्त हुई और ज्ञान के विकास स्रोत से बहुत दूर होगई। ज्ञान के प्रकाश को निर्देश करने वाले ऋषि मुनि निर्दिष्ट वेदादि सत्य शास्त्र भी ह्रास के नियम से समझने दुःशक हो गए। समझाने वालों ने भी उन्हें, ह्रास को प्राप्त हुई अपनी कम समझ से उल्टा पुल्टा वा विपरीत समझा दिया।

यदि ऐसा न हुआ होता और शास्त्रीय व्याख्या पूर्णरूप से यथार्थ हुई होती तो उस सत्य व्याख्या का ऐसा उल्टा प्रभाव न पड़ता जैसा कि मनुष्यों में देखने में आता है कि वे निरुद्यमी, साहस रहित, भीरु कपटी, असत्यवादी, अब्रह्मचारी आदि बहुत कुछ दुर्गुण वाले हैं। यह सारा प्रभाव न हुआ होता यदि शास्त्रीय व्याख्या ठीक हुई होती। वही वैदिक ज्ञान के सिद्धान्तों की शिक्षा है, जिस को शङ्कराचार्य, स्वामी दयानन्द आदि महात्मा प्राप्त कर के कर्म शील बने, और बताया कि वैदिक ज्ञान कर्म शील, उद्यमी और साहसी बनाता है न कि कर्म हीन, निरुद्यमी और भीरु तथा अन्य लोग उस को उल्टा समझने से नपुंसक बन जाते हैं। अतः वैदिक ज्ञान का इस में कुछ दोष नहीं, लोगों की उल्टी समझ का है। बिगड़ी हुई व्याख्या कुपात्र और हीन पुरुषों के सामने आई उस का ऐसा ही प्रभाव पड़ना था जैसा दिखाई दे रहा है।

स्वामी दयानन्द का सब से बड़ा उपकार जो सारी यथार्थ गति का आधार है सत्यज्ञान की प्राप्ति के साधनों को बताना है सत्यार्थप्रकाश की भूमिका में स्वामी जी बताते है कि ग्रन्थकर्ता का तात्पर्य कब समझ में आता है और उसके क्या साधन हैं। वह लिखते हैं -

"जो कोई ... ग्रन्थकर्ता के तात्पर्य से विरुद्ध मनसा से देखेगा उसको कुछ भी अभिप्राय विदित न होगा, क्यों कि वाक्यार्थ बोध में चार कारण होते हैं, आकांक्षा योग्यता आसत्ति और तात्पर्य। जब इन चारों बातों पर ध्यान देकर जो पुरुष ग्रन्थ को देखता है तब उसको ग्रन्थका अभिप्राय यथा योग्य विदित होता है।"

स्वामी जी बताते हैं कि ग्रन्थका तात्पर्य तब समझ में आता है जब ग्रन्थकर्ता का तात्पर्य समझ में आजाय। आकांक्षा योग्यता आसत्ति और तात्पर्य ये जिस प्रकार ग्रन्थ का तात्पर्य समझने में सहायक हैं उसी प्रकार ग्रन्थकर्ता के तात्पर्य समझने में भी सहायक हैं। क्यों कि ग्रन्थ का अव्यक्तस्वरूप ग्रन्थकर्ता में ही रहता है। वह अव्यक्तस्वरूप मनोवृत्त्यात्मक है। उसकी मनोवृत्तियां उसके लक्ष्य साधन और प्रयोग से बनी हैं। उसके लक्ष्य साधन और प्रयोग की छाया उसकी प्रत्येक रचना में पड़ती है जो रचना यह रचना है। लक्ष्य साधन और प्रयोग के ही दूसरे नाम आकांक्षा योग्यता और आसत्ति हैं।

इन चारों का अर्थ स्वामी जी इस प्रकार लिखते हैं:-

आकांक्षा-किसी विषय पर वक्ता की और वाक्यस्थ पदों की आकांक्षा परस्पर होती है।

योग्यता-वह कहाती है कि जिस से जो हो सके जैसे जलसे सींचना।

आसत्ति जिस पद के साथ जिसका सम्बन्ध हो उसी के समीप उस पद को बोलना वा लिखना। तात्पर्य जिस के लिए वक्ताने शब्दोच्चारण वा लेख किया हो उसी के साथ उस वचन वा लेख को युक्त करना।

ये चारों साधारण अर्थ को प्रकट करते हुए विशेष अर्थ को बतलाने के लिए लिखे गए हैं। इन से साधारण अर्थ इस प्रकार प्रकट होते हैं। कि

वक्ता के और वाक्यस्थ पदों के किसी विषय पर झुकाव वा लक्ष्य को आकांक्षा कहते हैं।

'जिस से जो हो सके' यह कह कर साधन का निर्देश किया है। जिस के पास जैसे साधन होते हैं वैसी उसकी योग्यता होती है।

आसत्ति से सम्बन्ध का ग्रहण किया है कि जो कार्य करने का क्षेत्र है वा जिन के अन्दर उसके साधन कार्य में प्रयुक्त होते हैं।

तात्पर्य का अर्थ अन्तिम परिणाम से है कि जो कुछ हुआ।

इस प्रकार किसी ग्रन्थ की आलोचना करनी होतो उस ग्रन्थकर्ता का लक्ष्य मालूम होना चाहिये कि वह क्या सिद्ध करना चाहता है, फिर उसकी योग्यता वा उस विषय में आलोचना कितनी है, पुनः वह किस सम्बन्ध से उस कार्य में प्रवृत्त हुआ, अन्य विषयों का उस प्रतिपाद्य विषय से क्या और कितना सम्बन्ध जानता है, तब मालूम हो सकता है कि वह ग्रन्थविशेष किस कोटि का है।

इसी प्रकार ज्ञान जिसका आविर्भाव अव्यक्तसत्ता से हुआ करता है, उसके समझने के लिए अव्यक्तसत्ता के लक्ष्य, साधन और प्रयोग को अर्थात् स्वभाव, गुण और कर्म को वा उसकी ज्ञान बल और क्रिया को ठीक प्रकार से समझना चाहिये। उसके समझने के लिए जो शब्द मिलेंगे वे भी अनन्त शब्द सागर के ही मिलेंगे क्यों कि उसका अव्यक्त रूप भी वही अव्यक्त सत्ता है। अतः उसको समझने के लिए उसका प्रत्येक शब्द किस प्रकार अव्यक्त सत्ता के गुण, कर्म वा स्वभाव को प्रकट कर रहा है यह जानना आवश्यक है। इस प्रकार वेद के सम्बन्ध में और अन्यत्र भी जहां सत्य के दर्शाने के लिए वैदिक शब्दों का प्रयोग किया है वहां सब स्थानों में उन शब्दों में अव्यक्तसत्ता गत भाव को सब से प्रथम देखना चाहिए, क्यों कि उन वैदिक शब्दों का लक्ष्य वा आकांक्षा अव्यक्तसत्ता ही है। फिर वह शब्द उस भाव को लेता हुआ किस २ क्षेत्र में अपने अर्थ को किस २ प्रकार प्रकट करता है यह जानना ही उसकी योग्यता देखना है। स्थान विशेष में आकर दूसरे शब्दों के साथ क्या सम्बन्ध रखता है यह जानना ही उसकी आसत्तिको समझना है। और सारे को मिलाकर उसका जो अर्थ बना वही उस शब्द का तात्पर्य है। इस प्रकार यदि सत्य अर्थ का प्रकाश वेदों द्वारा लेना है तो वेदों को इस प्रकार समझ कर उसी दृष्टि में उसके विस्तार ग्रन्थ शास्त्रों को और इसी दृष्टि से शास्त्रों की व्याख्या से वेद को समझना चाहिए। यही सत्य अर्थ की प्राप्ति की कुञ्जी है और कोई नहीं।

यदि इस प्रकार कार्य करने के लिए साहस और धैर्य नहीं तो चुप बैठे रहिए, सत्य अर्थ का नाम मत लीजिये कि वह ज्ञात नहीं होता, क्यों कि इस में गति के लिए और कोई मार्ग नहीं है "नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।" वेद पर ही क्या है सत्य का ज्ञान जहां से भी लेना होगा इन्हीं नियमों का अनुसरण इसी प्रकार करना पड़ेगा और कोइ मार्ग नहीं है। आजकल जो कोई भी वेद की व्याख्याएं सामने आ रही हैं वे इस दृष्टि से न होने से विश्वसनीय नहीं हैं। स्वामी दयानन्द ने सत्य अर्थ प्रकाश के इस सिद्धान्त का निर्देश कर के इसको क्रियात्मक रूप से भी समझाया है। और इसके समझाने के लिए ही सत्यार्थप्रकाश लिखी है।

स्वामीदयानन्द के सत्यार्थप्रकाश का तात्पर्य इस प्रकार से इस लिए समझना चाहिए क्यों कि स्वामीदयानन्द में भी व्याख्या के चारों अङ्ग इसी प्रकार घटते हैं।

स्वामीदयानन्द की आकांक्षा या लक्ष्य सत्यस्वरूप को प्राप्त करना था, यही उसकी मुक्ति तथा मृत्यु पर विजय थी। इस के लिए सामर्थ्य, योग्यता वा साधन योगाभ्यास प्राप्त किया। वह परम योगी था। उसके जीवन का बहुत बड़ा भाग योगियों और तपस्वियों में बीता। उसको अपने साधनों के प्रयोग का क्षेत्र संसार रणाङ्गण मिला। इस रणाङ्गण में विजय प्राप्त करके सत्य का स्वरूप प्रकट किया। सत्यस्वरूप का प्रकाशित कर लेना और करादेना ही उसके जीवन का अन्तिम दृश्य था।

स्वामीदयानन्द अपने लक्ष्य में सफल हुआ। इस लिए कि उसमें सत्य के लिए अगाध प्रेम था।' इस लिए कि 'सत्य को खोजने और उसके साधनों को प्राप्त करने की उसमें धुन थी।' 'सत्य की प्राप्ति के लिए पूर्ण योग्य हो चुका था।'

संसार रणाङ्गण में इस लिए उतरा कि 'विजय दर्शन की योग्यता उसी में थी।' सफल इस लिए हुआ कि 'यथार्थ प्रकाशक था।' 'मनुष्य मात्र का हितचिन्तक था।' 'वह सच्चा कर्मयोगी था।' क्यों कि संसार के लिए उसने अपने अहंभाव को लोप कर दिया।

धन्य हैं ऐसी पुण्यात्माएं, उनको हमारा बारम्बार नमस्कार है॥

क्या उपाय है?

(लेखक श्री० बाबू भगवानदास एम ए० काशी)

श्रद्धावीर्यस्मृति समाधिप्रज्ञापूर्वक इतरेषाम् ।
(योग सूत्र, १,२०)

मोक्ष चाहिए, यह निर्विवाद है। तिरस्कारों से, अपमानों से, पराधीनता से, जीविका के अभाव से, इन सब से मोक्ष इस देश को इस जाति को अवश्यमेव चाहिये। उपाय क्या है? वृत्तियों का निरोध यही उपाय है। काम की वृत्तियां, लोभ की वृत्तियां, परायों के आसरे की वृत्तियां, उनकी खुशामद करने की वृत्तियां, ख़िताबों और नौकरियों की लालच की वृत्तियां, पश्चिमी पढ़ाई लिखाई से हमारा कल्याण होगा इस मिथ्या विश्वास की वृत्तियां, विलायती महंग बहुत कपड़ा पोशाक अच्छे हैं इस झूठी प्रतीति [illegible] वृत्तियां, सर्वोपरि मोह और भय की वृत्तियां, इन वृत्तियों का निरोध ही मोक्ष का उपाय है।

“अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः”। ऐसा [illegible] कहा है। वैराग्य से और अभ्यास [illegible] सिद्ध होता है। एक ओर वैराग्य, दूसरी ओर अभ्यास। प्रायः एक होने से दूसरा स्वयमेव अवश्य ही होता है। [illegible] ओर वैराग्य होने से अपनी ओर अभ्यास होना ही चाहिए। योग सूत्र में भी कहा है कि जब बहिर्मुख वृत्तियों का निरोध होता है “तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्” तब आत्मा अपनी ओर खिंचता है, अपने आपे में स्थित होता है। हम लोग अपने गौरव को भूलकर, अपनों से ऐसा आपस में कलह करके, बेगानों की चटक मटक की मोह माया में पड़ कर गुलामी में फंस गए। इस बन्धन से मोक्ष तभी हो सकता है जब अपनों को फिर पहिचानें। ईश्वर की इच्छा से इन बाहरी चीज़ों से वैराग्य पैदा करने वाला दुःख हमारे ऊपर पड़ रहा है [illegible] से उन चीज़ों की ओर वैराग्य उत्पन्न हो कर अपनी चीज़ों की तरफ अभ्यास होगा।

असहयोग का जो ज़ोर इस समय देश में हो रहा है, वह दुःख के कारणों से वैराग्य का अंग है। दूसरा अंग अभ्यास का है। इसके विषय में उतने ही तीव्र विचार की आवश्यकता है जितनी वैराग्य के अंग के विषय में। क्या मत करो यह भी कहना चाहिए और क्या करो यह भी कहना अत्यावश्यक है। सच पूछो तो सांसारिक बातों में क्या करो यह बताने की ज़्यादा आवश्यकता है, और क्या मत करो इस के बताने की कम। क्योंकि कर्त्तव्य में लग जाने से अकर्त्तव्यों से स्वयमेव आदमी बचा रहेगा। हां, पारमार्थिक बात के लिए क्या मत करो यह बताना शायद पहिले ज़रूरी है। पर अनन्त परमात्मा की कलाओं में अनन्त प्रकार हैं, भारत वर्ष की विशेष अवस्था में इसकी आवश्यकता भी कि क्या करो इस पर इस समय विशेष ध्यान दिया जाय। अस्तु, एक समूह इस काम को अपने ज़िम्मे करे कि देश भर को यह बताता फिरे कि क्या मत [illegible], दूसरे समूह को उस में लग जाना चाहिये कि क्या करो इसकी चर्चा फैलावे।

मनुष्य के व्यष्टि जीवन तथा समष्टि जीवन में चार मुख्य अंग हैं, शिक्षा, रक्षा, जीविका, मन बहलाव। इन में भी शिक्षा पहिले है। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिससे यह लोक परलोक, स्वार्थ परमार्थ, दुनिया आक़बत दोनों बने। आज कल जो इस देश में शिक्षा का प्रकार चला है उस से सर्वसाधारण की न तो दुनिया ही बनती है, न आक़बत। न सर्कारी नौकरी या वकालत या डाक्टरी सब पढ़ने वालों को मिल सकती है, न कृषि वाणिज्य बनती है। और भी, अधिकतर लड़कों को शिक्षा मिलती ही नहीं। तो अब इस प्रकार से हट कर “स्वरूपेऽवस्थानम्” की ज़रूरत है। घर से असंतुष्ट हो कर बाहर निकला, बाहर के दुःख भोग कर तब फिर घर के सुख समझ पड़ने लगे। प्राचीन प्रकार शिक्षा का जो इस देश का था उसको फिर से बनाना चाहिए।

आज बीसियों वर्ष से लोगों का यह निश्चय होता जा रहा है कि “एंट्रेंस पास” किए हुए लड़के को जितना ज्ञान सोलह वर्ष की उमर में होता है, अंग्रेज़ी के द्वारा पढ़ कर, उतना ज्ञान, उतने विषयों का ज्ञान, उतने प्रमेयों के उतनी बातों का ज्ञान हिंदी उर्दू के द्वारा पढ़ कर बारह नहीं तो तेरह वर्ष की उमर में अवश्य हो सकता है, अंग्रेज़ी भाषा के ज्ञान को छोड़ कर। और अंग्रेज़ी भाषा भी यदि बोलचाल के उपायों से सिखाई जाय, जैसे लड़के अपनी मातृभाषा सीखते हैं, और कठिन कठिन व्याकरण के क़ायदों पर उनका सिर व्यर्थ न मारा जाय, तो काम चलाने के उपयोगी ज्ञान अंग्रेज़ी भाषा का भी उन को उसी बारह तेरह वर्ष की उमर में उतना ही हो जायगा जितना आज कल के “स्कूल” वाले को होता है। और बाकी तीन वर्ष रोज़गारी का काम सीखने के लिए बचे रहेंगे।

इस विश्वास को अब काम में लाने का समय आ गया है। [illegible] बालक को पढ़ाई का [illegible]। पर पढ़ा था वह [illegible] अच्छे अंश को [illegible] दूर करने की ज़रूरत है। यदि [illegible] प्रकार पढ़ाई का फिर से [illegible], कुछ थोड़े से नाम रूप के परिवर्तन के साथ, तो यह बात सिद्ध हो सकती है। हर गांव हर कस्बे हर शहर में, महल्ले महल्ले, पचीस पचीस या सौ घरों के बीच में एक घर, या बड़ी चौपाल, या छाया दार मैदान, या बड़ पीपल में बड़ा पेड़ का तला निश्चित कर दिया जाय, और उस महल्ले के छोटे लड़के वहाँ जमा हों और शिक्षा पावें। प्रायः एकसौ लड़कों से ज़्यादा एक ऐसे मदरसे में न पढ़ें। तीन या चार अध्यापकों की आवश्यकता होगी। औसत पचीस विद्यार्थियों की फ़िक्र एक अध्यापक अच्छी तरह से कर सकता है। अंग्रेज़ी अवश्य, पर द्वितीय भाषा के स्वरूप से, पढ़ाई जाय। मुख्य भाषा हिन्दी उर्दू। तीन चार अध्यापकों की जीविका का ज़िम्मा उस महल्ले के गृहस्थों पर रहेगा। जैसे हो वैसे वे इन के सीधे सादे भोजनाच्छादन और विशेष आदर सत्कार की फ़िक्र करें। ये अध्यापक पश्चिम के इल्म से भी और अपने देश के पुराने इल्म से भी वाक़िफ़

होने चाहियें। यहां इस नये समय के नये ब्राह्मण पंडित मौलवी होंगे। महल्ले के हिन्दु मुसलमान गृहस्थों के विश्वास पात्र सलाहकार और उनके बच्चों के परम शुभचिंतक। एक किताब ऐसी तैयार होनी चाहिए, हिन्दु मुसलमान पंडितों की सहायता से, और ज़रूरत से ऐसी किताब बनाई जा सकती है, जिस में सब मज़हबों मतों धर्मों का सत्त और सार ऐसे शब्दों में लिखा जाय जिसको हिन्दु मुसलमान बालक दोनों साथ साथ बराबर पढ़ सकें, बल्कि ईसाई यहूदी पारसी आदि सब मत मतान्तर के बालकों के लिए निर्विवाद हो। सब मज़हबों में एक सामान्य अंश इन्सानियत आदमीयत ईश्वर भक्ति कुदरती का ज़रूर है।

"अहिंसा सत्यमस्तेयंशौचमिन्द्रिय निग्रहः।
एतं सामासिकं धर्मं चातुर्वर्ण्येऽब्रवीन् मनुः॥१॥
धृतिक्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकंधर्म लक्षणम्॥

रहे विशेष विशेष धर्म कर्म उनकी शिक्षा अपने अपने घरों में कुलरीति के अनुसार सब लड़के पा लेंगे। ऐसी किताब के विषय की शिक्षा होने से न केवल परलोक बनेगा, बल्कि पहिले यह लोक बनेगा। आपस में मेल मुहब्बत का भाव स्थिर होगा। और मज़हब के नाम से कलह कम होगा। दुनियावी तालीम के लिए चलती बोली हिन्दी उर्दू की, लिखाई नागरी तथा उर्दू हरफों की हिसाब, पहाड़ा वग़ैरह, सफ़ाई तन्दुरुस्ती के तरीके दिनचर्या, ऋतुचर्या, जुग्राफ़िया और इतिहास किस्सा कहानी की लपेट में, और ग्लोबनकशों और तस्वीरों की मदद से, जैसा "पुराण" का तरीका है, राजनीति हितोपदेश वग़ैरा के चुने हिस्सों के ज़रिये से—यह सब पांच छः वर्ष की उमर से शुरू करके बारह तेरह वर्ष की उमर तक में सिखा दिया जा सकता है। इस सब के लिए हिन्दी उर्दू में नई किताबें व ग्लोबनकशा वैग़रा तैयार होना चाहिये। तैयार होना शुरू हो गया है, मांग बढ़ने से काम बढ़ेगा। जिस्मानी कसरत सीधा सीधा प्राणायाम, दौड़ धूप, कूद, फांद, कुश्ती वैग़रा का भी अभ्यास कराना चाहिये, जिसमें क्रिकेट फुटबाल, टेनिस वैग़रा का मौक़ा नहीं और हज़ारों रुपये का सर्फ़ा नहीं है और फायदा वैसा ही है। रोज़गारी तालीम की भी बुनियाद कुछ कुछ इसी वक्त डालना चाहिए। जिस ओर लड़के का झुकाव हो, या उसके मां बाप का ख़याल हो, उसके मुताबिक अगर कारख़ाना पास हो तो हफ्ते में एक दो दिन वहां उसके जाने और काम देखने सीखने का इंतज़ाम कर देना चाहिये। कसरत व्यायाम के सिलसिले में "स्काउट" (यानी अहेरिया) का काम और "कवायद" के तरीके सिखाने चाहियें। इस से आगे चल के गांव क़स्बा, शहर की रक्षा का अंग मज़बूत होगा। मन बहलाव के लिये कुछ ऐसे त्योहार चुन लेने चाहियें जिन में सब धर्मों के लड़के शरीक हो सकें। अलग अलग त्योहार अपने अपने घर और जाति के अलग अलग मनावेंगे, पर कोशिश यही रहनी चाहिये कि जहां तक हो सके इन में भी एक दूसरे की शिरकत रहे।

इस तरह से अपना पुराना स्वरूप इस देश और क़ौम का (—यह हमेशा याद रखना चाहिये कि चाहे मज़हब अलग हो रहे हों पर हिन्दुस्तान के हिन्दू और मुसलमानों की क़ौम एक ही है) फिर से हासिल किया जा सकता है, केवल पहिरावा थोड़ा नया होगा। नई पुश्त की तालीम ही देश के शिष्टाचार सभ्यता, तहज़ीब तरबियत, "सिविलिज़ेशन" की जड़ बुनियाद है, इसमें इस पर ज़ोर देना पहिला काम है। विषय बहुत बड़ा है, यह जो लिखा गया भी प्रारम्भ मात्र है

श्रद्धामयोऽयं पुरुषः यो यच्छ्रद्धः स एव सः॥

निद्राष्टक

(१)

अयि देवि निद्रे! दे बता तू है कहां प्राण प्रिये,
करता अहो आह्वान तेरा मणि पुष्पाञ्जलि लिये।
बस; हो गया अब मान मानिनि! मान मेरी आन को,
सुखशान्तिदे! सुषमालये! दे शीघ्र दर्शन दान को।

(२)

ये मञ्जुमालति मल्लिका मधु माधवी मुकुलावली,
मञ्जीर मन्द मृदङ्गध्वनि त्यों लग रही न मुझे भली।
अभीराम चम्पकदाम सी तेरी मुखच्छवि के लिये,
श्रम जीवियों की अयि दुलारी पुण्य किस ने हैं किये।

(३)

चित चोर चञ्चलचन्द्रिका सम चारु मन्दिर जो बने,
तेरी तपस्या के लिये रहते जहां साधन घने।
उपधानरम्या पुष्पशय्या वर वितान बनी ठनी,
होते सभी तेरी कृपा कटाक्ष कोर बिन शर की अनी।

(४)

हे विश्व धीररिणि! हो न जो सत्ता तेरी क्षुद्र धाम में,
वन, मोक्षभिक्षुक जन सभी लग जांय सृष्टि विराम में!
कल्पान्त का कल्लोल कुसमय में बड़े संसार में,
फिर पैर कर क्यों पार पावे दुःख पारावार में।

(५)

हे दीन दुःख हारिणि! न होती जो अहो तू लोक में,
हा, कौन देता सान्त्वना फिर दुःखियों को शोक में।
नवकल्पलतकिसलयमृदुल तव अङ्क में आसीन हो,
सम सौख्य पाते सब सभी भुवनेश हो, या दीन हो।

(६)

परमाश्रये! तेरा नहीं आश्रय जिसे जग में अहो,
उन दुःखियों की दुःख गाथा हा कहें कैसे कहो।
वे सेठ साहूकार जिन के पास बहु डाक्टर खड़े,
दम ढोल से तुला का करें पर्य्यंक के ऊपर पड़े।

(७)

मदमत्त गामिनि! मञ्जु भाषिणी! मोददायिनि! मानदे!
माध्वीक सुन्दरि! छोड़ कर निज मान जीवन दानदे।
ये लाल लोचन पांवड़े तव प्रेम पथ में हैं पड़े,
करदे प्रिये! पाद पंक्ति में पावन इन्हें भी जो अड़े।

(८)

हे विश्वमोहनि! विश्वबन्धो! हम गुण स्तुति क्या करें,
कविकुलतिलक भी इस विषय में मौनव्रत ही को धरें,
तेरी मुखच्छवि माधुरी पर मुग्ध सब ही हो रहे,
"श्री हरी" स्वयं वैकुण्ठ तज कर सिन्धु में जा सो रहे।

गया प्रसाद (श्री हरी)

—:०:—

महर्षि की सफलता का रहस्य

(लेखक श्रीयुत "आनन्द")

चलन चलन सब कोई कहै पहुंचे बिरला कोई।
एक कनक अरु कामिनी दुरलभघाटी दोई। (कबीर)

संसार में ऐसा कौनसा व्यक्ति है जिसको उसकी अन्तरात्मा समय समय पर सचेत नहीं करती। मनुष्य जब किसी महा पुरुष के जीवन को सूक्ष्म रीति से विचारता है और उसकी महिमा को अनुभव करता है तो उसके हृदय सागर में एक प्रकार की हलचल मच जाती है, विचार तरंगें बड़े बलपूर्वक उठती हैं और न जाने मनुष्य के मनको कितना ऊंचा उठा ले जाती है। किन्तु जिस प्रकार कि एक तरङ्गाप्लावित वेग से बहती हुई नदी में कभीकभी नीचे के पत्थर भी ऊपर उठ आते हैं और फिर शान्त होने पर उसी नीचे तले में बैठ जाते हैं उसी प्रकार इन लहरों से भी निसन्देह एक मनुष्य थोड़ी देर के लिये ऊपर उठ जाता है किन्तु उसके शान्त होने पर फिर अपने को उसी जगह पाता है जहां से पहिला उठा था।

महापुरुषों कहना है कि जभी उत्तम विचार रूपी दिव्यज्योति के कल्पना चक्षुओं द्वारा दर्शन हों तभी उसको अपनी आंखें मूंद कर अपने में बन्द कर लेना चाहिये उसे अपने आगे से ओझल न होने देना चाहिये। नहीं तो वह एक दम दीख कर फिर लुप्त हो जाती है। महापुरुष और साधारण पुरुषों के जीवनों में यही एक बड़ा भारी अन्तर है। महापुरुष जिन विचारों को अपने जीवन के लिये उपयोगी समझते हैं, उन्हें बारम्बार सोचते हैं, मनन करते हैं, और जब तक वे उन विचारों की अपने जीवन में गहरी छाप नहीं डाललेते तब तक उन्हीं की प्राप्ति में लगे रहते हैं। साधारण मनुष्य थोड़ा देर के लिये उन विचारों का आनन्द तो अवश्य ही लेते हैं किन्तु उन्हें अपने जीवन पर घटाने का यत्न नहीं करते। यही कारण है कि महापुरुषों को तो अपने जीवन में सफलता प्राप्त हो जाती है और साधारण मनुष्यों को नहीं होती। मानव जीवन में विचार आते हैं और जाते हैं, उनका प्रभाव जीवन पर होता है किन्तु सचमुच वह बहुत कम प्रतीत होता है। जीवन में सफलता विचारों के दृढ़ करने से होती है अन्यथा नहीं। उत्तम विचारों को जब तक जमाया न जाय तब तक पहिले जमे हुये विचार उनको अपने में आने नहीं देते। इस में सन्देह नहीं कि इनकी प्राप्ति में स्वाभाविक प्रवृत्तियां और सांसारिक धन्धे बहुत बाधक होते हैं। महापुरुष सांसारिक धन दौलत पर लात मारते हैं, अपनी स्वाभाविक प्रवृत्तियों का नियमन करते हैं और अपने को पूर्ण रीति से उसी तत्व की प्राप्ति के लिये समर्पित कर देते हैं। उनका मन उस दिव्य ज्योति का एक बार दर्शन कर फिर संशयित नहीं होता। किन्तु एक साधारण मनुष्य अपनी स्वाभाविक प्रवृत्तियों का संयम नहीं कर सकता, सांसारिक बन्धनों को तोड़ नहीं सकता; चमकते हुये धन से उसकी आंखें चुंधियाई रहती हैं और यही उसको उन विचारों में अग्रसर नहीं होने देती वास्तव में शुभ विचारों को अपने जीवन में ढालने के लिये तथा उनकी इन प्रतिबन्धक शक्तियों के लिये बड़े अन्तरीय मानसिक बल की आवश्यकता है।

ऋषि दयानन्द ने जब प्रारम्भ में शिव की पवित्र मूर्ति पर चूहे को फिरते देखा था तब जिन विचारों को प्राप्त किया था और पाया था—उन्हीं को उसने एक प्रहेलिका समान बनाया और उन्हें बारम्बार सोचा, उन्हीं की छानबीन में अपने सारे जीवन को लगा दिया। उनका उत्तर पाकर उसने अपने जीवन को तदनुसार ढाला और यही कारण है कि उसने अपने जीवन में सफलता प्राप्त की और महापुरुष की कोटि को प्राप्त किया।

उसके जीवन की दो ही प्रबल लिप्सायें थीं एक सत्य ज्ञान प्राप्ति की इच्छा दूसरी अमृतत्वाकांक्षा। पहिली प्रथम घटना और दूसरी घटना से उत्पन्न हुई थी। ऋषि ने इन की प्राप्ति के लिये क्या नहीं किया। बाल्यकाल में घर को छोड़ दिया, सब आरामों को लातमारी और चारों ओर निरन्तर कष्टों का ही सामना करते रहे।

ऐन्द्रियिक स्वाभाविक वृत्तियों का नियमन कर ने के लिये उन्होंने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया—यही कारण था कि वे अपने उद्देश्य को प्राप्त कर सके, वे उस दिव्य ज्योति को पाने में सफल हुये जिसको कि उन्होंने बाल्य काल में देखा था।

मार्ग में उन विचारों की प्रतिबन्धक वस्तुओं को उत्तेजना देने वाले प्रलोभन बड़े बल पूर्वक आते हैं किन्तु उन सब पर किसी ऋषिदयानन्द से यती की ही विजय होती है। अपने सामने उसी विचार ज्योति को लक्ष्यबना, उसी को अपना सारा विजय सौंप; अन्य सब बातों को गौण करते हुये बिरले ही मनुष्य अपने पथ में अग्रेसर होते हैं। मनुष्य के अग्रेसर हो जाने पर भी, परिस्थितियों की अनुकूलता न होने के कारण लक्ष्य के बहुत ऊंचा होने से एक प्रकार की निराशा उत्पन्न हो जाती है जो कि सब किये कराये पर पानी फेर देती है। कनक और कामिनी के विजय के अनन्तर भी जो इस निराशा को भी अपने पास पहुंचने से निराश कर देते हैं वे अपने कार्यों में सफलता प्राप्त करते हैं, ऋषि दयानन्द को भी इस निराशा का सामना करना पड़ा था-हिमालय पर्वत की चोटियों पर वे भी एक दफा गलने को तयार हो गये थे किन्तु उसी समय एक आशा का उदय हुआ था जिस ने उस के जीवन को दुगुने बल से अपने कार्यों में प्रेरित किया था। महापुरुषों के जीवन में भी प्रायः एक न एक समय पर इस निराशा की रेखा देखी जाती है।

यदि मनुष्य यह चाहता है कि वह भी अपने जीवन में सफल हो तो उसे प्रस्फुरित अन्तःकरण की ज्योति को जो कि उस के सम्मुख कभी कभी विद्युत रेखा के समान चमक जाती जो कि एक दम आते ही फिर किसी घने अन्धकार में अन्तर्लीन हो जाती है, मार्ग दिखाकर फिर संशयित होने के भ्रम में डाल देती है ओझल न होने दे, उस को अपने में बन्द कर अपने जीवन को तन्मय बनादे। इतर बातों को गौणकर उसी को प्रधानता देकर, उसी को अपने मार्ग का पथदर्शक बना अपने जीवन को तदनुगामी बना दे। मार्ग में उस ज्योति को बुझाने के लिये जोर की आंधियां आवेंगी और उस को बचाने के लिये मनुष्य को घोर परिश्रम करना पड़ेगा और बीच २ में कभी अपने बचाते हुए निराशारूपी विचार वक्रों से उस के बुझने का भय होगा किन्तु जो इस ज्योति को बचा लें और अपने जीवन को तन्मय बना लेंगे वह औरों के लिये उस मार्ग के लिये ज्योति स्वरूप हो सकेंगे, पथ दर्शक हो सकेंगे, किन्तु जिन आगे से वह ज्योति ओझल हो जायगी या अपनी बलवती ऐन्द्रियिक इच्छाओं और सांसारिक धन की कामनाओं से दब जायगी उन का जीवन निरुद्देश्य चारों तरफ इधर उधर लुढ़कता फिरेगा—वे अपने माननीय जीवन को सफल कर सकेंगे।

ये दिवाली की जलती हुई दीपशिखायें उस अन्त ज्योति को जगाने का निर्देश कर रही हैं जिस मनुष्य की वह दीपशिखा बुझी हुई उस के जीवन को बाहिर के अनन्त दिये जागृत नहीं कर सकते—अनन्त प्रचण्ड सूर्य की किरणें भी उस के हृदय के घने अन्धकार रूपी मेघ को फाड़ नहीं सकती—वहां अचल कूट अन्धेरे का साम्राराज्य रहेगा, किन्तु जिस की यह ज्योति जग चुकी है उस बुझने के समय (मृत्यु समय) भी करोड़ों दीपों की शिखायें उस ज्योति के सामने फीकी मालूम होती । यही ऋषि का जीवन निर्देश करता है और यदि मनुष्य अपने जीवन को सफल करना चाहता है तो उसे इसी मार्ग का अनुकरण करना चाहिये—तभी वह अपने जीवन में सफल हो सकेगा और अपने को समस्त संसार के लिये एक दीपक बना सकेगा।

—:0:—

श्रद्धा

ऋषि सन्धि वेला में बाल ब्रह्मचारी ने अभय दान दिया था

मृत्यु शय्या पर बाल ब्रह्मचारी लेटा हुआ है। वह विश्व भय से मुक्त है, क्यों कि वहां एक, दो से ले कर दस सन्तान तक की गणना नहीं; सारा संसार ही उस की सन्तान है। जिस की शुद्धि के लिए उसने संसार के सारे भौतिक सुख छोड़े थे उन्हों ने उस की मौत की ठान ली थी। विष के कारण सारा शरीर छालों से भरा हुआ था। कष्ट असह्य है परन्तु सारा कष्ट प्रश्वास के साथ बाहर निकाला जा रहा है। पीर जी हकीम हैरान, डाक्टर न्यूटन विस्मित रह गए। अनायास डाक्टर न्यूटन के मुख से ये शब्द निकले 'कैसा दृढ़ वीर, सहनशील आत्मा है! कैसे असह्य रोग से पीड़ित है परन्तु दुःख नहीं मानता। यहां एक व्यक्ति है जो इतनी बड़ी बीमारी पर भी संभला हुआ है और अभी तक जीता है।"

दुःख पर ऐसी विजय डाक्टरों ने भी नहीं देखी थी। इतिहास भी ऐसे कोई बिरले ही दृष्टान्त दिखा सका है। उस समय अन्धकार और प्रकाश का युद्ध हो रहा था। प्रकाश विजयी तो था, परन्तु अन्धकार का आक्रमण भी घोर था। अन्त को प्रकाश का जय जय कार हो गया। जिन आत्माओं ने आचार्य्य के उपदेश तथा जीवन से शान्ति लाभ की थी वे सब घबराए हुए थीं। उन्हें बुला कर पीठ के पीछे खड़े होने की आ-

छुट मिली। फिर चारों ओर के किवाड़ खुलवा दिए गए। सूर्य का भी कोई मार्ग बन्द न रहा। इस प्रकार खुले मैदान में अपने स्वामी प्रभु से बातें आरम्भ कीं। अन्त में इतने ही शब्द मुख से निकले 'हे दयामय, हे सर्व शक्तिमान् ईश्वर! तेरी यही इच्छा है! तेरी यही इच्छा है, तेरी यही इच्छा है। तेरी इच्छापूर्ण हो।" करवट बदली और प्रश्वास के साथ ही प्राण, भौतिक शरीर से, बाहर निकल गए। इसी लिए आर्यसमाज के आदिकवि 'अमीचन्द' ने गाया था—

परिव्राजकाचार्य्य स्वामीदयानन्द,
पधारा है परलोक डंके बजाता।

वह कौनसी वेला थी जब बाल ब्रह्मचारी दयानन्द, निर्भय हो कर सूर्य लोक पर पैर जमा, मध्य लोक का पथगामी हुआ? कार्तिक की अमावस, कृष्ण पक्ष का अन्त और शुक्ल पक्ष का उदय था। अन्धकार पर प्रकाश की विजया रात्री थी। उस सन्धिवेला में प्राण त्याग कर ऋषि ने अन्धकार से आवृत संसार को क्या उपदेश दिया। उस का उपदेश ध्यान पूर्वक सुनो—

"हे मर्त्यलोक के निवासियों! तुम प्रकाश स्वरूप पिता को भूल कर, अन्धकारात्मक हो, पग पग पर ठोकर खा रहे हो। अन्धकार ने तुम्हें तुम्हारा स्वरूप भुला दिया है। वेद का नाद सुनो—

शृण्वन्तु विश्वेअमृतस्यपुत्राः।
आये धामानि दिव्यानि तस्थुः।

तुम स्वतन्त्र हो, तुमने अपने को परतन्त्र समझ लिया है। तुम प्रकाश स्वरूप के बच्चे हो, तुम ने अपने को अन्धकार का दास समझ लिया है। तुम आत्मा हो तुमने अपने आपको जड़ समझ रक्खा है। संसार के जड़ किवाड़ों ने तुम्हें बन्द कर रक्खा है। ये कपाट तुम्हारे और प्रभु के अन्दर पर्दा डाल रहे हैं। खोल दो सारे हृदय के कपाट, फाड़ डालो इस मायावी पर्दे को—और देखो कि तुम्हारा रूप कैसा दिव्य है। उस दिव्य रूप के दर्शन करने के पीछे तुम निर्भय हो जाओ गे। बन्धन तोड़ो तब निर्वाण मिलेगा!"

बाल ब्रह्मचारी ऋषि दयानन्द ने जीते जी परम पिता के सिवाय किसी भी सांसारिक शक्ति के आगे सिर नहीं झुकाया। जिस शक्तिमान् के भय से अग्नि जलाता, सूर्य प्रकाश देता जिस के प्रताप से आत्मा शरीर तथा इन्द्रियों पर राज्य करता, जिस की प्रेरणा से ही श्वास प्रश्वास चलता है और जिस के द्वार पर मृत्यु भी हाथ बांधे खड़ा रहता है, उस से डरो। क्या तुम से डरते हो जिन का जन्म जड़ भूतों से और जिन की बनावट का लय पंच भूतों में ही होगा।

परन्तु तुम निर्भय कब हो सके हो? जब तक शरीर के दास हो, जब तक विषय तुम्हारी इन्द्रियों को अपने अन्दर खींच सके हैं, जब तक काम का वेग तुम्हें डांवाडोल कर के गिरा सकता है, तब तक निर्भय अवस्था प्राप्त नहीं हो सकती। ब्रह्मचर्य के तेज से ही उत्तेजित हो कर मृत्यु को जीत सके हैं। युग का विधाता (दयानन्द) हम सब को यही उपदेश अपने जीवन से दे गया है।

श्रद्धानन्द संन्यासी

—:०:—

अपनी दिवाली

(१)

जो कुछ हम कर सकते थे प्रभु! सभी तुम्हारे लिए किया,
दर्शन ही के लिए तुम्हारे यह जग सारा ढूंढ लिया।
माला फेरी, भस्म रमाई, नाम धाम कितना गाया
जोगी बने, कनक सब छोड़ा, नहीं परन्तु तुम्हें पाया॥

(२)

सारी दुनिया दिये जला कर आज दिवाली करती है
काली घोर अमावस को भी आज उजियाली करती है।
मन में दिये जला कर मैं भी आज दिवाली मनाऊंगा
अंधियारे मन में तव दर्शन की शुभ ज्योति जगाऊंगा॥

(३)

मन में उजियाला होते ही, मन्द मन्द करते मुस्कयान
आ उतरेंगे नाथ कहीं से रूप बनाये दिव्य महान्।
छिपे कहां रहते हो स्वामी! तुम्हें ढूंढना सकल अज्ञान
अरे! उजाला होना चाहिये, अन्दर ही बैठे भगवान॥

'श्री शास्त्री,

—:०:—

जातीय शिक्षा में क्या हो?

(ले० श्री प० विधुशेखर भट्टाचार्य बोलपुर शान्ति निकेतन,

स्कूल कहिये, कालिज कहिये, पाठशाला वा मदरसा कहिये, गुरुकुल या ब्रह्मचर्याश्रम कहिये, इसी प्रकार जो इच्छा हो कहिये, अपने शिक्षालय का आप जो चाहें नाम रखिये, वहां जो चाहें विषय पढ़ाइये, जिस तरह चाहें उसको चलाइये इस में कुछ आपत्ति नहीं, किन्तु एक बात का ध्यान सब से पहिले रखना होगा, कि आप विद्यार्थी को सारी शिक्षा देकर किस आदर्श में ढालना चाहते हैं उसे क्या बनाना चाहते हैं। यदि वह वानप्रस्थी वा सन्यासी न होकर गृहस्थी रहना चाहता हो तो उसके सामने जीवन यात्रा के किस उपाय को आप रखेंगे और उसे कैसा बनने का अभ्यास करावेंगे, संक्षेप में आपका विद्यार्थी क्या बन कर बाहिर निकलेगा।

इसका उत्तर एक ही बात में दिया जा सकता है, और भारतवर्ष उसको बहुत पहिले ही दे चुके हैं। वह आदर्श ऐसा होना चाहिये जिस से वह लोगों के उद्वेग का कारण न बने, और स्वयं भी वह लोगों के साथ रह कर उद्विग्न न हो जावे। इसी मूल सूत्र पर आचरण करते हुए चलना होगा। और यह सदा मन में रखना चाहिये, कि स्वयं तो सत्य बोलना ही होगा और दूसरों को भी जो बोलने देंगे वह भी सत्य ही होगा। यदि यह न हो, तो ऐसी शिक्षा, शिक्षा हो सकती है, किन्तु वह आसुरी शिक्षा है दैवी शिक्षा नहीं है। हम चाहते हैं दैवी शिक्षा, आसुरी शिक्षा हम नहीं चाहते। इस बीसवीं शताब्दि के महा युद्ध ने अपने आदि, मध्य और अन्त में आसुरी शिक्षा की चरमसीमा को संसार के सामने रख दिया है। यदि अब भी आंख न खुली तो नहीं कह सकते कि कब खुलेगी।

तो उपाय क्या है? उपाय! पहिला उपाय है अहिंसा, सार्वभौम अहिंसा जाति, देश, काल वा प्रयोजन विशेष की कुछ परवाह न कर के सर्वथा प्राणिवध छोड़ना होगा। इसका जैसा सम्बन्ध मनुष्य से है वैसा ही यथासम्भव प्राणि मात्र से है। मनुष्य सोचता है, "अच्छा, इस जाति को नहीं मारूंगा, अथवा इस देश के लोगों को नहीं मारूंगा, परन्तु दूसरे देशों के लोगों को मारूंगा अथवा उस स्थान पर नहीं दूसरे स्थानों पर मारूंगा, अच्छा, अब नहीं फिर कभी मारूंगा, अथवा अब यह काम आपड़ा है तो अब मारलेता हूं और समयों पर नहीं मारूंगा।" वह ऐसा सोच कर तदनुसार ही काम करता है; परन्तु ऐसे काम नहीं चलेगा। आवश्यकता सार्वभौम अहिंसा की है। विद्यार्थी को इसी सार्वभौम अहिंसा का व्रत ग्रहण कर के बिना चूके उसका पालन करना चाहिये, और इसी प्रकार का अहिंसक होकर उसको अपनी तथा दूसरों की रक्षा करनी होगी।

उसका दूसरा कर्त्तव्य है सत्यनिष्ठ होना। वह जैसा जो कुछ देखे, सुने, जैसा जो कुछ सोचे समझे, ठीक वैसा ही उस को वाणी से प्रकाश करना चाहिए। वह देखे सुने कुछ, सोचे समझे कुछ और, कहे कुछ, यह कभी नहीं हो सकता। उसे निर्भय होकर मन के साथ वाक्य की एकता रखनी चाहिए। उसे ऐसा कभी न सोचना चाहिए कि, किसी विशेष जाति के लिए, किसी विशेष देश के लिए, किसी विशेष समय या किसी विशेष प्रयोजन सिद्धि के लिए असत्य बोलने में पाप नहीं है। उसको सार्व भौम सत्य का अवलम्बन करना चाहिए। ऐसा करने से ही वह अपनी और दूसरों की रक्षा करने में समर्थ हो सकता है।

तीसरा कर्त्तव्य क्या है? तीसरा कर्त्तव्य यही है कि उसको ऐसा संयत और दृढ़ संकल्प होकर रहना होगा कि जो कुछ उसको नहीं है उसका वह किसी अवस्था में भी अन्याय पूर्वक लेने की इच्छा न करेगा, वह चाहे किसी भी जाति वा देश का हो, वह चाहे किसी भी समय में पैदा हुआ हो वा उसका कोई भी प्रयोजन क्यों न आ उपस्थित हो वह उसके लिए बल प्रतापादि का प्रयोग न करेगा। उसको इस प्रकार का सार्व भौम अस्तेयव्रत धारण करके अपना सारा जीवन बिताना होगा।

उसके बाद? उसके बाद उसको संसार क्षेत्र में यह महा प्रतिज्ञा करके पदार्पण करना होगा कि, अपनी जीवन यात्रा के—केवल अपनी जीवन यात्रा के लिए जो कुछ आवश्यक है उसके सिवाय वह कुछ भी ग्रहण नहीं करेगा। वह नित्य प्रति अपनी नई नई अनगिनत आवश्यकताएं बढ़ाकर और उनकी पूर्ति के लिये धन इकठ्ठा कर दूसरों का अन्न नहीं छीनेगा, दूसरों की जीविका का नाश नहीं करेगा। उसको दिन रात यह ध्यान में रखना होगा कि जितने से उस का पेट भरता है उतने पर ही उसका अधिकार है, उसके सिवाय कुछ लेने का उसका अधिकार नहीं है। जो अधिक की इच्छा करता है वह चोर है और दण्डनीय है *। चाहे कोई जाति हो, कोई देश हो, कोई समय हो वा कोई प्रयोजन हो, सबके विषय में उस को इसी भाव से चलना होगा, उसको इसी प्रकार का अपरिग्रह व्रत धारण करके सदा बिना भूल चूक के उसका पालन करना होगा।

और भी कुछ? हां और भी एक व्रत है, ब्रह्मचर्य। उसको ब्रह्मचारी रहना होगा। नहीं तो उसकी क्या सामर्थ्य कि वह गृहस्थ के भारी भार को उठा सके। उसको सब भांति इन्द्रिय रक्षा करनी होगी, उसको सब प्रकार संयतेन्द्रिय रहना होगा। मन, वाणी और कर्म सब में ही उसको पवित्र रह कर निपुणता से तेजस्वी बनने की योग्यता सम्पादन करनी होगी। ब्रह्मचर्य सब कल्याणों की जड़ है, यदि ब्रह्मचर्य नष्ट हो गया तो बचा क्या? ब्रह्मचर्य का पालन न करने से अन्य व्रत पालन करने की शक्ति कहां से आवेगी? इसी लिये उसको ब्रह्मचारी रहना होगा। ब्रह्मचारी ही मृत्यु का पार पा सकता है। जिन्हों ने ब्रह्मचर्य किया है, ब्रह्मचर्य करने के लिये जिन ने संसार के लोगों को प्रेरित किया है, उनका तो यही कहना है, और उसका फल भी प्रत्यक्ष ही है।

---

* "यावद्भ्रियेत जठरं तावत् स्वत्वंहि देहिनाम्।
अधिकं योऽभिमन्येत स स्तेनो दण्डमर्हति।
श्रीमद्भागवत। ७. १४. ८"

ये तो साधारण बात हुई। एक विशेष बात भी है। आस्तिक और नास्तिक दोनों को यह साधारण नियम मानना ही पड़ेगा। इसके बाद आस्तिक को ईश्वर में आत्मसमर्पण करने का अभ्यास करना होगा, ईश्वर की सत्ता सर्वत्र अनुभव करने की योग्यता उसको सम्पादन करनी होगी। और नास्तिक को अपना उपदिष्ट तत्व ज्ञान प्राप्त कर के अन्तिम मुक्ति का अधिकारी बनने का प्रयत्न करना होगा। ऐसा होने से ही विद्यार्थी का कर्त्तव्य समाप्त होता है। तब वह मनुष्य के समान मनुष्य बन कर संसार में प्रवेश कर सकेगा, और इसी प्रकार वह संसार की आशा का पात्र बनेगा। आतंक नहीं; सबका कल्याणही करेगा, अकल्याण नहीं।

यदि ऐसी शिक्षा पाकर बाहिर निकलें तब क्या इतना रक्तपात इतना अत्याचार इतना हाहाकार और इतनी अशान्ति चारों ओर दिखाई दे? स्कूल, कालिज और विश्वविद्यालयों का प्रकार तो कम नहीं हो रहा, परन्तु संसार में अशान्ति की मात्रा बढ़ती चली जा रही है। कौन जानता है यह कहां जाकर ठहरेगी। इसी लिये शिक्षा का जो प्रवाह चल रहा है, उसको मोड़ना होगा, और इसी ओर को मोड़ना होगा। हमें यह भी पता है कि यह अत्यन्त दुःसाध्य है और दुराशा है, तो भी उपाय नहीं है, जिस तरह हो, जितने दिनों में हो, इसको रोकनाही होगा, प्रयत्न करना ही पड़ेगा। एक दिन जिस की कल्पना की जाती है समय पाकर वह कार्य मे भी परिणत हो जाता है। असत्य से सत्य नहीं मिलता, अकल्याण से कल्याण की प्राप्ति नहीं होती; यदि यह बात ठीक है, और यदि संसार में शान्ति की व्यवस्था करनी है, तो सिवाय इस उपाय के और कौन उपाय है? यह सुनने में चाहे कितना ही दुःसाध्य, असाध्य वा अद्भुत क्यों न मालूम पड़े परन्तु हे बन्धु! इसी को लक्ष्य में रख कर हमको यात्रा करनी होगी।

महर्षि की शिक्षाप्रणालि का आधार मनोवैज्ञानिक है!!

(लेखक-श्री पं० दीननाथ सिद्धान्तालंकार)
उप-सम्पादक 'श्रद्धा'

महर्षि की शिक्षा प्रणालि पर विचार करते समय यह प्रश्न उठना सर्वथा स्वाभाविक है कि उसने शिष्य के लिए इतने कड़े नियम क्यों बनाये? क्यों ८ वर्ष के सुकुमार बालक के लिए इतनी कठोर तपस्याका निर्देश किया? और क्यों ब्रह्मचर्य्य, शिष्टाचार, सभ्यता आदि की शिक्षा पर इतना बल दिया? संसार की कोई भी हल चल और प्रलोभन उस तक न पहुंच सके—इस के लिए उन्हों ने क्यों तपस्या और ब्रह्मचर्य्य की इतनी ऊंची दीवार उस के चारों ओर खड़ी कर दी?

इन सब प्रश्नों का उत्तर एक महत्त्व पूर्ण मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त के अन्दर छिपा हुआ है। शोक है कि आधुनिक पाश्चात्य विद्वानों ने शिक्षा पर इतना विचार करते हुए भी इस सिद्धान्त को न समझा और इसी लिए उन्हों ने तपस्या और ब्रह्मचर्य्य की आवश्यकता पर कुछ विशेष बल नहीं दिया; अपितु इस के विरुद्ध, स्पेन्सर जैसे तत्त्ववेत्ता ने तपोमय जीवन का लचर दलीलों से खण्डन करने का प्रयत्न किया है। अस्तु; वह मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त क्या है—आज हम उसे ही पता लगाने तथा उसे इस शिक्षाप्रणाली पर प्रयुक्त करने का प्रयत्न करेंगे—

आदत (habit) पर हमारे सम्पूर्ण जीवन का बहुत कुछ निर्भर है। प्रारम्भिक आयु में जो स्वभाव पड़ जाते हैं उन से छूटना फिर दुस्तर हो जाता है। इसी लिये "ड्यूकआव वालिङ्गटन" ने कहा था कि "Habit is a Second nature! Habit is ten times nature". प्रथम वार एक काय करना कठिन होता है पर उसी को जब दुवारा-तिवारा किया जाता है; तब उसका मार्ग अधिक सुगम हो जाता है। वार वार करने से फिर वही कार्य, बहुत सुगम हो जाता है। परन्तु एक बात और है। २० वर्ष की आयु तक हमारे दिमाग़ और नाड़ी चक्र की वह दशा होती है जिसे "कोमलता या लचकीलापन" (plasticity) इस शब्द से कहा जा सकता है। अभिप्राय यह कि, उस आयु तक हम जो स्वभाव डालना चाहें, हमारा मस्तिष्क और नाड़ीचक्र उस का स्वागत करने के लिये तय्यार होगा। २० वर्ष की आयु के बाद पुराने स्वभाव के स्थान पर नये स्वभाव को डालने के लिये अत्यन्त प्रयत्न की आवश्यकता होती है और ३० वर्ष की अवस्था के बाद तो असम्भवसा ही हो जाता है।

स्वभाव कैसे बनते हैं?

हमारे शरीर में एक नाड़ी चक्र है जिस की उत्तमत्ता वा निकृष्टता पर हमारे जीवन की सफलता वा असफलता बहुत अंश तक निर्भर करती है। २० वर्ष की अवस्था तक यह कोमलता की दशा में होता है। हमारे अच्छे या बुरे स्वभाव बनने का वास्तविक समय यही है। जब हम पहिले एक नई 'क्रिया-प्रति क्रिया' करते हैं तब उसका संस्कार रूप एक 'मार्ग' (pathways) हमारे नाड़ी चक्र में बन जाता है। जब हम दुवारा तिवारा वही काम करते हैं, तब वही मार्ग दृढ़तर हो जाता है और अन्ततोगत्वा, कई बार करने के बाद इतना दृढ़तम हो जाता है कि उसे बदलना वा उस की जगह नई आदत से नया मार्ग बनाना असम्भव नहीं तो अत्यन्त कठिन अवश्य हो जाता है। यह अवधि, मनोवैज्ञानिक विद्वान्, २०--२२ साल तक ही बताते हैं। इस आयु तक डाले गये स्वभाव, मनोवैज्ञानिक शब्दों में, नाड़ी चक्र में बनाये गये मार्ग-का जीवन पर कितना प्रभाव होता है यह निम्न लिखित सच्ची और विश्वसनीय कथा से पता लगेगा जो कि एक विद्वान ने अपनी पुस्तक में इस प्रकार लिखी है।

एक सिपाही बाज़ार से कुछ खाद्य पदार्थ हाथ में लिये घर को जा रहा था। पीछे से एक मसख़रे ने ज़ोर से "सावधान!" (attention) यह कहा सिपाही सौदे को अलग फैंक ड्रिल की तरह एक दम "सावधान" की पोज़ीशन, में खड़ा हो गया। उस का सारा सौदा खराब हो गया।

यह क्यों? इसी लिये कि इतने साल तक लगातार ड्रिल करने से उस के नाड़ी चक्र के मार्ग इतने दृढ़ हो गये थे, उसका शरीर उन मार्गों के अनुकूल इतना सधगया था, उसके स्वभाव का एक मुख्य अंग बन गया था और इस "सावधान!" शब्द तथा उसकी प्रति क्रिया करने वाली नाड़ी का-(motor nerves)— ऐसा पक्का सम्बन्ध हो गया था कि इस शब्द को सुनते ही उसके दिमाग़ ने पुरानी आदत के अनु-

सार, अनजाने ही आज्ञा दे डाली और सधे हुए शरीर ने भी झट पूरा कर दिया। यहां कार्य्य कारण ढूंढने में कुछ देर लग सकती है पर उस समय जब कि यह घटना हुई तब, एक मिनट की भी देर नहीं लगी थी। इस प्रकार के और भी कई एक उदाहरण दिये जा सकते हैं जिन से अन्तिम परिणाम यही निकलेगा कि जीवन के बनाने और बिगाड़ने में स्वभाव का अधिक और बहुत अधिक उच्चस्थान है।

शिक्षा का उद्देश्य भी तो यही है!

तब, शिक्षा का उद्देश्य भी तो यही है कि वह हमारे नाड़ीचक्र को इस प्रकार से साधदेवे और उसके कारण हमारे नाड़ीचक्र में इस प्रकार के मार्ग बन जावें कि भावी जीवन में वे हमारे शत्रु की तरह न हो कर मित्र और सहायक की तरह हों। अर्थात् उन्हीं मार्गों के आधार पर, उन्हीं के व्याज से हम अपना सारा जीवन सुख और चैन से बिता सकें। वह शिक्षा बाल्यकाल से लेकर इस २०-२२ वर्ष की आयु तक हमारे अन्दर उत्तम गुणों को ऐसी स्वभाविक और नैसर्गिक आदतें डलादें कि जिससे पाप हमारे सामने फटक भी न सके और हम उस से ऐसा बचें जैसा कि सांप से बचते हैं।

महर्षि ने यही किया है

यहीं पर महर्षि की शिक्षा का महत्व और गौरव पता लगता है। उसकी शिक्षा प्रणाली से घड़ा हुआ छात्र, उस के कारखाने से बना हुआ छात्र संसार समुद्र में एक चट्टान की नांई डट के खड़ा होता है, प्रलोभन और आपत्तियों की भयंकर थपेड़ें आती हैं पर निराश हो आप से आप लौट जाती हैं। महर्षि ने छात्र के लिये ब्रह्मचर्य्य के कठोर नियम और तपस्याओं का पालन करना इसी लिये आवश्यक बताया कि वह दुःख और आपत्ति को छाती खोल सहे वा सुन्दर रूप धारण कर आने वाले प्रलोभनों को देखकर फिसले नहीं और डगमगाये नहीं। छात्र का यह तपोमय जीवन बीमा कम्पनी में रखे हुए रुपये के समान होता है। यदि बीमा ४० साल का है और मौत ६० साल की आयु में हुई तब-तो अवश्य ही २० साल का अधिक रुपया देना पड़ेगा पर यदि ४० साल के बदले मौत १० साल में ही हो गई तब शेष ३० वर्ष का रुपया भी तो मिलेगा। इसी प्रकार छात्रावस्था का तपोमय जीवन है। यदि जीवन में कोई आपत्ति वा दुःख न आया तब तो अच्छा ही है पर यदि आपत्ति, संकट दुःख और प्रलोभन आयें जो कि जीवन संग्राम में प्राय, अवश्य ही आते हैं तब उसी क्षण नई तैय्यारी की आवश्यकता न होगी किन्तु महर्षि की शिक्षा-प्रणाली से २५ साल में से तय्यार किया गया वीर छाती खोल उन से युद्ध करेगा, वह पीठ न दिखावेगा किन्तु लड़ाई में उन्हें मारेगा; वह घबराये गा नहीं, डरेगा नहीं और सब से बढ़ कर घबरायेगा नहीं। ब्रह्मचर्य्याश्रम में की गई तपस्याओं के व्याज पर वह मजे से जीवन यात्रा करेगा।

एक बात और है

महर्षि ने ब्रह्मचारी के लिये नाच, गान अनार्ष पुस्तकें, विषय कथा आदि का सर्वथा निषेध किया है। तपस्या की दृष्टि के अतिरिक्त एक और दृष्टि से भी ये बहुत ही आवश्यक हैं।

मनोविज्ञान का यह स्थिर सिद्धांत है कि ऐसी भावुकता [Sentimentality] जो कि क्रिया रूप में परिणत नहीं होती और न हो सकती है, वह अत्यन्त ही हानिकारक होती है। उस से नाड़ी चक्र निर्बल हो जाता है और इच्छा शक्ति निकम्मी पड़ जाती है। विद्यार्थियों के लिये महर्षि ने विषय-प्रेरक सब काम और विचार इस लिये सर्वथा निषिद्ध किये हैं, क्यों कि इन से भाव (Sentiments) तो पैदा होते हैं पर वे क्रिया रूप में, सब अवस्थाओं और साधनों के अभाव से, परिणत नहीं हो सकते जिससे मानसिक बल का बहुत क्षय होता है। इससे, मनु आदि महर्षियों की और उनके आधारपर नियम बनाने वाले स्वामी दयानन्द की गम्भीर विद्वत्ता और दूर दर्शिता पता लगती है।

विलियम जेम्स और महर्षि दयानन्द

मनोविज्ञान के प्रसिद्ध पण्डित जेम्स ने अपनी पुस्तक "Psychology", "के पृ०१४९ पर निम्नलिखित वाक्य बड़े ही मार्के के लिखे हैं।

उनका आशय यह है कि "जीवन का क्रियात्मक सू त्र यह है कि प्रति दिन थोड़े २ अभ्यास से प्रयत्न को शक्ति को सचेत और जागृत रहना चाहिये।" अर्थात् वह कहता है - "नियम पूर्वक तपस्वी हो (Be systematically ascetic) जिससे यदि कभी आपत्ति का अवसर आवे और तुम परीक्षा की कसौटी पर कसे जावो तो तुम बेसुध और बे चैन न होकर सावधान और क्रिया शील पाये जाओ।"

क्या सचमुच यह महर्षि की किसी पंक्ति का भावानुवाद नहीं है? यद्यपि जेम्स ने "छोटी छोटी और अत्यावश्यक बातों में " नियम-बद्ध तपस्या का प्रति दिन वाहि दैनिक" उपदेश" दिया है पर इतना ही पर्याप्त नहीं है, इस लिये महर्षि ने बड़ी बड़ी और आवश्यक बातों को "नियम बद्ध तपस्या" का रूप न केवल दिन के किसी किसी भाग के लिये अपितु सम्पूर्ण दिन और प्रतिक्षण के लिये उपदेश दिया है। महर्षि ने छात्रावस्था का कोई भी ऐसा दिन तो क्या क्षण भर भी ऐसा नहीं रक्खा जा कि "नियम-बद्ध तपस्या" से शून्य हो। उसकी प्रणाली में तो यहां तक है कि बिना ब्रह्मचर्य और तपस्या के कोई शिष्य, शिष्य नहीं है, कोई स्नातक, स्नातक नहीं हो, सकता। फिर "जेम्स" उपयुक्त पुस्तक के पृ० १४९ पर छात्र के लिए तीन बातें आवश्यक बताता है—

वह कहता है "यदि तुम जीवन में सफल होना चाहते हो तो (१) केन्द्रितध्यान (concentrated attention) दृढ़ इच्छाशक्ति (Energetic Volition) आत्म त्याग (Self denial) की आदत डालो और इन्हें अपने जीवन की छोटी २ और साधारण घटनाओं में भी प्रकाशित करो।"

महर्षि ने अपनी प्रणाली में "भोगमय जीवन" का करना तो पृथक् रहा विचारने तक से अत्यन्त निषेध किया है। इस लिये "जेम्स" का "आत्म त्याग तो उसी में आजाता है। उसका "केन्द्रित ध्यान" और "दृढ़ इच्छाशक्ति" के लिये महर्षि ने प्राणायम और योगाभ्यास का विधान किया है क्यों कि इन दोनों के बिना "एकाग्रता" और "दृढ़ इच्छा शक्ति" कभी हो ही नहीं सकती। छात्र के कर्तव्यों में से यह आवश्यक बताया गया है कि वह प्रति दिन प्राणायाम और योगाभ्यास करे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि महर्षि की सम्पूर्ण शिक्षाप्रणाली और विशेषतः ब्रह्मचर्य और तपोमय जीवन के नियम एक आवश्यक, सुदृढ़, और महत्व पूर्ण मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त के आधार पर हैं।

आर्य्यसमाजका प्रशंसनीय कार्य्य

(श्रीयुत मौलाना शौकतअली द्वारा)

खुदा जानता है कि अपने आर्य—भाइयों को इस खिलाफत के मामले में इमदाद देने से हम मुसलमानों के दिलों पर कितना गहरा असर पड़ा है। स्वामी श्रद्धानन्द, स्वामीसत्यदेव जी से लेकर छोटे से छोटे आर्य का दिल आज मुसलमानों की इन तकलीफों से भरा हुआ है और चूंकि हमेशा से इस समाज में ताकत और हिम्मत थी, इस लिए आज इनकी मदद भी हमारी कुव्वत (शक्ति) की बाइस हुई है। यह खुदा की कुदरत का तमाशा है कि बजाय आपस की गाली गलौच के, आपस की जूनपैजार और आपस में लड़ाई और मुकद्दमेबाजी के, आपस के बहस मुबाहिसा और प्लेटफार्म—बाजी के जिस में दो तरफ से तरह २ की सख्त कलामियां (बातचीत) होती थीं, आज दोनों भाई अपने २ धर्मों पर कायम रह कर एक दूसरे से कन्धा २ मिलाये हिन्दु मुसलमान की गाड़ी को आज़ादी की मंजिल तक पहुंचाने में अड़े हुवे हैं। जब हम दोनों लैन्सडाउन में नजरबन्द थे तो हमारे अजीज भाई मि० अब्दुर रहमान सदीकी और मि० शोएब करैशी मसूरी से लौटते समय गुरुकुल कांगड़ी गये थे और स्वामी श्रद्धानन्द जी के मेहमान हुवे थे। उस समय तक देहली में हिन्दु मुसल्मानों का खून नहीं मिला था और स्वामी श्रद्धानन्द जी को इसलामी दुनिया ऐसी अच्छी तरह से नहीं जानती थी जैसी कि अब। उन दोनों भाइयों ने गुरुकुल कांगड़ी में अचानक पहुंच कर वहां का सब हाल देखा भाला और स्वामी जी और काम करने वालों ने उन्हें साथ में बिठाकर खिलाया। उन दोनों भाइयों ने जिन अलफाज से वहां के हालात सुनाये उस से हमको यकीन हो गया है कि आर्यसमाजी जमात से बढ़कर हिन्दू भाइयों का आधार के लिए कोई और दूसरी जमात कुछ नहीं कर रही थी और उसका सबूत आज हम अपनी आंखों से देखते हैं कि सैंकड़ों काम करने वाले फकीरों का लिबास पहिन हुवे घर घूम में मारे २ फिरते हैं ताकि अपने भाइयों की सेवा करें।

खिलाफत के पुरजोश काम करने वालों में आर्यसमाजी भाइयों का अच्छा मर्तबा है। खुदा से दुआ है कि वह हमारी आंखों से तारीकी के पर्दों को दूर रक्खे और [illegible] दोस्त [illegible] ख्वाहिश है कि हम [illegible] गुरुकुल कांगड़ी में जाकर वहां [illegible] से मिलें। अगर खुदा ने चाहा तो हमारी यह आरजू पूरी होगा।

— o —

आगे आगे सीधी चाल।

बढ़ो कदम निःशङ्क पुराना, जिसने को लखा पामाल ॥ टेक ॥
दाएं न देखो बाएं न देखो, रजकण सम हो शैल विशाल
[illegible] करुण को जहां पाप हो, जहां दीन हो उनकी ढाल।
[illegible] मन्द मुसक न ओठ पर, उन्नत निर्भय निश्चल भाल।
[illegible] मौत सजाकर, लावे जब अपनी जैमाल।
परम पुरुष का अरु पौरुष का, अटल भरोसा हो सब काल।
[illegible] लक्ष्य से हिगे न पल भर, कितने ही कैसे हो जाल।
[illegible] रस झोली में, हाथ तर्क काले करवाल।
नायक आगे चले तुम्हारा, तुम उलझन में क्यों बेहाल ॥
आगे आगे सीधी चाल ॥

"श्री मराल"

— o —

स्वाधीनता—एकमात्र उपाय है !!

(लेखक श्रीयुत बाबू शिवप्रसाद गुप्त काशी)

सुबह का सुहावना समय है। अभी तुरन्त ही बाहर [illegible] हूं। आंखें मलते हुवे चार पाई [illegible] पर पैर [illegible] रहा हूं कि सामने [illegible] की आवाज सुन पड़ी। उधर [illegible] तो हमने घास के मैदान [illegible] बीच में जो दो [illegible] के वृक्ष लगे हैं उन्हीं पर यह पक्षी [illegible] 'सीहा पी' पुकार रहा है। उसके शब्द प्रातः काल के निस्तब्ध आकाश में चारों ओर गूंज उठे हैं और हृदय को अपनी ओर खींचे लेजा रहे हैं।

मैं सोचने लगा कि इस जरासी चिड़िया के शब्दों में कहां से शक्ति आगई कि मेरे दिल को बेचैन कर दिया है। सोचते सोचते ख्याल पड़ा कि यह स्वतन्त्र है, अपने मन से जहां चाहती है फुदकती है जिस वृक्ष पर चाहती है बैठती है। इसी लिये इस की आवाज में वह शक्ति है जो हमारे मुर्दे दिल को भी खींच रही है।

यह ख्याल आते ही दिल भर आया। अपनी बेदस्ती का नजारा सामने नाचने लगा। इनसान होकर भी अपने को उस नाजीज चिड़िया से भी निकम्मा देख अपनी पराधीनता पूरी तौर से आंखों के सामने घूमने लगी। ख्याल हुआ कि क्या इसी लिये हम पैदा किये गये थे कि दूसरों के सुख आराम के लिये दिन भर पिसने के बाद भी पेट भर रोटी न मिले और रात्रि में भी सुख की नींद सोना नसीब न हो। पर अपने किये का चारा ही क्या अगर हम खुद अपने पैर पर कुल्हाड़ मार ले तो दूसरे का क्या कसूर ? फिर ख्याल आया कि क्या हम मनुष्य नहीं हैं। क्या एक मनुष्य पर दूसरे मनुष्य को शासन करने का अधिकार है ? क्या यह जान कर भी कि हमारे ऊपर दूसरे अपने स्वार्थ के लिये शासन करते हैं हम अपने को स्वतन्त्र करने का अधिकार नहीं है ? हां अधिकार है पर फिर हमारे सोने की अवस्था में जो हमें स्वार्थियों ने निहत्था कर दिया है उसका क्या इलाज हो। इतने में फिर उसी पक्षी की आवाज सुनाई दी असहयोग, स्वावलम्बन धैर्य, उत्साह !! उधर देखा तो पक्षी उड़ता हुआ चला गया।

अभ्युत्सव कैसे मनाया जाना चाहिए था ?

(लेखक श्री पं० सत्यदेव विद्यालंकार)
सम्पादक विजय देहली)

वर्तमान भारतीय राष्ट्र के आचार्य आर्य्यावर्त-वासियों के गुरु आर्य्य-महात्मा गान्धी का हाल ही का सन्देश पढ़कर कि "दिवाली कैसे मनाई जानी चाहिये।" मेरे दिल में कुछ भाव पैदा हुए हैं। आचार्य लिखते हैं "दिवाली मनाने के लिए राम राज्य चाहिये—रावण राज्य में दिवाली कैसे मनाई जा सकती है ?" फिर गुरु कहते हैं कि "जिस राजा की प्रजा को पीने को दूध नहीं, खाने को अन्न नहीं, पहिनने को वस्त्र नहीं और जिस राजा की प्रजा बिना कारण कतल करदी जाती है, जो राजा गांजा, भांग, अफीम, शराब का व्यापार करता है, जो राजा सूअर का मांस खाकर मुसल्मानों का और गोमांस खाकर हिन्दुओं का दिल दुखाता है, जो मुसल्मानों के धर्म की परवाह नहीं करता और जो जुये की घुड़दौड़ करता है—उसकी प्रजा दिवाली कैसे मनाये ?" अन्त में गुरुवर कहते हैं कि "जब रामराज्य की स्थापना हो जायगी अपनी इच्छानुकूल अपना राज्य स्थापन कर लेंगे, रावण राज्य नष्ट हो जायगा तब हमारा अधिकार होगा कि दिवाली मनावें—इस समय दिवाली न मनाना, पकवान न खाना, रोशनी न करना ही आपद्धर्म है।" महर्षि दयानन्द का चेला यह शब्द पढ़ता है और इसी दिन, इसी रात्रि स्वर्गारोहण करने वाले महर्षि की दिवंगत आत्मा को नमस्कार करता हुआ इन शब्दों पर विचार करता है। महर्षि के सच्चे चेले के दिल में क्या विचार उठते हैं ? वह दिवाली के साथ साथ मनाये जाने वाले 'अभ्युत्सव' पर विचार करता है और अपने मन से पूछता है कि क्या मुझे 'अभ्युत्सव' मनाने का अधिकार है—यदि है तो यह उत्सव किस भांति मनाया जाना चाहिये ?

पहिले प्रश्न का उत्तर यही मिलता है कि मुझे "अभ्युत्सव' मनाने का अधिकार ही नहीं है। सचमुच मैं ऋषि का सच्चा चेला हूं। महर्षि का अनुयायी हूं। उसका शिष्य हूं। फिर मुझे क्यों अधिकार नहीं ? मुझे इस लिये यह उत्सव मनाने का अधिकार नहीं कि मेरे भाई आपद् ग्रस्त हैं, विपत्ति में पड़े हैं, दासता में पड़े हैं। मैने उन्हें उस से बचाने का उससे उभारने का कुछ भी यत्न नहीं किया। मैने उस राष्ट्रनायक, देशभक्त गुरु महर्षि दयानन्द को समझा ही नहीं—उसकी देश भक्ति को मैंने चीन्हा ही नहीं इसी लिये मेरा अधिकार नहीं कि महर्षि का चेला होता हुआ—उत्सव अभ्युत्सव मनाऊं। भगवान् दयानन्द की मातृभक्ति, स्वदेशभक्ति को मैने जाना ही नहीं तब कैसे दिवाली या अभ्युत्सव मनाऊं ? शक्ति के उपासक, भक्ति के नायक महर्षि का मैं चेला और मेरे भाई आपत्ति झेल रहे हों—मैं उत्सव मनाऊं—यह सम्भव ही नहीं। कदापि सम्भव नहीं।

महर्षि की आर्यावर्त के प्रति अप्रतिम देशभक्ति, मातृभक्ति को जान कर समझ कर और उसे क्रिया में लाकर ही मेरा अधिकार होगा कि मैं उत्सव मनाऊं—पहिले नहीं। महर्षि का आदेश है कि "कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है—अथवा मतमतान्तर के आग्रह रहित, अपने और पराये का पक्षपात शून्य, प्रजा पर पिता माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।" महर्षि के इस आदेश पर भी मैं अन्धकार में पड़ा रहा। अपने देश के विदेशियों से पादाक्रान्त होने पर भी मैं इसे स्वर्ग समान सुख समझता रहा अपने अखण्ड चक्रवर्ती राज्य के बाद रहे सहे स्वदेशी राज्य के धूल में मिल जाने पर भी मैं बेसुध पड़ा रहा और इसी में कीट कीटाणुओं की तरह सुख जानता रहा। महर्षि का एक आदेश धारण करूं—यही बस अभ्युत्सव है—दूसरा नहीं। आज दूसरे आचार्य महात्मा गांधी ने आंख खोली है—बस अब आंख न मूंदूं—यही 'अभ्युत्सव' है।

महर्षि ने कहा था कि "क्या बिना देश देशांतर में राज्य वा व्यापार किये स्वदेश की उन्नति कभी हो सकती है। जब स्वदेश में ही (बाहिर नहीं) स्वदेशी लोग व्यवहार करते और परदेशी स्वदेश में व्यपार व राज्य करें तो बिना दारिद्र्य और दुःख के दूसरा कुछ भी नहीं हो सकता।" और "जब से विदेशी मांसाहारी इस देश में आके गो आदि पशुओं को मारने वाले मद्यपानी राज्याधिकारी हुये हैं तब से क्रमशः आर्यों के दुःखों की बढ़ती होती जाती है।" मैंने इस दुःख दारिद्र्य के प्रतीकार के लिये कुछ भी नहीं किया। पहिले दुःख दूर करलूं। दारिद्र्य हटालूं फिर उत्सव भी करलूंगा। पहिले प्रसन्नता की अवस्था तो पैदा करलूं। पहिले खुशी की सामग्री तो समेट लूं फिर खुशी भी मनालूंगा—'उत्सव' भी करलूंगा पर अभी नहीं और अभी बिलकुल नहीं। महर्षि का उपदेश मैं भूलगया था—आज महात्मागांधी ने मुझे उसे फिर याद कराया है। अब मैं इसे न भूलूंगा और इसे क्रियात्मक कर के ही गुरुदेव का 'उत्सव' मनाऊंगा।

गुरुवर ने मुझे स्वदेशी का पाठ पढ़ाया था और अंग्रेजों के जीवन से शिक्षा दी थी कि "देखो अपने देश के बने हुये जूते को कार्यालय (आफिस) और कचहरी में जाने देते हैं, इस देशी जूते को नहीं। इतने में ही समझ लेओ कि अपने देश के बने जूतों का भी कितना मान प्रतिष्ठा करते हैं—उतना भी अन्य देशस्थ मनुष्यों का नहीं करते। देखो ! कुछ सौ वर्ष से ऊपर इस देश में आये युरोपियनों को हुये और आज तक ये लोग मोटे कपड़े आदि पहिरते हैं जैसा कि स्वदेश में पहिरते थे—परन्तु उन्होंने अपने देश का चालचलन नहीं छोड़ा और तुम में से बहुत से लोगों ने उनका अनुकरण कर लिया। इसी से तुम निर्बुद्धि और वे बुद्धिमान् ठहरते हैं।" मैं अपनों को भेड़ों की तरह मार खाता पिटता देखता रहा और गोरों के काले कुत्तों को अपने से बढ़िया हालत में देखता रहा। इसका रहस्य यद्यपि महर्षि जता गये थे पर मैंने उसे नहीं समझा; नहीं जाना। आज

दूसरे गुरु मुझे फिर 'स्वदेशी का सन्देश' सुना रहे हैं, इसे सुन कर पहिले पालन करलूं-फिर दिवाली और श्रद्धुत्सव दोनों मनाऊंगा। बड़ी खुशी, बड़ी प्रसन्नता से मनाऊंगा। अभी नहीं।

महर्षि तमगों राजपदों और खिताबों की अपेक्षा अपना धर्म अधिक प्यारा बताते हुये कह गये थे कि "जब पतलून आदि वस्त्र पहिरते हो और 'तमगों' की इच्छा करते हो तो क्या यज्ञोपवीत आदि का बड़ा भार हो गया था।" और "ब्रह्मा से लेकर आर्यावर्त में बहुत से विद्वान् हो गये हैं--उनकी प्रशंसा न करके युरोपियन ही की स्तुति में उतर पड़ना पक्षपात और खुशामद के बिना क्या कहा जाय।" मैंने यह भी भुला दिया। महर्षि का अपने को चेला कहते हुये भी मैं दूसरों की प्रशंसा कर खुशामद करता रहा। बस अब किसी भी प्रकार की खुशामद न करूंगा और न करने दूंगा--और फिर 'उत्सव' मनाऊंगा। पहिले नहीं।

मैं महर्षि का चेला हूं। महर्षि की सर्वस्व आर्यसमाज का सेवक हूं। महर्षि ने आर्यसमाज की स्थापना आर्यावर्त के उपकार के लिये की थी और साफ ही लिखा था कि "जो उन्नति करना चाहो तो "आर्यसमाज" के साथ मिलकर उस के उद्देश्यानुसार आचरण करना स्वीकार कीजिये नहीं तो कुछ हाथ न लगेगा क्यों कि हम और आप को अति उचित है कि जिस देश के पदार्थों से अपना शरीर बना, अब भी पालन होता है, आगे होगा--उसकी उन्नति तन मन, धन से सब जने मिलकर करें। इस लिये जैसा आर्यसमाज आर्यावर्त देश की उन्नति का कारण है वैसा दूसरा नहीं हो सकता।" मैंने आर्यसमाज का सेवक होते हुये इस ओर कभी ध्यान भी नहीं फेरा। आर्यावर्त की उन्नति को होता जान कर भय खाता रहा। अब कुछ सुध आयी है। अब आर्यावर्त की उन्नति में सहायक हो कर ही आर्यसमाज के उद्देश्य को पूरा कर इसका सच्चा सेवक कहाऊंगा। "अपनी ही नहीं परन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझूंगा" और फिर 'उत्सव' मनाऊंगा। अभी तो मुझे कोई अधिकार ही नहीं है--चाहे मैं महर्षि का चेला भी हूं।

मैं मनुष्य हूं? नहीं। जब मैंने महर्षि का लेख पढ़ा, मुझे सन्देह हो गया। मैं मनुष्य कैसे हूं? महर्षि ने तो लिखा है कि "मनुष्य उसी को कहना कि मननशील हो कर स्वात्मवत् अन्यों के सुख दुःख और हानि लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किंतु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं की चाहें वे महा अनाथ निर्बल और गुणरहित क्यों न हों उनकी रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ, महाबलवान और गुणवान भी हो तथापि उस का नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे अर्थात जहां तक हो सके वहां तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे--इस काम में चाहे उस को कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावें परन्तु इस मनुष्यपन रूप धर्म से पृथक कभी न होवे।" हाय! आज मुझे अपनी हालत पर, अपने पर रोना आता है। हैं क्या मैं सच मुच मनुष्य हूं? महर्षि के कहे मनुष्यपन रूप धर्म का तो पालन ही नहीं किया। तब मनुष्य कैसे? राजभय से, कायरता से, संकुचितभाव से या किसी भी कारण से--पर यह सत्य है कि मैंने इस धर्म का पालन नहीं किया। प्राण के मोह से, सम्पत्ति के लोभ से, मैंने अपने दुःखी भाइयों की आह की दरद को अनुभव नहीं किया। परन्तु उलटा इस 'रावणराज्य' का भय खाये बैठा रहा। तब मैं मनुष्य कैसे? पहिले मनुष्य बन लूं। मनुष्यपन धर्म को जान कर उसका पालन करलूं। मनुष्यपन हासिल करलूं। तभी उत्सव मनाऊंगा। दिल उदार करलूं, निर्भय कर लूं--फिर ही मैं उत्सव मनाने का अधिकारी होऊंगा। पहिले दिल और दिमाग में--फिर भाई बन्धुओं और देश में 'रामराज्य' की स्थापना कर लूं--तभी उत्सव मनाऊंगा। अभी तो मैं मनुष्य ही नहीं और मेरा अधिकार भी नहीं। महात्मा गांधी ने मुझे मननशील हो कर अपनी तरह दूसरों के सुख दुःख, हानि लाभ को समझना बताया है। अन्यायी चाहे वह चक्रवर्ती भी है उसके अप्रियाचरण का राह (असहयोग) दिखाया है। अब महर्षि के बताये और महात्मा के दिखाये राह पर चल कर मनुष्य बनूंगा। मनुष्य बन कर ही उत्सव मनाऊंगा। अभी नहीं।

मेरा अधिकार तो नहीं पर महर्षि के प्रति अगाध भक्ति, गुरु के प्रति अप्रतिम निष्ठा, देश के प्रति अनुपम श्रद्धा मुझ अनधिकारी को भी 'उत्सव' मनाने के लिये प्रेरित कर ही रही है। अधिकारी तो नहीं हूं--पर अनधिकार चेष्टा भी नहीं करना चाहता। रुका नहीं जाता--पर गुरु? अधिकार न होते हुये आगे बढ़ा भी नहीं जाता। कहु क्या करूं?

उत्सव मनाऊंगा। कैसे? रोशनी करके नहीं। बाजा बजा के नहीं। पकवान खाके नहीं। राग रंग करके नहीं। परन्तु तेरे ही ध्यान में मग्न हो कर हे गुरु! हे आचार्य! हे महर्षि! तुझे नमस्कार करता हुआ ही तेरा उत्सव मनाता हूं। तेरे ही शब्दों में तेरे उत्सव पर जगदीश से हाथ जोड़ता हूं कि "ओ३म् क्षत्राय त्विष्यस्व"- हे महाराजाधिराज परब्रह्म! 'क्षत्रप' अखण्ड चक्रवर्ति राज्य के लिये शौर्य, धैर्य, नीति, विनय, पराक्रम और बलादि उत्तम गुणयुक्त कृपा से हम लोगों को यथावत् पुष्ट कर--अन्य देशवासी राजा हमारे देश में कभी न हों तथा हमलोग पराधीन कभी न हों।"--अदीनाः स्याम शरदः शतम्" सम्पूर्ण आयु भर स्वतन्त्र रहें।'

बस यही उत्सव का दिन है मनाना है--जिसे तेरे ध्यान में मग्न मैं आज मना रहा हूं॥

--:o:--

धर्म का भाव

(लेखक-भारतहितैषी मिस्टर सी- एफ एन्ड्रूज)

धर्म का भाव पूर्वी देशों में मानव प्रकृति का एक अङ्ग ही बन गया है। भारतवासी अथवा चीन निवासी अपने पारिवारिक कर्तव्य को उपेक्षा की दृष्टि से नहीं देख सकते। चाहे कोई सम्बन्धी कितनी ही दूर का क्यों न हो लेकिन उसके प्रति जो कर्तव्य है पूर्वी देशों के निवासी उसे अवश्य मानते हैं और इसी वजह से पश्चिमी देशों के दरिद्र—गृहों के अपमानों को पूर्वी देशों के निवासी बिल्कुल जानते ही नहीं। धार्मिक भाव की ही वजह से भारत और चीन के निवासी युद्ध तथा विजय के अवसर पर भी दयालुता से काम लेते हैं। मन में स्वार्थ तथा हिंसा के जो भाव होते हैं वे धार्मिक प्रवृत्ति के कारण दबे हुए और नियमित अवस्था में रहते हैं, और इसी कारण से स्वार्थ तथा हिंसा के भावों को भारत तथा चीन के निवासियों ने पश्चिमी देशों की अपेक्षा कहीं अधिक दमन कर के रखा है। भले ही भारत और चीन पर कुछ समय के लिये युद्ध प्रिय असभ्य क्रूर जातियों का अधिकार रहा हो लेकिन तब भी उनकी आन्तरिक जीवन-शक्ति कायम रही है और जीवन के प्रश्नों पर जिस धार्मिक दृष्टि से वे देखते आये हैं उसे विदेशी लोगों की पराधीनता अब तक नहीं तोड़ सकी।

जापान का निर्दय आक्षेप

कुछ वर्ष बीते मैं जापान गया हुआ था। जापानी समाचार-पत्रों ने उस समय टोक्यो के विश्वविद्यालयों के छात्रों से कहा था "भारतीय कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर की बातों को मत सुनो क्यों कि वे एक पराजित जाति के कवि हैं" यह आक्षेप वास्तव में क्रूरता पूर्ण था और जापान जैसी उदार-हृदय जाति के लिये अयोग्य भी था। यही नहीं, यह आक्षेप असत्य भी था क्यों कि जब हम इस आक्षेप को इतिहास की कसौटी पर कसते हैं तो इस का इलकापन फौरन ही स्पष्ट हो जाता है। ऐतिहासिक दृष्टि से यदि देखा जावे तो पता लगेगा कि केवल धन सम्पत्ति या शक्ति से किसी जाति के विजय या पराजय का निश्चय करने का ढङ्ग बिलकुल अवैज्ञानिक है। लोग समझे हुए हैं कि केवल शक्ति और धन सम्पत्ति ही संसार की मुख्यतम वस्तु हैं! जब यूरोपीय सभ्यताओं की जांच की जाती है तो उनकी कुछ वर्षों के अथवा कुछ शताब्दियों के इतिहास की ही नहीं बल्कि उन की सहस्रों वर्षों के इतिहास की जांच की जाती है और तब इस परीक्षा में धन सम्पत्ति की कसौटी बिल्कुल झूठी साबित हो जाती है।

जापान इस समय बाह्य दृष्टि से भले ही अपराजित हो लेकिन यदि वह इस ढङ्ग से अपनी आत्मा को खोदे तो उसकी आन्तरिक पराजय उसकी बाहिरी हानि से कहीं अधिक भयंकर होगी।

यही नहीं, बल्कि जितनी ही सूक्ष्म दृष्टि से हम इतिहास का अध्ययन करेंगे उतनी ही अधिक यह बात हमें स्पष्ट हो जावेगी कि जातियों के उत्थान और पतन पर विचार करते हुए हमें भौतिक हानि लाभ अथवा राज्य विस्तार या राज्य हरण के शब्दों को तिलांजलि देनी पड़ेगी और जातियों के उत्थान या पतन का अन्दाज़ा लगाने के लिये हमें दूसरे शब्द तलाश करने होंगे।

एशिया में यहूदी

जो कुछ मैंने ऊपर कहा है उस का अर्थ पूरी पूरी तरह से समझाने के लिये मैं एक और आश्चर्य जनक उदाहरण दूंगा। जब कि अत्यन्त शक्ति शाली रोमन साम्राज्य अपनी उन्नति की चरम सीमा पर पहुंचा हुआ था और जब कि उसने अपने बाहिर के विरोधियों को

दीपावली

(श्रीयुत "बी० एस० पथिक")

(१)

दीपमाला आती हर वर्ष, 'अमा' का तिमिर हटाती हुई।
दिखाती हुई नव्य आदर्श, नव्य प्रतिभा फैलाती हुई॥
किन्तु सुनता है उसकी कौन, यहां किसके हैं दोनों नेत्र।
मित्र इस पाप पुरी में कहां ढूंढते तुम प्रकाश का क्षेत्र॥
यहां वे मनुज -- मनुज ही नहीं, जिन्हें हो अन्धकार से बैर।
छोड़ यह धुन बैठो चुप चाप, मनाओ निज जीवन की खैर॥

(२)

"मांस भक्षक पशु-- बिल्ली, काक, दुग्ध झूठा करदें, कर जायें।
देखना किन्तु नीच के स्वच्छ-हाथ उससे न कहीं लग जायें॥
मनुज है तो है, उसने जन्म-लिया क्यों 'भारत' में ही भला?
क्यों लिया सेवा का यह काम, हुआ क्यों 'हिन्दू' वह मन चला?"
जहां सुनते ही शब्द 'सुधार', तुरत मच जाती है खलबली।
वहां है ढोंग, मनाना, बन्धु!, होलिका हो या दीपावली!

(३)

पड़े हैं उधर महल में मस्त, सुरीली तानें सुनते हुए।
ठिठुरते इधर गरीब किसान, खेत में तिनके चुनते हुए॥
सहस्रों मदिरा पर कुर्बान, उधर होते ही हैं दिन रात।
उधर भोजन छादन तो दूर, नहीं गुड़ धानी तक की बात॥
किन्तु है कहां आंख या हृदय, देखकर इनको जो रो दे?
'दीपमाला' का शुभ प्रकाश, प्रखरता, तम जिसका खो दे?

(४)

यहां तो हैं वे, जो कर्तव्य—धर्म का पाठ पढ़े ही नहीं।
दया, मनुजत्व, प्रेम के उच्च--शिखर पर कभी चढ़े ही नहीं॥
कर्म है उनका भोजन, पान! धर्म है सुख विलास का ध्यान!
दान है खुशामदी का मान!!! अध्ययन कोकशास्त्र का ज्ञान!
उन्हीं में तुम कहते हो आज-मनेगी सच्ची दीपावली।
वहां क्या शय है दीपावली जहां होली की दाल न गली॥

—:०:—

पराजित कर दिया था उस समय एक छोटी सी जाति—यहूदी जाति—जाहिरी रूप से पूर्णतया पराधीन हो चुकी थी। यहूदी जाति के लिये पराधीनता का यह पहला ही मौक़ा न था।

अनेक साम्राज्य शाली शक्तियां यहूदियों को पददलित कर चुकी थी मिस्र, बेबीलोनिया, एसीरिया, यूनान और रोम। लेकिन जब रोमन साम्राज्य के शासन में यहूदी जाति पराधीनता की पराकाष्ठा को पहुंच गई थी उस समय एक सीधी सादी ग्रामीण कुमारी मरियम गा रही थी।

"मेरी आत्मा प्रभु की महिमा का गान करती है और मेरा अन्तःकरण रक्षक परमात्मा के भजन में प्रसन्नता प्राप्त करता है। परमात्मा ने मुझ दासी की नम्रता पर ध्यान दिया है। देखो आने वाली पीढ़ियां मुझे सौभाग्यवती कहेंगी क्योंकि महाशक्तिशाली परमात्मा ने मुझे महत्व प्रदान किया है। उस परमात्मा का नाम पवित्र है। जो मनुष्य उस से डरते हैं उन पर वह परम्पार से दया करता है"

"परमात्मा ने अपनी भुजाओं की शक्ति प्रदर्शित की है। अभिमानियों का उसने मान तोड़ा है और उन की हार्दिक कल्पनाओं को भग किया है। जो शक्ति शाली हैं उन्हें उच्चपद से हटाकर नीचे गिरा दिया है, और विनम्र तथा दीन मनुष्यों को उसने उच्च पद प्रदान किया है। भूखों को उसने अच्छा भोजन दिया है और धन वानों को उसने खाली हाथ लौटा दिया है।"

जिस दिन मरियम ने यह गीत गाया था उस दिन को बीते आज सैकड़ों वर्ष हुए। वह शक्ति शाली रोमन साम्राज्य धूल में मिल गया। परमात्मा ने अभिमानियों के मान को तोड़ दिया और उन की हार्दिक कल्पनाओं को भंग किया" और उसने "विनम्र तथा दीन मनुष्यों को उच्च पद प्रदान किया" क्योंकि यहूदी लोगों के धार्मिक हृदय से मरियम के पुत्र प्रभु क्राइस्ट का जन्म हुआ। क्राइस्ट ने अपनी यहूदी जाति के लिये कोई राजनैतिक उन्नति अथवा शक्ति प्राप्त करने में सहायता नहीं दी।

हाय ! किधर !!

किधर प्रभु ! मुझको है भटकाया ? ॥ ध्रुव ॥
आओ हे प्यारे प्राणनाथ ! मुझे यहां क्यों बिसराया।
क्यों ऐसे भागी विपिन बीच मुझे कहो है बिठलाया ॥
हूं इकला, सूझे न कुछ हाय ! चारों ओर तिमिर छाया।
मुंह बाये घूमें कुटिल जीव मेरा हृदय है अकुलाया ॥
मैं देखी तेरी बहुत बाट होगी दीन पै कब दाया।
बीते हैं लाखों बरस नाथ ! तेरा पता न कुछ पाया।
अब आवो मेरे निकट देव ! आओ बहुत हुई माया ॥

आकाश यात्री

क्राइस्ट ने सत्य पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया, घर की दूकान पर या पहाड़ों पर एकान्त स्थान में अथवा रेगिस्तान में क्राइस्ट ने अच्छी तरह ध्यान किया और उसने धार्मिक विचारों को मानव समाज के हृदय में इतनी गहराई तक पहुंचा दिया कि तब से अब तक वे विचार उत्पन्न हो रहे हैं, नवीन जीवन का संचार कर रहे हैं और धन्यपूर्ण संसार को बहु मूल्य फल प्रदान कर रहे हैं।

एक "पराजित जाति"

यदि जापानी समाचार पत्रों की दृष्टि से देखा जावे तो यहूदि जाति भी एक "पराजित जाती" ही कहलावेगी लेकिन यदि कोई जिम्मेदार इतिहास इस तरह का परिणाम निकाले तो उसका यह कथन कितना उथला और गम्भीरता हीन समझा जावेगा!

इस से भी अधिक ध्यान देने योग्य बात यह है कि एशिया के यहूदी भी एक ऐसी जाति के हैं जिसकी सच्ची स्वाभाविक प्रवृत्ति सदा धर्म की ओर ही रही है। यहूदी लोगों का पूर्ण पराजय अभी तक नहीं हुआ यद्यपि वे सारी पृथ्वी पर अनेक भागों में छिन्न भिन्न अवस्था में पड़े हुए हैं यहूदियों के पराजित न होने का कारण वही है जो भारतवर्ष के पराजित न होने का है। गम्भीर धार्मिक प्रवृत्ति ने ही भारत वर्ष को नष्ट होने से बचाया है और इसी प्रवृत्ति ने ही यहूदियों की नाश से रक्षा की है। इन दोनों जातियों के राष्ट्रीय जीवन में रूह फूंकने वाली चीज़ यही रही है और—इसी की वजह से ये दोनों जातियां ज़िन्दा हैं।

एशिया के महत्व का मर्म

एशिया में ही सब सभ्यताओं का पालन पोषण हुआ था और यहि सब धर्मों का जन्म स्थान है। जितना ही अधिक मैंने एशिया के इस ऐतिहासिक प्रश्न पर विचार किया है उतने ही अधिक विश्वास के साथ मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूं, कि एशिया—वासियों के स्वभावतः धार्मिक होने से ही वो अब तक जीवित रहे हैं, जबकि अन्य जातियां नष्ट हो चुकी हैं। संसार के सभी महान धर्मों के जन्म दाता एशिया में ही उत्पन्न हुए और यह ऐतिहासिक घटना यों ही दैव योग से घटित नहीं हुई।

वर्तमान ख़तरा

यदि कभी ऐसा समय आवे जब कि एशिया के निवासी पाश्चात्य देशों की आर्थिक शक्तियों से मुग्ध हो कर अपनी ईश्वर दत्त प्रतिभा को परित्याग करदें तो मैं नहीं कह सकता कि यह पतन—एशिया का ही पतन नहीं बल्कि मानव जाति का पतन कितना भयंकर होगा।

मेरे मन में सदा यही विचार घूमते रहते हैं और इनसे आप समझ सकते हैं कि मनुष्य जाति को एशिया ने जो विशेष वस्तु प्रदान की है उसको मैं कितनी अधिक क़ीमती चीज़ ख्याल करता हूं। अब यह बात भी ठीक तरह से आप की समझ में आजायगी कि राजनैतिक परिस्थिति अथवा सामाजिक परिवर्तन के विषय में भी बात चीत करते हुए मैं क्यों इसका सम्बन्ध धर्म से लगाये बिना नहीं रह सकता।

ऋषि दयानन्द और राजनीति

प्रश्न की कठिनता

क्या आर्यसमाज का राजनीति से कोई सम्बन्ध है ? यह एक बड़ा सरल प्रश्न है और इस का उत्तर भी सरल है। परन्तु कठिनता इस लिये उत्पन्न होती है कि भिन्न २ सम्मतियों वाले लोग जब इस पर विचार करने लगते हैं तब कुछ साधारण शब्दों के अर्थों में परस्पर झमेला डाल देते हैं। वह साधारण शब्द यह हैं वैदिकधर्म। ऋषिदयानन्द का अपना मत। एक आर्यसमाजी के सिद्धान्त और कर्त्तव्य। आर्यसमाज के नियम और सगठन। इन चार चीजों को एक दूसरे के साथ ऐसे पेच में उलझाया जाता है कि एक सरल प्रश्न विकट हो जाता है और उत्तर देना कठिन ही नहीं, असम्भव प्रतीत होने लगता है। प्रश्न पर ठीक विचार करने के लिये इन चारों चीजों की जुदा २ व्याख्या करके राजनीति के साथ इन का सम्बन्ध दिखाता हूं ताकि हमारे प्रस्तुत प्रश्न का ठीक २ उत्तर आसके।

वेद और राजनीति कर्त्तव्य

वेद मनुष्य मात्र के लिये हैं। वह व्यक्तिगत, सामाजिक, धार्मिक आर्थिक राजनीतिक वैज्ञानिक—अधिक क्या, मनुष्य-जीवन से सम्बन्ध रखने वाले हरेक पहलू पर प्रकाश डालते हैं। यह ऋषिदयानन्द का सिद्धान्त था—यही आर्यसमाज का विश्वास है। आर्यसमाज वेद को सब सत्य विद्याओं की पुस्तक मानता है, आधिदैविक आधिभौतिक और आध्यात्मिक—इन तीनों प्रकार के संसार की हरेक मात्रा के बारे में वेद का निर्देश होना आवश्यक है। यह केवल युक्ति के बल पर सिद्ध होता है। यदि वेदों को निकाल कर पढ़ें—या उस का कोई भी उत्तम भाष्य देखें तो यह मानना पड़ेगा कि वेदों में मनुष्य के राजनैतिक सम्बधों की बहुत विस्तृत और विशद व्याख्या है। राजा कैसा हो ? वह कैसे चुना जाय ? प्रजा का क्या कर्त्तव्य है ? शत्रु के साथ क्या व्यवहार होना चाहिये ? न्याय आदि विभाग किस प्रकार चलाये जायं ? इत्यादि सब प्रश्नों के अत्यन्त स्पष्ट उत्तर वेदों में पाये जाते हैं। इन विषयों पर सूक्तों के सूक्त भरे पड़े हैं। वेद में पूरी राजनीति बीज रूप में विद्यमान है। इस से कोई भी इन्कार नहीं कर सकता।

एक वेदानुयायी का कर्त्तव्य

जो आदमी वेदों को धर्म पुस्तक मानता है वह वेद के सब सिद्धान्तों को मानता है। वेद के राजनीतिक सिद्धान्त भी उसे माननीय होंगे। वह कभी राजनीतिक सिद्धान्तों से हीन नहीं हो सकता। उसे वही राजनीतिक सिद्धान्त मानने होंगे, जो वेदों में प्रतिपादित हैं आर्यपुरुष के विचार और कर्म में भेद नहीं होना चाहिये। वेदों का सच्चा अनुयायी राजनीतिक मामलों में जैसे विचार रखेगा—व्यवहार में वैसा ही आचरण करेगा। वेद ने जिन व्यक्तिगत धर्मों का विधान किया है, उन्हें वह आचरण में लाता है, उसी प्रकार सच्चे वैदिक धर्मी का कर्त्तव्य है कि वह वेद के राजनीतिक सिद्धान्तों को भी माने और व्यवहार में लावें। यदि वह ऐसा करने से कतराता है तो वह वेद का मानने वाला नहीं वेद के कुछ भाग का मानने वाला है।

ऋषिदयानन्द का अपना मत

वेदों के व्याख्याकार, आर्यसमाज के संस्थापक, युग के कर्त्ता ऋषिदयानन्द ने मनुष्य जीवन सम्बन्धी प्रत्येक विषय पर अपनी सम्मति दी है। राजनीति को भी उन्हों ने अपने सत्यार्थ प्रकाश में काफी ऊंचा स्थान दिया है। छटे समुल्लास में राजा और प्रजा के पूरे कर्त्तव्य बतलाये हैं। हरेक विषयपर उनकी सम्मति मिल सकती है। राज्य का संगठन, न्याय, शिक्षा आदि विभाग; प्रजा के कर्त्तव्य; राजा के अत्याचार की दशा, प्रजा के अपराधों के दण्ड सारांश यह कि सब राजनीतिक विषयों की व्याख्या ऋषि के ग्रन्थों में मिल सकती है ऋषिदयानन्द व्यक्ति और जाति के लिये राजनीति को इतना ही आवश्यक समझता था, जितना आवश्यक किसी भी अन्य संस्था को।

ऋषि के अनुयायी का कर्त्तव्य

जो आदमी ऋषि दयानन्द का अनुयायी है, वह किसी दशा में भी अपने आपको राजनीति से जुदा नहीं रख सकता। ऋषि राजनीति को मनुष्य-समाज के जीवन का आवश्यक अंग मानता था ऋषि का अनुयायी उसे तुच्छ, हेय या उपेक्षा के योग्य वस्तु नहीं समझ सकता। वह राजनीति के सम्बन्ध में अवश्य अपने विचार रखेगा और राजनीतिक सम्बन्धों में उन्हीं को व्यवहार में लायगा। कई लोग धर्म को अपनी सहूलियत की चीज़ बनाना चाहते हैं। वह समझते हैं कि धर्म का जितना भाग आराम से बर्ता जा सके उतना ही बर्तना चाहिये शेष छोड़ देना चाहिये। ऐसे लोग कायरों की श्रेणी में गिने जाने योग्य हैं-ऋषिदयानन्द निर्भय महावीर—के सच्चे शिष्य वही हो सकते हैं जो कि राजदण्ड, समाजदण्ड, और धर्मदण्ड का भय न करते हुए छाती ठोक कर सर्वांगसम्पूर्ण धर्म को मानने और व्यवहार में लाने के लिये तय्यार हों।

आर्यसमाज और राजनीति

ऋषिदयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना वैदिक धर्म के लिये की। उनका उद्देश्य था कि वेदों के मानने वाले आस्तिक लोग इस समाज में एकत्र हो कर वैदिक धर्म की सचाई को ज्ञान और कर्म में फैलावें। आर्यसमाज के दस नियमों में सब बातें सामान्य हैं-विशेष कोई नहीं। यदि आर्यसमाज केवल उपदेशक रख कर प्रचार कराता और अन्य कोई क्रियात्मक कार्य न करता- यथा, न कन्या पाठशालायें खोलना, न विधवाश्रम खोल कर विधवा-विवाह का उद्योग करता न स्कूल कालिज चलाता, न गोरक्षा का यत्न करता और न शराब आदि के निवारण का क्रियात्मक यत्न करता तो उसे बुराई कोई न देता। परन्तु आर्यसमाज ने देखा कि केवल मौखिक प्रचार से कुछ भी असर नहीं होता। जब तक व्यक्तिगत और सामाजिक रोगों का क्रियात्मक इलाज न किया जायगा तब तक वैदिक धर्म की उत्तमता पर लोगों का विश्वास न होगा। आर्यसमाज ने समाज सुधार और शिक्षा के कार्य को अपने हाथ में लिया और अच्छी सफलता लाभ की।

मतलब इस से नहीं कि आर्यसमाज ने कौनसे क्रियात्मक कार्य हाथ में लिये—मतलब इस से है कि केवल शाब्दिक प्रचार को छोड़कर क्रियात्मक प्रचार को

आर्यसमाज ने आवश्यक समझा। यह आकस्मिक घटना थी कि आर्यसमाज ने शिक्षासुधार को हाथ में लिया अथवा यों कह सकते हैं कि उसने वेदों के शिक्षा सम्बन्धी आदेश को क्रिया में परिणत कर दिखाने का निश्चय किया, राजनीतिक आदेश को नहीं। एक या दूसरे में कोई मौलिक भेद नहीं। दोनों ही मनुष्य समाजिक आवश्यक अंग है। दोनों के बारे में वेद ने अपनी व्यवस्था दी है। दोनों के सम्बन्ध में ऋषिदयानन्द अपनी स्पष्ट सम्मति दे गये हैं। वेदों के शिक्षा सम्बन्धी, या समाजसम्बन्धी आदर्शों को कार्य में परिणत करने का उद्योग आर्यसमाज यदि कर सकता है तो तर्क या न्याय की दृष्टि से वह चाहे तो राजनीतिसम्बन्धी वैदिक आदेश को कार्य में परिणत करने का उद्योग भी कर सकता है।

तर्क और न्याय के अनुसार आर्यसमाज राजनीति सम्बन्धी वैदिक सिद्धांतों का प्रचार और व्यवहार कर सकता है। इस मानते हुए भी यह ठीक है कि जब तक आर्यसमाज संघत्व में इसकी अनुज्ञा नहीं दे देता तब तक आर्यसमाज मन्दिर या समाज के उत्सवों में राजनीतिक व्याख्यान या राजनीतिक प्रस्तावों के लिये अवसर न देना उचित ही है—परन्तु स्मरण रखना चाहिये कि अभी उचित समय या पर्याप्त शक्ति न होने से आर्यसमाज की इस उपेक्षा को यह कह कर पुष्ट करना कि आर्यसमाज का राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं यह कहने के बराबर है कि आर्यसमाज को वेद के बहुत से भाग या ऋषिदयानन्द के बहुत से सिद्धान्तों से कोई सम्बन्ध नहीं।

आर्यसमाजी का कर्तव्य

वेद ऋषिदयानन्द और आर्यसमाज की स्थिति पर विचार करने के पीछे मैं इस विषय पर कुछ विचार करना है कि एक आर्यसमाजी का राजनीति से कोई सम्बन्ध होना चाहिए या नहीं? एक आर्यसमाजी आर्यसमाज में प्रविष्ट होता या आर्यसमाज के उद्देश्य से सहमति प्रकाशित करता है और उसके कार्य में सहायता देने का प्रण करता है। वह अपने आप को एक नये सम्बन्ध में बांधता है परन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं कि वह अपने अन्य सम्बन्धों को तोड़ देता है। उनमें से कई सम्बन्ध आर्यसमाज में आने से पहले की अपेक्षा प्रबल हो जाते हैं। दृष्टान्त लीजिये। एक आर्यसमाजी ब्राह्मण होगा, तो वह बहुत उत्कृष्ट ब्राह्मण होना चाहिये, और यदि वह क्षत्रिय या वैश्य हो तो अन्यों से उत्कृष्ट क्षत्रिय और वैश्य होना चाहिये। यदि एक आर्यसमाजी राजा है तो आदर्श राजा बनने का यत्न करेगा और यदि वह प्रजा है तो आदर्श प्रजा बनने का यत्न करेगा। वह अपने पिता का सुपुत्र होगा, पुत्रों का सुपिता होगा, सहधर्मिणी का अनुरक्त पति होगा, और अपने देशका उत्तम निवासी होगा।

एक कुपिता कुपुत्र कुपति या देशद्रोही कभी आर्यसमाजी नहीं रह सकता। आर्यसमाज में आकर समाज मन्दिर में बैठकर, उसके सभ्य की हैसियत से चाहे वह न पिता है न पुत्र है न राजा है न प्रजा है—परन्तु वह सारे जीवन के दिनों के २४ घण्टे उसी दशा में नहीं रह सकता। वह अपने लिए मार्ग बनाने में स्वतन्त्र है, शर्त इतनी है कि वह मार्ग धर्म विरुद्ध न हो। जो लोग आर्यसमाजियों को बिल के चूहे या कूप मंडूक बनाना चाहते हैं, वह वैदिक धर्म के महत्व को घटाते हैं।

वैदिक धर्म जैसे अन्य विषयों में मार्ग बताता है, ऐसे ही राजनीति में भी आदेश करता है। एक वैदिकधर्मी का कर्तव्य है कि वह जहां अपने अन्य सम्बन्धों को वेदों के अनुकूल ढालने का यत्न करे, वह अपने राजनीतिक सम्बन्धों की भी कायरता झूठी दूरदर्शिता आदि कारणों से उपेक्षा न करे। ऋषि दयानन्द का कोई भी शिष्य राजनीतिक सम्बन्धों की उपेक्षा नहीं कर सकता। ऋषि के ग्रन्थ राजनीतिक साधारण सचाइयों और भारत की तत्कालीन अवस्था से सम्बन्ध रखने वाली सचाइयों से भरे पड़े हैं। आर्यसमाज में प्रविष्ट होकर हरेक व्यक्ति का धर्म है कि वह वीरता और हिम्मत से व्यक्ति सम्बन्धी, समाज सम्बन्धी राजनीति सम्बन्धी और अर्थ सम्बन्धी सिद्धान्तों को माने, कहे और प्रयोग में लाये। इसमें शिथिल होना या पूरा न उतरना वेद, ऋषि दयानन्द के और आर्यसमाज के नामों का भारी अपमान करना है।

आसमानी डायरी!

आस्मां नोट बुक तू अपनी दिखादे हमको
अगले लोगों का हाल सुनादे हमको ॥
क्या हुआ वो ज़माना इल्मो हुनर का अथम।
अब आकाशना तू कुछ तो बतादे हम को ॥
कैद में पड़ गये हैं रौशनी सीता माता
राम लछमन हैं कहां वे बतादे हम को ॥
कृष्ण जी हैं कहां अब, और कहां वे पाण्डव
और भीम—युधिष्ठिर हैं कहां पर अर्जुन
हम तरसते हैं ज़रा उनसे मिलादे हम को ॥
व्यास ने गौतम ने देखी थीं किताबें जोकि
पास हों तेरे अगर वह ही पढ़ादे हम को ॥
अगली तारीख़ का हो तुझ पै खटा वक़्त अगर
चूमें—आंखों पे बिठायें और [illegible] हम को ॥
खाक आंबालों की हो तुझ पे अगर कुछ बाक़ी
काश में डाल लें गे सुर्मा बनादे हम को ॥
आग पर मिटते हुए दे गये हुए जो हड्डी
हम परस्तिश करें दीदार करादे हम को ॥
कुछ के कामों का सबक पढ़ने मे उन से कोई
ईश्वर प्यारे [illegible] तू मिलादे हम को ॥
तख़्त को छोड़ सुदामा के चरण धोये थे
उस पै कृष्ण का यक जुमला सिखादे हमको।
अफ़सोस फक्र वह इक वक्त हदे यातो मत तू
यत्न आराम से कवि [illegible] हमको ॥

[illegible]
(कुमार [illegible])

—:०:—

निवेदन

"श्रद्धा" का विशेषांक जिस तिथि को निकलने की सूचना पाठकों को दी गई थी कुछ विशेष कारणों से हम यह अंक उसी तिथि पर आपकी सेवा में उपस्थित नहीं कर सके हैं। इस विलम्ब के लिये हम क्षमा प्रार्थी हैं।

इस अंक में लेखों के क्रम में योग्यता का विशेष ध्यान नहीं रक्खा गया है। पाठक अपनी रुचि के अनुसार स्वयं ही निर्णय करलें।

अन्त में जिन लेखक महानुभावों ने हमारी लेख द्वारा सहायता की है हम उनका हृदय से धन्यवाद किये बिना नहीं रह सके; इन सब महाशयों के हम चिर कृतज्ञ रहेंगे।

सं० 'श्रद्धा'।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के मिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिए छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि ।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निमुचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः ।
(ऋ० म० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धालु करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | १२ मार्गशीर्ष सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३८ } ता० २६ नवम्बर सन् १९२० ई० | संख्या ३२ भाग १

हृदयोद्गार

दिवाली का सन्देश

"राम मेरा तू ये सदेशा उनको आप सुना देना ।
हूं कहां? पूंछे अगर तो यों पता बतला देना ॥"

सुनाने श्रीराम का सदेशा दिवाली आई दिवाली आई ।
ये तामसी राम राज की है उजाली कैसी निराली आई ॥ १ ॥
न चांदनी है न माथ स्वामी निशा अमावस में दीखते हैं ।
तो कौन कारण कि रात काली ये पूर्णिमा को लजाने आई ॥२॥
सुनो सुनो ये सुना रही है संदेश स्वागत का आज प्यारी ।
हरेक काले हृदय के अन्दर प्रकाश देने को काली आई ॥ ३ ॥
सुना रही है कि मैं उजेली हुई हूं श्रीराम के गुणों से ।
हरेक मानव-शरीर-धारी को राम के गुण सुनाने आई ॥ ४ ॥
श्री राम लक्ष्मण की बन्धु जोड़ी जो देश भारत में हो चुकी है।
मैं देश भारत निवासियों में वे जोड़ियां ही बनाने आई ॥५॥
गले में मेरे है आज देखो ये मंजु दीपों की कैसी माला ।
मैं वैसी उठे जो सज्जने सब दिलों की माला बनाने आई ॥६॥
ये दीप ज्योती जो टिमटिमाती विमल ये आलोक दे रही है ।
हरेक जीवन को तेज देने के जोग होना सिखाने आई ॥७॥
हमारे उत्साह से ये भारत में ऐसी लाखों दिवाली होंगी ।
मैं भव्य भारत के भावि उत्सव का ये सदेशा सुनाने आई ॥८॥
बढ़ाओ हाथों को प्रेम से अब लजीलापन आज छोड़ करके ।
गले मिलो प्रेम रस के चातक मैं प्रेम गीता पढ़ाने आई ॥ ९ ॥

"कैलाश"
गौहर

—:o:—

श्रद्धा के नियम

१. वार्षिक मूल्य भारत में ३॥), विदेश में ४॥), ६ मास का २) ।

२. ग्राहक महाशय पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखें ।

३. मास से कम समय के लिए यदि पता बदलना हो तो अपने डाकखाने से ही प्रबन्ध करना चाहिए ।

प्रबन्धकर्त्ता श्रद्धा
डाक० गुरुकुल कांगड़ी (जिला बिजनौर)

———

परमात्मने नमः ।

मानव धर्म शास्त्र की व्याख्या

पहिला अध्याय

(गतांक से आगे)

टि० यहां मनु भगवान् का संकेत नीचे लिखे वेद मन्त्र की ओर है:—ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः । ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥

यजुर्वेद० ३१ ॥ ११ ॥

इससे पहिले मन्त्रों में परमात्मा का विराट् रूप खींच कर, और उसके एक (आगत) पाद में ही रचना का सारा खेल दिखला कर दसवें मन्त्र में प्रश्न किया कि जिस परमेश्वर को विद्वान् पुरुष धारण करते हैं उसके विराट् रूप की कितने प्रकार से व्याख्या करते हैं । इस प्रश्न का उत्तर ११ वें [ऊपर दिए] मन्त्र में दिया है । उस विराट रूप पुरुष [यहां मनुष्य समाज को एक पुरुष कल्पना किया है] का मुख ब्राह्मण, बाहु राजपूत, ऊरू वैश्य और पैर शूद्र समझो । जिस प्रकार मनुष्य के शरीर में तीन जोड़ उसे चार भागों में विभक्त करते हैं, वैसे ही मनुष्य समाज भी परमात्मा ने चार भागों में विभक्त कर दिया । ब्राह्मण को मुख से उपमा दी है । गर्दन के जोड़ से ऊपर का सारा भाग मुख (मुख्य) कहलाता है । इसी प्रकार ब्रह्माण्डी में मुख्य ब्राह्मण है । मनुष्य के मुख्य भाग में (गर्दन से ऊपर ऊपर) पांचों ज्ञानेन्द्रिय हैं । आंख, कान, नाक, जिव्हा, त्वचा—पांचों को जो दिन रात ज्ञान प्राप्ति में लगा दे वह ब्राह्मण है, चाहे वह अफ्रीका के जंगल में ही क्यों न रहता हो । किन्तु ब्राह्मण बनने से ही नहीं बनता । मुख्य भाग में एक ही कर्मेन्द्रिय वाणी है, इस लिए जो प्राप्त किए हुए ज्ञान को ज्यों का त्यों दूसरों तक पहुंचा दे वह ब्राह्मण है । मनुष्य के मुख्य भाग में ही मस्तिष्क है जो सारे ढांचे का पथ दर्शक तथा प्रेरक है । इसी प्रकार मनुष्य समाज का मार्गदर्शक होने से ही एक व्यक्ति ब्राह्मण कहलाता है ।

इस विषय को श्री शंकराचार्य स्वामी अपने बनाए वज्र सूचिकोपनिषत् में बहुत स्पष्ट करते हैं । आचार्य प्रश्न उठाते हैं:—

ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्रा इति चत्वारो वर्णास्तेषां ब्राह्मण एव प्रधान इति वेदवचनानुरूपं स्मृतिभिरप्युक्तम् । ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र इन चारों वर्णों में ब्राह्मण ही प्रधान है इस वेद वचन के अनुसार स्मृति भी कहती है (मनु के उपरोक्त श्लोक की ओर इशारा है) तत्र चोद्यमस्ति; को वा ब्राह्मणो नाम ? किं जीवः किं देहः किं जातिः किं ज्ञानम् किं कर्म किं धर्म इति ? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कहते हैं कि जीव को ब्राह्मण नहीं कह सकते क्योंकि कर्मफल भोगने के लिए वह नाना देह धारण करता है । शरीर भी ब्राह्मण नहीं कहा जा सकता क्योंकि यदि ऐसा होता तो सब ब्राह्मण सफेद, क्षत्रिय लाल, वैश्य पीले और शूद्र काले रंग के होने चाहिएं । परन्तु ऐसा नहीं है । और यह भी है कि यदि देह को ब्राह्मण मानें तो मरने पर मृतक शरीर को दाह करने वाले सब सम्बन्धी ब्रह्महत्या के दोषी ठहरेंगे । जाति भी ब्राह्मण नहीं क्योंकि अन्य जातियों से बहुत महर्षि लोग उत्पन्न हुए हैं, यथा—ऋष्यशृंगो मृग्यः, कौशिकः कुशात् , जाम्बूको जम्बूकात्, वाल्मीको वल्मीकात्, व्यासः कैवर्तकन्यकायाम्, शशपृष्ठात् गौतमः, वशिष्ठ उर्वश्याम्, अगस्त्यः कलशे जात इति श्रुतत्वात् । एतेषां जात्या विनाप्यग्रे ज्ञानप्रतिपादिता ऋषयो बहवः सन्ति । (संस्कृत सरल, अर्थ स्पष्ट है) इस लिए जाति भी ब्राह्मण नहीं । ज्ञान भी ब्राह्मण नहीं क्योंकि क्षत्रियादि भी बहुधा परमार्थदर्शी होगए हैं । कर्म भी ब्राह्मण नहीं । धर्म भी ब्राह्मण नहीं क्योंकि क्षत्रियादि बड़े बड़े सोने का दान करने वाले होगए हैं । तब ब्राह्मण कौन है ? शंकर स्वामी का उत्तर स्पष्ट है—जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात् द्विज उच्यते । वेदाभ्यासी भवेद्विप्रः ब्रह्म जानाति ब्राह्मणः । जो ब्रह्म को जान कर जीवन मुक्त होने के साधनों में लगा हुआ है, वही ब्राह्मण है ।

क्षत्रिय को भुजा से उपमा दी है । शरीर के किसी अंग पर आक्रमण बाहिर से हो उसकी रक्षा भुजा द्वारा ही होती है । बाहिर से दो प्रकार के आक्रमण होते हैं—एक अन्य प्राणियों द्वारा और दूसरा दैवी घटनाओं द्वारा । अन्दर से ही जो विकार उत्पन्न होकर अन्तरीय आक्रमण होते हैं उनसे भी बाहु ही रक्षा करता है । शरीर के ही छोड़े मलों से शरीर को साफ करने का काम भी बाहु ही करते हैं—अर्थात् जहां ब्राह्मण मनुष्यसमाज को तीनों तापों (आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक) से बचने की विधि (उपदेश द्वारा) बतलाता है वहां क्षत्रिय उन विधियों को प्रयोग में लाकर मनुष्यसमाज की क्रियात्मक रक्षा करता है । इसलिए एक राष्ट्र में जितने पुरुष पुलिस तथा सेनाविभाग में लगे हुए राष्ट्र की, अन्तरीय तथा बाह्य आक्रमणों से रक्षा करते हैं, उन्हें क्षत्रिय कहा गया है । वैश्य को ऊरू से उपमा दी है । गले के जोड़ तक शरीर का भाग मुख, गले से नीचे श्रोणि के निचले जोड़ तक बाहु, और श्रोणि से नीचे जोड़ तक ऊरू भाग है । जो इस भाग की स्थिति शरीर में है, वह ही मनुष्य समाज में स्थिति वैश्य की है । जो भोजन मुख द्वारा चबाकर अन्दर किया जाता है उसे पचाकर विविध अंगों के उपयोगी रसादिक को उनमें पहुंचाना और इस प्रकार सारे शरीर को पुष्ट करने के लिए त्याज्य (मूत्र पुरीषादि) को बाहर फेंकने का साधन इसी भाग में है । इसी प्रकार वैश्य का काम यह है कि जिन अनाज और दुग्धादि से समाज के सभ्यों की पुष्टि होती है उनके उत्पन्न करने के लिए "उत्तम खेती और मध्यम व्यापार" करे तथा दुग्ध घृतादि सर्वसाधारण तक पहुंचाने के लिए दूध देने वाले पशुओं का पालन करे ।

शूद्र को पैर से उपमा इस लिए दी है कि उसका काम अन्य तीनों वर्णों की और अपनी भी सेवा करना है । मुख (मस्तिष्क) को यदि ज्ञानप्राप्ति के लिए किसी वस्तु के देखने, सुनने, स्पर्श करने आदिक के लिए किसी वस्तु के समीप ले जाना है तो वह सेवा पग करता है । क्षत्रिय रूपी बाहु यदि किसी दीन की सहायता के लिए फड़कती है तो पग उस को वहां पहुंचाता है । ऊरू में यदि कोई विकार हो जाय तो पग भ्रमण और व्यायाम द्वारा आमाशय को दृढ़ कर देता है । इसी प्रकार शूद्र भी अन्य तीनों वर्णों की सेवा करता है ।

अब ऊपर लिखित अलंकार को लक्ष में रख कर चारों वर्णों का संयुक्त लक्षण समझ में आजायगा ।

श्रद्धा

स्वाध्याय के लिए क्रियात्मक सलाहें

(१)

प्रायः आर्य्यसामाजिक लोग स्वाध्याय प्रारम्भ करना चाहते हैं परन्तु स्वाध्याय का क्रम ज्ञात न होने से या तो शीघ्र ही निराश हो जाते हैं, और या देर तक जारी रख कर भी किसी उत्तम परिणाम पर नहीं पहुंच सकते। स्वाध्याय प्रत्येक ऐसे मनुष्य के लिए आवश्यक धर्म है, जो अपने धर्म को उपादेय चीज़ समझता है। स्वाध्याय के बिना मनुष्य धर्म के केवल ऊपर के खोल को याद रख सकता है, उसका आन्तरिक भाव भूल जाता है। कहीं बिना ज्ञान के अन्धी श्रद्धा दिखाई देती है-उसका का कारण यही है कि श्रद्धालु ने सिद्धान्त याद कर लिए हैं, स्वाध्याय जारी नहीं रखा। कहीं आर्य-समाजी बनकर भी लोग पुराने भ्रमात्मक रीति रिवाजों में पड़े दिखाई देते हैं, उसका कारण भी यही है कि स्वाध्याय का अभाव है। आज हम अपने पाठकों के सम्मुख स्वाध्याय के बारे में कुछ क्रियात्मक विचार उपस्थित करते हैं, जिन पर ध्यान रखने से उनका स्वाध्याय सफल हो सकता है।

आर्यभाषा से अनभिज्ञों के लिये

वह दिन सौभाग्य का दिन होगा, जब भूमण्डल पर प्रचलित प्रत्येक भाषा में वैदिक धर्म का इतना साहित्य होगा कि उसमें वैदिक-धर्म का पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया जा सके, परन्तु जब तक ऐसा नहीं है, तब तक हम प्रत्येक ऐसे आर्यसमाजी से, जो आर्य्यभाषा नहीं जानता निवेदन करेंगे कि वह स्वाध्याय का पहला अंग यह समझे कि आर्य्यभाषा पढ़ने की शक्ति प्राप्त करे। बालक युवा और वृद्ध हरेक के लिए यह सलाह उपयोगी है। यह नहीं समझना चाहिए कि जवान या बूढ़े के लिए देव नागरी वर्णमाला और आर्यभाषा का सीखना कठिन है—यह देवनागराक्षरों का और आर्यभाषा का दावा है कि उसका अध्ययन दूसरी किसी भी भाषा से जल्दी हो सकता है। दावा तो यहां तक है कि केवल २४ घण्टे तक यदि कोई आदमी निरन्तर यत्न करे तो देवनागराक्षरों को पहिचान लेगा।

कठिनता कुछ नहीं है, केवल इच्छा और यत्न का प्रश्न है। जो आर्य पुरुष अपने धर्म ग्रन्थों का स्वाध्याय करना चाहता है परन्तु आर्यभाषा नहीं जानता उसे धर्म का एक अंग मानकर पहले आर्यभाषा का अध्ययन करना चाहिए क्योंकि अभी दुर्भाग्यवश संस्कृत को छोड़ कर यदि कोई अन्य भाषा है जिसमें धर्म ग्रन्थों का भली प्रकार स्वाध्याय हो सकता है तो वह आर्यभाषा है। जो आर्य पुरुष आर्यभाषा नहीं जानते, वह चाहे किसी स्थिति या आयु में हों, उनका पहला कर्त्तव्य यह है कि वह कुछ दिनों तक परिश्रम करके आर्यभाषा से जानकारी करलें, और तब यह समझें कि हम अपने धर्म ग्रन्थों का स्वाध्याय करने के योग्य हुए हैं।

नेताओं और व्याख्याताओं के लिए

ऊपर का निवेदन हमने उन लोगों के लिए किया है, जो साधारण आर्य पुरुष हैं, और आर्यसमाज के धर्म गुरु होने की इच्छा नहीं रखते न दावा करते हैं कि वह लोगों को कुछ सिखा सकते हैं। परन्तु बहुत से आर्य पुरुष ऐसे हैं। जो आर्यसमाजों में व्याख्यान देने और अधिकारी बनकर समाज की सेवा करने की इच्छा रखते हैं। हम उन्हें कोई दोष नहीं देते। यदि ऐसे लोग न हों तो समाज का काम ही न चले। यदि सब लोग निरीह जिज्ञासु बन बैठें तो कार्य का बोझ कौन उठावें। उन्हें कोई दोष न देकर उनमें से ऐसे महानुभावों से हम कुछ थोड़ा सा निवेदन करना चाहते हैं, जो संस्कृत से अनभिज्ञ हैं। यह तो मानी हुई बात है कि हमारे साहित्य की वर्त्तमान दशा में जिस आदमी को आर्य भाषा में वैदिक धर्म के ग्रन्थ पढ़ने का भी अवसर नहीं मिला, वह तो कभी आर्यसमाज का नेता होने का अधिकारी ही नहीं है, परन्तु जो नेता संस्कृत नहीं जानते, उनसे हमें कुछ निवेदन करना है। आर्य सिद्धान्त का साधारण ज्ञान आर्यभाषा द्वारा भी हो सकता है, परन्तु विशेष ज्ञान, जो नेता और व्याख्याता के लिए आवश्यक है, केवल उन्हीं को हो सकता है जो संस्कृत के ज्ञाता हों। हमारे मूल धर्म ग्रन्थ संस्कृत में हैं। वेद वेदांग संस्कृत में हैं। वैदिक धर्म का रहस्य जानना हो तो संस्कृत का जानना आवश्यक है।

शायद कहा जाय कि अनुवाद बहुत से होगए हैं—उनकी सहायता से सब कार्य चल सकता है। यह भ्रम है। अभी प्रामाणिक अनुवाद नहीं हैं—और हैं भी तो वह पूरे नहीं हैं। वेद का भाष्य कई प्रकार से अपूर्ण है। ब्राह्मण उपनिषद् दर्शन और स्मृति के भाष्यों और अनुवादों के कई यत्न हुए हैं—पर वह अभी यत्न ही हैं। उन लोगों को, जो आर्य समाज के नेतृत्व की इच्छा रखते हैं, आवश्यक है कि वह मूल ग्रन्थों से धर्म को जान सकें। दौर्भाग्य ही सही पर अभी वह दिन नहीं आया कि संस्कृत की अभिज्ञता न रखने वाले लोग समाज का नेतृत्व कर सकें।

ऐसी दशा में आवश्यक है कि समाज के जो नेता संस्कृत नहीं जानते वह पहला धर्म यह समझें कि संस्कृत का अच्छा ज्ञान प्राप्त करें। यदि अब तक आलस्य किया है, तो आलस्य को त्यागें। यदि अब तक अनुवादों पर भरोसा रखा है तो अब उसे तिलाञ्जलि दें और कमर कस कर वैदिक संस्कृत की अच्छी योग्यता प्राप्त करने का यत्न करें। तभी दशा में वह वैदिक धर्म के व्याख्याता और नेता बनने के अधिकारी हो सकते हैं—अन्यथा नहीं।

शिक्षा के लिये महल

'लीडर' का कटाक्ष

गुरुकुल शिक्षा प्रणाली सादगी के लिये आवाज़ उठाती है—ऐसी दशा में यह कुछ अद्भुत बात है कि प्रयाग के 'लीडर' ने महात्मागान्धी के एक लेख का उत्तर देते हुए हिन्दू यूनिवर्सिटी की शानदार इमारत का पक्ष पोषण करते हुए गुरुकुल कांगड़ी को घर घसीटा है। उसने लिखा है कि जब गुरुकुल कांगड़ी भी इमारतों के बिना गुजारा नहीं कर सका तो फिर अन्य संस्थायें कैसे कर सकेंगी।

हिन्दू यूनिवर्सिटी की शानदार इमारत की पुष्टि के लिये गुरुकुल कांगड़ी का उदाहरण देते हुए 'लीडर' के सम्पादक ने यह सूचित कर दिया है कि उसे अपनी देशीय संस्थाओं के विषय में कितना परिज्ञान है। गुरुकुल कांगड़ी की इमारतों की यह ख़ासियत है कि वह उपयोगिता की दृष्टि से बनाई गई हैं, शान की दृष्टि से नहीं। यह ख़ासीयत सभी स-ज्ञान यात्रियों ने अनुभव की है, और विचारों में भी प्रकट की है। इतने सस्ते में, इतने कम ख़र्च अखाड़े में इतना काम शायद ही कहीं निकलता हो। गुरुकुल के टिमशेड कम ख़र्ची के ऐसे नमूने हैं कि उस से अन्य संस्थायें बहुत शिक्षा ले सकती हैं। गुरुकुल कांगड़ी के महाविद्यालय की इमारत को देख कर कई लोग भूल जाते हैं कि उस में कांची खिड़कियों और सुन्दर कमरों के सिवा और कोई खूब सूरती नहीं है। बिल्कुल सादी ईंटों से वह बनाई गई है—और केवल खूबसूरती के लिये उस में नहीं के बराबर ख़र्च है। ऊंचाई शान के लिये नहीं पुस्तकालय और रसायन के कमरों को खुला बनाने के लिये है।

गुरुकुल कांगड़ी यदि शानदार इमारतों के पीछे पड़ जाता तो आज लाख डेढ़-लाख की इमारतों से इतना भारी कारखाना न चलता दिखाई देता। सच बात तो यह है कि शिक्षा के लिये ईंट पत्थर पर लाखों का व्यय करना भारी भूल है। यह भी एक समय का जमाया हुआ भूत है कि उत्तम शिक्षा बढ़िया इमारतों में हो सकती है। बुद्धिमान् लोग अनुभव कर रहे हैं कि सर्वोत्तम शिक्षा वह है जो खुले आकाश की छाया में, और विस्तृत पृथ्वी माता के गोद में बैठ कर दी जाती है। इमारतों के लिये बहुतसा व्यय करना पहले दर्जे की भूल है। जो व्यय केवल ईंट पत्थर पर किया जाता है, वह क्यों न शिक्षा के अधिक प्रचार में किया जाय? जो व्यय केवल शान के लिये किया जाता है, क्यों न उस से शिक्षा की नई नई शाखाओं का प्रारम्भ किया जाय? भारत सरकार की लार्ड कर्जन के समय से यह नीति रही है कि इमारत और शान को शिक्षा का आवश्यक अंग बना कर उसे महंगा कर दिया जाय। समझदार भारतवासी उस नीति का सदा विरोध करते रहे हैं। जिस के भूल में सरकार पड़ी है, उस में हम को न पड़ना चाहिये, 'लीडर' के आक्षेप में पहले ही कोई सचाई नहीं यदि है तो वह हमारी आंखें खोलने के लिये पर्याप्त होनी चाहिये।

शिक्षा के साधन सादे से सादे होने चाहिये, और उनके बनाने में केवल उपयोगिता पर ध्यान होना चाहिये। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का यह एक आवश्यक सिद्धान्त है जिसे कभी भुलाना नहीं चाहिये।

गुरुकुल—समाचार

(कार्यालय से प्राप्त)

ऋतु आदि

सर्दी खूब उतर आई है। रातको ठंडी हवा शरदृतु का सन्देश सुनाने लगी है। गंगा की गुरुकुल धारा बिल्कुल सूख गई है। बड़ी धारा में भी पानी कम ही रह गया है—परन्तु कई कारणों से ठेकेदार महाशय का किश्तियों का पुल अभी तक तय्यार नहीं हुआ। आशा दिलाई गई है कि एक सप्ताह भर में तय्यार हो जायगा। अब भी कनखल से सीधा रास्ता चलने लगा है। गंगा में किश्ती पड़ती है।

उत्सव

इस बार गुरुकुल कांगड़ी का वार्षिकोत्सव होली की छुट्टियों में होगा। होली की छुट्टियां मार्च मास के अन्त में पड़ेंगी। समय बहुत है। आशा है कि आर्य पुरुष अभी से उत्सव का ध्यान रक्खेंगे।

शाखाओं के उत्सव

गुरुकुल कांगड़ी की शाखाओं के उत्सव भी निश्चित हो गये हैं। गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ का उत्सव २५,२६ और २७ फरवरी को होगा। नये ब्रह्मचारियों का प्रवेश भी उसी समय होगा। गुरुकुल कुरुक्षेत्र का उत्सव ६,७, और ८ मार्च को होगा। गुरुकुल मटींडू और गुरुकुल मैंसवाल के उत्सव होलियों के पीछे होंगे।

ब्रह्मचारियों के लिये प्रार्थनापत्र

नये सालके प्रविष्ट होने वाले ब्रह्मचारियों के चुनाव का समय जनवरी के अन्तमें है। प्रार्थनापत्र दिसम्बर मास के अन्त तक आजाने चाहियें। सब प्रार्थनापत्र मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल कांगड़ी के नाम ही आवें।

कुछ परिवर्तन

नये साल के आरम्भ में कुछ परिवर्तन हो गये हैं। प्रो० शिवराम अय्यर एम.ए. मद्रास के निवासी थे। यहां की सर्दी न सह सके। इस कारण उन्हें जाना पड़ा। वैद्य पं० धारणीधर जी रोगी हो गये थे उनके स्थान पर कविराज पं० नलिनी नाथ राय कलकत्ते से आगये हैं और वैद्यक की पढ़ाई का कार्य भली प्रकार फिर आरम्भ हो गया है।

एक शुभ समाचार

गुरुकुल के अध्यापक मण्डल में एक प्रसन्नतादायक परिवर्तन हुआ है। श्री० नन्दलाल खन्ना बी.ए.एल.एल. बी. महाविद्यालय में अंग्रेजी के जूनियर उपाध्याय, और विद्यालय में अंग्रेजी और साइंस के अध्यापक हैं। आप अध्यापक मण्डल की शोभा हैं। पिछले साल आपने कलकत्ता विश्वविद्यालय में विलायती की एम.ए. परीक्षा दी थी। समाचार आया है कि आप उत्तीर्ण हो गये हैं। गुरुकुल वासियों को इस समाचार से बड़ी प्रसन्नता हुई है।

बर्मा में धन संग्रह

श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी बर्मा में दौरा लगा रहे हैं। दौरे में आपको बहुत सफलता प्राप्त हो रही है। बर्मा निवासियों पर यात्रा का गहरा प्रभाव हो रहा है गुरुकुल के लिये चन्दा आरम्भ हो गया आशा है, शीघ्र ही कुछ निश्चित धनराशियें जुटाई जा सकेंगी।

चीते का शिकार

समाचार पत्रों में यह समाचार उसी समय भेज दिया गया कि दीवाली से दो दिन पूर्व गुरुकुल के बाग़ में दिन के समय एक चीता आगया। तीन ब्रह्मचारियों से उसका बहुत देर तक युद्ध हुआ ब्रह्मचारियों के कुछ साधारण से घाव लगे, पर चीते का डंडों की मार खाकर हार माननी पड़ी और वह भाग कर बाग़ के एक कोने में जा छिपा। वहां से उसे निकाला गया और बन्दूक से समाप्त किया गया। ऐसी घटनायें यह स्मरण कराने के लिए आती हैं कि हम लोगों को सदा आधिदैविक और आधिभौतिक शत्रुओं को परास्त करने के लिए तय्यार रहना चाहिये। इस समय यह परीक्षा भी हो जाती है कि ब्रह्मचारियों पर भय और निर्भयता की शिक्षा का कहां तक प्रभाव हुआ है।

पठन पाठन

पठन पाठन ज़ोर शोर से जारी है। सब काम नियम पूर्वक चल रहे हैं। पाठ विधि की स्थिरता के लिए यत्न हो रहा है। एक समिति बनाई गई है जो स्थिर पाठविधि बनाने का उद्योग करेगी ताकि कम से कम ४ साल तक परिवर्तनों की आवश्यकता न हो।

आर्य्यसामाजिक जगत्

ऋषि अङ्क

आर्य्यमित्र और प्रकाश के ऋष्यंक खूब धूम धाम से निकले हैं। 'गतानुगतिको लोकः' श्रद्धा ने भी ऋष्यंक निकाल ही डाला—चाहे वह कुछ पीछे ही निकला। सब के सम्पादकों को बधाइयां हैं। उत्तम हो कि पंजाब में प्रकाश और युक्त प्रान्त में आर्य्यमित्र—यह दो पत्र ही ऋष्यंक निकाला करें—शेष पत्र अपने २ विशेष अंकों के लिए अन्य समय ढूंढें। श्रद्धा का विशेषांक गुरुकुल कांगड़ी के उत्सव पर निकला करे तो बहुत उत्तम हो।

गुरुकुल वृन्दावन का उत्सव

गुरुकुल वृन्दावन का उत्सव बड़े दिनों की छुट्टियों के लिए उद्घोषित किया गया है। उत्तम हो यदि गुरुकुल वृन्दावन के अधिकारी इस समय को छोड़ दिया करें। बड़े दिनों में राष्ट्रीय सभा का आकर्षण बहुत भारी है। उन्हीं दिनों में उत्सव करने से दोनों ओर हानि है। जिन लोगों को राष्ट्रीय सभा का आकर्षण है वह गुरुकुल वृन्दावन के उत्सव से वञ्चित रह जायगे और जिन्हें गुरुकुल वृन्दावन से अधिक प्रेम है, वह राष्ट्रीय सभा से वंचित रह जायंगे। क्या ही उत्तम हो कि गुरुकुल वृन्दावन का उत्सव किन्हीं और छुट्टियों में रखा जाया करे।

"वैदिक सन्देश"

गुरुकुल कांगड़ी से वैदिक सन्देश नाम का एक पत्र निकालने की सूचना दी गई है। इस पत्र में वेद और वैदिक साहित्य सम्बन्धी लेख रहा करेंगे। इसका सम्पादन एक सम्पादक मण्डल के हाथ में है, जिसमें स्नातक हैं। आशा है कि यह पत्र दो या तीन महीनों में निकल जायगा।

आर्य्य कुमार सम्मेलन

आर्य्य कुमार सम्मेलन का अधिवेशन मिर्ज़ापुर में नवम्बर की ११, १२ और १३ तारीखों पर सफलता से होगया। पं० गंगाप्रसाद एम० ए० सभापति थे। आप का व्याख्यान युवकों के लिए बहुत उपयोगी था। वाद विवाद हुए और लखनऊ के एक आर्य कुमार को चांदी का प्याला मिला। आर्य कुमार सम्मेलन को एक उपयोगी संस्था बनाने का बहुत लोगों ने उद्योग किया है परन्तु सफलता प्राप्त नहीं हुई। रहा वह सम्मेलन का सम्मेलन ही। उस द्वारा उपयोगी कार्य कुछ भी नहीं होता दिखाई देता। जिस वैद्य ने दवा की, नाकामयाबी मीरा की। इसके कारणों पर विचार करके सम्मेलन को उपयोगी वस्तु बनाया जा सके तो अच्छा ही है।

क्रियात्मक सलाह

आर्यकुमार सम्मेलन को उपयोगी बनाने के लिये पहली आवश्यक बात यह है कि कोई महानुभाव अपनी सम्पूर्ण शक्तियां उसके अर्पण करने को तय्यार हो। जब तक कोई कार्यकर्ता अपनी शक्तियों का केन्द्र आर्यकुमार सम्मेलन को नहीं बनाता तब तक उस में जान डालना असम्भव है। दूसरी आवश्यकता यह है कि सम्मेलन का एक स्थिर केन्द्र बनाया जाय और कुछ स्थिर कार्य भी रखा जाय ताकि वह अपनी उपयोगिता सिद्ध कर सके। जबतक सारा समय देने वाले कार्यकर्ता न मिलें और कोई स्थिर कार्य आरम्भ न किया जाय तब तक आर्यकुमार सम्मेलन का एक जीती जागती वस्तु बनना असम्भव है।

चन्द्र

आवश्यकता

आ० समाज गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ की 'विद्या प्रचारिणी सभा' के लिए एक योग्य उपदेशक की शीघ्र आवश्यकता है। वह भजन भी गा सकता हो और हारमोनियम भी अच्छी तरह बजा सकता हो।

उत्तमचन्द्र मन्त्री विद्या प्रचारिणी सभा—आर्य समाज गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ
डा० बदरपुर
जिला दिल्ली

—:o:—

"मेरी धर्म यात्रा का द्वितीय पथ"

लाहौर में उपदेशक सम्मेलन होना था। उस में सम्मिलित होने के लिए मुझे जिला फिरोजपुर छोड़ना पड़ा। वहां वेद-प्रचार-विभाग की उन्नति को लक्ष्य में रखकर अनेक उत्तमोत्तम प्रस्ताव उपस्थित और स्वीकृत किए गए। आशा है कि उन प्रस्तावों पर यथायोग्य ध्यान देकर आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब अपने वेद-प्रचार-विभाग में अधिक उन्नति करेगी। इस सम्मेलन के पश्चात् मुझे आज्ञा मिली कि अब आप जिला मुज़फ्फरगढ़ और जिला मुलतान में वैदिक धर्म का प्रचार करें। मध्य में छोटे के उत्सवार्थ जाने की भी आज्ञा दी गई। और डेरागाजीखां के कुछ स्थानों में धर्म प्रचार करने का शुभ अवसर भी इसी पथ में प्राप्त हुआ। इसी पथ का नाम द्वितीय पथ है।

(१) शेख इस्माइल वा गुजरात के उत्सव पर जाते हुए रेल में कुछ भाइयों को आर्य धर्म की ओर आकर्षित किया और सोचा कि अब से ले के मेरा यह कर्त्तव्य है कि रेल में भी व्याख्यान वा वार्त्तालाप द्वारा प्रचार किया करूं। कई उपदेशक महोदय यह कार्य करते ही होंगे जो न करते हों उन्हें भी करना चाहिए।

(२) गुजरात के आर्य भाइयों के हृदयों में श्रद्धा, वचनों में मधुरता और व्यवहारों में सरलता है, परन्तु वैदिक-धर्म का पालन करने के लिए उतना प्रेम नहीं जितना कि होना चाहिये। यहां कई भाइयों से सुना कि जब उत्सव के दिन समीप आए हैं तभी से हमने आपस में "नमस्ते"-कहना शुरू किया है नहीं तो सलाम राम राम आदि ही कहते रहे हैं। इस समाज ने अभी तक अपना कोई प्रतिनिधि नहीं चुना। आशा है कि शीघ्र ही चुनाव होगा। यहां की गलियों आदि में भ्रमण करना अति कठिन था क्योंकि स्थान स्थान पर विष्ठा और मूत्र की दुर्गन्ध थी। यथा शक्ति समस्त दोषों को दूर करने के विषय में उन से निवेदन किया गया। आशा है कि आगामी वर्ष तक वे अपने सर्वदोषों को दूर कर लेंगे। उत्सव के अन्तिम दिन आर्यसभ्यों से उन्नति के लिए कई प्रतिज्ञायें करवाईं। इस कार्य में मुख्य भाग श्री पूज्य प्रो० रामदेव जी का था। और आर्यकुमारों के सुधार के लिए मैंने उन से संध्या व्यायाम करने हिन्दी पढ़ने सीगरेट छोड़ने २५ वर्ष से पहिले विवाह न करने और ब्रह्मचर्य के नियम पालने की प्रतीज्ञा करवाई।

(३) गुजरात के समीप बेन खोहरी में जिला-मुज़फ्फरगढ़ के धार्मिक नेता श्री पूज्य पंडित गंगाराम जी का विचार "अनाथ गुरुकुल"-खोलने का है। मैंने वह स्थान देखा है। भूमि उत्तम है। उसी की उपज से उस गुरुकुल का सारा वा बहुत सा खर्च चल सकेगा। उसे शीघ्र ही खोलने का प्रयत्न करना चाहिये और आर्य भाइयों को इस कार्य में पूर्ण सहायता करनी चाहिए।

(४) गुजरात के उत्सव पर गुमानी के भी कुछ आर्य्यभाई आए हुए थे। उन्हीं ने श्री प्रो० जी के सम्मुख यह प्रतिज्ञा की थी कि हम वहां शीघ्र ही आर्य्यसमाज स्थापित करेंगे। अत एव मैं गुमानी गया और वहां जाकर १५।४।७७ को आर्यसमाज स्थापित कराई। साथ आर्यसभ्यों से आर्य-साहित्य का स्वाध्याय संध्या हवन व्यायाम करने सीगरेट शराब न स छोड़ने हिन्दी पढ़ने और आर्यसमाज का सब कार्य-क्रम आर्यभाषा में ही लिखने के लिए प्रेरणा और प्रतिज्ञा करवाई। यहां के प्रधान चौधरी रतनचन्द जी, मन्त्री चौधरी वधावाराम जी और उपमन्त्री ब्रह्मचारी आत्म प्रकाश जी बने। उपमन्त्री जी गुरुकुल कांगड़ी में कई वर्ष तक पढ़ चुके हैं। इस लिए मुझे विश्वास है कि इन के पुरुषार्थ से इस आर्यसमाज में आर्यभाषा का प्रचार अति शीघ्र हो जावेगा।

(५) गुमानी के प्रधान जी को साथ लेकर महमूद कोट को मैं वेद प्रचार के लिए गया। आर्यसमाज स्थापित करने की हार्दिक अभिलाषा थी, किन्तु वहां केवल एक वा दो ही आर्य पुरुष थे। अत एव सफलता नहीं हुई। पुनःपुनः प्रेरणा करने पर उन्होंने विश्वास दिलाया कि शीघ्र ही स्थापित करेंगे। वहां डा० वोधराज जी एक अच्छे उत्साही आर्य-पुरुष हैं। उनके होते हुए ऐसे उत्तम कर्म में देरी नहीं लगनी चाहिए।

(६) इसी पथ में मुझे गुरुकुल मुलतान के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। देख कर मेरे मन में यह विचार दृढ़ हुआ कि गुरुकुलों में दो बातों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए [१] वहां गुरुलोग उत्तम हों [२] वहां पुस्तकें उत्तम हों। अर्थात् प्रत्येक अध्यापक और अधिष्ठाता पक्का वैदिक धर्मी हो, उनकी विशेष प्रवृत्ति ब्रह्मचर्यव्रत-परिपालन की ओर हो, उनके मन में शौकीनी के स्थान में सादगी और ऐशोआराम के स्थान में तप का भाव हो। और उनका जीवन उच्च तथा चरित्र पवित्र हो। [२] पाठ्य क्रम में किसी भाषा की कोई पुस्तक अपवित्र न हो गुरुकुल के पुस्तकालयों में अपवित्र पुस्तकें न हों, और किसी गुरुकुलवासी के पास नावल कुकाव्य आदि गन्दे ग्रन्थ न हों।

(७) सरायसिद्धू और अहमद पुर सियाल के आर्यभाई विशेष प्रेमी और उत्साही हैं। इन्होंने ने भी सरायसिद्धू वाले अधिक उत्पन्न हैं अहमदपुर वालों ने मेरे जाने तक आर्यसमाज स्थापित नहीं की थी। पुनःपुनः प्रेरणा करने पर उन्होंने भूमि मोल लेने के लिए प्रबन्ध प्रारम्भ कर दिया। अब एक पत्र से विदित हुआ है कि आर्यसमाज मन्दिर बनने वाला है। परमात्मा की कृपा से उनका मन्दिर शीघ्र ही स्थापित हो, उत्सव भी सफलता पूर्वक हो और साप्ताहिक अधिवेशन आदि सब कार्यवाही नियम पूर्वक करें जैसे कि सरायसिद्धू के आर्यभाई करते हैं।

पुस्तक समालोचना,

प्रास पुञ्ज लेखक नारायण प्रसाद 'बेताब'। प्रकाशक हिन्दी पुस्तक एजेंसी १२६, हरिसन रोड, कलकत्ता मूल्य १)।

हिन्दी में इस विषय की यह प्रथम पुस्तक है। लेखक ने न केवल हिन्दी और संस्कृत प्रासोंका ही विवेचन किया है किन्तु उर्दू फारसी के भी तुकान्त नियम बतलाये हैं तथा उनके दोषों पर भी कुछ प्रकाश डाला है। लेखक के अनुसार इस में 'गागर में सागर भरने' का प्रयत्न किया गया है।

पुस्तक के दो विभाग हैं एक में तो प्रास मीमांसा है और दूसरे में तुकान्त शब्दों का एक छोटा सा कोश है। लेखक ने न जाने यह क्यों लिखा है कि हिन्दी कविता में क्रिया का अन्त में ही आना माना जाता है जब कि इस के विरुद्ध अनेक प्रमाण दिये जा सकते हैं। ह्रस्व दीर्घ पर विचार करते हुये लेखक ने व्यर्थ लिखा है कि [illegible] अक्षर से प्रथम आकार दीर्घ गिना जाता है और यह [illegible] तुकान्त [illegible] हुये उन्हों ने [illegible] पर ध्यान नहीं रक्खा। [illegible] का छन्द या उदाहरण

[illegible] तुकान्त [illegible] कविसमाही यहां ध्यान में [illegible] संयुक्ताक्षर हो ने से दीर्घ हो [illegible] है जो कि छन्दानुसार नहीं होना चाहिये। [illegible] उपादेय है और कवियों के काम की है।

स्वर्ग प्रति [illegible] लेखक सुरेन्द्र मोहन भट्टाचार्य। अनुवादक रामचन्द्र वर्मा। प्रकाशक महादेवप्रसाद झुनझुनवाला भारत पुस्तकभण्डार ३१, बड़तल्ला स्ट्रीट कलकत्ता दाम-सादी २)। सजिल्द २॥)।

यह पुस्तक 'कनक-प्रतिमा' नामक बंगला उपन्यास का अनुवाद है। पुस्तक यौवन में अपनी इन्द्रियों के वशवर्ती हो कर काम करने वाले युवकों और युवतियों के उपदेशार्थ लिखी गई है। पापके फल को लेखक ने खूब अच्छी तरह दिखाया है। कुसुमलता के एक दम [illegible] रोगी और वैमिकों के हाथ [illegible] छुड़ा ले जाने के दृश्य के रहस्य का लेखक ने पीछे से भी पूर्व रीति से नहीं खोला यह कुछ अस्वभाविक प्रतीत होता है। मानसिक विकारों के चित्र को कहीं कहीं बड़ी मार्मिकता से खींचा गया है। उपन्यास दुःखान्त है। रचना विधि (plot) अच्छा है। भाषा सरल सुबोध और उत्तम है। ऐसे शिक्षाप्रद उपन्यास को अनुवाद करने के कारण प्रकाशक तथा अनुवादक दोनों धन्यवाद के पात्र हैं।

अद्भुत प्रेम अनुवादक गोपालराव माधव लघाटे। प्रकाशक स्टार बुकडिपो प्रयाग मूल्य ≡)

यह एक मराठी उपन्यास का हिन्दी अनुवाद है। कथा रोचक है। भाषा साधारण है।

[illegible] जासूस के सितम्बर, अक्टूबर और नवम्बर का अङ्क। सम्पादक बा० गोपालराम गहमर निवासी दाम १) मिलने का पता मैनेजर' जासूस 'गहमर' गाजी पुर।

यह एक जासूसी उपन्यास है। कहानी मनोरञ्जक है।

[illegible] —सम्पादक प० [illegible], प्रकाशक-हिन्दी पुस्तक एजेन्सी २१ नारायणप्रसाद बाबू लेन कलकत्ता पृष्ठ संख्या २५६, आकार बड़ा [illegible] पुस्तक का मूल्य चार रुपया। पिछले साल पंजाब में निरंकुश अधिकारियों द्वारा निरपराध प्रजा पर जो अत्याचार किए गए, उनकी जांच के लिए जातीय महासभा की ओर से कांग्रेस 'कमीशन' और सरकार की ओर से '[illegible] कमेटी' नियुक्त हुई थी, इन की रिपोर्ट प्रकाशित हुए बहुत दिन हो गए प्रस्तुत पुस्तक इन्हीं रिपोर्टों का हिन्दी अनुवाद है, पुस्तक के बहुत बड़ी हो जाने के भय से कुछ अंश छोड़ भी दिए गए हैं असली रिपोर्टों की समालोचना श्रद्धा में पहिले की जा चुकी है, इस लिए फिर करने की आवश्यकता नहीं, अनुवाद अच्छा हुआ है। पुस्तक के अन्त में 'हमारा वक्तव्य' शीर्षक लेख और कुछ गवाहियों (Evidence) का अनुवाद भी प्रकाशित किया गया है, इस से पुस्तक और भी अधिक उपयोगी हो गई है। रिपोर्टों का हिन्दी अनुवाद किया जाना बहुत आवश्यक था। हमें विश्वास है कि इस पुस्तक का हिन्दी संसार में अच्छा स्वागत होगा और अंग्रेजी न जानने वाले पाठक इस से अवश्य लाभ उठावेंगे। पंजाब में किए गए अत्याचारों का सच्चा हाल इस पुस्तक के पढ़ने से जाना जा सकता है। चित्रों के कारण पुस्तक और भी अधिक उत्तम और उपयोगी बन गई है।

लोकमान्य तिलक —लेखक पण्डित मातासेवक पाठक 'सम्पादक "दैनिक विश्वमित्र", प्रकाशक महादेवप्रसाद झुनझुनवाला भारत पुस्तक भण्डार ३१ बड़तल्ला स्ट्रीट कलकत्ता। साधारण आकार के १७४ पृष्ठ। साधारण का मूल्य एक रुपया और सजिल्द का १॥)। पुस्तक में लोकमान्य तिलक का जीवन-चरित्र संक्षेप से लिखा गया है, उन के जीवन की सभी मुख्य मुख्य घटनाओं और कार्यों का अच्छी प्रकार से वर्णन किया गया है। लोकमान्य ने सन्धिपरिषद् के अध्यक्ष के पास जो प्रसिद्ध पत्र भेजा था उस का भी अविकल अनुवाद दिया गया है। पुस्तक के अन्त में लोकमान्य के पांच उत्तम भाषणों का संग्रह किया गया है। लोकमान्य के दो चित्र भी दिए गए हैं। पुस्तक उपादेय है।

स [illegible] लेखक, स्वामी सत्यदेव परिव्राजक मूल्य ।≈)

[illegible] लेखक, देवनारायण द्विवेदी मूल्य ≈)

दोनों पुस्तकों के प्रकाशक "भारतीय पुस्तक एजन्सी, नं० ८८ नारायण प्रसाद बाबू लेन कलकत्ता।" प्रथम पुस्तक हिंदीप्रेमियों के लिये नई नहीं है। पहिले सं० १९७० में यह प्रकाशित हो चुकी है। अब दुबारा भारतीय पुस्तक एजन्सी द्वारा प्रकाशित की जा रही है। निबन्ध रोचक हैं। प्रायः सभी निबन्धों में देश भक्ति के भाव भरे हैं। बहुत से निबन्ध अच्छे शिक्षाप्रद हैं। राजनीति से अनभिज्ञ पाठकों के लिये विशेष उपयोगी है। दूसरी पुस्तक कुछ कविताओं का संग्रह है। कवितायें भावपूर्ण हैं।

ऋग्वेद में रुद्रदेवता; लेखक और प्रकाशक श्रीपाद दामोदर सातवलेकर स्वाध्याय मंडल, औन्ध (जि० सातारा) मूल्य १० आना।

स्वाध्याय मंडल वेद के ज्ञान का मार्ग बहुत सुगम बना रहा है। रुद्रदेवता पर ६ पुस्तकों के लिखने का निश्चय किया गया है प्रथम पुस्तक "रुद्रदेवता का परिचय" के नाम से प्रकाशित हो चुकी है। दूसरी पुस्तक "ऋग्वेद में रुद्रदेवता" में ऋग्वेद के रुद्र देवता वाले सूक्तों की व्याख्या की गई है। पहिले सूक्त के साधारण अर्थ, और पीछे से विशेष व्याख्या की गई है। जिन्हों ने प्रथम पुस्तक पढ़ी है वे इसको खूब समझ सक्ते हैं। प्रत्येक वेद के प्रेमी को अवश्य देखना चाहिये। यदि विषय सूची भी साथ दे दी जाती तो और अच्छा होता।

एक हबशी गुलाम की सर गुज़श्त, मुतर्जुम-लाला दासराम साहब बगाई बी.ए. सेक्रेटरी विक्टोरिया मैमोरियल हाइस्कूल डेरा इस्माइल खां, कीमत एक रुपया। यह बुकरटी वाशिंगटन के स्वहस्त लिखित अंग्रेज़ी जीवन चरित का उर्दू अनुवाद है। प्रारम्भ में एक दिबाचे में टस्केजी विश्वविद्यालय का अच्छा परिचय कराया गया है। वाशिंगटन के जीवन का उक्त विद्यालय मुख्य काम है। पुस्तक पढ़ने लायक है। अनुवाद अच्छा हुआ है। प्रत्येक बाब के शुरु में फारसी की अच्छी शेर लिखी गई हैं। विद्यार्थियों के लिये विशेष उपयोगी है।

शोकाश्रु—संग्रह कर्ता दौलतराम गुप्त, प्रकाशक पं० कांशीदत्त शर्मा मूल्य ।) लोक मान्य तिलक के स्वर्गवास पर प्रताप, गंभीर भविष्य, श्रद्धा आदि पत्रों में जो कविताएं प्रकाशित हुई थीं उन्हीं का यह एक उत्तम संग्रह है। सभी कविताएं भावमयी और हृदय पर प्रभाव करने वाली हैं। पुस्तक उपादेय है। छापे की अशुद्धियां बहुत हैं। पुस्तक की सारी आय तिलक फण्ड में दी जावेगी।

—:०:—

ब्रा० गु० कुरुक्षेत्र समाचार

ऋतु तथा उत्सव वर्षा के बीत जाने पर शरद् ऋतु का सुहावना, मंगलमय राज्य आगया है। अब प्रकृति का वह भयभीषणाकुल गर्व नहीं रहा। चारों ओर कास खिल २ कर अपनी अपूर्व ही शोभा दर्शा रहे हैं। सारांश, ऋतु अत्यन्त सुहावना और शान्त है। आस पास कहीं ज्वर का नामोनिशान भी नहीं है। कुल भूमि में भी ईश्वर की दया तथा सुयोग्य डाक्टर जी के प्रबन्ध से सब ब्रह्मचारी दिन प्रति दिन स्वास्थ्य में उन्नति कर रहे हैं। औषधालय कई दिनों से बिलकुल खाली पड़ा है।

विजयादशमी और दीपमाला के उत्सव ससमारोह मनाए जा चुके हैं। दोनों में ब्रह्मचारियों तथा अध्यापक अधिष्ठाताओं ने खूब उत्साहपूर्वक भाग लिया। दिवाली के दिन कुल-भूमि में अपूर्व ही शोभा थी। चारों ओर दीपकों की पंक्ति से सारा आश्रम सजाया गया था। आश्रम तथा यज्ञशाला में ब्रह्मचारियों के बनाए कंदील, झाड़ फानूस खूब जगमगा रहे थे। यद्यपि इस वर्ष पदार्थों की महंगी के कारण साज सामान पर्याप्त न आ सका था तथापि ब्रह्मचारियों ने उत्सव के मनाने में कोई कसर न छोड़ी। दिवाली के दिन सायंकाल को सभा हुई जिस में अनेक ब्रह्मचारियों तथा अध्यापकों ने अपना २ वक्तव्य किया। इन में से ब्र० सत्यदेव ४र्थ श्रेणी का निबन्ध बड़ा उत्तम और परिश्रम से लिखा गया था। सभा के अनन्तर सहभोज आदि से उस दिन की कार्यवाही समाप्त हुई।

पठनपाठन शीतऋतु के कारण विद्यालय का समय प्रातः से बदल कर मध्यान्ह से सायं ४ बजे तक एक ही समय कर दिया गया है। सब ब्रह्मचारी तथा अध्यापकगण बड़े परिश्रम तथा उत्साह से पठनपाठन में लगे हुए हैं। आशा है कि इस बारी का [illegible] परिणाम पूर्व की अपेक्षा अधिक [illegible] होगा।

१।८।७७ को गवर्मेंट नौर्मलस्कूल करनाल के मुख्याध्यापक म० सीताराम जी अपने बहुत से विद्यार्थी—अध्यापकों (Pupil-tachers) के साथ शाखा को देखने के लिए यहां पधारे। आपने जाकर बड़ी सूक्ष्म दृष्टि से ब्रह्मचारियों के रहन सहन तथा पठन पाठन को देखा। साथ ही आपने ब्रह्मचारियों से श्लोक तर्क मन्त्रादि का मौखिक पाठ भी सुना जिसे कि ब्रह्मचारियों ने बड़े भले प्रकार सुनाया। सब कुछ देख कर आप पर जो प्रभाव पड़ा वह आपकी निम्न सम्मति से स्पष्ट है। आप लिखते हैं:—"…… ……
All students look very cheerful and healthy and keen on what they are taught.………This school is run on good principles of education." अर्थात यहां के विद्यार्थी हर प्रकार से स्वस्थ प्रसन्न और अपने पढ़ाए पाठ को शीघ्र ही समझ जाने वाले हैं। यह विद्यालय शिक्षा के उत्तम नियमों पर चलाया जा रहा है।" निरीक्षण के थोड़े ही समय में आपको विद्यालय से इतना प्रेम हो गया कि आप चलते हुए अपनी शक्ति के अनुसार कुछ धन भी तत्काल ही शाखा को दे गए।

शारीरिक विकाश एक ओर जहां ब्रह्मचारी दिन रात पठनपाठन में लगे हुए अपने मानसिक विकाश के लिए तैय्यार होते रहते हैं वहां दूसरी ओर शारीरिक विकाश में भी किसी से पीछे नहीं रहते। अभी गत रविवार को थानेसर शहर के M. S. मिडल स्कूल के विद्यार्थी शाखा के विद्यार्थियों से क्रिकेट तथा कबड्डी का सम्मुखय करने के लिए आए। मध्यान्ह के १० बजे क्रिकेट का साम्मुख्य प्रारम्भ हुआ जिसमें जहां मिडल स्कूल के विद्यार्थियों ने २० ही दौड़ें कीं वहां शाखा के ब्रह्मचारियों ने ८५ से ऊपर दौड़ें कीं इसी प्रकार कबड्डी में भी हमारे ब्रह्मचारियों ने उन पर २ पाले किए। यह सब चिन्ह निस्सन्देह शाखा की उन्नति तथा अभ्युदय के हैं।

काशीराम

—:०:—

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में मन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शालीराम के लिए छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि ।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल भी श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० मं० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे ! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है { ११ मार्गशीर्ष सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३८ } ता० ३ दिसम्बर सन् १९२० ई० } संख्या ३३ भाग १

हृदयोद्गार

महर्षि और रमा—

(श्रीयुत कवि 'मराल' द्वारा)

(चौपाई)

मेरठ पहुंचे जब मुनिराई । कथा कहौं तब की सुखदाई ॥
सकल लोक लखितमव उजारा । मुनि हियमा करुणामकबारा ॥

—०:—

लगे जलन अतिचण्ड प्रतापा, लखि खलदल हिय थरथर कांपा ।
कोप अंधेरी उठि उठि आहीं, उलटि उलटि चरणन लगजांहीं ॥

— ———

जे पाथर झरियां बरसाहीं, अमिय बिन्दु तेहि झकि झकि जाहीं ॥
मुनिवर पग अति अटल अरुका, हिमगिरिटरहुन तिन हिय शंका ॥

———

या विधि करन लगे संहारा, बरसन लागे अमिय की धारा ।
सुनि यह कथा मधुर रस पागो, रमा नाम तरुणी गुण सागी ॥

——— —

विधिकी गति जग में किन जानी, मुनियश विमल रमागुणखानी ।
आन्दोलत्वृथि निकार अघोरा, स्वच्छ नलिन जस पवन झकोरा ॥

——— ———

तंह आई मुनिविजय उमङ्गा, जुगुजुगवि जिमि जवन पतङ्गा ।
कादम्बिनि चढ़ि पवन चलाई, जिमिहिमशैल हिलावन आई ॥

— ———

जावहिकप नयन मुनि चीन्हा, वस्त्रओट तेहि आसन दीन्हा ॥
रमा कहन तब लगिअनुरागी, अहो धन्य मैं बड़ भागी ॥

———

जाके हित यह वस्त्र रंगावा, अन्तःपुर निज हाथ बनावा ॥
एक बात पर समझि न आई, जिन गुण यह पारावधि आई ॥

——— —

तिनकी दरसन पावन झांकी, न्यायनिधे ! यह रीति कहां की ॥
सुनि तब विहसि वचन मुनिबोले, सान प्रेमरसअतिशयघोले ॥

— ———

सन्हु देवि मनबात बढ़ाहू, गुण निधानमुन तुम इक चाहू ॥
मैं सुत तुम मात ! मैं जाना, गुण निधान तुम मोहि बखाना ॥

———

मुनि के अस सुनि वचन सुहाये, रमा श्याम लोचन भधराये ॥
पाय पक सब तुरत बहावा, भक्तिभाव मधुकर बनावा ॥

———

श्यामरूप तजि जिमि घनमाला, हिमगिरिठमकरि रूप उजाला ॥

—.०: —

'श्रद्धा' का अरण्यांक !

बड़ी सजधज के साथ प्रकाशित हो गया है। इसमें उत्तम २ लेख और कवितायें हैं। सब पत्रों ने इसकी प्रशंसा की है। थोड़ी संख्या में ही छपवाया गया है [illegible] बिक रहा है। जिन सज्जनों को चाहिए, वे शीघ्र [illegible] मंगवा लें। पीछे पछताना पड़ेगा। श्रद्धा मंगवाने वालों के साथ रियायत की जावेगी। एक कापी का दाम ≈)॥ है। इस [illegible] होंगी—

दीनानाथ सिद्धान्तालंकार
उप सम्पादक "श्रद्धा"

परमात्मने नमः ।

मानव धर्म शास्त्र की व्याख्या

पहिला अध्याय

(गतांक से आगे)

अध्यापन मध्ययनं यजनं याजनं तथा।
दानं प्रतिग्रहश्चैव ब्राह्मणानाम कल्पयत् ॥ ७ ॥

अर्थ, ब्राह्मण के कर्म-पढ़ाना और पढ़ना, यज्ञ करना और यज्ञ कराना, दान देना और लेना-बताए हैं।

टि० जब तक साङ्गोपाङ्ग वेद का अध्ययन नहीं करलेता और उस (वेद) में कहे धर्म का आचरण कर के ब्रह्म को नहीं चीन्ह लेता तब तक एक मनुष्य ब्राह्मण नहीं कहला सक्ता। जब ब्राह्मण बन गया अर्थात् पांचों ज्ञानेन्द्रियों द्वारा उपार्जन किए ज्ञान का यथार्थ स्वरूप जान लिया तो उस का वाणी द्वारा दूसरों के प्रति उपदेश करना कर्त्तव्य हो जाता है। इस लिए ब्राह्मण जगते ही पढ़ाना आरम्भ कर देना चाहिए। फिर अपनी पिछली ज्ञान की कमाई को दृढ़ रखने के लिए स्वयम् भी स्वाध्याय जारी रखना चाहिए। ब्रह्मचर्य व्रत समाप्त कर के स्नातक जब घर जाने लगे तो जो उपदेश गुरु को शिष्य के प्रति देना चाहिए उस में, तैत्तरीयोपनिषद् के अनुसार नैत्यिक स्वाध्याय को प्रधानता दी है। सर्व धार्मिक तथा व्यवहारिक काम करते हुए ब्राह्मण को स्वाध्याय से कभी बेखबर नहीं होना चाहिए:—"ऋतंच स्वाध्यायप्रवचनेच। सत्यंच तपश्च...दमश्च...शमश्च अग्नयश्च...अग्निहोत्रंच ...अतिथयश्च...मानुषंच...प्रजाच...प्रजनश्च...प्रजातिश्च..."(शिक्षा अध्याय, अनुवाक ९)

फिर उसी अध्याय के अनुवाक १० में आया है—"स्वाध्यायान्मा प्रमदः।" बस ब्राह्मण को अपनी प्राप्त की हुई विद्या की दृढ़ता के लिए नित्य स्वाध्याय करने में प्रमाद नहीं करना चाहिए।

इस से आगे सिलसिला उलट जाता है। ब्राह्मण को यज्ञ कराने का अधिकार तभी होता है जब स्वयम् यज्ञ करने वाला हो। जिस ने स्वयम् अमल नहीं किया वह दूसरों का पथदर्शक कैसे होगा? "यज्ञ" शब्द "यज" धातु से बना है। वह तीन अर्थों में प्रयुक्त होता है—(१) देव पूजा (२) संगति करण और (३) दान। परम देव परमात्मा की पूजा, नित्य सन्ध्या द्वारा तथा अन्य देवों अर्थात् विद्वानों का सत्कार, साथ अग्नि होत्र द्वारा करने वाला ब्राह्मण ही पदार्थों के निर्माण में कुशल हो सक्ता है। तब दूसरों से यज्ञ कराके दक्षिणा का अधिकारी होगा। आज कल ब्राह्मण का एक ही कर्म-दान लेना-समझा जाता है, परन्तु मनु जी के क़ानून में यह ब्राह्मण का अन्तिम और सब से तुच्छ काम लिखा है। और दान लेने का अधिकार भी ब्राह्मण को तब पैदा होता है जब पहिले वह स्वयम् दान देना सीखे। ब्राह्मण का धर्म विद्या का दान देना है और विद्यार्थियों और उन के माता पिता तथा धनाढ्य पुरुषों और राजा प्रजा का कर्त्तव्य है कि सच्चे ब्राह्मण की धन धान्यादि से सेवा करें। जो ब्राह्मण विद्या को बेचते हैं वह किसी भी पूजा, शुश्रूषा के अधिकारी नहीं हैं।

प्रजानां रक्षणं दानमिज्याध्ययन मेव च।
विषयेष्वप्रसक्तिश्च क्षत्रियस्य समासतः ॥ ८ ।

अर्थ-प्रजा की रक्षा, दान देना, यज्ञ करना, पढ़ना और विषयों में न फंसना; ये संक्षेप से क्षत्रिय के कर्म हैं।

टि० पढ़ना, यज्ञ करना और दान देना-ये तो त्रिवर्ण के साधारण कर्म हैं। इन के बिना तो द्विज कहला ही नहीं सक्ता। परन्तु क्षत्रिय का विशेष धर्म प्रजा की रक्षा करना है। शरीर दृढ़ और पुष्ट हो युद्ध विद्या में भी निपुण हो, अस्त्र शस्त्रों के चलाने में भी सिद्धहस्त हो—फिर भी क्षत्रिय नहीं कहला सक्ता यदि इन विशेषणों का परिणाम मनुष्य समाज को हानि पहुंचाना हो। रावण और कंस महाराजा तथा शूरवीर होते हुए भी क्षत्रिय नहीं कहला सके क्यों कि उन का उद्देश्य प्रजा की रक्षा न था। जो बाहू अपने ही शरीर के सिर, छाती, जांघों और पैरों को पीट डालें उसे बाहू कौन कहेगा? इसी प्रकार जो पुरुष बलवान् हो कर मनुष्य समाज पर अत्याचार करे उसे क्षत्रिय नहीं कहा जासक्ता। परन्तु बल प्राप्त कर के लोग अत्याचारी क्यों हो जाते हैं? इस लिए कि वे विषयों में फंस जाते हैं। व्यसनी पुरुष, काम चेष्टाओं में फंसा हुआ उस बाहू की न्याई है जो अपने शरीर को ही पीट लेती है। तभी तो वेद में कहा है—"ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति" ब्रह्मचर्य के बल से जिस राजा ने इन्द्रियों को वश में कर लिया है, वह ही प्रजा की रक्षा कर सक्ता है। जो सैनिक तथा सेनापति शत्रु के पराजित होने पर उन की धन सम्पत्ति को लूटते तथा उन की स्त्रियों का अपमान करते हैं, वे रावण की तरह राक्षस भले ही कहलायें परन्तु क्षत्रिय नहीं कहे जा सकें।

पशूनां रक्षणं दानमिज्याध्ययन मेव च।
वणिक्पथं कुसीदंच वैश्यस्य कृषिमेव च ॥ ९ ॥

अर्थ— पशुओं की रक्षा, दान देना, यज्ञ करना, पढ़ना, व्यापार करना, ब्याज लेना और खेती-ये वैश्य के कर्म हैं।

एक मेव तु शूद्रस्य प्रभुः कर्म समादिशत्।
एतेषामेव वर्णानां शुश्रूषा मनसूयया ॥ १० ।

अर्थ-प्रभु ने शूद्रों का एक ही कर्म बताया है-यह कि इन (तीनों वर्णों) की, निन्दा रहित, सेवा करनी।

टि० शूद्र का काम सेवा है, परन्तु किन की? ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य की। त्रिवर्ण वेही कहाते हैं जो ऊपर लिखे विशेषणों से युक्त हों, और जो ऐसे हों वह शूद्र की निन्दनीय सेवा बतला ही नहीं सक्ते। जो मुख पागल न होगा वह पग को विष्टा में जाने की क्यों आज्ञा देगा।

ऊर्ध्वं नाभेर्मेध्यतरः पुरुषः परिकीर्तितः।
तस्मान्मेध्यतमं त्वस्य मुखमुक्तं स्वयंभुवा ॥ ११ ।

अर्थ-पुरुष नाभि से ऊपर पवित्रतर कहा है, परमात्मा ने उस का मुख सब में भी पवित्र कहा है।

श्रद्धा

मेलों में प्रचार

(१)

भारत वर्ष की कई प्राचीन विशेषताओं का एक अङ्ग मेलों का होना भी है। सौभाग्य से यह अभी तक अवशिष्ट है। यह ठीक है कि अन्य प्राचीन रीतिओं की न्याईं इस का भी स्वरूप बहुत बिगड़ गया है तथापि इनकी उपयोगिता अभी तक निःसन्दिग्ध है। हमारे देश में इतने अधिक मेले होते हैं और उनमें से हरेक का इतना अधिक महत्व बताया जाता है कि यह विषय एक स्वतंत्र पुस्तक के लिए उपयुक्त हो सकता है। परन्तु साधारणतया विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारे सब मेले धार्मिक ही हैं। ऋषि मुनियों के सत्सङ्ग द्वारा धर्म और श्रद्धा के भावों को बढ़ाने के साथ गृहस्थियों में स्वास्थ्य, नव जीवन और उत्साह के फूंकने के लिए ही इनकी स्थापना की गई थी। जातीय एकता को बढ़ाने के लिए भी मेले एक अत्युत्तम साधन हैं।

वर्तमान समय में ये उच्च उद्देश्य किस अंश तक पूर्ण हो रहे हैं—यह हमें बताने की आवश्यकता नहीं है। जिसे कभी किसी भी मेले पर जाने का अवकाश प्राप्त हुआ है वह कह सकता है कि मेले सत्सङ्ग के स्थानपर कुसङ्ग और ऐय्याशी के अड्डे बन गए हैं, उनके स्थान स्वास्थ्य और नवजीवन के बदले रोग, जीर्णता और गन्दगी के घर हो गये हैं। मेलों पर जाकर हमारे देश भाई जिन कुरीतियों का परिचय देते हैं, अंग्रेज मिशनरी उन्हीं की फोटो से हमें देश विदेश में बदनाम करते हैं। इस प्रकार हमारे मेले हमारी कीर्ति और प्रशंसा के बदले हमारी बदनामी और कलंक के केन्द्र बन रहे हैं।

आर्यसमाज ने जहां मूर्तिपूजन, बाल विवाह इत्यादि अन्य धार्मिक और सामाजिक कुरीतियों के खण्डन द्वारा उचित सुधारों का मण्डन किया है वहां मेलों के विरुद्ध भी उसने आवाज़ उठाई है। आर्यसमाज यह काम दो प्रकार से करता है। एक तो वह अपने सामाजिक उत्सव अर्थात् मेले कर के साधारण जनता के सम्मुख यह रखता है कि आदर्श मेले किस प्रकार मनाये जाने चाहिये और उनका वास्तविक स्वरूप क्या है। गुरुकुलों, और प्रधान२ समाजों के उत्सव इसके प्रमाण स्वरूप उपस्थित किये जा सकते हैं। आर्यसमाज के कार्य का दूसरा पहलू प्राय खण्डनात्मक कहा जा सकता है। हिन्दुओं के मेलों में समाज अपने कार्यकर्त्ताओं को भेजती है। वहां पर मण्डनात्मक की अपेक्षा खण्डनात्मक कार्य ही अधिक किया जाता है। इस के अतिरिक्त समाज के उपदेशक उस मेले की कुरीतिओं का खण्डन करते हुये उसकी विशेषता पर और प्राचीनता पर भी प्रायः भाषण दिया करते है।

हमें कई वार ऐसे मेलों पर जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। हम अपने अनुभव से कह सकते हैं कि ऐसे मेलों पर प्रचार का इतना बुरा प्रबन्ध होता है कि जिस से श्रद्धा के स्थान मे अश्रद्धा और भक्ति के स्थान में घृणा पैदा हो जाती है। प्रचार का ठीक समय पर प्रारम्भ न होना और उसके लिए आवश्यक तैयारी का अभाव, उपदेशकों के ठहरने का अप्रबन्ध, व्याख्यानों की निस्सारता, बे सिर पैर के भजनों का होना इत्यादि कई ऐसे दोष है जिन से मेलों पर, अपने प्रचार द्वारा, जो प्रभाव हम पैदा कर सकते थे उसे बहुत धक्का लग रहा है। मेले वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार के बहुत उत्तम साधन हो सकते हैं यदि हम अपने कार्य को जहां संगठित करें वहां, साथ ही, कुछ आवश्यक सुधार भी करलें। सगठन और सुधार के स्वरूप को हम अगले अङ्क में बताने का प्रयत्न करेंगे।

—:o:—

इलाहाबाद विश्वविद्यालय के उपाधिवितरण के समय यूनिवर्सिटी के चान्सलर हाइकोर्ट बटलर ने जो भाषण किया उसकी एक अभूत पूर्व विशेषता यह थी कि उस में वर्तमान राजनीतिक परिस्थिति की ओर निर्देश करते हुए कहा गया था कि विद्यार्थियों को भी राजनीति का ज्ञान होना चाहिए। चान्सलर ने प्रान्तीय सरकार की ओर से राजनीति विज्ञान का अध्यापन प्रारम्भ करने का भी वचन दिया। यह भाव प्रशंसनीय हैं परन्तु देखना यह है कि राजनीति की शिक्षा दी किस प्रकार की जावेगी। क्या यह भी वैसी ही होगी। जैसी शिक्षा भारतीय इतिहास की भारत सरकार की यूनिवर्सिटियों में दी जाती है?

—:o:—

सरकार ने असहयोग के आन्दोलन पर जो नीति की घोषणा की है उस को लेकर भारतीय [illegible] में विचार चल रहा है। गरम और नरम पत्रों ने क्रम से घोषणा की निन्दा और प्रशंसा की है। परन्तु विचारणीय यही है कि सरकार ने कभी असहयोग के कारण को भी सोचा है। यदि उसका [illegible] सोचा गया होता तो शायद इस घोषणा की आवश्यकता ही न होती। इसका मूल कारण रौलट एक्ट, प्रेस एक्ट आदि हैं। यदि नरम दल के सज्जन अकृतकार्य हो गये तो शायद सरकार एक रौलट एक्ट की और पूर्ति करेगी।

—:o:—

अन्यत्र सार और सूचना में "वैदिक सन्देश" पत्र के निकलने की सूचना दी गई है। गुरुकुल से जनता वेद के विषय पर विशेष ज्ञान की सदा आशा करती है। हम समझते हैं यह पत्र जनता की उसी आशा का उत्तर देने को निकाला जाता है। यदि वेदप्रेमी वेद के विज्ञान की वृद्धि चाहते हैं तो उन्हें पत्र का खुले हृदय स्वागत करना चाहिए।

—:o:—

शिक्षा जगत्

दिल्ली में सरकारी विश्वविद्यालय

देश के वर्त्तमान, आन्दोलन को देख सरकार ने भी अब अपना मत कुछ बदल लिया है। जहां तक मुझे याद है, दिल्ली को सरकार ने अपनी राजधानी इसी शर्त पर बनाया था कि इसे हाईकोर्ट और यूनिवर्सिटी नहीं दी जावेगी परन्तु अब वही भारत सरकार, स्वयमेव, एक नया विश्वविद्यालय [illegible] कर के जनता को सन्तुष्ट करना चाहती है—यह भी काल चक्र की एक विचित्र नमूना है। इस सम्बन्ध में बिठाई गई कमेटी ने अपनी जो रिपोर्ट प्रकाशित की हैं। इससे ज्ञात होता है कि यह विश्ववि-

द्यालय वर्त्तमान सरकारी विश्वविद्यालयों से कुछ भिन्न रीति और नीति पर चलाया जावेगा। इसमें केवल परीक्षा ही नहीं ली जावेगी किन्तु शिक्षा भी दी जावेगा। इस से सम्बन्द्ध विद्यालयों और महाविद्यालों में एफ़० ए० तक ही शिक्षा दी जावेगी। इन अतिरिक्त अन्य भी कई एक नई बातें रक्खी गई हैं। परन्तु जब तक सरकार अपनी शिक्षा पद्धति के मौलिक सिद्धान्तों में परिवर्तन नहीं करती और जब तक वह हमारी शिक्षा को हमारी ही दृष्टि से नहीं देखती तब तक इस प्रकार की पोचा पाची से कुछ विशेष लाभ की आशा नहीं। आज से १५ नहीं २ पांच वर्ष पूर्व भी सरकार यदि इन सुधारों को करती तब इनका कुछ महत्व होता पर आज जब कि जनता यह मान चुकी है इस पद्धति का आधार ही खोखला और लचर है तब सरकार की छत्र च्छाया में पलती हुई ऐसी संस्थाओं का, हमारी दृष्टि में, कुछ भी अर्थ नहीं है।

परन्तु इस समय हमारे नेताओं का एक प्रधान कर्त्तव्य है और वह यह कि सरकार के मुकाबले में दिल्ली में एक

राष्ट्रीय विश्वविद्यालय

खड़ा करदें। दिल्ली की वर्त्तमान जागृति और आन्दोलन को दृष्टि में रखते हुए हम यह निश्चय पूर्वक कह सकते हैं कि ऐसी राष्ट्रीय संस्था को अवश्य पूर्ण कृतकार्यता होगी। एक बात और है। सरकारी विश्वविद्यालय यदि वहां स्थापित हो गया तब उसे उखाड़ना कठिन हो जावेगा परन्तु यदि उस से पूर्व ही हमारे नेताओं ने वहां राष्ट्रीय विश्वविद्यालय स्थापित कर दिया तब तो मैदान हमारे ही हाथ में है। नेताओं को इस काम में अब कोई कोई ढील नहीं करनी चाहिए।

प्रिन्सिपल विस्वानी का व्याख्यान

सिन्ध के छात्र सम्मेलन के सभापति के रूप में प्रिन्सिपल विस्वानी ने जो भाषण दिया है वह अत्यन्त महत्व पूर्ण है। उसका एक २ अक्षर देश भक्ति के रंग में रंगा हुआ है। वर्त्तमान शिक्षा पद्धति के दोषों को दर्शाते हुए उन्होंने इतिहास से यह सिद्ध किया है कि जातीय स्वाधीनता के निर्माता विद्यार्थी ही हैं। इटली, मिस्र, जापान, चीन जर्मनी इत्यादि देशों के विधायकों के जीवनों की ओर निर्देश करते हुवे आपने उनकी देश सेवा के वे प्रधान कार्य बताये जिन से सम्पूर्ण जाति में एक नवीन जागृति पैदा हो गई। प्रत्येक देश भक्त विद्यार्थी के लिये प्रिन्सिपल विस्वानी का यह व्याख्यान मनन करने योग्य है।

लाहौर में तिलक विद्यालय—

यह समाचार, वस्तुतः अत्यन्त प्रसन्नता जनक है कि देश भक्त ला० लाजपतराय जी, शीघ्र ही, लाहौर में लो० मा० तिलक के नाम पर एक ऐसा विद्यालय स्थापित करने वाले हैं जिसमें राजनीति की विशेष रूप से शिक्षा दी जावेगी। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि देश के नवयुवकों के लिए इस समय राजनीति और विशेषतः तिलक राजनीतिः—की शिक्षा की अत्यन्त आवश्यकता है।

"श्रद्धा" के सम्पादक महोदय ने, अपने लेखों में, कईवार, इस विषय पर उचित बल दिया है और यह प्रसन्नता की अवसर है कि उनके कथन की ओर देश के एक प्रधान नेता ने ध्यान दिया है। इसी सम्बन्ध में;

अहमदाबाद और अलीगढ़ के जातीय विश्वविद्यालयों

के संस्थापकों और महात्मा गान्धी जी से भी प्रार्थना करना चाहता हूं कि वे इन संस्थाओं में तिलक राजनीति की शिक्षा का अवश्य समुचित प्रबन्ध करें। मुझे आशा है कि इस ओर शीघ्र ही ध्यान दिया जावेगा।

प्रयाग यूनिर्सिटी का पदवी दान—उत्सव:—

गत सप्ताह प्रयाग–विश्वविद्यालय से पास हुये छात्रों को उपाधि वितीर्ण का उत्सव, सर हाइकोर्ट बटलर की अध्यक्षता में; हुआ। सरकारी उत्सवों में जो कृत्रिमता हुआ करती थी वह तो थी ही। इस लिए उस पर मुझे कुछ विशेष वक्तव्य नहीं है। उपाधि प्रदान के बाद श्रीयुत बटलर महोदय ने, चान्सलर की हैसियत से, भाषण देते हुये आधुनिक आन्दोलन और विशेषतः असहयोग पर जो हृदयोद्गार प्रकाशित किए वे भी, एक सरकारी पदाधिकारी के लिए स्वाभाविक ही थे। उन विचारों का खण्डन करना उन्हें अनुचित महत्व देना है। इस लिए मैं उनकी उपेक्षा करना ही उचित समझता हूं।

हां, सरकारी पुतलीघरों में घड़े गये जिन युवकों ने लम्बे २ पुछल्ले लेकर संसार के कार्यक्षेत्र में पदार्पण किया है उन्हें बधाई देते हुए मेरा दिल कुछ सहमता है। क्यों? इसी लिए कि मैं समझता हूं कि जो उपाधियां उन्हें एक विदेशी सरकार द्वारा दी गई हैं, उससे उनकी योग्यता पता लगने के स्थान में यही ज्ञात होता है कितने अब तक उनका दिल और दिमाग विदेशी शिक्षा और विदेश सरकार के हाथ बिक चुका है। मैं समझता हूं कि उपधि उत्सव के दिन खुशी मनाने के स्थान में छात्रों को अपना यह दौर्भाग्य समझना चाहिए कि उन्हें एक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय में शिक्षा पाने और किसी राष्ट्रीय नेता के पवित्र हाथों से उपाधि प्राप्त करने का सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ है। इस कलंक को धोने का एक मात्र उपाय यही है कि वे युवक यह प्रण करलेवें कि भावी जीवन में वे इन उपाधियों का कभी प्रयोग नहीं करेंगे।

'भिक्षु'

साहित्य–परिचय

भारत माता के दास के सिलसिले में महात्मा गान्धी की संक्षिप्त जीवनी पहला फल है। लिखाई, छपाई नफ़ीस, ७० सफ़े का ट्रैक्ट, भाषा पढ़ने योग, पुस्तक उपयोगी, और उर्दू में है। मिलने का पता जनरल स्टोर लुधियाना; क़ीमत दर्ज नहीं।

दयानन्द आनन्द सागर महाशय चम्पत राय जी एम–ए–रचित उर्दू काव्य रूप में श्री स्वामी दयानन्द जी का जीवन चरित है। कविता रोचक और भक्ति पूर्ण है। लिखाई छपाई तथा

कागज़ बढ़िया १४४ बड़े की पुस्तक कीमत ।=)

सन्ध्योपासना लेखक और प्रकाशक श्री. पाद्दामोदर सातवलेकर, स्वाध्यायमण्डल औंध जि० सितारा मूल्य १)

स्वाध्याय मण्डल द्वारा जिन उत्तम २ पुस्तकों का प्रकाशन हो रहा है, उन का परिचय हम, समय २ पर पाठकोंको देते रहते हैं। प्रस्तुत पुस्तक भी उसी मण्डल द्वारा ही प्रकाशित की गई है। इस में वैदिक सन्ध्या के मंत्रों पर दार्शनिक दृष्टि से विचार किया गया है। पढ़ने से पता लगता है कि लेखक महोदय ने इस विषय का पर्याप्त अनुशीलन किया है। सन्ध्या पर प्रायः बहुत से आक्षेप किये जाते हैं। इस पुस्तक के स्वाध्याय से वे शीघ्र ही दूर हो सकते हैं। हम प्रत्येक आर्य्य गृहस्थ से प्रार्थना करेंगे कि वह इस पुस्तक का अध्ययन अवश्य करे। वैदिक धर्मियों को इन पुस्तकों के ग्राहक बन मण्डल का उत्साह बढ़ाना चाहिये। गुरुकुलों और डी. ए. वी. स्कूलों में भी धर्म शिक्षा के लिए यह तथा लेखक महोदय की अन्य पुस्तकें अत्यन्त उपयोगी हो सकती हैं। 'द'

गुरुमत दिवाकर

लेखक—म० मुन्शीराम लाखामी

इस पुस्तक में सिक्खमत के प्रामाणिक ग्रन्थों के आधार पर सिद्ध किया गया है कि सिक्ख सम्प्रदाय के गुरु वेदानुयायी हिन्दु थे। वे वेद में विश्वास रखते थे, यज्ञोपवीत धारण करते थे और उनके विवाह हिन्दु रीति से होते थे।

पुस्तक के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि लेखक ने इस विषय में काफ़ी अनुशीलन किया है। विचारों की नवीनता के लिये हम लेखक की प्रशंसा करते हैं। भाषा में बहुत संशोधन और सुधार की आवश्यकता है। कई स्थानों पर केवल पञ्जाबी उद्धरणों के कारण अन्य प्रान्त वासी इस से लाभ नहीं उठा सकते उन का हिन्दी अनुवाद साथ होना अधिक उपयोगी होता। म० कर्तारसिंह ज़िलाबुज़र आदि विषयक अत्यन्त वैयक्तिक निर्देश पुस्तक में उचित नहीं मालूम होते। सिक्खमत का हिन्दु धर्म के साथ जो सम्बन्ध जानना चाहते हैं उन्हें यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिये। 'ध'

चिकित्सा चन्द्रोदय, द्वितीय भाग।

इस का पाठकों से विशेष परिचय कराने की आवश्यकता नहीं। चन्द्रोदय के प्रथम भाग की समालोचना १६ आश्विन "श्रद्धा" की में निकल चुकी है। यह उसी का दूसरा भाग है इस में ज्वर का विशेष वर्णन है। अंग्रेजी ज्वरों से भी परिचय कराया गया है। आवश्यक भस्म और रस तैयार करने की विधियां भी पीछे लिखी गई हैं। कहना नहीं होगा कि प्रथम भाग के समान यह भाग भी दर्शनीय और ग्राह्य है। लेखक और प्रकाशक वही पं० हरिदासवैद्य, २०१ हरिसनरोड कलकत्ता। मूल्य ५)॥ 'र'

जया जी प्रताप—का महाराज के जन्म दिन का अंक हमारे सामने है। इस को ग्वालियर के राज्याधिकारी बहुत से सज्जनों और इमारतों के चित्रों से अच्छी तरह सजाया गया है। लेख साधारणतया बुरे नहीं हैं। सजावट और राज सम्बन्धी लेखों के सिवाय साधारण अंकों से कुछ विशेषता नहीं है। हम नहीं समझते कि इस प्रकार के विशेष निकालने का क्या प्रयोजन है?।

साहस—नाम का साप्ताहिक पत्र झांसी से निकलना प्रारम्भ हुआ है। बुन्देलखण्ड से एक हिन्दी के पत्र अत्यन्त आवश्यकता थी जिस की कमी को यह अवश्य पूर्ण करेगा। एक हज़ार की जमानत ले कर नौकर शाही ने इसे रौंधने का प्रयत्न किया है तथापि संचालकों ने उसे प्रकाशित कर जिस उद्योग का परिचय दिया है, वह प्रशंसनीय है। आशा है, हिन्दी पाठक इसका स्वागत करेंगे।

"अहिंसा—प्रति गुरुवार को "अहिंसा प्रचारिणी सभा" काशी की ओर से प्रकाशित होना प्रारम्भ हुआ है। वार्षिक मूल्य ३॥) है। पत्र का उद्देश्य पत्र के नाम से ही पता लगता है। इसके सिवा किसानों के लिए भी उपयोगी लेख रहते हैं। सभी मुख्य धर्म ग्रन्थों द्वारा अहिंसा का प्रतिपादन किया गया है। साधारण समाचारों को भी स्थान दिया गया है। आज कल गो रक्षा के आन्दोलन के युग में पत्र का अच्छा स्वागत होने की आशा है।

"राजस्थान केसरी" इस नाम का साप्ताहिक राष्ट्रीय पत्र, वर्धा, मध्यप्रदेश से प्रकाशित होने लगा है। हमने इसके चार अंक देखे हैं। ब्रिटिश भारत के हित को लक्ष्य में रखने वाले पत्रों की हिन्दी में कमी नहीं है परन्तु देशी रियासतों में तो पत्रों का कुछ अभावसा ही है। 'रा० केसरी' इस कमी को, आशा है, पूर्ण करेगा। प्रायः सभी रियासतों के विषय में इसमें लेख रहते हैं। रियासतों के सिवा देशी तथा विदेशी अवस्था का भी साधारण ज्ञान रहता है। कविताओं का संग्रह उत्तम होता है। कृषियों तथा महिलाओं के लिए भी दो एक लेख प्रकाशित किए गए हैं। पत्र के आकार और पाठ्य विषय को देखते हुए वार्षिक मूल्य ३॥) रखकर ग्राहकों के साथ रियायत की गई है। सम्पादक बी० एस० पथिक हैं। हम केसरी का हृदय से स्वागत करते हैं।

"योगी" नाम का मासिक पत्र पं० बैजनाथ कोटी के सम्पादकत्व में झांसी से प्रकाशित होने लगा है। वार्षिक मूल्य ६)। पत्र का जन्म योग, ब्रह्मज्ञान और करामाती विद्याओं (O-ccult Powers) की शिक्षा देने के लिए हुआ है। एकाध विषय चित्र द्वारा भी समझाया गया है। विशेष विषयों पर इस प्रकार पत्र निकलना हिन्दी के सौभाग्य का चिन्ह है।

ग्राहकों को सूचना

कई ग्राहको ने इस बात की शिकायत की है कि उन्हें पिछले ३ सप्ताह से "श्रद्धा" का कोई अंक नहीं मिला। हम सब ग्राहकों को यह सूचित कर देना चाहते हैं कि कई अनिवार्य्य कारणों से शुभ्यंक की तैय्यारी में इतनी देर लग गई है कि उस के लिए हमें अत्यन्त शोक है। तीन सप्ताह की कमी पूरी कर दी गई है और जो शेष रह गई है, वह फिर पूरी कर दी जायगी।

२ वी. पी. भेजने का नियम नहीं है। मूल्य अगाऊ आना चाहिये।

३. ग्राहक महाशय पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक नम्बर अवश्य लिखें।

४. तीन मास से कम पता बदलने के लिए अपने डाकखाने से ही प्रबन्ध करना चाहिये।

५. 'श्रद्धा' का वार्षिक मूल्य ३॥)

—:o:—

विचार-तरंग

संध्या

१

अब मेरे चौके में कोई मत आवे। अब मैं सब कूडा करकट निकाल कर साफ़ चौका लगा कर आत्मिक भोजन पकाने के लिये बैठा हूं।

यही निश्चय कर के मैं प्रतिदिन सायं प्रातः जब आत्मिक भूख लगती है, चौका लगा कर पवित्रता से रसोई करना शुरू करता हूं। परन्तु मेरे यार दोस्त ऐसे बेतकल्लुफ़ [दोस्तों को इस से ज्यादा और क्या कहूं] हो गये हैं कि मुझे अपना भोजन भी नहीं लेने देते। जिन किन्हीं से दिन भर में या रात में ज़रा क्षणिक भी परिचय हो या होजाता है वे निःशंक बेखटके मेरे चौके में चले आते हैं और मुझ से बातें करने लगते हैं। और मैं भी ऐसा रसिक (अपने को 'निर्लज्ज' कहते तो लज्जा आती है) हूं कि मुझे कुछ खबर तक नहीं रहती। कभी कभी तो मिन्टों तक दोस्तों से गप्पें उड़ती रहती है। एक दम जब ख्याल आता है तो चिल्ला उठता हूं "हायरे! यह तो मेरा चौका छूत हो गया। निकलो, यहां से भागो। मैं तो भोजन के लिये बैठा था"। सबको हटा कर फिर से चौका देता हूं और फिर से भोजन बनाने बैठता हूं। किन्तु फिर भी वही हाल है। भला दिन भर के साथी इस समय के लिये कैसे हट जांय। फिर फिर चौका छूत होता है और मैं फिर फिर शुरू से चुल्हा सुलगाता और दाल चढ़ाता रहता हूं। बड़ा हैरान हूं। क्या करूं?। बहुत देर हो जाती है—दूसरी घंटी बजने वाली है। क्या दिन भर यही करता रहूं? इतना तो धीरज नहीं है। या यह भोजन ही न खाऊं? यह भी इच्छा नहीं है। अन्त में तंग आकर छून, जूठा जैसा भी कच्चा पक्का खाना होता है, खालेता हूं और छुटकारा पाता हूं। पर इस दूषित भोजन से क्या बनना है। यही कारण है कि मेरी आत्मिक पुष्टि नहीं होने पाती—प्रति दिन दोनों संध्या वेलाओं में भोजन खाता जाता हूं तो भी दुबला का दुबला ही हूं।

(२)

एक नदी है जिसे सब यात्रियों ने पार करना है। हम में से कोई भी नहीं है जो कि इसे पार कर चुका हो यह सच है कि बहुत से लोग इस नदी के तट पर वर्षों से आये बैठे हैं—बहुत आ रहे हैं, कोई दूर है, कोई समीप पहुंच चला है—ऐसे भी बहुत हैं जिन्हें खबर नहीं कि हमने कभी इस नदी को मंझाना भी है; परन्तु वे सब इस बात में समान हैं कि कोई भी पारंगत नहीं। सब इसी पार हैं।

तटवर्ती लोग दूर तक पानी में जाते हैं और घबराकर लौट आते हैं। बड़े २ यत्न करते हैं—नई २ तदबीरें पार होने के लिये सोचते हैं इधर से जाकर देखते हैं, कभी उधर से जाते हैं। परन्तु जब तक पार नहीं हो जाते तब तक कुछ नहीं। वे वही हैं जो अन्य हैं। उन में कोई सच्ची महत्ता नहीं, कोई वैशिष्ट्य नहीं।

चाहें मूर्ख रहो या धुरंधर पण्डित बन जाओ, (Blockhead) रहो या विद्वान् कहलाओ, निर्बल रहो या बड़े आश्चर्य कर कौतुक कर सकने वाले बली बन जाओ; परन्तु यदि पार नहीं जाना तो कोई बात नहीं। सब एक बराबर हैं। तब अपनी विद्या बुद्धि या बल का गर्व करना वृथा है। यह शोभा नहीं देता, क्यों कि परीक्षा के अवसर पर साफ़ ही दीख जाता है कि ये सब एक ही खेत की मूली हैं—सब एक ही पंक्ति में मौत के मुख में खड़े हैं। (किन्तु धन्य हैं वे महात्मा जो पार पहुंच गये हैं—उनके चरणों में मेरे निरंतर प्रणाम हैं।) यह कौन सी नदी है?

यह वह नदी है जो कि दुःखपारावार के राज्य की सीमा है और जिसके पार प्रकाशता की ज्योतिर्मयी का पुण्य विस्तार आरम्भ होता है। यह वह नदी है जिसके पार गया हुआ निरक्षर भी पूर्ण विद्वान है—सर्ववेत्ता है, साधारण दीखता हुआ भी बलियों का भी बली है। (भोला देख कभी इस नदी का निरादर मत करना)

३

हे प्रभो! आपके दर्शन सदा मंगल कारी हैं। किन्तु मेरे भाई मेरी लम्बी संध्याओं से शायद भ्रम में आजाते होंगे वे मेरे इस तुच्छ अधम जीवन को देख हंस कर कहते होंगे कि 'यह है आपके दर्शन करने वालों का हाल'। पर उन्हें खबर नहीं कि मैं उस एक आध घंटे में आपके दर्शन नहीं कर पाता मैं तो केवल उस दर्शन के लिये यत्न करता हूं—और न जाने और कब तक इस नश्वरी में ही मेरा यह समय बीतना है यदि दर्शन नहीं होते तो क्या (प्रिय भाइओ आपका यह अभिप्राय है कि) यत्न करना भी छोड़दूं,। वह दर्शन नहीं, तो मुझ में आज उच्च जीवन भी नहीं मेरा मंगल भी नहीं। किन्तु यह बात तो अटल है कि वर्तमान मनुष्यों के पास 'प्रभु दर्शन' और 'उच्च जीवन' न जाने कितनी दूर से और वह धीरे २ कदम मिलाते हुवे प्रतिक्षण नज़दीक २ आरहे हैं। क्या यह सच नहीं?। क्या अविचल समझ इस पर पूर्ण भरोसा नहीं किया जा सका?।

(४)

इन सब विचारों का यही अर्थ है कि [१] कार्य साधन में घबराओ नहीं निरन्तरता की ज़रूरत है (२) कभी भी बाहरी दृश्यों से भ्रमाये जाकर अविश्वासी मत बनो, ठीक दिशा तो यही है—यही 'सत्यका' पंथ है—यही चलना है (३) एक 'दीर्घकाल' के बाद समीप आता हुवा वह समय अवश्य एक दिन आपहुंचेगा जब कि प्रभु के दर्शन पाकर हमारा परं मंगल होगा या जब हम पार पहुंचे हुवे होंगे या हमारी आत्मायें अपनी पूर्णता में परि पुष्टि को प्राप्त हुई होंगी।

धर्मेन्द्र

गुरुकुल-जगत्

गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ में अमेरिकन यात्री

गत सोमवार ता० ८ नवम्बर को अमेरिका के प्रसिद्ध यात्री श्री युत कुनहसन महोदय जिन्हों ने अमेरिका में कई स्काउटस के स्कूल खोले हुए हैं गुरुकुल शिक्षा प्रणालि की शैली के अवलोकनार्थ श्री युत चांदकरण शारदा जी वकील अजमेर के साथ पधारे। आपने गुरुकुल का गहरी दृष्टि से निरीक्षण किया। ब्रह्मचारियों के स्वास्थ्य, सादगी, तथा सफ़ाई को देखकर बड़े प्रसन्न हुए। दोनों उक्त महोदयों को सारे विभाग अच्छी तरह दिखाये गये। गुरुकुल के विषय में उन्हों ने जो अपनी सम्मति सम्मति-पुस्तक में लिखी है। उसका भाव नीचे दिया जाता है:—

"गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ में आज मैं पहिली बार आया हूं। मुझे अपनी यह सम्मति लिखते हुए अत्यन्त हर्ष है कि विद्यालय का काम सर्वथा सन्तोष जनक है। ......मेरे हृदय पर जो प्रभाव पड़ा है, वह चिरस्थ यी रहेगा। यहां के कार्यकर्ता और विद्यार्थी आध्यात्मिक वायु मण्डल में काम करते हैं। परमात्मा करे, यह विद्यालय दिन प्रतिदिन उन्नति करता जाये और यहां से भारतीय युवक पैदा हो सकें।"

"आज मैं अमेरिकन यात्री श्रीमान् कुनहसन साहब के साथ गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ देखने आया। यहां के बालकों के प्रसन्न मुख उत्तम स्वास्थ्य और सादगी को देखकर हृदय में एक जातीय अभिमान की लहर उठती है इस समय सारे भारत में जातीय शिक्षा प्रणालि के प्रचार का बहुत आन्दोलन चल रहा है। मेरी तुच्छ मति में गुरुकुल शिक्षा-प्रणालि का प्रचार कुछ सुधार के साथ भारत में प्रचलित करना चाहिए। यहां के विद्यार्थियों को पढ़ाई के साथ २ Technical education हुनर और कारीगरी की शिक्षा भी देनी चाहिए। प्रत्येक ब्रह्मचारी जिन की आयु १० वर्ष की है उनको औज़ार वगैरः पकड़ने का काम अभी से सिखना चाहिए। मैं भगवान से प्रार्थना करता हूं कि वह महर्षी दयानन्द जी के बताए हुए सच्ची वैदिक शिक्षा प्रणालि के भावों को संसार में शीघ्र फैलाने में परम सहायक हों।

चांदकरण शारदा

उपर्युक्त सम्मतियों से स्पष्ट है कि गुरुकुल शिक्षाप्रणालि की महत्ता, विशेषता एवं उपयोगिता को पक्षपात शून्य दृष्टि से देखने वाले ही पूर्णतया अनुभव कर सकते हैं। हमारे यात्री महोदय ने फिर भी गुरुकुल में पधार कर गुरुकुल की शिक्षा प्रणालि से लाभ उठाने का निश्चय किया है।

ऋतु

ऋतु बहुत उत्तम है ब्रह्मचारियों का स्वास्थ्य सर्वथा अच्छा है साधारण ज्वर के कोई ब्रह्मचारी विशेष रोगग्रस्त नहीं।

पढ़ाई

नियम पूर्वक चल रही है। अध्यापक तथा ब्रह्मचारी अगले सत्र की तैयारी में विशेष परिश्रम से लगे हुए हैं।

खेलें

खेलें नियम पूर्वक आरम्भ होगई हैं। सायंकाल पढ़ाई के बाद सारे ब्रह्मचारी क्रीड़ा क्षेत्र में यथा नियम निर्धारित खेलें हाकी, फुटबाल, क्रिकेट, बेसबाल क्रिकेट आदि बड़े उत्साह से खेलते हैं अध्यापक भी साथ भाग लेते हैं।

दीपावली

गत २६—७—७७ को ऋषिदयानन्द के मृत्यु दिवस के उपलक्ष्य में दीपमाला का उत्सव पहिले वर्षों की तरह इस वर्ष भी बड़े समारोह से मनाया गया। विजय दशमी का जातीय उत्सव तथा दिपावली का धार्मिक उत्सव गुरुकुल जैसी धार्मिक और जातीय संस्था में विशेष गौरव रखते हैं अतः ये वैसे ही गौरव और उत्साह के भावों से मनाये भी जाते हैं। दो ही उत्सव ऐसे हैं जो अब भी सोई हुई हिन्दु जाति के हृदयों में पवित्र राम राम की विजय और रामराज्य की ज्योति के दीये जलाते रहते हैं। ये ही वे उत्सव हैं जिन्होंने अब तक हमारे अन्धेरे के दिनों में भी हम से राम और ऋषिदयानन्द जैसों को अलग नहीं होने दिया। ये ही वे उत्सव हैं जिनके नायक लंका में धर्म की विजयपताका गाड़ कर भी लंका वासियों को पददलित करने का यत्न नहीं किया था। यही वह उत्सव है जिस का नेता विष के घूंट भर के भी कह सकता था कि मैं आदमियों को कैद से छुड़ाने आया हूं कैद में डालने नहीं। ऐसे पवित्र जातियाभिमान को जागृत कराने वाले उत्सवों को जातीय और धार्मिक संस्थाओं को विशेष गौरव से मनाने चाहियें। अतएव उसी गौरव से इस वर्ष भी दिवाली मनाई गई।

दिवाली की रात को बृहद् हवन के पश्चात सभा हुई जिस में अध्यापकों ने ब्रह्मचारियों को ऋषिदयानन्द और राम को अनेक जीवन की अनेक घटनाओं का वर्णन करते हुए ब्रह्मचर्य व्रत पर दृढ़ रहने, गुरुभक्ति, धर्म में निर्भीकतादि की कई शिक्षाएं दीं। सभा के बाद सहभोज हुआ सहभोज में दशहरे की तरह अब भी ब्रह्मचारी श्लोक शास्त्रार्थ के लिये सज्जित थे अतः श्लोकों में शास्त्रार्थ हुआ जिस में ब्र० वासुदेव, विरजानन्द, चन्द्रपाल, तथा विद्याधर ५म श्रेणी ब्र० धर्मराज ३म श्रेणी और ब्र० विवेकानन्द ४र्थ श्रेणी अच्छे रहे अतः इनको कुछ पारितोषिक भी दिया गया।

इस प्रकार दिवाली का उत्सव बड़े समारोह के साथ अपने चिन्ह छोड़कर अगले साल के लिए अनेक शिक्षा देकर शान्त हो गया।

गोशाला

गोशाला के कष्ट के लिये पहिले भी निवेदन किया गया था किन्तु अभी तक किसी सज्जन ने कृपा नहीं की गौओं को अत्यन्त कष्ट है क्या गौ को माता कहने वाली जाति के दानी इस पुण्य कार्य में भाग लेकर पुण्य के भागी न होंगे। यदि फ़िलहाल कोई सज्जन ५००) रुपये भी इस पुण्य कार्य में दान दें तो गौओं का बड़ा कष्ट दूर हो जावे आशा है कोई दानी सज्जन इस ओर विशेष ध्यान देकर पुण्य के भागी बनेंगे।

प्रियव्रत
स० मुख्याधिष्ठाता

हमारी मद्रास की चिट्ठी

(निजू संवाददाता द्वारा)

मैं कल ही मद्रास से लौटा हूं। आज कल यहां बड़े ज़ोर से वर्षा हो रही है। बैंगलौर और माइसोर भी उस के असर से नहीं बचा। यहां भी दिन भर बादल घिरे ही रहते हैं।

मद्रास में कई एक बातें इन दिनों देखने लायक हैं। चुनाव के दिन नज़दीक आ रहे हैं। उम्मेदवारों की मोटरें १२ घन्टे लगातार चक्कर ही चक्कर काट रही हैं। दीवारों पर बड़े २ एक गज़ लम्बे और एक गज़ चौड़े नोटिस लगे हैं जिन में हाथी के से अक्षरों में छपा है—Please Vote

for C. p Ramswamy Iyer for the Legislative Council । इसी तरह अन्य वोट मांगने वालों के नाम भी जहां तहां दीख पड़ते हैं। फाटकों पर ट्रामों पर मकानों पर सब कहीं वोट के ही नोटिस लगे हैं। कभी २ तो एक बड़े कपड़े पर यही बात लिखा कर उसे कुलियों के हाथ में दे सब जगह फिराया जारहा है। ब्राह्मणों की तरफ से अपने चुनाव और अब्राह्मणों की तरफ से अपने चुनाव की कोशिश हो रही है। अब्राह्मण अपनी अब्राह्मणता का परिचय बड़े बुरे ढंग से दे रहे हैं उन्हों ने Please Don't Vote for Brahmins के पवित्र मन्त्र जगह २ लटका दिये हैं। ब्राह्मण अब्राह्मण तो भीख का चोला डाले वोट के लिये दर २ फिर ही रहे हैं लेकिन गान्धी जी के कुछ शिष्य भीख देने वालों को कुछ न देने की पट्टी पढ़ा रहे हैं इन लोगों की तरफ से Don't Vote for Any candidate के बड़े २ इश्तिहार सब जगह लगाये गये हैं। वोट देने वाले प्रायः गान्धी जी के ही अनुयायी हैं। जब कोई बड़ा आदमी किसी साहूकार के पास आकर बैठता है उसके बोलना प्रारम्भ करने से पहले ही साहूकार गान्धी जी के इश्तिहार की तरफ उंगली कर देता है बहुत बात चीत किये बिना जल्दी में फैसला कर देने का उन्होंने यही तरीका निकाला है। उम्मेदवारों को रोज गान्धी जी की शक्ति का परिचय बढ़ता जाता है।

होकर सोच रहे हैं कि यदि शुरू में ही गान्धी जी के साथ सुर मिला देते तो अब तक तो देश के नेता बन चुके होते सो देश का कल्याण हो या सत्यानाश हो उन्हें तो नेता कहलाने का चस्का पड़ा हुआ है। सुना है कि इसी लिये कुछ लोग उम्मेदवारी छोड़ने वाले हैं।

इस समय मद्रास में वोटों की सभाओं के सिवाय और कोई सभा होना कठिन हो गया है। दो तरह के व्याख्यानों में भीड़ रहती है। या तो "वोट देने वालों के प्रति कुछ शब्द" और या "कौंसिलों का बायकाट।" मद्रास में आज कल "सभ्यता का आदि स्थान—भारतवर्ष।" विषय पर व्याख्यान देना मूर्खता है। अभी १२ तारीख को मद्रास आर्य समाज की तरफ से महर्षि दयानन्द की मृत्यु दिवस मनाने के लिये बड़ी भारी सभा करने की तय्यारियां की गईं। नोटिस इतनी अच्छी तरह से दिया गया कि वोट वालों ने भी क्या दिया होगा। लेकिन सभा के समय कई लोग कहते सुनाई दिये कि अमुक महाशय तो अपनी वोट इकट्ठी करने में लगे हुए हैं और अमुक वर्षा के कारण नहीं आ सकेंगे। वर्षा का अधिकार और वोट इकट्ठा करने वालों की उदासीनता होते हुए भी सभा का कृतकार्यता से होजाना हमारे ही आर्य भाइयों के उत्साह के कारण था। महाशय प्रभु नायन महाशय ऋषि राम तथा पण्डित धर्मवृत विद्यालंकार के परिश्रम से सभा बड़ी कृतकार्यता से समाप्त हुई।

कुछ दिन हुए मुझे एक सभा में जाने का मौका मिला। श्रीमती एनी बीसेन्ट बड़ा प्रभाव डालने की कोशिश कर रही थी। कभी २ कुछ प्रभाव हल भी जाता था। सभा समाप्त होते ही जब सब लोग अपना २ रास्ता देखने लगे उसी समय प्रकरण—सिद्ध गान्धी जी की जय "बोलना शुरू होगया। भारत का वायु मण्डल ही आज कल कुछ बदल गया है। मुझे तो यह सब बुखार की गर्मी मालूम पड़ती है। मद्रास की अवस्था देख कर तो ऐसा समझ पड़ता है कि सब जगह ज्वर का आवेश भिन्न २ रास्तों से बाहर निकल रहा है। एक पक्ष वाले बटोरने में पागल है और दूसरे पक्ष वाले वोटों को तितर

ऐसी अवस्था को देख कर मनुष्य का घण्टों विचार समुद्र में गोते खाना स्वाभाविक है। मद्रास की गलियों में से गुजरते हुए कितनी बार मेरा हृदय क्षुब्ध हो चुका है। जब देश आपत्ति में पड़ा हुआ है तब इन लोगों को कौन्सिल की मेम्बरी के सिवाय और कुछ सूझता ही नहीं, क्या कौंसिल में जाते हुए वे देश का हित सन्मुख रख कर वहां जा रहे हैं या अपना स्वार्थ उन्हें उस तरफ खींच रहा है। युक्तियों से काम नहीं चलता। अपने को स्वार्थी कौन कहेगा? लेकिन सभाओं में पिस्तौल लेकर आना मद्रासी परमार्थ ही है, पञ्जाबी लोग इसे स्वार्थ के अतिरिक्त कुछ नहीं कहेंगे।

सार और सूचना

१ निर्भयसिंह वर्मा, मंत्री आ० स० बहादुर पुर पो० सलेमपुर जिला सहारनपुर लिखते हैं कि उन्हों ने एक आर्य-भजन मण्डली स्थापित की है जो आर्य सज्जनों के निमन्त्रण पर बिना फीस जाया करेगी,

२. "असहयोग और उसकी सफलता" विषय पर सर्वोत्तम लेख लिखने वाले महाशय को मैडल तथा अन्य सब लेखकों को अपनी चीजें हम अर्ध मूल्य पर देंगे। लेख निम्न पते पर २० दिसम्बर तक आजाना चाहिये। मनस्वी औषधालय, द्वारा पोस्ट बाक्स नं० ८७ कानपुर।

४. आर्यसमाज बान्दीकुई के मन्त्री रामस्वरूप वर्मा लिखते हैं कि राजस्थान की आर्य-प्रतिनिधि सभा की प्रार्थना पर बी.बी एण्ड सी.आई रेल्वे के एजन्ट ने कृपा कर के उक्त रेल्वे की जमीन में ८०×८० फीट भूमि समाज मन्दिर बनवाने के लिये प्रदान करने की कृपा की है। स्थान आगरा, देहली, अजमेर और जयपुर के केन्द्रस्थ है। मन्दिर के लिये लगभग ६०००) की आवश्यकता होगी सब दानवीरों से प्रार्थना है कि धन की सहायता द्वारा समाज को सहारा पहुंचावें। जो महाशय १००) से अधिक दान देंगे उनका नाम पत्थर पर खुदवा कर लगाया जावेगा।

५. गुरुकुल कांगड़ी से "वैदिक सन्देश" नाम का मासिक पत्र शीघ्र ही निकलेगा पत्र में वेद और वैदिक साहित्य पर लेख रहा करेंगे। सम्पादक मण्डली में पं० विश्वनाथ विद्यालंकार प० चन्द्रमणि विद्यालंकार प० देवराज सिद्धान्तालंकार और पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति होंगे। वार्षिक मूल्य ३) आशा है प्रथम अंक जनवरी में निकलेगा।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शोधीराम के लिए छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्नकाल भी श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः॥
(ऋ० मं० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | २६ मार्गशीर्ष सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३८ } ता० १० दिसम्बर सन् १९२० ई० | संख्या ३५ भाग १

आर्यसामाजिक जगत्

लण्डन में ऋण्युत्सव

हमारे आर्यभाइयों को यह सुन अत्यन्त प्रसन्नता होगी कि दिवाली के दिन लण्डन में, श्री लार्ड मेस्टन की अध्यक्षता में ऋण्युत्सव बड़ी कृतकार्यता पूर्वक मनाया गया। इसका विस्तृत वृत्तान्त हमें अपने निजू संवाद दाता द्वारा प्राप्त हुआ है जो कि हम अगले अंक में पाठकों की सेवा में उपस्थित करेंगे। शोक है कि, लेख के ठीक समय पर प्राप्त न होने के कारण हम उसे इस अंक में प्रकाशित न कर सके।

लाहौर में आर्यसमाज का उत्सव

सफलता पूर्वक हो गया। ला० लाजपतराय जी, भाई परमानन्द जी, श्री स्वामी सर्वदानन्द जी, श्री स्वामी सत्यानन्द जी, श्री प्रो० रामदेव जी इत्यादि प्रसिद्ध २ विद्वानों के व्याख्यान हुवे। श्री-प्रो० रामदेव जी की अपील पर ३५ हजार से ऊपर धन (वायदों को मिलाकर) धन एकत्रित हुआ। उत्सव की इस सफलता के लिए हम समाज को बधाई देते हैं।

मद्रास में वैदिक धर्म का प्रचार

का कार्य अत्यन्त उत्साह पूर्वक हो रहा है। आज की "श्रद्धा में हम अपने निजू संवाददाता का एक पत्र प्रकाशित करते हैं जिस से हमारे पाठकों को "आर्य्य-मण्डली" के प्रशंसनीय कार्य्य का स्वरूप पता लग सकता है। बैंगलोर के चारों ओर प्रचार करने के अतिरिक्त मैसूर में भी में पर्याप्त आन्दोलन हुआ है। इसी का यह परिणाम है कि

मैसूर में आर्यसमाज

स्थापित हो गया है। समाज को दृढ़ करने के लिए श्री पं० देवेश्वर जी सिद्धान्तालंकार के निरन्तर व्याख्यान हो रहे हैं। वैदिक धर्म के प्रचार के साथ साथ हिन्दी पढ़ाने का भी प्रबन्ध किया जा रहा है। मैसूर में यह कार्य श्री स्वामी सत्यानन्द जी (संयुक्त प्रांत के एक वृद्ध-सन्यासी जो उधर रहते हैं) ने अपने ऊपर लिया है। इतने थोड़े समय में आर्यमण्डली ने जो उत्तम कार्य कर दिखाया है वह अत्यन्त प्रशंसनीय है। परन्तु हम तो अपने आर्यभाइयों से पूछना चाहते हैं कि इन्हों ने—

आर्थिक सहायता

देकर अपना कर्तव्य कहां तक पालन किया है। आर्यभाइयों को यह समझ लेना चाहिये कि वह दिन आर्यसमाज के अत्यन्त दौर्भाग्य का होगा जिस दिन आर्थिक कष्ट के कारण यह पवित्र काम बन्द करना पड़ेगा!

बरेली का आर्य्य पत्र

पहिले उर्दू में प्रकाशित होता था पर अब हिन्दी का चोला पहिन नये रंग ढंग में, निकलने लगा है। श्री डा० श्यामस्वरूप जी, पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार और पं० धर्मेन्द्र जी तर्क शिरोमणि इस के सम्पादक हैं। हमें आश्चर्य है, इतने विद्वानों के सम्पादक मण्डली में होते हुवे भी पत्र जिस योग्यता से सम्पादित होना चाहिये था, वैसा नहीं हो रहा। उत्तम लेखों के संग्रह करने की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये। आशा है पत्र के संचालकगण हमारे इस नम्र निवेदन की ओर अवश्य ध्यान देंगे। सहयोगी का हम हार्दिक स्वागत करते हैं।

"साथ"

परमात्मने नमः।

मानव धर्म शास्त्र की व्याख्या

पहिला अध्याय

(गतांक से आगे)

उत्तमाङ्गोद्भवा ज्येष्ठ्याद् ब्रह्मणश्चैव धारणात्।
सर्वस्यैवास्य सर्गस्य धर्मतो ब्राह्मणः प्रभुः ॥ ९२ ।

अर्थ—उत्तम अङ्ग के तुल्य होने, बड़े होने और वेद के धारण कराने से ब्राह्मण सम्पूर्ण जगत का, धर्म से, प्रभु है।

टि॰ जिस प्रकार मनुष्य की बनावट में मुख्य भाग सिर ही है सिर की आज्ञा में चलने से ही कल्याण है और वही सारी बनावट का पथ-दर्शक प्रभु है, इसी प्रकार समाज के संघटन में ब्राह्मण का पद है। जब तक सिर विषयों से मुक्त स्वच्छ अवस्था में है तब तक ही शरीर स्वस्थ रहता है, इसी प्रकार मनुष्य समाज का स्वास्थ्य भी उस के ब्राह्मणों की दशा पर ही निर्भर है।

भूतानां प्राणिनः श्रेष्ठाः प्राणिनां बुद्धिजीविनः।
बुद्धिमत्सु नराः श्रेष्ठा नरेषु ब्राह्मणाः स्मृताः ॥ ९३ ।

अर्थ—इस भौतिक स्थावर जङ्गम रूपी जगत् में प्राणधारी श्रेष्ठ हैं, इन में भी बुद्धि जीवि (पश्वादि) इन सब में मनुष्य श्रेष्ठ है, और मनुष्यों में भी (श्रेष्ठ) ब्राह्मण को जानो।

टि॰ यूं तो अपने अपने स्थान में जड़ और चेतन सभी जगत परमेश्वर का बनाया हुआ श्रेष्ठ है परन्तु अपने गुणों के लिहाज़ से एक दूसरे से श्रेष्ठ कहा जाता है। जड़ से तो कीड़े मकोड़े भी अच्छे हैं जो हिल जुल सक्ते हैं। उन से श्रेष्ठ पशु हैं जिन में बुद्धि की मात्रा सुषुप्ति से निकल कर स्वप्नावस्था में है। उन से बढ़ कर मनुष्य हैं जिन में ज्ञान जागृतावस्था को प्राप्त है और जो मनन शक्ति द्वारा उन्नति करते हुए, उच्च से उच्चपद को प्राप्त कर सक्ते हैं। उन मनुष्यों में भी ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं जिन का ऊपर वर्णन हो चुका है।

ब्राह्मणेषु च विद्वांसो विद्वत्सु कृतबुद्धयः।
कृतबुद्धिषु कर्तारः कर्तृषु ब्रह्मवेदिनः ॥९४॥

अर्थ—ब्राह्मणों में अधिक विद्वान, विद्वानों में कृत बुद्धि, कृत, बुद्धियों में भी करने वाला और करने वाले से भी ब्रह्मज्ञ (श्रेष्ठ) है।

टि॰ ब्राह्मणों में भी अधिक विद्वान् श्रेष्ठ है। जितनी ही अधिक विद्या होगी उतनी ही अधिक सोचने की शक्ति बढ़ेगी। विद्वानों में भी वह श्रेष्ठ है जिस की रुचि कर्मवीर होने की ओर झुके। उन से भी बढ़ कर वे पुरुष हैं जो वेद शास्त्र के जाने हुए ज्ञान के अनुकूल अपने आचरण करते हैं और उन से भी श्रेष्ठ वेद के मर्मज्ञ विप्र श्रेष्ठ हैं। शुष्क ज्ञानी पुरुष को विप्र नहीं कह सके-ऐसे पुरुषों के लिए तो कवि ने ठीक कहा है:—"यथा खरश्चन्दन भारवाही भारस्य वेत्ता न तु चन्दनस्य। एवं हि शास्त्राणि बहून्यधीत्य चार्थेषु मूढाः खरवद्वहन्ति ॥" निस्सन्देह शास्त्र को पढ़ कर उस के आशय के अनुकूल काम न करने वाले उस गदहे के तुल्य हैं जिस की पीठ पर मलयगिरि का चन्दन लदा हुआ है, परन्तु वह सुगन्ध अनुभव करने की शक्ति से वञ्चित बोझ से ही दबा जाता है। जब तक श्रवण के पश्चात् मनन और निदिध्यासन तक गति नहीं होती तब तक चारों वेद और उन के भाष्य कण्ठस्थ कर के भी विप्र की पदवी प्राप्त नहीं होती। ऐसे विप्र की महिमा अगले श्लोक में वर्णन की गई है।

उत्पत्तिरेव विप्रस्य मूर्तिर्धर्मस्य शाश्वती।
स हि धर्मार्थमुत्पन्नो ब्रह्म भूयाय कल्पते ॥ ९५ ।

अर्थ—विप्र की उत्पत्ति ही धर्म की अनादि मूर्ति है, क्यों कि वह धर्म के लिए ही उत्पन्न हुआ है (और) मोक्ष का अधिकारी है।

टि॰ विप्र (ब्राह्मण) माता के गर्भ से उत्पन्न नहीं होता। माता के गर्भ से तो सब शूद्र ही उत्पन्न होते हैं। शंकर स्वामी कह चुके हैं:—"जन्मना जायते शूद्रः" ब्राह्मण तो २४ वर्षों की भौतिक आयु तक "सावित्री माता" के गर्भ में रह कर आचार्य रूपी पिता को संरक्षा पाता हुआ ही जन्म लेता है। तब ब्राह्मण के अतिरिक्त और किसे धर्म की मूर्ति कह सक्ते हैं। सदा से ब्राह्मण ही धर्म की मूर्ति रहे हैं और भविष्यत में भी रहेंगे। ब्राह्मण क्यों बनाए जाते हैं? वेद उत्तर देता है:—"पूर्वो जातो ब्रह्मणो ब्रह्मचारी धर्मं वसानस्तपसोदतिष्ठत्। तस्माज्जातं ब्राह्मणं ब्रह्म ज्येष्ठं देवाश्च सर्वे अमृतेन साकम्" ॥ अथर्व। काण्ड ११ सूक्त ५। मं० ५॥ अर्थ—"जो ब्रह्मचारी पूर्व पढ़ के ब्राह्मण होता, वह धर्मानुष्ठान से अत्यन्त पुरुषार्थी हो कर सब मनुष्यों का कल्याण करता है; फिर उस पूर्ण विद्वान ब्राह्मण को, जो कि अमृत (अर्थात् परमेश्वर की पूर्ण भक्ति) और धर्मानुष्ठान से युक्त होता है, देने के (सत्कार) के लिए सब विद्वान आते हैं।"

वेद ने बतलाया कि ब्रह्मचर्य पालन पूर्वक विद्या पढ़ के ब्राह्मण, मनुष्यों के कल्याण के लिए, बनता है। यहां भी यही कहा है कि ब्राह्मण का (आत्मिक) जन्म ही धर्म के लिए है और इस लिए वही मोक्ष का अधिकारी है, क्योंकि जो सकाम धर्म को छोड़ कर निष्कामता में प्रवृत्त होता है, वह जीवन्मुक्त ही हो जाता है।

ब्राह्मणो जायमानो हि पृथिव्यामधिजायते।
ईश्वरः सर्वभूतानां धर्मकोशस्य गुप्तये ॥९६॥

अर्थ—ब्राह्मण का उत्पन्न होना ही पृथ्वी में विशेष उत्पन्न होना है, क्यों कि सब जीवों के धर्म रूपी खज़ाने की रक्षा के लिए वह समर्थ है।

टि॰ ब्राह्मण की सर्वश्रेष्ठता इस श्लोक में दिखाई गई है। यदि मनुष्य की बनावट में मस्तिष्क न हो अथवा मस्तिष्क स्वस्थावस्था में न हो तो अन्य बाहू आदि अंगों के होते हुए भी मनुष्य का अस्तित्व किसी काम का नहीं, इसी प्रकार अन्य सर्व वर्णों की मौजूदगी भी किसी काम का नहीं अगर आचार्यकुल से सुशिक्षित हो कर द्विजन्मा ब्राह्मण न निकले। क्यों कि धर्म के खज़ाने का कुंजी बरदार ब्राह्मण ही है और कवि ने मनुष्य की विशेषता धर्म को ही बतलाया है—

श्रद्धानन्द सन्यासी

श्रद्धा

मेलों में प्रचार

(२)

पिछले अंक में हम मेलों का महत्व और उन में सुधार की आवश्यकता दर्शा चुके हैं। इस अंक में हम उन सुधारों के स्वरूप के विषय में कुछ लिखेंगे।

संगठन—की सब से प्रथम आवश्यकता है। यह एक ऐसी शक्ति है जिससे मुट्ठी भर आदमी भी बहुत काम कर सकते हैं। संगठन में मनुष्यों की सब शक्तियां केन्द्रित होती हुई उचित स्थान में उचित काम करती है पर असंगठित व्यक्ति, संख्या में भले ही अधिक हों, तितर बितर रहते हुए अपनी सदिच्छाओं और शक्तियों का नाशमात्र ही करते हैं। आर्यसमाज के बहुत से काम संगठन के अभाव से खराब होरहे हैं। हमारे कई विद्यालय और अनाथालय इसी लिए बन्द होगये क्योंकि हमारे अन्दर संगठन नहीं था। मेलों में प्रचार का जो ढंग है उस में भी संगठन की बहुत कमी है। एक बिचारा मंत्री ही सभा का प्रबन्ध करता है, प्रचार करवाता है, उपदेशकों और भजनीकों की आव-भगत की ओर ध्यान देता है और साथ ही, समय पड़ने पर, उपदेश और व्याख्यान भी उसे ही झाड़ने पड़ते हैं। समाज के अन्य अधिकारीगण(?) और सभासद् यह जानते हुए भी कि मंत्री के सिर पर कार्य का भार बहुत अधिक है, उस का हाथ बंटाने में संकोच करते और अनुत्साह दिखाते हैं। क्या इस से असंगठन नहीं पता लगता? इस से प्रचार कार्य को कितना धक्का लगता है—यह बताने की कोई विशेष आवश्यकता नहीं है।

यदि यही कार्य संगठित रूप में किया जावे तो थोड़े समय में बहुत अधिक कार्य होसकता है। इसके, हमारी सम्मति में, दो उपाय होसकते हैं। प्रथम तो यह कि समासदों की ऐसी एक उपसमिति बनाई जावे जिसके हाथ में स्थानीय मेलों के प्रबन्ध और प्रचार का सारा कार्य हो। प्रबन्ध के उत्तम और सुदृढ़ बनाने के लिये यदि स्थानीय हिन्दु वा मुसलमान नेताओं की सहायता की आवश्यकता हो तो उन्हें भी इस उपसमिति के "अधिक सभासद्" बनाने में कोई संकोच नहीं करना चाहिये। दूसरा ढंग यह हो सकता है यह कार्य प्रान्तीय सभा सीधा अपने ही नीचे करले। आर्य प्रतिनिधि सभाओं ने जिस प्रकार "ट्रैक्ट विभाग खोल रक्खा है उसी प्रकार "मेला-प्रचार विभाग" इस नाम का एक विभाग खोलदें और प्रचार का सारा कार्य एक उप समिति के सुपुर्द करदें। अभिप्रायः यह कि हमें अपने कार्य के ढंग को इस प्रकार सम्मिलित और संगठित करलेना चाहिये जिससे हमारी शक्तियों का असदुपयोग न हो। प्रसंगवश हम यहां पर एक और निवेदन करना आवश्यक समझते हैं। कई मेलों के अवसरों पर कालिज पार्टी और गुरुकुल पार्टी की समाजें अपना अलग २ प्रचार करती हैं। यद्यपि इस से यह लाभ है कि एक ही समय में दो स्थानों पर खुला प्रचार होता है परन्तु इस से जो हानि होती है उसकी भी उपेक्षा नहीं की जासकती। प्रचार के दो स्थानों पर बंट जाने से हमारे कार्य की मात्रा और शक्ति भी बंट जाती है। इस का परिणाम यह होता है कि दोनों में से किसी भी समाज को पूर्ण कृतकार्यता नहीं होती। इस लिए, उस समय, या तो दोनों पार्टियों को, अन्यथा बन्दी का ख्याल छोड़ते हुए, मिलकर काम करना चाहिए और यदि दोनों समाजों के अन्दर प्रचार को उत्तम रीति से करने की शक्ति हो तो भी कार्य इस प्रकार किया जावे जिस से अन्यथा बन्दी, कम से कम उस समय के लिए, दूर हो जावे। संगठन के बाद दूसरा प्रश्न ढंग का है। अर्थात मेलों में:—

किस प्रकार का प्रचार

किया जावे। क्या वह खण्डनात्मक अधिक हो वा मण्डनात्मक। हमें कई बार मेलों पर जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इस लिए हम अपने अनुभव से कह सकते है कि उनमें और विशेषतया साधारण स्थानीय मेलों में तो अवश्य ही खण्डनात्मक प्रचार ही उपयुक्त है। इस का एक कारण है। इन साधारण मेलों में अधिकांश जन समूह अशिक्षित व्यक्तियों का ही होता है। जब तक इनके हृदयों से पुरानी कुरीतिओं के संस्कार उखाड़े नहीं जावेंगे तब तक नया बीज नहीं बोया जा सकता, जब तक इन्हें यह नहीं समझाया जावेगा कि वे ऐसे मार्ग पर जा रहे हैं जोकि उन्हें गढ़े में गिरा देगा तब तक वे सीधे मार्ग पर आने को उद्यत नहीं होंगे। इस प्रकार के अज्ञान को दूर करने का एकमात्र उपाय खण्डनात्मक प्रचार ही है। इस लिए मेलों में मण्डनात्मक की अपेक्षा खण्डनात्मक प्रचार की ओर ही अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए।

हमारे देश में, इन्हीं कुछ दिनों के बीच, दो बड़े २ मेले होने वाले हैं। एक दक्षिण भारत के "कुम्भकोणम्" नामक स्थान में और दूसरा उत्तर भारत के "हरिद्वार" में "अर्ध कुम्भी" का। हम आशा करते हैं, इन दो शुभअवसरों यों ही नहीं खोया जावेगा। हमें यह अच्छी तरह से समझ लेना चाहिये कि ये मेले हमारे प्रचार के अत्युत्तम साधन है। इन से उचित लाभ न उठाना अवसर को गंवाना है। आशा है, हमारे इन विचारों की ओर उचित ध्यान दिया जावेगा।

श्री० स्वामी जी का बर्मा से सकुशल वापिस आना

आर्य भाइयों को यह सुनकर प्रसन्नता होगी कि श्री श्री० पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी बर्मा से २२ मार्गशीर्ष वा ६ दिसम्बर की प्रातः सकुशल गुरुकुल वापिस आगये। आप एक मास से अधिक बाहर रहे। बर्मा में आपको पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है। वहां की जनता ने जिस खुले हृदय से आपका स्वागत किया और जिन खुले हाथों गुरुकुल को आर्थिक सहायता दी उसका विस्तृत वृत्तान्त अगले अंक से हम, क्रमशः, पाठकों की सेवा में उपस्थित करेंगे। आपने उसी दिन सब कुल वासियों के सामने बर्मा की सभ्यता धर्म और कलाकौशल का जो मनोरंजक वृत्तान्त सुनाया था उसका वर्णन भी, यथावसर, हम पाठकों को सुनावेंगे। इस वृद्धावस्था में ऐसी लम्बी यात्रा से सकुशल और सफलता पूर्वक लौट आने की प्रसन्नता में २२ माघ के दिन गुरुकुल में छुट्टी रही और सब कुल वासियों ने आपके चिरायु और स्वस्थ रहने की, परमात्मा से, हार्दिक प्रार्थना की।

शिक्षा-जगत्

विद्यार्थियों में आत्मसम्मान का भाव

यह प्रसन्नता की बात है कि हमारी नई सन्तति में आत्मसम्मान का भाव पैदा हो रहा है। देश और जाति के अपमान को वे अपना अपमान समझने लगे हैं। अपने नेताओं के तिरस्कार को वे एक गम्भीर अपराध की दृष्टि से देखते हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण क्वालकोट के [illegible] कालेज के, विद्यार्थियों ने दिया है। घटना का स्वरूप अत्यन्त साधारण है। प्रधान अध्यापक ने, बिमार होने के कारण, अपने स्थान पर मि० कोक को भेज दिया। आपने तृतीय वर्षीय कक्षा को पढ़ाते हुए महात्मा गान्धी को "[illegible]" कह डाला। विद्यार्थियों में इससे विरुद्ध, असन्तोष फैला। अन्य अध्यापकों ने भी उनका साथ दिया। उन्होंने मिलकर यही निश्चय किया जब तक मि० कोक, साधारण सभा में, लिखित क्षमा न मांगे तब तक हड़ताल रहेगी। मि० कोक को, अपनी भूल स्वीकार करते हुए, लिखित क्षमा मांगनी पड़ी। हमारे भूत और वर्तमान [illegible] [illegible] इस प्रकार के अपशब्दों का प्रयोग अंग्रेज अध्यापकों के लिए साधारण बात है। पर हमारी आशा के आधार [illegible] युवकों में उस जातीय अपमान को अपना तिरस्कार समझने का भाव [illegible] गया है। जब तक मेरे युवक भाई जातीय हित को अपना हित नहीं समझते तब तक उन में आत्म सम्मान का सच्चा भाव पैदा नहीं होसकता। मुझे आशा है कि इस एक घटना से न केवल अंग्रेज अध्यापक अपितु अन्य [illegible] भी पर्याप्त शिक्षा लेंगे ने कहा कि "अकलमन्द को इशारा ही काफी है।"

'गुजरात' अगुआ हो रहा !

अंग्रेजी में इस आशय का एक कहावत है कि "महापुरुष का अपनी भूमि में कभी आदर नहीं होता।" परन्तु महात्मा गान्धी के विषय में, मैं समझता हूं, यह बात सर्वथा असत्य सिद्ध हो रही है। म० गान्धी जी की जन्मभूमि गुजरात है। महात्मा जी के सिद्धान्तों और वचनों का जितना आदर इस प्रान्त में हो रहा है उतना, जहां तक मैं समझता हूं, किसी प्रान्त में नहीं हुआ। गान्धी जी के असहयोग के सिद्धान्त को सब से अधिक क्रियात्मक स्वरूप देने का वास्तविक श्रेय गुजरात प्रान्त को ही दिया जा सकता है। और किसी महात्मा का वास्तविक आदर यही है कि उसके सिद्धान्तों को अत्युत्तम क्रियात्मक स्वरूप दिया जावे। असहयोग के अन्य अंगो के विषय में कुछ न कहता हुआ मैं इस प्रान्त के केवल शिक्षा विषयक कार्य की ओर ही आप के पाठकों का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं। पिछले कुछ ही दिनों में वहां की "विद्यासभा" ने अहमदाबाद में एक विश्वविद्यालय स्थापित किया है। इस के अतिरिक्त सुरत और अहमदाबाद में दो महाविद्यालय [कालेज] खोले गये हैं जो कि इसी विश्वविद्यालय के साथ सम्बद्ध है। इस के अतिरिक्त, सभा की ओर से, ८ जातीय विद्यालय और लगभग १२ एंगलोवर्नेक्यूलर विद्यालय इस प्रान्त के भिन्न २ नगरों और गांवों में चलाये जारहे हैं। "विद्या सभा" के संगठन को दृढ़ किया जा रहा है। अब तक इसके १२ सभासद हैं तथा अन्यों के भी शीघ्र होजाने की आशा है। इस सम्पूर्ण विश्वविद्यालय के मुख्याधिष्ठाता [चान्सलर] श्री० महात्मा गान्धी और सहायक मुख्याधिष्ठाता [वाइस-चान्सलर] मि० [illegible] हैं। इतने समय में इस छोटे से प्रान्त ने इतना ठोस कार्य कर दिया इसी से पता लग सकता है कि वहां असहयोग की लहर कितनी प्रबल है। हर्ष का विषय है कि संयुक्त प्रान्तों में, अब, कुछ २ जागृति है। परन्तु मुझे सब से अधिक आश्चर्य पंजाब और बंगाल पर है जहां जातीय शिक्षा का कार्य बहुत मन्द है। दोनों प्रान्तों के नेताओं को यह कमी शीघ्र ही पूरी करदेनी चाहिए।

अखिल भारतीय छात्र सम्मेलन

मुझे यह समाचार सुनकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि बड़े दिनों की छुट्टियों में, नागपुर में, अखिल भारतीय छात्र सम्मेलन होगा। प्रान्तीय सम्मेलनों के बाद अखिल भारतीय सम्मेलन की, वस्तुतः, अत्यन्त आवश्यकता थी। ऐसे सम्मेलन से जहां छात्रों में संगठन शक्ति और एकता का भाव बढ़ेगा वहां, देश सेवा के लिए, कुछ क्रियात्मक कार्य करने में भी वे शीघ्र तत्पर होसकेंगे।

अलीगढ़-जातीय विश्वविद्यालय चल पड़ा

सरकार और सरकार के कृपापात्र अलीगढ़ कालेज की ओर से अलीगढ़ जातीय विश्वविद्यालय के [illegible] में कई रोड़े अटकाये गये। इसे असफल करने के लिए भी सब प्रकार के यत्न किया गया। परन्तु यह प्रसन्नता का ही अवसर है कि विश्वविद्यालय इन सब विपरीत अवस्थाओं के होते हुए भी चल पड़ा है। मेरे कथन का इस से अधिक प्रमाण और क्या होसकता है कि अलीगढ़-कालेज का नवीन सत्र २०० विद्यार्थियों की ही उपस्थिति के साथ प्रारम्भ हुआ है जब कि जातीय विश्वविद्यालय में दाखले की संख्या कई सैकड़ों तक पहुंच चुकी है। विश्वविद्यालय के कार्य कर्ता सर्वोत्तम अध्यापक-मण्डल के चुनने में दत्तचित्त हैं। मैं उन्हें बिना बधाई दिए नहीं रहसकता।

खालसा कालेज अमृतसर

भी असहयोग में किसी से पीछे नहीं रहा। वहां के १२ अध्यापकों ने, असहयोग के कारण, एक दम इस्तीफ़ा देकर जिस साहस का परिचय दिया वह अत्यन्त सराहनीय है। सिक्ख करवट बदल रहे हैं- यह प्रसन्नता की बात है। मैं उन्हें सारे देश की ओर से बधाई देता हूं।

"[illegible]"

भारत माता का एक और लाल उठ गया !!!

अभी हम तिलक-वियोग के ही आंसू नहीं पोंछ सके थे कि इतने में हमें देश भक्त, और हिन्दु मुसल्मानों के लिए समान तुल्य पूज्य शेख़ उल-हिन्द-मौलाना महमूदुल्हुसैन साहब की असामयिक मृत्यु का समाचार सुनना पड़ा है। यह हृदय विदारक दुर्घटना, सचमुच, घाव पर नमक के समान है। आपका निवास स्थान देव बन्द था। आप धर्म, सचाई और आचरण की दृढ़ता के लिए न केवल मुसल्मानों में अपितु हिन्दु जनता में भी प्रसिद्ध थे। यद्यपि आप वृद्ध हो गए थे पर सरकार ने भी आपको तंग करने में कोई कसर नहीं उठा रक्खी क्योंकि नौकरशाही की दृष्टि में आप के स्वाभाविक गुण ही जुर्म की श्रेणी हो गए थे। जब आप की आयु ७५ वर्ष की हो गई थी तब आपने, धार्मिक भावों से प्रेरित हो, मदीना की पवित्र भूमि में अपनी आयु का शेष भाग बिताने का निश्चय किया। परन्तु बृटिश सरकार को भला यह बात कब सहन हो सकती थी कि एक और, सच्चा और दृढ़ आचरण का व्यक्ति शान्ति से अपनी आयु का शेष भाग किसी जगह व्यतीत कर सके! उसे तो सब जगह राजनैतिक विद्रोह की ही बू आती है। फलतः, हुसैन साहब को वहां, कुछ दिन रहने के बाद, कैद कर दिया गया और पीछे से, युद्ध कैदी की तरह, मिश्र के कालापानी में भेज दिया गया! यद्यपि देश भक्त मौलाना-साहब अपनी आयु के अन्तिम भाग में थे तथापि आप तनिक भी घबराये नहीं। उस समय आपने जिस दृढ़ता और वीरता का परिचय दिया वह सचमुच अत्यन्त प्रशंसनीय है।

परन्तु कस्तूरी और फूल की सुगन्ध [illegible] छिपाने पर भी नहीं छिप सकती। मौलाना साहब की विद्वत्ता, धर्मभीरुता, दृढ़ता और निर्भीकता [illegible] जेल की [illegible] द्वारा से निकल सारे देश में फैल गई। [illegible] एक जेल ही सब धर्म प्रेमियों के लिए एक पवित्र तीर्थ बन गया और दूर २ से लोग आपके दर्शनों के लिए आने लगे। इधर, भारत में भी नौकरशाही की इस उद्दण्डता और अन्याय पर खूब आन्दोलन हुआ। जनता की ओर से सरकार को बाधित किया गया कि वह मौलाना साहब के विषय में पर्याप्त सूचना प्रकाशित करे। अन्त को संयुक्त प्रान्त के छोटे लाटसर जेम्स मेस्टन (अब लार्ड मेस्टन) को यह बताना ही पड़ा कि मदीना के शैरिफ़ ने हुसैन साहब को, युद्ध बन्दी बना कर मिश्र में भेज दिया है। शैरिफ़ से पूछे जाने पर पता लगा कि इंग्लैण्ड के प्रभुमण्डल ने ऐसा करने का आदेश किया था। ईश्वर जाने, दोनों में से कौन सच्चा है।

न केवल भारत में अपितु मिश्र में भी मौलाना साहब की यह सर्व प्रियता और कीर्तिच्छटा हमारे गोरे प्रभुओं को पसन्द न थी, इस लिए उन्होंने आपको मिश्र से माल्टा में नज़रबन्द करने के लिए भेज दिया। आप ४ वर्ष तक वहां नज़रबन्द रहे। ब्रिटिश सरकार ने आप के साथ अन्य जो क्रूर व्यवहार किए सो तो किए ही पर सब से अधिक निठुरता यह की गई कि आप को भोजन और वस्त्र बहुत बुरा और बहुत थोड़ी मात्रा में दिया जाता था। यदि सरकारी बजट में थोड़ी गुंजाइश थी तो मौलाना साहब के भक्तों को ही खर्च भेजने की आज्ञा दी जाती पर बार २ प्रार्थना करने पर भी, भारत सरकार ने इसे नामंजूर ही किया।

अभी, कुछ ही मास बीते हैं, आप माल्टा से छुटकारा पा अपनी मातृभूमि भारत में पधारे थे। आपके आने पर सारे देश ने—हिन्दु मुसल्मान-पारसी ईसाई सब ने मिलकर—एक स्वर से और एक हृदय से आपका स्वागत किया था। यद्यपि आपका स्वास्थ्य बहुत खराब हो चुका था पर हृदय अभी तक वैसा ही आशापूर्ण और [illegible] था। आपके दर्शनों का जिन्हें सौभाग्य प्राप्त हुआ है, वह कहते हैं कि आप का मुखारविन्द बड़ी प्रसन्नता से सदा उज्ज्वल और विकसित रहता था। इस [illegible] अवस्था में, अपनी धर्मपत्नी के स्वर्गवास से आपको बहुत धक्का लगा था।

मौलाना साहब के जीवन का [illegible] कार्य अलीगढ़ के मुस्लिम-जातीय-विश्वविद्यालय का उद्घाटन संस्कार करना था। यद्यपि आपका स्वास्थ्य, उन दिनों, बहुत खराब था पर अधीर जाति और देश की मांग आने पर आपने अपनी सेवा देने में कोई हिचकिचाहट नहीं दिखाई। अलीगढ़ विश्वविद्यालय को खोलते समय आपने जो जोरदार भाषण दिया था उसके एक २ अक्षर से दृढ़ देशभक्ति मातृभूमि की सेवा और मज़हब का आशामय झरना टपकता है। आपने अपने भाषण में हिन्दु मुसल्मानों ऐक्य की आवश्यकता और वास्तविकता दिखाते हुए उन विरोधियों को मुंह तोड़ उत्तर दिया जो कि दोनों को लड़ाकर अपना स्वार्थ सिद्ध करना चाहते हैं।

पिछले कुछ दिन से आपका स्वास्थ्य बहुत गिर रहा था। आप आजकल दिल्ली में थे और हकीम अजमलखां और डाक्टर अन्सारी जैसे प्रसिद्ध चिकित्सक आपका इलाज कर रहे थे। हमें यह पूर्ण आशा थी कि आप, शीघ्र स्वास्थ्य लाभकर हमारी जाति और देश के नेता और पथ दर्शक बन सकेंगे।

परन्तु ईश्वर को कुछ और ही मंजूर था। ३० नवम्बर की प्रातः ८ बजे, सब प्रकार का इलाज करने पर भी, मौलाना-साहब का प्राण पखेरू उड़ गया और सारी जाति और देश को पीछे रोता हुआ छोड़ गया। आपके शोक में देश के प्रसिद्ध २ शहरों और गावों में सब बाजार स्कूल, कालेज इत्यादि बन्द रहे। दिल्ली से आपकी लाश, रोते हुये लाखों हिन्दु मुसल्मानों के साथ, देवबन्द लाई गई और वहीं आपको दफ़नाया गया।

मौलाना साहब की इस असामयिक मृत्यु से देश को कितना धक्का लगा है, यह हमें बताने की आवश्यकता नहीं है। हमारी जाति की नौका इस समय एक विकट धारा में से गुजर रही है। इस समय किसी भी खेवैया का चला जाना जाति को असहाय छोड़ जाने के समान है। सारा संसार इस समय हमारे कामों को बड़ी उत्सुकता की दृष्टि से देख रहा है। देश के सामने कई विकट समस्यायें हैं जिन की सफलता और असफलता पर ही हमारा भविष्य निर्भर करता है। ऐसे भयंकर समय में मौलाना साहब जैसे [illegible] के रत्न पुरुषों और भारत माता के लालों का हमें छोड़ जाना हमारे दुर्भाग्य का चिन्ह है। अस्तु! "[illegible]" परन्तु क्या मौलाना साहब का स्थान खाली ही रहेगा? क्या नई सन्तति में से कोई ऐसा माई का लाल आगे न बढ़ेगा जो इस स्थान को पूरा करे?

चम्पारन में डायरशाही का एक और नमूना।

नौकरशाही की उद्दण्डता !!

बिना वारेन्ट के पकड़ धकड़—

क्या अब भी सहयोग करोगे ?

गत सप्ताह चम्पारन में पुलिसने जो अत्याचार किये हैं उसका आंखों देखा हाल इस सप्ताह के दैनिक समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ है। यद्यपि हन्टर कमेटी की रिपोर्ट में माण्टेगू ने यह कहा है कि भारत में, अब से, डायर-ओड्वायरशाही के अत्याचार नहीं होंगे पर, सच पूछो तो, उनका अभी अन्त नहीं हुआ है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण वे अत्याचार हैं जो कि नौकरशाही के नीचे काम करने वाली पुलिस ने चम्पारन में किये हैं। एक कुमार और किसान के तुच्छ से झगड़े की आड़ में पुलिस ने कई गांव लूट लिये; नंगी पीठों पर कोड़े मारे, स्त्रियों को मारा गया, उन्हें नंगा करने का प्रयत्न किया गया, उनके आभूषण छीने गये और उनकी बेइज्ज़ती की गई। सब गांवों में आतङ्क छा गया है और बहुत से नर नारी भाग कर खेतों में छिप गये हैं। ब्रह्मचारी, रामरक्ष, जो कि गांवों में देश हित के काम कर रहे थे, तथा अन्य कई एक व्यक्ति बिना वारंट दिखाये ही पकड़े गये हैं। 'चम्पारन' में वस्तुतः पुलिस का ही राज्य है। किसी की जान माल सुरक्षित नहीं है।

आश्चर्य है, ऐसे अत्याचार और क्रूर व्यवहार करने वाली ब्रिटिश सरकार अभी तक अपने को 'सभ्य' कहती है। स्त्रियों की ऐसी बेइज्ज़ती तो हब्शियों के राज्य में भी नहीं होती होगी! गत वर्ष पंजाब में, एक दो गोरी स्त्रियों के अपमान पर डायर-ओड्वायर और उस के चेले चाटों का ख़ून उबल गया था और बदले में मैशीन तोपों के आगे हम निहत्थों को भूना गया था पर स्त्री जाति की इज़्ज़त की ठेकेदार गोरी चमड़ी का ख़ून अब क्यों ठण्डा है?

अब क्यों नहीं मैशीन तोपों का मुंह खुलता? क्या इसी लिए कि हमारी देवियां "काली" हैं? उनका यही अपराध है कि वे "भारतीय" हैं। गोरे पत्र हमें उपदेश देते हैं कि "बीति ताहि बिसारि दे," लार्ड चेम्सफ़ोर्ड फ़रमाते हैं कि तख़्ती के दोनों पासे साफ़ करदो परन्तु क्या इसी आशा से कि नौकरशाही अपनी उद्दण्डता को न छोड़े, वह अपने लज्जा शून्य असद् व्यवहारों से बाज़ न आवे!

क्या 'चम्पारन' का यह किस्सा नया है! नहीं, ब्रिटिश सरकार के भारत में आने के समय से अब तक ऐसी दुर्घटनायें एक नहीं कई हो चुकी हैं और शायद अभी और होंगी। ऐसी ख़ूनी होलियों से नौकरशाही के इतिहास के पत्र कई बार रंगे जा चुके हैं परन्तु, इतना होने पर भी आश्चर्य है हमें अपने उन देश भाइयों पर जो कि अभी तक यह विश्वास करते हैं कि अंग्रेज़ी राज्य में सुख और चैन है। आश्चर्य है हमें उन भारतवासियों पर जो अभी तक अंग्रेज़ी न्याय में श्रद्धा रखते हैं। आश्चर्य है हमें अपने उन नेताओं की बुद्धि पर जो अभी तक नौकरशाही के साथ सहयोग करने का उपदेश देते हैं!! भारत वासियो! उठो! जागो! देखो दिन दिहाड़े तुम्हारे घर लूटे जा रहे हैं, तुम्हारे बाल बच्चों का गला घोंटा जा रहा है, तुम्हारी बहू बेटियों की बेइज्ज़ती की जा रही है! क्या ऐसी सरकार के साथ अब भी, तुम हाथ बटाओगे, क्या अब भी उसके साथ सहयोग करते हुये उसे ऐसा क्रूरता पूर्ण व्यवहार करने में सहायता दोगे? यदि हां, तो अभी और सोये रहो। तुम्हारे उद्धार के चिन्ह अभी स्वप्न में भी नहीं हैं!!

पत्रों का सार

१. "शोकाश्रु" नामक पुस्तक की समालोचना श्रद्धा के १२ वें अंक में हो चुकी है। उसका दाम ।-) है और मिलने का पता "पं० कांशीदत्त शास्त्री, खुरजा, यू०पी०" है। यह छपने से रह गया था।

२. श्री गंगागिर सन्यासी लिखते हैं कि उन्हों ने गीदड़वाहा मण्डी में ६।११।२० से १७ तक कथा की और आर्यसमाज के सिद्धान्तों का प्रचार किया। उन्हीं के उद्योग से वहां एक कुमार सभा, और 'विद्या प्रचारिणी सभा' भी स्थापित की गई।

३. नजीबाबाद से श्री हरिश्चन्द्र संरक्षक सूचना देते हैं कि "गुरुकुल वृन्दावन के ब्रह्मचारियों के कष्टों और कठिनाइयों को दूर करने और भविष्य में गुरुकुल किस प्रकार कार्य करे" इत्यादि विषयों पर विचार करने के लिए सब संरक्षकों की २३।१२।२० को प्रातः एक सभा होगी। सब संरक्षकों से ठीक समय पर कुल भूमि में उपस्थित होने की प्रार्थना की गई है।

४. आर्यसमाज बल्लभगढ़ (गुड़गांवा) का वार्षिकोत्सव, पिछले दिनों, सानन्द समाप्त हो गया। प्रसिद्ध २ उपदेशकों और भजनीकों के व्याख्यान हुये।

लेखकों को सूचना

१. बीकानेर निवासी म० बी,एल, आत्म शर्मा जी! कविता भेजने के लिए धन्यवाद। अशुद्ध होने के कारण नहीं छप सकती। क्षमा करें।

२. रेवाड़ी निवासी पं० गणपतिशर्मा जी! कविता भेजने के लिए धन्यवाद अशुद्ध होने के कारण नहीं छप सकती। क्षमा करें।

३. किच्छौरवाल (गढ़वाल) निवासी पं० एल.एन. शर्मा पटवारी जी! लेख भेजने के लिए धन्यवाद। अत्यन्त लंबा होने के कारण प्रकाशित नहीं हो सकता। (सं० स०)

—:०:—

मद्रास प्रान्त में प्रचार

'हिन्दु पुर'

(निजू संवाद दाता द्वारा प्राप्त)

'हिन्दु पुर' से निमन्त्रण बहुत देर से आ रहा था। बैंगलौर तथा मैसूर में अधिक कार्य होने के कारण हिन्दु पुर जाना पीछे ही पड़ता जाता था। अन्त में २७ तारीख को स्वामी धर्मानन्द जी पं० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार पं० देवेश्वर जी सिद्धान्तालंकार तथा पं० शेष गिरि जी शर्मा दोपहर की गाड़ी से हिन्दु पुर के लिये चल दिये। सायंकाल ८ बजे गाड़ी हिन्दु पुर जा पहुंची। स्टेशन पर उत्साही भाइयों का एक बड़ा समूह बाद्य बादन्तरी सहित पार्टी का स्वागत करने के लिये उपस्थित था। डेढ़ मील से ऊपर भाइयों ने अतिथियों का बड़े प्रेम से अभिनन्दन किया जिस के लिये उन का जितना धन्यवाद किया जाय थोड़ा है।

अगले दिन प्रातः काल ७ बजे से ही लोगों की अतिथियों के चारों तरफ़ भीड़ होने लगी। झाड़े भान झंडे बाजे के साथ धूम धाम से नगर कीर्तन किया गया। आगे २ अतिथि लोग एक पंक्ति में जा रहे थे। पीछे २ बड़ी मधुर ध्वनि से तैलगु भाषा में आर्यसमाज के कार्य विषयक गीत गाये जा रहे थे। थोड़ी ही देर में मनुष्यों का समुद्र उमड़ पड़ा। लोगों के एकत्रित हो जाने पर पं० देवेश्वर जी ने बड़े गम्भीर शब्दों में आर्य समाज के विषय में एक प्रभाव शाली व्याख्यान दिया। इधर के मुसल्मान प्रायः हिन्दी में ही भाषण सुनना चाहते हैं। श्रोताओं में से अधिक संख्या ब्राह्मणों ही की थी। व्याख्यान के बाद मंडली फिर आगे बढ़ी। अब की बार खड़े होने पर पं० सत्यव्रत जी ने 'आर्यसमाज क्या है ?, इस विषय पर मनोरञ्जक चर्चा की। पण्डित जी बोलते जाते थे और महाशय सुखदेव उन का तैलगु भाषा में अनुवाद करते जाते थे। महाशय सुखदेव सिकन्दराबाद के हैं परन्तु हिन्दु पुर में आकर यहीं रह गये हैं। आप हिन्दी तो अच्छी तरह जानते ही हैं परन्तु तैलगु भी बहुत अच्छी जानते हैं और उस में भली भान्ति लिख तथा बोल सकते हैं। मण्डली फिर आगे बढ़ी। बाजा बजने लगा। तीसरी जगह फिर ठहरे। अब की बार स्वामी धर्मानन्द जी ने तैलगु भाषा में बड़ी ओजस्विनी वक्तृता दी। आप तैलगु, तामिल, कनाड़ी, अंग्रेज़ी तथा अन्य भाषाओं में बड़े प्रवीण हैं। आप के व्याख्यान दे चुकने पर उद्घोषित किया गया कि आज रात को शहर की धर्मशाला में अतिथियों के व्याख्यान होंगे।

सायंकाल शहर की शिक्षित जनता बड़ी संख्या में एकत्रित हो गई। व्याख्याताओं के सभा-स्थल पर पहुंचने से पूर्व ही लोग अपनी २ जगह पर जमे हुए थे। ठीक ५ बजे व्याख्यान प्रारम्भ हुए। पहिला व्याख्यान पं० सत्यव्रत जी का था। लोगों के आग्रह पर आप ने आंग्लभाषा में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली पर भाषण किया। व्याख्यान प्रभाव शाली था। एक घण्टे तक गुरुकुल के जीवन की चर्चा सुन श्रोता लोग आनन्द पारावार में ग़ोते लेते रहे। फिर पं० देवेश्वर जी का उपदेश हुआ। आप ने अपने उपदेश में कई क्रियात्मिक बातों का ज़िकर किया जिन का सब पर गहरा असर हुआ। अब की बार भी महाशय सुखदेव जी भाषण का तैलगु में व्याख्याता के साथ२ ही अनुवाद करते गये। अन्त में स्वामी धर्मानन्द जी का बड़ा विचार शील भाषण हुआ। आप ने शङ्कराचार्य, माधवाचार्य तथा अन्य आचार्यों की तुलना करते हुए ऋषि दयानन्द की सर्वोत्कृष्टता बहुत अच्छी तरह से दर्शायी। आप के बाद कई स्थानिक महानुभावों ने आर्यसमाज के कार्य की बड़े उत्तम शब्दों में सराहना की। आपस में एक दूसरे को धन्यवाद देते हुए सभा विसर्जित हुई।

अगले दिन प्रातःकाल ही 'परगी' गांव से एक सन्देश आया। महाशय कोरकूर सुब्बय्या एक 'आर्यपुस्तकालय' खोलना चाहते थे। आप ने अपनी गाड़ी सुबह ४ बजे ही भेज दी और 'आर्य-मण्डली' को बुला भेजा। महाशय सुब्बय्या का उत्साह तथा उद्योग देख कर उन्हें निराश करना उचित नहीं समझा गया। यात्रा प्रारम्भ हुई ८ बजे के लग भग परगी गांव के मकान दूर से दिखाई देने लगे। थोड़े देर में गांव भी आ पहुंचा। पहुंचते ही गांव के उत्साही सज्जन एकत्रित हो गये। बड़ी शान से जुलूस निकाला गया। थोड़ी दूर आराम कर 'परगी' का नगर कीर्तन प्रारम्भ हुआ। सारे गाँव के लोग इकट्ठे हो गये। जहां तहां हिन्दु मुसल्मान दिखाई देने लगे। थोड़ी ही देर में पुस्तकालय के मकान में हवन किया गया। अग्निहोत्र के पश्चात् स्वामी धर्मानन्द जी ने पुस्तकालय के स्थापित हो जाने की सूचना दी। हर्ष इस बात का है कि अग्नि होत्र के समय ५० से अधिक मुसल्मान उपस्थित थे।

११ बजे सभा की गई। पं० सत्यव्रत जी और स्वामी धर्मानन्द जी के क्रमशः व्याख्यान हुए जिन में आर्यसमाज के मोटे २ सिद्धान्तों की थोड़ी २ व्याख्या की गई। सभा समाप्त कर भोजन आदि के अनन्तर फिर मण्डली ४ बजे सायंकाल हिन्दुपुर लौट आयी।

हिन्दुपुर के हाईस्कूल में विद्यार्थियों तथा अध्यापकों की तरफ़ से एक सभा की गई। पं० सत्यव्रत जी तथा देवेश्वर जी के आंग्लभाषा में व्याख्यान हुए। इसी समय अलीगढ़ कालिज के एक विद्यार्थी वहां उपस्थित थे। उन्हों ने उठ कर कहा कि गुरुकुल कांगड़ी हिन्दुओं का गुरुकुल है और 'नया-अलीगढ़ कालिज' मुसल्मानों का गुरुकुल है। बहुत से वक्ताओं ने अपने भाव प्रकट किये। सब का कहना था कि यदि जातीय स्कूल गुरुकुल प्रथा के अनुसार चलाए जांय तभी देश में फैलती हुई नई लहरों की सार्थकता है अन्यथा नयी खुली हुई जातीय संस्थाएं जाति पर बोझ के अतिरिक्त और कुछ नहीं। आज ही एक महाशय के पुत्र का अग्नि होत्रादि कर के चूड़ा कर्म संस्कार किया गया। आप का नाम नञ्जुण्डय्या है। आप के उत्साह को वर्णन करना मेरी सामर्थ्य से बाहर है। ऐसा प्रेमी कहीं भी मिलना बहुत कठिन है। 'आर्यमण्डली' का हिन्दुपुर जाना आप ही के प्रेम के कारण हुआ।

हिन्दुपुर में आर्यसमाज पहले से ही स्थापित है। महाशय आर्य नारायण मूर्ति ने तैलगु भाषा में अनेक पुस्तकें प्रकाशित की हैं। आप हिन्दुपुर के ही हैं। अनेक भाइयों के आग्रह करने पर महाशय सुखदेव जी वर्मा से प्रार्थना की गई कि वे एक हिन्दी-क्लास भी खोल दें। आशा है कि इस समय तक हिन्दी-क्लास खुल गई होगी और महाशय सुखदेव जी परिश्रम से कार्य कर रहे होंगे।

'हिन्दु-पुर' में ३ दिन कार्य कर मण्डली रात्रि के २ बजे की गाड़ी से बैंगलौर वापिस लौट आई।

आशा थी। कुछ तो वहां की नौकरशाही ने मेरे व्याख्यानों को बन्द करने में अपने आपको अशक्त देखकर केवल चन्दा देने वालों को धमका कर चन्दा बन्द करने में ही अपनी सफलता समझी और कुछ मामले सुलझाने वाले आर्य भाइयों ने भूल की। इसी लिए मैं वहां से केवल गुरुकुल के दो उपाध्यायों के स्थान को स्थिर करने में कृतकार्य्य हुआ। एक सज्जन ने ३० हजार रुपये के दान से आयुर्वेद के एक उपाध्याय का स्थान स्थिर कर दिया और कृषि के एक उपाध्याय के स्थान की स्थिरता के लिए कुल ब्रह्मदेश से लगभग २५ हजार रुपया मेरे सामने इकठा हो चुका था और शेष ५ हजार इकट्ठा हो जाने पर रंगून की आर्य समाज कारिणी सभा ने ३० हजार की हुण्डी भेज देने की प्रतिज्ञा करली है।

२ दिसम्बर की शाम को मैं कलकत्ते पहुंचा। ३ की शाम को वहां से चलकर ४ की दुपहर को प्रयाग पहुंचा। श्री० पं० मोतीलाल नेहरू के आनन्द भवन में बसेरा लिया। वहां विचित्र परिवर्तन देखकर जहां दिल भर आया वहां बड़ी ही प्रसन्नता हुई। जिस राज महल में अंग्रेजी सभ्यता का राज्य था और भोग को ही जीवन का उद्देश्य समझा जाता था, उस में मुअक्किलों के दरबार के स्थान में देश भक्तों की सभायें होती हैं, अंग्रेजी सूटों के स्थान में जवाहिरलाल नेहरू गांधी टोपी, मोटे खद्दर का अचकन मोटे खद्दर की धोती और चपली पहिने हुए कभी काशी कभी प्रयाग और कभी प्रतापगढ़ विद्यार्थियों के आश्रमों का अधकच्चा भोजन तथा किसानों की मोटी रोटी खाकर ही अपने आपको कृतकार्य समझते हैं। जो सुकुमारी देवियां राज महिलाएं की तरह पलीं थीं वे मोटी खद्दर की धोतियां पहिने हुवे भोजन के पश्चात् नित्य तीन २ घन्टे चरखा कातती और अन्य देश सेवा के काम में निमग्न रहती हैं। श्री० मोतीलाल नेहरू और उन के परिवार का त्याग किसी ऐतिहासिक बड़े त्याग से कम नहीं है। इस बड़े भारी परिवर्तन ने मुझे निश्चय दिला दिया कि भारतीय जाति के भाग्य फिर से उदय होने वाले हैं।

५ दिसम्बर की दोपहर को प्रयाग से प्रस्थान करके ६ दिसम्बर को प्रातः ९ बजे मैं गुरुकुल भूमि में पहुंच गया। इस समय पेट का चक्कर फिर बाहर ले गया है। ११ दिसम्बर को गुरुकुल से चल कर १२ और १३ देहली में निवास किया। १४ को कुरुक्षेत्र की शाखा गुरुकुल का अवलोकन किया। १५ को अमृतसर में रह कर उस समय जब यह अंक पाठकों के हाथ में होगा मैं लाहौर से मुलतान चलने की तय्यारी कर रहा होऊंगा। मुलतान गुरुकुल के वार्षिकोत्सव से निवृत्त होकर २० दिसम्बर लाहौर और २१ को देहली ठहरता हुआ २३ को दोपहर से पहिले नागपुर पहुंचने की सम्भावना है। नागपुर से कहां जाना होगा—निश्चय नहीं कर सका। आगामी अंक से आनुपूर्वी अपनी ब्रह्मदेश की यात्रा का वृत्तान्त दूंगा जिस से पाठकों को ज्ञात होगा कि मैंने "ब्रह्मा" में क्या देखा और क्या किया।"

(असमाप्त)

श्रद्धानन्द संन्यासी

हत्यारे की मुट्ठी गर्म

कर के आंग्ल जाति ने अपनी न्याय प्रियता की पोल खोल दी है। जिस डायर ने जलियां वाला बाग में सैकड़ों नहीं हजारों निहत्थों को मेशीन तोप के आगे भून डाला, उसे इसने २६,३१७ पौंड की भेंट दी है जिस में भारत के एंग्लो-इण्डियनों और कुछ जीहजूरों का दिया हुआ ९३६० पौंड अर्थात् १,४०,१०० रु० भी शामिल है। अन्य सभ्य देशों में तो ऐसे नर हत्यारों को अदालत के कटघरे में बन्द कर जवाब तलब किया जाता पर ब्रिटेन के निवासियों ने इतनी भारी थैली से उस हत्यारे की पीठ ठोकी और आने वाली नई सन्तति को बता दिया कि "निहत्थी भारतीय प्रजा को तोप-बन्दूक से उड़ादेने में कोई पाप नहीं है।" क्या इन्हीं मनावर्यों के आधार पर खिलने की नौकर शाही हमें "राज भक्ती" रखने का उपदेश देती है? रावण की तरह डायर का नाम भारतीय इतिहास में चिर स्मरणीय रहेगा।

'बर्मा में 'ओड्वायर शाही' या 'क्रेडक शाही''

डायर ओड्वायर जान्सन और स्मिथ के भाई रेजिनल्ड क्रेडाक आज कल बर्मा के शासक हैं। मालूम होता है कि इनम जोंसि और क्रूरता में ओड्वायर से पीछे रहने में वे अपना अपमान समझते हैं। बर्मा में वे आजकल ओड्वायरशाही के नये नमूने निकाल रहे हैं। यदि वहां यही हाल रहा तो हमें 'ओड्वायरशाही' को 'क्रेडेकशाही' का ही नाम देना पड़ेगा। अभी पिछले दिनों "रंगून मेल" के सम्पादक और प्रकाशक को जाति विद्वेष फैलाने के अपराध में कैद किया गया है। यह मामला अभी न्यायालय के आधीन है, इस लिए हम इस पर कुछ विशेष नहीं लिखना चाहते। परन्तु क्रेडक महोदय ने एक और विचित्र आज्ञा निकाल कर 'ओड्वायरशाही' का परिचय दिया है। पिछले दिनों की हड़तालों में जो विद्यार्थी स्कूल से १५ दिन से अधिक गैरहाजिर रहे हैं उन में जो ८ वीं और १० वीं श्रेणी के हैं उन्हें १९२१, जो ६ ठी और ९ वीं श्रेणी के हैं उन्हें १९२१,१९२२ तथा जो ५ वीं और ७ वीं श्रेणी के हैं उन्हें १९२२,१९२३ की परिक्षाओं से 'बहिष्कृत' कर दिया जावेगा। ऐसी आज्ञायें असहयोग का मार्ग और भी सुगम बनाती हैं। इस से अधिक लिखना व्यर्थ है।

चुनाव का दंगल

खतम हो गया। कहीं छोटे २ उपद्रव हो गये, जिस में जहां कुछ दोष जनता का था वहां पुलिस का अपराध भी, किसी अंश में, कम नहीं ठहराया जा सकता। परन्तु चुनाव की संख्याओं पर साधारण दृष्टि डालने से स्पष्ट हो जाता है कि असहयोग का नैतिक प्रभाव बहुत उत्तम रहा है। मत दाताओं की प्रतिशतक संख्या बहुत कम रही है और कहीं कहीं तो १०/० और ५ इस से भी अधिक गिर गई है। सभी से स्पष्ट होजाता है कि सुधार स्कीम का भाव, भारत के बाजार में, कितना गिर गया है। दिल्ली की जनता ने एक हजार्यों को चुनकर

अखण्डितगौरी का दाम टकों से कौड़ियों में ही कर दिया है। झूठा उसकोश तैयार करने वालों की आँख क्या अब भी नहीं खुलेगी ?

लड्डू छिन गया !

भारत सरकार की नई विज्ञप्ति के अनुसार प्रान्तीय सभाओं के सभासदों को "माननीय" (आनरेबल) लगाने का अधिकार नहीं होगा। पिछले सालों वस्तुतः माननीय का लड्डू ऐसा जबरदस्त था जिसे देखें हमारे कई निरीह देश भक्तों के मुंह में भी पानी आजाता था। बोर्ड का यह लड्डू, अच्छा हुआ, छीन लिया गया। अब वे अपने नाम के आगे एम. एल. ए. (मैम्बर आफ लेजिस्लेटिव एसेम्बली) ही लगा सकेंगे। कुछ लोग इस एम एल ए. का अर्थ मैम्बर आफ लुनाटिक एसलाइम (पागल घर के सभासद) करते हैं। परन्तु हम उनसे सर्वथा असहमत हैं।

भारतीयों की जिन्दगी का दाम घट रहा है।

दुनियां में, आजकल, जमाना महंगी का है। भारत में भी ~के सेर की चीज रुपया सेर होरही है। इस महंगी में केवल एक चीज सस्ती हुई है और हो रही है जानते हो वह क्या है? वह है हमारा खून और हमारी जिन्दगी यह सस्ती नौकरशाही की कृपा से ही हुई है। नौकरशाही के सामने हमारी जिन्दगी का दाम है-बन्दूक की एक गोली ! और किसी गोरे के लिए हमारे खून का मूल्य है बूट की एक ठोकर ! एक नहीं कई घटनायें हमारे इस कथन को पुष्ट कर सकती हैं। ताजा उदाहरण लीजिये। मद्रास में 'मजदूरों के उपद्रव" की आड़ में पुलिस ने गोली चलादी जिससे एक लड़का (सरकार के कथनानुसार) धराशायी हुआ और उधर, आगरे में, एक गोरे ने एक पुस्तक विक्रेता को, बूट की ठोकरों से, परलोक भेज दिया। क्या हम लोग, अपने जीवन का दाम गोली और बूट की ठोकर तक ही रखेंगे ?

पंजाब नाटक का दूसरा अंक

दिल्ली में खेला गया है। अभी तक प्रथम अंक की स्मृति ही नहीं भुली थी कि इतने में दूसरा अंक भी देखना ही नहीं पर झुगतना पड़ता ! दिल्ली के प्रवासी भारतवासियों को बूढे हाथ, लोहे और गोली का, निशाना बनाया गया। यहां भी कुछ सहायता इस्वारिद् देकर अपने निकृष्ट स्वार्थों के दिलकी हालत न थाम गया था पर यहां तो कोई पूछने वाला नहीं है। सेन्सर की कैंची इतनी तेज है कि कोई समाचार भूल कर भी यहां ठीक समय पर नहीं पहुंच सकता। इसी हायरशाही से तंग आकर ३० हजार के लगभग प्रवासी भारत वासी यहां आना चाहते हैं। क्या हमारे देश भाई उनका स्वागत करने को तैयार हैं? विदेशी हमारी छाती पर इस तरह दाल दलें और हम तब भी चित पड़े रहें यह कितने शरम और दुख की बात है।

गुरुकुल-समाचार

(संवाददाता द्वारा प्राप्त)

श्री० स्वामी जी—

के बर्मा से सकुशल लौट आने का समाचार पिछले अंक में दिया जा चुका है। कुल वासियों को यह पूर्ण आशा थी कि आप कुछ मास तक यहीं आराम लेकर, अपनी उपस्थिति और निरीक्षण से कुल को लाभ पहुंचावेंगे। परन्तु यह देख सबको दुख हुआ कि २२ माघ वा ११ दिसम्बर की सायंकाल को आप फिर यहां से बाहर चले गए थे। श्री० स्वामी जी दिल्ली, कुरुक्षेत्र अमृतसर, लाहौर, मुलतान होते हुए फिर दुबारा ७ पौष वा २१ दिसम्बर को दिल्ली लौटेंगे और वहां से नागपुर कांग्रेस के लिए प्रस्थान करेंगे। कुल वासियों को आपके सकुशल लौटने का पूर्ण विश्वास है।

ऋतु

उत्तम है। पौष माह की सर्दी अपना पूरा जोर दिखा रही है। पर ब्रह्मचारियों के तपोव्रत के आगे उसका जोर ढीला पड़ जाता है। इतनी सर्दी में भी नंगे सिर और नंगे पांव रहना—गुरुकुल की एक विचित्र विशेषता है।

गंगा का पुल

ठेकेदार महाशय ने बांध दिया है। अब तीनों पुल, इस प्रकार तैयार होगये हैं कि जिससे यात्रियों को कोई कष्ट नहीं हो सकता। गुरुकुल प्रेमियों को अपने प्यारे कुल के दर्शन करने का अवसर इससे उत्तम और कोई नहीं है।

पठन पाठन—

भली भांति चल रहा है। उपाध्याय-मण्डल में जो तनिक सा परिवर्तन हुआ था उससे इसमें कुछ भी बाधा नहीं पहुंची। इतिहास—अर्थशास्त्र के योग्य उपाध्याय के लिए प्रबन्ध हो रहा है। तब तक के लिए, अस्थायी रूप से, श्री० प० इन्द्र जी उच्च कक्षाओं को यह विषय अत्यन्त योग्यता पूर्वक पढ़ाते हैं। श्री० वैद्य जी ने अपना काम संभाल लिया है। साधारण पाठ के साथ २ क्रियात्मक कार्य भी प्रारम्भ कर दिया गया है। स्थिर पाठविधि निश्चित करने वाली जिस समिति की सूचना पहिले दी जा चुकी है, उसका काम लगभग समाप्त होगया है। समिति के निश्चय शीघ्र ही जनता के सम्मुख रक्खे जावेंगे।

सभायें—

विद्यालय तथा महाविद्यालय विभाग की संस्कृत, अंग्रेजी और हिन्दी की सभाओं के अधिवेशन नियम पूर्वक हो रहे हैं। इन सभाओं के अतिरिक्त

साहित्य परिषद्

के अधिवेशन भी क्रमशः होते हैं। गत सप्ताह श्री० प० इन्द्र जी ने "युद्ध और शान्ति" पर भाव पूर्ण निबन्ध पढ़ा। निबन्ध कर्ता जी ने, ऐतिहासिक और दार्शनिक दोनों दृष्टियों से, युद्ध के हानि लाभ पर विचार करते हुए 'युद्ध' की निर्दोषता सिद्ध की थी। इस सप्ताह ब्र० सोमदत्त जी (१३ श्रे०) ने "रामायण" पर एक खोज पूर्ण निबन्ध पढ़ा। इस में स्वतन्त्र रीति से विचार किया गया था। निबन्ध पर विनोद भी अत्यन्त रोचक हुआ।

इस मास में यहां की सभाओं के कुछ विशेष अधिवेशन होने वाले हैं जिनका संक्षिप्त वृत्तान्त हम अगले अंकों में पाठकों को सुनावेंगे।

कांगड़ी गांव में आग

इस सप्ताह लगगई थी। इस से गांव का कुछ हिस्सा जल गया। कुलवासियों ने उचित समय में पहुंच कर आग के बुझाने में सहायता दी और उसे आगे न बढ़ने दिया।

शिक्षा-जगत्

तिलक-स्मारक

अब उचित रूप में बन रहे हैं—प्रसन्नता की बात है। लाहौर के बाद अब इलाहबाद और पूना ने श्री० तिलक विद्यालय स्थापित करके उचित दिशा में पग उठाया है। इलाहबाद का तिलक विद्यालय महात्मा गांधी के करकमलों से स्थापित किया गया है। उसका प्रबन्ध एक समिति के आधीन किया गया है जिस के प्रधान श्री प० मोतीलाल नेहरू हैं। वहां के एक अंग्रेजी दैनिक पत्र के निजू संवाददाता द्वारा पता लगा है कि विद्यालय का काम भलिभांति चल रहा है। इसके अतिरिक्त, पूना में भी एक तिलक महाविद्यालय [कालेज] श्रीयुत केलकर, श्री० करान्दिकर, श्री० वैद्य, श्री० परांजपे, श्री० गाडगीले इत्यादि देश भक्त सज्जनों के उद्योग से, गत रविवार, स्थापित होगया है। लगभग ६० विद्यार्थियों के साथ 'सार्वजनिक सभा पूना' की इमारतों में काम आरम्भ कर कर दिया गया है। अरबी, संस्कृत और अंग्रेजी साहित्य के अतिरिक्त इतिहास अर्थशास्त्र, व्यापार और उद्योग धन्धा की भी इस में शिक्षा दी जावेगी। हमारी वर्तमान शिक्षा प्रणाली इतनी अधिक साहित्यक है कि जिससे युवकों के अन्दर क्रियात्मक कार्य करने की शक्ति सर्वथा नष्ट हो रही है। इस दृष्टि से इस महाविद्यालय की पाठ प्रणाली देश के लिये अत्यन्त लाभप्रद है। परन्तु मुझे एक बात खटकती है और वह यह कि

हिन्दी का आदर नहीं

किया गया। राष्ट्र सूत्रधार स्वर्गीय लो० बाल गंगाधर तिलक तथा अन्य गान्धी इत्यादि नेता अब यह जनता के सामने स्पष्ट शब्दों में मान चुके हैं कि देश की राष्ट्रीय भाषा हिन्दी ही होसकती है, तब इन्हें राष्ट्रीय विद्यालयों और महाविद्यालयों से अर्धचन्द्र देना उचित नहीं प्रतीत होता। मुझे पूर्ण आशा है कि इस महाविद्यालय के संचालक गण अवश्य इधर ध्यान देंगे। और, इस प्रकार की आशा करना भी मेरे लिए अनुचित होगा कि श्रीयुत केलकर और श्री० करान्दीकर जैसे होते हुये इस म० वि० में इतिहास अर्थशास्त्र के साथ २ तिलक राजनीति का अध्यापन भी अवश्य कराया जावेगा।

अन्य राष्ट्रीय विद्यालय

देहरादून, रोहतक भिवानी, ढाका इत्यादि अन्य कई स्थानों से भी राष्ट्रीय विद्यालय के स्थापित होजाने के शुभ समाचार आरहे हैं। देश के लिए ये लक्षण मंगल सूचक है।

अध्यापकों की गरीबी

को दूर करने के लिए सरकार की ओर से कोई प्रबन्ध नहीं किया गया। वस्तुतः प्राथमिक और माध्यमिक स्कूलों के अध्यापक गरीबी के पंजे में बुरी तरह से फंसे हुए हैं। आपके पाठकों को मैं यह अपने अनुभव से विश्वास दिला सकता हूं कि जितना परिश्रम और मगज पच्ची, सुबह से शाम तक, इन दीन अध्यापकों को करनी पड़ती है उतनी महाविद्यालय के उपाध्याय गण कभी स्वप्न में भी नहीं करते। सरकार ने अपने महाविद्यालयों में वेतन वृद्धि कर दी परन्तु इन बिचारों की ओर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया। ये भी अपनी अवस्था को समझ रहे हैं और अनुभव करने लगे हैं कि हमारे साथ अन्याय किया जा रहा है। इसी का यह फल है कि कुछ एक उत्साही सज्जन 'भारतीय अध्यापक सभा' स्थापित करके शीघ्र ही एक बड़ी हड़ताल करने का निश्चय कर रहे हैं। वस्तुतः इस के सिवाय अब इनके पास और कोई चारा नहीं है। इस से हमारे अध्यापक वर्ग में बड़ा संगठन शक्ति बढ़ेगी वहां अपने पांव पर खड़ा होना भी सीखेंगे।

मैसूर विश्वविद्यालय के सहायक मुख्याधिष्ठाता—

अर्थात् वाइस चांसलर श्रीयुत डा० ब्रिजेन्द्रनाथ सील नियुक्त हुए हैं। विश्वविद्यालय को यह अपना सौभाग्य समझना चाहिये कि उसे ऐसे उत्तम विद्वान् मिले हैं। आप देश के उन इने गिने दार्शनिकों और शिक्षा विज्ञों में से हैं जिन के कारण भारत का मुख अभी तक उज्वल हो रहा है। मुझे विश्वास है कि आपके निरीक्षण में मैसूर विश्वविद्यालय खूब उन्नति करेगा। मैं विश्वविद्यालय को बधाई दिये बिना नहीं रह सकता।

कर्नलवेजवुड का व्याख्यान

लाहौर में, पिछले दिनों, भारत हितैषी कर्नल वेजवुड ने विद्यार्थियों में एक सारगर्भित भाषण दिया। विद्यार्थियों को राजनीति का पूरा ज्ञान प्राप्त करते हुए देश की वर्तमान हालत पर विचार और सम्मति प्रकाशन की पूरी स्वतन्त्रता होनी चाहिए—यही व्याख्यान का मुख्य विषय था। हमारे नवयुवक राजनीति से बड़ा डरते हैं। मुझे अपने जीवन में ऐसे कई युवक छात्रों से मिलने का अवसर मिला है जिन्हें राजनीति विज्ञान तो क्या—देश की वर्तमान अवस्था से ही तनिक भी परिचय नहीं है। मुझे अच्छी तरह से याद है कि जब मैं महाविद्यालय में पढ़ता था तो मेरे एक मित्र जो भी मुझ से एक कक्षा ऊपर थे—यह नहीं पता था कि प० मोतीलाल नेहरु हिन्दू हैं या मुसलमान। इस प्रकार का अज्ञान, यह कहना, वर्तमान शिक्षा प्रणाली का ही दोष है। सरकार राजनीति से हमारे विद्यार्थियों को ऐसा दूर रखती है जैसे आग से बारूद को। इस विषय में मैं समझता हूं, गुरुकुल कांगड़ी और वृन्दावन जैसी संस्थाएं बहुत उत्तम हैं वहां का वायुमण्डल ही इस प्रकार का है कि प्रत्येक छात्र को देश के चालू विषयों से भली भांति परिचित रहना पड़ता है। मुझे पूर्ण आशा है कि सरकारी विद्यालय में पढ़ने वाले छात्र भारतहितैषी कर्नल के व्याख्यान को अवश्य क्रिया में परिणित करेंगे। इस समय देश की अवस्था ऐसी है कि उस से अपरिचित रहना किसी प्रकार से क्षम्य नहीं है।

कृष्णमित्रः

आवश्यक सूचना

गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी में नवीन ब्रह्मचारियों के प्रवेशार्थ प्रार्थना-पत्र दिसम्बर १९२० ई० के अन्त तक कार्यालय में पहुंच जाने चाहिए। प्रवेशार्थ प्रार्थना-पत्र के फार्म तथा नियमावली गुरुकुल कार्यालय डाक घर गुरुकुल कांगड़ी जिला बिजनौर से लिखने पर मिल सकेंगे।

इन्द्र
मुख्याधिष्ठाता
गुरुकुल कांगड़ी

लन्दन में दिवाली

(विशेष संवाददाता द्वारा)

इस लन्दन में आये हुये भारतवासियों को इस वर्ष एक अनुपम सौभाग्य का अवसर प्राप्त हुआ। गुरुकुल कांगड़ी के सुप्रसिद्ध उपाध्याय बालकृष्ण जी तथा अन्य कुछ महानुभाव सज्जनों के परिश्रम से इस वर्ष यहां पर 'इण्डियन नेशनल एसोसियेशन' के विशाल सभा भवन में दीपमालिका के उपलक्ष्य में एक बड़ी सभा की गई। भारतीय सामाजिक तथा राजनैतिक सुधार में भाग लेने वाले बहुत से आंग्ल सज्जन तथा यहां पर आये हुए कई भारतीय विद्यार्थी, व्यापारी, और अन्य व्यवसायी सभा में उपस्थित थे। सभापति का आसन युक्त प्रान्त के भूतपूर्व लाट लार्ड मेस्टन ने ग्रहण किया था। वक्ताओं में बंगाल के सुप्रसिद्ध रसायन शास्त्र वेत्ता सर पी.सी. राय, इण्डिया कौंसिल के मेम्बर साहबजादा आफताब अहमद खान, श्रीमती सरोजिनी नायडू, इत्यादि कई प्रसिद्ध देवियां और सज्जन थे। उपस्थित महानुभावों में प्रसिद्ध हिज हाइनेस [illegible] नरेश, सर भावनगरी, औंध संस्थान के राजपुत्र श्री [illegible] पंत इत्यादि कई सज्जन थे।

पांच बजे, जलपान के उपरान्त, करतल ध्वनि के बीच सभापति ने आसन ग्रहण किया और अपना भाषण प्रारम्भ किया। उन्होंने कहा कि 'यह एक अवर्णनीय आनन्द का अवसर है कि आज दिवाली के दिन हम सब प्रकार के भेद भावों को भुला कर हिन्दू, मुसलमान, ईसाई और यहूदी, एक महात्मा के चरणों में अपना अपना उपहार रखने के लिए सम्मिलित हुये हैं। इस बात का उन्हें शोक था कि वे अपनी आंखों से स्वामी दयानन्द सरस्वती का भौतिक शरीर न देख सके पर साथ ही उन्होंने इस बात पर अत्यन्त प्रसन्नता प्रकट की कि वे बहुत से स्वामी जी के ऐसे आत्मीय शिष्यों से मिल चुके हैं जो कि बड़े धैर्य के साथ स्वामी जी की जलाई हुई मशाल के प्रकाश को स्थान स्थान पर फैलाने का प्रयत्न कर रहे हैं। इसके उपरान्त सभापति महोदय ने, उन उपस्थित सज्जनों के लिए जिन्होंने स्वामी के विषय में कुछ नहीं या बहुत कम सुना था संक्षेप से स्वामी जी महाराज का जीवन चरित्र वर्णन किया और बतलाया कि उन्होंने अपना सारा जीवन हिन्दू जाति की उन्नति की रुकावटों को जड़ से उखाड़ देने में लगाया।

स्वामी जी के एकमात्र कार्य आर्यसमाज और उसकी चलाई हुई सामाजिक सुधार और विद्यादान आदि संस्थाओं का वर्णन करते हुये उन्होंने कहा कि हो सकता है कि बहुत से आर्यसमाजियों से किसी विषय में भी उनकी सम्मति न मिले पर तो भी मैं विश्वास पूर्वक कह सकता हूं कि मैंने कोई आर्यसमाजी ऐसा नहीं देखा जिसे मैं सम्मान और आदर की दृष्टि से न देखूं।

अन्त में उन्होंने बतलाया कि आर्यसमाज के शिक्षा सम्बन्धी दो केन्द्र स्थानों में से एक को वे स्वयं देख चुके हैं और वे इस को समारोह के सर्वाधिक की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते। उनके कथनानुसार उनके लिये वह एक अत्यन्त मनोरञ्जक दृश्य था, जब कि गङ्गा के किनारे गुरुकुल में, अत्यन्त सामान्य वेश में सुन्दर तथा सुप्रसन्न विद्यार्थियों की टोलियां अपने २ गुरु के साथ वेद विद्या ध्यान करती हुई प्राचीन आचार्य कुलों का स्मरण कराती थीं। गुरुकुल के मनोरम प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन करते हुये उन्होंने उसे अदन के बाग के साथ समता दी और कहा कि ये दृश्य विद्यार्थियों के हृदयों पर असर किये बिना नहीं रह सकते। सभापति के भाषण के उपरांत उपाध्याय बालकृष्ण जी एम.ए. ने, सिडनी वेब, रैमजे मैकडानल्ड, सेंट निहालसिंह इत्यादि के सहानुभूति सूचक पत्र पढ़ कर सुनाये जो कि विशेष २ कारणों से नहीं आ सके थे। आपने अपने भाषण में दिवाली का सम्बन्ध महाराजा रामचन्द्र और महर्षि दयानन्द के साथ बताते हुए यह बतलाया कि महर्षि की महत्ता इस में है कि उसने उन्नति का रास्ता भारतीय सभ्यता में से निकाला। हम निःसन्देह पाश्चात्य शिक्षा के किसी अंश में ऋणी रहेंगे, और उसके अनुसार सुधार चाहने वालों और यहां तक कि ईसाई मिशनरियों की भी कुछ अंश तक प्रशंसा करेंगे, पर इस में कुछ सन्देह नहीं कि यदि महर्षि न पैदा होता तो आज इतर जनों का काम बहुत ही थोड़ा दृष्टि गोचर होता। हिंदु जाति जो इस भाव से लकीर की फकीर है जो उसकी बात को देखना भी नहीं चाहती, उस पर आचरण करना तो बहुत दूर रहा, इस बात के लिये कभी तैयार न थी कि वह अपनी उन्नति के सिद्धांत बाहिर से उधार ले। महर्षि ने उसे वे सिद्धांत उसी की अपनी ही सभ्यता में दिखाए जिस का परिणाम यह हुआ कि आज हम हिंदुस्तान में एक महान् सुधार का कार्य देख रहे हैं।

सर पी.सी. राय ने स्वामी जी के जीवन से ग्रहण करने योग्य सामाजिक शिक्षाओं का वर्णन करते हुये जनता का इस बात की ओर विशेष तौर पर [illegible] कि स्वामी जी महाराज ने जन्म से गुजराती होते हुये भी अपने सब ग्रन्थों और प्रचार के सब कार्य में हिन्दी भाषा का प्रयोग कर हमारे सामने जातीय भाषा की आवश्यकता को जाहिर किया है। अपने भाषण के अन्त में उन्होंने कहा कि स्वामी जी महाराज के जीवन से लेने लायक सबसे बड़ी और सबसे मुख्य शिक्षा स्वार्थत्याग की है और इस बात की बड़ी प्रसन्नता है कि स्वामी दयानन्द के अनुयायी उस शिक्षा को जीवन में चरितार्थ करके दिखा रहे हैं। उदाहरण के लिए, लाहौर का दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालिज और हरिद्वार का गुरुकुल दो ऐसे स्थान हैं जहां पर प्रत्येक आर्य सज्जन और शिक्षक अपने तन, मन, धन को इस तरह से लगा रहे हैं कि उसका उदाहरण हिन्दुस्तान में दूसरी जगह मिलना असम्भव है। इसके अतिरिक्त स्थान २ पर आर्यों की चलाई हुई कई पाठशालाएं और सुधार के केन्द्र हैं। इन सब को देख कर मुझे—एक ब्रह्म समाजी को—इस बात के लिए लज्जा मालूम होती है कि हम [illegible]

काम का दसवां हिस्सा भी नहीं कर सके हैं।

साहेबजादा आफताब अहमद खान ने अपने भाषण में कहा कि स्वामी दयानन्द ने हिन्दुस्तान में एक प्रकार के धर्म युद्ध की उद्घोषणा की थी जिसमें उसका उद्देश्य यह था कि भारत में प्राचीन शुद्ध जीवन को पुनर्जीवित किया जावे। वह अपने इस युद्ध में किसी अंश तक सफल हुवे। उसका कारण यह था कि उन्हें प्राचीन भारत की आर्य सभ्यता में पूर्ण भरोसा था और उन्हें वेदों के वास्तविक अर्थ को अच्छी प्रकार समझा हुवा था।

आर्यसमाज के बारे में अपना कथन करते हुवे उन्होंने कहा कि आर्यसमाज सुधार के प्रत्येक हिस्से में बहुत ही अधिक क्रियात्मक काम करता है। आप किसी भी मेले में जावें वहां आपसे एक आर्यसमाज का तम्बू जरूर मिलेगा। आप पञ्जाब के किसी भी जिले में जावें वहां आपको आर्यों का बनाया हुआ एक बड़ा स्कूल और छोटी २ और बहुत सी पाठशालायें जरूर मिलेंगी, और अगर आप वहां के किसी भी गाम में जावें तो वहां कोई न कोई आर्य उपदेशक अपना काम करता नजर आ वेगा।

अन्त में उन्होंने कहा कि एक मुसलमान के तौर पर आर्यसमाज से उस लिए सहानुभूति है कि वह एक ईश्वर का उपदेश करता है और एक भारतीय के तौर पर इस लिए कि उसने मातृभूमि के उद्धार के लिए बहुत ही अधिक काम किया है।

मिसेज जोशि जाइन रेम्सन ने बहुत ही भावपूर्ण शब्दों में यह जाहिर किया कि वेदों के [illegible] को लोगों ने समझना छोड़ दिया था जिसका परिणाम यह हुआ कि वह अविद्या के गड्ढे में गहरे २ धसते चले गये। पर स्वामी दयानन्द ने जब [illegible] विस्तृत ग्रन्थों पर विचार किया तो उन्होंने देखा कि वे अमूल्य रत्नों से भरे पड़े हैं। उन्होंने वे [illegible] के उपकार के लिए सबको [illegible] समझे। इसके लिए मैं अपनी ओर से उनका [illegible] धन्यवाद करती हूं।

अपने भाषण का अन्त करते हुवे उन्होंने इस बात की बड़ी आवश्यकता बतलाई कि पाश्चात्य नगरों में इस प्रकार की शिक्षाओं की बड़ी आवश्यकता है जिसमें भारतीय गुरुओं के [illegible] आशय पाश्चात्य नागरिकों के सम्मुख रक्खे जावें।

इसके बाद मिस्टर पोलक ने कहा कि वे डी० ए०वी० कालेज लाहौर और गुरुकुल दोनों को देख चुके हैं और ऐसा मालूम होता है कि दोनों में विद्यार्थियों को सदाचारी बनाने की ओर अधिक ध्यान दिया जाता है। इस बात को देखकर यह साफ तौर पर जाहिर होता है कि आर्यसमाज स्वतः एक तरह का अन्धकार पर विजय है। इसमें अभी तक इसके संस्थापक की शक्ति काम कर रही है जिसका ज्ञान अथाह था।

इसके बाद मिसेज टाटर ने एक बहुत ही उत्तम चित्र खैंचा जिसमें उन्होंने दर्शाया कि दिवाली का उत्सव हिन्दुस्तानियों के लिए कितना हर्षदायक है और वे उसे किस उत्साह से मानते हैं—

मिसेज टाटर के बाद पारसियों की ओर से मि० सकलतवाला भी बोले। आपने कहा कि स्वामी दयानन्द उन नेताओं में से थे जिनका सन्देश केवल किसी एक देश या जाति के साथ ही परिमित नहीं रहता पर सारे संसार या मानव जाति के लिए होता है। स्वामी दयानन्द का आर्यसमाज को खोलते हुए निस्सन्देह केवल यह उद्देश्य नहीं था कि भारत के कुछ थोड़े से आर्य मिलकर एक आर्यसमाज कायम करें पर उनका उद्देश्य सारी मानव जाति को एक सूत्र में बांधने और शान्ति का उपदेश सुनाने का था। हमें आशा करनी चाहिए कि बहुत शीघ्र एक दिन ऐसा आवेगा जब कि उस महर्षि की मनोकामनायें पूरी होंगी।

अन्तिम भाषण श्रीमती सरोजिनी नायडू का हुआ। उन्होंने कहा कि यद्यपि मेरा सीधे तौर पर समाज के साथ कोई सम्बन्ध नहीं तो भी मैं समाज की और कालेज सेक्रेटरी में से एक हूं। मैं बहुत सी सभाओं में जा चुकी हूं और उनके चलाये हुवे पाठशालाओं के बच्चों को पारितोषिक आदि बांट चुकी हूं। इस लिए समाज और उसके कार्य से मेरा अगाध प्रेम है। उन्होंने अपने गुरुकुल दर्शन का वर्णन करते हुए कहा कि वहां के आचार्य ने, जहां पर वनिताओं के कंधों को सजुन विवाद का [illegible] चिह्न है, उन्हें आने और विद्यार्थियों से मिलने की आज्ञा दी। इसका कारण यह था कि वे वहां पर एक माता की स्थानीय गई थीं और आर्यसमाज की उत्तम शिक्षाओं में से एक यह है कि मातृ शक्ति का सम्मान और पूजा की जावे और भारतमाता की तन, मन, धन से सेवा की जावे।

अन्त में स्वामी दयानन्द पर बोलते हुवे उन्होंने कहा कि भारतवासियों के प्रति स्वामी जी महाराज का एक सन्देश था जिसको इस तौर पर प्रकट किया जा सकता है कि "सत्य का प्रकाश किया जाय" और इसमें उपस्थित सज्जनों में से एक को भी कोई उज्र नहीं हो सकता। यह सन्देश हिन्दु, मुसलमान और ईसाई सबके लिए एकसा है। हिन्दुस्तान के लिए यह सन्देश स्वामी महाराज की एक बड़ी भारी वसीयत के तौर पर जिस का जितना अधिक उपयोग किया जावे उतना ही अधिक उन्नति का मार्ग निकट आता जाता है।

इसके उपरान्त एक दीर्घ करतालिका ध्वनि और "वन्दे मातरम्" के गीत के साथ सभा विसर्जित हुवे। बाद में मकान के पीछे एक बड़े दालान में घण्टे आध घण्टे तक आतशबाजी के खेल दिखाये गए। कईयों ने महीनों और बहुतों ने वर्षों के बाद इन खेलों को देखकर बहुत आनन्द मनाया। इस प्रकार अनुपमेय सफलता और कृतकार्यता के साथ बहुत से विचारशील हृदयों पर अनेक उच्च गम्भीर आशाओं को छोड़ती हुवे यह सभा समाप्त हुई।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शास्त्री .म के लिए छपा।

परमात्मने नमः।

मानव धर्मशास्त्र की व्याख्या

पहिला अध्याय

(गतांक से आगे)

अस्मिन् धर्मोऽखिलेनोक्तो गुणदोषौ च कर्मणाम्।
चतुर्णामपि वर्णानामाचारश्चैव शाश्वतः॥२०

अर्थ—इसमें सम्पूर्ण धर्म कहा है और कर्मों के गुण दोष तथा चारों वर्णों का परम्परा से होता आया आचार कथन किया है।

आचारः परमो धर्मः श्रुत्युक्तः स्मार्त एव च।
तस्मादस्मिन्सदा युक्तो नित्यं स्यादात्मवान् द्विजः॥२१।

अर्थ—श्रुति और स्मृति से कहा हुआ आचार ही परम धर्म है, इस लिए अपना [illegible] चाहने वाला द्विज सदा आचार युक्त रहे।

टि०—चारों वर्णों के कर्म और धर्म [illegible] इनका ज्ञान प्राप्त करना [illegible] का धर्म है। परन्तु परम [illegible] भी है। वेद कहता है कि जो केवल ज्ञान का ही आश्रय लेते हैं वे भी अन्धकार में ही लिप्त रहते हैं।—अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते। ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायां रताः॥—केवल धर्म का आश्रय लेकर भी मनुष्य धर्मात्मा नहीं बन सकता, क्योंकि बिना यथार्थ ज्ञान के वेद स्मृति-कथित आचार पर चल नहीं सकता और न केवल ज्ञान ही मनुष्य को यथोद्दिष्ट की प्राप्ति करा सकता है। इस लिए जो ज्ञान और कर्म को एक कर देते हैं वे ही ब्राह्मण और वे ही आचार्य कहला सकते हैं। निरुक्त में प्रश्न उठाया है—कस्मादाचार्यः? "आचार्य कौन है? और उत्तर दिया है—आचार्य आचारं ग्राहयत्याचिनोत्यर्थान् आचिनोति बुद्धिमिति वा—"जो ब्रह्मचारी को आचार की शिक्षा देता है, [illegible] करता है या बुद्धि को [illegible] है।" और [illegible]—

आचाराद्विच्युतो विप्रो न वेद फलमश्नुते।
आचारेणतु संयुक्तः सम्पूर्णफलभाग्भवेत्॥२२।

अर्थ—आचार से गिरा हुआ विप्र वेद के फल को नहीं पाता; और जो आचार से युक्त है, वह सम्पूर्ण के फल का भागी होगा।

एवमाचारतो दृष्ट्वा धर्मस्य मुनयो गतिम्।
सर्वस्य तपसो मूलमाचारं जगृहुः परम्॥२३।

अर्थ—इस प्रकार आचार से धर्म की प्राप्ति देखकर, धर्म के परम मूल आचार को, मुनियों ने ग्रहण किया था।

दूसरा अध्याय

विद्वद्भिः सेवितः सद्भिर्नित्यमद्वेषरागिभिः।
हृदयेनाभ्यनुज्ञातो यो धर्मस्तं निबोधत॥१।

अर्थ—वेद के जानने वाले और राग द्वेष से रहित सत् पुरुषों ने जिस धर्म का सेवन किया और हृदय से जिसे अच्छे प्रकार माना, उस धर्म को सुनो।

टि०—विशेष लक्षण करने से पहिले धर्म का साधारण लक्षण वर्णन करते हैं। बालक जब पहिले ही हाथ पांव मारने के योग्य होता है तो बिना किसी से पूछे चेष्टाएं करने लग जाता है। बिना आश्रय के उठता है तो गिर पड़ता है, यदि बिना देखे चलता है तो ठोकरें खाता और कभी गढ़े में भी गिर जाता है। तब उसे सूझता है कि बिना किसी पथ दर्शक चलना दुखदाई होगा। बालक अपनी माता, अपने पिता और अन्य बड़ों की ओर झुकता है; जो कुछ उन्हें करते देखता है उसी का अनुकरण करता है। इसी अनुकरण-शीलता के कारण बालक को बन्दर से उपमा दी जाती है। इसी प्रकार आत्मिक क्षेत्र में प्रवेश करने के इच्छुक बालक का पहिला पथदर्शक उस का अपना हृदय (आत्मा, क्योंकि हृदय ही आत्मा का मुख्य स्थान है) ही है। मनुष्य का आत्मा दर्पणवत् स्वच्छ है जब तक दर्पण शुद्ध है और उस पर कोई मैला या जंगार नहीं लगता तब तक उसमें वस्तुओं का स्वरूप ज्यों का त्यों दिखाई देता है परन्तु ज्यों ही उसकी स्वच्छता में भेद आवे तो वस्तुओं का स्वरूप ठीक दिखाने वाला नहीं हो सकता। स्वच्छ आत्मा ही आत्मिक जगत के बालक का प्रथम पथ दर्शक है। कवि ने बहुत ठीक कहा है:—

यत्कर्म कुर्वतोऽस्य स्यात् परितोषोऽन्तरात्मनः।
तत्प्रयत्नेन कुर्वीत विपरीतं तु विवर्जयेत्॥

जिस काम के करने में अन्तरात्मा को सन्तोष हो (अर्थात् जिस में भय, शंका और लज्जा उत्पन्न न हों) उसको प्रयत्न से करना चाहिए; और उससे उल्टे को (जिसके करने में भय, शंका और लज्जा उत्पन्न हों) उसे त्याग देना चाहिए।

[illegible] न स्यात् [illegible] पौरुषम्।
[illegible] कुर्यात् [illegible]॥

[illegible] न हो और [illegible] जिसके करने में लज्जा प्रतीत [illegible], वह काम कभी भी नहीं करना चाहिए। परन्तु यदि हृदय ही स्वच्छ न हो, अन्तःकरण पर मल, विक्षेप और आवरण का पर्दा पड़ा हुआ हो, तब क्या करे?

उस समय जैसा आचरण वेद के जानने वाले विद्वान् करें उसके पीछे चले। परन्तु वेदवित् विद्वान् भी कभी कभी ज्वर पीड़ा आदि असाधारण अवस्थाओं में धर्म या शान्त मार्ग से विचलित हो जाते हैं, इस लिए कहा कि जिसका विद्वान् नित्य सेवन करें वह धर्म है। परन्तु नित्य धर्म का सेवन करते हुए भी विशेष राग या द्वेष के कारण सत् पुरुष भी निर्बलता दिखा देते हैं। एक बड़ा धर्मात्मा त्यागी पुरुष भी किसी विशेष धार्मिक संस्था के राग में फंसा हुआ, या किसी उस संस्था के विरोधी के द्वेष के कारण धर्म के उच्च नियमों से गिर सकता है। उस राग द्वेष में फंस कर जो कुछ धर्मात्मा वेदवित् विद्वान् आचरण करें वह अनुकरणीय नहीं है। इसी लिए फिर भी आत्मा ही अन्तिम साक्षी होगा—

श्रद्धानन्द संन्यासी

श्रद्धा

वैदिक धर्म की सर्वव्यापकता

आज मैं आपके सामने वैदिक धर्म की व्यापकता के विषय में कुछ कहना चाहता हूं। अन्य धर्म मत, सम्प्रदाय या Religion से वैदिक धर्म का भेद नाम से ही स्पष्ट है। मननशील मनुष्यों के निश्चय का नाम मत है। मनुष्य को एक रस्सी में बांधने वाला सम्प्रदाय और यही Religion है। पर वैदिक धर्म यह नहीं है। धर्म का मतलब है कि जो धारण किया जाय या जिसने संसार को धारण किया हुआ है। चर अचर और जङ्गम स्थिर सभी के लिये यह आवश्यक है। वृक्ष का पत्ता तक बिना इस के हिल नहीं सकता। वैदिक धर्म की व्यापकता के दार्शनिक विचार छोड़ कर मैं सीधे शब्दों में ही कुछ कहना चाहता हूं। मञ्जिले मकसूद तक पहुंचने का मार्ग वेद ने दिखाया है—पर इन मतमतान्तरों और सम्प्रदायों ने अभी तक यह नहीं दिखाया।

शताब्दियों से विशेषतः पिछली डेढ़ शताब्दि से संसार शान्ति की खोज में लगा हुआ है। सुख प्राप्ति की खोज है पर सुख मिलता नहीं। वेद ने इसका रास्ता दिखाया है। लोग मनुष्य समाज के भेद करते हैं। वेद ने बिल्कुल स्वाभाविक और सीधा मनुष्य समाज का विभाग किया है। वेद कहता है "ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः। ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत।" शरीर के मुख भाग को ब्राह्मण बताया है। मुख का काम ज्ञानेन्द्रियों से ज्ञान की प्राप्ति करना और उस का जिह्वा से यथावत् उपदेश देना है। मुख अन्न ग्रहण करता है—अपने पास कुछ भी न रखकर सारे शरीर को बांट देता है। यही काम ब्राह्मण का होना चाहिये।

* इस व्याख्यान का सार जो कि श्री स्वामी जी ने १२ दिसम्बर के दिन आर्यसमाज चावड़ी बाजार देहली में दिया था—

तभी कहा है कि ब्राह्मण किसी का दिया नहीं खाता और सब उसका ब्राह्मण का दिया खाता है। कोठियों वाले दौलतमन्द व्यापारी ब्राह्मण नहीं, ब्राह्मण वही है जिसके पास दो समय के खाने का सामान हो तो किसी का निमन्त्रण स्वीकार न करे। क्षत्रिय का काम रक्षा का है। सारे शरीर की रक्षा बाहू करते हैं। वह बाहू जो अपने ही नाश में लगते हैं पापग्रस्त कहे जाते हैं। बन्दूक तलवार लेकर प्रजा की हत्या करना क्षत्रियत्व नहीं। स्वर्ग के लिये किसी की हत्या नहीं करनी, धर्म की वृद्धि और अधर्म का नाश ही क्षत्रिय का धर्म है। मेदा (उदर) को वैश्य कहा है। मेदा अन्न पाचन से संसार को शक्ति देता है इसी प्रकार वैश्य लोगों का काम मनुष्य समाज को दान से शक्ति देना है। धर्म अर्थ काम मोक्ष की सिद्धि ही मनुष्य का उद्देश्य है। धर्मानुसार अर्थ की प्राप्ति, धर्म और अर्थ से काम की सिद्धि और इसी प्रकार धर्मानुसार अर्थ और काम द्वारा ही मोक्ष की सिद्धि हो सकती है अन्यथा नहीं। शूद्र को पैर स्थानीय बताया है। पैर ब्राह्मण की आज्ञा पर तुरन्त चल देता है आना कानी नहीं करता। क्षत्रिय युद्ध भूमि में तभी पहुंचता है जब दिमाग की आज्ञा पर पैर वहां ले जाते हैं।

समाज तभी पूरी है जब कि चारों भाग पूरे हों। बिगाड़ तभी होता है जब कि इन चारों में गड़बड़ हो जाती है। पेट सारे शरीर का काम नहीं दे सकता। जब कि पेट ने सारे ही शरीर का काम करना शुरू किया तभी अनार्किज़्म, बोल्शेविज़्म आदि फैलने हैं। इसका इलाज सभा, समितियां बनाना नहीं, अन्तर्जातीय महासभा, या लीग आव नेशन्स भी इस गड़बड़ी का साधन नहीं। वृत्तियों का बदला जाना ही इस बिगाड़ का साधन है—तभी सम्पूर्ण सुख और और शान्ति की प्राप्ति सम्भव है। पार्लियामेन्ट कौन्सिल आदि शान्ति के लिये बताई जाती हैं। पर बिगाड़ बड़ा भारी यही है कि कानून बनाने वाले सच्चे ब्राह्मण नहीं हैं और उन कानूनों के चलाने वाले सच्चे क्षत्रिय नहीं हैं। वशिष्ठ से मुनि कानून बनाने वाले हों, दशरथ से राजा उनके चलाने वाले हों तभी शान्ति हो सकती है। आज कल जमानों के मालिक कोठियों वाले लोग अपनी स्वार्थ बुद्धि से कानून बना कर दूसरों का गला घूटते हैं। यह सब यत्न क्षणिक साधन हैं। पीपल की एक टहनी काटने पर दूसरी टहनियां और भी अधिक निकल आती हैं। ज्वाला की एक शिखा बन्द करने पर वह फूट कर दूसरी जगह से निकल ही आती है। कभी समय था जब कि ब्राह्मणों के आगे राजा झुकते थे आज राजा के सामने ब्राह्मणों को झुकना पड़ता है। यही अव्यवस्था है। चारों वर्णों की सुव्यवस्था ही शान्ति ला सकती है। दूसरे साधन नहीं।

जीवन का वैदिक आदर्श १०० वर्ष तक जीना और कर्मशील जीवन बिताना है। यज्ञ द्वारा इसे ३०० और ४०० तक का बनाना है। मनुष्य जीवन के लिये वेद कहता है "कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः। एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।" कर्मशील जीवन व्यतीत करना है, आलसी और प्रमादी का जीना जीना नहीं है। यही सम्पूर्ण गीता के उपदेश का सार है। "कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।" कर्म करना है पर उस में फंसना नहीं। इस के लिये भी वेद ने मनुष्य जीवन के चार भाग किये हैं। २५ तक ब्रह्मचर्य तय्यारी का समय है। मैं कुरुदेश गया वहां अब भी प्रत्येक व्यक्ति के लिये ब्रह्मचर्य आवश्यक है चाहे वह ७ दिन के लिये हो (यहां आपने कुरुदेश की वर्तमान प्रथाओं और विशेषता उनकी सनातन से चलती आरही प्रथाओं और रीतिरिवाजों की अच्छी व्याख्या की जिसे यहां विस्तार भय से नहीं दिया जाता)। इन लोगों की भी बिगड़ी हुई व्यवस्था भी प्राचीन आदर्श का ही इशारा करती है। ब्रह्मचर्य अवस्था तितिक्षा तपस्या का जीवन व्यतीत कर के वीर्य की पुष्टि के बाद ही गृहस्थाश्रम में प्रवेश होने से गृहस्थ पालन हो सकता

है—अन्यथा नहीं। वीर्य की पुष्टि के समय हो यदि वीर्य का नाश प्रारम्भ हो जाय तब सन्तानोत्पत्ति क्या होगी? आज युरोपियन लोग जङ्गली लोगों की सन्तानोत्पत्ति को शप युक्त ठहराते और अपने यहां की अवस्था को पतितावस्था और पशुओं से भी गई बीती अवस्था कहते हैं। वेद का आदेश है "दशास्यां पुत्रानाधेहि पतिमेकादशं कृधि।" २५ वर्ष के गृहस्थ काल में १० सन्तान पैदा करनी है। प्रति ढ़ाई वर्ष में एक दूसरी सन्तान तभी पैदा करनी जब पहिली जीने योग्य बन जाती है। गृहस्थ युद्ध क्षेत्र है—जिस में पुरानी तय्यार फौज ही काम आ सकती है, नयी रंगरूट फौज नहीं नहीं। अंगरेज़ लोग) जिन्हें हम अपना पथदर्शक समझते हैं—इन आसुरी प्रथाओं से दूर भाग रहे हैं और हम उन्हीं में फंस रहे हैं।

इसी प्रकार गृहस्थ के बाद वान प्रस्थ और सन्यास हैं। ब्रह्मचर्यावस्था में प्राप्त ज्ञान का गृहस्थ में अनुभव वानप्रस्थ में उसका परिपक्व करना और संन्यास में उसका दूसरों के प्रति खुला उपदेश करना है। कर्मण्य जीवन की शर्त प्रत्येक अवस्था में अनुभव में लगी हुई है। जंगल में भाग जाना संन्यास नहीं। शंकर और दयानन्द जंगल नहीं भागे। उन्हों ने धर्म युद्ध में कर्मण्य जीवन व्यतीत करते हुये अपने कर्म का फल संसार को दिया। बस यही वर्ण और आश्रम की व्यवस्था ही संसार में पूर्ण सुख और शान्ति ला सकती है। दूसरे सब साधन सामायिक, क्षणिक हैं, वास्तविक नहीं। इसी वास्तविक साधन को वेद ने ही बताया है जिस से मनुष्य मंजिले मकसूद पहुंच सकता है। ब्रह्मचर्य्य पूरा किये हुये ही आचार्य हैं। कानून बनाने चलाने वाले भी ब्रह्मचारी हों। राज नियम और मनुष्य समाज की बागडोर ब्राह्मणों और संन्यासियों के हाथ में हो तभी शक्ति प्राप्ति हो सकती है। मनुष्य समाज को मंजिल मकसूद तक पहुंचने का रास्ता वेद ने दिखाया है। संसार के पूरे प्रबन्ध की पद्धति, राजनीति, राजसभा, युद्ध आदि की पूरी व्यवस्था वेद ने बताई है। भटकते संसार को वैदिक धर्म ही सुख शान्ति प्राप्त करा सकता है। बस यही वैदिक धर्म की आवश्यकता है।

अन्त में सारगर्भित और प्रभावशाली शब्दों वैदिक धर्म के प्रचार पर कहते हुये आपने वैयक्तिक जीवन के सुधार पर खूब जोर दिया। वैयक्तिक जीवन के सुधार को धर्म प्रचार का मार्ग बताया। शास्त्रार्थ, व्याख्यान आदि देना धर्म प्रचार नहीं। आपने इन शब्दों से व्याख्यान समाप्त किया "परमात्मा से यही प्रार्थना है कि प्रत्येक भारतीय में यह भाव पैदा हों। इस देश के अपने नियम और पद्धति का सब में प्रचार हो। भारत ही फिर संसार के सन्मुख हो, जिस में भारत को देख कर भटकता संसार मंजिले मकसूद तक पहुंचे। भारत फिर वेदान्त का पालन करता हुआ ही संसार का गुरु बने।"

गोरक्षा का प्रश्न--

प्रत्येक भारतीय के लिए कितना आवश्यक है—इस पर हम कई बार बल दे चुके हैं। सरकार का इस ओर कई बार ध्यान खींचा जा चुका है परन्तु वह निष्फल ही हुआ है। इसी विषय पर "हाउस आवलार्ड्स" में कुछ गति होना प्रसन्नता का विषय है। लार्ड [illegible] ने भारत के विषय में यह प्रश्न, उस में पूछा था "वार्षिक गौ कितनी मारी गईं और इसका देश की कृषि और बच्चों की मृत्यु संख्या पर क्या प्रभाव पड़ा।" इस प्रश्न का उत्तर भारतसचिव के प्रतिनिधि की ओर से, क्या दिया गया यह अभी तक ज्ञात नहीं हुआ है। परन्तु हमारी सरकार बड़ी होशियार है। वह इन प्रश्न मालाओं से काबू नहीं आसकती। उस के लिए तो एक "असहयोग" ही सब से उत्तम उपाय है। गोहत्या का प्रश्न भी यदि हल होसकता है तो उसका एक मात्र साधन नौकरशाही के साथ 'असहयोग' ही है।

सन्धि सभा में चुरुट का धुआं

स्पा में, पिछले दिनों, जो सन्धिपरिषद हुई थी, उस में उपस्थित हुये प्रतिनिधियों ने, कुछ ही दिनों में ८० हजार चुरुट फूंक डाले थे! मालूम होता है कि वे सब बड़ी २ प्रतिज्ञायें जो गोरी जातियों ने छोटे राष्ट्रों के प्रति की थी, चुरुट के इसी काले धूएं के साथ ही हवा होगईं!

क्या गांधी-टोपी पहिनना कोई जुर्म है?

इस नौकरशाही के ज़माने में जो कुछ होजावे, वही थोड़ा है। जो दुनियां में कहीं नहीं होता और न होसकता है, वह सब यहां जायज़ है। क्या खद्दर के कपड़े और टोपी पहिनने पर कोई सभ्यताभिमानी शासक अपनी प्रजा को दण्ड देसकता है? क्या यह ऐसा भयंकर अपराध है कि इसके लिए एक स्कूल के हैडमास्टर अपने विद्यार्थि को इतना पीटें कि मारने वाले के कोमल [?] हाथ ही थक जाएं और मार का शिकार बेहोश होजावे? क्या यह ऐसा दोष है कि इसके लिए छात्र को स्कूल से अर्धचन्द्र देदिया जावे? हम और हमारे जैसे अन्य साधारण बुद्धि के व्यक्ति इस का उत्तर चाहे "नहीं" दें पर इन गर्हित कर्मों और निन्दनीय व्यवहारों के करने वाले बेलगाम और मेरठ के हैडमास्टर तथा नौकरशाही के चक्कर में फंसे अन्य उदार सज्जन [?] निसङ्कोच, इसी को पुष्ट करेंगे? घर के सूत, जुलाहे और दर्जी द्वारा बनाई गई दो पैसे की टोपी यदि शासकों के नज़रों कांटा है तो उस दिन कोई आश्चर्य नहीं होगा जब कि घर की रोटी और भात खाने के लिए भी हमारी पूजा बेंतों से होगी! और यदि "गांधी" शब्द जुड़ जाने से ही हमारी 'टोपी' को हौआ समझा जाता है तो इस से नौकरशाही का ही ओछापन पता लगता है।

रणचण्डी की पूजा फिर क्यों?

युद्ध समाप्त होगया। शान्ति सभा, सन्धि-परिषद और अन्तर्राष्ट्रीय-महासभायें बड़ी २ उद्घोषणाओं और कार्यक्रमों को लेकर संसार की राजनीति का रुख बदलने का प्रयत्न कर रही हैं। 'जिनेवा' की अन्तर्जातीय सभा [लीग आवनेशन्स] ने सैनिक-शक्ति के घटाए जाने का प्रस्ताव, इंगलैण्ड के लार्ड सेसिल जैसे राजनीतिज्ञ की अध्यक्षता में, स्वीकृत किए हैं और उन्हें कार्य रूप में परिणित करने का आश्वासन भी दिलाया गया है। परन्तु इस प्रपंच की आड़ में एक और ही नाटक किया जारहा है। अमेरिका का मन्त्री मंडल नए २ ड्रेडनाट और क्रूज़र बनाने के लिए प्रस्ताव उपस्थित कर रहा है, जापान, जर्मनी की क्रुप-नहर के ढंग पर, एक बड़ी भारी नहर बनाने की तय्यारी में है। इस पर करोड़ों रुपए स्वाहा किए जावेंगे। किस

लिए ? कि जिससे कांगरे—अर्थात् नहीं तय्यार किए जावें और सुरक्षित रूप में रखी जावें। इंगलैण्ड इस सब से आगे है। उसने स्थल सेना १, १४,०० से १, ३६,०८० करदी है। कच्चएशिया को "कच्चा" बनाने के लिए ३२ मिलियन पा-उण्ड पास किए गए थे। पर खर्च हुआ है ४८ मिलियन पौं० अर्थात् ड्योढा ? इससे से भी सन्तुष्ट न हो, लायडजार्ज महोदय ने, हाल ही में, अपनी एक व-क्तृता में 'बड़-बड़े-जहाज़' [न्यू कैपिट-शिप्स] बनाने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया है। इटली और फ्रांस में क्या होरहा है यह अभी तक ज्ञात नहीं हुआ है। परन्तु वे चुप बैठे होंगे ऐसा समझना अपनी मूर्खता का परिचय देना है। शान्ति-उत्सवों की आड़ में रणच-ण्डी की पूजा के लिए सामग्री क्यों जुटाई जारही है ? क्या छोटे २ राष्ट्रों को फंसाने के लिए ही—"लीग आफनेशन्स" का जाल बिछाया गया है ? क्या मित्र दल इस समय, "मुंह में रामराम और बगल में छुरी" का काम करने को उतारू नहीं हो गए ?

सम्राट् की उद्घोषणा

प्रकाशित होगई है। इस में भी वे सब्ज़ बाग़ दिखाए गए हैं। जो कि स-म्राट के नाम पर की गई उद्घोषणा-ओं में प्राप्त हुआ ही करते हैं। इस में भी "इन्साफ" और "धार्मिक सहिष्णुता" की दोहाई की गई है परन्तु नौकरशाही और ब्रिटिश सरकार की नज़रों में इन शब्दों का वास्तविक आदर क्या है—यह पंजाब के हत्या काण्ड और खिलाफ़त के मामले में स्पष्ट हो जाता है। गवर्नरों को जो आदेश दिए गए हैं, इन में स्वेच्छाचारिता और ओडवायर शाही [illegible] स्थान छोड़ दिया गया है। [illegible] और मना-सकी है पर "गवर्नर-जनरल का अधि-कार अटूट रहेगा" और इस दृष्टि से वे दोषी एक दम देखना है ! सम्राट और उनके प्रतिनिधियों को यह समझलेना चा-हिए कि भारतवासी अब इन चमकीले शब्दों के [illegible] नहीं [illegible] है !

प्रवासी भारतवासियों को मत भूलो !

देश में इस समय "असहयोग" का जो प्रबल आन्दोलन हो रहा है वह स-र्वथा उचित है। परन्तु उसके जोश और क्रोध में हम कई आवश्यक प्रश्नों को अपनी दृष्टि से ओझल कर रहे हैं। उदाहरण के लिए प्रवासी भारतवासियों का प्रश्न है। यह अत्यन्त आवश्यक और महत्व पूर्ण समस्या है पर हम इसे बड़ी उदासीनता के साथ देख रहे हैं। इसका परिणाम देश के लिए बहुत बुरा होगा। हम पंजाब—हत्याकाण्ड के लिये हल्ला और मचा रहे हैं पर क्या हमें फिजी के प्रवासी देश भाइयों का ख़्याल नहीं क-रना चाहिये जहां गोरों ने दूसरा पंजाब-नाटक खेल डाला है ! वहां तो "हन्टर-कमीशन" ने, फिर भी, कुछ खोजकर ही ली पर वहां तो, भारत सरकार, कमीशन बिठाने से इन्कार ही करती है। हमारे ३० हज़ार पीड़ित भाई, सब कुछ बेचकर अपनी मातृ भूमि में लौटना आना चा-हते हैं पर हमें उनके प्रबन्ध का कोई ख्याल नहीं है ! हमने उन्हें शायद सौतेले भाई ही समझ लिया है ! दक्षिण अफ्रीका और पूर्वी अफ्रीका के देश भाइयों की दुर्दशा पर हमारे कान पर जूं तक नहीं रेंगती। यह प्रश्न असहयोग के पक्षपा-तियों और विरोधियों, गरम और नरम दोनों दलों के लिये समान महत्व का हो है। नेताओं का कर्त्तव्य है कि वे इधर शीघ्र ध्यान दें और एक ग़ैर-सरकारी क-मीशन, विशेषतः फीजी के लिये नियुक्त करके सारे मामले की जांच पड़ताल करावें !

एक मुंह में दो जीभः—

देश के नेता अब एक ही मुंह से दो आवाज़ निकालते हैं तब दो जीभ का सन्देह होना स्वाभाविक ही है। हमारे मान्य नेता ला० लाजपतराय जी इसी श्रेणी के नेता प्रतीत होते हैं। यह सब जानते हैं कि कलकत्ते की विशेष-कांग्रेस में, सभापति की हैसीयत से, उन्होंने सरकारी शिक्षालयों के बहिष्कार का विरोध किया था। पर लाहौर में व्या-ख्यान देते हुए उन्होंने विद्यार्थियों को "आर्ट्स कालेज" छोड़ देने का उपदेश दिया पर, फिर, कर्जन ब्रेडलाफ के सह-भोज में उन्होंने इस का विरोध किया। अब पिछले दिनों, वे अलीगढ़ गये थे और वहां "[illegible] मुस्लिम विश्ववि-द्यालय" के छात्रों के सम्मुख भाषण करते हुये उन्होंने इसी सिद्धान्त को पुष्ट किया पर, फिर बनारस में उन्होंने, सुना जाता है, मालवीय जी के साथ सहमति दिखाई अर्थात् शिक्षालयों के बहिष्कार का विरोध किया। अब उस दिन की कल-कत्ते की एक तार से मालूम हुआ है कि, प्रेस के एक प्रतिनिधि के साथ बात करते हुए उन्होंने अपने आपको सरकारी शि-क्षालयों से लड़कों को निकाल लेने का घोर विरोधी ठहराया और अलीगढ़ के भाषण की ओर निर्देश करते हुए आपने कहा कि "मेरा अभिप्राय यहां था कि छात्र विचारात्मक अध्ययन को छोड़ उ-द्योग धन्धों को सीखने की ओर अपने आपको लगावें।" श्री० लाला जी अभी और क्या कहेंगे—यह हम नहीं कह सकते पर इतना अवश्य कह सकते हैं कि—लाला जी के मुंह में दो जीभ हैं—जिनमें से एक असहयोग का विरोध करती है और दूसरा पोषण !!

(पृ० ६ का शेष)

इस दिन खेल समाप्त हुयी। पर परिणाम कुछ न निकला। दोनों पार्टियें बराबर रहीं। पर इस दिन गुरुकुल पार्टि को एक लाभ हुआ। मेरठ की जनता जो कि अब तक गुरुकुल के खिलाड़ियों की खेल से परिचित न थी आज जान गई कि सादगी में भी कई गुण होते हैं। केवल कोट पतलून वाले विद्यार्थी ही अच्छा नहीं खेल सकते परन्तु धोती प-हनने वाले भी अच्छा खेल सकते हैं। अस्तु, दूसरे दिन फिर खेल शुरू हुया। आधे समय गेंद ने गुरुकुल पार्टि को बड़ी धकमा दिया। यहां तक कि वह एक बार तो गोल में से भी निकल गई। पर अगले आधे समय में वह इस बुरी तरह गिरी कि मेरठ कालिज के गोल में से दो बार निकल गई। खेल समाप्त हुयी। मेरठ कालिज एक गोल से हार गया। टूर्नामेन्ट के प्रबन्धकर्ता म० मलिक घोस ने एक बार मास के सि-विल [illegible] के हाथ से गुरुकुल पार्टी को १२००) की चांदी की ढाल (shield) विजय के पुरस्कार में दी। तथा उन्हीं सा-हब के हाथ से एक एक सुवर्ण पदक प्र-त्येक गुरुकुल के खिलाड़ी को दिलाया, इस पुरस्कार वितरण के बाद भारत माता की जय, कुल माता की जय, आदि शब्दों से आकाश गूंज उठा। तथा गुरु-कुल पार्टी न [illegible] सम्मान के साथ मेरठ से विदाई ली। अन्त में हम सब गुरुकुल पार्टी के खिलाड़ी तथा गुरुकुल निवासी मेरठ की जनता को हज़ार हज़ार हार्-दिक धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकते जिन्होंने हमारा योग्यता से अधिक स-म्मान किया। जिन्होंने हमें खेल में अ-पनी जय ध्वनि से, तथा तालियों से बहुत उत्साहित किया। हमें ऐसी सभ्य जनता कभी नहीं भूलेगी। हम उनके सदा कृतज्ञ रहेंगे।

अखिल-भारतीय हाकी-टूर्नामेन्ट — मेरठ में

गुरुकुल-दल की विजय

१२००) की ढाल !

(निजूसंवाददाता द्वारा प्रेषित)

विजयाभिलाषिणी सेना की तरह बड़ी बड़ी उमंगों से भरे हुवे हमारे उत्साही हाकी के खिलाड़ी कुल माता के चरणों में प्रणाम कर मेरठ की तरफ विदा हुये। हरिद्वार से ६ बजे रेलगाड़ी चलती है। हम सब उस ही पर सवार हुये। गाड़ी भक भक करती हुई चल दी। हम में से बहुतों ने मेरठ शहर पहले कभी न देखा था। उसे तथा वहां के आदमियों को देखने की हमें बड़ी उत्सुकता थी। वहां के आदमियों के रीति रिवाज़, उनके स्वभाव कैसे हैं यह जानने के लिए हम लोग जल्दी २ मेरठ की तरफ बढ़े जा रहे थे। पर यह बात तो साधारण थी। हमारे देश के आदमियों के स्वभाव प्रायः एक से ही होते हैं इसलिए मेरठ वालों के स्वभाव भी वैसे ही होंगे। इसमें बड़ी उत्सुकता की बात नहीं थी। इससे भी अधिक उत्सुकता हमें एक चीज़ की थी। जिसके लिए कि हम मेरठ जा रहे थे। वह यह थी अखिल भारतीय हाकी टूर्नामेन्ट के देखने की। यह दूसरा समय था कि हम एक (टूर्नामेन्ट) में खेलने जारहे थे। हमने सुना हुआ था कि (टूर्नामेन्ट) में भारतवर्ष के कोने कोने से बड़ी २ खिलाड़ी पार्टियें आकर अपने हाथ की सफाई तथा अपनी धीरता का परिचय देती हैं। क्या गुरुकुल की पार्टी इस योग्य नहीं कि वह उसमें भाग ले सके? क्या हमारे खिलाड़ी इतने बड़े टूर्नामेंट में जाकर हार जाएंगे? क्या हम कुल भूमि के महत्व को अपने ही हाथों से नष्ट कर देंगे? यदि हम हार गये तो कुल माता का आशा-कुसुम अवश्य मुरझा जायगा। इस तरह के नाना विचार करते हुए शाम के ६ बजे हम मेरठ पहुंच गये। पहुंचते ही चिन्ह अच्छे न पाये। हम सबने धोतियें पहनी हुई थीं। यही गुरुकुल का वेश था। हमारे आचार्य की भी यही आज्ञा थी कि हम वहां पर इसी वेश में रहें। अभी हम स्टेशन के बाहर ही हुए थे कि हमें एक लड़का (वेश से विद्यार्थी मालूम पड़ता था) दीख पड़ा। जिसने हमारी हौकियों की तरफ देखकर पूछा कि क्या तुम लोग यहां के टूर्नामेन्ट में शामिल होने आये हो? हमने कहा हां, उसने हंसते हुये कहा कि हाकियें तो बड़ी अच्छी लाये हो पर यदि धोती खुल गई तो कैसे खेलोगे? हमने इसका कुछ उत्तर न दिया और मेरठ आर्यसमाज की तरफ चल दिये। वह विद्यार्थी भी एक ओर को चला गया। मेरठ आर्यसमाज में पहुंच कर हमने विश्राम किया। वहां के आर्य भाइयों ने हमारे रहने आदि का बहुत अच्छा प्रबन्ध किया था।

हम तीन दिन तक आर्यसमाज में एक तरह से विश्राम ही करते रहे, क्योंकि टूर्नामेन्ट में तीन दिन तक हमारे खेलने की बारी न थी। हम लोग खेलने को बड़े आतुर थे।

आर्यसमाज में तीन दिन काटने भी भारी पड़ गये। अन्त में १७ ता० आ पहुंची। हमें बड़ी प्रसन्नता हुई। क्योंकि आज से हमारी आतुरता लुप्त होगई। आज हमारा खेलने का दिन था। चार बजे (सायंकाल) में खेल थी। हम सब पीली धोतियें पहने क्रीडाक्षेत्र में जा पहुंचे। लोग आंख फाड़ २ कर हमारी धोतियों की तरफ देख रहे थे।

उन्हें यह सुनकर आश्चर्य हो रहा था कि हम भी टूर्नामेन्ट में भाग लेने गए हैं। हमारा वेश भारतवर्ष के प्रचलित खिलाड़ियों का वेश न था। हमने और खिलाड़ियों की तरह सिर पर मांग नहीं निकाली हुई थी। हमने उनकी तरह सुन्दर २ भड़कीली पोशाकें न पहनी हुई थीं। अन्य खिलाड़ियों की तरह हमने पांव में जुराब के साथ २ बूट न पहने हुए थे। हमारे पांव नंगे थे, सिर नंगा था। शरीर पर पीली धोतियें थी। इस लिए एकाकी बालों की गुलाम मेरठ की जनता को हमारे इस नए वेश (जो कि स्वदेशी था) आश्चर्य से देखना कुछ विचित्र न था। हमारे खिलाड़ियों ने खेलने के समय धोतियें उतार दीं। तथा निकर पहन कर सब क्रीडाक्षेत्र में आ उतरे। खेल शुरू हुवी। अधिक कहने की आवश्यकता नहीं। गुरुकुल पार्टी ने मेरठ की बी० टीम पर चार गोल कर दिए। आज के दिन हम विजेता रहे। दूसरे दिन मुज़फ्फरनगर की पार्टी से खेलना था। इस पार्टी को बढ़ावा तथा उत्साह देने वाले मुज़फ्फर नगर के स्वयं कलक्टर साहब क्रिश्चियन बनकर उपस्थित थे। यह पार्टी भी अच्छी खेलने वाली थी। पर शोक कि वह हमारे खिलाड़ियों को न जीत सकी हम से दो गोलों पर हार गई। तीसरे दिन (final) अन्तिम मुकाबला था। अन्य जितनी भी पार्टियें मेरठ टूर्नामेन्ट में आई थी उन्हें मेरठ कालिज की A. पार्टी ने जीत लिया था। यहां तक कि आगरे मेडिकल स्कूल की पार्टी को भी (जोकि बहुत ही अच्छी खेलने वाली थी) मेरठ कालिज की A पार्टी ने जीत लिया था।

इस लिए 'अन्तिम' में हमारा तथा मेरठ कालिज का मुकाबिला था। यदि हम इस में जीत गये तब तो हमारा आना सार्थक होगा अन्यथा हम लोगों का यहां आना एक तरह से निरर्थक ही होगा। हम लोग कुल माता के नाम पर कलंक लगाने वाले होंगे, उस उसके सच्चे पुत्र न कहलायेंगे। जब हमारे मन में यह विचार उठते थे तो एक बार हमारी नसों में जोश आ जाता था। हम सोचते थे कि क्या हम मेरठ कालेज से हार कर अपने संचित यत्किञ्चित यश पर धूल डाल देंगे। नहीं यह कभी नहीं होसकता। बस यही विचार करते करते शाम के तीन बज गए। हमारे खिलाड़ी क्रीडाक्षेत्र की तरफ बढ़े। मन में यही था कि यदि हम न जीते तो धिक्कार है हमको। पहुंच कर देखा क्रीडाक्षेत्र हज़ारों दर्शकों से भरा हुवा था। इस अन्तिम दिन के मैच को देखने के लिये मेरठ के बहुत आदमी आकर इकट्ठे हुवे थे। हम भी प्रति दिन की तरह निकरें पहन कर क्रीडाक्षेत्र में आन उतरे। दूसरी तरफ बड़े भड़कीले वेश को पहने मेरठ कालिज के प्रसिद्ध खिलाड़ी तयार खड़े थे। उनके गोल में १५० पदक जीतने वाला प्रसिद्ध गोल की पर इस आशा में खड़ा था कि एक बार भी किसी गेंद को गोल में से न जाने दूंगा। खेल शुरू हुवा। बड़ा कमाल का सामना हुवा। दोनों पार्टियें बड़ी तुली हुवी थी। बिचारी गेंद पिटती पिटती क्रीड़ाक्षेत्र से बाहर भाग भाग कर दूर जाती थी। पर फिर पकड़ कर लाई जाती थी। खेल समाप्ति तक दोनों पार्टियें बराबर रहीं।

(शेष पृष्ठ पांच के तीसरे कालम में देखो)

विचार-तरंग

"भयंकर अग्निकाण्ड"

'आग लग रही है आग लगरही है, चलो दौड़ो। बुझानेवालों की बहुत ज़रूरत है'॥ यह बात मेरे कानों में भी पड़ी किन्तु चारों तरफ देख कर मैंने तो यें कहा कि 'आग आग तो कहीं नहीं लगी यह हमारा, पड़ौसी—निराला आदमी यूं ही बकता है।'

एक और दिन जब कि मेरे साथी संगी आग बुझाने वालों का वेश भरे हुये मुझे साथ लेने के लिये आये तो मैंने इस पड़ोसी से भी कहा 'चलो, आग कहीं परोपकार करने चलें'। किन्तु उसका वही [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] पाया और मैंने [illegible] [illegible] उसे [illegible] [illegible] गालियां [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और कहने लगा '[illegible] [illegible] [illegible] हो, क्या नहीं देखते कि तुम में ही स्वयं आग लग रही है। मैं औरों की आग क्या बुझाऊंगा।' वे लोग ऐसे ही पागलपन की बातें कहा करते हैं। मैंने मुंह फेर लिया और [illegible] चल दिया। किन्तु वह कहता ही गया। 'अरे तुझे भी और की आग लग रही है। आकर अपनी आग बुझा। तुम [illegible] अपनी आग से चलते न जाने कितनों को जला आओगे'।

राह में और भी कई इसी श्रेणी के लोग मिले। एक ने तो (जो कि बहुत उतावला मालूम होता था) हमें सचमुच आग में [illegible] [illegible] कर दो चार उपदेश के भरे घड़े हम पर उलटा दिये। किन्तु हम अपना काम बना कर ही घर लौटे और यहीं समाचार लाकर सुनाया कि 'आग बुझा आये'।

निराले आदमी की फिर वहीं से आवाज़ आती है 'सचमुच आग? अपनी या किसी और की?'

इस ढंग द्वारा अपने स्वार्थ साधन के काम में मैं इस प्रकार बहुत बार सम्मिलित हुवा। किन्तु अन्त में चोटें खा खा कर एक दिन आंखें खुल गयी। आग सचमुच दिखाई देने लगी अपने लगी हुई आग दीखने लगी। ईश्वर की कृपा हुई। अपने लगी हुई इस भारी आग को बुझाने के लिये बड़ी घबराहट पैदा हुई। यह भी स्पष्ट हो गया कि वह दूसरों की आग बुझाने का बहाना करना सचमुच अपनी ही एक आग की क्षणिक शान्ति करने का एक वक्र उपाय है।

उस दिन से मैं निरन्तर अपनी अग्नि के शमन में [illegible] [illegible] हूं। यदि समीप में कोई [illegible] [illegible] [illegible] आग में जल [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] उसको भी [illegible] [illegible] [illegible] देता हूं। नहीं तो हर समय दिन और रात अपनी अग्नि शमन में ही लगा रहता हूं।

× × × ×

ओह! संसार में ऐसे लोग भी हैं जिन्हें आग लग रही है किन्तु उसकी उन्हें कुछ भी खबर नहीं। जिन्हें अपनी आग का ज्ञान हो गया है वे तो अग्निकाण्ड सूचक घंटी बजा कर सहायता के लिये दूसरों को बुलाते हैं या स्वयं उनके पास शरण पाने को जाते हैं अथवा अन्य कोई आग बुझाने का उपाय करते हैं। किन्तु उन शोचनीयता की पराकाष्ठा को प्राप्त पुरुषों की क्या गति होती होगी जो कि आग में फुंके जा रहे हैं किन्तु उन्हें इसका कुछ भी मालूम नहीं। उलटे औरों की आग बुझाते इधर उधर घूमते फिरते हैं।

सचमुच इस संसार में आकर सब से पहिले मुझे यही भासना है कि यहां आग लग रही है। भगवान बुद्ध की घोर तपस्याओं से प्राप्त चार महासत्यों में पहिला सत्य यही है कि संसार आग से जल रहा है। मुनिराज पतंजलि ने अपने योग शास्त्र के साधन पाद में यही सत्य बताया है कि विवेकी पुरुष के लिये संसार की सभी वस्तुयें आग बन कर संतापदायिनी हो जाती हैं। सन्त कबीर अन्य मनुष्यों से अलग खड़े हो कर जग में यही दृश्य देखते हैं और वर्णन करते हैं 'ई जग जरते देखियां, सब अपनी २ आगि" (असमाप्त)

शर्मन

पत्रों का सार

भूल संशोधन

१ 'श्रद्धा' के ३१ वें अंक में, पंजाब हत्या काण्ड, की समालोचना निकली है। जिसके [illegible] ठिकाना, उस में, "हिन्दी पुस्तक एजेन्सी, ११ नं०, नारायणप्रसाद बाबू लेन कलकत्ता" है। वस्तुतः होना चाहिए "भारतीय पुस्तक एजेन्सी, ११ नं०, नारायणप्रसाद बाबू लेन कलकत्ता "[illegible] निबन्धावलि" और " और स्वदेश [illegible]" के ठिकाने में ८८ की जगह नं० ११ होना चाहिए। आशा है पाठक ठीक करलेंगे।

२. लाहौर से "स्वराज्य" नाम का सन् १९२१ जनवरी से एक मासिक पत्र निकलने वाला है। इस में राजनैतिक विचारों के साथ २ जनता के व्याख्यानों का सार भी प्रकाशित किया जावेगा। वार्षिक मूल्य ५) पता स्वराज्य प्रेस-लाहौर है।

आवश्यक सूचना

गुरुकुल [illegible] [illegible] [illegible] कांगड़ी में नवीन ब्रह्मचारियों के प्रवेशार्थ प्रार्थना-पत्र दिसम्बर १९२० ई० के [illegible] तक कार्यालय में पहुंच जाने चाहिए। प्रवेशार्थ प्रार्थना-पत्र के फार्म तथा नियमावली गुरुकुल कार्यालय [illegible] [illegible] गुरुकुल कांगड़ी जिला बिजनौर [illegible] [illegible] [illegible] मंगा सकेंगे।

[illegible]
[illegible] अधिष्ठाता
गुरुकुल कांगड़ी

आर्यसामाजिक जगत्

मद्रास में प्रचार

पिछले दिनों मद्रास प्रान्त के "बंगलौर" शहर में वैदिक धर्म का जो प्रचार हुआ, उसका विस्तृत हाल हमारे "निजू सम्वाददाता" ने भेजा है। हम उसे यहां प्रकाशित करदेना आवश्यक समझते हैं जिस से आर्य भाइयों को पता लगे कि उधर कितना अधिक काम होरहा है-

"ता० ४ दिसम्बर शनिवार सायंकाल ५ बजे डौडपेट हाईस्कूल के विशाल हाल में आर्यसमाज की ओर से व्याख्यानों का प्रबन्ध किया गया। नियत समय पर हाल श्रोतागणों से भर गया था, जिन में से अधिकतर संख्या विद्यार्थियों की थी। सभापति का आसन बंगलौर सेंट्रल कालेज के इंगलिश के प्रोफेसर साहब ने सुशोभित किया। प्रथम व्याख्यान प० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार ने 'वैदिक धर्म तथा मूर्त्तिपूजा' विषय पर दिया इस में व्याख्याता महाशय ने वैदिक मन्त्रों के उद्धरण द्वारा यह सिद्ध करके दिखाया कि एकेश्वरवाद का परमात्मा दूर स्वरूप वेद ने बतलाया है और मूर्त्तिपूजा की शिक्षा वेदों में कहीं नहीं है। पौराणिक काल में इस का प्रचार हुआ है। पुराण वैदिक धर्म की मान्य पुस्तक नहीं है। मैक्समूलर आदि संस्कृत के [illegible] ने वेद के अर्थ करने में गलती [illegible] कि उन्हों ने सायण, महीधर [illegible] ग्रन्थकारों का अनुसरण किया है।' कुछ हिन्दू भाइयों ने व्याख्याता महाशय के इन स्पष्ट शब्दों का नापसन्द किया और अप्रसन्नता भी प्रकट की।

तत्पश्चात् प० देवेश्वर सिद्धान्तालंकार का "नौजवान जमाने का पैगम्बर दयानन्द" विषय पर व्याख्यान हुआ। इस में व्याख्याता ने यह बतलाया कि सब ही आचार्यों के उपदेशों में धर्म की अच्छी बातें यद्यपि हैं किन्तु वर्त्तमान समय में इस देश और जाति का सच्चा वैद्य दयानन्द ही हुआ है। उसी ने इस जाति के रोग का ठीक पता लगाया है। और औषधरूप से प्राचीन वैदिक धर्म की घुट्टी फिर से पिलाई है प्रेम और श्रद्धा की भेंट हम और आचार्यों और महान् पुरुषों को भेंट करते हैं पर आज्ञा पालन की भेंट दयानन्द के ही चरणों में करने का अवसर है। तत्पश्चात स्वामी धर्मानन्द ने कनड़ी में कनड़ी में भाषण किया। तत्पश्चात सभापति महाशय ने वक्ताओं के कथन की समालोचना करते हुए सब उपस्थित सज्जनों को अपने धर्म ग्रन्थों को पढ़ने और निष्पक्षपात दृष्टि से विचार करने की सलाह दी। अन्त में सभापति को धन्यवाद दान के साथ सभा समाप्त हुई।

आगे से इस प्रकार प्रबन्ध किया जा रहा है कि प्रति शनिवार [illegible] स्कूल के हाल में आर्यसमाज के व्याख्यानों का सिलसिला जारी किया जावे।'

वैदिक धर्मावलम्बियों को भी [illegible] विशेष सहायता देकर अपना कर्त्तव्य समझना चाहिए।

गुरुकुल वृन्दावन उत्सव

विश्वविद्यालय वृन्दावन का महोत्सव ता० २८ से ३० दिसम्बर तक होगा, स्वामी श्रद्धानन्द जी, स्वामी सर्वदानन्द जी, स्वामी सत्यानन्द, गोस्वामी अच्युतानन्द जी, भाई परमानन्द जी, प्रो० रामदेव जी, प्रिंसपल दीवानचन्द्र जी, प० केशवदेव जी शास्त्री, पं० गंगाप्रसाद जी, कुमारी लज्जावती जी प० इन्द्र चन्द्र जी, आदि २ व्याख्यान दाताओं के व्याख्यान होंगे। श्री महाराज साहिब भरतपुर ने भी उत्सव को सुशोभित करने का वचन देदिया है। आशा है कि सज्जन आर्य वृन्द गुरुकुल महोत्सव में सम्मिलित होकर धर्मानन्द लाभ करेंगे।

कांग्रेस पर प्रचार

हमें यह समाचार सुनकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि मध्यप्रदेश की प्रतिनिधि सभा ने नागपुर में होने वाली कांग्रेस में वैदिक धर्म के प्रचार का सुनिश्चित प्रबन्ध किया है। हम सहयोगी "भारतोदय" के इस कथन के साथ सहमत हैं कि ऐसे राजनैतिक उत्सवों में प्रचार बहुत फलदायक सिद्ध नहीं होता। कांग्रेस की लम्बी २ स्पीचों से थकी हुई जनता फिर अन्य धर्मोपदेश को ध्यान से सुनने के लिए तय्यार नहीं होती। ऐसे अवसरों की की अपेक्षा यदि साधारण मेलों में प्रचार की ओर विशेष ध्यान दें तो अधिक उत्तम होगा।

महात्मा गांधी और वर्णव्यवस्था

गत सप्ताह की यंग इण्डिया में श्री महात्मा गांधी जी ने वर्णव्यवस्था पर एक भावपूर्ण लेख प्रकाशित किया है। वह लोग जो चौधरी हुए जो लोग यह समझते हैं कि वर्णव्यवस्था से ही भारत का अधःपतन हुआ है उन्हें यह लेख पढ़कर अपना भ्रम अवश्य दूर कर लेना चाहिए। महात्मा जी के निम्नलिखित वाक्य अवलोकनीय हैं।

"मैं समझता हूं कि ये चारों भेद ही मौलिक, स्वाभाविक और आवश्यक हैं। असंख्य जो अन्य उपजातियां हैं वे सुगमता की अपेक्षा कठिनता ही पैदा करती हैं। इन [illegible] को धीरे २ संगठन और मिलजाना होरहा है और होना पड़ेगा। परन्तु जो ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के चार मौलिक भेद हैं, उन्हें, नष्ट करने में सर्वथा विरुद्ध हूं। वर्णव्यवस्था असमानता पर स्थित नहीं इस में ऊंच नीच का कोई सवाल नहीं है।" [हिंदी अक्षर हमारे हैं] वर्णव्यवस्था के विरोधियों को ये शब्द ध्यान से पढ़ने चाहिए।

"सत्य"

ओ३म्   Registered No A 870

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि ।
"हम प्रात काल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्नकाल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः ॥
(ऋ० म० १० सू० १५१, म० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! इस संसार में (हमें) श्रद्धायुक्त करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है { १७ पौष सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३८ ता० ३१ दिसम्बर सन १९२० ई० } संख्या ३७ भा० १

हृदयोद्गार

ईश विनय

हे अज अनादि अनन्त अनुपम अखिल लोक पते प्रभो,
विश्वेश विबुधाराध्य वेदातीत विद्यानिधि विभो
कल्पान्तकर करुणेश कौतुककान्त कामद श्री हरे,
प्रिय पार करा दो पाप पारावार मे हम हैं परे ॥ १ ॥
करुणेश ! अब हम क्या कहें कुछ भी कहा जाता नहीं,
हे दीन दुख हरि दूर टरे ! यह दुख सहा जाता नहीं
मुकुलित युगुल कर से प्रभो ! विनती यही है आप से,
ले लीजिये निज अङ्क मे कर दूर भव सन्ताप से ॥२॥

प० गया प्रसादजी (श्री हरी)

स्वामी दयानन्द का सत्याग्रह

जोधपुर मत जावो महाराज"—रोकते हो क्यो नाहक आह
रोकना कभी नही है ठीक हृदय में पूरा है उत्साह।'
बड़े विकट वहा के लोग—'नही है हम को भी परवाह"
जिन्हे दुख परोपकार में अगर नहीं है हमें सुख की चाह।
जिन्हे पड़े लाखों तकलीफ पड़े चाहे आफत से काम
मगर मर कर होगा उद्देश्य पूर्ण कर मैं लूंगा आराम ॥ १ ॥
पड़ेंगे पत्थर—"लो उन को समझ लूंगा फूलो की मार'
खुशी से गर्दन दे दूंगा चले गे अगर वहां तलवार"
झिड़कियां गालीमे भरपूर न होगा कहीं वहा सत्कार
"नहीं है तब भी कोई हर्ज कहूंगा उन्हें समझकर प्यार।
देश के हित मैं मैं हंसती अमर कारे अन्ता में काम
नहीं निकलेगी मुंह से आह, न लूंगा कभी दुख का नाम ॥२॥
बहेंगे वहा तुम्हारे खून—'हमी में बह जायेंगे पाप।'
जलायेंगे सब तेरे अंग—'जलेंगे साथ दुख सन्ताप।
देश वाटिका मे मेरा देह जहा [illegible] टपकायेगा नीर
हमारे बाद उन्ह [illegible] गहों पर पैदा होंगे लाखो वीर।
करेंगे पूरा मेरा मिशन वही मैं हुआ अगर नाकाम
चलूं मैं पहले बन कर वहा छेड़ दू पापो से संग्राम ॥' ३ ॥
अगर जाना ही निश्चय किया आपने वहा स्वामीवर आज
साथ कर देता हू रक्षक अकेले मत जाये महाराज !
"नही है रक्षक का कुछ काम सदा है धर्म हमारे साथ,
देश हित साधन मे जगदीश, बढ़ायेंगे रक्षा को हाथ।
जाओ सब, छोड़ो चिन्ता व्यथ, खुशी से देखो अपने काम
न होना शंकित, होगा सदा भले का अच्छा ही परिणाम ॥ ४

कर्मशील—

श्रद्धा के नियम

१ वार्षिक मूल्य भारत में ३॥), विदेश में ४॥), ६ मास का २) ।
२. ग्राहक महाशय पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।
३. तीन मास से कम समय के लिए यदि पता बदलना हो तो अपने डाकखाने से ही प्रबन्ध करना चाहिए।

प्रबन्धकर्ता श्रद्धा
डाक० गुरुकुल कांगड़ी (जिला बिजनौर)

परमात्मने नमः ।

मानव धर्मशास्त्र की व्याख्या

पहिला अध्याय

(गतांक से आगे)

सतांहि सन्देहपदेषु वस्तुषु प्रमाणमन्तः करण प्रवृत्तयः ।

वेद में इसको बहुत ही स्पष्ट कर दिया है:—

दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत् सत्या नृते प्रजापतिः ।
अश्रद्धामनृते दधात् श्रद्धा सत्ये प्रजापतिः

परमात्मा ने मनुष्य के अन्तःकरण को ही धर्मा धर्म का विवेचक बनाया है; उसके अन्दर धर्म (सत्य-वस्तु) के लिए श्रद्धा और अधर्म अनृत-वाक्य) के लिए अश्रद्धा का भाव स्थापन कर दिया है। इस लिए सतपुरुषों के आचरण के लिए साक्षी अपने अन्दर ही तलाश करनी चाहिए।

कामात्मता न प्रशस्ता न चैवेहा कामता
काम्यो हि वेदाधिगमः कर्मयोगश्च वै-
दिकः ॥ २ ॥

अर्थ—न तो इच्छाओं का पुंज होना अच्छा है और न इच्छाओं का सर्वथा लोप ही अच्छा है क्यों कि वेद की प्राप्ति और (वैदिक) कर्मों का अनुष्ठान कामना करने को योग्य ही है।

टि० आचार का आश्रय ही कामना है। वेद का ज्ञान प्राप्त किए बिना वैदिक कर्म समझ में नहीं आते और उनके समझे बिना कर्म में प्रवृत्ति नहीं होती, अतएव कामना करना आवश्यक होजाता है। परन्तु उस कामना का प्रेरक कौन है?

संकल्प मूलः कामो वै यज्ञाः संकल्प
संभवाः ।
व्रतानियम धर्माश्च सर्वे संकल्प
जाः स्मृताः ॥ ३ ॥

अर्थ—संकल्प होने से ही कामना उत्पन्न होती है। यज्ञ भी सब सब संकल्प से ही संभव होते हैं; व्रत नियम धर्म ये सब संकल्प से ही होते हैं।

टि० संकल्प उस विचार को कहते हैं। जिसके बिना कामना हो ही नहीं सकती। इष्ट फल की प्राप्ति की इच्छा के बिना का कार्य में प्रवृत्ति ही नहीं होती जैसा संकल्प हो वैसी कामना होती है।

● समाप्त

श्रद्धानन्द सन्यासी

नागपुर कांग्रेस के सभापति

श्रीयुत विजय राघवाचार्य्यर !

दक्षिण-केसरी के जीवन पर कुछ विचार

(श्री० सत्यभिक्षु द्वारा संकलित)

श्री युत विजयराघवाचार्य का कांग्रेस के प्रधान पद के लिए निर्वाचन एक बड़े मार्के की घटना है। कांग्रेस पुरानी होगई है पर श्रीयुत आचार्य के जीवन की कहानी अभी नवीन ही है। यह कथा आज से ८० वर्ष पूर्व की है जब कि नई सन्तति राजनैतिक क्षेत्र में अभी तक उतरी भी नहीं थी। सरकार की कोई ऐसी कठोरता नहीं है जिस में से आज के हमारे चरित्र नायक नहीं गुजरे। आजन्म देश निर्वासन का दण्ड उन्हें दिया गया था यद्यपि हाईकोर्ट ने उसे रद्द कर दिया।

× × × ×

सुप्रीम कौन्सिल के भी श्रीयुत आचार्य कई वर्ष तक सभासद रहे। यह पहिला व्यक्ति था जिस ने लार्ड हार्डिंग की बम्ब दुर्घटना के बाद षड्यंत्र बिलका विरोध किया था। यद्यपि उनका विरोध व्यर्थ हुआ पर तो भी वे निराश नहीं हुए। वे पहिले व्यक्ति थे जिन्होंने सरकार द्वारा दी हुई दिवान "बहादुरी" का परित्याग किया। श्री० आचार्यर लम्बे सुन्दर विशाल भाल और वैष्णवमतावलम्बि हैं।

आपके चेहरे और शरीर की बनावट इस प्रकार की है कि एक बार देख कर फिर आपको भुलाया नहीं जा सकता। यद्यपि उनकी आयु ७० वर्ष से भी ऊपर है पर उनका हृदय अब भी नवीन आशाओं से पूरित है। उनकी यह आकांक्षा है कि वे प्राचीन काल के मनुष्यों की तरह वे १२० वर्ष तक जीवित रहें। हमारे पाठक सुन कर आश्चर्य करेंगे कि आप अभी तक नौका चलाते हैं।

सूरत के झगड़े के बाद से आप कांग्रेस से अलग होगए। इसी लिए, दक्षिण की राजनैतिक परिषद् में जब उन्हें सभापति चुना गया तो उन्होंने, अत्यन्त नम्रता पूर्वक, अस्वीकृत कर दिया। सुप्रीम कौन्सिल में उस समय एक वही व्यक्ति था जो षड्यंत्र बिल के बिरुद्ध लड़ रहा था। लार्ड हार्डिङ्ग की बम्ब दुर्घटना के कारण कौंसिलों में से जीवन तत्व सर्वथा नष्ट होगया था और सभी सरकार के साथ मिल गए था। श्रीयुत आचार्यर असहायता की इस अवस्था से ऊपर उठे और बिल में कई संशोधन उपस्थित किए जो एक २ करके सभी गिर गए। उन्होंने कई बार, कौन्सिल, में विभाग (डिविजन) करवाया जिस में दूसरी ओर अकेले वही हुआ करते थे। इन घटनाओं ने आपको डांवांडोल करने के स्थान में और भी दृढ़ कर दिया। वे अपने आपको नरमदल का नहीं कहना चाहते थे। इस सम्बन्ध में उनके विचार कितने दृढ़ थे—इसका प्रमाण एक निम्न घटना से मिल सकता है। लाहौर के षड्यंत्र के मुकद्दमे में पं० रामभजदत्त चौधरी के विषय में साक्षी लेने के लिये डिस्ट्रीक्ट मैजिस्ट्रेट ने आपको एक बार बुलाया। यह पूछने पर कि पं० रामभजदत्त क्या नरम दल के हैं, श्रीयुत आचार्यर ने दृढ़ता पूर्वक कहा "मुझे नहीं मालूम कि नरम कौन हैं? मुझे डरपोक और सच्चे आदमियों में भेद पता है परन्तु मैं किसी नरमदल के व्यक्ति का सम्मान नहीं दे सकता?"

× × × ×

उन्हीं दिनों वह हल चल प्रारम्भ हुई जिसके साथ मिसेज बेसेन्ट का नाम जोड़ा जाता है। श्रीयुत आचार्यर यद्यपि शान्त रहे पर उन्होंने इस आन्दोलन में पूर्ण साथ दिया। इस चुप्पी को देख कर ही शायद लार्ड पेटलेंड की सरकार ने आपको "दिवान बहादुरी" का खिताब देने का साहस किया, परन्तु आपने यह उपाधि अस्वीकृत की। दक्षिण

(शेष पृ० ६ पर देखो)

श्रद्धा

'टूर्नामेण्ट' से शिक्षा लो !

मेरठ की "अखिल भारतीय-हाकी टूर्नामेण्ट" में गुरुकुल दल को जो विजय प्राप्त हुई है, उस का संक्षिप्त वृत्तान्त, पिछले अंक में, पाठकों की सेवा में रक्खा जा चुका है। यह घटना ऐसी नहीं है जो अचानक हो गई हो पर उस कठोर-अभ्यास का परिणाम है जो कि गुरुकुल के प्रत्येक छात्र के लिए आवश्यक है। इस विजय ने गुरुकुल विरोधियों का जहां मुंह तोड़ उत्तर दिया है वहां गुरुकुल प्रेमियों का सिर ऊंचा करके संसार को यह दिखा दिया है कि इस प्रणालि में कितना महत्त्व है। न केवल गुरुकुल कांगड़ी अपितु इस प्रणालि पर चलाये गये प्रत्येक गुरुकुल के लिए यह घटना अभिमान और गौरव का स्थान हो सकती है।

गुरुकुल का यह दावा है कि इस में पाले गये छात्रों का न केवल मानसिक अपितु शारीरिक-विकास भी पूर्ण होता है। ब्रह्मचर्य्य की रक्षा द्वारा उन का स्वास्थ्य उत्तम और अंग सुदृढ़ होते हैं। सरकारी शिक्षणालयों से, गुरुकुल की अन्य कई विशेषताओं के अतिरिक्त, यह भी एक बड़ी भारी विशेषता है कि इस में शारीरिक शिक्षा को भी उचित स्थान दिया जाता है।

गुरुकुल के विरोधी, प्रायः यह कहते हुये सुने गये हैं कि यहां के छात्रों का स्वास्थ्य उत्तम नहीं होता ? इस आक्षेप का उत्तर देने से पूर्व हमारा यह कार्य्य अप्रासङ्गिक न होगा यदि हम 'स्वास्थ्य' इस शब्द पर अपने कुछ विचार प्रकट कर दें।

यह प्राय समझा जाता है स्थूल शरीर फूली हुई नाड़ें और हाथ पैरों की नज़ाकत 'स्वास्थ्य' का चिन्ह है। यदि यह ठीक मान लिया जावे तो लम्बी तोंद वाले हमारे सेठ साहूकार सब से अधिक स्वस्थ समझे जाने चाहियें। वस्तुतः, सत्य कुछ और है। उत्तम स्वास्थ्य वही कहा जा सकता है जो बाह्य-परिवर्तनों (अर्थात् सर्दि-गर्मी, वर्षा धूप, भूख-प्यास, जल आग इत्यादि) के सामने डांवाडोल न हो। सच्चे मित्र की न्याईं ऐसी कठिन परीक्षाओं में जो पूरा उतर आवे वही वास्तविक स्वास्थ्य है।

परन्तु यह स्वास्थ्य कैसे प्राप्त हो सकता है ? क्या भोग मय जीवन से ? नहीं ; इस के लिए कठोर तपस्या, स्थिर सहनशक्ति, चिरकालिक अभ्यास और अविच्छिन्न व्रत की आवश्यकता है। जो शरीर इन कठिन परीक्षाओं की भट्टी में से गुज़ारा जा कर कमाया नहीं गया वह बाह्य-परिवर्तनों के आने पर उसी प्रकार पतित हो जाता है जिस प्रकार आंधी के आगे कच्ची जड़ का पेड़ ! परन्तु एक बात कभी नहीं भूलनी चाहिये। मिट्टी के कारण फूले हुये कच्चे लोहे को जब भट्टी में तपाया जाता है और लुहार के हथौड़े के नीचे मार खाकर जब वह 'पक्का' बनता है तब, अनावश्यक पदार्थ के निकल जाने के कारण, उसका पतला होना स्वभाविक है और अनिवार्य्य है। इसी प्रकार तपस्या और कठोर व्रत के, दृढ़ सहनशक्ति के साथ, पालन में शरीर यदि अपनी अनावश्यक मोटाई खो दे तो वह उचित ही है। इस से शारीरिक स्वास्थ्य की स्थिरता में सहायता ही मिलती है, रुकावट नहीं।

गुरुकुल के छात्रों का स्वास्थ्य इसी प्रकार स्वास्थ्य है। वह ऋतुओं के ज़बरदस्त थपेड़ों के सामने खूब परखा जा चुका है। तपस्या और अभ्यास के कारण बना हुआ उनका कृश देह उस सेवक के समान होता है जो कि स्वामी की आज्ञा पर, रात और दिन, अनथक परिश्रम कर सकता है। गुरुकुल के छात्रों के पतले दुबले और नाटे शरीर के पीछे एक ऐसी शक्ति छिपी होती है जो हर प्रकार के कष्ट और यातनाओं को सुगमता पूर्वक सहन कर सकती है।

ऐसे ही शरीरों और अंगों के साथ इस शिक्षणालय के छात्र मेरठ की टूर्नामेंण्ट में गये थे। कई हंसते थे, मज़ाक करते थे और कई ब्रह्मचारियों के पतले शरीरों को देख तरस खाते थे। परन्तु जब विजय का सेहरा गुरुकुल दल के माथे पर बंध गया तब जनता को पता लगा कि पतले में भी ताकत होती है, दुर्बल में भी बल होता है, क्षीण में भी शक्ति होती है और कृश में दृढ़ाङ्गता हो सकती है। शिक्षित जनता को अब यह समझ लेना चाहिये कि छिपे रुस्तम जंगलों के खुले और स्वच्छ वायु मण्डल में, ब्रह्मचर्य्य की नींव पर ही, तैय्यार हो सकते हैं, शहरों की गन्दी और तंग गली-कूचों में नहीं।

ब्रह्मचारियों द्वारा दिखाये गये जहां शारीरिक खेल (जंजीर तोड़ना ; मोटर रोकना, छाती या पेटपर से गाड़ी उतारना ;पत्थर तुड़वाना इत्यादि) इन के शारीरिक बल का परिचय देते हैं वहां टूर्नामेण्ट की ऐसी उल्लेखनीय विजय उन की फुरती, दृढ़ता, चतुरता और स्थिरता के प्रमाण हैं।

गुरुकुल शिक्षा प्रणालि की विजय का यह भी एक ज्वलन्त उदाहरण है। ऐसे उदाहरण विरोधियों की आंखों में अंगुली दे २ कर बतला रहे हैं कि शारीरिक शक्ति में भी गुरुकुल के छात्र अपने उद्देश्य से पीछे नहीं हैं।

—:•:—

मित्रों की आशा पर पाला !

पड़ गया। क्यों ? क्योंकि ग्रीस का महाराज कान्स्टाईन, मित्रों की इच्छा के विरुद्ध पर प्रजा की इच्छा से राजगद्दी के लिए पुनः निर्वाचित किया गया है। मित्रों को आशा थी कि ग्रीस को अपनी कठपुतली बनाते हुए वे टर्की से, ज़बरदस्ती, सन्धि के अनुसार कार्य करवायेंगे। मित्रों को विचार था कि साइबेरिया में सेना तो ग्रीक की रहेगी पर मतलब उनका पूरा होगा। दौर्भाग्य से, पर, अब ऊंट ने करवट बदल ली है।

टर्की सन्धि के प्रति उसने वह कठोर भाव बदल लिया है जो वेनिज़ल के मंत्री मण्डल के चक्र में पड़ उसे बनाना पड़ा था। साइबेरिया से भी वह अपनी सेना वापिस बुलाने का उद्योग कर रहा है। मित्रों के हाथ-पांव अभी से ठण्डे होने लगे हैं। विलायती डाक देखने से पता लगता है कि

इस नई अवस्था के खड़े होजाने के कारण टर्की के भाग्य चक्र में फिर कुछ परिवर्तन होगा। हवा का रुख, देखें, अब किधर को रहता है?

पुराना जाल फिर!

भारतवासी स्वभावतः ही भोले भाले होते हैं। वे सम्राट् की चमकीले उद्घोषणा पत्रों और बड़े २ "रायल कमीशनों" के लुभावने जाल में जल्दी फंस जाते हैं। परन्तु नौकरशाही बड़ी चलाक हैं और वह इन में ऐसे शब्द रखती है जो रबर की तरह सब ओर मुड़सकते हैं। देश के नेताओं ने 'असहयोग' नीति की उद्घोषणा करके संसार को यह दर्शा दिया है कि ब्रिटिश मंत्री मण्डल की नीति पर अब उन्हें तनिक भी विश्वास नहीं है। परन्तु हम देखते हैं कि भारतियों का विश्वास प्राप्त करने के लिए "उद्घोषणा" का फांसा फिर तय्यार होने वाला है। अपने को भारत के 'मित्र' और 'उदाराशय' कहने वाले कुछ अंग्रेज सज्जनों ने फिर इस बात के लिए आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया है कि भारत सरकार सब प्रकार के नेताओं की एक ऐसी कान्फ्रेन्स करें जिस में वर्तमान परिस्थिति पर विचार किया जावे। उसी अवसर पर सम्राट् की ओर से उद्घोषणा की जावे जिस में भारतीय स्वराज्य की अवधि स्पष्ट शब्दों में बताई गई हो इत्यादि। "एक्स, वाई, जैड" अक्षरों के एक गुप्त नाम लेखक ने बम्बई के 'टाइम्स आव—इण्डिया" में इसी आशय का प्रस्ताव किया है। उधर से मान्टेगू के दूत बन आये कर्नलवेज्वुड भी यही तूती बजा रहे हैं। हम अपने देश भाइयों को अभी से सचेत करदेना चाहते हैं कि कि वे इस भंवर में फंसने का फिर साहस न करें।

"जिस पत्तल में खाया उसी में छेद"

भारत में कई विदेशी आये। उन्होंने इस देश को खूब लूटा। पर उनकी लूट का माल, प्रायः भारत ही में रहा। परन्तु अब जो विदेशी जाति हम पर राज्य कर रही है, वह हमारी गाढ़ी कमाई के पैसे से, सात समुद्र पार एक छोटे से टापू में, बड़े २ महल और शहर तय्यार कर रही हैं, हमारी ही फौजों से मनुष्य जाती के गले कटवा अपना साम्राज्य बढ़ा रही है। इसके बदले में हमें क्या मिलता है—पंजाब का हत्या कांड, डायर के गोले और ओड्वायरशाही और पशुवत् व्यवहार। हमारा नमक खाकर हमारी ही निन्दा के एक नहीं अनेक उदाहरण अंग्रेज जाती के व्यक्ति दे सकते हैं। ताजा उदाहरण लीजिए। कुछ वर्ष पूर्व सर-वैलिंग टाईन शिरोल भारत में आये थे। भारत के ही महमान होकर उन्होंने "इण्डियन अनरैस्ट" नामक पुस्तक लिखी जिस में लोक मान्य तिलक जैसे पूज्य नेताओं की भरपूर निन्दा की गई थी। आजकल, "टाइम्स" के विशेष संवाददाता बन वे फिर भारत में आए हुए हैं। आप उसी नौकरशाही के महमान हैं जो कि हमारे पैसे ही से अपनी थैलियां भर रही हैं। सर शिरोल इस महमानी का बदला क्या देंगे- यह अनुमान करना कठिन नहीं हैं।

लो० मान्यतिलक का रंगीन चित्र--

हमें पूना की चित्रशाला से प्राप्त हुआ है। यह १६×२० आकार का है। चित्र बहुत भव्य मनोहर और चित्ताकर्षक है। प्रत्येक देश भक्त को राष्ट्र सूत्रधार लोकमान्य का यह चित्र अपने कमरे में अवश्य रखना चाहिये। हमारे शिक्षित भाई अश्लील चित्रों के स्थान में यदि राष्ट्रीय नेताओं के ऐसे सुन्दर चित्र अपनी बैठकों में लटकाया करें तो बहुत लाभ हो सकता है। चित्रशाला के संचालकों को हम इस सफलता के लिए बधाई देते हैं। दाम १२ आने हैं जो कि चित्र की उत्कृष्टता को देखते हुवे कुछ भी नहीं हैं।

इङ्गलैण्ड में निठल्लापन!

मैशीनरियों की हानियों में एक अनिवार्य दोष बे-रोजगारी भी है जो कि इस समय इंग्लैण्ड में बढ़ रही है। "जर्मनी और अमेरिका में ब्रिटेन से भी अधिक बेरोजगारी है" यह कह कर यद्यपि लायडजार्ज अपनी आत्मा को और प्रजा को पुचकारना चाहते हैं परन्तु इस से, अब, कुछ नहीं बनता। इंग्लैण्ड में कई लाख आदमी निठल्ले बैठे हैं और यह दोष इस अवस्था तक पहुंच गया है कि सरकार को एक कमिटि बिठा कर जांच-करवानी पड़ी है। कमेटी की रिपोर्ट प्रकाशित हो गई है और उसने भिन्न २ स्थानों पर ऐसे निठल्ले लोगों के लिये काम ढूंढ़ निकालने के लिए तजवीज़ पेश की है। इतना होने पर भी बे-रोज़गार की संख्या घटने के स्थान पर बढ़ रही है। पश्चिम के अनुकरण में भारत में भी जो कलाओं का प्रचार बढ़ाना चाहते हैं—उन्हें इस अवस्था से शिक्षा लेनी चाहिये।

प्रधान और सभापति के भाषण--

नागपुर कांग्रेस की स्वागत के प्रधान श्री सेठजमनालाल बजाज का भाषण, निसन्देह, बहुत उत्तम और सामयिक था। आपने पूरे बल के साथ असहयोग का पोषण किया। देश और जाति के गौरव रक्षा की ओर नेताओं का जो ध्यान आपने आकर्षित किया—वह प्रशंसनीय था। परन्तु सभापति श्री विजयराघवाचार्य का भाषण पढ़ हमें अत्यन्त दुख हुआ। पढ़ते समय हमें कई बार यह ध्यान आया कि हम शायद नरम सभा के प्रधान श्री० चिन्तामणि का भाषण पढ़ रहे हैं। आज से १० वर्ष पूर्व यदि यह भाषण दिया जाता तो शायद इस का कुछ मूल्य होता पर आज तो यह रद्दी की टोकरी के लायक ही समझना चाहिये। शोक है, श्री आचार्य इस सचाई को न समझ सके कि कांग्रेस का प्रधान जाति का प्रतिनिधि है। इस लिए निजू सम्मतिओं को पीछे करते हुवे जाति के विचारों को प्रतिध्वनित करना ही उसका प्रधान कर्त्तव्य है। श्री आचार्य वृद्धावस्था के कारण, समय का गति से यदि पछड़ गये तो इस में उनका उतना दोष नहीं जितना कि उनकी इस अवस्था का है।

शिक्षा जगत्

प्रशंसनीय दान!

भारत-मध्य सागर की जलधाराओं को चीरती हुई असहयोग की लहर दक्षिण अफ्रिका के तट पर थपेड़े मारने लगी है-यह प्रसन्नता की बात है। वहां की जनता इस आन्दोलन को सफल बनाने का प्रयत्न कर रही है। इस का स्पष्ट प्रमाण उस दान से मिलता है जो कि ट्रंसवाल के प्रसिद्ध सत्याग्रही वीर श्री० रुस्तम जी ने, अभी, महात्मा गान्धी के चरणों में समर्पित किया है। आप ने राष्ट्रीय शिक्षणालयों के लिए ४० हज़ार रुपये का दान देते हुये यह आशा प्रकट की है कि १० हज़ार रुपये की ४ किश्तों से चार अथवा ५ हज़ार की ८ किश्तों से आठ राष्ट्रीय विद्यालय चलाये जावेंगे। राष्ट्रीय-शिक्षा के प्रचार में यह धन बहुत सहायक हो सकता है। रुपये का इस से बढ़ कर और सदुपयोग क्या हो सकता है? मैं अन्य धनीमानी सज्जनों का इस ओर ध्यान खींचे बिना नहीं रह सकता।

'स्वतंत्र बनो!"

ये अन्तिम शब्द थे उस व्याख्यान के जो भारत-हितैषी श्री० सी. एफ़. एन्ड्रूज़ ने, पिछले दिनों, बम्बई के छात्र-सम्मेलन मे सभापति की हैसियत से, दिया था। एन्ड्रूज़ महोदय ने अपने जीवन की घटनायें और अनुभव सुनाते हुये यह माना कि वर्तमान शिक्षा पद्धति अत्यन्त दोष युक्त और हानिकारक है। छात्रों को राष्ट्रीय-शिक्षा की आवश्यकता और महत्त्व बताते हुये आपने यह कहा कि भारत की दिमाग़ी गुलामी को दूर करने की यदि कोई अमोघ औषध है तो वह जातीय-शिक्षा ही है। आपने कहा कि "यह कहते हुये मुझे लज्जा आती है कि दस वर्ष मैंने दिल्ली में अध्यापक का कार्य्य किया किन्तु उन विद्यार्थियों में से आज मुझे कोई भी ऐसा नज़र नहीं आता जिसे शिक्षा का वास्तविक फल प्राप्त हुआ हो।" परन्तु उस का क्या उपाय है? किस प्रकार हमारे छात्र शिक्षा का वास्तविक फल प्राप्त कर सकते हैं? इस का उत्तर भी एन्ड्रूज़ महोदय वही देते हैं जो संसार के इतिहास ने आज तक दिया है और आगे भी देगा अर्थात् "मैं असहयोग का स्वागत करता हूं और तुमसे कहता हूं कि तुम स्वतन्त्र बनो।" क्या भारत के युवक छात्र इस स्वतंत्रता के लिए अब भी कमर नहीं कसेंगे?

"मूंड मुंडाते ही ओले पड़े"!

इस कहावत का ठीक उदाहरण बर्मासरकार की 'रंगून यूनिवर्सिटी' ने दिया है। वहां के स्वेच्छाचारी शासक सररेजिनाल्ड क्रेडक महोदय ७ दिसम्बर को इस नये विश्वविद्यालय का उद्घाटन संस्कार करने गये ही थे कि ६ दिसम्बर के दिन उस कालेज के सब छात्रों ने जो संख्या में ८०० लगभग हैं हड़ताल करदी। इस के अतिरिक्त वहां के प्रायः सब छात्रों ने सरकारी विद्यालयों का बहिष्कार कर दिया है। इस असन्तोष का प्रधान कारण वहां के शासकों की ओछ्मायरशाही है। एक बौद्ध त्योहार के दिन मिशनरी स्कूल के अधिकारियों ने छुट्टी देने से इन्कार कर दिया जिस से छात्रों में बहुत असन्तोष फैला और वे उस दिन स्कूल नहीं गये। अगले दिन जो छात्र अनुपस्थित थे उनसे भारी जुर्माना मांगा गया। उन्हों ने चार आना फी आदमी जो कि ऐसी गैर हाज़िरी के लिए साधारण जुर्माना है, इस से अधिक देने से इन्कार कर दिया पर विद्यालय के अधिकारियों ने भी उस से मत नहीं की। छात्रों को बाधित हो, हड़ताल करनी पड़ी। मुझे यह लिखते हुए अत्यन्त हर्ष है कि छात्र अभी तक पूर्णतया दृढ़ हैं और वहां की जनता भी उनका पूरा साथ देरही है।

नौकरशाही के कबूतर घरों में भी गान्धी की जय

पंजाब की भूमि अपनी नवीनता और वीरता के लिए सदा प्रसिद्ध रही है। इसका एक ताजा उदाहरण उस दिन मिला जब कि सरकारी विश्वविद्यालय के छात्रों को नौकरशाही के शानदार कबूतर घर में दासता की उपाधियां दी जारहीं थीं। उपाधि वितरण के अन्त में छात्रों ने "सम्राट् की जय" और "जार्ज पंचम की जय" बोलने स्थान में हमारे हृदय सम्राट् "गांधी की जय" बोल दी। हमारे युवकों में कैसे भाव काम कर रहे हैं —नौकरशाही यह बात इसी घटना से समझ सकती है। "माथु"

पत्रों का सार

म० जानकी प्रसाद जी सूचित करते हैं कि "काशी-नागरी-प्रचारणी सभा ने हल्दौर जिला बिजनौर के वैद्य गोपीनाथ गुप्त को "मनुष्य का भोजन" नामक पुस्तक लिखने पर रजत पदक दिया।

२. राष्ट्रीय हिन्दी-मन्दिर के संचालक गण सूचना देते हैं कि इस नामकी एक संस्था, अखिल-भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के गत अधिवेशन (पटने में) स्वीकृत प्रस्ताव के अनुसार जबलपुर में, देश भक्त पं० मालवीय जी के हाथों से, संस्थापित हो चुकी है। इस का उद्देश्य, पुरस्कार इत्यादि द्वारा हिन्दी के विद्वान सुलेखकों से उत्तम साहित्य तैय्यार करवाना है। इस के लिए दसलाख रुपये चाहिये। अभी तक ७५,०००) जमा हो चुके हैं। इस संस्था की ओर से "श्री शारदा" मासिक पत्रिका के अतिरिक्त "रवीन्द्र दर्शन" और कालिदास" नामक दो ग्रन्थ भी निकल चुके हैं। लेखकों और धनियों से सहायता की प्रार्थना की गई है। विस्तृत नियम सूचि इस पते से मिल सकती है राष्ट्रीय-हिन्दी मन्दिर, कार्यालय कांग्रेस बाज़ार धनतौली नागपुर।

हमारी डाक

श्री० सम्पादक 'श्रद्धा' जी!

निम्न पंक्तियों को अपने अमूल्य पत्र में स्थान देकर अनुगृहीत करें।

'श्रद्धा" के ३५ वें अंक में "शिक्षा-जगत्" में श्रीयुत सत्यभिक्षु जी ने लिखा है कि पूना के तिलक महाविद्यालय में हिन्दी को पाठ्य क्रम में नहीं रक्खा गया है।

क्या मैं आपके अमूल्य पत्र द्वारा इस समाचार का खण्डन, आपके पाठकों तक, पहुंचा सकता हूं? वस्तुतः, सत्य यह है कि अंग्रेजी और संस्कृत के साथ२ हिन्दी भी पाठ्य क्रम में आवश्यक विषय के रूप में रक्खी गई है। उस दिन पूना की सभा में श्री केलकर जी ने यही कहा और १२ दिसम्बर के मरहटा पत्र में भी यही प्रकाशित हुआ है। हिन्दी का आदर देश के लिए अब अनिवार्य होगया है।

पूना } भवदीय
१३ माघ } 'क्ष'

गुरुकुल-जगत
गुरुकुल कुरुक्षेत्र

ऋतु आज कल अत्यन्त मनोहारी हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से चारों ओर सर्वत्र आनन्द मंगल है। आसपास कहीं ग्रामो आदि में ज्वर का नामोनिशान भी नहीं है। सब ब्रह्मचारी बड़े आनन्द पूर्वक और हृष्ट पुष्ट हैं। औषधालय में इस समय एक भी ब्रह्मचारी नहीं है। श्री डाक्टर जी का भी दिन भर इधर उधर गुरुकुल के प्रबन्ध सम्बन्धी कामों के अतिरिक्त और कुछ काम नहीं है। प्रबन्धकर्ता ला० नौबतराय जी का स्वास्थ्य इधर उधर फिरने से कुछ खराब हो गया था किन्तु अब ईश्वर की दया से आप बिलकुल स्वस्थ्य हैं और फिर उसी उत्साह से आपने कार्य में लगे हुए हैं।

पठनपाठन भी भलीभांति चल रहा है। विद्यार्थी तथा अध्यापकगण दोनों ही खूब परिश्रम पूर्वक अपने २ कामों में लगे हुए हैं।

दिन भर पठनपाठन से थककर सायंकाल ब्रह्मचारियों को खेलने में जो आनन्द आती है वह अकथनीय है। यहां, कई दिनों से ब्रह्मचारियों को हौकी खिलाने का विचार हो रहा था किन्तु धन के अभाव से यह काम रुका पड़ा था। बड़ी प्रसन्नता की बात है कि म० बलीशसिंह जी संरक्षक ब्र० रत्नपाल ४र्थ लाहौर निवासी ने ३०) इसी काम के लिये दे गए हैं। अब आशा है कि शीघ्र ही हौकी खेलने का भी समुचित प्रबन्ध कर दिया जावेगा।

उत्सव में अब लगभग २ मास ही शेष रह गए है। आसपास की सफाई का काम प्रारम्भ हो गया है। अबकीवार उत्सव तक और भी कई नवीन परिवर्तन करदेने का यहां विचार है जो कि आशा है शीघ्र ही जनता के सम्मुख आ जावेंगे।

शाखा के लिए दान के विषय में कईवार जनता से प्रार्थना की गई है किन्तु शोक है कि अब तक हमारी पुकार पर पूरा पूरा ध्यान नहीं दिया गया। यद्यपि समय २ पर कुछ कुछ आर्थिक सहायता आती है किन्तु वह बहुत ही न्यून है। अभी म० बशेशरनाथ जी (कौमिस्ट अम्बालाछावनी) अपने पूज्य पिता जी के वसीयतनामे में लिखी प्रतिज्ञा के अनुसार ५०) शाखा को देगए हैं जिन के लिए अधिकारी गण उनके कृतज्ञ है। सहायता के लिये पृथक् २ पत्र भी कार्यालय से भेजे जा रहे हैं जो शीघ्र ही दानी महोदयों की सेवा में पहुंच जावेंगे। उत्सव समीप आता जा रहा है। अब सहायकों का कर्तव्य है कि वे शीघ्र ही सचेत हो अपने कर्तव्य को समझ कर सहायता भेजनी प्रारम्भ करदें।

राजेन्द्रबल विद्यालंकार
मुख्याध्यापक

(पृ० २ का शेष)

भारत के इतिहास में यह घटना पहिली थी। देश के सब निवासी इस समाचार को सुन अत्यन्त उत्साहित हुवे थे। एक वर्ष और गुजरा और सुधार स्कीम अपने मोहने रूप के साथ प्रकट हुई। यह ऐसी स्कीम थी कि जिस पर कई गरम दल वाले भी जरा फिसल गये थे पर श्रीयुत आचार्य्यर इस तूफान में भी स्थिर रहे। उनकी देर की चुप्पी दूर हुई और एक उद्घोषणा पत्र के साथ वे सार्वजनिक जीवन में फिर आ उतरे। इस में उन्होंने सुधारों को निकम्मा ठहराते हुवे देश के लिए उसे अस्वीकरणीय बतलाया। एक विशेष प्रान्तीय परिषद् बुलाई गई जिस में उन्होंने अत्यन्त योग्यता पूर्वक सुधारों का पोचापन दिखलाया। सुधारों के विषय में आपने जो कुछ कहा, बम्बई की विशेष कांग्रेस तथा दिल्ली की कांग्रेस ने भी अपने प्रस्तावों द्वारा वही स्वीकृत किया। इस में श्रीयुत आचार्यर की राजनैतिक दूर दर्शिता पता लगती है।

× × × ×

श्री० आचार्यर कांग्रेस में कितने आवश्यक और महत्व पूर्ण व्यक्ति थे यह इसी घटना से पता लगता है कि उस समय की कांग्रेस के मालिक सर फिरोजशाह महता को भी उनका प्रबल व्यक्तित्व स्वीकार करना पड़ता था। मद्रास के प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ श्रीयुत कृष्णस्वामी ऐय्यर जब पहिले ही १९०६ की कलकत्ता कांग्रेस में आये थे और विषय निर्वाचित समिति में बोलने के लिए खड़े हुवे थे तब सर महता ने बड़ी धमकी से कहा "तुम कौन हो" श्रीकृष्ण स्वामी ऐय्यर ने अपने स्थान और कार्य का उचित परिचय दिया। महता ने इस पर मुंहतोड़ जवाब दिया और कहा कि मद्रास में हम श्रीयुत आचार्यर को जानते हैं परंतु तुम कौन हो?"

× × × ×

इस के बाद सत्याग्रह तथा रौलट कानून सम्बन्धी आन्दोलन आरम्भ हुआ। श्री आचार्यर के चारों ओर इस समय सारी देशनलिस्ट पार्टी इकट्ठी हो रही थी। आपने इस समय अपनी पार्टी का नेतृत्व सहर्ष स्वीकृत किया। महात्मा गान्धी से पूर्व ही उन्होंने यह जान लिया था कि देश की अवस्था चिन्ता जनक है। इसी लिए श्रीयुत आचार्यर पहिले व्यक्ति थे जिन्हों ने इस कानून के विरुद्ध आन्दोलन प्रारम्भ किया। आपने अपनी स्वभाविक दूर दर्शिता से जान लिया था कि रौलट-कानून का वास्तविक उपाय पूर्ण स्वराज्य ही है।

हमें अच्छी तरह से याद है कि महात्मागान्धी से बात चीत करते हुवे एक बार श्री आचार्यर ने उन से प्रार्थना की थी कि वे स्वराज्य का महत्व समझें और सत्याग्रह की प्रतिज्ञा का उसे एक अंग बनावें। श्री आचार्यर के वचनों का महत्व महात्मागान्धी ने आज समझा है।

× × × ×

देश और जाति के प्रति की गई आप की सेवाओं से प्रसन्न हो आज कांग्रेस ने आप का अपना सभापति मनोनीत किया है। आप दक्षिण भारत के केसरी है। राजनैतिक सत्यता में श्रीयुत आचार्यर का पूरा विश्वास है। केवल नेता बनने के लिए किये गये साहस के आप घोर विरोधी है। आप जैसे सच्चे देश सेवक को प्रधान पद के लिए चुन कर कांग्रेस ने वस्तुतः अत्यन्त प्रशंसनीय कार्य किया है।

(विजयवैजयन्ती से)

विचार-तरंग

"भयंकर अग्निकाण्ड"

(गतांक से आगे)

ऐसा कोई न मिला जासों रहिये लागि इस संसार व्यापी आग में जलते हुवे लोग ठंढक पाने की मृगतृष्णा में जहां तहां तड़पते फिरते हैं। कोई स्त्री को ठंढक पहुंचाने वाली समझ उसे जा लिपटता है। कोई प्यारे बालबच्चों को छाती से लगा अपना कलेजा ठंढा करना चाहता है। कोई अन्य भाई बन्धु मित्रों को सदा चिपटा रह कर इसके लिये साधू फकीरों तथा अन्य ऐसे लोगों की शरण ढूंढता फिरता है। किन्तु एक क्षण के बाद मालूम हो जाता है 'अरे ये भी वैसे ही जल रहे हैं—अपनी २ आग में वैसे ही तप रहे हैं।' ऐसा कोई नहीं मिलता जिस से जा कर लग रहें—जिस लगे रह कर चार क्षण के लिये भी कुछ ठंढक पड़ जाय।

इस जलते हुवे संसार में बालक समझता है कि जब वह युवा (विवाहयोग्य) हो जायगा तो उसकी ये सब आग बुझ जायगी। जो तीसरी श्रेणी में पढ़ता है वह दशम श्रेणी उत्तीर्ण होने पर अपने सब संतापों से छुटकारा समझता है। जो ग्राम में रहता है वह शहर के निवास के लिये उद्विग्नता से लालायित है कि शायद वहां के बर्फपड़े शरबत तथा मलाई के बर्फ आदि का प्रयोग उसकी सब कलेजे की आग बुझादेंगे। जो अपने गार्हस्थ्य के मकान में पड़ा तप रहा है वह गंगा के शीतल तटया हिमालय के ठंडे पहाड़ों की तरफ बड़ी ही आशभरी निगाहों से देखता हुवा उस दिन की प्रतीक्षा में बैठा है। जो ५,१० रुपये पाता है—वह ५००) की डिप्टी गिरी की प्राप्ति से अपने सब दाह और जलनों की शान्ति समझता है। जो एक पेशा कर रहा है वह समझता है कि उस के सिवाय दूसरे सभी पेशों में सुख ही सुख की शीतल धारा बरस रही है। इसी प्रकार इस जलते हुवे संसार में जहां अपना शासन नहीं वे स्वदेशीय-राज्य को ही सब कुछ समझते हैं, जहां पढ़े लिखे कम हैं वे सब के साक्षर हो जाने में ही सब प्रकार के संतापों की शंन्ति समझते हैं। किन्तु कहने की आवश्यकता नहीं कि इन सब समयों स्थानों, अवस्थाओं, पर भी केवल पहुंचने का विलंब है कि मालूम हो जाता है कि वहां पर एक और अगली भट्टी हमारे जलाने के लिए धधकती हुई तय्यार रखी है। सभी देश और काल अपनी २ आग में भयंकरता से जल रहे हैं। इस अग्निपूर्ण संसार में सभी कुछ जल ही जल रहा है। ऐसा कोई पदार्थ नहीं जिसे ठंडा पाकर कहीं चिमट कर बैठ रहे।

× × × ×

फिर इस आग से कौन रक्षा करेगा ?

किन्तु दूसरी तरफ से रक्षा करने वाले का प्रश्न है क्या तुम इस आग से रक्षा, बचाव चाहते भी हो—इस आग से बचने की इच्छा भी कर सकते हो या इच्छा करने का भी सामर्थ्य नहीं है।

जो कुछ भी समझदार हैं वे दो चार बार आग में अपने अंग जलाकर समझ जाते हैं कि यह चमकीली वस्तु जलादेने वाली है और फिर इस से सदा बच कर रहते हैं। उनके लिए तो वह दिन धीरे धीरे आजायगा जब कि वे इस दाह और जलन के क्षेत्र से बाहर होजायगे। किन्तु उन पतंगों की कौन रक्षा करे जोकि जल मरने ही के लिए पैदा होते हैं—जोकि आग को देखते ही दूर २ से उसमें भस्म होने के लिए वेग से खिचे चले आते है और यदि कोई उनकी रक्षा के लिए मार्ग में बाधा खड़ी करता है तो वे उसी पर टकरा २ कर अपनी जान खो देते हैं किन्तु उधर जाने से नहीं रुकते। क्या आप प्रतिदिन कामाग्नि में जल कर भस्म होने वाले पतंगों को नहीं देखते ? क्या आप प्रतिदिन क्रोधाग्नि में लाल अंगारे हुए २ इनको नहीं देखते ? क्या लोभ की आग में जल मरों को नहीं देखते। क्या मोहाग्नि की दारुण जलन से व्याकुल क्रन्दन करते हुए प्राणियों को नित्य नहीं देखते ? इन्हीं नाना प्रकार की विपाग्निओं में न जाने कितने पतंगें प्रतिदिन भस्म हो रहे हैं किन्तु आग को जलता देखकर रुक नहीं सकते—वे रुकने की इच्छा ही नहीं कर सकते।

हे जगन्माता सर्व शक्तिमान् इन की रक्षा करो।

यदि इस सीधा मौत के पास पहुंचाने वाले असाध्य रोग का निदान जानना हो तो महाराज मंत्र को सुनिये।। वे बताते हैं कि यह दो अज्ञान हैं जिसके वश में आकर प्राणी इन अग्नियों में घी की आहुतियां डालने लगते हैं जिससे कि ये तृप्त हो कर उन्हें जलाना छोड़दें। किन्तु हविपाकर ये 'कृष्णवर्त्मायें' और भड़कती है और उनको समाप्त करके ही तृप्त होती हैं उनका केवल एक काला अस शेष छोड़ जाती।

× + × +

आग वस्तुतः कोई बुरी वस्तु नहीं है। आग तो हमारे चूल्हों में जलती है और हमारा भोजन पकाती है। यह कुण्ड में जलती हुई पवित्र अग्नि "आग लग गई २" कह कर बुझाने योग्य नहीं होती। सूर्य नामक महाऽग्नि पिण्ड की आंच हमें जीवन शक्ति ही प्रदान करती है। अग्नि तो इष्ट देव है, जीवन है, प्राण हैं। किन्तु यहां तो बात ही और ही और हो रही है। वही अग्नि देव हमारे छप्पर पर विराजमान घर फूंक रहे हैं—हमारी सब वस्तुयें, वस्त्र, देह जलाए जा रहे हैं। यही कृत्रिम आग है जो कि बुझाने योग्य है, जो कि हमारा नाश कर रही है जो कि देखते २ संसार में दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ी जा रही है, जिसमें कि संपूर्ण संसार स्वाहा हुवा जा रहा है। वह हमारी स्वाभाविक जीवनप्रद अग्नि तो इस बढ़ी हुई सर्वतोव्यापी आग में बिल्कुल अनुभव ही नहीं होती कि यह कहीं है भी नहीं। वह इन्द्रियों का स्वाभाविक तेज, वह हमारे उदरों में जलने वाली वैश्वानर अग्नि (चतुर्विध अन्न पकाने वाली) दिन प्रतिदिन मन्द और नष्ट होती जाती हैं, ज्यों २ यह कृत्रिम आग हमारा सब कुछ जला मारने के लिए भयंकर रूप में सब कहीं वेग से फैलती जारही है।

शर्मन्

अभयमाप्त

आर्यसामाजिक जगत्

आर्यसमाज मद्रास।

(निजू संवाददाता द्वारा प्राप्त)

आर्य मात्र को यह हर्ष का समाचार होगा कि मद्रास नगर में आर्यसमाज के कल्प वृक्ष का अमोघ बीज बो दिया गया है। वैसे तो गत दो वर्ष से समाज की नींव डालने का यहां बराबर यत्न हो रहा था किन्तु सब से बड़ी आवश्यकता एक ऐसे आर्योपदेशक की थी जो कि अपना सारा समय इसी काम के लिये समर्पण कर सके। ऐसे व्यक्ति के न मिलने से बहुत बार प्रबल इच्छा होने पर भी समाज की संस्थापना का विचार स्थगित किया जाता रहा। तो भी "आनन्द भवन" के स्वामी श्रीमान् माणिक जी तथा ठाकुर हरदयाल जी की कृपा से आनन्द भवन में ही प्रति रविवार की प्रातः काल हवन–प्रार्थनोपासना तथा उपदेश आदि करने का सिलसिला जारी किया गया। इस प्रकार यहां के आर्य भाइयों का प्रति रविवार धार्मिक सम्मेलन होता रहता था। कि किन्तु प्रचार का कार्य नहीं हो सकता था।

लग भग तीन मास हुए लाहौर से पं० ऋषिराम जी बी.ए. सपरिवार यहां पधारे। आप का यह विचार जान कर कि आप स्थिर तौर से यहां रह कर समाज के प्रचार का कार्य कर चाहते हैं सब भाइयों को बहुत आनन्द हुआ। प्रचार के कार्य में आपका इतना अनुराग देख कर यहां सब भाइयों को विश्वास है कि आप के द्वारा यहां के समाज को बहुत अभि वृद्धि होगी।

उनके आने के बाद नियम पूर्वक समाज स्थापित करने का विचार पक्का कर के आनन्द भवन में समाज हितैषियों की एक साधारण सभा इस विषय पर विचार करने के लिये बुलाई गई। जिस में लगभग १५ सज्जनों ने मेम्बर बनना स्वीकार किया। समाज के कार्य को चलाने के लिये पदाधिकारियों का चुनाव भी हुआ उसी सभा में लगभग सवा सौ रुपये सहायतारी चन्दा भी सब सज्जनों ने एकत्रित कर दिया। जिन में से श्रीमान् माणिक जी, श्रीमान् ठाकुर हरदयाल जी तथा श्रीमान् बलसिंह जी में से प्रत्येक महाशय ने २५) मासिक की प्रतिज्ञा की। श्रीमान् छोटेलाल जी १५) तथा श्रीमान् गयाप्रसाद जी ने १०) मासिक देने का वायदा किया अन्य भिन्न २ महाशयों ने १५) मासिक चन्दा देना स्वीकार किया। इतने धन से कार्य आरम्भ किया गया। पहला यत्न समाज मन्दिर के के लिये एक अच्छा मकान ढूंढने का था। इस के लिये साधारण प्रयास नहीं करना पड़ा। मद्रास जैसे बड़े नगर में मकान किराये पर मिलना कितना कठिन है यह वे ही जान सकते हैं जो कभी किसी बड़े नगर में रह चुके हैं। अन्ततः ईश्वर की कृपा से अच्छे मौके पर एक अच्छा मकान हमको ६२) मासिक पर एक वर्ष के लिये मिल गया। यह स्थान ऐसा अच्छा है कि वहां से हरैक तरह का आदमी गुजरता है। और आर्य्यसमाज का बोर्ड भी ऐसा आकर्षक है कि उसको पढ़ने के लिये वहां कार्यव्यग्र आदमी भी थोड़ी देर के लिये ठहर जायगा।

आर्यसमाज की ओर से पहला कार्य मद्रास में स्वामी दयानन्द का मृत्यु दिवस मनाना था जो बड़े विस्तृत विज्ञापन के बाद बड़े समारोह से मनाया गया। उसकी रिपोर्ट मद्रास के बहुत से बड़े २ पत्रों में प्रकाशित हो चुकी है।

दूसरा कार्य मद्रास की जनता को समाज का परिचय देने के लिये पैम्फलेटस छापना था। अब तक के पेम्फलेटस छप चुके हैं पांच इंगलिश में और एक तामिल में। प्रत्येक पैम्फलेट दो हजार की संख्या में छापा गया है। इस प्रकार कुल बारह हजार पैम्फलेट छप चुके हैं। मद्रास युनिवर्सिटी कान्वोकेशन के समय प्रायः एक हजार ग्रेज्युएट्स को पैम्फलेट मुफ्त बांटे गये।

तीसरा कार्य समाज की ओर से खुले बजार में सांयकाल के समय प्रचार का किया गया है। चाइना बजार रोड़ पर पच्चयप्पा कालेज के सन्मुख से सांयकाल सहस्रों आदमी गुजरते हैं वहीं पर हिंदी तामिल-तेलगू और इंगलिश में द्वारा भाषण दिये जाते हैं। पिछले दिनों का अनुभव बहुत ही आशा जनक है। सर्व साधारण लोग इन भाषणों में जो दिलचस्पीले रहे हैं उस से आशा होती है कि मद्रास के मध्यम श्रेणी के लोग आर्यसमाज का हार्दिक स्वागत करने को तैयार हैं। निचली श्रेणी के लोग आर्यसमाज को अपनाने के लिये शीघ्र ही तैयार हो जांयगे किन्तु उन तक पहुंचने के लिये यहां की देशीय भाषा में प्रचारकों की बहुत आवश्यकता है। हमारे पेम्फलेट भी हाथों हाथ बिक रहे हैं।

चतुर्थ कार्य समाज की ओर से ईसाई मत का खण्डन का आरम्भ किया जाने वाला है। जनवरी मास में मद्रास नगर में रोमन कैथलिक्स लोगों का एक बड़ा भारी सम्मेलन होने वाला है इस लिये समाज की ओर से बड़े दिनों के आरम्भ से ही ईसाई मत के विरुद्ध खुले बजार में प्रचार करने का प्रबन्ध किया जा रहा है।

और इस के लिये तामिल में छोटे २ पेम्फलेट भी छाप कर उस मौके पर बांटे जांयगे।

पञ्चम कार्य आर्यसमाज की ओर से एक आर्यकुमार सभा का स्थापन करना है। विद्यार्थियों को आर्यसमाज के सिद्धान्तों से परिचित करने के लिये विशेष तौर से यह सभा बनाई गई है। बहुत से छात्र तथा अन्य व्यक्ति जो समाज से सहानुभूति रखते हैं किन्तु पारिवारिक तथा सामाजिक भय से आर्य्यसमाज के मैम्बर बनने में हिचकते हैं वे आसानी से इस सभा के मेम्बर बन सकते हैं। इस सभा की उन्नति का समाचार हम कभी फिर पाठकों को देवेंगे। पाठकों से निवेदन है कि वे यह पता नोट करलें, आर्यसमाज ५५७ मिन्ट स्ट्रीट मद्रास।

ओ३म्

Registered No A 85

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि ।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्नकाल में श्रद्धा को बुलाते हैं ।"

श्रद्धां सूर्यस्य निमुचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः ॥
(ऋ० म० १ सू० १० म० १५१, म० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं । श्रद्धे ! इस समय (इस संसार) में हमको श्रद्धामय करो ।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है । { २४ पौष सं० १९७७ वि० दयानन्दाब्द ३८ ता० ७ जनवरी सन् १९२१ ई० } संख्या ३? भाग १

हृदयोद्गार

प्रभु विनय

(१)

साची प्रीती जोरिये प्रभु चरनन सों प्रान ।
मन जानी निशि दिन करै नाथ नाम गुन गान ।
साची प्रीती करत है—पापी तन "वैराग ।
साचे प्रेमी ना करैं—प्रभु चरनन अनुराग ॥
कौन कहि सके प्रेम की महिमा अगम अनन्त ।
छिपे छुपाये ना छिपें बदन लगे प्रेम के दन्त

(२)

हँसि हँसि फिरावाहो चाहो न दरस देना ।
कैहो रे ! तोरी प्रेम रीती ?
भव भय में तजा चाहा—चाहो ना शरन देना ।
कैहो का तोरी प्रेम रीती ?
जग पथ महा छायो—तारो तु अधम सेना ।
कोई मन धारी लाज जीती ।?।
अब मन लगी अरजी चाहो तु विजय लेना ।
ऐसो रे ! मोहीं तार जोती !!
अब सुनी करो नाहीं—टारे तु दरस मैं ना ।
दुःखी की बिसार जाय जीती !!
पथ पग गिरा ! हारा !—मेरो कर गहिलो ना !
नाथ मो तोरी नाम जीती ।
अनुगत सभी स्वामी—मैं ना कुछ मन जाना ।
"होनहीं रे ! मोरे प्रेम जीती ।
रहत न जबा चाही—स्वामी हूँ मिलन होना ।
अहा रे जीती प्रेम रीती !
जीता रे मोरी प्रेम रीती !
जीती रे ! साची प्रेम रीती !

शारदेश—कैलाश

अन्योक्ति

। श्याम घन ।

सुधा सिन्धु नीरस लसत
जेहि बिन व्याकुल जीव ।
जयतु जगतु वह श्याम घन ,
चित चातक को पीय ॥ १ ॥
घन घन घन ! होले आप के गीत न ले ,
वन वन बहुरंगा के नहीं मोद लाते ।
मधु मधुर सुवर्षी प्रेम के बिन्दु पाये ,
बिन विनयम होगा स्वतन्त्र का क्यो लुभाय ॥ २ ॥

प० गयाप्रसाद (श्री हरि)

श्रद्धा के नियम

१ वार्षिक मूल्य भारत में ३॥), विदेश में ४॥), ६ मास का २) ।

२. ग्राहक महाशय पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखें ।

३. तीन मास से कम समय के लिए यदि पता बदलना हो तो अपने डाकखाने से ही प्रबन्ध करना चाहिए ।

प्रबन्धकर्त्ता श्रद्धा
डाक० गुरुकुल कांगड़ी (जिला बिजनौर)

अतिथियज्ञ

(लेखक प्रो० चन्द्रमणि विद्यालङ्कार, पालिरत्न)

सुगुरस्सुहिरण्यः स्वश्वो बृहदस्मै वय इन्द्रो दधाति यस्त्वायन्तं वसुना प्रातरित्वो मुक्षीजयेव पदिमुत्सिनाति ॥ ऋ० १.१२५.२

(प्रातरित्वः) प्रातः काल आने वाले अतिथे! (यस्त्वा आयन्तं) जो गृहस्थ तुझ आये हुए को (मुक्षीजया पदिमिव) जाल से पक्षी की न्याईं (वसुना उत्सिनाति) खान पान वास आदि आतिथ्य सत्कार से बांधता है (सुगुः असत, सु हिरण्यः स्वश्वः) वह आतिथ्य सेवी सुन्दर धन वाला, शोभन यश वाला, सु-वीर्यवान् होता है (इन्द्रः अस्मै बृहत् वयः दधाति) और परमेश्वर उसे बड़ी आयु देता है। गो शब्द वैदिक साहित्य में धन मात्र के लिये बहुत्र प्रयुक्त होता है क्यों कि गायही सर्वोत्तम धन है। यही कारण था कि गौ की रक्षा करना प्रत्येक मनुष्य का धर्म ठहराया गया था। शतपथ में यशो वै हिरण्यं, तेजो वै हिरण्यं लिखते हुए हिरण्य का अर्थ यश, तेज भी किया है, और इसी प्रकार "वीर्यं वै अश्वः" कहते हुए अश्व शब्द वीर्य-वाची बतलाया है। मन्त्र में उपमा का महत्व दर्शनीय है।

पक्षी का भोजनाच्छादन के लिये नियत स्थान कोई नहीं, अतिथि को भी ऐसा ही होना चाहिए, पर्यटन करते २ जहां कहीं भोजनादि मिल गया उस से सन्तुष्ट रहना चाहिए। जैसे पक्षी का जाल से बन्धन आकस्मिक और दृढ़ होता है एवं घर में आये अतिथि का आतिथ्यसत्कार इस प्रकार किया जावे कि उसका एकदम अतिथि सेवी से घनिष्ठ आन्तरिक संबन्ध हो जावे। दाता के आतिथ्य के प्रेम पर अतिथि अत्यधिक प्रभावित हो और उसके लिये सदा मंगल कामनायें रखता रहे। अब मंत्र का भाव स्पष्ट है कि जो गृहस्थ घर में आये अतिथि की सेवा बड़े प्रेम तथा हित से करता है और उसके हृदय को उसके सत्कार द्वारा अपनी ओर भली प्रकार आकर्षित कर लेता है वह सुध-नवान् सुयशस्वी सुवीर्यवान् और दीर्घ जीवी होता है। उसके धन, उसके यश, उसके वीर्य, और उसकी आयु इन चारों की वृद्धि होती है। इसी अतिथि पूजा की महिमा को प्रदर्शित करते हुए मनु महाराज ने ठीक इस मंत्र का अनुवाद अपने शब्दों में इस प्रकार किया है—

"न वैस्वयं तदश्नीयादतिथियन्न भोजयेत धन्यं यशस्य मायुष्य स्वार्ग्यं वातिथि पूजनम्" ३,१०। अर्थात् गृहस्थ किसी अतिथि को भोजन न कराके स्वयं भोजन न करे। यह अतिथि पूजा धन को, यश को, आयु को, और अत्यन्त सुख को देनेवाली है।

इसी आतिथ्य सत्कार पर गौतम बुद्ध ने भी बड़ा बल दिया था लंका तथा ब्रह्मा के बौद्ध गृहस्थियों में अभी तक यह प्रथा जारी है कि जब तक कोई भिक्षु भिक्षा नहीं लेजाता वे भोजन नहीं करते। वैदिक धर्म में गृहस्थियों के लिये नित्य प्रति कर्तव्य पांच महायज्ञों में एक अतिथि यज्ञ का भी विधान है। पर आज कल कितने आर्य गृहस्थ इस नैतिक धर्म का पालन करते हैं इस प्रश्न का उत्तर अपने दिलों से ही पूछें। मन्त्र में प्रातरित्वः शब्द पर विशेष ध्यान देना है।

प्रातरित्वन् का अर्थ प्रातः काल आने वाला अतिथि है। अतिथि दो ही प्रकार के मुख्यतया होते हैं एक ब्रह्मचारी दूसरे सन्यासी। इन दोनों आश्रमियों के लिये पूर्व काल ही भोजन करने का विधान है सायंकाल नहीं। जो इस वि-धान को तोड़ते हुए विकाल भोजन किया जाता है वह वैदिक आज्ञा के प्रति कूल है। गौतम बुद्ध वैदिक धर्म के इस महत्व को भली प्रकार समझते थे उन्हों ने भिक्षुओं के लिये यही नियम बना दिया था। वह १२ बजे के पश्चात् किसी तरह का भोजन नहीं कर सकते थे। गृहस्थ और वानस्थ अतिथि नहीं कहे जा सकते। वह दोनों अपने या अपने पुत्रादि कों के उपार्जित धन द्वारा जीवन निर्वाह करते हैं यह दोनों आश्रमी यदि कहीं जाते हैं तो बन्धु भाव से मित्रभाव से या अन्य किसी प्रसंग वश जाते हैं, अतिथिरूप से नहीं समझे जा सकते। अतिथि सेवा किस प्रकार करनी चाहिए उसके लिये अथर्ववेद- १५,११ सूक्त के प्रथम द्वितीय मन्त्र देखिये।

१. तद्यस्य वै विद्वान् व्रात्योऽतिथि र्गृहानागच्छेत्

२. स्वयमेनमभ्युदेत्य ब्रूयाद् व्रात्य क्वाऽवात्सीः,

व्रात्योदकं; व्रात्य तर्पयन्तु, व्रात्य यथा ते प्रियं

तथास्तु, व्रात्य यथा ते वशस्तथास्तु, व्रा-त्य यथा ते निकामस्तथास्त्विति

जिस गृहस्थ के घर पर कोई ज्ञानी, व्रतधारी, अतिथि आवे, स्वयं उठकर उसका सत्कार करते हुए पूछे व्रतधारिन् आपने यहां आने से पूर्व कहां वास किया कहां से पधारे हो, व्रात्य जल लिजिए, व्रात्य मैं और मेरे सब संबन्धी आपको भोजनादि से तृप्त करते हैं। व्रात्य जो वस्तु आपको प्रिय हो आज्ञा दें उस से आपकी सेवा की जावे, व्रात्य जिस वस्तु पर आपकी अ-भिलाषा हो वही प्रस्तुत की जावें, व्रात्य जिस प्रकार आपकी कामना पूर्ण हो वैसा किया जावे। यह है अतिथि सेवा का उच्च आदर्श जो प्रत्येक आर्य गृहस्थ को प्रतिदिन व्यवहार में लाना चाहिए।

—:०:—

श्रद्धा

कांग्रेस और अछूत

नागपुर की कांग्रेस समाप्त हो गई। नौकर शाही और ठण्डे-दिमाग के मानसिक मुट्ठी भर "नरम" दल की सम्मति में यह असफल हो सकती है पर देश और जनता ने इसे कुन कार्य हो समझा है—यह निःसन्दिग्ध है। इस के कई कारण हैं। दर्शकों के अतिरिक्त २२ हजार प्रतिनिधियों का इकट्ठा होना बड़े मार्के की घटना है। सब का जिस में विरोधी दल भी शामिल था—एक स्वर से असहयोग का प्रस्ताव पास करना एक अनुपेक्षणीय विशेषता है। कांग्रेस की इस बैठक को दृष्टि में रखते हुये नौकरशाही यह कहने का साहस नहीं कर सकती कि "कुछ पढ़े-लिखे लोगों का" ही यह दल बल था।

कलकत्ते से निःसन्देह नागपुर आगे ही रहा है। असहयोग का प्रस्ताव, तत्त्व की स्थिरता के साथ, क्षेत्र में अधिक विस्तृत और उदार हो गया है। सिद्धान्त को सुरक्षित रखते हुये उस में कुछ नये अंश भी बढ़ाये गए हैं। इन में सब से अधिक आवश्यक वह अंश है जिस में अछूतोद्धार की ओर देश का ध्यान खींचा गया है। असहयोग का अंग बनाते हुये इसका कांग्रेस की वेदी से रखा जाना वस्तुतः अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस से इतना तो अवश्य स्पष्ट हो जाता है कि हमारे नेता इस सिद्धान्त को समझते जाते हैं कि राजनैतिक और सामाजिक दोनों प्रकार के सुधारों में घनिष्ट सम्बन्ध है और वास्तविक सुधार का उपाय वही है जिस में दोनों का ध्यान रक्खा जावे।

कांग्रेस की वेदी पर से इन असहाय अछूतों की ओर जाति का ध्यान खींचने का श्रेय, वस्तुतः, श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी को ही है। अमृतसर कांग्रेस की स्वागत समिति के प्रधान की हैसियत से जो भाषण उन्होंने दिया था, वह [illegible] भाषण था जिस में एक दूर दर्शी राष्ट्रीय सन्यासी ने जलियांवाला बाग के पैशाचिक हत्या काण्ड के भयंकर रौरव और हृदय बेधक रोदन और आक्रन्दन के बीच में खड़े होकर भी उस आहभरी पुकार को नहीं भुलाया था जो, कई सैकड़ों वर्षों से, देश का एक तिहाई हिस्सा हाथ पसारे अपने भाइयों के सामने कर रहा है। श्री स्वामी जी ने कहा था।

"लण्डन नगर में भारत की रिफार्म स्कीम कमेटी के सामने "हमारे मुक्ति फौज" के जनरल बूथटकर साहब ने कहा था कि भारत के ६½ करोड़ अछूतों को विशेष अधिकार मिलने चाहियें और उस के लिए हेतु दिया था "बिकौज दे आर एन्डर ओट्स आवर्दि ब्रिटिश गवर्नमेन्ट"।

आप के ६½ करोड़ भाई—आप के जिगर के टुकड़े जिन्हें आप ने काट कर फेंक दिया है—किस प्रकार भारत माता के ६½ करोड़ पुत्र एक विदेशी गवर्नमेण्ट रूपी जहाज के लंगर बन सकते हैं! मैं आप सब बहिनों और भाइयों से एक याचना करूंगा। इस पवित्र जातीय मन्दिर में बैठे हुये अपने हृदयों को मातृ भूमि के प्रेम जल से शुद्ध कर के प्रतिज्ञा करो कि आज से ये ६½ करोड़ हमारे लिए अछूत नहीं रहे बल्कि हमारे बहिन और भाई हैं। इन की पुत्रियां और उन के पुत्र हमारी पाठशालाओं में पढ़ेंगे, उन के गृहस्थ नर नारी हमारी सभा में सम्मिलित होंगे और हमारे स्वतन्त्रता के युद्ध में वे हमारे कन्धे से कन्धा जोड़ेंगे और हम सब एक दूसरों का हाथ पकड़ते हुये अपने जातीय उद्देश्य को पूर्ण करेंगे।"

उस समय इन शब्दों की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया। जनता ने इसे हृदय का एक आवेग कहकर टालना चाहा परन्तु सच्ची प्रार्थना और सच्ची भिक्षा कभी टाली नहीं जा सकती। यही कारण है कि आज हम उसी कांग्रेस की वेदी पर से असहयोग प्रस्ताव का अंग बने अछूतोद्धार के प्रस्ताव को पास होता हुआ देखते हैं।

यह समझना बड़ी भारी भूल है कि अछूतों का प्रश्न केवल मात्र सामाजिक ही है। नहीं; सामाजिक होने के साथ २ यह राजनैतिक भी है। आज हम असहयोग की तैयारी में अपने को लगा रहे हैं। परन्तु किस के साथ? उस नौकरशाही के साथ जिस से अब तक सहयोग कर हमने अपने दिलों और दिमागों को अपवित्र कर लिया है। परन्तु शत्रु—बल को बिना परिमाणित जाने बूझे युद्ध की तुरही बजा देना अपनी मूर्खता का परिचय देना है। हमारा विरोधी बड़ा जबर दस्त और चालाक है। हम दीन हीन और साधन शून्य हैं और वह सम्पत्तिशाली तथा साधन सम्पन्न है। हमारे घरेलू झगड़ों से लाभ उठाने में वह बड़ा चतुर है। अपने जाल से छोटे भेद को बड़ा कर देना उसकी बांये हाथ का खेल है। अब तक उसने हमें "हिन्दु मुसलमान" के नाम पर लड़ाया और गले कटवाये। सौभाग्य का अवसर है कि हमने धूर्त का स्वरूप पहिचान अपनी भूल को ठीक कर लिया। परन्तु ब्राह्मण अब्राह्मण और छूत अछूत के नाम पर लड़ाने भिड़ाने के लिए नौकरशाही के पास अब भी पर्याप्त अवसर था जो कि अब शीघ्र ही दूर हो जावेगा। देश के एक तिहाई हिस्से को कि अपने अन्दर बिना मिलाये हम असहयोग में कभी सफल नहीं हो सकते, ब्रिटिश जाति के इस "लंगर" के बिना काबू किये हम अपना ध्येय कभी पूरा नहीं कर सकते।

वस्तुतः, जब तक घर में सहयोग नहीं है तब तक असहयोग की आशा करना विडम्बना मात्र है, जब तक सेना की पहिली पंक्ति कन्धे से कन्धा मिलाये नहीं खड़ी तब तक दुश्मन की गोलियों की बौछार सहना असम्भव है। वस्तुतः सहयोग द्वारा ही असहयोग हो सकता है।

परन्तु यह कैसे हो सकता है? कांग्रेस ने इस विषय में जो सलाह दी है, वह भी अवश्य उत्तम है। वह यह कि शंकराचार्य आदि धार्मिक नेता इस शुभ कार्य में अगुआ बनें। सचमुच, हिन्दुओं के धार्मिक नेताओं के हाथ में ही इस समस्या की कुंजी है। जनता का एक बहुत बड़ा भाग अछूतों के साथ मिलने को तैयार है। आर्यसमाज के निरन्तर प्रचार के कारण कट्टर हिन्दू भी इस की आवश्यकता का अनुभव करने लगे हैं परन्तु धार्मिक और साम्प्रदायिक नेताओं के कुछ हिचकिचाहट दिखाने के कारण अब तक काम रुका पड़ा है। जनता में अभी तक इतना साहस नहीं पैदा हुआ कि वह इन स्वार्थी पण्डों, पुरोहितों, महन्तों और मठाधीशों के युक्ति शून्य आदेशों की अवहेलना करती

हुई सचाई का साथ दे सकें। इस लिए वास्तविक उपाय यही है कि इन साम्प्रदायिक नेताओं के हृदयों में से इस प्रकार के अनुचित भावों को दूर करने का प्रयत्न किया जावे। यदि इन नेताओं ने, इस विषय में, देश का साथ दिया, जैसा कि हमें निश्चय है वे अवश्य देंगे, तो अछूतों की समस्या शीघ्र हल हो जावेगी।

परन्तु अब आर्यसमाज का क्या कर्त्तव्य है—यह हम अगले अंक में बतावेंगे।

क्या जापान पीछे है ?

यद्यपि ऊपर से शान्ति की दुहाई दी जा रही है पर अन्दर से लड़ाई के मसाले तैयार किये जा रहे हैं यह धीरे २ घटनाओं से स्पष्ट हो रहा है। इङ्गलैंड में इस के लिए क्या हो रहा है—यह हम पिछले किसी अंक में बता चुके हैं। जापान भी इस घुड़दौड़ में पीछे नहीं रहना चाहता। उस की सैन्यशक्ति में कितनी बढ़ती की जावेगी—यह उन गणनाओं से पता लग सकता है जो कि वहां के महा मन्त्री ने, हाल ही में, उपस्थित की हैं। स्थल सेना में, इस वर्ष के बजट के अनुसार ५० मिलियन यैन और जलसेना में ६२५ मिलियन की वृद्धि की जावेगी। जलसेना में इतनी अधिक वृद्धि क्यों की गई है इस का रहस्य हम फिर कभी खोलेंगे सैन्यशक्ति की इस वृद्धि का कारण महा मन्त्री ने "जातीय बल" को बढ़ाना बताया है। परन्तु इस शान्ति (मित्रराष्ट्रों के कथनानुसार) के समय में इस "जातिय बल" को बढ़ाने की क्या आवश्यकता है यह अनुमान करना कठिन नहीं है।

चीन में भयंकर अकाल

के समाचार आ रहे हैं। वर्षा न पड़ने से प्रान्त में अनाज की बहुत कमी हो गई है जिस का स्वभाविक परिणाम जनता का भूखा मरना है। कई गाव और नगर उजड़ गये हैं। भूखी जनता आत्मघात कर के इस दुख से अपने को बचा रही है। उनकी दशा कितनी दयनीय है—यह एक उदाहरण से पता लग सकता है। एक परिवार के कुछ व्यक्तियों ने भूख की आग से मरने की अपेक्षा ज़हर खाकर मरना उचित समझा। परन्तु विष के लिए भी पैसे नहीं थे। इस लिए, उन लोगों ने अपने शरीर पर जो एकाध कपड़ा था उसे बेच कर विष खरीदा और अपने को इस दुख से मुक्त कर लिया। यद्यपि वर्षा का अभाव इस में कारण बताया जाता है पर हमारे पाठकों को यह भी नहीं भूलना चाहिये कि इंग्लैंड, अमेरिका और जापान के कई गठकतरे भी चुपचाप, चीन को लूट रहे हैं। वे मतलब के यार अपना प्रभुत्व जमाते हुवे स्वार्थ सिद्ध करने में कोई कसर नहीं कर रहे। इस अकाल का कारण क्या इन्हीं विदेशी स्वार्थ साधकों की लूट तो नहीं? जापान जो अपने को चीन का बड़ा हित चिन्तक कहता है—इस समय किधर मुंह छिपाये बैठा है?

"मर्ज़ बढ़ता ही गया ज्यों २ दवा की" !

के अनुसार बरोजगारी अभी तक बढ़ ही रही है। बड़े दिनों की छुट्टियों में, पिछले सालों, इंग्लैंड में खूब आनन्द मंगलोत्सव मनाये जाते थे पर इस वर्ष बेरौनकी हो रही। खाली पेट जनता खुशियां नहीं मना सकती। इन ठाली बैठे गरीबों के लिए जो काम निकाले गये थे, वे सब भर गये और उचित मात्रा से अधिक भर गये हैं। एक और उपाय सोचा गया था। वह यह कि इन्हें साम्राज्यान्तर्गत कनाडा आस्ट्रेलिया आदि उपनिवेशों में भेज दिया जावे। परन्तु, अब, उन्हों ने भी अंगूठा दिखा दिया है। अपने अन्दरूनी मामलों में बिल्कुल स्वतन्त्र होने से वे इंग्लैंड की बात मानने को बाधित नहीं हैं। इस से ब्रिटिश मंत्री मण्डल को बहुत निराशा हुई है। इस समस्या का हल सोचने के लिए मंत्री मण्डल की बैठकें निरन्तर हो रही हैं। पर अभी तक कोई परिणाम नहीं निकला है। इस रोग की वास्तविक औषध तो यही है कि कमाओं का मूलोच्छेद किया जावे पर देखें, इंग्लैंड क्या नया आविष्कार करता है ?

क्या युद्ध समाप्त हो गया ?

इस प्रश्न का उत्तर जो 'हां' में देते हैं उन्हें अपनी भूल शीघ्र ही मान लेनी चाहिये। पिछले दिनों के समाचारों की दृष्टि से रखते हुवे ऐसी सम्मति रखना अपनी मूर्खता का परिचय देना है। मध्य एशिया और ईराक से अभी तक सेनाओं के आगे बढ़ने और घायल होने के वृत्तान्त आही रहे थे कि इतने में अन्तर्जातीय महा सभा (लीग आफ नेशन्स) का एक मुख्य स्तम्भ और मित्र राष्ट्रों की मंडली के एक आवश्यक सभ्य इटली ने छोटे से नगर 'फ्यूम' पर गोला दाग ही तो दिया। दोष किस का था—इसका विवेचन करना तो ऐतिहासिकों का काम है परन्तु इतना निःसन्दिग्ध है कि फ्यूम में जन संहार और धन—नाश बहुत हुआ है। अभी इटली की गोला बारी समाप्त ही हुई थी कि इतने में रूमानिया पर बाल्शेविकों ने धावा बोल दिया है। इतनी बड़ी सेना को उमड़ते देख रूमानिया ने अन्तर्जातीय महासभा (लीग आफ नेशन्स) के आश्रय में मुंह छिपाया है। देखें, वहां भी उसे शरण मिलती है या नहीं!

प्याले में तूफ़ान !

उमड़ आया है। देश भर में असहयोग आन्दोलन हो रहा है, जनता को अपने पर भी दुख झेलने की फिक्र पड़ी हुई है पर उधर देश की "पार्लियामेण्ट" कांग्रेस से अलग रहते हुए भी अपने को "उदार" [?] कहने वाले "नरम" मिजाज के मुट्ठी भर आदमी मद्रास में बैठे इसका विरोध कर रहे हैं। इनके रहनुमा हैं, "अक्ल के ठेकेदार" श्री निवासशास्त्री! "जिसका खाना, उसी का गाना" के अनुसार 'माडरेट' लोग मिनिस्टरी, जजी, कौंसिलों की मेम्बरी, रायसाहबी, बहादुरी आदि और सरी लेकर भी यदि नौकरशाही के गुण नहीं गावेंगे तो, वस्तुतः, वे कृतघ्नता के ही दोषी होंगे। कुछ देशी ईसाईयों ने भी कलकत्ते में एक "नरम" (?) सभा कर के नौकरशाही के प्रति कृतज्ञता प्रकाशित कर ही दी है। अमरावती में इकट्ठे हुवे १२५ मुसलमान सज्जनों ने भी "अखिल भारतीय (?)" शिक्षा का ढोंग रच आपने कर्त्तव्य ही का पालन कर दिया है। नौकरशाही इन्हें "देश की आवाज़" कह सकती है पर समझदार आदमी इस का खोखलापन खूब जानते हैं।

(शेष ६ठे पृष्ठ पर)

नागपुर-सार

राष्ट्रीय सप्ताह धूमधाम के साथ समाप्त होगया। कांग्रेस के कारण इस वर्ष की हलचल प्रायः नागपुर में ही रही। वहां इतने सभासम्मेलन हुए कि उन में से प्रत्येक अपने वर्णन के लिए पर्याप्त स्थान की अपेक्षा करता है। मैं आपके पाठकों का ध्यान कुछ आवश्यक घटनाओं की ओर ही खेंचना चाहता हूं जो इस सप्ताह में बीती हैं।

निस्सन्देह, कांग्रेस सफलता पूर्वक होगई। स्वागत समिति के प्रधान और कांग्रेस के अध्यक्ष के भाषण पर आप अपनी सम्मति पिछले अंक में प्रकाशित कर ही चुके हैं, इस लिए, उस पर मुझे कुछ विशेष वक्तव्य नहीं है। आपने श्री० विजयराघवाचार्य के भाषण को 'रद्दी की टोकरी का अतिथि' बनाने की सलाह दी थी। इस पर सम्मति भेद होसकता है पर श्री० आचार्य का अन्तिम भाषण बहुत मार्के का था। प्रारम्भिक वक्तृता में जो कुछ ढीलापन था, उसे अन्तिम समय में पूरा कर दिया गया। सभापति महोदय के ये शब्द बहुत जोर रखते हैं—"नौकरशाही को चाहिए कि उसने हमारे बारे में जो ख्याल बना रक्खे हैं, उनका संशोधन करे। .... यदि हमारे अधिकारी गण इस उत्साह की उमंगों को दमन नीति की झाड़ू से दबाने की चेष्टा करेंगे तो वे मय अपने धन-दौलत के, उत्साह सागर में गायब हो जायंगे।"

आगे श्री० आचार्य ने इन शब्दों के साथ असहयोग का समर्थन किया "इस कांग्रेस पर मेरी टिप्पणि यह है कि जनता इस समय असहयोग के भावों से प्रेरित है, संसार इस असहयोग को चाहे जिस नाम से पुकारता रहे। क्या शिक्षित, क्या अशिक्षित, क्या मनुष्य, क्या स्त्रियां और क्या बच्चे, सभी इस समय स्वतन्त्रता के लिए उठ खड़े हुए हैं—"१५ हजार प्रतिनिधियों के एक स्वर से किए गए असहयोग समर्थन ने सभापति महोदय को भी असहयोग पक्षपाती बना ही डाला। यह भी असहयोग की उल्लेखनीय विजय है।

मुस्लिमलीग के सभापति श्री० डा० अन्सारी का भाषण [illegible] और जोश भरा था। डा० अन्सारी ने देश और जाति की वर्तमान परिस्थिति पर विचार करते हुए असहयोग की जिस आवश्यकता पर बल दिया, वह प्रशंसनीय था। इस लीग में श्री० मुहम्मदअली ने जो भाषण दिया, उस की ओर मैं आप के पाठकों का ध्यान विशेष रूप से खींचना चाहता हूं। उनका यह कथन सर्वथा ठीक है कि लीग के उद्देश्यों में "शान्तिपूर्ण" (पीसफुल) इन शब्दों की आवश्यकता नहीं है क्योंकि इस्लाम धर्म जहाद की भी आज्ञा देता है देश की वर्तमान अवस्थाओं के अनुसार भले ही यह उपयुक्त न हो।

—:o:—

कांग्रेस और लीग—दोनों ने ही अपने उद्देश्यों में परिवर्तन करते हुए असहयोग का प्रस्ताव पास किए हैं—यह प्रसन्नता की बात है। मैंने सुना है, देश को असहयोग पर क्रियात्मक सलाह देने के लिए एक उपसमिति बनाई गई है जिसका परिणाम शीघ्र ही प्रकाशित होने वाला है। देश को उसके अनुसार कार्य करने के लिये तय्यार रहना चाहिए।

खिलाफत-कान्फ्रेन्स में अमीर काबुल का संदेश सुनाया गया था जिस में हार्दिक भावों का उचित प्रकाश था। कान्फ्रेन्स ने अमीर काबुल और टर्की के सुल्तान से जो प्रार्थना की थी वह सर्वथा समुचित और आवश्यक थी। खिलाफत का मसला वस्तुतः, देश के लिये एक जबरदस्त सवाल है।

कांग्रेस पण्डाल में ही अखिल भारतीय स्वयं सेवक [वालन्टीयर] सभा हुई जिस के सभापति श्री पं० जवाहरलाल नेहरू थे। 'जातीय सेवक मण्डल' को स्थापित करने और उसकी सब शहरों और गांवों में शाखा खोलने का प्रस्ताव पास किया गया। पुलिस की करतूतों से देश को बचाने के लिए ऐसे सेवक मण्डल की अत्यन्त आवश्यकता है। इस के अतिरिक्त मेरे युवक भाई जाति सेवा के लिए इस में उचित शिक्षा पा सकेंगे।

—:o:—

श्री युत पटेल की अध्यक्षता में "समाज सुधार सम्मेलन" (नेशियल कान्फ्रेन्स) हुआ सभापति महोदय ने अछूतोद्धार के लिए प्रभावशाली अपील की। वर्ण व्यवस्था के विरुद्ध भी आपने आवाज़ उठाई परन्तु इस विषय में हम उन से बहुत असहमत हैं। जिस प्रकार कांग्रेस ने अब क्रियात्मक कार्य्य प्रारम्भ कर दिया है, इसी प्रकार इस कान्फ्रेन्स की ओर से भी प्रस्ताव पास करने के अतिरिक्त कुछ क्रियात्मक कार्य्य प्रारम्भ होना चाहिये।

"अखिल-भारतीय-छात्र-सम्मेलन" इसी वर्ष से प्रारम्भ हुआ है। छात्रों को संगठित रखने में यह सम्मेलन बहुत उपयुक्त हो सकता है। स्वागत-समिति के अध्यक्ष श्री युत गोखले ने देश की परिस्थिति पर भाषण करते हुये असहयोग का ही समर्थन किया। सभापति श्री लाजपतराय जी थे। उन्हों ने यद्यपि इस से अपनी असहमति प्रकट की और छात्रों को कुछ दूसरी तरह से प्रस्ताव पास न करने की ओर निर्देश भी किया पर छात्रों ने, फिर भी, असहयोग का प्रस्ताव स्वीकृत ही किया। छात्रों में आत्म सम्मान और जागृति पैदा करने में यह प्रस्ताव बहुत सहायक हो सकता है।

लाहौर के श्री डा० कपूर की अध्यक्षता में "चिकित्सक सम्मेलन" [मैडीकल कान्फ्रेन्स] भी हुआ। स्वागत समिति के अध्यक्ष श्री डा० साम्बे थे। दोनों के भाषण जोरदार हुये। असहयोग का गन्ध यहां भी पाई जाती थी। सरकारी नीति की घोर निन्दा की गई। स्वतन्त्ररूप से चिकित्सा का पेशा करने पर बल दिया गया। देशी चिकित्सा के उद्धार की ओर ध्यान खींचा गया।

श्री ला० लाजपतराय जी की अध्यक्षता में "गोरक्षा सम्मेलन" भी हुआ। सभापति की इस बात से सब सहमत थे कि 'गोरक्षा' का एक मात्र उपाय स्वराज्य ही है। प्रार्थना पत्रों से अब कोई लाभ नहीं। असहयोग द्वारा स्वराज्य प्राप्त होने से ही गोरक्षा जैसा महत्व पूर्ण प्रश्न हो सकता है।

इस वर्ष के मुख्य सम्मेलन यही थे। जनता और प्रतिनिधियों का इतनी अधिक संख्या में इकट्ठा होना और सब सभा-सम्मेलनों में दिलचस्पी लेना इस वर्ष की विशेषता थी जो मैंने पिछले वर्षों में कभी नहीं पाई।

सत्यभिक्षुः

आर्यसामाजिक जगत्

आर्यसमाज मद्रास की ओर से शुद्धि

का हाल हमारे एक 'निजु संवाददाता' ने इस प्रकार भेजा है:—

"इधर आर्यसमाज ने शुद्धि का कार्य भी आरम्भ कर दिया है यह समाचार सुन आर्यमात्र को प्रसन्न होना चाहिए। मद्रास में कुछ काल रहने पर ही एक नये दर्शक को अनुभव हो सकता है कि यहां किस्तान लोगों की कितनी संख्या बढ़ रही है। कितने ही स्त्री पुरुष जो वेष और आकृति से आपको बिलकुल हिन्दू मालूम होते हैं पूछने पर किस्तान पता लगते हैं। अछूत लोगों को जिन्हें यहां पंचम या परिया कहते हैं ईसाई धर्म ही एकमात्र शरण है। उनकी बस्ती कि बस्तियां किस्तान पाई जाती हैं। उनमें से जो कुछ पढ़े लिखे हैं अगर उनसे कहीं अस्पताल आदि में जाति पूछी जाती है तो वे लज्जा से सिर झुका लेते हैं। दूसरी ओर उनमें से जो क्रिश्चन हो गए हैं उनसे जाति पूछी जाय तो वे बड़े गौरव से अपने आप को क्रिश्चियन कहते हैं। ऐसे दृष्टान्त हमने अनेक बार बड़े दुःखी चित्त से देखे हैं।

किन्तु ईश्वर का धन्यवाद है कि समाज की ओर से शुद्धि का कार्य बड़ी सफलता से आरम्भ हुआ है। २० दिसम्बर को सांयकाल श्री० इ० एल ऐय्यर (बार-एट ला) के घर पर १५ किस्तानों की शुद्धि समाज की ओर यथाविधि—की गई। ये सभी मजदूर पेशा लोग हैं, उन्होंने उपरोक्त ऐय्यर महाशय को जो इस विषय में बड़े आग्रही हैं इस बात की खबर दी कि वे किस्तान धर्म को छोड़ कर फिर अपने धर्म में आना चाहते हैं। उन्होंने समाज को खबर दी। समाज के पण्डितों ने हवन कर उनसे पूर्णाहुति दिलवाई। तदनन्तर म० अम्बुजाधन मन्त्री आर्यकुमार सभा मद्रास ने तामिल में उनको आर्यसमाज के मुख्य मुख्य सिद्धान्त समझाये। स्वामी धर्मानन्द जी ने उनको ओंकार का महत्व बताकर सायं प्रातः ओंकार का जप करना तथा मद्यपान आदि को सर्वथा छोड़ देने का उपदेश दिया। उसके बाद ई—एल ऐय्यर (बार-एट-ला) ने उनको उपदेश देते हुए कहा कि आर्य समाज की ऐसी संस्था है जिसके द्वारा वे हिन्दू जो किस्तान हो चुके हैं फिर भी शुद्ध हिन्दू बनाये जा सकते हैं। सारी कार्यवाही के बाद सब लोगों ने मिल कर इकट्ठे भोजन किया। उपर्युक्त शुद्धि में श्रीमान् दोरे स्वामी ऐय्यर प्रधान आर्यकुमार सभा, म० वासुनायडु प्रधान समाज के स्वामी ब्रह्मानन्द आदि अनेक सज्जन भी उपस्थित थे।

—:०:—

आर्य्य समाज 'उरई' की अपील

श्री कृष्णगोपाल जी शर्मा (प्रधान आर्य्यसमाज) ने हमारे पास 'उरई' में मन्दिर स्थापित करने के लिए अपील भेजी है। इस समाज को "स्थापित हुए कई वर्ष हो चुके। समाज प्रतिनिधि सभा में भी प्रविष्ट हो चुकी है परन्तु आज तक समाज मन्दिर नहीं बन सका मन्दिर के लिए भूमि भी खरीद ली गई है परन्तु आवश्यकता है—कि मन्दिर बनवा कर उसमें एक जातीय हाईस्कूल स्थापित कर दिया जाहे"। प्रधान महोदय ने टिकटों द्वारा धनएकत्रित करने का उपाय निकाला है। प्रत्येक टिकट का मूल्य चार आना रक्खा गया है। प्रत्येक समाज से प्रार्थना की गई है कि वह अपने सभासद् को एक २ टिकट बेच दे जिससे सहज ही में धन एकत्रित हो सकता है। आर्य्य सज्जन इधर ध्यान दें।

—:०:—

'धर्मसूत्रधार' और 'राष्ट्रसूत्रधार'

यह शीर्षक है उस तुलना का जो सहयोगी "भारतोदय" ने महर्षि दयानन्द और लो० मा० तिलक में की है। हम इस प्रकार की तुलना के विरुद्ध आवाज उठाना चाहते हैं। हम यह समझते हैं कि स्वामी दयानन्द एक देशीय होता हुआ भी सार्वभौमिक था। उसके सिद्धान्त, मन्तव्य और कथन एकदेशीय की अपेक्षा सार्वभौमिक अधिक हैं। उस की देशभक्ति सार्वभौमभक्ति का अंगमात्र थी, पृथक् नहीं।

यद्यपि लो० मा० तिलक के प्रति हमारे हृदय में अगाध श्रद्धा और भक्ति है परन्तु हमारे इस कथन से उस पूज्यपाद व्यक्ति का कोई अपमान नहीं होगा कि उनके सिद्धान्त सार्वभौमिक की अपेक्षा एकदेशीय ही अधिक थे। महर्षि दयानन्द को धर्मसूत्रधार के साथ राष्ट्रसूत्रधार भी निःसंकोच कहा जा सकता है परन्तु लो० मा० तिलक के लिए "राष्ट्रसूत्रधार" विशेषण ही उपयुक्त है दूसरा नहीं। हम इस प्रकार की तुलनाओं से हम दयानन्द के महत्व से कम करते हुए उन्हें एकदेशीय बनाते हैं। दयानन्द और तिलक में वही भेद है जो "महापुरुष" और "नेता" इन दो शब्दों में है। दयानन्द "महापुरुष" था और लोकमान्य तिलक "नेता" थे। महापुरुष, कार्लाइल के कथनानुसार, किसी देश विशेष की सम्पत्ति न हो सम्पूर्ण भूमण्डल के मार्ग दर्शक होते हैं। उनकी दृष्टि में प्राणी मात्र एक बराबर होते हैं। परन्तु नेता अपने देश की स्थिर सम्पत्ति है। उसी देश की आने वाली सन्ततियों के लिए वे पेशवाई का काम करते हैं। उनके कथन और सिद्धान्त देश और काल की सीमाओं से बद्ध होते हैं। इस प्रकार की तुलना एक महापुरुष के महत्व को अनुचित रूप से कम कर देती है वहां [illegible] कमनीय "नेता" को उस ऊंचाई तक पहुंचा देती है जो एक निष्पक्षपात दर्शक को बहुत खटकती है। ("आर्य")

—:०:—

(४ थे पृष्ठ का शेष)

"अन्यो ऽन्यं प्रशंसन्ति अहो रूपमहोध्वनिः"

बड़ी कशमकश के बाद श्री० चिन्तामणि को झांसी की ओर से प्रान्तीय कौंसिल की मेम्बरी मिली। बस, माडरेट पार्टी के घर में तो घी के चिराग जल गये। सहभोज किया गया। चिन्तामणि जी की प्रशंसा में भाषण दिये गये। पं० हृदयनाथ कुंजरू ने तो इन्हें इस "गुणों का कोष" बतलाते हुये आसमान पर भी चढ़ा दिया। शायद इतने अधिक आवश्यक समझे गये कि—'लीडर' के कई कालम इसी के लिए खराब किये गये। श्री० कुंजरू जी, दौर्भाग्य से, उस समय इस मेम्बरी से फिसल गये थे पर, अब, सब तरह की कोशिश और ढंग के बाद, वे मिर्जापुर की ओर से सफल मनोरथ हो गये। बस, फिर सहभोज किया गया। अब की बार श्री, चिन्तामणी ने, पिछला ऋण उतारने के लिए, श्री कुंजरू जी की प्रशंसा के पुल बांध दिये। "संयुक्त प्रान्त में सब से अधिक विद्वान् लेखक वक्ता, विचार शील" यदि कोई है तो श्री चिन्तामणि जी की सम्मति में, कुंजरू जी ही हैं। एक वक्ता ने तो इन्हें "राजनैतिक सन्यासी" तक कह डाला। यह घटना कवि के ऊपर लिखे श्लोकांश का अच्छा उदाहरण हो सकती है।

—:०:—

विचार-तरंग

"भयंकर अग्निकाण्ड"

(गतांक से आगे)

और तो और इस संसार के एक बड़े जन समुदाय का सिद्धान्त ही यह है कि 'खूब नई २ आगें लगाओ जिस से कि (उन के बुझाने के लिये) बहुत २ आविष्कार होवें, । फलतः खूब आगें लगाई जा रही हैं और खूब नये आविष्कार हो रहे हैं नई २ आग बुझाने की कलायें और यन्त्र बनाये जा रहे हैं। यह सच है कि ये सब आविष्कार प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में इन कामनाओं को बुझाने के प्रयोजन से ही किये जा रहे हैं। अब पानी के (पुराने ढंग के) स्थान पर आग बुझाने के लिये सब कहीं नवाविष्कृत धाराओं का प्रयोग दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। आप आश्चर्य न करें कि दिया सलाइयां (जिन्हें कि जहाजों पर लाद कर दूसरों देशों में स्पर्धा के साथ भेजा जा रहा है) आग बुझाने ही के लिए हैं। तोप गोले ४२ सेन्टी मीटरें, बम तथा सिगरेट आदि वस्तुयें आग बुझाने ही के लिये आविष्कृत की गई हैं। पंखे—नहीं नहीं बिजली के पंखे—आग बुझाने ही के काम आते हैं। मही का तेल तथा स्पिरिट आदि का स्थान २ पर प्रयोग आग बुझाने के ही प्रयोजन से हो रहा है।

× × ×

ये ही दो चार वस्तुयें नहीं किन्तु अनेकों प्रकार की मशीनियां इस प्रयोजन के लिये आविष्कृत की गई हैं, जिन्हें कि लाखों मनुष्यों की सुसंगठित (Organiged) मंडलियां और इन के विशाल कारखाने धन में तय्यार कर धड़ाधड़ संसार के सभी कोनों में पहुंचाते जा रहे हैं। यदि कहीं के लोग इन्हें नहीं मांगते तो पहिले किसी युक्ति से उन के घरों में आग लगादी जाती है और फिर यह आग बुझाने का सामान उन को भेंट कर दिया जाता है। इस प्रकार वे भी इस नये सिद्धान्त में दीक्षित हो जाते हैं और आविष्कारों के लिये आगे बढ़ाया जाने लगते हैं। दूसरी तरफ 'नई सभ्यता' का प्रचार अनेकों की आग बुझाने के लिये नाना रूपों में बड़े वेग से किया जा रहा है।

× × ×

यही नहीं योरोप की कई जातियों ने तो पूर्वीय लोगों की आग बुझाने का सारा ठेका ही हाथों में स्वयमेव ले लिया है। यहां के लोग तो चिल्ला चिल्ला कर कहते हैं 'अब हम अपनी आग स्वयमेव बुझालेंगे' बस करो, "हम तो बिलकुल ठंडे हो चुके जाते हैं" किन्तु वे लोग कहते हैं नहीं अभी तुम में कुछ गर्मी बाकी है" और अपने आग बुझाने के इस महायन्त्र की चर्खी पर बैठे घुमाये चले जाते हैं।

× × ×

इस 'युगपरिवर्तक' आविष्कारों के साथ साथ आग भी बढ़ती जाती है और इस से जलता हुआ सारा युग इस तरह भी बदलता जाता है। क्यों कि सिद्धान्त ही यह है कि खूब आग लगाओ। नहीं तो आविष्कार कैसे होंगे। आविष्कार तो स्वय उद्देश्य है किसी के साधन नहीं। यदि ये आग बुझाने के लिये (साधन) होते, तो नई २ आगें लगाने की क्या जरूरत होती। खूब आविष्कार बढ़ रहे हैं और आग भी प्रचण्ड रूप धारण करके बढ़ती जा रही है। देखने वाले देख रहे हैं कि ऐसे आविष्कार और आविष्कृत सहित सब कुछ भस्म करती हुई ऊंची ज्वालाओं में लपटों की विकराल जीभें लपलपाती हुई यह भयंकर अग्नि सम्पूर्ण संसार को ग्रास करने के लिए आगे बढ़ती चली जा रही है।

× × ×

यदि इन बढ़ती आती हुई ज्वालाओं में जल मरने से बचना है तो जाओ, कपिल मुनि के आश्रम में जाओ, जिनका कि शास्त्र इसी लिये प्रारम्भ होता है कि इन तीन प्रकार के तापों से जिन में कि संसार जला जा रहा है किस प्रकार से 'एकान्त और अत्यन्त' छुटकारा हो।

अनिश्चित तथा क्षणिक छुटकारे का उपाय तो सब कोई जानता है और इसके बताने वाले बहुत से दम्भी फिरते हैं। देखना, इनको कभी अपना गुरु न बनाना। इनके दमभर में पार लगाने वाले चुटकलों की तरफ कभी ध्यान नहीं देना। ये रक्षा करने के स्थान पर तुम्हें नरक की जलती हुई भट्टियों में धकेल देंगे। सच्चे गुरु वही हैं जो उन आर्ष उपायों का उपदेश करते हैं जिन से कि आग 'अत्यन्त' बुझ जाती है और ऐसी बुझती है कि फिर कभी जल उठने का डर नहीं रहता।

उन आग बुझाने की दवा देने वाले डाक्टरों वैद्यों हकीमों के मुंह न लगना जो कि तुम्हें ठग ले जाते हैं—ऐसी गोलियां या चूर्ण (Powder) खिला पिला जाते हैं जिस से कि उस समय तो आग बुझती मालूम होती है किन्तु असल में और न जाने कितनी नई आगें देह में पैदा होकर जलाने लगती हैं। उन के समीप फिर कभी न जाना। सच्चे वैद्य वही हैं जो कि सम्मुख औषधि देते हैं ओष अर्थात् दाह को पी जाने वाला इलाज करते हैं।

× × ×

उन आग के ठेकेदारों को स्पष्ट दो जो आग बुझाने वालों का वेष भर कर आते हैं और बड़े २ ठाठ खड़े कर के ऐसा दिखलाते हैं कि आग बुझाने का बड़ा भारी काम हो रहा है किन्तु असल में इस की आड़ में अपनी बढ़ी हुई इन्द्रियों की अग्नि तृप्त करने के लिये ईंधन बटोरते फिरते हैं। उन्हें कह दो कि तुम इस प्रभु काम के 'बिलकुल अयोग्य' हो। जो अपनी चिता के लिये लकड़ियां जमा कर रहा है वह थोड़ी देर में अपनी लगाई आग में जल मरने वाला दूसरों को आग से क्या बचायगा। सच्चे आग बुझाने वाले वही हैं जिन्हें कि स्वयं कोई आग नहीं जला रही—जो स्वयं सब प्रकार से शान्त हो चुके हैं। वे ही आग बुझा सकते हैं और बुझा रहे हैं। यह उन्हीं के केवल करुणा प्रेरित कर्मों का फल है कि यह संसार अभी तक बचा हुआ है, नहीं तो न जाने कब का इस घोर आग में जल कर राख हो गया होता।

× × ×

उन सब लोगों से बच कर रहो जो कि आग में प्रचण्ड जल रहे हैं किन्तु आग बुझाने का ढंडोरा पीटते हुये तुम्हारे पास बिना बुलाये आते हैं। ये न जाने कितनों की झोंपड़ियां फूंक चुके हैं और फूंक रहे हैं। इन से बच कर रहो, विशेषतः उन बड़ी सामर्थ्य रखने वालों से जो जैसी आग चाहते हैं भड़का देते हैं। सब निर्बल पुरुष उसी आग में 'मर भर तड़ तड़' जलने लगते हैं। इन आग के खिलाड़ियों से बच कर संभल कर रहो। इन की आग देख कर दंग मत बन हो किन्तु अपनी शक्तियों का उपयोग लो।

असमाप्त

शर्मन्

गुरुकुल-समाचार

[कार्यालय से प्राप्त]

पढ़ाई का क्रम

सत्र पूरे जोर पर है। परीक्षायें समीप आरही हैं। विद्यार्थी उनके लिए तय्यारी में लगे हुए हैं। सब कार्य नियम पूर्वक चल रहा है। समय विभाग ऐसा बंधा हुआ है कि आज कल किसी को बीमार होने की भी फुर्सत नहीं। सब विषयों की पढाई नियम से चल रही है। इतिहास के उपाध्याय श्रीयुत शिवराम अय्यर सर्दी न सह सकने के कारण चले गए हैं, उनका कार्य बांट लिया गया है।

सभायें

इन्हीं दिनों सभाओं का भी पूरा जोर रहता है। सभी सभाओं के अधिवेशन उत्साह पूर्वक होरहे हैं। राष्ट्रीय सप्ताह में ब्रह्मचारियों ने भी कांग्रेस का एक अधिवेशन किया, जिस में देश सम्बन्धी प्रश्नों पर विचार हुआ। साहित्य परिषद् वाग्वर्धिनी आदि के अधिवेशन भी खूब उत्साह से होरहे हैं। वाग्वर्धिनी की ओर से पार्लियमेंट का अधिवेशन शीघ्र ही होने वाला है जिस में भारत के स्वाधीन शासन सङ्गठन पर अन्तिम विचार होगा। इन सभाओं से जहां एक ओर ब्रह्मचारियों का ज्ञान खूब बढ़ रहा है, वहां सभाओं को सङ्गठित करने और अपने भावों को प्रकाशित करने की शक्ति में भी बहुत उन्नति होरही है।

सेवा समिति

गुरुकुल के ब्रह्मचारियों की एक सेवा समिति गत सप्ताह बनाई गई है। इस सेवा समिति का उद्देश्य गुरुकुल के उत्सवों और हरिद्वार के बड़े मेलों पर सेवा का कार्य करना होगा। इसके सभ्यों के लिए प्रारम्भिक चिकित्सा और ड्रिल सीखना आवश्यक ही रखा गया है। यत्न किया जायगा कि वास्तव में रक्षा की सब विधियां इसमें डाई जावें। गुरुकुल का उत्सव समीप है, और उसके पीछे हरिद्वार में अर्ध कुम्भी का भी मेला है। इन दोनों में आशा है हमारे सेवकों को अच्छी सेवा करने का अवसर मिलेगा।

वार्षिक उत्सव

गुरुकुल कांगड़ी का वार्षिकोत्सव २० २१ २२, और २३ को होना निश्चित हुआ है। होली २३ मार्च को है। इस बार से यही निश्चय किया गया है कि उत्सव इन्हीं तिथियों पर हो, क्योंकि पीछे उत्सव करने से गर्मी अधिक होजाती है। उत्सव का समय समीप ही है पूर्ण आशा है कि आर्य पुरुष उत्सव की चिन्ता में संलग्न हो गे।

गुरुकुल के पक्ष में हवा

सत्य सदा समय लेकर ही अपना बल प्रकाशित किया करता है। आज सारा भारत गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की आवश्यकता पर विश्वास करने को बाधित हुआ है। सब को मानना पड़ता है कि भारत का भविष्य इसी शिक्षाप्रणाली के हाथ में है। आत्मिक और शारीरिक शिक्षण को भारतीय शिक्षा का अङ्ग बनाया जाय शिक्षा मातृभाषा ही द्वारा हो, इत्यादि आवश्यक सिद्धान्तों को अब विचार शील भारतवासी स्वीकार कर रहे हैं। वर्तमान गुरुकुलों के भविष्य पर लोगों की आशायें बढ़ रही हैं। सारे देश का जलवायु गुरुकुलों के अनुकूल है।

क्या आर्य्य पुरुष न उठेंगे ?

देश को जो रास्ता आर्यपुरुषों ने शिक्षा के विषय में दिखाया था उसे देश ने अङ्गीकार किया है। जब सारा देश आर्यसमाज के शिक्षा सम्बन्धी सिद्धान्तों से, असन्तुष्ट था, और हंसी करता था, उस समय अपने सिद्धान्तों की सत्यता पर विश्वास करके आर्य पुरुषों ने यह दिन देखने का अधिकार प्राप्त किया कि सारा देश उनके आदर्शों के सामने सिर झुका रहा है। क्या इस अवसर को वह अपने हाथ से जाने देंगे? यह समय है, कि आर्यपुरुष पूरे जोर से कर्म करें—और पहिले विद्यमान गुरुकुलों को स्थिर और दृढ़ करते हुए आगे के लिए विस्तार का यत्न करें।

गुरुकुल भैंसवाल,

ऋतु सर्वथा अच्छी है। यहां की दृष्टि से शीत अपने पूरे बल पर है। मलेरियाआदि कुछ नहीं है ब्रह्मचारिगण सर्वथा स्वस्थ हैं। केवल दो ब्रह्मचारियों को मास में एक दिन के लिये ज्वर आया था।

पढ़ाई खूब चल रही है इस समय ६ ब्रह्मचारी द्वितीय श्रेणी में हैं। और २० ब्रह्मचारी इस श्रेणी में हैं। उनकी परीक्षा लगभग दो मास के बाद होनी निश्चित हुई है।

गत मास में म० मानसिंह जी मुखिया (जो गुरुकुल से ½ मील परे है) निवासी ने एक यज्ञ रच कर उस में गुरुकुल के ब्रह्मचारियों और कर्मचारियों को सहभोज दिया। और ६००) का एक कमरा बनवाने की प्रतिज्ञा की। जिस में से १००) उस समय ही देदिया था। और ५००) हरसाल? पर देने की प्रतिज्ञा की। इस दान का प्रभाव अन्य ग्रामों पर बहुत अच्छा पड़ा है। ऐसे ही अन्य भी यज्ञ रचे जाने की आशा है।

गत मास में ३५ मन बाजरा दान में आया। और २ गायें पानीपत से और एक सफीदों से आयी जिस के लिये दाताओं को धन्यवाद दिया जाता है।

प्रबन्ध—गुरुकुलीय प्रबन्ध की दिक्कतों के हल करने के लिये एक प्रबन्धकर्तृसभा निश्चित हुई है। जिसका अधिवेशन प्रतिमास संभवतः ही हुआ करेगा।

फूलसिंह
मन्त्री शाखा गुरुकुल

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के स्वामी और पब्लिशर श्रद्धाराम के लिए छपा।

पृथिवी का धारण कैसे हो?

(लेखक श्री पं० विश्वनाथ जी विद्यालंकार)

सत्यंबृहदृतमुग्रंदीक्षातपो ब्रह्मयज्ञः पृथिवीं धारयन्ति ॥ अथर्ववेद १२।१।१

पृथिवी का धारण कैसे हो सकता है इस प्रश्न का उत्तर अथर्ववेद के १२ वें काण्ड के प्रथम सूक्त के आरम्भ में सूत्र रूप से दे दिया है। पृथिवी के धारण के लिये इस मन्त्र में ६ उपाय बताए हैं। (१) बृहत्सत्य (२) उग्रऋत (३) दीक्षा (४) तप (५) ब्रह्म (६) यज्ञ इनकी संक्षिप्त व्याख्या नीचे दी जाती है। प्रथम उपाय बृहत्सत्य कहा गया है। बृहत्सत्य का अभिप्राय क्या है? सत्य और अनृत की व्याख्या में अथर्ववेद में कहा है "तयोर्यत्सत्यं यतरदृजीयः" ८।१३ अर्थात् झूठ और सत्य में पहचान यह है कि सत्य सर्वदा असत्य से ऋजु अर्थात् सरल हुआ करता है। वास्तव में सत्य के परखने की यह कसौटी बहुत उत्तम और यथार्थ है सत्य वस्तु पर उससे उलटा आवरण चढ़ाना ही असत्य है। असत्य की कल्पना में मूल भूत सत्य की अपेक्षा आवश्यक है। बिना सत्य के असत्य का अस्तित्व असम्भव है। सत्य अपने स्वरूप के लिये केवल वस्तु पर दृष्टि रखता है और असत्य अपने स्वरूप के बनाने के लिये सत्य के स्वरूप को भी अपेक्षा करता है। इस लिये जहां सत्य को अपने अस्तित्व के लिये एक मात्र एक ही वस्तु की अपेक्षा है वहां असत्य को स्वरूप के अस्तित्व के लिये दो वस्तुओं की अपेक्षा है यतः सत्य के स्वरूप के बनने के बाद ही असत्य का स्वरूप बन सकता है। अतः सत्य का मार्ग ऋजु अर्थात् सरल है संकीर्ण नहीं नहीं और असत्य का मार्ग संकीर्ण है सरल नहीं।

प्रश्न पैदा होता है कि प्रथम उपाय में बृहत् शब्द क्यों लगाया। इसके उत्तर के लिये हमें मनुष्य जीवन की घटनाओं पर विचार करना चाहिये। मनुष्य ऐसे देखे जाते हैं कि जिनका वैयक्तिक अवस्था में अपना [illegible] आदर्श रूप होता है, वे उस अवस्था में सत्य के अतिशयभक्त होते हैं और वैसे ही करते भी हैं। परन्तु ज्यों ही व पारिवारिक जीवन में पग रखते हैं और जाया पुत्रादि के पालने में सत्य व्यवहार मात्र से अपने आपको असमर्थ पाते हैं वे शनैः २ असत्य की ओर भी झुकने लगते हैं। कई मनुष्य इस प्रकार के भी देखे गये हैं जो अपने पारिवारिक जीवन की भी परवाह नहीं करते और इस जीवन की अनेक यातनाओं के सहते हुए भी असत्य पर आरूढ़ रहते हैं परन्तु सामाजिक और राष्ट्रीय हित में असत्य व्यवहार का पूर्ण बहिष्कार नहीं करते। वहां समय समय असत्य व्यवहार को भी धर्म का अंग समझते हैं। प्रायः वर्त्तमान सामाजिक और राष्ट्रीय जीवनों का यही हाल है और इसी सिद्धान्त के कारण आज कई राष्ट्र प्रभु पदवी और कई भृत्य पदवी का भोग कर रहे हैं। इस दृष्टि से राष्ट्रीय जीवन की भले ही कितनी उन्नति होले परन्तु यह आवश्यक है कि ऐसी राष्ट्रीय उन्नति में भी मनुष्यों के मनों हृदयों तथा आत्माओं का न तो यथार्थ विकास ही सम्भव है और न सन्तोष और सुख ही जीवन में मिल सकता है। और साथ ही यह भी भय रहता है कि कल कोई हमें न भाद्बोचे। ऐसे राष्ट्रीय प्रधान जीवन के रहते रहने चाहे हम कितने भी "राष्ट्रीय मित्र संगठन" तय्यार करें वे--परस्पर अविश्वास होने के कारण--यथार्थ रूप से स्थायी प्रभाव वाले नहीं होते। अतः इस राष्ट्रीय जीवन की दृष्टि में अवश्य कोई परिवर्तन होना चाहिये। वह यह कि जैसे पारिवारिक जीवन की दृष्टि से वैयक्तिक जीवन और सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवनों की दृष्टि से पारिवारिक जीवन एक संकुचित दायरे का और कम महत्व का समझा जाता है इसी प्रकार "मनुष्य मात्र हित" या "सर्वजनहित" के सामने राष्ट्रीय जीवन को भी तुच्छ समझा जाय। इसी चित्त वृत्ति के परिवर्तन से राष्ट्रीय जीवन के लिये भी असत्य व्यवहार को अधर्म समझा जा सकता है क्योंकि इस से चाहे ही राष्ट्रीय जीवन कई अंशों में सुधर जाय परन्तु सर्वजनहित कभी सुधर नहीं सकता। वेद किसी विशेष व्यक्ति, परिवार, समाज या राष्ट्र के धर्मों को नहीं दर्शाता अपितु सार्वभौम जीवन की समस्याओं का हल बताता है इसी लिये पृथिवी मात्र के धारण के लिये सत्य के साथ बृहत शब्द लगाया गया है। बृहत्सत्य का अर्थ वह सत्य है जिसका सम्बन्ध सब प्राणिमात्र से है। अर्थात् बृहत्सत्य के सिद्धान्त को दृष्टि में रख कर अगर अपने छोटे दायरों के जीवनों को ठीक किया जाय और इसी सिद्धान्त से अपने राष्ट्रीय जीवन को भी यदि सर्वजनहित जीवन का एक भाग अथवा मंजिल समझा जाय तो राष्ट्रीय जीवन के अवलम्बन के लिये भी असत्य व्यवहार उचित न समझा जायगा अपितु पृथिवी मात्र के धारण के लिये बृहत्सत्य का मार्ग ही लिया जाना श्रेयस्कर समझा जायगा।

(२) दूसरा उपाय "ऋतउग्र" का है। ऋत का अर्थ है-नियम। और उग्र का अर्थ है-प्रभावशाली। जीवन यात्रा की प्रत्येक मंजिल में नियमों की आवश्यकता है। बिना जीवन को नियम में बंधे, जीवन बे लगाम घोड़े और बिन अंकुश हाथी के समान हो जाता है। नियम जीवन में ऊंट को नकेल का काम देता है। और जैसे २ वैयक्तिक जीवन से उठ कर मनुष्य जीवन की अगली मंजिलों की ओर पग बढ़ाता है वैसे ही नियमों की अधिक अधिक आवश्यकता होती जाती है। जीवन के लिये नियम प्राण रूप है। राष्ट्रीय जीवन में नियम अर्थात् लेजिस्लेशन थोथा और व्यर्थ है अगर उसके साथ नियमों का प्रभाव दिखाने वाला नियामक अर्थात् एक्जेक्टिव भाग न हो। यह ही भाग "उग्ररूप" है। लोगों को अगर यह विश्वास हो कि नियमों के होते हुए भी नियामक विभाग नहीं अथवा कमजोर हैं तो वे कभी नियमों की शृङ्खला में अपने आपको परतन्त्र न करेंगे। नियम व्यर्थ हैं यदि उनका पालन न कराया जाय। और इस के लिये आवश्यक है—

(शेष पृष्ठ ६ पर देखो)

श्रद्धा

कांग्रेस और अछूत

(२)

आर्य्य समाज का कर्त्तव्य:----

पिछले अंक में हम यह बता चुके हैं कि अछूतों की समस्या की ओर ध्यान देकर कांग्रेस ने महत्व पूर्ण कार्य किया है। सरकार के साथ असहयोग का प्रस्ताव करते समय घर में सहयोग की आवश्यकता को अनुभव करने की शक्ति पैदा करलेना हमारे नेताओं की बुद्धिमत्ता का चिन्ह है।

परन्तु, इस समय आर्य्य समाज का विशेष कर्त्तव्य है। जब से आर्य्य समाज ने कार्य्य प्रारम्भ किया है, तभी से अछूतों के उद्धार का प्रश्न उसके कार्य विभाग का एक आवश्यक अंग रहा है। आर्य्यसमाज पहली संस्था है जिसने हर तरह के विरोधियों के सामने भी "स्त्रीशूद्रौ नाधियाताम्" और जन्म से गुण कर्म व्यवस्था का क्रियात्मक खण्डन किया। हम यह नि संकोच कह सकते हैं कि इस प्रश्न की ओर ध्यान देने और उसे क्रिया रूप में भी परिणित करने का श्रेय से अधिक श्रेय यदि किसी संस्था को है तो वह आर्य्यसमाज को ही है।

परन्तु हमारा कार्य "एरण्डोऽपि द्रुमायते" के अनुसार ही है। चूंकि अभी तक किसी और भारतीय समाज ने इस क्षेत्र में काम नहीं किया इस लिए हमारा कार्य कुछ बड़ा प्रतीत होता है, परन्तु यदि उसकी वास्तविकता और गम्भीरता को देखा जावे तो वह कुछ भी नहीं है। हमारे विरोधी अर्थात् ईसाइयों के मुकाबले में आर्य्यसमाज के कार्य की इकाई बहुत छोटी है। यह ठीक है, ईसाई मिशनरियों को सरकार की ओर से बहुत सुभीताएँ हैं और आर्थिक कष्ट नहीं है परन्तु, ऐसा होने पर भी, यह निःसन्देह कहा जा सकता है कि जितना त्याग और लगन उनके कार्य्य कर्त्ताओं में है उतना हमारे अन्दर नहीं। सिवाय कुछ एक छोटी २ पाठशालओं के हमने कोई विशेष रचनात्मक कार्य नहीं किया है। हमारा ध्यान प्रचार और शुद्धि की ओर ही अधिक रहा है।

परन्तु अब इतना ही पर्याप्त नहीं है। अब हमें कुछ क्रियात्मक कार्य भी प्रारम्भ करना चाहिए। यदि आर्य समाज शुद्धि को ही इस आन्दोलन का क्रियात्मक भाग समझता है तो वह बड़ी भारी भूल में है। शुद्धि से जहां कई लाभ हुये हैं वहां हम उन हानियों को भी नहीं भुला सकते जो इस के साथ लगी हुई है। परन्तु इस विषय को भविष्य के लिए रखते हुए हम यहा इतना कह देना आवश्यक समझते हैं कि केवल शुद्धि तब तक कोई अर्थ नहीं रखती जब तक शुद्ध हुई व्यक्तियों की रोजी और शिक्षा का, आर्यसमाज की ओर से, कोई विशेष प्रबन्ध नहीं होता।

इस लिए आर्यसमाज को अब, विशेष रूप से इस प्रश्न में दिलचस्पी लेनी चाहिये। उनके लिये छोटे २ स्कूल और रात्रि पाठशालायें स्थापित की जावें। केन्द्रों में ऐसे विद्यालय भी स्थापित किये जावें जहां उच्च शिक्षा दी जावे जहा तक हो सके, इनका सरकार कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिए। इन विद्यालयों में उन उद्योग धन्धे की शिक्षा अवश्य दी जावे जो कि इन छोटी जातियों में कुल परम्परा से चली आ रही हैं। इनकी शिक्षा इस प्रकार से हो जिस से वे अपने पावपर आप खड़े हो सकें। आर्थिक कष्टों को दूर करने के लिए इनमें सहयोग समितिआ स्थापित की जावें। मुकद्दमे बाजी से बचाने के लिए इनमें पचायतें स्थापित की जावें—इत्यादि बहुत कुछ कार्य ऐसा है जिधर समाज को अब शीघ्र, ध्यान देना चाहिए।

एक बात और है। कांग्रेस के प्रस्ताव पास करने और महात्मागान्धी जी के, विशेष रूप से, इस प्रश्न को अपने हाथ में लेने के कारण शिक्षित जनता का ध्यान इस प्रश्न की ओर अब खींचने लगा है। चूंकि अछूतों का प्रश्न केवल धार्मिक और सामाजिक ही नहीं है अपितु राजनैतिक भी है। फलतः स्पष्ट है, राजनैतिक संस्था इस समस्या की ओर, अब विशेषरूप से ध्यान देंगी। इस क्षेत्र में अगुआ होने और अबतक सब से अधिक कार्य करने के कारण प्राप्त की हुई कीर्ति को यदि आर्यसमाज स्थिर रखना चाहता है तो उसे अभी से, इस के लिए विशेष उद्योग और प्रयत्न आरम्भ कर देना चाहिये। उसे अपना कार्य इस ढंग पर करना होगा जिस से वह इस विषय में, सब का अगुआ रहे जैसा कि अभी तक रहा है।

यदि आर्यसमाज अपनी इस स्थिति को सभालने में असमर्थ है तो उसे, इस अछूत समस्या को हल करने के लिए ही, इन राजनैतिक संस्थाओं के साथ मिलते हुवे उनका ही अनुकरण प्रारम्भ कर देना होगा। आर्यसमाज को चाहिये कि वह अपना ध्येय पथ शीघ्र ही निश्चित करले।

प्रभा

कानपुर से प्रकाशित होने वाली सचित्र मासिक पत्रिका 'प्रभा' इस मास से नये वर्ष मे पदार्पण करती है। हिन्दी में इस समय कई दर्जन मासिक पत्र निकल रहे हैं परन्तु उन में सब से अधिक उच्च, कोटि की यदि कोई पत्रिका है तो वह "प्रभा" ही। सुन्दर रंगीन चित्रो के अतिरिक्त लेख भी गम्भीर, सामयिक और उत्कृष्ट कोटि के होते हैं। परन्तु हमें यह जान दुख हुआ है कि इस पत्रिका के संचालकों को गत वर्ष घाटा रहा है। हिन्दी प्रेमियो के लिए यह अत्यन्त दौर्भाग्य की बात है कि ऐसे विशिष्ट पत्रो के संचालको को केवल आर्थिक कष्ट के कारण अनुत्साहित होना पड़ता है। हम हिन्दी पाठको से सानुनय प्रार्थना करेंगे कि वे इस पत्रिका के ग्राहक बन प्रकाशको का उत्साह बढ़ावें। मूल्य ५) है जो उत्तमोत्तम लेख कविता और चित्रो से सुशोभित ७० पृष्ठ के लगभग पाठ्य विषय देने वाली इस पत्रिका के लिए कुछ भी नहीं है।

शिक्षा जगत्

छुट्टियों का उपयोगः----

अभी पिछले दिनों, इंगलैण्ड के शिक्षा सचिव मि० फिशर ने शिक्षा सम्मेलन में एक व्याख्यान दिया था। प्रसंग वश उसी में उन्होंने छुट्टियों से उपयोग लेने के ढंग पर भी कुछ एक शब्द कहे थे। उनमें से कुछ एक मैं आप के पाठकों के सामने रखना आवश्यक समझता हूं:—

(१) अपनी छुट्टी का काम सावधानता से निश्चित करलो परन्तु यदि कुछ भी गड़ बड़ हो तो उस छोड़ने के लिए भी तैय्यार रहो।

(२) जब तुम दक्षिण की ओर जा सकते हो तो उत्तर की ओर मत मुंह उठाओ।

(३) दैनिक कार्य्य विभाग का परिवर्तन भी छुट्टी के समान है।

(४) किसी सवारी पर मत चढ़ो जब कि तुम पैदल जा सकते हो और पैदल मत जाओ जब कि तुम घुड़सवारी कर सकते हो।

(५) एक उपयोगी छुट्टी अनन्त काल के समान है। उसमें समय का गिनना नहीं हो सकता।

(६) छुट्टी का एक सबसे अधिक उत्तम लाभ नये मित्रों का बनाना है।

(७) सब से अधिक उपयोगी अनध्याय वह है जिस दिन तुम सब से अधिक नया अनुभव प्राप्त करते हो।

(८) अगले सप्ताह वा सत्र कार्य्य निश्चित करने के लिए छुट्टी आती है।

(९) छुट्टी के खाली समय को भरने के लिए पुस्तक एक श्रेष्ठ साधन है।

(१०) छुट्टी का लाभ उठाने में सब से अधिक चतुर चित्रकार, प्रकृति प्रेमी यात्री और ऐतिहासिक पुरुष है। और सब से अधिक बुरा वह है जो गुल्ली-डण्डा ही खेलता है।

(११) प्रातः भोजन का समय कभी कभी बदल कर तुम छुट्टी का आनन्द ले सकते हो।

—:०:—

भारतीय शिक्षा पर संकटः----

इसी विषय पर लण्डन की "ईस्ट इण्डिया ऐसोसियेशन" में मि० टी० वाइडर ब्रूरेन ने, हाल ही में, एक व्याख्यान दिया था। वक्ता ने उन संकटों की ओर निर्देश किया था जो अंग्रेजी शिक्षापद्धति के अन्धा धुन्ध अनुकरण करने से भारत पर आ सकते हैं। इस पर उन्होंने बहुत बल दिया कि आधुनिक जगत की भिन्न २ शिक्षापद्धतियों का अनुशीलन करने के बाद जो समय और परिस्थिति के अनुकूल हो उसी का यहां प्रयोग होना चाहिए। उदाहरण के लिए, उन्होंने बताया, मानसिक विकास और बुद्धि की तीव्रता में भारतीय बालक विशेषतः १३ १४ की आयु में, अंग्रेजी बालक से आगे होता है। इस लिए १७–१८ साल तक के भारतीय बालक का नियमन बड़ी होशियारी से होना चाहिए। वक्ता महोदय ने यह सम्मति प्रकट की कि इतनी छोटी आयु में प्रारम्भ से ही बच्चों के लिये बाहर के परीक्षक नियुक्त करना बहुत हानिकारक है। इस से होने दुष्परिणाम की उन्होंने चेतावनी दी।

मुझे आशा है कि यह चेतावनी व्यर्थ न जायेगी। हमारे शिक्षा सुधारकों के लिये गुरुकुल शिक्षा प्रणाली बहुत सहायक हो सकती है क्योंकि इस में अध्यापक ही परीक्षक होते हैं।

—:०:—

पटना में राष्ट्रीय शिक्षा

की लहर चल पड़ी है। देश भक्त श्री. हक महोदय ने गंगा के किनारे "खिलाफत आश्रम" खोल दिया है जिस में गुरुकुल शिक्षाप्रणालि के ढंगपर सब प्रकार के बालों को शिक्षा दी जावेगी।

इसके अतिरिक्त, वहां पर एक जातीय महाविद्यालय भी खुलने वाला है। माघके मध्य में श्री० महात्मा गाँधी उसका उद्घाटन करेंगे। आशा है, दोनों संस्था स्थिरता पूर्वक कार्य्य करेंगी।

देहली पीछे नहीं हैः---

अभी तक मेरा ख्याल था कि भारत की मुख्य नगरी देहली में जातीय शिक्षा के लिए कुछ उद्योग नहीं हो रहा परन्तु वह भ्रम शीघ्र ही दूर हो गया जब मैंने सुना कि वहा के "दयानन्द विद्यालय" ने सरकार से सम्बन्ध तोड़दिया है। अब मुझे विश्वस्त सूत्र सूत्र से ज्ञात हुआ है कि श्री० पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी, हकीम अजमल खां आदि नेताओं के उद्योग से वहां शीघ्र ही एक जातीय विश्वविद्यालय स्थापित होने वाला है। कई सेठों से दान मिलने की सम्भावना है। आशा करनी चाहिए कि सरकारी विश्वविद्यालय से पूर्व ही इसकी स्थापना हो जावेगी।

—:०:—

हैडमास्टर के पेट में छुरी

रानीगंज के एक १०वीं श्रेणी के विद्यार्थि ने अपने मुख्याध्यापक के पेट में इस लिए छुरी भोंक दी क्योंकि उसे एन्ट्रेंस परीक्षा में दाखिल होने के लिए आज्ञा नहीं मिली थी। इस अपराध का भार विद्यार्थि के सिर पर उतना नहीं है जितना उस विदेशी शिक्षा प्रणाली का है जिस में वह पला है। अपने अध्यापकों और गुरुओं के आदर करने का पाठ पढ़ाना उसमें अनुचित समझा जाता है। ऐसी शोक जनक घटना नौकरशाही और उसके अन्ध भक्तों की आंख खोलने के लिए पर्याप्त हैं।

सत्यभिक्षु

—:०:—

बेसुरा आलाप

(लेखक श्रीयुत बकवासी जी)

१— अबकी प्रभा में 'सुजलाम्' का चित्र खूब बना है। देव बालायें पानी तो क्या गिरा रही हैं हां मालूम होता है कि बादलों के गर्जने से या बिजली की कड़क से डर जाने के कारण या किसी के धक्का देने से उन के दूध से भरे घड़े मुंध गये हैं। अब मुंध गये तो फौरन आरत नही लाल हरी २ हो कर सुफला हो गई। वाह! क्या कहना सम्पादक जी ने तो चित्रकार को धन्यवाद दिया ही है हम भी उस के साथ अपना धन्यवाद जोड़े बिना नहीं रह सकते क्यों कि यदि हम ने इस के विरुद्ध कुछ भी कहा तो हम चित्र कला में ठूंठ समझे जांयगे।

× × × ×

२—विचारे पौराणीक भाई बड़ी भूल में हैं क्यों कि वे अभी तक कलियुग में सर्व संहारक कल्की अवतार की प्रतीक्षा कर रहे हैं। मालूम होता है कि पुराण लेखक से जल्दी लिखते हुये 'गौर' या 'श्वेत' की जगह काली लिखा गया है। और सब संहारक अवतार प्रभु हम लोगों के उद्धार के लिये अवतीर्ण हो ही चुके हैं—अतः यही बात ठीक मालूम होती है। हिन्दुओं को चाहिये कि अपने पुराणों को ठीक करलें और इससे 'असहयोग' करने का नाम न लें। अवतारों से भी परे हटना राम! राम! हिन्दुओं से ऐसा नहीं हो सकता।

× × + +

३— आज कल धड़ल्ले से हिन्दी में अच्छी पुस्तकें, उत्तम २ पत्रिकायें और पत्र निकल रहे हैं। यानी हिन्दी की बेहद उन्नति हो रही है। कइयों का कहना है कि अब बिचारी अंग्रेजी बुरी तरह से तिल मिला रही होगी क्यों कि अब उसे हिन्दुस्तानी अपने यहां से धक्का दे रहे हैं। किन्तु हम ऐसा नहीं मानते। कारण यह है कि अंग्रेजी को पता है कि अब हिन्दी साहित्य प्रायः उसी का अनुकरण करेंगे ही बनेगा—वह उसी पंक्ति के पीछे चलेगा जिस के पीछे कि उस के बड़े २ लेखक गये हैं। इस लिये अगर संस्कृत को हिन्दी की माता होने का अभिमान है तो उसे भी नानी होने की जगह मिल जावेगी। तब घबराने की कोई बात ही नहीं॥

× × × ×

४—कानपुर से निकलने वाले दैनिक 'प्रताप' में निश्चिततौर से एक कालम कविता का भी है। जो कि इस प्रकार के अन्य दैनिक पत्रों में स्थिर रूप से पाया नहीं जाता। सचमुच इससे उस की शोभा बहुत ही बढ़ जाती है क्यों कि एक तो वे कविताएं ही ऐसी बढ़िया होती हैं कि बस पूछिये मत, उन में मीठी रस धारा नहीं होती किन्तु गोलगप्पो में भरा खट्टा रस होता है। आज कल नवीनता का युग है—इस लिये नये पत्रों में इस प्रकार की जब तक नई बातें न हों तब तक पत्र ही क्या निकला?

—:·—

कविता

('श्रद्धा' के लिए विशेपतया लिखित)

(ले० श्रीयुत आनन्द)

संसार का सौन्दर्य है। जिसने उस को जाना वह सच्चा रसिक और जिसने इसको किसी तरह भी अभिव्यक्त कर लिया वही सच्चा कवि है। यह सौन्दर्य कहां नहीं है? संसार को प्रत्येक वस्तु में, जर्रे जर्रे में यही सौन्दर्य है जिस को आंखें हैं वही देखता है। वह सौन्दर्य इन चर्म चक्षुओं द्वारा दृष्टि गत ही नहीं होता वह मर्म भेदी चितवन और ही है जिस से वह दिखाई पड़ता है। जिस को ऐहिक जन कुरूपता कहते हैं उस में भी एक प्रकार का सौन्दर्य है—यह सौन्दर्य सृष्टि का हृदय है। जो इस हृदय के भी हृदय को समझता है—वही सच्चा महा कवि है।

कविता केवल छन्दों मयी वाणी ही का नाम नहीं है—उस सौन्दर्य के अभी द्योतक भाव छकते हुये भी जब रोमों की तरह किसी तरह भी फूट पड़ते हैं वही कविता है। जो लोग उस सौन्दर्य तक न पहुंच केवल शब्दों की अभिव्यञ्जना से किसी तरह उस सौन्दर्य की उत्पत्ति करना चाहते हैं वे बड़ी भूल में हैं। इस सौन्दर्य की उत्पत्ति हो ही नहीं सकती किन्तु वह सौन्दर्य जिन शब्दों को उत्पन्न करता है वही कविता है। बहुतेरे समालोचक शब्दों से अपना सिर लड़ाते रहते हैं, उस में से व्याकरणादि की अशुद्धियों की समीक्षा करते हैं किन्तु वास्तव में वे बड़ी भूल में रहते हैं क्यों कि उन्हों ने उस सौन्दर्य को देखा ही नहीं होता जहां से कविता उत्पन्न होती है। यही कारण है कि वे उस तत्व को पाते ही नहीं इनका समालोचक वही रसिक हो सकता है जिसकी आंखों ने उस सार को देखा हो। उसके प्रत्यक्ष होते ही मनुष्य निष्कम्प, अविचल हो कर निस्पन्द चक्षुओं से उसके दर्शन से अपने हृदय की प्यास को बुझाता है—उस में वाणी ही नहीं रहती यायों कहिये कि वह उसी में तल्लीन हो जाता है। हवा की झकझोरों से झूमते हुये वृक्ष में से जिस प्रकार अचानक फूल झड़ पड़ते हैं, जिस प्रकार अन्दर से उमड़ता हुआ प्रेम बाहर रोंगटों में निकल पड़ता है उसी प्रकार उस, शान्त, गम्भीर प्रचलितोर्मि महासागर से जब कोई धीमे से बाहिर शब्द निकल पड़ता है वही, वास्तव में कविता कहलाने के योग्य होता है, कहने वाला स्वयं नहीं जानता कि वह क्या कह रहा है। सच बात यह है कि उस समय तल्लीन हुई सौन्दर्य रूपी आत्मा ही धीरे धीरे आप से आप अभिव्यक्त होती है वह मस्त रसिक जानने ही नहीं पाता कि यह क्या हो रहा है।

संसार में हजारों लेखक हुये किन्तु उन्हों ने उस तत्व को दिखाने के बजाय शब्दों से ढक दिया। यही कारण है कि वे कवि नहीं कहे जा सकते। यह सौन्दर्य क्या है? पूर्ण मासी की रात में जब सम्पूर्ण कलाओं से पूर्ण प्रफुल्ल कौमुदी नाथ अपनी नव शुभ्र सुधामयी ज्योत्स्ना के साथ विस्तृत नील गगन में उदित होते हैं, समस्त जगत् घुल कर एक हो जाता है तभी उस सौन्दर्य का दर्शन होता है।

प्रभात काल में जब गुलाब के फूलों से मचलती हुई ठण्डी २ हवा का अङ्गों में धीरे धीरे स्पर्श होता है, जब अरुण की ललाई की चपलता से मुग्ध हो, कमलों को मुख दिखलाने के लिये और समस्त संसार को आलोकित करने के लिये सूर्य भगवान् यहां पधारते हैं तभी उस सौन्दर्य के दर्शन होते हैं। अमावस्या की रात्रियों में खिल खिलाते हुये तारों में, नाचती हुई सागर लहरों में, झूमती हुई वृक्ष की डालियों में, पक्षियों की चह चहाने में उस सौन्दर्य के दर्शन होते हैं। यही सौन्दर्य सृष्टि का सार है, यही सच्ची कविता है। इसी में झूमने वाला रसिक है और इसी को अभिव्यक्त करने वाला कवि है।

यदि कोई कविता करना चाहता है या इस ओर आने की कुछ भी रुचि रखता है तो उसे चाहिये कि वह इस तत्व का दर्शन करें इस को समझे और तन्मय हो, तभी वह अनायास ही रसिक हो सकेगा, समालोचक हो सकेगा और कवि कहा सकेगा।

—:o:—

(पृ० ३ का शेष)

कि नियमों के साथ २ उनका उपरूप भी जनता के समक्ष प्रकट हो। यही अभिप्राय "ऋतस्य" का है। बिना इसके सार्वभौम अर्थात पृथिवी मात्र का हित तो दूर रहा वैयक्तिकहित भी आशा मात्र है।

(३) तीसरा उपाय दीक्षा है। दीक्ष धातु का अर्थ है-व्रत। सत्यकार्यों के अनुष्ठान के लिये दृढ़ प्रतिज्ञा का करना व्रत कहाता है। यही दृढ़ संकल्प कर्त्तव्य में प्रवृत्ति और अकर्त्तव्य से निवृत्ति का मूल है। व्रत का भाव व्रती में सच्चे हठ को पैदा करता है। और वह सच्चा हठ लक्ष्य पर पहुंच कर ही शान्त होता है उसके पूर्व नहीं। जितना भी ऊंचा महत्व का तथा दुर्गम कार्य हो उतना ही दृढ़ सच्चा दृढ़ अथवा व्रत चाहिये। बिना मुक्ति को प्राप्त हुए शान्त न हूंगा-यह मुविद्यानन्द का व्रत था और इसी व्रत के बल से ऋषिदयानन्द के लिये जटिल प्रश्नों ने रम्य वाटिकाओं, पैने कांटों ने सुहावने तथा कोमल फूलों और पाखण्ड के विराव से घिरी भूमी ने विशाल सुरम्य भवनों का स्वरूप धारण किया। व्रत के बिना पृथिवी के उद्धार की आशा दुराशा मात्र है।

(४) चौथा उपाय है तप। तप का अर्थ है-ज्ञान पूर्वक जिसको हम कर्त्तव्य समझ लें, उस के पूरा करने में चाहे कितने भी कष्ट आवें उन से न डर कर उन का सहन करें और आगे बढ़ते जावें। यह वृत्ति कर्मिष्ठों की वृत्ति है। इस वृत्ति के अवलम्बन से ही मानुष जीवन में धैर्य और उत्साह के स्रोते का दर्शन मिलता है। इसी वृत्ति पर आरूढ़ हो गीता का कर्मवीर बनता है। यही वृत्ति पद दलित देशों के सिर ऊंचा करती है। यही वृत्ति भावुक और दारुण कष्टों के समय विजेताओं को पैदा करती है। इस वृत्ति के गौरव को दिखाने के लिये अथर्व वेद में कहा है कि "यत्रतपः पराक्रम्यव्रतं धारयन्ति उत्तमम् ॥ १० । ७ । ११ ॥ अर्थात् परमात्मा में तप का पराक्रम है इसी लिये परमात्मा में उत्तम व्रत का निवास है। अर्थात् परमात्मा यतः तपस्वी है इसी लिये वह व्रतपति भी है। बिना तप के व्रत नहीं हो सकता। व्रती बनने के पूर्व तपस्वी होना अत्यन्त आवश्यक है। यह तपोवृत्ति भी पृथिवी का धारण करती है।

(५) पांचवां उपाय-ब्रह्म है। अर्थात् आस्तिक पन है। बिना आस्तिक भाव के महत्व के कार्य असम्भव हैं। बड़े २ कार्य बिना निष्काम प्रयत्न के नहीं हो सकते। और निष्काम भाव का उद्गम आस्तिक भाव में है। आस्तिक भाव जीवन को निराशा वादी नहीं बनाता स सार भर के धार्मिक, सामाजिक और राष्ट्रीय नेता प्रायः आस्तिक भाव वाले हुए हैं। अतः पृथिवी मात्र के धारण के लिये आस्तिक भाव की पुष्टि आवश्यक है।

(६) छटा उपाय है-यज्ञ। यज्ञ का अर्थ है (क) सत्कार (ख) सत्सङ्ग और (ग) दान भाव। परस्पर एक दूसरे का सत्कार जीवन चक्रों में परस्पर संघर्ष पहले तो पैदा नहीं होने देता अगर भूल से हो भी जावे तो उस का शीघ्र प्रतीकार हो जाता है या वह सभा के "ल्यूब्रिकेटिङ्ग आयल" में निर्जीव अर्थात् निः सत्व हो जाता है। सत्सङ्ग जीवन को उच्च बनाता है। सत्सङ्गी सत्सङ्ग को पाये बिना, जग के भंवरों में पड़े बिना, संशय दोला में दोलायमान हुए लहरों पर आरूढ़ हुए के समान शीघ्र ही जीवन के रहस्य को समझ अपने आदर्श की ओर शीघ्र पहुंच जाता है। दान भाव—से स्वार्थ का भाव कृष्णपक्ष के समान शीघ्र क्षीण होता जाता है और शुक्ल पक्ष के समान हृदय का शीघ्र विकास होता जाता है। सच्चे दानी की दृष्टि स्वार्थ से अन्धी नहीं होती। सच्चा दानी सब भूतों के स्वार्थों को अपना स्वार्थ समझता है, और सब भूतों के स्वरूपों में अपना स्वरूप देखने लगता है। इसी भाव से पृथिवी मात्र के उद्धार में वह यावज्जीवन प्रयत्नवान रहता है।

श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी रोगी हैं

श्री० स्वामी जी नागपुर कांग्रेस से लौटकर दिल्ली कुछ दिन ठहरते हुये गुरुकुल में २८ पौष (११ जनवरी) को सकुशल आगए थे। परन्तु नागपुर में मौजी बुखार का कुछ प्रभाव पड़ गया जिस से आप यहां पहुंचते ही रोगी हो गये हैं। हमें दुख है कि बुखार अभी तक उतरा नहीं है परन्तु अवस्था विशेष चिन्ता जनक नहीं है। आशा है, एक सप्ताह में श्री० स्वामी जी स्वस्थ हो जावेंगे। आर्य सज्जनों से प्रार्थना है कि इस समय अनावश्यक पत्र व्यवहार न करें।

—:o:—

पत्रों का सार

कैथल के वैदिकधर्म प्रचार मण्डल से म० रेवती प्रसाद जी मुख्योपदेशक स्वर्गीय श्री स्वामी दर्शनानन्द जी के जीवन चरित्र प्रकाशन करने की ओर आर्यजनता का ध्यान आकर्षित करते हैं। श्री स्वामी जी के भक्तजनों से वे अनुग्रह करते हैं कि उन के जीवन सम्बन्धी सारा मसाला वे उन के पते पर कैथल भेज दें।

२. "अखिल भारतीय वैश्य-यूनानी तिब्बी-कान्फ्रेन्स" का १० वां वार्षिक अधिवेशन दिल्ली में १०, ११, १२ फरवरी को होगा। १२ ता० को श्री०-महात्मा गान्धी जी "वैद्यक तिब्ब-यूनानी कालेज" का उद्घाटन भी करेंगे। श्री वारसिंह जी वैद्य मंत्री कान्फ्रेन्स यह भी सूचना देते हैं कि, उन दिनों इसी सम्मेलन की ओर से प्रदर्शिनी भी की जावेगी।

विचार-तरंग

"भयंकर अग्निकाण्ड"

(गतांक से आगे)

अपने आप आग लगाने से बाज रहो। अरबी लकड़ियां बने हुये आपस में रगड़ कर मुफ्त में आग न लगा बैठो। और यदि कोई दूसरा आदमी आग फैलाने के लिये तुम्हारे घर में अंगारे फेंकता है तो उन्हें तुरत प्रेम जल से बुझा दो या कम से कम आवेगों की फूंक मार कर (या बड़े आवेगों के पंखे चला कर) उन्हें सुलगने मत दो।

× × × ×

जलते हुये संसार से सम्बन्ध तोड़ कर अलग खड़े हो जाओ और पहिले बैठ कर अपनी आग बुझालो। ज्यों २ यह कृत्रिम आग बुझती जायगी त्यों २ तुम्हारा अपना स्वाभाविक तेज प्रकाशित होता जायगा। आग बुझाते जाओ जब तक कि अग्नि सिद्धि न प्राप्त हो जाय (Fire proof न बन जाओ) जिससे कि फिर कोई भी संसार की आग तुम पर असर न कर सके। यह निःसंदेह है कि अपनी सब आग शान्त हो जाने पर फिर सिवाय परोपकार के दूसरों की आग शमन करने के और कोई काम नहीं रहता।

× × × ×

अग्नियों की बात मानो। इन अग्नियों को तृप्त करना छोड़दो इन्हें भोजन देना छोड़दो। जगत पिता भगवान बड़े ही दयालु हैं उन की सृष्टि की ये अग्नियां चाहें कितनी भयंकर और जला डालने वाली क्यों न हों, किन्तु ये सब स्वयं बुझ जाने की प्रकृति रखती हैं यदि हम केवल प्रतिदिन भोजन दे कर ईंधन डाल २ कर इन्हें बढ़ाना और फैलाना छोड़ दें। यह हमीं हैं जिन्हों ने कि इन स्वयमेव बुझ जाने वाली किन्तु कभी तृप्त न होने वाली अग्नियों को भोजन दे दे कर यह भयंकर अग्निकाण्ड उपस्थित कर दिया है कि संसार में जहां भी देखते हैं वहीं पर ये दग्ध करने वाली लपटें भगवान् की प्रजा को घोर निर्दयता से जलाये जारही हैं।

× × × ×

हे आनन्दमय! तुम्हीं सब की एक अन्तिम शरण हो। तुम्हारा ही शीतल सुस्पर्श दग्ध आत्माओं को शान्ति प्रदान कर सकता है। तुम ही कृपा करो। तुम ही करुणा कर हमारे उन मुंदे हुये ज्ञानतन्तुओं को खोल दो जिनसे कि तुम्हारा वह सुस्पर्श प्राप्त होता है। फिर तो स्वामी तुम्हें पाकर सब जगह तुम्हारी शीतलता ही शीतलता का परिज्ञान होगा इन घोर से घोर अग्नी में फिरते हुये भी तुम्हारा ही सुखस्पर्श अनुभूत होगा, क्योंकि ऐसा कौन सा काल या देश है जहां कि तुम अपने आनन्दमय रूप में नहीं वर्तमान हो रहे।

× × × ×

हे आनन्दघन! जब कि संपूर्ण ही संसार जल रहा है तो इसकी रक्षा कौन करे। भयंकर शब्द करता हुआ समस्त ब्रह्माण्ड जला जारहा है। सभी जलते हुये प्राणी व्याकुल मुखों से 'त्राहि त्राहि' चिल्ला रहे हैं। रक्षा करने वाला "कहां से आवे"। क्या यह आकाश तक पहुंचने वाली और दिगन्त तक फैली हुई ज्वाला इस सुन्दर सृष्टि को समाप्त करके ही छोड़ेगी। हे आनन्दघन! तुम ही यदि ऊपर से सहस्र शीतल धाराओं में मूसलाधार इस पर बरसो तभी इस अग्निकाण्ड के बुझने की कुछ संभावना है तभी कुछ संसार के प्राणिओं की रक्षा होसकती है। बरसो, बरसो, आनन्दघन! ऐसा बरसो कि यह वसुन्धरातल जलप्लावित होजाय, सब जगह पानी ही पानी हो जाय। ऐसा बरसो कि सब आग बुझ जाय और सब जली हुई राख और अधजली हुई वस्तुयें भी बहजाय और यह संसार शान्त निमग्न और धुला हुआ निकल आवे।

× + × ×

नहीं नहीं, मैं महा अज्ञानी हूं आनन्दघन! तुम तो निरन्तर बरस रहे हो और ऐसे ही बरस रहे हो। यह हमीं हैं जो कि अपने 'आपे' के बड़े पक्के २ दृढ़ मकानों में बन्द हुये २ अपनी जलाई आगों में जल रहे हैं और सब स्थानों, समयों पर चिल्लाते फिरते हैं सब जगह आग ही आग है' हम जले जाते हैं जले जाते हैं'। यह क्यों न हो जब कि अन्दर प्रायः चौबीसों घंटे चलने वाला 'मन' नामक शक्तिशाली यंत्र सदा आग पैदा करने के ही काम में लगा रहता है। बाहर तुम्हारी वृष्टि में विहार करने वाले महात्मा अविगण बेशक कहते हैं कि सब जगह आनन्द ही आनन्द बरस रहा है, किन्तु हम उन का कैसे विश्वास करें। कभी २ जब हम ज्वलन पीड़ा से भाग कर अपने झरोखों के नीचे आ खड़े होते हैं तब हमें भी तुम्हारे उन जलकणों की शीतलता अनुभव होती है। किन्तु वहां कब तक खड़े रहें। हमारी पैदा की हुई प्यारी आगें हमें फिर बुलाती हैं। जलते हैं और भागते है, इस प्रकार सब जब में इधर से उधर बेचैनी में फिरते हैं किन्तु बन्द मकान से निकल नहीं सकते। यह सब तरफ से पक्की तौर से बन्द है जिससे कि कोई 'दूसरा' न आ सके। क्या बाहर निकलने के लिये इसे कहीं से तोड़ डालें। हां यह तो 'मेरा' मकान है। और अब यह हमसे टूट कैसे सकता है। हम अपने २ इन स्वार्थता के मकानों को दिन दिन दृढ़ पक्का बनाते गये हैं। और स्वयं निर्बल होते चले गये हैं। वे ही धन्य हैं, जिनके कि अहंकार के मकान अभी कच्चे हैं, जिनकी छतें पक्की पटी हुई नहीं हैं। वहां तो यह संभव है कि तुम्हारी अनवरत होने वाली वृष्टि में वे चूने लगे और अन्दर की आग बुझ जाय और धीरे २ मकान ही ढ़प जाय। किन्तु हमारा क्या होगा?। हे बरसने वाले! तुम्ही इतनी जोर से बरसो कि इनकी नींवें हिल जाय, ये पक्के से पक्के मकान नष्ट भ्रष्ट होकर बाहर की तरफ गिर पड़ें। निर्बल यही प्रार्थना कर सकते हैं। नहीं तो फिर अन्त में जब कि ये अग्नियां बढ़ती हुई इस मकान को ही जला देंगी ऊपर बल्लियों में भी आग लग जायगी, और असीम पीड़ा पहुंचाता हुआ यह मेरा सब कुछ अपने आप ढ़प कर जलता हुआ धड़ाम २ भूमिसात् हो जायगा (मैं समाप्त हो जाऊं गा या रहूंगा मैं नहीं जानता) तब तो तुम्हारी ये शीतलदायिनी नित्य वृष्टि इस स्थान पर भी निष्प्रतिबन्ध पड़ेगी ही। तब क्या होगा?।

हे परमकारुणिक! हमें अपनी इस सदातन सुखवृष्टि के ग्रहण करने के लिये जितना जल्दी हो अपना महान् बल प्रदान करो। कृपा करो। हमारी यह प्रार्थना सफल बनाओ

'सुख की वर्षा करो
आनन्दघन! चहुं ओर'

"शर्मेन्दु"

धर्म का स्रोत

(ले० श्री पंडित देवराज जी सिद्धान्तालंकार)

धर्म शब्द में "धृञ् धारणे" धातु वर्तमान है जिसके अर्थ धारण करना, थामना, पकड़ना, संभालना और उठाना हैं। 'जो थामता है' वा 'विश्व जिस में थमा हुआ है' वह धर्म है। विश्व का जो आधार है वह धर्म है। सारी प्रजा अर्थात् उत्पत्ति (creation) जहां से निकली है जिस में वर्तमान थी और फिर जिस आदि रूप में चली जाएगी वह धर्म है। सम्पूर्ण विश्व जिस अव्यक्त से से प्रगट हुआ जिस अव्यक्त में वर्तमान है और जिस अव्यक्त की ओर जा रहा है वह धर्म है। महाभारत में उपर्युक्त कथन इस प्रकार कहा है:—

धारणाद्धर्ममित्याहुः धर्मो धारयते प्रजाः
यत् स्याद्धारणसंयुक्तं सधर्म इति निश्चयः।

सम्पूर्ण गति शील संसार ने जिस अव्यक्त रूप में होकर दम लेना है, स्थित होना है वा रहना है वह धर्म है। जो धर्म को वा मूल को न छोड़े, सदा जिस को मूल का ध्यान बना रहे सम्पूर्ण प्रजा सर्व सन्तति, सारी उत्पत्ति वा परम्परा उसके अनुकूल होजाती है, उसको प्राप्त होती है, उसके वश में रहती है। मूल में दोष होने से ही परिणाम दोष वा पाप प्रकट होता है। मूल को निर्दोष करने से ही परिणाम निर्दोष वा निष्पाप प्रकट होता है। इस प्रकार धर्म, आधार, मूल, कारण, प्रारम्भिक अवस्था, आदि और अव्यक्त रूप में ही सब कुछ वर्तमान है, उसी में सब प्रतिष्ठित है और उसी के अनुकूल अनुष्ठान होता है। जैसा जिसका धर्म (Character) है वैसा उसका अनुष्ठान है। चूंकि धर्म में ही सब कुछ वर्तमान है इस लिए धर्म को परम (immeasurable) अपरिमेय कहते हैं। यह उपर्युक्त भाव नारायणोपनिषद् में इस प्रकार वर्णित है।

'धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा, लोके धर्मिष्ठं प्रजा उपसर्पन्ति।

"धर्मेण पापमपनुदन्ति, धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं, तस्माद्धर्मं परमं वदन्ति।,,

इस प्रकार धर्म का विस्तृतभाव होने पर धर्म उस शक्ति का नाम ठहरता है। जो ज्ञान बल और क्रिया स्वरूप है जो इस विश्वब्रह्माण्ड (universe) में व्याप्त है, और जो इसकी उत्पत्ति, स्थिति और लय का कारण होती हुई इसका नियम बद्ध संस्कार (regaulated harmonious action) कर रही है। वह शक्ति जिस क्रम से परिणत होरही है वह क्रम ही ईश्वरीय नियम (Divine law) है जो ईश्वरीय इच्छा Divine will को प्रकट कर रहा है। यह ईश्वरेच्छा ही जगत रूप में प्रकट होती है। पुराण संहिता में कहा है:—

याविभर्ति जगत्सर्वमीश्वरेच्छा ह्यलौकिकी।
सैव धर्मो हि सुभगे! नेह कश्चन संशयः॥"

ईश्वरेच्छा और ईश्वरीय नियम एक ही हैं इसी को धर्म कहते हैं। सारा जगत धर्म पर स्थित है, ईश्वरीय नियम को कोई टाल नहीं सकता, जो कुछ होना है वही होता है, जो कुछ ईश्वर की इच्छा है वही होता है इन वाक्यों का एक ही भाव है कि कार्य कारण भाव की परिणाम शृङ्खला अटूट है। जो कुछ हम कर रहे हैं वह हमारा करना ईश्वरेच्छा वा ईश्वरीय नियम के प्रकट होने का साधन मात्र है। इसी लिए हमें अपनी कृति पर कुछ भी अभिमान नहीं करना चाहिए क्योंकि जो कुछ हमने करना है वह अव्यक्त रूप में पहले ही वर्तमान है। जो कुछ अव्यक्त में है वही व्यक्त में आता है जो अव्यक्त में नहीं है वह व्यक्त में नहीं आसकता तथा जो अव्यक्त में है वही व्यक्त में आसकता है। इस प्रकार मनुष्य को चाहिए कि यदि वह सुख दुःख की अवस्था से परे आनन्द की अवस्था में रहना चाहता है तो धर्मानुकूल आचरण करता रहे अर्थात ईश्वरेच्छा को प्रकट करने का अपने आपको साधन समझता हुआ प्रकृति के विकास को दिखाने वाले ईश्वरीय नियम के अनुकूल रहता हुआ ईश्वरार्पण बुद्धि से वा ईश्वरेच्छा को प्रकट करने मात्र में अपनी मनोकामना रखते हुए निष्कामभाव से आचरण करता रहे। जो मनुष्य प्राकृतिक विकास को बताने वाले ईश्वरीय नियम के अनुकूल अपने मन वचन और कर्म को नहीं रखता वह सदा दुःख भोगता रहता है। अतः मनुष्य को चाहिए कि प्राकृतिक विकास का पता लगा कर सदा अपने ध्यान में रक्खे और उस विकास में अपना स्थान मालूम करता रहे। इसको थोड़े में यूं कह सकते हैं कि मनुष्य को सदा धर्म पालन करने में ही तत्पर रहना चाहिए। प्राकृतिक विकास में अपने स्थान को जान कर भी जो स्वधर्म का पालन नहीं करते अर्थात् उसी स्थान से अपने आपको विकास के नियमों के अनुकूल विकसित नहीं करते, प्रत्युत उस विकास की अज्ञान से अल्पज्ञान से वा मिथ्याज्ञान से अवहेलना करते हैं वे प्रतिकूल गति में पड़ कर नाना प्रकार के आन्तर और बाह्य दुःखों को भोगते हैं। अतः धर्म को समझकर उसका पालन करना ही चाहिए अन्यथा गति नहीं॥

—:o:—

पुस्तक परिचय

असहयोग—प्रकाशक राष्ट्रीय ग्रन्थमाला कार्यालय ६३ हिवेटरोड इलाहाबाद। इसी पते से मिल सकती है। दाम ६ आना। पृ० से ८६।

इस छोटी सी पुस्तक में महात्मा गान्धी के उन लेखों का सग्रह किया गया है जो समय २ पर "यंग इण्डिया" और "नव जीवन" में प्रकाशित होते रहे हैं।

अंग्रेजी न जानने वाले पाठकों तक असहयोग का सन्देश पहुंचाने के लिए यह छोटी सी पुस्तक बहुत उपयोगी हो सकती है।

भारत सरकार और महात्मा गान्धी:—

प्रकाशक भारतीय पुस्तक एजेन्सी, ११ नारायणप्रसाद बाबू लेन कलकत्ता। दाम एक आना।

लार्ड चेम्सफोर्ड की सरकार ने, पिछले दिनों, एक विज्ञप्ति प्रकाशित की थी जिस में असहयोग आन्दोलन पर बहुत कुछ कहा गया था। महात्मागान्धी ने इसका उत्तर दिया था। इन दोनों का हिन्दी अनुवाद १४ पन्ने की इस पुस्तिका में दिया गया है। मेलों में ट्रैक्ट रूपमें बांटने के लिए अच्छी है।

(शेष पृष्ट ५ के दूसरे कालम में)

(२)

श्रद्धा

क्या गुरुकुल का उद्देश्य निश्चित नहीं है ?

(लेखक श्रीयुत पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति)

यह कुछ आश्चर्य की बात है कि आज लगभग २० साल तक गुरुकुल चल चुकने पर भी कई महानुभाव यह प्रश्न करते हैं कि गुरुकुल का उद्देश्य क्यों निश्चित नहीं है ? गुरुकुल के लिये सैंकड़ों अपीलें हो चुकी हैं, हरसाल गुरुकुल के नियम आदि प्रकाशित होते है, जिन में गुरुकुल के उद्देश्यों की चर्चा होती हैं। आर्य-समाज के प्रायः सब समाचारपत्रों में गुरुकुल के समर्थन में लेख लिखे जा चुके हैं। यह सब कुछ हो चुकने पर आज भी यह प्रश्न उठाया जाता है कि गुरुकुल का उद्देश्य निश्चित क्यों नहीं है ? यदि यह सच है कि आज तक गुरुकुल का उद्देश्य निश्चित नहीं है तो निम्नलिखित बातें माननी आवश्यक हो जाती हैं।

(१) आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब ने बिना सोचे विचारे अन्धे हो कर गुरुकुल की स्थापना का प्रस्ताव पास किया, और गुरुकुल खोला।

(२) आर्यजनता ने बिना कुछ समझे बूझे गुरुकुल की सहायता की।

(३) आर्यसमाचारपत्र— जिन में प्रचारक तथा प्रकाश भी शामिल है—आज तक व्यर्थ ही लोगों को गुरुकुल के नाम पर बहकाते रहे।

जिस संस्था का निश्चित उद्देश्य नहीं है, उसके लिये अपीलें करना पूरी ईमानदारी नहीं हो सकती। यदि गुरुकुल का कोई निश्चित उद्देश्य ही नहीं था, तो आज तक जो कुछ गुरुकुल के लिये किया गया, वह सब पानी में लकीर बनाने के समान व्यर्थ था। यदि यहां तक स्वीकार करलें तो यह भी साथ मानना पड़ेगा कि २० साल से पंजाब के आर्यसमाज बिल्कुल अन्धेरे में थे—और अब भी ज्ञान की किरण किसी २ कोने में प्रकाशित हुई है सब जगह नहीं। यह जितने परिणाम ऊपर दिखाये गये हैं—मेरे अन्दर साहस नहीं है कि मैं इन्हें स्वीकार करूं, क्यों कि मेरा विश्वास है कि जिन महानुभाव ने गुरुकुल की आवश्यकता समझ कर उसे चलाने का विचार किया था, उन्हों ने कुछ निश्चित उद्देश्य सामने रख कर ही किया था। आर्यजनता आज तक जो कुछ सहायता गुरुकुल की करती रही है, वह समझ बूझ कर ही करती रही है। स्वा० श्रद्धानन्द, प्रो० रामदेव आदि जिन महानुभावों ने गुरुकुल के लिये स्वार्थ त्याग किया उन्हों ने सोच कर और कोई उद्देश्य सामने रख रख कर ही किया था। आज तक आर्यसमाज के समाचार पत्र जिन में प्रकाश भी शामिल है—गुरुकुल के लिये अपीलें कर के जनता को धोखे में डालने का यत्न नहीं करते रहे। परन्तु यह तभी सम्भव है जब हम यह मानें कि गुरुकुल का उद्देश्य पहले दिन से ही निश्चित है। कहा है कि मूर्ख भी बिना उद्देश्य के कार्य में प्रवृत्त नहीं होता। आर्यसमाज ने बनाया, और धन और यत्न का व्यय कर के उसे चलाया—यह सब निश्चित उद्देश्य के बिना कभी सम्भव नहीं था। एक दो दिनों के लिये लोगों को अन्धे बना लेना सहज है, परन्तु यह मानना असम्भव है कि २० साल तक सारी आर्य जनता अन्धी रही है, बिना निश्चित उद्देश्य के ही जन और धन का इतना स्वाहाकार किया गया है।

वस्तुतः, बात यह कि गुरुकुल का उद्देश्य पहले दिन से ही निश्चित है। आर्य प्रतिनिधि सभा ने निश्चित उद्देश्य से ही गुरुकुल की स्थापना की थी, आर्यजनता ने निश्चित उद्देश्य सामने रख कर ही धन खर्च किये हैं। जब किसी भद्र पुरुष के चित्त में गुरुकुल से कोई असन्तोष उत्पन्न होता है तो वह अपने भाव को इन शब्दों में प्रकट नहीं करता कि 'गुरुकुल में अमुक त्रुटि है, गुरुकुल के प्रबन्धकर्ता अमुक पुरुष को बना कर अमुक पुरुष को बनाना चाहिये' वह उसे पेचीदा तौर पर इन शब्दों में प्रकाशित करता है कि 'गुरुकुल का उद्देश्य अब तक निश्चित नहीं है उसे निश्चित करना चाहिये'। भाव इस पेचीदा ढंग पर क्यों प्रकट किया जाता है इस की तह में इस समय जाना आवश्यक नहीं है—परन्तु बात यही है।

गुरुकुल का उद्देश्य निश्चित है—ऐसा मानते हुए भी हम मान सकते हैं कि कई लोग कभी जान बूझकर, और कभी केवल प्रवाह में बह कर गुरुकुल के निश्चित उद्देश्य से अतिरिक्त उद्देश्य बता दिया करते हैं। अतिरिक्त न होने पर भी कभी केवल एक उद्देश्य पर जोर दे दिया जाता है और कभी उद्देश्य के किसी विशेष पहलू पर जोर दे दिया जाता है। इस का यह तात्पर्य नहीं कि उद्देश्य भिन्न २ है। उद्देश्य निश्चित है। यह लेखक या वक्ता की मर्जी पर है कि वह किसी विशेष अंश पर जोर देकर अन्यों की उस समय के लिये उपेक्षा करदे।

मैं एक दृष्टान्त देकर अपने अभिप्राय को सिद्ध करता हूं। अभी इसी वर्ष गुरुकुल वृन्दावन के वार्षिकोत्सव पर गुरुकुल के लिये अपील करते हुए प्रो० रामदेव जी ने एक ओजस्वी भाषण किया। आपने भी 'जातीय शिक्षा' की व्याख्या की। आपने बतलाया कि राष्ट्रीयता धर्म या रंग पर निर्भर नहीं है, किन्तु भाषा पर निर्भर है। इस लिये पोलैण्ड, आल्सेस लोरेन और वायलेंस वालों ने अपनी भाषा की रक्षा के लिये घोरतम प्रयत्न किये परन्तु भारतवासी अंग्रेजी के द्वारा राष्ट्रीयता बनाना चाहते हैं।

दूसरा लक्षण क्या है ? हमारी शिक्षा मातृभाषा के माध्यम द्वारा होनी चाहिए ⋯ ⋯जातीय शिक्षा की तीसरी पहचान जातीय इतिहास का पढ़ाया जाना है।⋯⋯⋯⋯यदि जातीय शिक्षा का यह तीनों शर्तें कहीं पूरी होती हैं तो वह केवल 'गुरुकुल' ही ऐसा शिक्षालय है। (आर्यमित्र)

प्रो० रामदेव जी के व्याख्यान की यह रिपोर्ट 'आर्यमित्र' में छपी है और जहां तक मै जानता हूं। [illegible] प्रतिवाद नहीं [illegible]

कि क्या प्रो० रामदेव जी गुरुकुल का उद्देश्य केवल राष्ट्रीय शिक्षा देना समझते हैं। मुझे प्रो० रामदेव जी के विचारों का जहां तक ज्ञान है, मैं कह सकता हूं कि वह गुरुकुल को केवल राष्ट्रीय संस्था नहीं मानते। परन्तु इस व्याख्यान से ही अनुमान लगायें तो मानना पड़ेगा कि वह ब्रह्मचर्य, वर्ण व्यवस्था आदि के उद्धार को गुरुकुल के उद्देश्यों में नहीं गिनते और न वेदों के विद्वान उपदेशक निकालने पर ही जोर देते हैं। यह अनुमान लग सकता है, पर यह निश्चय से कहा जा सकता है कि यह अनुमान अशुद्ध होगा। इस अशुद्ध अनुमान के भरोसे पर यदि कोई यह कहने लगे कि प्रो० रामदेव जी गुरुकुल को एक नेशनल कालिज समझते हैं तो उचित न होगा। बहुत से समालोचकों को गुरुकुल के उद्देश्य इसी कारण अनिश्चित दिखाई देते हैं कि वह दूसरे के अभिप्राय को ठीक न समझकर कमजोर बुनियाद पर कल्पना का पहाड़ खड़ा कर लेते हैं।

गुरुकुल का उद्देश्य क्या है? यहां फिर मैं एक उद्धरण देता हूं। मार्गशीर्ष १६७७, के 'आर्य्य' पत्र में पत्र के सम्पादक पं० ठाकुरदत्त शर्मा जो आर्य्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मन्त्री हैं गुरुकुल के लिए अपील करते हुए लिखते हैं—

"गुरुकुल कांगड़ी का वार्षिकोत्सव निकट आरहा है। इस के लिये अभी से धन एकत्र करने की आवश्यकता है। आर्य समाज का यही एक शिक्षणालय है जहां वेद वेदांगों की शिक्षा दी जाती है जहां ब्रह्मचर्य्य आश्रम की मर्यादा का पालन होता है। इस समय देश में शिक्षा सम्बन्धी जो आन्दोलन हो रहा है उस में प्राचीन शिक्षा प्रणाली को स्वीकार करने की प्रेरणा पाई जाती है जिस प्रणाली का आधार ब्रह्मचर्य पर है। अतः इस समय इस संस्था की रक्षा तथा पालन पोषण करना और भी आवश्यक है। गुरुकुल कांगड़ी को स्थापित हुए १६ वर्ष होने वाले हैं। इस समय तक ६६ स्नातक विद्यालंकारादि उपाधियों से सुशोभित हो चुके हैं जिन में से अनेक अपनी विद्या तथा धर्म बल से आर्य समाज की सेवा कर रहे हैं। आप ब्रह्मचर्य का उद्धार चाहते हैं, वेद और शास्त्रों के विद्वान चाहते हैं। स्वतन्त्र शिक्षा को प्रचलित करना चाहते हैं। प्राचीन सभ्यता को पुनर्जीवित करना चाहते हैं तो आप का कर्त्तव्य है कि गुरुकुल के आने वाले उत्सव से पूर्व अभी से धन एकत्र करने का कार्य्यारम्भ करें आर्य्य समाजों का विशेष कर्त्तव्य है कि इस ओर ध्यान दें।"

('आर्य्य' लाहौर मार्गशीर्ष १६७७)

इस छोटी सी अपील से अव्यक्त रूप में गुरुकुल के सब उद्देश्य आगये हैं। जरा ध्यान से इन पंक्तियों को पढ़ते जाइये और आप समझ जायंगे कि लेखक गुरुकुल के निम्नलिखित उद्देश्य समझता है।

(१) ब्रह्मचर्याश्रम का उद्धार

(२) प्राचीन वैदिक सभ्यता, जिस का मुख्य अंग वर्ण व्यवस्था है, की फिर स्थापना,

(३) वेदों के विद्वान उत्पन्न करना

(४) शिक्षाप्रणाली का संशोधन

यह उद्देश्य इस छोटी सी अपील स्पष्ट तया पाये जाते हैं। गुरुकुल सम्बन्धी साहित्य को आदि से अन्त तक पढ़ जाइये, आप को सब जगह यही उद्देश्य कहीं समूह रूप में और कहीं अकेले २ मिल जायगे।

ऐसा सम्भव है कि लेखक या वक्ता कभी कभी विशेष जोश में आकर किसी उद्देश्य पर ही विशेष जोर देदें, परन्तु उस से यह सिद्ध नहीं हो जाता कि गुरुकुल के उद्देश्य निश्चित नहीं हैं। गुरुकुल की पहली स्कीम को देखिये, फिर उन अपीलों को पढ़िये जिन द्वारा आर्य समाज को गुरुकुल सम्बन्धी प्रारम्भिक सन्देश सुनाया गया, फिर गुरुकुल से प्रकाशित हुई सब नियमावलियों की भूमिकाओं को पढ़ जाइये, आप गुरुकुल के ऊपर लिखे हुए ही उद्देश्य पायंगे। यह मेरा दावा है, जिसे मैं आवश्यकता होने पर बहुत से उद्धरणों और प्रमाणों से सिद्ध कर सकता हूं।

इस स्थिति के होते हुए कई समालोचकों का यह कहना कि गुरुकुल का उद्देश्य निश्चित नहीं, बिल्कुल निराधार है। कोई अनजान यदि ऐसी बात कहता तो कोई नहीं पर दुःख तो यह है कि गुरुकुल कांगड़ी के उत्सव से तीन मास पूर्व, जब कि आर्य पुरुष गुरुकुल के लिए चन्दा एकत्र करने की तय्यारियों में थे, 'प्रकाश' के सम्पादक महाशय कृष्ण जी ने आर्य जनता को यह बतला कर बहकावट में डाल दिया है कि गुरुकुल का उद्देश्य अभी निश्चित होने को है। जब म० कृष्ण जी ने आर्य समाज के साहित्य से इतनी अनभिज्ञता प्रकट की तो क्या आश्चर्य था कि 'आर्य गजट' को गुरुकुल के सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखने का अवसर मिल गया। आर्य गजट के लेख की उपेक्षा हो सकती है पर म० कृष्ण जी भूल को उपेक्षा देकर नहीं छोड़ा जा सकता।

पहले भी मुझे यह शिकायत करने का अवसर मिला है, और अब फिर मैं दोहराता हूं कि म० कृष्ण जी केवल 'प्रकाश' के सम्पादक नहीं हैं, वह आर्य समाज के एक नेता भी हैं। वह यदि गुरुकुल के सम्बन्ध में कोई शिकायतें रखते हैं तो क्यों नहीं प्रतिनिधि सभा या अन्तरंग सभा में प्रस्ताव उपस्थित करते, जिससे दोष दूर हो जायें। यदि गुरुकुल का उद्देश्य निश्चित नहीं है तो क्या ही अच्छा होता यदि प्रकाश के कालम में जाकर आर्य जनता में घबराहट उत्पन्न करने के स्थान पर वह प्रतिनिधि सभा में प्रस्ताव रख देते कि गुरुकुल का अमुक उद्देश्य निश्चित कर लिया जाय। वह यह सबकुछ कर सकते हैं। वह सभाओं के सभा सद हैं, उनका काफी प्रभाव है। उस उचित सभा को हिलाये बिना, एक कठिन समस्या पर सीधा आक्रमण न कर के, समाचार पत्र का आसरा लेना और तिरछे वार कर के कठिन प्रश्नों को पराजित करने का यत्न करना कहां तक उचित है--इस प्रश्न क

उत्तर वह स्वयं ही ठीक दे सकेंगे।

यह तो निवेदन है, विचारों को प्रकाशित करने के समय और उपाय पर, यह उद्देश्य निश्चित है या नहीं इस के विषय में मेरी सम्मति है कि गुरुकुल की स्थापना ऊपर लिखे हुए निश्चित उद्देश्यों से की गई है। पहले से आज तक इन्हीं उद्देश्यों की घोषणा की जाती रही है। 'यह ठीक है या नहीं?' 'इस में कहां तक सफलता हुई है?' यह प्रश्न बिल्कुल जुदा है, और इस पर पृथक् विचार हो सकता है। इस समय मैं केवल यह दिखाना चाहता हूं कि यह कहना कि आज तक आर्यजनता अन्धी हो कर गुरुकुल को चलाती रही है, समझदार आर्यजनता पर भयंकर कलंक लगाना है। आर्यजनता ने ऊपर लिखे हुए उद्देश्यों को अच्छा समझा और उनकी पूर्ति के लिये तन मन धन से यत्न किया। वह यत्न खरा खोटा जैसा भी था, प्रजा के सन्मुख है। उस की आलोचना करना एक बात है, और यह कहना बिल्कुल दूसरी बात है कि बिना किसी उद्देश्य के आर्यजनता गुरुकुल को चलाती रही।

श्री-स्वामी श्रद्धानन्द जी का स्वास्थ्य—

बीच में कुछ रोज बुखार उतरने के बाद मंगलवार के दिन फिर बुखार बढ़ गया और अभी तक उस भग जैसा ही है। देहली के प्रसिद्ध डाक्टर श्री अन्सारी जी को तार द्वारा बुलाया गया जिन्होंने बुधवार के दिन श्री स्वामी जी को देखा। दशा विशेष चिन्ता जनक नहीं है और शीघ्र ही स्वस्थ हो जाने की सम्भावना है।

दो नेताओं का स्वर्गवास—

इस सप्ताह में हो गया है। दौर्भाग्य से, दोनों ही मध्य प्रदेश के हैं। प्रथम पं० विष्णुदत्त जी शुकल हैं। आप दृढ़ देशभक्त, निडर और उच्च चरित्र के व्यक्ति थे। हिन्दी के आप पुराने भक्त थे और हिन्दी साहित्य सम्मेलन के आप सभापति भी बन चुके थे। रालट एक्ट के पास होने पर श्री मालवीय जी के साथ आप ही ऐसे थे जिन्हों ने इस्तीफा देने का साहस किया था। आप की इस असामयिक मृत्यु के कारण देश ने एक योग्य नेता खो दिया है। हम, आपके परिवार के साथ हार्दिक सहानुभूति प्रकाशित करते हैं।

हम से बिछुड़े हुए दूसरे देश भक्त मि० मधोलकर हैं। आप यद्यपि नरम दल के थे और सरकार ने राय बहादुर और मध्य प्रदेश की नई लैजिस्लेटिव कौंसिल का सभापति बना आप पर विशेष कृपा की तथापि आप देश के हित चिन्तक ही थे। आप अमरावती की कांग्रेस के सभापति भी बन चुके थे। परमात्मा आप की आत्मा को सद् गति दे।

रायसहाब कुत्तामल का जनाजा

गत १२ जनवरी को लाहौर में एक कुत्ते का जनाज़ा बड़ी धूम धाम से निकाला गया, जिस के साथ में गाने के वाले और बाजों के साथ साथ मनुष्यों का एक बड़ा हुजूम था। बहुत से कुत्ते जनाज़े के साथ थे, जिनके गलों में सेन्दूर डाला हुआ था। मरे हुए कुत्ते का नाम रायसाहब कुत्तामल बताया जाता था, यह जनाज़ा शहर की जिनती ही सड़कों से बड़ी धूम धाम के साथ निकाला गया।

(प्रताप कानपुर)

(पृष्ट २ का शेष)

नारीधर्म—प्रकाशक—प० इन्द्रजीत तिलहर जि० शाहजहांपुर। दाम =)॥। लेखक से ही प्राप्य।

इस छोटी सी पुस्तिका में लेखक ने नारियों पर अपने स्वतन्त्र विचार प्रकट किये हैं। विचार उत्कृष्ट नहीं है। भाषा बहुत अशुद्ध है।

भारतीय राष्ट्र की राज व्यवस्था:—

पुस्तिका में वह मसौदा (बिल) है जो कि अभी गुरुकुल की पार्लियामेण्ट में उपस्थित हो, बड़े वादविवाद के अनन्तर, स्वीकृत किया गया था। भारतीय स्वराज्य के लिए संगठन बनाने वाले महानुभावों के लिए यह छोटी सी पुस्तक बहुत सहायता दे सकती है।

गुरुकुलीय राष्ट्र प्रतिनिधि सभा के नियम

गुरुकुल विश्वविद्यालय में, पिछले ४ साल से, राष्ट्र प्रतिनिधि सभा अर्थात् पार्लियामेण्ट स्थापित है जिस के अधिवेशन वर्ष में दो बार प्रतिसत्र के अनुसार होते हैं। सुगमता के लिए इस के नियम अब छपवाकर प्रकाशित कर दिये गये हैं। जातीय शिक्षणालयों के छात्रों को पार्लियामेण्ट की शिक्षा देने में ये नियम बहुत सहायक हो सकते हैं। दोनों पुस्तकें काम की हैं। साहित्यपरिषद् ने इन्हें प्रकाशित करवाया है और उसके मंत्री से ही, बिना मूल्य मिल सकती है।

'स'

भारतीय देश भक्तों की कारावास कहानी—

पं० उमादत्त शर्मा द्वारा संकलित। इस पुस्तक में भारत के कई मान्य देश भक्तों (यथा श्री लोकमान्य तिलक महात्मा गान्धी, लाला लाजपतराय, मौ० हसरत मोहानी, डा० गोवर्धनदास, प० रामभजदत्त चौधरी, डा० सत्यपाल, डा० श्री किचलू अरविन्द घोष इत्यादि) के चित्रों के अतिरिक्त उनकी स्वहस्त लिखित कारावास कहानी दी गई है। प्रारम्भ में श्रीयुत अरविन्दघोष के लघु भ्राता श्रीयुत वारीन्द्रकुमार घोष जो कि स्वयं मातृ भूमि के लिए १२ साल तक काले पानी में रह चुके हैं, की लिखी हुयी एक सारगर्भित भूमिका है। पुस्तक के पढ़ने से यह पूर्णतया ज्ञात हो जाता

है कि राजनैतिक कैदियों के साथ कैसा अमानुषीय व्यवहार किया जाता है और ब्रिटिश जेल पद्धति में मौलिक सुधार करने की कितनी प्रबल आवश्यकता है। श्रीयुत अरविन्दघोष की स्वहस्त लिखित कहानी रोचक तथा मनोरंजक होने के साथ साथ अत्यन्त शिक्षा प्रद है। हम प्रत्येक देश भक्त को इस पुस्तक के पढ़ने की सलाह देते हैं। पुस्तक का मूल्य २) है।

मिलने का पता—

राजस्थान एजेन्सी

८।१। राजकुमार रक्षित लेन कलकत्ता

'ध'

हिन्दी साहित्य के लिए राजपूताने में अपूर्व आयोजन—श्री राजपूताना हिन्दी साहित्य सभा झालरापाटन शहर राजपूताना का यह विवरण पत्र है जिस में हिन्दी के प्रचार के लिए स्थापित की हुई उपर्युक्त सभा के नियम और उद्देश्य दिये गये हैं। हिन्दी प्रेमियों से आर्थिक सहायता की प्रार्थना की गई है।

गुरुकुल में श्री डा० अन्सारी !

श्री स्वामी जी के रोग की परीक्षा करने के लिए दिल्ली के प्रसिद्ध डाक्टर श्री अन्सारी जी बुद्धवार ७ माघ (१९ जनवरी) के प्रातः यहां पधारे थे। ब्रह्म कुल वासियों की ओर से आपको एक अभिनन्दन पत्र दिया गया जिसका आपने समुचित उत्तर दिया। आप गुरुकुल को देख कर बहुत प्रसन्न हुए। आपके भाषण का सार हम अगले अंक में देंगे। आप इसी दिन की रात को यहां से प्रस्थान कर गये और आशा है, एक बार फिर कुलभूमि में दर्शन देंगे।

श्रद्धा के नियम

१. वार्षिक मूल्य भारत में ३॥), विदेश में ६॥), ६ मास का २)।

२. ग्राहक महाशय पत्रव्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।

३. तीन मास से कम समय के लिये पता बदलना हो तो अपने डाकखाने से ही प्रबन्ध करना चाहिए।

प्रबन्धकर्ता श्रद्धा

डा० गुरुकुल कांगड़ी (जिला बिजनौर)

मैं अपनी मातृभूमी की सेवा किस तरह करूं ?

(श्री० सी० एफ़ एन्ड्रूज द्वारा)

इस सवाल के जवाब के लिये मैं आप को इतिहास के क्षेत्र में लेचलूंगा; आप लोग विद्यार्थी हैं इस लिये मुझे आशा है कि आप ऐतिहासिक अनुसन्धान के कार्य्य से डरेंगे नहीं, और मैं आप से वायदा करता हूं कि हमारा ऐतिहासिक अनुसन्धान असफल न होगा।

राजनैतिक दृष्टि से हमारे उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर दिया जा चुका है, और कितने ही महानुभाव अपनी मातृभूमि की सेवा करने के लिये अपना जीवन राजनैतिक क्षेत्र में अर्पण कर चुके हैं, कितनों ही ने सामाजिक सेवा के काम में अपनी जिन्दगी लगा दी हैं और अत्युत्तम कार्य्य किया है। लेकिन यदि यहां पर मैं अपनी एक बात स्पष्टतया आपके सम्मुख निवेदन कर सकूं तो वह यही होगी, कि राजनैतिक दृष्टि से और सामाजिक दृष्टि से दिये हुए उत्तर उपर्युक्त प्रश्न को पूर्णतया अथवा अधिकांश में हल नहीं कर सकते। अपने अनुभव से मैं कह सकता हूं कि इन दोनों उत्तरों से मुझे कुछ आन्तरिक शान्ति प्राप्त नहीं हुई जिस से कि मुझे यह विश्वास हो जाता कि मैं पूर्ण सत्य के मार्ग पर हूं क्यों कि सत्य में ही मानव हृदय परम शान्ति प्राप्त कर सकता है।

अपनी युवा वस्था में मैं बड़े जोश के साथ राजनैतिक बातों में भाग लेता था। मैं विलायत के मजदूर दल के महान आन्दोलन में शामिल हो गया था, और उस के नेताओं के साथ मैंने काम भी किया था। सामाजिक सेवा के क्षेत्र में भी मैं बड़े उत्साह के साथ सम्मिलित हुआ था और कितने ही वर्षों तक मैं केम्ब्रिज विश्वविद्यालय की क्रिश्चियन सोशल यूनियनका मंत्री भी रहा था।

अपनी युवावस्था में मैंने इन दोनों ही मार्गों का अनुसरण किया था। मेरे साथ के काम करने वालों में कितने ही बड़े उदारहृदय थे और वे भी मेरी तरह ही उत्साह पूर्ण थे। लेकिन एक आशङ्का मेरे हृदय में बराबर होती रही। वह यह थी—"क्या यही परम सत्य है जिस की प्राप्ती के लिये मैं प्रयत्न कर रहा हूं ! अथवा उपयोगिता का ख्याल कर के काम चलाने के लिये यह कोई दूसरी ही वस्तु है ?"

क्या यह परम सत्य है ?

ज्यों ज्यों मेरी उम्र बढ़ती गई, इस विषय में मेरा ज्ञान भी बढ़ता गया—और ज्ञान बढ़ने का एक ही मार्ग है हृदय भेदक नाकामयाबी और असफल प्रयत्न। इमसे मैंने एक शिक्षा ग्रहण की है वह यही कि राजनैतिक तथा सामाजिक उद्देश्य, चाहे वह कितने ही उदारतामय और देशभक्ति पूर्ण क्यों न हों, यदि वे अनन्त सत्य के अनुसन्धान से अलग कर दिये जावेंगे तो उनका एक ही परिणाम होगा भावों में अहंकार और हृदय में चञ्चलता राजनैतिक और सामाजिक उद्देश्य ही वास्तविक राष्ट्रीय पुनरुद्धार के लिये काफ़ी नहीं। उन्नति चक्र पूरा चक्कर लगा कर फिर पीछे लौट जाता है और उस के लौटने के साथ ही जो अस्थायी सफलता होती है वह भी गायब हो जाती है।

उन्नति कहते किसे हैं ?

अब यह सवाल होता है कि उन्नति कहते किसे हैं ! क्या यह स्थिर और निश्चित नियम है कि प्रत्येक राजनैतिक और सामाजिक क्रान्ति के परिणाम में उन्नति ही हो ? क्या इन आन्दोलनों के परिणाम में अवनति होने की कोई सम्भावना नहीं ? उन्नति के विपरीत आख़िर अवनति भी कोई चीज होती है या नहीं ?

वर्तमान समय में इतिहास के अध्ययन से हमने एक ही नतीजा निकाला

रक्खा है कि बस राजनैतिक अधिकारों के मिलने से ही और सामाजिक दशा सुधारने से ही फिर उन्नति का होना सुनिश्चित है। लेकिन मानवजाति के इतिहास को अच्छी तरह से अध्ययन करने से पता लग सकता है कि उन्नति का अर्थ इतना आसान नहीं है। प्राचीन काल की कितनी ही ऐसी सभ्यताओं के ऐतिहासिक प्रमाण और चिन्ह अब भी पाये जाते हैं जो अवनति को प्राप्त होती गई और अन्त में नष्ट हो गई। अफ्रीका में और अमरीका में प्राचीन सभ्यताओं के जीर्ण शीर्ण निशान अब भी पाये जाते हैं और उनके चारों ओर इस वक्त केवल जंगली जीव ही दीख पड़ते हैं। मृत्यु प्राप्त सभ्यताओं के प्रमाण भी हमें मिलते ही हैं।

प्राचीन समय के साम्राज्य

मिसाल के लिए प्राचीन समय के कुछ साम्राज्यों को लीजिये। मिश्र के वंश बिल्कुल विस्मृत हो गये, उनका कुछ भी पता नहीं। प्राचीन वस्तु शास्त्र के ज्ञाता आज गूढ़ाक्षरों का अर्थ निकाल निकाल कर यह सिद्ध कर रहे हैं कि मिश्रदेश के वंश कितने वैभवशाली थे। बेबीलोन का साम्राज्य मिश्रदेश के साम्राज्य से शानशौकत में कम न था। बेबीलोन के निवासियों ने खेती करने और नहरों द्वारा भूमि के सींचने के जो उपाय निकाले थे उनसे आज भी उन लोगों की की आश्चर्यजनक वैज्ञानिक बुद्धि प्रकट हो रही है, लेकिन आज बेबीलोन की क्या हालत है? २५०० वर्ष से बल्कि इस से भी अधिक वर्षों से बेबीलोन में खण्डहरों के ढेर के ढेर पड़े हैं। नहरों द्वारा भूमि सींचने के जो उपाय बेबीलोन में निकाले गए थे वे सब के सब बिल्कुल नष्ट हो गए।

नियमों की व्यवस्था करने और राजनैतिक अधिकार देने में रोम की सभ्यता बेबीलोन तथा मिश्रदेश की सभ्यता से कहीं अधिक बढ़ी हुई थी। धीरे धीरे रोम ने भिन्न भिन्न सभी जातियों को नागरिकता के पूर्ण अधिकार दे दिये थे। सब को समान मताधिकार दिया गया था और एक ही कानून के अधीन सब लोगों को रहना पड़ता था, लेकिन इतने पर भी वक्त आने पर रोमन साम्राज्य की अवनति हुई और उसका अधोपतन हुआ और उसके राजनैतिक और सामाजिक अधिकारों का नाश और कानूनी अधिकारों की समानता उसे नाश होने से न बचा सकी।

यूरोप की अवनति और अधःपतन

पिछली घटनाओं पर दृष्टि डालते हुए और महायुद्ध के कारण जो नाश हुआ है उसकी ओर देखते हुए यूरोप के बड़े बड़े बुद्धिमान विचारक और दिग्गज लेखक आज खुल्लम खुल्ला यह सवाल कर रहे हैं कि "क्या सचमुच अब यूरोप के नवीन साम्राज्य की अवनति और अधःपतन का प्रारम्भ नहीं हो गया है ?"

इन सब बातों को आपके सामने पेश करके अब मैं आपको एक असाधारण और विचित्र बात की ओर ले जाना चाहता हूं वह यही है कि भारत वर्ष की प्राचीन सभ्यता अब तक जीवित है। इस समय हमारे सम्मुख जो ऐतिहासिक प्रमाण उपस्थित हैं उनसे पता लगता है कि कम से कम ३५०० वर्ष पहले भारतीय सभ्यता का प्रारम्भ हुआ था। यदि हम ३५०० वर्षों में हम एक सहस्र वर्ष और भी जोड़ दें तो भी भारतीय सभ्यता के इस प्रारम्भिक काल के पक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है।

—:०:—

आर्यसामाजिक जगत्

मद्रास में प्रचार

(निज संवाद दाता द्वारा)

मैसूर में आर्यसमाज की स्थापना हुए लगभग दो मास हो चुके हैं। जब से मैसूर में आर्यसमाज स्थापित हुआ है यहां की पंडित–मंडली में और विद्यार्थी श्रेणी में इस की चर्चा बहुत होने लगी है। लगातार दो मास से यहां के विद्यार्थी और अन्य लोग "महाराजा कालिज" के पंडितों को सनातन धर्म की रक्षा के लिए आर्यसमाज के विरुद्ध व्याख्यान देने और आर्यसमाजियों के साथ शास्त्रार्थ करने के लिए प्रोत्साहित कर रहे हैं। किन्तु अभीतक कोई पंडित शास्त्रार्थ के लिए आगे नहीं आया। एक मास हुआ जब पंडित देवेश्वर जी और स्वामी सत्यानन्द जी वा धर्मानन्द जी मैसूर में थे यह समाचार नगर में फैला था कि महाराजा कालिज के तार्किक पंडित प्रो० कृष्णामूर्ति आर्यसमाज के विरुद्ध व्याख्यान शुरू करेंगे। और अब आर्यसमाज के कार्यकर्ताओं को मैसूर में कोई स्थान मिलना कठिन होगा। जिस दिन व्याख्यान प्रारंभ होना था उस दिन हम अपनी पुस्तकों के भार के साथ हाल में जाकर पहुंचे। वहां जा कर देखा तो हाल सूना पड़ा था। हम को यह देख कर बहुत आश्चर्य हुआ और हम ने इस का कारण पता लगाने का प्रयत्न किया। दूसरे दिन हमारा मैसूर निवासी कनाड़ी मित्र पंडित महाराजा–कालिज में गया और उस ने आकर सारा वृत्तान्त सुनाया। घटना इस प्रकार सुनी गई कि जिस दिन व्याख्यान होने थे उस दिन प्रोफेसर कृष्णमूर्ति जी ने प्रातः काल अपने संगियों को यह कहा कि आज रात्री को हम को दुःस्वप्न हुआ है और देवी ने हम को स्वप्न में प्रादुर्भूत हो कर यह कहा है तुम यह क्या अनुचित काम करने लगे हो [illegible] तुम्हारी बहुत अवनति होगी। इस प्रकार कह कर व्याख्याता महाशय अपने ग्राम को चले गए और [illegible] गया। हमारी तरफ से बराबर प्रतीक्षा होती रही कि कुछ [illegible] तो हम को प्रचार का और भी अच्छा [illegible] मिले किन्तु एक मास व्यतीत हो गया और वह अवसर न आया। जब से मैसूर में आर्यसमाज [illegible] थी तभी से आर्यसमाज मन्दिर में [illegible] संस्कृत और सत्यार्थ [illegible] कनाड़ी की [illegible] मंदिर में नियम [illegible] हिन्दी स्वामी सत्यानन्द जी (यू. पी.) स्वयं पढ़ाते हैं और कनाड़ी भाषा में सत्यार्थ [illegible] की कथा के लिए एक स्थानीय पंडित रक्खा [illegible] संस्कृत पंडित देवेश्वर

जी स्वयं पढ़ाते रहे। किन्तु लोकल पंडित नियम से कार्य करने नहीं आता था इस लिए उस को कार्य से जुदा करना पड़ा। इतने ही में भ्रमण करते हुए अल्मोड़ा निवासी पंडित गोपालदत्त शास्त्री वेद, व्याकरण, काव्यतीर्थ पूना से मैसूर आए। आप दृढ़ आर्यसमाजी हैं, और अत्यन्त सरल और मीठे स्वभाव के हैं। मैसूर में आर्यसमाज के कार्य के लिए एक स्थिर पंडित की आवश्यकता थी ही। आपने प्रसन्नता से सार्वदेशिक सभा के नीचे कार्य करना स्वीकार किया और जिस दिन मैसूर पहुंचे उसी दिन से कार्य भी प्रारंभ कर दिया। और इस के कार्य की सूचना भी श्री० स्वामी श्रद्धानन्द जी प्रधान सा. दे. सभा को भेज दी गई। इतने ही में "सम्भदभ्युदय" (मैसूर का कनड़ी का दैनिक पत्र—संपादक श्रीयुत वेंकटकृष्ण अय्यर) के पत्र में प्रो० कृष्णमूर्ति के सनातन धर्म की रक्षार्थ व्याख्यान प्रारंभ होने का वृत्तान्त छपा। मैसूर से स्वामी सत्यानन्द जी ने बंगलोर से "सनातनयुगल" को बुलवा भेजा और हमारे पंडित जी दो दिन पूर्व ही मैसूर जा पहुंचे। मैसूर पहुंचते ही आर्यसमाज की तरफ़ से मैसूर के विशाल टाउन हाल में १५ तथा १६ दिसम्बर को सायं काल ६½ बजे व्याख्यान का प्रबन्ध किया गया। व्याख्यान से पूर्व पंडित देवेश्वर जी ने उच्च स्वर से ईश्वर की स्तुती के श्लोक गायन द्वारा प्रार्थना की तदनन्तर पंडित सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार का आंग्ल भाषा में "आदर्श शिक्षाप्रणाली" विषय पर व्याख्यान हुआ। जिस में व्याख्याता महोदय ने आधुनिक संस्कृत पाठशालाओं और अंग्रेजी यूनिवर्सिटियों की समालोचना करते हुए यह बताया कि जहां एक तरफ़ प्रकृति को भुलाया जाता है वहां दूसरी तरफ़ आत्मा और परमात्मा को भुलाया गया है। यह वर्तमान शिक्षा प्रणाली के दूषण हैं। इस के बाद गुरुकुल कांगड़ी के जन्मदाता और वहां की शिक्षाप्रणाली तथा जीवन का मनोहर चित्ताकर्षक चित्र खींच कर श्रोताओं को आनन्दित कर दिया। दोनों दिनों मि. ए. आर. वाडिया बैरिस्टर सभापति का आसन ग्रहण करने के लिए स्वीकार कर चुके थे। आप के उत्तम भाषण के साथ सभा विसर्जित हुई। सभापति महोदय ने आधुनिक युनिवर्सिटी शिक्षा को दोषयुक्त बताते हुए भी उस से जो लाभ हुए हैं उन का वर्णन किया। दूसरे दिन वर्तमान जातिबंधन और वैदिक वर्ण व्यवस्था पर आंग्ल भाषा में व्याख्यान था। मि. वाडिया ने कहा कि आज तो आपको बहुत अच्छी जनता मिली है पर कल इतने लोग सुनने नहीं आवेंगे। आज कोई ४०० से ऊपर उपस्थिति थी। किन्तु जब १६ दिस० को सभा शुरू हुई तो टाउन हाल पूरा भरा हुआ था और गिनने वालों ने यह कहा कि ६०० से किसी हालत में भी जन संख्या कम नहीं है। आज मैसूर युनिवर्सिटी के कालिजों के विद्यार्थियों की संख्या बहुत थी क्यूं कि आज कालिजों में नोटिस भेज दिया गया था। शिक्षित सदस्यों में वकीलों की उपस्थिति विशेष ध्यान देने योग्य थी। ठीक समय पर पंडित देवेश्वर सिद्धान्तालंकार ने प्रथम मधुरध्वनि से वेदगान और भक्तिपूर्ण श्लोकों का गायन किया और प्रार्थना के अनन्तर आंग्लभाषा में वर्णव्यवस्था पर अपना निबन्ध पढ़ा। निबन्ध में वर्तमान जातपांत की व्यवस्था और उस की हानियों का विचार पूर्वक वर्णन करते हुए ऐतिहासिक दृष्टि से प्रथम प्रश्न पर विचार किया और वर्तमान समय के वर्णव्यवस्था का खंडन कर के समाज शास्त्र के सिद्धान्तों पर अवलम्बित वैदिक वर्णव्यवस्था का चित्र खींचते हुए फिर से देश में इस के प्रचार की आवश्यकता बताई। आप ने उत्तरार्ध निबन्ध में वेद, श्रौतसूत्र, स्मृति, पुराण, महाभारत तथा अन्य प्राचीन इतिहास तथा पुस्तकों से प्रमाण युक्ति का उद्धारण कर के यह सिद्ध किया कि प्राचीन काल में आज कल का जातपात का बखेड़ा नहीं था। किन्तु गुण कर्मानुसार सारे मनुष्य समाज के कल्याण और आराम के लिए "श्रमविभाग द्विविज़ आफ़लेबर के नियमों पर और आध्यात्मिक उन्नति को लक्ष में रख कर वर्णव्यवस्था होती थी। प्रत्येक मनुष्य को सब तरफ़ उन्नति करने के लिए पूरी सहायता मिलती थी किसी को उन्नति के साधनों से वंचित नहीं किया जाता था। × आज प्रो० वाडिया ने भी एक घन्टा निरंतर भाषण किया जातपात आप सुधारक दल में से हैं और यही आपका विशेष विषय है। आपने प्रथम तो प्रथम व्याख्याता पंडित देवेश्वर जी को बहुत बहुत धन्यवाद दिया और कहा कि मुझे आज यह जान कर बहुत प्रसन्नता हुई है कि प्राचीन धर्म पुस्तकों तथा प्रमाणों से भी यह सिद्ध किया जा सक्ता है कि वर्णव्यवस्था गुण कर्म से है न कि जन्म से। और नीच वर्ण पुरुष भी उत्तम वर्ण को प्राप्त हुए हैं और हो सक्ते हैं। प्राचीन श्रुति, स्मृति इतिहास पुराण इस में साक्षी हैं और यह ऐसा करने की आज्ञा देते हैं। तत्पश्चात अत्यन्त उत्तम भाषा में धारा प्रवाह से एक घण्टे तक आपने व्याख्यान दिया और [illegible] जातियों में जाति के भेदभाव का वर्णन करते हुए आर्थिक, सामाजिक, [illegible] तथा राजनैतिक दृष्टि [illegible] अपनी सम्मति ([illegible]) की पुष्टि [illegible] जाति की एक [illegible] किया। अंत में [illegible] के मंत्री महाशय [illegible] और व्याख्याता तथा सभापति महोदय के लिए धन्यवाद के पास होने के साथ सभा विसर्जित हुई। सभा में आर्यसमाज की ओर से वर्णव्यवस्था "विषय पर शास्त्रार्थ के लिए घोषणा दे दी गई। और आशा की जाती है कि हमारे हिन्दु भाई इस का कुछ उत्तर अवश्य देंगे"

× इस के पश्चात पं० गोपालदत्त शास्त्री जी का सरल संस्कृत में कोई २० मिन्ट तक उत्तम व्याख्यान हुआ। आपने संस्कृत शिक्षा और प्राचीन और नवीन जीवन पर बहुत हास्यरस में चित्र खींचा आपके व्याख्यान को सुन कर बार बार करतालिकाध्वनि द्वारा श्रोताओं ने अपना हर्ष प्रकट किया।
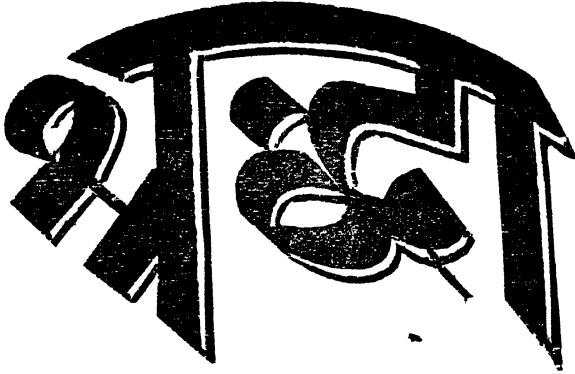
गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिए छपा।

ओ३म्

Registered No. A. 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि ।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्नकाल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां निम्रुचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः ॥
(ऋ० मं० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है { १६ माघ सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३८ } ता० २८ जनवरी सन् १९२१ ई० } संख्या ४१ भाग १

हृदयोद्गार

"निशीथ-अतिथि

(१)

आओ न आओ! मन करो देरी, हे! रे! नाथ!
'हृदय-आगार, हरे।
अतिथि! सुनो बात! हे! ये रात-
बिताओ! रे! मोर घरे।

(२)

बसेरा करत सकल खगान
भरे चारों दिशि कुसुम सुगान
आज काहि लग ढाकियो डालियों-
फिरो तुम कहां? अरे!!
अतिथि! सुनो बात! हे! ये रात-
बिताओ! रे! मोर घरे।

(३)

आने में ना घोरो, करो विचार
आगार आपन मानो।
तुम्हारी सेवा करेगा दास
हे! नाथ! जीवन! जानो।
पाय के तुम्हार 'चरन धूल'
हमारो मन जाग भरम भूल,
आवो रे! सखा! कुटिया में आवो!!!
यामिनि शांत भरे।
अतिथि! सुनो बात! हे! ये रात
बिताओ रे मोर घरे

"शारदेश-कैलाश,,

आर्य्यसमाज का जन्म दिन

कब तक खड़े रहोगे फिर भी तो आना होगा ॥ टेक ॥
रविशैल की शिखा पर वेदी तो जल चुकी है।
कब तक खड़े किनारे यह मुसकिराना होगा ॥ १ ॥
होता स्वयं बने हैं जन तो परीहिमाली।
अब भी नहिं तुम्हारा क्या छिपकिपाना होगा ॥ २ ॥
कुछ भी मिला नहीं तो अपनी ही आहुती ही।
साधों को मौन फिर भी कहां मुंह छिपाना होगा ॥ ३ ॥
रहने न ऐसे दूंगा दीवाना हो गया हूं।
आओगे या पकड़ कर फिर मुझ को लाना होगा ॥ ४ ॥
या सामने हटोगे या साथ मेरा दोगे।
कोने में छिपने का भी कोई ठिकाना होगा ॥ ५ ॥
कहती दहक दहक कर यह देह यों जुला कर।
तुम का भी हाय जग में कोई ठिकाना होगा ॥ ६ ॥
आगे भी पग धरोगे गुणगान ही करोगे।
मैं तुम से थक गया हूं कुछ कर दिखाना होगा ॥ ७ ॥
जगदीश देखते हैं सिक्का है एक पौरुष।
भोगेंगे और तुम को गाना ही गाना होगा ॥ ८ ॥

"मराल"

धर्म का स्वरूप

(ले० श्री पण्डित [illegible]राजजी सिद्धान्तालंकार)

इस संसार में प्राण (attraction) और अपान (Repulsion) की क्रियाएँ लगातार कार्य करती हुई पाते हैं। सारी सृष्टि (Creation [illegible]) में इन दो शक्तियों की समता (equilibrium) को रखने वाला [illegible] माया शक्ति रजोगुण है, अपान [illegible] है और इन दोनों की समता [illegible] सत्व गुण है। जो पदार्थ [illegible] है वह रजो मात्रा से आकृष्ट होता है और आकर्षक के समीप आता है, उस की सेवा करता है, उसके चारों ओर घूमने लगता है। जो पदार्थ छोड़ा जाता है उसकी तरफ से ध्यान हट जाता है उसकी ओर आकर्षण नहीं रहता, प्रेम नहीं रहता, उसकी सेवा अनावश्यक हो जाती है, उसकी चारों ओर परिक्रमा छूट जाती है, कोई अन्य प्रबल शक्ति उस को अपनी ओर आकर्षित करती है अतः पूर्व सम्बन्ध टूट जाता है [illegible] नियम के अनुसार आकर्षक [illegible] जाता है।

इस प्रकार [illegible] क्रियाएँ कहीं एक दूसरे [illegible] जाती हैं, कहीं एक दूसरे की [illegible] होती हैं और कहीं समभाव में वर्तमान रहती हैं। यह आकर्षण प्रत्याकर्षण या प्राण अपान की क्रिया भौतिक संसार में रासायनिक प्रयोगों में जैसे मिलती है वैसे ही ब्रह्माण्ड के बड़े २ पिण्डों में मिलती है, सामाजिक व्यवहार में और मानसिक विचारों में वैसे ही पाई जाती है, भाषा विज्ञान में और उत्पत्ति के सिद्धान्तों में वैसे ही देखी जाती है। इस प्रकार कोई भी स्थल प्राण और अपान की क्रियाओं से खाली नहीं है और इन्हीं का सब रूप वर्तमान है। जिस प्रकार रासायनिक प्रयोगों में किसी पदार्थ की मात्रा (molecule) के छोटे छोटे अणु (atoms) या अणु के छोटे भाग परमाणु (Electrons) [illegible] रासायनिक आकर्षण प्रत्याकर्षण (Chemical attraction & repulsion) से नाना प्रकार के [illegible] अत्यन्त वेगवान परिभ्रमण करते हैं, उसी प्रकार सामाजिक व्यवहारिक पारिवारिक और विचार सम्बन्धी सम्पूर्ण भेदभाव का त्याग करके प्राणापान की गति को रोककर किसी भी पक्ष विशेष को न ले कर आकर्षण प्रत्याकर्षण के भाव को छोड़कर मुक्तरूप निर्द्वन्द्व समवस्थित सात्विकावस्थापन्न अत्यन्त शक्तिमान् परिव्राट् रूप में सन्यासी लोग रहते हैं। इन सन्यासी पुरुषों का ही काम है कि सम्पूर्ण जगत् में (equilibrium) समता को स्थापित करें। सन्यासी आदित्य के समान समता को स्थापित करता है और गड़ बड़ (disturbance) को दूर करता है। आदित्य स्वयं आपेक्षिक निरपेक्ष सत्तावान् होकर पृथिवी को आकर्षित करता है और पृथिवी आदित्य के चारों ओर गति करती है और चन्द्रमा पृथिवी का परिव्राजन करता है और प्रत्येक अपना पद बनाए रखता है। यह सब धर्म के समता के सिद्धान्त के आश्रय है। लोक मण्डलों में वर्तमान आकर्षण प्रत्याकर्षणों को समता में रखने वाला धर्म है। भौतिक विज्ञान से सिद्ध है कि सारी प्रकृति सूर्य से एक अनुरूप उसी ईश्वरीय शक्ति या ईश्वरीय नियम के आधार पर है जिसे धर्म कहते हैं। [illegible] में जब प्राण (attraction) शक्ति का प्राबल्य रहता है तो उत्पत्ति (सृष्टि) आरम्भ रहती है और जब अपान (Repulsion) शक्ति का आधिक्य होता है तो विनाश (प्रलय) आरम्भ होती है। इन दोनों शक्तियों को समरस कर यथास्थिति को बनाए रखने वाला धर्म है।

धर्म और विकास

यूरोप को विकास सिद्धान्त का पाठ पढ़ाने वाले डार्विन आदि महानुभावों से बहुत पूर्व भारतीय आर्य विकास सिद्धान्त के स्वरूप से परिचित थे। वे जानते थे कि जीव नानाप्रकार की क्रमिक योनियों वनस्पति पशु पक्षी आदि में से गुज़र कर मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ है। यह ईश्वरीय नियम या धर्म है जो अनुन्नत अविकसित प्रारम्भिक जीवन को सचेतस् उन्नत प्राणी मनुष्य के रूप में लाया है, और यह धर्म ही कालान्तर में उसे अधिक उन्नत अवस्था में ले जाएगा।

अधर्म क्या है?

पहले बताया जा चुका है कि प्राण अपान उभय संयुक्त एकात्मक शक्ति का नाम धर्म है। धर्म के पूर्व पक्ष के प्राबल्य से उन्नति होती है सिद्धि होती है बढ़ती होती है समृद्धि आती है मन वचन और कर्म दृढ़ होते हैं, इस के विरुद्ध धर्म के उत्तर पक्ष की प्रबलता से अवनति असिद्धि घटती दारिद्र्य होता है और मन वचन कर्म अस्थिर निर्बल तथा अस्पष्ट होते हैं। मनुष्य की उत्थानात्मक अवस्था धर्म के इसी एक सिद्धान्त पर आश्रित है परन्तु इस संसार चक्र के पूर्व भाग को शक्ति के विकास क्रम में उन्नति प्रधान होने से धर्म शब्द पूर्व पक्ष के लिए ही लोक में रह गया और उसके दूसरे पक्ष के बोध के लिए इस का विपरीत शब्द अधर्म व्यवहृत हुआ। विचार रहस्य में अधर्म की पृथक् कुछ सत्ता नहीं किन्तु धर्म के ही अन्तर्गत होने से उसी का एक रूप है। व्यावहारिक दृष्टि में एक पक्ष के पूर्वार्ध का नाम धर्म और उत्तरार्ध का नाम अधर्म है। जो मनुष्य अज्ञान, [illegible] या मिथ्याज्ञान के कारण धर्म को सुव्यवस्थित नहीं रख सकते वे विषम अवस्थित रहने के कारण धर्माधर्म में ऊपर नीचे चक्कर काटते रहते हैं। अतः मनुष्यों को चाहिए कि धर्माधर्म के स्वरूप को समझ कर समवस्था (balance) में रहकर चक्र से ऊपर अपने को बनाए रखें गिरे नहीं बनें नहीं।

—:o:—

श्रद्धा के नियम

१. वार्षिक मूल्य भारत में ३॥), विदेश में ६॥), ६ मास का २)।

२. ग्राहक महाशय पत्रव्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।

३. तीन मास से कम समय के यदि पता बदलना हो तो अपने डाकखाने से ही प्रबन्ध करना चाहिए।

प्रबन्धकर्ता श्रद्धा

डाक० गुरुकुल कांगड़ी (ज़िला बिजनौर)

निक राष्ट्रीय शिक्षा के संचालकों को यह चेतावनी देदेना चाहते हैं कि यदि उन्होंने भी अपने शिक्षा क्रम में इस आवश्यक प्रश्न की ओर समुचित ध्यान न दिया तो कुछ ही वर्षों के भीतर, हम यह वेदना पूर्ण भविष्यत वाणी करने पर बाधित है, उन के चलाये हुये विद्यालय और महा विद्यालयों की अनुपयोगता प्रकट हो जावेगी और तब उन संस्थाओं का वही दुखमय अन्त होगा जो आज कल सरकारी शिक्षणालयों का हो रहा है।

भारतीय जनता यदि यह अनुभव करती है कि ब्रह्मचर्य्य-रक्षा के बिना कोई नैतिक शिक्षा वा साधारण-शिक्षा अपना लक्ष्य पूरा नहीं कर सकती तो उसे गुरुकुल की तन मन धन से सहायता करने में कोई कसर नहीं छोड़नी चाहिये।

"काजी की दौड़ मस्जिद तक"

हमारे कुछ देश भक्त सरकार की वर्त्तमान नीति और उसके कार्य्य से अत्यन्त असन्तुष्ट हैं। वे यह जानते हैं कि ये दोष किसी व्यक्ति विशेष के नहीं अपितु इस पद्धति के ही हैं। वे यह भी समझते हैं कि इन के दूर करने का एक मात्र साधन सम्पूर्ण स्वराज्य ही है। यह सब अनुभव करते पर भी वे उसी मार्ग का अवलम्बन करते हैं जिस की व्यर्थता कई बार सिद्ध हो चुकी है। इस का स्पष्ट प्रमाण उन प्रस्तावों से मिलता है जो नई काउन्सिलों में रक्खे जानेवाले हैं। निःसन्देह इन में कई प्रस्ताव बड़े उपयोगी और आवश्यक हैं परन्तु सरकार इन का क्या उत्तर देगी—यह पिछली कौन्सिलों की घटनाओं से खूब पता लग सकता है। हमारा यह अनुमान निराधार नहीं है कि इस बात को जहां सारा देश जानता है वहां नई कौंसिलों के वे देश भक्त सदस्य भी जानते हैं जो इन के उपाय के लिए कौंसिलों का ही मुंह देख रहे हैं। ऐसे महानुभाव, प्रतीत होता है, अपनी शिकायतों को दूर करवाने के लिए सरकारी फ़रयाद पर ही अभीतक भरोसा करते हैं।

असहाय होकर भी 'इज्जत'

स्वार्थ का पाठ यदि किसी ने सीखना हो तो वह नौकर शाही से सीख सकता है इस का ताजा उदाहरण पंजाब के [illegible] की हड़ताल से मिलता है। इज्जत का [illegible] सी हड़तालियों की वेतन वृद्धि [illegible] रोब भी रखना है—इस लिए वह नये आदमियों को "सम्पूर्णता" (एफ़ीशिएन्सी) के नाम पर अधिक वेतन पर भी भरती कर रही है। परन्तु "सम्पूर्णता" (एफ़ीशिएन्सी) का यह ढोंग भी कहां तक पूरा हुआ है—यह हाल ही के दो उदाहरणों से स्पष्ट हुआ है। लाहौर के अंग्रेज़ी दैनिक पत्र "ट्रिब्यून" के दफ़्तर में, पिछले दिनों, एक बड़े लिफ़ाफ़े में १६ ऐसे मनीआर्डर के फ़ारम भरे हुए थे जो लुधियाने से लाहौर के भिन्न २ व्यक्तियों के नाम आए थे। फिर, कई ऐसे ख़त थे जो इसी समाचारपत्र के दफ़तर में भेज दिये गये थे, यद्यपि वे औरों के नाम थे। जैसे सम्पादक सिविल मिलिटरी गज़ेट, ट्रैफ़िक मैनेजर एन०, डबल्यू-आर; इन्स्पैक्टर आवस्कूल; सम्पादक लायल गज़ट; सम्पादक सिक्ख तथा अन्य कई बैंक और फ़ोज के ख़त। इतना माल अपर्याप्त समझ कर हो 'शायद' लखनऊ पोस्ट-आफ़िस ने पोस्टमास्टर लाहौर के नाम भेजा हुआ ख़त भी "ट्रिब्यून" के कार्य्यालय भेज दिया गया था। इसी प्रकार अमृतसर से निकलने वाले "वकील" नामक अख़बार के दफ़्तर में एक व्यक्ति एक थैला बग़ल लाया जो उसने मस्जिद के एक कूआं में से पाया था। खोलकर देखा गया तो उसमें ख़त थे जिन में से कई शहर के मशहूर आदमियों के नाम भी थे। कहा जाता है, "[illegible]" तालाब में से भी इसी प्रकार के कई थैले मिले हैं। ईश्वर जाने, इस सम्पूर्णता (एफ़ीशिएन्सी) के नाम पर और कितने थैले कूओं और तालाबों की भेंट किये गये होंगे। हड़तालियों की शिकायतों को दूर कर वापिस बुलाने की जगह सरकार इस तरह अपनी "इज्जत" रख रही है!

मन्त्रियों का वेतन एक रुपया!

नई काउन्सिलों में जहां एक सज्जन इस आशय का एक प्रस्ताव उपस्थित करने वाले हैं मंत्रियों का वेतन ३ हजार रुपया से अधिक न हो वहां एक सज्जन ने एक रुपया वार्षिक वेतन रक्खे जाने का भी प्रस्ताव पेश किया है परन्तु हम दोनों से ही असहमत हैं। हम तो यह समझते हैं कि शिष्ट वैसे ही मंत्री होने चाहिये जो जाति के रुपये में से एक पैसा लेना भी पाप समझते थे। सच्ची जाति के सेवक हैं। निःस्वार्थ भाव से सेवा करते हुये उन्हें अपनी जेब भरने की कोई आशा नहीं करनी चाहिये।

बंगाल ने भी सुध ली!

बंगाल के नेताओं ने नागपुर-कांग्रेस से पूर्व तक अपना कुछ मत निश्चित नहीं किया था, इसी लिए वहां असहयोग आन्दोलन बहुत मन्द था। परन्तु कांग्रेस के बाद, अब, इस आन्दोलन की सफलता के लिए सब से अधिक यदि कोई प्रयत्न कर रहा है तो वह बंगाल ही है। पिछले सप्ताह के समाचारों से ज्ञात होता है कि कलकत्ता तथा अन्य शहरों के कालेजों का बहिष्कार किया जा रहा है। खास कलकत्ते में लग भग २ हज़ार विद्यार्थियों ने वर्त्तमान शिक्षा प्रणालि के साथ असहयोग कर दिया है। कलकत्ते की वकालत की परीक्षा में ६०० में से केवल ६० विद्यार्थि शामिल हुये हैं। परन्तु इधर

पंजाब की मोह निद्रा:—

अभी तक नहीं टूटी है। वीरों की भूमि में अभी तक कायरता और नपुंसकता के भाव काम कर रहे हैं। यह कैसी विचित्र बात है कि जिस पंजाब हत्याकांड के लिए न केवल भारत अपितु सारे संसार में हाहाकार मच गया, जिस पंजाब के विद्यार्थियों को सिर पर बिस्तरे रखवा कर १८ मील तक कड़ी धूप में भगाया गया, वही पंजाब अभी तक नौकरशाही के साथ सहयोग दे रहा है। पंजाब! पंजाब! अपना कर्त्तव्य समझो! इस तरफ़ पर ज़रा ध्यान करो कि जलियांवाला बाग में जिस अत्याचारी ने तुम्हारे बाप दूसरी होली खेली, तुम अभी तक उसी के आंचल में मुंह छिपाये बैठे हो।

ला० लाजपतराय और ला० हंसराज

कांग्रेस की आज्ञानुसार पंजाब में इस समय यदि कोई नेता कार्य कर रहा है तो वह लाला लाजपतराय जी ही हैं। आपने डी० ए० वी० कालेज के प्रधान संचालक ला० हंसराज जी के नाम एक खुला पत्र लिख कर प्रबन्धकारिणी समिति से आग्रह किया है कि वह सरकारी विश्व विद्यालय से अपना सम्बन्ध तोड़दे

ला० लाजपतराय जी का डी.ए.वी. कालेज के साथ घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। सच्चे मित्र की तरह यदि वे कुछ सलाह दें तो कोई अनुचित नहीं है। उधर ला० हंसराज जी ने अभी तक कोई उत्तर नहीं दिया है। पर उनके पिछले २५ वर्ष के जीवन से जो कुछ भी परिचित हैं वे जानते हैं कि उनका अन्तिम शस्त्र "चुप्पी" ही है और ऐसे साहस के अवसरों पर आगे बढ़ने की जगह वे अपना कदम पीछे ही रक्खा करते हैं। परन्तु एक बात निश्चित है। पिछले दिनों सरकारी विद्यालयों के विरुद्ध लाहौर में जो आन्दोलन हुआ था, उस में से ला० हंसराज जी अपने डी.ए.वी. कालेज को यद्यपि चालाकी से बचा ले गये थे पर अब यह असम्भव है। अब, किसी भी अवस्था में ला० हंसराज जी या उनके अन्य सहायक डी.ए.वी. कालेज को इस आन्दोलन से अछूत नहीं रख सकते। देश के साथ चलने में डी.ए.वी. कालेज यदि अपना अपमान समझता है तो उसे अपने अस्तित्व के अतिरिक्त किसी और ही मार्ग का अवलम्बन करना होगा।

फारस फिसला!

अंग्रेजों के हाथ से फारस निकलता प्रतीत होता है। मंत्री मण्डल दो बार बदल चुका है और तीसरी बार बदलने की उम्मेद है। रूसने वहां के शाह को यद्यपि भगा दिया था पर उसीने फिर उसको बिठा दिया है। तथापि, यह निश्चित है कि रूसने यह कार्य अकारण ही नहीं किया होगा। यह भी सुना जाता है कि बालशेविकों के साथ भी मेल जोल के प्रस्ताव हो रहे हैं। इन घटनाओं से इतना तो स्पष्ट सिद्ध होता है कि वहां की प्रजा अंग्रेजों से बहुत असन्तुष्ट है। उधर कुछ मेमों और बच्चों के वहां से निकलते ही लण्डन के "टाईम्स" का फारस की "शोचनीय दशा" के स्वप्न आने लग गये हैं। मानो किसी पूर्वीय देश के सौभाग्य और उन्नति की दवाई तो अंग्रेजों मेमों के आंचल में ही बंधी हुई है।

फ्रान्स में उथल पुथल

हो गई है। लायगस का मंत्री मण्डल टूट गया और अब म० ब्रायेन्द प्रधान मंत्री निर्वाचित किया गया है। नये मंत्री मण्डल के दिमाग को शायद तरोताजा रखने के लिए ही एक झुकी और पुटतार दार दृष्टि भी उस में रक्खा गया है। परन्तु, यह फूट फूट क्यों हुई है यह अभी तक राजनैतिक रहस्य है। कहा जाता है कि इस से इंग्लैण्ड फ्रांस के गुट में तो कोई फर्क नहीं आवेगा परन्तु जर्मनी के साथ जरा ढील की जावेगी।

स्नातक भाई को बधाई।

गुरुकुल के स्नातक पं० धर्मभिक्षु जी विद्यालंकार ने लंका में लगभग १ वर्ष तक, पाली का अध्ययन किया था। परमानन्द प्राच्यविद्यालय में पाली की विशेष रूप से शिक्षा दी जाती है और आप भी वहां की पढ़ाई समाप्त कर के अब गुरुकुल के महाविद्यालय विभाग में वेद के अध्यापक हैं। लंका के इस प्रसिद्ध शिक्षणालय ने आपको अब "[illegible]रत्न" की उपाधि से सम्मानित किया है। हम सब कुलवासियों की ओर से स्नातक जी को बधाई देते हैं।

चीन की दुर्दशा—

अभी तक चीन में अकाल अपने पूरे जोर पर है। "कोढ़ पर खुजली" की तरह इस अकाल में सैनिक उपद्रव ने वहां की दशा को और भी शोचनीय कर दिया है। समाचारों से ज्ञात होता है कि जो सहायता वहां भेजी जाती है वह अकाल ग्रस्त पुरुषों को न मिल कर सैनिकों और शान्ति कारियों के पेट में ही चली जाती है। अकाल के अतिरिक्त राजनैतिक दृष्टि से भी चीन एशिया का 'रोगी पुरुष' हो रहा है। जापान और [illegible] के साथ इसकी [illegible] [illegible] करता था। न जाने कौन वह अब [illegible] कण्टक की तरह काम कर रहा है?

कर्तारपुर के अभागे

क़ैदी—

सरकार के नाम पेश हुआ हमें एक आवेदन पत्र प्राप्त हुआ है जिस में कर्तारपुर के क़ैदियों को छोड़ दिये जाने के लिए प्रार्थना की गई है। न केवल हिन्दु अपितु स्वयं मुसलमानों ने कई बार सरकार का ध्यान इस ओर खींचा परन्तु सब व्यर्थ हुआ। गत वर्ष की सम्राट्-घोषणा तथा उस के बाद भी इस शुभ कार्य के लिए कई अवसर मिले थे पर सरकार ने उन से लाभ उठाना शायद अनुचित ही समझा। ड्यूक महोदय के भारत में आने के कारण अब फिर सुयोग मिलने वाला है जिसका सदुपयोग करने में सरकार को कोई आना कानी नहीं करनी चाहिये। हम सरकार से भिक्षा की प्रार्थना नहीं करते परन्तु हमें यह उसका कर्तव्य समझते हैं कि वह इन अभागे कैदियों को जिन में कई निर्दोष भी हैं—शीघ्र छोड़ दे।

[पृ० ६ का शेष]

हमारा वक्तव्य

अन्न-असार का संक्षिप्त वर्णन ऊपर दे दिया गया है। उस से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह संस्था प्राचीन भारत की गुरुकुल शिक्षाप्रणाली के सिद्धान्त पर ही चलाई जारही है। भारत अब फिर इसी प्रणालि की ओर जाने का प्रयत्न कर रहा है। कांगड़ी का गुरुकुल विश्वविद्यालय इसी उद्देश्य से स्थापित किया किया गया है। परन्तु इस सम्बन्ध में, में एक बात कभी नहीं भूलनी चाहिये। मिश्र, कम से कम अपने घरेलू मामलों में बहुत कुछ स्वतंत्र है। वह अपने ऊपर इतनी संस्थाओं का आर्थिक भार सह सकता है परन्तु भारत की दशा इससे सर्वथा विरुद्ध है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विदेशी सरकार ने हमें पराधीनता की बेड़ियों से जकड़ा हुआ है। "खून से सने हाथों वाली" इस सरकार से आर्थिक सहायता लेना हम न केवल अनुचित अपितु महापातक भी समझते हैं। इतना होने पर भी गुरुकुल में शिक्षा सर्वथा मुफ्त ही दी जाती है अर्थात सारा [illegible] का भार संस्था को अपने ही सिर पर लेना पड़ता है। हमें यह पूर्ण विश्वास है कि जिस प्रकार भारतीय उत्थान में अन्न-असार ने जिस तरह एक अनुचित भाग लिया है, जिस तरह मिश्र के राजनैतिक [illegible] पर अन्न-असार का अभिप्राय [illegible] हुआ है, उसी तरह गुरुकुल ने भी भारतीय जागृति में आवश्यक हिस्सा लिया है और लेगा और वह दिन दूर नहीं है जब गुरुकुल भूमि से [illegible] पूर्ण भारतीय स्वाधीनता का सन्देश भारत को सुनाया जावेगा और गुरुकुल के स्नातक ही राष्ट्रीय स्वतन्त्रता और [illegible] का झण्डा हाथ में लिए हुए [illegible] से आगे चलते दिखाई देंगे। परन्तु यह कब सम्भव हो सकता है? तभी जब कि भारतीय जनता तन मन धन से इस संस्था का [illegible] है!

हमारे असन्तोष का स्रोत

(ले० श्रीयुत सत्यभिक्षुः)

आज यह विचित्र अवस्था है। किसी समय भारत में शान्ति और धर्म के स्रोत पर विचार हुआ करता था पर आज हम अशान्ति के स्रोत पर विचार करने को बाधित हुवे हैं। काल के इस परिवर्तन का रहस्य जानना ही आज हमारा मुख्य उद्देश्य है।

भारत में इस समय अशान्ति है—इसे हम लार्ड मोरले के "निश्चित सत्य" (सेट्लफैक्ट) शब्द से, निःशंक, प्रकट कर सकते हैं। "कुछ पढ़े लिखों का शोर" यह कह कर भारत सरकार आज से कुछ वर्ष पूर्व, हमारे आन्दोलनों को अनसुना कर देती थी पर आज वह अवस्था नहीं है। आज सरवेलन्टाइन शिरोल जैसे कट्टर अंग्रेज़ को भी मानना पड़ा है कि भारत में "असाधारण असन्तोष" है। भारत का साधारण मजदूर, कुली और किसान भी यह अनुभव करने लग गया है कि वह पराधीन है, उसके ऊपर कोई ऐसी शक्ति राज्य कर रही है जिसे वह दूर हटाने के लिए बार बार प्रयत्न करने पर भी असमर्थ होता है। कारखाने और रेलवाई के मज़दूरों की हड़तालें, बिहार और अवध के किसानों के दंगे इस के अखण्डनीय प्रमाण हैं।

किन्तु इस असन्तोष का वास्तविक कारण क्या है? इस पर बहुत विवाद किया जाता है परन्तु अन्तिम परिणाम सब का एक ही है। कई व्यक्ति वर्तमान महायुद्ध को ही हमारी जागृति का कारण ठहराते हैं। वे यह समझते हैं कि भारतियों का विदेश में जाकर लड़ना, नई दुनिया को देखना, रणभूमि में प्राण त्याग करना वा वहां से लौट कर अपने देश में आना जहां ये सब कारण हैं वहां सरकार का लम्बी २ प्रतिज्ञायें कर के भी पीछे से टल जाना एक मुख्य कारण है। वे यह कहते हैं इस महायुद्ध में भारतवासियों की इतनी बड़ी आहुति दी गई कि, युद्ध के अन्तिम वर्ष में, जब फौज़ी बुखार का आक्रमण हुआ तब इस देश के वासी उसका सामना करने में सर्वथा असमर्थ थे। ५० लाख से अधिक व्यक्तियों का एक दम छिद जाना—इस बात का ज्वलन्त उदाहरण है कि इस दैवी आपत्ति को सहन करने में हम कितने अशक्त थे। अपने निकटतमों और प्रियतमों का इस तरह अकालमनाश होते देख किसका हृदय करुणा से पिघलता हुआ भी रोष से नहीं भर जाता?

फौज़ी बुखार से जो भारी जन नाश हुआ उस पर हम कुछ टिप्पणी न करते यदि इसका सम्बन्ध केवल युद्ध से होता। युद्ध के बाद इस तरह के भयंकर रोगों का उद्भव और उस में एक बड़ी जन संख्या का आहुति बन जाना हो जाना स्वाभाविक है और आवश्यक है। परन्तु जब हम देखते हैं, नहीं २, अनुभव करते हैं कि पिछली आधी सदी से हैज़ा और प्लेग हमारी स्थिर सम्पत्ति की स्थाई हो गये हैं, दुर्भिक्ष हमारे दैनिक जीवन का एक अनिवार्य अंग हो गया है; देश की पैदाइश का निरन्तर घटना और मौत का बढ़ना हमारे लिए अटल सत्य समझा जाने लगा है—तब हमारी समझ में आता है कि भारत अधिकारों की मांग के लिए उतना और नहीं मचाता जितना इस खाली पेट को भरने के लिए, वह ऊंची २ नौकरियों का इतना भिखारी नहीं है जितना ऊंची पैदाइश और नीची मौत का, वह स्वराज से आत्मा को पुष्ट करने के लिए इतना लालायित नहीं है, जैसे श्रीयुत चिन्तामणि हैं, जितना प्लेग और हैज़े को अपने जीवन से।

गोरे अखबार और फ़ज़ूली अमात के आदमी भले ही भारत को "धनधान्य" बताकर आकाश को सिर पर उठालें, हमारी दरिद्रता, बढ़ती मृत्यु संख्या, अकाल मृत्यु और हमारे स्थिर रोगों को भले ही वह "पूर्वीय जल वायु का प्रभाव" कह कर टाल देना चाहें परन्तु पर इतिहास यह बताता है कि, पिछली एक सदी से, भारत की आमदनी क्रमशः घट रही है और ४५) रुपये (अर्थात् ३ पौंड) से अधिक कभी नहीं बढ़ी, जब हम यह सोचते हैं कि हमारी आयु की औसत २३ साल से अधिक कभी नहीं बढ़ी जब कि अन्य देशों में ४३ और ५६ तक है, जब हमें यह बताया जाता है कि हमारे शिक्षित भाई ५ % से अधिक नहीं हैं, जब यह कहा जाता है कि आधे से अधिक भारतवासी भूखे रहते हैं तब कट्टर पक्षपाती को भी वर्तमान अशान्ति और इस चिरकालीन आर्थिक दुर्दशा में कुछ सम्बन्ध दीखने लगता है।

बस, अब स्पष्ट हो गया। अब समझ में आता है कि हमारे असन्तोष का स्रोत, मुख्यतया वर्तमान आर्थिक दशा में ही है, राजनैतिक वा सामाजिक दशा में नहीं। वे लोग भूल करते हैं जो इस जागृति का सम्बन्ध महायुद्ध से जोड़ते हैं। वह व्यक्ति अपनी राजनैतिक अज्ञानता का ही परिचय देता है जो भारत के असन्तोष का स्रोत गतवर्ष के पंजाबहत्याकाण्ड वा खिलाफ़त के मसले में ढूंढने का यत्न करता है। ये सब कारण हैं परन्तु बहुत गौण। ये राजनैतिक घटनायें ऐसी हैं जिन का प्रभाव देश की ऊपरी सतह के आदमियों पर ही पड़ता है, नीचे तक जा कर बहुत कम हो जाता है। भारत की आर्थिक दशा यदि शोचनीय न होती तो पंजाब की दुर्घटना और खिलाफ़त का मसला देश की निचली अशिक्षित तह में वह उत्पात पैदा न करता जो आज दृष्टि गोचर हो रहा है। एक शिक्षित किसान ऐसी २ दुर्घटनाओं की उसी तरह उपेक्षा कर सकता है जिस तरह रूस के जार के कत्ल की परन्तु, आप याद रक्खें, वह अपने पेट की उपेक्षा नहीं कर सकता, वह अपने प्राणप्यारे नन्हें २ बच्चों को, अनायास ही, काल के विकराल गाल में जाते हुवे नहीं देख सकता, अपनी सन्तति को पीढ़ी दर पीढ़ी [illegible] लक्ष विक्षिप्त रहने की बढ़ती हुई आशा [illegible] है, एक दम २२ वें साल में [illegible] हुये देख वह हाथ पर हाथ रक्खे नहीं बैठ सकता, वह यह नहीं सह सकता कि उसके गाढ़े पसीने की कमाई [illegible] को जंगली पशु की तरह, [illegible]शाही के अंगभूत पटवारी, [illegible] और थानेदार सहज ही में लूट [illegible], वह ताल्लुकेदारों, ज़मीदारों और [illegible] से हर समय [illegible] नहीं रहना चाहता।

वह इन सब से सदा के लिए छुटकारा चाहता है और वर्तमान आन्दोलन, और असन्तोष की जड़ में यदि कोई सिद्धान्त काम कर रहा है तो वह इस आर्थिक दासता से मुक्ति पाने की इच्छा ही है। शिक्षित और अशिक्षित—दोनों ही इस दासता का असह्य भार अनुभव कर रहे हैं। शिक्षितों ने कई वर्ष पूर्व अनुभव कर लिया था पर अशिक्षितों ने आज अनुभव किया है। रायबरेली का उपद्रव इसी कड़वे अनुभव का एक प्रकाश्य स्वरूप है। स्वेच्छाचारी शासक इसे दबाना चाहता है। नौकरशाही तोप और बन्दूक की गोलियों से इसे फूंक देना चाहती है पर उसे यह अच्छी तरह से समझ लेना चाहिये कि राखकी ढेरी में भी आग लगा देने की शक्ति होती है। यदि तुम उसे पांव से, घृणा पूर्वक, ठुकरा दोगे तो वह तुम्हें भी अपने साथ मिला लेगी। याद रक्खो, भारतीय जनता अशिक्षित है अनाढ़ हैं पर वे समझ नहीं है, हृदय शून्य नहीं है और भावरहित नहीं है। तुम शिक्षितों को कुछ दिन पूर्व, बड़े २ ओहदे दे कर अपने चारों ओर खींच सकते थे, बड़े बड़े २ दरबार और जल्से कर के अशिक्षितों पर रौब जमा सकते थे पर दोनों ही इन ढंगों का खोखलापन समझ गये हैं। अब दोनों अदम्य उत्साह और प्रेम से, मिल गये हैं। नौकरशाही ने पहिले हमारे चारों ओर ऐसा मन मोहना जाल बिछा रक्खा था कि उस से हम अपने को जहां सर्वथा "सुरक्षित" समझते थे वहां उसे भी "शान्ति और न्याय प्रिय" समझते थे पर ढोलकी पोल शीघ्र ही खुल गई। हमारा अन्तर्लोचन दूर हो गया जब हमें पता लगा कि इस राज्य में नादिरशाही से बढ़ कर लूट मच रही है। हमारे असन्तोष का स्रोत नौकरशाही की इस नादिरशाही लूट में ही है।

गुरुकुल में डा० अन्सारी
स्वागत और अभिनन्दन पत्र

स्वामी श्रद्धानन्द जी की बीमारी का समाचार प्राप्त होने पर डा० अन्सारी दिल्ली से १९ जनवरी को गुरुकुल कांगड़ी पधारे। स्वामी जी को देख चुकने के पीछे आपने गुरुकुल के सारे कार्यक्रम को देखा। स० मुख्याधिष्ठाता और उपाध्यक्ष ने आप को आश्रम विद्यालय महाविद्यालय प्रदर्शिनी आदि दिखाये। ब्रह्मचारियों की सादगी प्रसन्नता और देशभक्ति को देखकर डाक्टर साहिब बहुत प्रसन्न हुए। दोपहर के समय गुरुकुल के सुन्दर पुस्तकालय भवन में सब गुरुकुल वासियों की एक सभा हुई जिसमें गुरुकुल के स्टाफ और ब्रह्मचारियों की ओर से प्रतिष्ठित अतिथि का स्वागत किया गया। प० इन्द्र ने सभापति की हैसीयत से प्रारम्भिक भाषण करते हुए डाक्टर साहिब के देश सेवा सम्बन्धी कार्य का परिचय दिया और गुरुकुल की विशेषताओं का वर्णन किया।

ब्रह्मचर्य, सादगी गुरुशिष्य सम्बन्ध और राष्ट्रीय शिक्षा आदि सम्बन्धी विशेषताओं पर बल देते हुए बतलाया कि गुरुकुल का वर्तमान जागृति में कैसा आवश्यक स्थान है। प्रो० सुधाकर एम ए. ने स्टाफ की ओर से डा० अन्सारी का स्वागत करते हुए बतलाया कि गुरुकुल के संचालक जिन सचाइयों को इतना पूर्व समझ गये थे, सारे भारत ने आज उन्हें पहिचाना है। ला० मुरारीलाल जी ने ऋषिदयानन्द के सार्वजनिक कार्य का वर्णन करते हुए हिन्दुओं और मुसलमानों की एकता के सम्बन्ध में कुछ विचार डा० अन्सारी के सम्मुख रखे।

ब्र० धर्मदेव और और ब्र० भीमसेन ने ब्रह्मचारियों की ओर से स्वागत किया जिसके पश्चात् ब्र० विद्यानिधि ने सब ब्रह्मचारियों की ओर से डाक्टर की सेवा में अभिनन्दन पत्र उपस्थित किया। डा० अन्सारी ने उत्तर देते हुए बतलाया कि सारे जीवन में इतनी अधिक प्रसन्नता उन्हें बहुत कम हुई है, जितनी गुरुकुल में आकर हुई है। जातीय शिक्षा और देश की दशा का वर्णन करते हुए आपने गुरुकुल के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द जी के प्रति अपनी प्रेम पूर्ण श्रद्धाभाव प्रकट किया और यह कहा कि मेरा जी चाहता है कि मैं एक बार फिर छोटा बच्चा बनूं ताकि गुरुकुल में शिक्षा पासकूं। शाम को आपने क्रीडाक्षेत्र में खेल देखे, और ब्रह्मचारियों की शारीरिक उन्नति पर प्रसन्नता प्रकट की। रात्री के समय आप कुल वासियों को यह आशा दिलाकर दिल्ली लौट गए कि एक महीने के पीछे फिर एक बार आकर श्री स्वामी जी को देख जायंगे।

—:०:—

पत्रों का सार

१—नाई जाति के उद्धार के लिए "नाई मित्र" नाम का एक मासिक पत्र मोठ ज़िला झांसी से प्रकाशित होने वाला है। वार्षिक मूल्य १।) होगा।

२—आर्य्य समाज हमीरपुर का वार्षिकोत्सव ४, ५, ६, और ७ मार्च को होगा। श्री० स्वामी मुनीश्वरानन्द जी, स्वामी विवेकानन्द जी और स्वामी कृष्णानन्द जी की उपस्थिति प्रार्थनीय है

रामप्रसाद मन्त्री

३—संस्कृत पाठशाला राय कोट का वार्षिकोत्सव माघ सुदी ३, ४, ५ (११ १२-१३ फरवरी) को होगा। दानी महाशयों से आर्थिक सहायता की आशा है।

गंगागिरी संन्यासी

४—मध्य भारत-छतियाधानाराज्य के 'बसई' नामक स्थान में बुन्देलखण्ड शिल्पकला महाविद्यालय स्थापित किया गया है जिसमें शिल्प और व्यापार की क्रियात्मक शिक्षा दी जायेगी। १५ जनवरी से कार्य्य आरम्भ हो गया। १२ वर्ष की ऊपर आयु के विद्यार्थि प्रविष्ट हो सकते हैं।

दुर्गासहाय एम एस सी० मन्त्री

५—गुरुकुल विरालसी शाखा गुरुकुल वृन्दावन का वार्षिकोत्सव १२, १३ १४ मार्च को होगा। फरवरी तक नये ब्रह्मचारियों का प्रवेश हो सकता है।

इन्द्रजीत अधिष्ठाता

६—एक सज्जन महात्मा गान्धी से इस आशय की प्रार्थना करते हैं कि उन्हें अपना पत्र हिन्दी में निकालना चाहिए क्योंकि देश की राष्ट्रभाषा यही है।

७—गुजरात काठियावाड़ से एक आर्य समाज सूचित करते हैं कि गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक पं० युधिष्ठिर जी विद्यालंकार, कांग्रेस के समय से इस प्रान्त में खूब प्रचार कर रहे हैं। नागपुर के बाद अकोला, अकोट और बम्बई होते हुए अब नवसारी नगर में वैदिक धर्म के प्रचार के साथ २ वे गुरुकुल के लिये धन भी एकत्रित कर रहे हैं।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिए छपा।

धर्म और मत

लेखक—श्री० पं० देवराज जी सिद्धान्तालंकार

धर्म और अधर्म का प्राकृतिक विकास सम्बन्धी विचार करने पर और सम्पूर्ण व्यक्त सत्ता को धर्म की दृष्टि से ही देखने पर संसार में कोई भी मत वा कोई भी मनुष्य किसी भी क्षेत्र में वर्तमान अधार्मिक नहीं कहला सकता चाहे बौद्ध हो जैन हो, चाहे मुसल्मान हो वा ईसाई हो, यहूदी हो वा पार्सी कोई भी मत क्यों न हो यदि वह किसी उन्नति शील सत्य तत्पर द्रष्टा संस्थापक से संस्थापित हुआ है तो चाहे वह देश काल अवस्था के अनुसार एक देशी क्यों न हो, है वह धर्म के अन्तर्गत ही। प्रत्येक मत एक देशी सत्य होने से उसके अनुयायी उस अंश को लेकर उसकी महिमा गाते रहते हैं और अन्य लोग जो अपने देश काल तथा अवस्था के अनुसार भिन्न विचार के कारण जिस में उनको अपने लिए अनुकूलता जंचे उस मत के विरुद्ध वा अनुकूल उस पक्ष को लेकर अपना राग आलापते रहते हैं। कोई मनुष्य धर्म के आध्यात्मिक भाव (इटर्नल सैन्स) को लेकर कहते हैं कि वही धर्म माननीय है जो अनादि सत्तावान है और ईश्वरीय ज्ञान रूप में अव्यक्त भाव से वर्तमान है परन्तु जब वे क्रिया क्षेत्र में उतरते हैं तो उन के बड़े से बड़े कर्म कुशल भी देश काल तथा अपनी अवस्था के अनुसार विशेष प्रकार के परिवर्तन के लिए बाधित हुए, अपनी शक्ति अनुसार, जैसे साधन मिलें उन्हीं से काम चलाते हुए, धर्म को सर्वांश में फली भूत न कर सकने के कारण पक्षपात में पड़ कर अपने ही कथन पर आग्रह करके उसी को पुष्ट करने का हठ करते हैं, और अपने मन्तव्य से च्युत हो कर अन्यों के समान ही मत की कोटि में गिर कर मतवादी वा मतावलम्बी बन बैठते हैं, और मिथ्याज्ञान से मस्त मत को ही अन्यमत वादियों के सामने धर्म कथन करते हुए दूसरों को धर्म का संकुचित ज्ञान देकर धर्म से विमुख रखते हुए समाज के प्रति बड़े पाप के भागी बनते हैं। और जिनके विपक्ष [illegible] बोलते हैं उनके [illegible] किसी [illegible] पर पहुंचने के स्थान में कि मनस्क को बढ़ा कर समाज की हानि करते हैं।

इस प्रकार धर्म का जितना भी आचरण है वह एक देशी है और एक देशी आचारण का नाम ही मत है। संसार में धर्म प्रचारकों की जितनी भी संस्थाएं वर्तमान हैं वे धर्म के विशेष २ अङ्ग की ही प्रतिनिधि हैं। सर्वाङ्ग पूर्ण धर्म कभी प्रकाशित नहीं होता वह अव्यक्त ही रहता है। अतः प्रत्येक संस्था को, जो धार्मिक क्षेत्र में कार्य करती है, दूसरे मत को जिसका अपने से भिन्न क्षेत्र है केवल भिन्न क्षेत्र के कारण दूषित नहीं ठहराना चाहिए। किन्तु उसको अपने कार्य का पूर्ण करने वाला समझना चाहिए, क्यों कि सब सुधारकों का अन्तिम लक्ष्य पूर्ण धार्मिक होना तथा करना है। कोई भी मत उसी समय दूषित ठहराया जा सकता है जब वह अपने मार्ग में उन्नति शील न हो कर अवनति शील हो जाय अथवा देश काल और अवस्था के अनुसार अपने सामयिक रूप के पूर्ण हो चुकने पर उन्नति पथ में अगले रूप को ग्रहण करने के लिए उद्यत नहीं होता। इस प्रकार विचार करने से जैसे धर्म के दो पार्श्व थे और दूसरे पार्श्व का नाम अधर्म निश्चय किया था इसी प्रकार धर्म के एक देश भूत मत के भी दो पार्श्व समझने चाहिएं और एक का नाम मत या सुमत रक्खें तो दूसरे का नाम अमत या दुर्मत रखना चाहिए। इस प्रकार धर्म और मत के रहस्य को समझ कर मनुष्यों को यथा योग्य व्यवहार करना चाहिए।

पुण्य और पाप

संसार में जितने भी मत प्रचलित हैं वे देश काल और अवस्था अनुसार अपने विशेष २ स्वरूपों को लिये हुए हैं। उन सब का प्रयोजन मनुष्यों को भिन्न भिन्न क्षेत्र में काम रखते हुए उन्नति शील बनाना है। प्रत्येक मनुष्य को चाहिए कि वह अपनी प्रवृत्ति और सामर्थ्य तथा अपने सम्बन्धों की अपेक्षा से प्राकृतिक विकास के अन्दर अपना कर्तव्य निश्चित करके कार्य किया करे। कर्तव्य का निश्चय विचार शील ज्ञानी स्वयं कर सकते हैं। जो स्वयं न कर सकें वे अन्य विचार शील ज्ञानी पुरुषों से करावें। कुछ भी हो बिना अपने जीवन का मार्ग निश्चित किए अन्धा धुन्ध चल पड़ना ठीक नहीं। जो पुरुष अपने लिए बिना मार्ग निश्चित किए संसार में जीवन व्यतीत करने लगते हैं, वे नाना प्रकार से भटकते हैं अपनी शक्ति का धन और बल का अपव्यय करते हैं और भटकते भटकाते जाते उसी मार्ग पर हैं जिस पर उन्हें पहले ही चलना चाहिए था और वे चल देते यदि विचार से काम लेते।

अपने जीवन पथ का चुनना ही अपने लिए अपने स्वभाव गुण और कर्म के अनुसार वर्ण निश्चित करना है। मनुष्य का स्वभाव उसकी प्रवृत्ति (नेचुरल टेन्डेन्सी) को बताता है। गुण से अभिप्राय उसकी, सामर्थ्य, योग्यता, बल, शक्ति, विद्या आदि से है और कर्म से उसके कार्य करने का क्षेत्र लिया जाता है, जिन के साथ सम्बन्ध में वा संगत में हो कर वह आत्मा को प्रकाश करता है या कर सकता है। इस प्रकार मनुष्य का वर्ण अर्थात् कार्य करने का पद निश्चित हुआ करता है जो मनुष्य वृत्तियों के प्राकृतिक विकास सिद्धान्त के अनुसार कार्य करता है जिस से कि वह आत्मा को क्रमिक उन्नत करता हुआ अपने सम्बन्ध से दूसरों को उन्नत करके वही पुण्यात्मा है क्यों कि वह पूर्व दिखाए हुए धर्म के पथ पर चलता है।

प्राकृतिक विकास, धर्म स्वत्व स्वधर्म का अनुसरण करना पुण्य है श्रेय है और इस के विपरीत प्राकृतिक लय, अधर्म, पर वर्ण, पर धर्म का अनुसरण करना प्रेय है पाप है। धर्म का पालन करने से, पुण्य कार्य (रीचस वर्क्स) करने से मनुष्य निर्भय उदार महान्, समृद्ध, उन्नत तेजस्वी, दृढ़ बलशाली होता है और अधर्म का पालन करने से पाप कार्य करने से मनुष्य डरपोक, संकुचित, अल्प, क्षीण, अवनत, निस्तेज, निर्बल, और अस्थिर होता है। पुण्यात्माओं में शान्ति और सुलह होती है, और पापात्माओं में अशान्ति और कलह होता है।

(शेष पृ० ९ पर)

श्रद्धा

क्या गुरुकुल नाकामयाब हुआ है?

(लेखक पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति सं० मुख्याधिष्ठाता)

गुरुकुल को बने पर्याप्त समय हो चुका है। इतने समय में यह भली प्रकार ज्ञात हो सकता है कि कोई संस्था अपने उद्देश्य को पूरा करने में कहां तक कामयाब हुई है। इतने समय से यह जानना कठिन नहीं है कि हम जिधर जा रहे हैं वह उन्नति का रास्ता है या गिरावट का, हमारी कोशिशों में फल लग रहे हैं या नहीं। गुरुकुल जिन उद्देश्यों से बनाया गया, उन्हें हम देख चुके हैं। वह उद्देश्य स्थूल विचार से कहे जाय तो नीचे लिखे प्रकार से चार हैं।

(१) ब्रह्मचर्य का उद्धार

(२) प्राचीन वैदिक सभ्यता का, जिस का एक मुख्य हिस्सा ठीक वर्णव्यवस्था है, फिर से स्थापन

(३) वेदों के विद्वान् उत्पन्न करना

(४) शिक्षा प्रणाली का संशोधन

क्या गुरुकुल कांगड़ी को इन चार उद्देश्यों की पूर्ति में सफलता हुई है? इस प्रश्न का उत्तर देने से पहले एक बात ध्यान में रखनी चाहिये। आज तक कोई भी मनुष्य की बनाई हुई संस्था २० या ५० सालों में अपने उद्देश्य में पूरी तरह सफल नहीं हो सकती। यहां तक कि संस्थाओं की पूरी सफलता जानने के लिये सदियां भी कम हैं। आदमी के बच्चे गोली मट्टी के गोले नहीं हैं कि उन्हें चक्कर पर चढ़ा कर दस पन्द्रह मिनट में घड़े का रूप दे दिया जाय। मनुष्य के स्वभाव में संस्कारों का इतना अधिक हिस्सा पाया जाता है कि कभी कभी उसे बिगाड़ने के लिये सदियां भी पर्याप्त नहीं होतीं। दो एक दृष्टान्तों से बात साफ हो जायगी। वैदिक धर्मी मानते हैं कि ईश्वर ने सृष्टि के आरम्भ में वेद का इस लिये उपदेश दिया कि लोग उस में सच और झूठ का भेद करना जानें, और बुरे रास्ते का त्याग कर के भलाई के रास्ते पर चलें। यह उद्देश्य था--पर अवस्था क्या है? आज अनगिनत सदियां बीत जाने पर भी मनुष्य समाज वैदिक आदर्श से कोसों दूर है। दूरी प्रति दिन कुछ बढ़ ही रही है कम नहीं हो रही। क्या इस से ईश्वर का नाकामयाब होना सिद्ध हो गया? आर्यसमाज की स्थापना ऋषि दयानन्द ने इस लिए की थी कि सारे संसार का शारीरिक आत्मिक और सामाजिक सुधार हो सके। वह चाहते थे कि इस दुखिया जगत् का सुखी पुनर्जन्म हो सके। यदि कामयाबी की कसौटी यही है कि संस्था २० या ५० साल में सारा कार्य पूरा कर दे तो किसी जानकार आदमी को यह कहने में ज़रा संकोच न होगा कि आर्यसमाज को भारी नाकामयाबी हुई है। परन्तु नहीं, न हम वेद को नाकामयाब कह कर छोड़ सकते हैं, और न आर्यसमाज को एक व्यर्थ चीज़ कह कर त्याग सकते हैं। असल बात यह है कि मनुष्य सम्बन्धी संस्थाओं की कामयाबी सापेक्ष होती है। उन में यह देखना होता है कि उस संस्था का झुकाव भलाई की ओर है या बुराई की ओर। झुकाव से ही उसकी सफलता का अनुमान होता है--तपते हुए तवे की भांति संस्था पर रोटी चढ़ा कर मनुष्य क्षण भर में नहीं पकाया जा सकता।

गुरुकुल की सफलता के प्रश्न पर विचार करते हुए हमें यह ध्यान में रखना चाहिये कि मनुष्य सम्बन्धी संस्थाओं की परीक्षा सदा उनके झुकाव से की जाती है। यदि उसका झुकाव सफलता की ओर है तो वह सफल है। गुरुकुल को बने २० साल भी नहीं हुए क्या कोई और मनुष्य कृत संस्था है जो पूरी कामयाबी दिखा सके--या जो अपने पूरे उद्देश्य को पा चुकी हो। इस एक बात को ध्यान में रखते हुए विचार करें तो समझ में आ जायगा कि जो लोग गुरुकुल पर यह आक्षेप किया करते हैं कि यहां से गौतम कणाद उत्पन्न नहीं हुए, या अभी तक कोई दयानन्द उत्पन्न नहीं हुआ, वह कितनी भूल पर हैं। उनकी दृष्टि कितनी संकुचित है। वह नहीं विचारते कि गुरुकुल १८ सालों में यदि बहुत से दयानन्द पैदा नहीं कर सका तो आर्यसमाज ५० सालों में भी बहुत से दयानन्द पैदा नहीं कर सका, और वेदों के होते हुए भी आज संसार में धर्म की अपेक्षा पाप की राशि अधिक है।

(१) गुरुकुल को नाकामयाब संस्था बताने वाले लोग कई प्रकार के हैं। उन में से सब से निचले दर्जे का हाथमा प्रति द्वन्द्विता के वश में आकर गुरुकुल के कार्य को छोटा बताना चाहते हैं। प्रायः बुरी बातों में ही नहीं होती--कभी २ मनुष्य अपनी चतुराई से अच्छे से अच्छे काम में भी डाह जैसे अपवित्र दोष को ले आता है। किसी को किसी दूसरी वर्तमान संस्था से प्रेम है, या किसी दूसरी प्यारी संस्था को बनाने की धुन है। वह अपनी संस्था की ओर लोगों का ध्यान यही कह कर खेंचना चाहता है कि 'गुरुकुल में आप लोगों ने लाखों रुपये पानी तरह बहाये हैं--अब कुछ लाख इधर भी दीजिये' तुलना द्वारा अपने गुण बता कर अपील करने की वृत्ति मनुष्यों में चिरकाल से चली आती है। ऐसे सज्जनों के आक्षेप का कुछ उत्तर देना अनावश्यक ही हुआ है। जिस की दृष्टि प्रतिस्पर्धा से मन्द हो गई है, उस के कथन को कुछ अधिक मूल्य देना भूल है।

(२) दूसरे आलोचक ऐसे हैं जिन के दिमाग़ के संस्कारों को गुरुकुल के विचार से ठेस पहुंचती है। कई लोगों के मस्तिष्कों में संस्कृत विद्या के साथ मैली धोती तम्बाकू की सूंघनी और बनारस की गन्दी गली के सम्बन्ध इतने मज़बूत हो चुके हैं कि वह समझ ही नहीं सकते कि शुद्ध कपड़ों में, शुद्ध आहार व्यवहार में और स्वच्छ मकान में रह कर भी संस्कृत के पण्डित बन सकते हैं। दूसरे कई लोग ऐसे हैं जिन के दिमाग़ में, अंग्रेज़ी शासन की गुलामी ऐसा घर कर गई है कि [illegible]

मान सकते कि सरकारी यूनिवर्सिटी की हुकूमत से बाहिर रह कर, इंगलैंड की हिस्टरी न पढ़ा कर, और संस्कृत जैसी मुर्दा ज़बान को ऊंचा स्थान देकर भी कोई संस्था शिक्षित पुरुष उत्पन्न कर सकती है। ऊपर कहे हुए दोनों प्रकार के नुकताचीनों का जवाब आज तक न कोई देसका, न आगे को देगा, क्योंकि जहां युक्ति और विवेक का स्थान संस्कारों को दे दिया जाय वहां सुधार की कोई आशा नहीं रहती।

(३) गुरुकुल की सफलता के तीसरे आलोचक ऐसे भी बहुत से हैं, जिन्हें वस्तुतः गुरुकुल की सफलता में सन्देह है जो गुरुकुल के फल को तोलते हैं--और कम पाते हैं। वह लोग गुरुकुल के हितैषी हैं। न वह डाह या जलन से गुरुकुल को कोसते हैं और न केवल दिमाग़ी गुलामी से मजबूर हैं। ऐसे हितैषी आलोचकों की आलोचना का उत्तर देना आवश्यक है, और उनकी निराशा का कारण ढूंढना भी ज़रूरी है। ऐसे समालोचकों के आक्षेपों के कुछ नमूने देकर मैं उनके समाधान करने का यत्न करता हूं।

(१) प्रथम आक्षेप यह है कि गुरुकुल से ऋषि मुनि नहीं उत्पन्न हुए। इसका उत्तर सैंकड़ों बार दोहराया जा चुका है। सदियों की गिरावट २० साल में दूर नहीं हो सकती। पुराने संस्कार कागज़ों के पुर्जे नहीं हैं कि फूंक दी दिया सिलाई की सीख से साफ हो सकें। ऋषि और मुनि बनाने के लिये कम से कम आदर्श आचार्यों की आवश्यकता है। क्या हमारे पास आदर्श आर्य शिक्षक हैं? इन सब कठिनाइयों पर विचार करते हुए यही निश्चय समझना चाहिए कि यदि २० साल में भारत की दास सन्तान को गुरुकुल ऋषि नहीं बना सका तो कोई आश्चर्य नहीं।

(२) गुरुकुल पर दूसरा आक्षेप यह है, कि यदि ऋषि मुनि न निकले तो न सही, पर शारीरिक तथा मानसिक दृष्टि से पूरी तरह उन्नत स्नातक भी तो उत्पन्न नहीं होते। शारीरिक उन्नति के बारे में तो तुलना [illegible] कुछ अधिक कठिन नहीं है, पर मानसिक उन्नति के बारे में आज कल तुलना करना बड़ा कठिन होता है। कठिनता का कारण यह है कि लोगों ने योग्यता नापने के जो पैमाने बनाये हुए हैं, वह कुछ बेढब हैं। हरेक आदमी ने अपनी अपनी संकुचित दृष्टि और योग्यता के अनुसार पैमाने बना रखे हैं। इसका दोष उस शिक्षा प्रणाली के सिर पर है, जो हमारे दृष्टि क्षेत्रों को संकुचित कर देती है। जो अंग्रेज़ी पढ़ा है, वह अंग्रेज़ी भाषा की पण्डिताई से योग्यता का निश्चय करता है, और जो संस्कृत का पण्डित है वह दर्शन या महाभाष्य की पंक्ति की व्याख्या ही से योग्यता का अनुमान लगाता है। हमारी बनाई हुई कसौटियां कितनी अधूरी हैं, इसका एक उदाहरण देता हूं। एक स्नातक यदि धारा प्रवाही संस्कृत में व्याख्यान दे तो कहा जाता है कि 'हां' ठीक है, संस्कृत में तो स्नातक व्याख्यान दे लेते हैं पर संसार में तो अंग्रेज़ी की पूछ है और यदि वह अपने व्याख्यान में अंग्रेज़ी पुस्तकों के उद्धरण दे तो कट्टर से आलोचक सिर हिला कर कहते हैं कि अंग्रेज़ी की किताबें पढ़लीं तो क्या हुआ, संस्कृत तो पूरी नहीं आती'। अंग्रेज़ी पढ़े लिखे यह नहीं जानना चाहते कि इस स्नातक को अंग्रेज़ी भाषा में लिखी हुई पुस्तकों में प्रति पादन किये हुए विज्ञान या दर्शन का कितना परिचय है, सरकारी शिक्षा का प्रभाव यह है कि वह अंग्रेज़ी सुलेख और बात चीत से ही योग्यता का अनुमान लगाते हैं। गुरुकुल में संस्कृत इस लिये पढ़ाई जाती है कि उस द्वारा वेद शास्त्र आदि का ज्ञान हो, और अंग्रेज़ी [illegible] केवल इस लिये दी जाती है कि उस भाषा में जो ज्ञान विज्ञान है, [illegible] परिचय हो सके। यदि १५ साल [illegible] पढ़ने वाले, या संस्कृत अध्यापक [illegible] लाभ उठाने वाले [illegible] [illegible] करते तो गुरुकुल की क्या आवश्यकता थी, बनारस में बहुत साधन विद्यमान थे, और यदि सुन्दर अंग्रेज़ी लिखना या बोलना ही मनुष्य जीवन का आदर्श है तो स्कूलों को छोड़ कर जंगल में भागना फिज़ूल है। गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली की यह विशेषता है कि वह मातृभाषा को मुख्यता देती है; ज्ञान को वाणी या लेख द्वारा प्रकाशित करने की शक्ति उत्पन्न करती है। संस्कृत और अङ्गरेज़ी ज्ञान प्राप्त करने के साधन हैं, जिन में से संस्कृत को प्रधानता दी जाती है क्योंकि उस में आर्य जाति का सर्वस्व भरा हुआ है।

यदि स्नातकों की योग्यता को नापना है तो इस प्रकार नापिये। क्या सरकारी यूनिवर्सिटि के ग्रेजुएटों को अपने धर्म दर्शन और स्मृति आदि का उतना ज्ञान होता है जितना गुरुकुल के स्नातकों को? क्या काशी या नदिया के पण्डितों को गणित ज्ञान इतिहास आदि मनुष्य के लिये आवश्यक विषयों का बोध होता है जितना गुरुकुल के पंडितों को? क्या सरकारी कालिज या काशी के बने हुए नये बी.ए. या नये शास्त्रियों में अपनी मातृभाषा में—वाणि और लेख द्वारा—गहरे से गहरे ज्ञान को प्रकाशित करने की उतनी शक्ति सामान्य तौर पर पाई जाती है जितनी नये स्नातकों में? यदि इन तीनों प्रश्नों के उत्तर में 'नहीं' कहना पड़ेगा तो शिक्षा के सम्बन्ध में गुरुकुल की की कामयाबी निश्चित है। यही गुरुकुल का दावा है कि वह मातृभाषा द्वारा पूर्व और पश्चिम के ज्ञान की इतनी आवश्यक राशि स्नातकों को दे देता है जितनी और कोई विद्यालय नहीं देता। उसका यह भी दावा है अपने धर्म, अपने गौरव और अपने सच्चे इतिहास की शिक्षा देने के जो साधन गुरुकुल में हैं और कहीं। इन दोनों दावों को आज तक किसी समालोचक ने नहीं तोड़ा, और मैं अपने सब स्नातक भाइयों की योग्यताओं पर दृष्टि डालता बिना संकोच के कह सकता हूं कि उन में अधिक संख्या की योग्यता की ऊपर लिखी हुई ठीक कसौटी से यदि परीक्षा की जाय, गुरुकुल को निश्चय से कामयाब संस्था कहा जा सकता है।

(४) चौथा आक्षेप यह किया जाता है कि गुरुकुल के स्नातकों से जनता को निराशा हुई है क्योंकि वह गुरुकुल से निकल कर विवाह आदि कर के बैठ जाते

हैं। ऐसे आक्षेप करने वाले से बिल्कुल उलटे वह लोग हैं जो यह आक्षेप करते हैं कि गुरुकुल के स्नातक बेचारे न वकील बन सकते हैं और न सरकारी नौकर वह बेचारे क्या करेंगे। पहले प्रकार का आक्षेप करने वाले सज्जन तो समझते हैं कि जिन माता पिता ने अपने बच्चों को गुरुकुल में भेजा है उन्हीं ने जन्मभर के लिये उनके अविवाहित रखने का प्रण कर लिया है। वह आशा रखते हैं कि गुरुकुल की शिक्षा आश्रम व्यवस्था को पुष्ट न करने के लिये और आदित्य ब्रह्मचारी ही बनाने के लिये है। ऐसे लोग यह नहीं जानते कि किसी जाति में आदित्य ब्रह्मचारी पड़े नहीं जा सकते साथ ही यह भी कि यदि ब्रह्मचर्य पूर्वक जीवन व्यतीत करने वाले लोग गृहस्थ न करेंगे तो क्या कभी सम्भव है कि गृहस्थ का सुधार हो सके। गुरुकुल ब्रह्मचर्य के सुधार द्वारा सारे आश्रमों का सुधार करना चाहता है। यही गुरुकुल की विशेषता है, जिसे कई भोले लोग उसकी त्रुटि बताना चाहते हैं।

जो लोग यह आक्षेप करते हैं कि गुरुकुल के स्नातक वकील या सरकारी नौकरों की संख्या न बढ़ा सकेंगे, इस लिये गुरुकुल नाकामयाब है, उनकी संख्या अब बहुत कम रह गई है क्योंकि जाति के अधिकांश ने असहयोग के सिद्धान्त को स्वीकार कर के इस बात की घोषणा दे दी है कि वह गुरुकुल की इस कई लोगों द्वारा कही हुई अपूर्णता को ही जाति की रक्षा का मुख्य साधन समझता है।

इन आक्षेपों के अतिरिक्त एक भारी आक्षेप यह किया जाता है कि गुरुकुल ने आर्यसमाज का कुछ उपकार नहीं किया। इस आक्षेप का विस्तार पूर्वक उत्तर अगले लेख में दूंगा। यहां अन्त में मैं इतना ही निवेदन करता हूं कि गुरुकुल के समालोचक समालोचना से पहले यह विचार किया करें कि गुरुकुल किन उद्देश्यों से बनाया गया, और उन्हीं उद्देश्यों की कसौटी पर उसे कसा करें तो उन्हें स्वयं ही बहुत से आक्षेपों का समाधान मिल जाया करे। गुरुकुल कुछ खास आदर्शों को लक्ष्य में रख कर बनाया गया है। यह दावा करना तो मूर्खता है कि गुरुकुल ने अपना लक्ष्य पूरा कर लिया है, क्योंकि आज तक किसी भी मनुष्य कृत संस्था ने २० सालों में अपना लक्ष्य पूरा नहीं किया। पर यह बिना संकोच के कहा जासकता है कि वह जा रहा है अपने लक्ष्य की ओर ही। मैं समझता हूं कि यदि सब मनुष्य की बनाई हुई संस्थाओं के विषय में इतना भी कहा जा सके तो बहुत है।

नई बोतल में पुरानी शराब !

पिछली कुछ घटनाओं और विशेषतः पंजाब–हत्या काण्ड; चम्पारन और रायबरेली में की गई डायर शाही वस्तुतः, औरंगजेब शाही से किसी भी अंश में कम नहीं है। इस प्रकार की स्वेच्छाचारिता का एक और नमूना अभी मिला है। इलाहाबाद ज़िले के ७ गावों में यह कहा गया है कि वे उन्हें खाली कर दें। क्यों? इस लिए कि फ़ौज़ को गोलाबारी (आरटीलरी) का अभ्यास करने के लिए उस स्थान की आवश्यकता है। वे गरीब, असहाय लोग उस [illegible] ज़मीन को छोड़ कहां जावेंगे [illegible] और चलाने का [illegible] अभी तक नहीं किया। [illegible] पढ़ा है कि [illegible] राजा ने [illegible], अकारण [illegible] दक्षिण में जा बसने का हुक्म दिया था। जो नहीं जाते थे उन्हें हाथ से खींच कर ले जाया गया था। फिर, उसी प्रकार [illegible] दिल्ली जाने का हुक्म दिया गया था। इन्हीं करतूतों के कारण इतिहास में उसे "पागल" के नाम से याद किया गया है। नौकरशाही के यह नया [illegible] "पागल" [illegible] की घटनाएं याद कराती हैं। सच तो यह है, बोतल तो [illegible] और भड़कीली आ गई है पर अन्दर [illegible] पुरानी ही है।

गुरुकुल–समाचार

(कार्यालय से प्राप्त)

श्री आचार्य जी

श्री स्वामी जी का स्वास्थ्य अभी ठीक नहीं हुआ। बीच में कई बार ज्वर उतरा है, पर फिर चढ़ जाता है, और चिन्ता बढ़ जाती है। गुर्दे का रोग, जो चिरकाल से थोड़ा २ चला आता था, निर्बलता के कारण ज़ोर पकड़ गया है, और शरीर को निर्बल बनारहा है। अभी तक चारपाई पर रहना पड़ता है। निर्बलता और बार २ ज्वर आने के कारण किसी प्रकार का कार्य नहीं करते। डाक्टरों की सम्मति है कि उन्हें अब महीनों तक कोई परिश्रम का कार्य न करना होगा। डा० अन्सारी बराबर पत्रों द्वारा अपनी सम्मति भेजते रहते हैं। ३१ जनवरी के प्रातः काल बरेली से डाक्टर श्यामस्वरूप जी सत्यव्रत स्वामी जी के देखने को पहुंचे, और देख कर अपनी सम्मति दे गये। सेवा का कार्य डा० सुखदेव जी और महाविद्यालय के ब्रह्मचारी उत्साह से और उत्तमता से कर रहे हैं, उस में और अधिक उन्नति कठिन ही है। आशा है, परमात्मा की दया से शीघ्र ही कुल वासियों की यह चिन्ता भी दूर होगी, और श्री आचार्य जी स्वास्थ्य लाभ कर के उस विश्राम का [illegible] उपयोग कर सकेंगे, जिस के वह अधिकारी हैं।

उत्सव की तय्यारियां

[illegible] की तय्यारियां [illegible] उत्साह से हो रही हैं। छप्पर बन रहे हैं। इस बार पहले से बहुत अधिक संख्या में दर्शकों के आने की आशा है, इस लिये छप्पर भी अधिक बनाये जावेंगे। इस उत्सव की [illegible] विशेषता यह होगी कि राष्ट्रीय शिक्षा [illegible] सुप्रसिद्ध सज्जन भी [illegible] संख्या में पधारेंगे। कई ने [illegible] [illegible] का वचन दिया है। [illegible] उत्सव स्वभावतः [illegible] दर्शनीय ही होगा।

वैदिक खोजागार [illegible]

बहुत काल से विचार [illegible] गुरुकुल [illegible] [illegible]

किया जाय। कई बार यत्न हुआ। पर कार्य बीच ही में रह गया। अब वह कार्य विचार की कोटि से आगे बढ़ कर कार्य के रूप में परिणत हो गया है। वैदिक कोश का कार्य एक विस्तृत वैदिक कोष के रूप में आरम्भ किया गया है। कोष में वेद के प्रत्येक शब्द का निरुक्त में तथा इस समय प्राप्त भाष्यों में जहां २ जो २ अर्थ किया गया है, वह पते सहित दिया जायगा। यह कार्य वेद का अन्वेषण करने वालों के लिये कितना उपयोगी होगी, यह बताना आवश्यक नहीं। वैदिक कोश का अभाव वेदार्थ जानने की कठिनाई का सब से बड़ा कारण है। इस कोष का कार्य पं० विश्वनाथ जी विद्यालंकार और पं० रामचन्द्र सिद्धान्तालंकार कर रहे हैं।

वैदिक सन्देश

वैदिक कोष के स्थिर कार्य के अतिरिक्त वेद सम्बन्धी लेखों को प्रकाशित करने और प्रश्नों के समाधान के लिये वैदिक सन्देश नाम का पत्र निकालने की सूचना दी गई थी। पत्र गुरुकुल के उत्सव तक निकलना आरम्भ हो जायगा। डिक्लेरेशन भेजा गया है, स्वीकार होने पर पहला अंक प्रकाशित होने में देर न लगेगी। अब पत्र के निकलने में जितनी देर होगी, वह डिक्लेरेशन को मिलने में देर के कारण ही होगी।

आर्यसिद्धान्त सभा

गुरुकुल महाविद्यालय के आर्यसिद्धान्त पढ़ने वाले ब्रह्मचारियों की भाषण शक्ति को बढ़ाने के लिये इस सप्ताह से एक आर्यसिद्धान्त सभा स्थापित की गई है। उस में ब्रह्मचारियों के व्याख्यान और समालोचनात्मक भाषण होते हैं। पहले अधिवेशन में ब्र० धर्मदेव ने भिन्न २ दर्शनों के ईश्वर सम्बन्धी विचार इस विषय पर १ घण्टा भर व्याख्यान दिया, जिस पर विवाद हुआ। दूसरे अधिवेशन में ब्र० विद्यानिधि ने नास्तिक वाद पर व्याख्यान दिया, उस पर भी थोड़े से प्रश्नोत्तर हुए।

सेवा समिति

ब्रह्मचारियों में सेवा भाव बहुत है, परन्तु वह सदा इस बात को अनुभव करते रहे हैं कि भाव को शिक्षित होने का अवसर नहीं मिलता। इस अभाव की पूर्ति के लिये गुरुकुल में सेवा समिति की स्थापना की गई है। महाविद्यालय और विद्यालय की ऊंची श्रेणियों के ब्रह्मचारी उस में सम्मिलित हुए हैं। स्वयं सेवक को प्रारम्भिक चिकित्सा (एम्बुलेन्स) की पाठ विधि में से गुजरना पड़ेगा। अन्य सेवा सम्बन्धी शिक्षाओं के प्राप्त करने के लिये एक स्नातक—रवरी के अन्त में प्रयाग भेजा जायगा। सेवा समिति के अधिकारियों ने बड़े कौशल्य से दिखलाने की आशा दिलाई है।

गुरुकुल कांगड़ी के

उत्सव के सम्बन्ध में सूचनायें

उत्सव २० मार्च से २३ मार्च तक होगा १९ मार्च के प्रातः काल ग्रामीण पाठशाला का उत्सव होगा, और सायंकाल के समय या रात को कविता सम्मेलन होगा।

दिल्ली के प्रसिद्ध नेता हकीम अजमल खां, डा० अन्सारी, और मि० आसफ अली ने आना स्वीकार किया है। अजमेर के प्रसिद्ध देश भक्त कुंवर चांद करण शारदा के आने की पूरी आशा है। अन्य नेताओं से पत्र व्यवहार हो रहा है। आशा तो बहुतों की है पर अभी विश्वास से लिखना कठिन है।

इस बार उत्सव की विशेषता यह होगी कि २१ मार्च को सायंकाल के समय एक राष्ट्रीय-शिक्षा सम्मेलन होगा, जिसके सभापति का आसन देश के एक प्रसिद्ध नेता ग्रहण करेंगे। उस में राष्ट्रीय शिक्षा के सम्बन्ध में विचार होगा।

उस से भी अधिक आवश्यक एक दूसरा सम्मेलन होगा उसका नाम आर्य सम्मेलन रक्खा गया है। इस सम्मेलन में आर्य समाज की वर्तमान शिक्षा सम्बन्धी तथा अन्य कार्य सम्बन्धी नीति पर विचार होकर आगे के लिए कार्य निश्चित किया जायगा। इस सम्मेलन के लिए बड़े उत्साह से तय्यारियां होरही हैं।

सरस्वती सम्मेलन तो पुरानी शान से होगा ही। उसके विषय में अधिक लिखना अनावश्यक है।

बाहिर से आई सूचनाओं से ज्ञात होता है कि इस बार उत्सव पर बहुत अधिक भीड़ होगी। जो सज्जन अपने लिये जुदा अपने डेरे लगवाना चाहें वह बहुत पहले ही लिखें तो उत्तम होगा।

(पृष्ठ २ का शेष)

पुण्य से सुख और पाप से दुःख इसी लिए लिखा है क्यों कि पुण्य उन्नति पथ के अनुसरण का नाम है और पाप अवनति पथ के अनुसरण का। लौकिक, मानसिक, व्यवहारिक, सामाजिक, राजनैतिक आदि किसी क्षेत्र में भी विचार द्वारा देखें तो यही प्रतीत होगा कि ऊपर चढ़ने में सुख है, किसी विकट उलझन के सुलझाने में सुख है, मेल मिलाप और मोहब्बत में सुख है, बड़े २ कार्यों को करने के लिए संगठन के बल से एक दम कर डालने में सुख है, सुव्यवस्था बनाए रखने में सुख है। इस प्रकार किसी भी दृष्टि से विचारिए प्रत्येक विषय के उभय पार्श्व में से पुण्य पार्श्व के अवलम्बन में सुख है और पाप के अवलम्बन में दुःख है। पुण्य और पाप तथा पुण्यात्मा और पापात्मा को पहिचानने की कसौटी भी यही है कि जहां अन्ततः सुख हो वह पुण्य और जिसे हो वह पुण्यात्मा तथा जहां अंततः दुःख हो वह पाप और जिसे हो वह पापात्मा होता है इस प्रकार पुण्य और पाप को धर्माधर्म के रूप में जान कर सद् व्यवहार ही करना चाहिए।

शा० गु० कुरुक्षेत्र समाचार

ऋतु बहुत ही विचित्र है। प्रयः सारे दिन आकाश मेघमंडल से व्याप्त रहता है। सूर्य और बादलों का परस्पर सांमुख्य रहता है जिस में कि प्रायः बादल दल ही विजयी रहता है। वायु मंडल का रुख कुछ बदलने ही को था कि फिर वर्षा के कारण यह शान्त और ठंडा हो गया। अब भी आकाश में बादल छाए हैं और आशा है कि ये बिना बरसे न जावेंगे।

स्वास्थ्य ब्रह्मचारियों का दिनों दिन उन्नत हो रहा है। गये कई महीनों से कोई भी ब्रह्मचारी ज्वर से पीड़ित नहीं हुआ और सभी आनन्द प्रसन्न स्वस्थचित्त हैं। ईश्वर करे कि कुल में सदैव इसी प्रकार आनन्द मंडल बना रहे।

पठन पाठन में ब्रह्मचारी गण खूब ज़ोर शोर से उत्साह पूर्वक लगे हुए हैं। अध्यापक मंडल में से श्री. मा० काशीराम जी अपनी माता जी के रोगी होने के कारण ३ मास की लम्बी छुट्टी पर चले गए हैं। इसी प्रकार संस्कृताध्यापक पं० भगीरथ जी शास्त्री भी किन्हीं कारणों से दीर्घावकाश पर चले गए हैं। शास्त्री जी के जाने से सम्भावना थी कि शाखा को किसी प्रकार की हानी पंहुचती किन्तु बड़ी प्रसन्नता की बात है कि अब उनका स्थान शीघ्र ही पं० शान्तिस्वरूप जी वेदालंकार (भूत पूर्व प्रबन्धकर्ता गु० कु० भैंसवाल) ने ले लिया है। हमें पूरी आशा है कि स्नातक जी के पधारने से शाखा की उत्तरोत्तर वृद्धि ही होगी। कुल में अन्य रिक्त स्थानों की पूर्ति का प्रबन्ध भी बहुत शीघ्र किया जा रहा है।

उत्सव शाखा का बहुत ही समीप आ पहुंचा है। ठीक तिथि उस की ६,७,८ मार्च है। आर्य जनता और कुल के सभी प्रेमियों को अब तैय्यार हो कर इस की उन्नति के लिये यत्न प्रारम्भ कर देना चाहिए। सहायता के लिए पृथक २ अपीलें तो शाखा से भेजी ही जा रही हैं किन्तु जिन महानुभावों के पास वे न भी पहुंचें उन्हें भी अपने कर्त्तव्य से चूकना नहीं चाहिये।

शाखा के प्रबन्धकर्ता और अनथक परिश्रम से काम करने वाले ला० मौलतराय जी एक सप्ताह से पं० बालमुकुन्द जी के साथ चन्दा इकट्ठा करने को बाहर डेपुटेशन बनाकर गए हुए हैं। पत्रों से विदित होता है कि उन्हें अपनी यात्रा के सब से प्रथम पड़ाव 'करनाल' में पर्याप्त सफलता हुई है। ३००) रुपए के लग भग चन्दा इकट्ठा हो गया है और ५००) तक हो जाने की पक्की आशा है। हमें पूर्ण आशा है कि दानी महोदय लाला जी को निराश न करेंगे।

इस के साथ ही साथ अन्य महानुभावों से भी हमारी सानुरोध प्रार्थना है कि वे शाखा के लिए अभी से चन्दा आदि इकट्ठा कर सहायता करनी प्रारम्भ करदें।

राजेन्द्र विद्यालङ्कार
मुख्याध्यापक शाखा गुरुकुल कुरुक्षेत्र

बेगार से इन्कार!

ब्रिटिश शासन में अन्य सैकड़ों बुराइयों की तरह बेगार और रसद के अन्याय से लोगों को खास कर देहातियों को बहुत कष्ट है। हिन्दुस्तान का कोई भी हिस्सा बेगार और रसद की तकलीफों से नहीं बचा। यदि मैं थोड़े में इस को कहूं तो यह कहना होगा कि, सिर्फ बेगार और रसद का मौजूदा तरीका ही हिन्दुस्तानियों को गुलाम बनाये रखने में काफी है। ब्रिटिश शासन के इञ्जिन का प्रत्येक छोटा बड़ा पुर्जा—वायसराय से लेकर गांव के चौकीदार तक—लोगों से बेगार लेता है। यह सरासर अन्याय है और देश की स्वाधीनता में भारी रुकावट है।

मैंने दीनबन्धु परमात्मा से इस अन्याय को नष्ट करने की प्रार्थना की और उसी की दया के भरोसे अपने भाइयों को यह समझाया कि, 'बेगार हरगिज़ मत दो।" गांवों में जा जा कर लोगों को तैय्यार किया और इसी आशय के विज्ञापन छाप २ कर इलाकों में बांटे। खुशी की बात है कि, अब यहां (हरयाने में) बेगार और रसद की तकलीफ बहुत कम है। सरकारी मुलाज़िम यह समझ गये हैं कि अब धींगा धांगी नहीं चलेगी। वे तो रास्ते पर आ रहे हैं, किन्तु उनके इशारे से कुछ 'जी हुज़ूर' ज़मींदार कहीं २ कमीनों को तंग कर देते हैं। आशा है, कुछ दिनों में उनके दिलों से भी गुलामी की गन्ध निकल जायगी!

यहां इस कार्य में सफलता के समाचार सुन कर युक्तप्रदेश, मध्यप्रदेश, मध्य भारत, बिहार और राजपूताने से मेरे पास नित्य नये ऐसे प्रश्न आते हैं कि बेगार कैसे बन्द कराई जाय? सरकार के पास डेपुटेशन लेजावें? सभा किस ढङ्ग से बनावें? नियमावली भेज दो, व्याख्यान देने के लिये आजाओ, इत्यादि। इन सबप्रश्नों का यथोचित उत्तर देने के बाद भी कोई न कोई प्रश्न खड़ा रहता है। मैं समझता हूं कि लोगों की ना समझी और कमहिम्मती ही सवाल पैदा कराती है। बेगार और रसद के अन्यायों को बन्द करने में बहुत सोच विचार, और कानून के पेच में मग़ज़ पच्ची करने की ज़रूरत नहीं, ज़रूरत है हिम्मत कीऔर उस के साथ इस निश्चय की कि, "बेगार नहीं देंगे और यदि इन्कार के कारण विपत्ति आवे तो सानन्द और दृढ़ता पूर्वक सहलेंगे"। बेगार बन्द करने का मूलमन्त्र है "बेगार से इनकार।" यहां इसी से सफलता हुई है! और मेरा निश्चय है कि, यही मूलमन्त्र सब जगह काम करेगा। लोग बेगार देने से साफ इनकार करदें। चाहे कोई कितना दबाव डाले परन्तु वे इस निश्चय से नहीं हिलें। सरकारी मुलाज़िम यदि कुछ समझौता करने को कहें तो भी इनकार करनी चाहिये। क्योंकि, उनका समझौता उन्हीं के हित की ओर झुका रहता है। हमें उनकी बातों के फेर में पड़कर आगे और बेगार से नहीं डिगना चाहिये। वायसराय के थिडारस्थल शिमलाशैल पर बेगार बन्द कराने वाले मेरे मित्र मि० स्टोक्स साहब तक समझौते के चक्कर में आ गये हैं। इसका मुझे आश्चर्य है। मैं सरकारी मुलाज़िमों से द्वेष नहीं करता, किन्तु उनकी स्वार्थभरी नीति से सख्त घृणा करता हूं। एक दिन आवेगा जब वे अपने आप को जनता के नौकर मानेंगे। तबतक बेगार और रसद की बुराइयों को हटाने में इन्कार निश्चय उपाय ही ठीक है। मुफ्त या नाम मात्र की उजरत पर काम कराना बेगार और मुफ्त में या बाज़ार भाव से सस्ते दर पर सामान लेना रसद है। यह आजकल बेगार और रसद की व्याख्या है। मुझे आशा है कि सब भाई इस अन्याय को दूर कराने में पूर्ण प्रयत्न करेंगे।

नेकीराम शर्मा
भिवानी (हिसार)

आर्यसामाजिक जगत्

मद्रास में वैदिक धर्मप्रचार

बंगलोर में आर्य्यसमाज मन्दिर की स्थापना

(निज संवाद दाता द्वारा)

श्रद्धा के पाठकों को यह मालूम ही है कि गत ६ मास से लगातार सार्वदेशिक सभा की ओर से मद्रास वा दक्षिण भारत में आर्य्य समाज का प्रचार जारी है। दो मास हुए जब मैसूर में एक उत्तम स्थान पर महाराज के भवन के सन्मुख सिंहद्वार बाजार में दो मंजिले पर एक घर मे आर्य्य समाज को स्थापना की गई थी। तब से वहां आ० स० का काम उत्तम तरह से हो रहा है। मन्दिर में आर्यभाषा, संस्कृत वा सत्यार्थप्रकाश की नियम पूर्वक पढाई होती है।

पं० गोपालदत्त शास्त्री सार्वदेशिक की ओर से वहा नियुक्त हो चुके हैं और स्वामी सत्यानन्द जी अपने तन मन से सब प्रकार से कार्य में सहायता करते रहते हैं। बेंगलोर में भी आर्य समाज की तरफ से प्रचार और हिन्दी वा संस्कृत शिक्षा का काम गत ६ मास से हो रहा है किन्तु उत्तम स्थान न मिल सकने के कारण अब तक आर्य्यसमाज मन्दिर को स्थापना न हो सकी थी। अन्त को बस आनगुडी नामक नई बस्ती में शुद्ध वायु में एक घर ले कर ६ फरवरी रविवार आर्य समाज मन्दिर के उद्घाटन की सूचना दे दी गई। प्रातः काल ही सब शिक्षित तथा प्रतिष्ठित व्यक्ति मन्दिर में पहुंच गए और ठीक ८ बजे कार्यवाही शुरू की गई। यज्ञशाला चारों तरफ फूलों के गमलों से सजी हुई थी और समाज मन्दिर के सन्मुख प्रातः काल लगाया आर्य समाज का सुन्दर बोर्ड शाला की शोभा को और भी बढ़ा रहा था। प्रथम स्तुति प्रार्थना के मन्त्रों का पाठ कर के अग्निहोत्र किया गया। तत्पश्चात् एक सज्जन के प्रस्ताव करने पर पर रायसाहब चिनैया ने सभापति का आसन ग्रहण किया। आपने प्रथम आर्य समाज के उद्देश्य और सिद्धान्तों का जिकर करते हुए पंजाब में आर्य समाज के सामाजिक और शिक्षा सम्बन्धी काम का विस्तार से वर्णन किया। साथ ही गुरुकुल हरिद्वार का मनोहर चित्र श्रोताओं के सन्मुख रक्खा और दक्षिण में आर्य समाज की आवश्यकता जतलाई। अन्त में आपने हर्ष प्रकट किया कि बैंगलोर में भी आर्य समाज मन्दिर की स्थापना हो गई है। इसके पश्चात् प० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालङ्कार ने आर्यसमाज के सभासदों के नाम पढ़ कर सुनाए और साथ ही सभापति महाशय ने उठ कर सामयिक कार्यकर्त्ता महाशयों की सूचि सुनाई। जो इस प्रकार है—महा० बी, एन, कर्वे,

(रिटायर्ड चीफ़ इञ्जीनियर) प्रधान
म० ट, मुनिस्वामी अप्पा उपप्रधान
म० बी, एन सिलयदेव उपप्रधान
महा० गजानन कर्वे मन्त्री
म० एम बी, कृष्णराव उपमन्त्री

इस के पीछे प० देवेश्वर सिद्धान्तालङ्कार ने आर्य समाज के १० दस नियम पढ कर सुनाए और आर्य समाज खोलने का उद्देश्य बताया। तत्पश्चात् कनाड़ी भाषा में प० शेषगिरी शर्मा ने सब उपर्युक्त अभिप्राय विस्तार से कह कर सुनाया और साथ ही ऋषि दयानन्द पर स्वर से कनाड़ी में एक भजन गा कर श्रोतागण के धन्यवाद के पात्र बने। अन्त में मन्त्री महाशय उठे और आपने आर्य समाज का स्वरूप वर्णन प्रारम्भ किया—आपने कहा कि जहां आर्यसमाज का असली काम प्राचीन वैदिक धर्म का पुनरुज्जीवन करना है—वहां दूसरी तरफ यह हिंदुसमाज की रक्षा करने वाला है। जातपात के बन्धन को तोड़ कर और शुद्धि के काम को जारी करके आर्य समाज ने बहुत उपकार किया है—और दक्षिण देश में तो इस अंश की भारी आवश्यकता है। अपना भाषण समाप्त करते हुए आपने सब सदस्यों और स्नातक युगल से इस नए कार्य भार के लिए सहायता की प्रार्थना करते हुए मन्त्री पद का स्वीकार किया। अन्त में शान्तिपाठ के साथ सभा समाप्त हुए हुई।

सभा समाप्त होने पर सब मेम्बर समाज के पुस्तकालय और वाचनालय देखने के लिए अन्दर हाल में पधारे। वहां एक मेज पर ऋषिदयानन्द के सब ग्रन्थ तथा अन्य प्रसिद्ध २ सामाजिक ग्रन्थ, कनाड़ी सत्यार्थप्रकाश, सन्ध्यादि पेम्फलट पड़े हुए थे। मेज के चारों तरफ कुर्सियां लगी थी और नीचे बैठने के लिए चटाइयां बिछी हुई थी। सब मेम्बरों ने अच्छी तरह फिर २ कर मन्दर का निरीक्षण किया और प्रसन्न चित्त के साथ सब लोग अपने आदर्शों के लिये उच्च भावनायें करते हुए अपने २ घरों को पधारे।

सामाजिक समाचार

१, आर्यसमाज बांकीपुर (गया पटना) का वार्षिकोत्सव ११ से १७ फरवरी तक होगा। पहिले ४ दिन बांकीपुर (डाक० सुल्तानपुर) और पिछले ३ दिन मीठापुर (डाक० पटना) में व्याख्यान, भजन और उपदेशादि का प्रबन्ध किया जावेगा। प्रसिद्ध व्याख्याताओं और भजनीकों के पधारने की आशा है—

मुनिश्वरप्रसाद वर्मा
मन्त्री
आर्यसमाज (बांकीपुर)

२, आर्यसमाज मुरादाबाद का निर्वाचन ६ १ २१ को इस प्रकार हुआ—

म० हरीदत्त गौतम जी प्रधान, म० भगवतीप्रसाद जी उप प्रधान, म० ईश्वरदयाल जी मुख्तार मन्त्री, म० विन्ध्यावासीप्रसाद जी उप मन्त्री—इत्यादि।

३, आर्यसमाज मुलतान छावनी का निर्वाचन इस प्रकार हुआ

म० झामीलाल जी—प्रधान, म० अर्जुनदास जी उप प्रधान, म० चेतराम जी मन्त्री, म० सोहनलाल जी—उप मन्त्री।

४, आर्यसमाज फर्रुखाबाद का वार्षिकोत्सव लाल कुंवा ११,१२,१३ और १४ को होगा। प्रसिद्ध उपदेशकों और भजनीको के पधारने की आशा है।

५, आर्यसमाज झरिया (बंगाल) का वार्षिकोत्सव २४,२५,२६ फरवरी को होगा। प्रसिद्ध उपदेशको और भजनीकों के पधारने की आशा है। श्री मन्त्री जी म० सुखलाल जी का पता पूछते हैं और प्रतिनिधि सभाओं से प्रार्थना करते हैं कि वे अच्छे २ उपदेशक भेजें क्यों कि इधर प्रचार की बहुत आवश्यकता है।

पत्रों का सार

'कवि' पत्र प्रबन्ध कर्ता सूचना देते हैं कि—'कवि' का प्रकाशक स्थान अब रियासत बरहरी (डाक० पीपी गंज) में रक्खा गया है। 'कवि' का सम्पादन भार हिन्दी के प्रसिद्ध कवि श्रीयुत "त्रिशूल" महोदय ने अपने ऊपर ले लिया है। पत्र शीघ्र ही प्रकाशित होगा।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शादीराम के लिए छपा।

कर्म का स्रोत और

उसका स्वरूप

(लेखक श्री० पं० देवराज जी सिद्धान्तालंकार)

वृद्धि के आधार भूत त्रिगुणात्मक प्रकृति के वेपन (वाइब्रेशन) का नाम कर्म है। बीजांकुरवत् कार्य कारणभाव के रूप में यह वर्तमान है। कर्म का बीज संस्कार है। कारण के गुण दोषों के आधार पर ही कार्य के गुण दोष हुआ करते हैं। वृक्ष के भिन्न २ भागों के भिन्न २ दिशाओं में होने के लिए जितनी २ शक्ति बीज में अन्तर्हित होगी उसी के अनुसार अवयवों उसी उसी गुण दोष को लेते हुए उस वृक्ष का विकास होता है। पिता की आदतें पुत्र में आया ही करती हैं। पुत्र की बाल्यावस्था की ही आदतें जवानी और बुढ़ापे में किसी भिन्न क्षेत्र में प्रकट होती हैं। खराब खोटा जैसा सुवर्ण होता है वैसा ही खराब खोटा आभूषण बनता है। सारांश यह कि कारण की अवस्था के अनुकूल ही कार्य की अवस्था हुआ करती है। इसी प्रकार कर्म की पवित्रता वा अपवित्रता-कर्म का बीज जो संस्कार है उसकी पवित्रता और अपवित्रता पर निर्भर है। विचार के द्वारा यह प्रकट है कि संस्कार की पवित्रता से कर्म की पवित्रता होती है और कर्म की पवित्रता से स्वतन्त्रता वा मोक्ष मिलती है। किसी कार्य को करने की जो विधी, तरीका है जिस तरीके से कार्य करने से कोई कार्य पूर्ण होता है उस तरीके के रूप में ही उस कर्म की पवित्रता होती है। कार्य करने के तरीके का भाव जिस प्रकार मनुष्य के चित्त में होगा उसी प्रकार से उसकी कर्म कुशलता के अनुसार उस का कर्म होगा। चित्त में कार्य करने के प्रकार का जो भाव है वही उस कर्म का संस्कार है। संस्कार का स्वरूप ही चित्त वृति का स्वरूप है। जैसा संस्कार वा चित्त वृत्ति होगी उसी के अनुसार मनुष्य का कर्म होगा। संस्कार में वा चित्त वृति में जो दोष है वही उस के कर्म में भी प्रकट होगा। संस्कार की पवित्रता और अपवित्रता के आधार पर ही कर्म की पवित्रता और अपवित्रता है। पवित्र कर्म होगा तो फल सिद्धि होगी और अपवित्र कर्म होगा तो असिद्धि। सिद्धि और असिद्धि प्राकृतिक विकास का अनुसरण करने से होती है, क्यों कि प्रत्येक वस्तु अपने विकास क्रम में जिस २ रूप को धारण कर रही हैं, करेगी वा कर सकती है वह २ अगला रूप ही पूर्व का फल है। प्राकृतिक विकास में उन्नति की ओर जाना धर्माचरण करना है और अवनति की ओर जाना अधर्माचरण करना है। जिस प्रकार धर्म के दो भेद बताए थे एक धर्म और दूसरा अधर्म इसी प्रकार कर्म के भी दो भेद समझने चाहिएं एक सुकर्म और दूसरा दुष्कर्म क्यों कि धर्म और कर्म का स्वरूप एक ही है और यही जो पहिले धर्म का दिखाया है। जिस रूप की जो अवस्था हमें इष्ट है वह अवस्था उस रूप के विकास की रेखा विशेष में गुजरने से ही हमें प्राप्त हो सकती है, और उस रेखा विशेष में गुजरना या गुजारना ही धर्माचरण होना या करना है। जिस तरीके से फल की सिद्धि होती है वह तरीका प्राकृतिक विकास के रूप में ही है, वही उन्नति पथ है, अतः वही धर्माचरण है। इस लिए यदि मनुष्य ने सुखप्राप्त करना है अपने कार्यों में सफल होना है तो उसे धर्माचरण पूर्वक कर्म करना चाहिए। धर्माचरण पूर्वक कर्म करने से वर्तमान काल में उसको फलसिद्धि ही नहीं होगी अर्थात् उसका इहलोक ही नहीं सुधरेगा प्रत्युत उसके कर्मों का जो प्रतिरूप (रिफ्लेक्शन) उसके चित्त पर पड़ेगा जिसे चित्त उस क्रम में गुजरता हुआ क्रमपूर्वक (अवश्यमेव) प्राप्त करेगा, उससे उसकी चित्त वृत्ति या संस्कार पवित्र होजावें गे अर्थात् ऐसे हो जावेंगे जिनसे विकासोन्मुख धर्म पूर्वक फल दायक सुख प्रद इष्ट को देनेवाले कर्म हों, क्यों कि जैसे संस्कार होते हैं वैसे ही कर्म होते हैं, अतः इस समय के पवित्र कर्मों से अपने पवित्र संस्कारों को उत्पन्न करता हुआ जिन से वह भविष्यत् में उत्तम कर्म कर सके अपने परलोक को भी सुधार लेगा।

जैसे जिस के इस समय संस्कार होंगे, जिन्हें प्रारब्धकर्म वा दैव कहते हैं और कई जिन्हें सञ्चित कहते हैं और होते हुए कर्म को प्रारब्ध और होनेवाले कर्म को क्रियमाण कहते हैं, जैसे वह कर्म करेगा और जैसे जो कर्म करेगा वैसे उस के संस्कार आगे बनेंगे इस प्रकार यद्यपि कर्म संस्कार चक्र वा वृत्ति संस्कार चक्र निरन्तर जारी रहता है तथापि कर्म के अपने स्वरूप के वेपन (वाइब्रेशन) आत्मक होने से और प्रवृत्ति तथा निवृत्ति वा इनकी समाप्ति को उस वेपनात्मक कर्म का एक पार्श्व कल्पनात्मक होने से इनमें कार्य करने वाली शक्ति के, दोनों पक्षों में जिन्हें क्रम से रजस् और तमस कह सकते हैं, मध्य में, सम अवस्था में सात्विक भावमें आजाने से मनुष्य अपने चित्त को इधर उधर पार्श्वों में न भटका कर सरल मार्ग में, धर्ममार्ग में, और उन्नति पथ में लगाता है वा लगा सकता है। ज्ञानी से ज्ञानी मूर्ख से मूर्ख, छोटे से छोटे और बड़े से बड़े सब प्राणी इसी प्रकार कर्म की वेपन गति में वर्तमान रहते हैं और बार २ उन्नति पथ पर आते हुए भी वे इधर होने से अर्थात् स्वयं जानबूझ कर इच्छा पूर्वक इधर उधर से सात्विक भाव में उन्नति पथ में वा धर्म मार्ग में न आने से प्रत्युत कर्म के प्राकृतिक नियम के अनुसार बलात्कार लाए जाने से फिर मार्ग भ्रष्ट होकर इधर उधर भटकते हैं और दुःख उठाते हैं। अतः यदि सुख प्राप्त करना है तो कर्म के उपर्युक्त त्रिविध भाव को बुद्धि पूर्वक धारण करके बाहर द्वार ही कर कर्म के सात्विक पथ का अनुसरण करो।

श्रद्धा

शराब-मांस के साथ असहयोग

मांस और शराब आदि मादक द्रव्यों से क्या हानि होती है—इस पर बहुत विचार हो चुका है। निस्सन्देह, धार्मिक दृष्टि के अतिरिक्त आर्थिक दृष्टि से भी यह आवश्यक है कि हम सब प्रकार के मादक द्रव्यों के साथ असहयोग की नीति का अवलम्बन करें।

इस समय देश को धन की बहुत आवश्यकता है। स्वराज्य आन्दोलन के अतिरिक्त जो रचनात्मक कार्य्य हो रहा है, वह बिना पर्याप्त आर्थिक सहायता के कभी नहीं चल सकता। हमने स्थान २ पर जातीय विद्यालय और महाविद्यालय स्थापित करने हैं। बिना इनकी स्थापना के जातीय शिक्षा का प्रचार असम्भव है। नौकरशाही के अपवित्र हाथों के छूये हुये धन को लेना हम पाप समझते हैं। तब इन के चलाने के लिए धन कहां से आवेगा? वकीलों को वकालत छोड़कर देश सेवा के कार्य में जुट जाने के लिए बाधित किया जा रहा है। कई स्थानों पर इस कार्य्य में सफलता भी हुई है पर जितनी आवश्यक है उस से अभी हम बहुत दूर हैं। अन्य कई कारणों के अतिरिक्त, इस क्षेत्र में उज्वल सफलता दिखाई न देने का एक बड़ा कारण वकीलों का आर्थिक प्रश्न भी है। जब हम उन की कमाई का एक मात्र साधन छीन रहे हैं, तब उन की और उन पर आश्रित अन्य पारिवारिक व्यक्तियों की उदर पूर्ति का समुचित प्रबन्ध करना भी हमारा ही कर्तव्य है। इस के लिए धन चाहिये। फिर देश के अशिक्षित जन समुदाय में राजनैतिक प्रचार की बहुत आवश्यकता है। स्वदेश के अतिरिक्त विदेश में भारत विषयक अज्ञान को दूर करने और प्रबल लोकमत पैदा करने के लिए भी प्रचार की आवश्यकता है। इस के लिए भी रुपया चाहिये। इस प्रकार देश की अन्य भी कई आवश्यकतायें हैं जो हम पर इस बात के लिए जोर डाल रही हैं कि हम अपने व्यय के खाते को संकुचित करें। जाति का यह अधिकार है कि वह अपने प्रत्येक सभ्य को सब प्रकार से अपव्यय रोकने के लिए बाधित करे।

आबकारी विभाग से सरकार को कई करोड़ों की आमदनी है। यह आमदनी कहां से होती है? इस कुव्यसन के कीचड़ में फंसे हुए हमारे ही देश भाइयों का रुपया सरकारी खजाने को भरता है। यदि हम वह पैसा उधर न लगा कर देशहित के कामों में देदेवें तो, हिसाब लगाया गया है, २०,२५ करोड़ रुपया आसानी से बच सकता है। यदि इस राशि का आधा हिस्सा भी स्वराज्य कोष में जमा कर दिया जावे तो कई विद्यालय, महाविद्यालय सुगमता से चल सकते हैं।

यह तो हुई शराब की बात। इस के साथ निकटतम सम्बन्ध रखने वाला यदि कोई कुव्यसन है तो वह मांस है। पशु वध बढ़ जाने से भारत में घी दूध का कष्ट कितना बढ़ रहा है यह प्रत्येक व्यक्ति के दैनिक अनुभव की बात है। मांसाहार से जो शारीरिक और मानसिक हानियां होती हैं वे भी, इस सम्बन्ध में, नहीं भुलाई जा सकतीं। परन्तु इस फिजूल खर्च को दूर करने के लिए—

शराब मांस के अतिरिक्त हमें

अन्य भी कुव्यसन—

छोड़ने होंगे। चुरट और हुक्के के रूप में जो तम्बाकू पिया जाता है वह भी मादक है। हमारा लाखों रुपया इसी के द्वारा विदेश में प्रति वर्ष खिंचा चला जाता है। आर्थिक दृष्टि के अतिरिक्त स्वास्थ्य की दृष्टि से भी इसका दिमाग और छाती पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। परन्तु इस का प्रचार बहुत अधिक पाया जाता है। बड़े २ बूढ़ों से लेकर कच्ची उम्र के नौजवान तक इस का प्रयोग करते हुये पाये गये हैं। यद्यपि आर्य्यसमाज ने इसे रोकने की ओर ध्यान दिया है पर वह बहुत कम है। इसका प्रधान कारण यह है कि आर्य्यसमाजों के प्रधान मंत्री और उपदेशक तक इस व्यसन से अछूते नहीं हैं। इस अव्यवस्था को शीघ्र ही दूर करना चाहिये।

केवल इतना ही नहीं—:

इन कुव्यसनों के अतिरिक्त हमारे अन्य जो अनावश्यक खर्च हैं, वे भी, कुछ समय के लिए बन्द करते हुये, उन को बचत स्वराज्य कोष में देदेनी चाहिये। अर्थात्, भोजन, वस्त्र, लिखने पढ़ने का सामान, पुस्तक, मेज कुर्सी इत्यादि फर्नीचर, तेल साबुन; घोड़ा गाड़ी का बहुत अधिक रेलवे सफ़र, होटल, चाय बिस्कुट और पान आदि, व्याख्यानों और आनन्द यात्रा (प्लेज़रपार्टी ट्रिप्स)— इत्यादि जो आमोद प्रमोद के साधन हैं, वे सब बन्द कर देने होंगे। फिर, विवाह, उत्सव, निमन्त्रण, सहभोज, श्राद्ध, संस्कार, पूजा-पाठ आदि पर उचित मात्रा से अधिक जो धन खर्च किया जाता है, उस का भी अन्त करना होगा। इन सब से जो लाभ होता है या जो इन की उपयोगिता है, उस पर हम कुछ भी विवाद नहीं करना चाहते। हम तो यह कहते हैं कि हमें स्वराज्य प्राप्त करना है। स्वराज्य-प्राप्ति में धन की बहुत अधिक आवश्यकता है। यह एक प्रकार का महायुद्ध है। जिस प्रकार शत्रु को पराजित करने और देश की स्वतन्त्रता को स्थिर रखने के लिए प्रत्येक व्यक्ति अपने प्रियतमों और निकटतमों का, निःसंकोच, बलिदान कर देता है, इसी प्रकार हमें भी इस स्वराज्य यज्ञ में अपने आमोद-प्रमोदों और भोग-विलासों की आहुति देने में तनिक भी हिचकिचाहट नहीं करनी चाहिये। जिस प्रकार दुर्भिक्ष के समय व्यक्ति एक पैसे, नहीं २ पाई को भी बचाने की कोशिश करता है, उसी प्रकार हमें भी, इस समय, यही करते हुये अपनी सारी बचत स्वराज्य फण्ड में देनी होगी।

इस प्रकार देश की आर्थिक समस्या को हम बहुत कुछ दूर कर लेंगे। परन्तु इस से हम आत्म संयम का एक अमूल्य पाठ सीख लेंगे। इस आत्म संयम का देश के नैतिक चरित्र पर क्या प्रभाव पड़ेगा—इस पर हम अगले अङ्क में विचार करेंगे।

असहकार और गुरुकुल शिक्षा प्रणाली

(लेखक पं० नन्दकिशोर जी विद्यालंकार प्रोफेसर गुजरात महाविद्यालय)
अहमदाबाद गुजरात)

लेखक गुरुकुल का स्नातक है और असहयोग सिद्धान्त पर आश्रित एक नेशनल कालिज में कार्य करता है इस लिए जैसा कि स्वाभाविक है कई आर्य्य भाई उससे प्रश्न करते हैं कि १—"क्या आप की सम्मति में गुरुकुल का सम्बन्ध नेशनल विद्यापीठ से कर देना चाहिए? २-अथवा आप की सम्मति में जब नेशनल स्कूल तथा नेशनल कालिज स्थान स्थान पर खुल गए या खुल रहे हैं। तब गुरुकुल की अब भी आवश्यकता है? अर्थात् इस समय गुरुकुल खोलने की ओर जाति का ध्यान होना चाहिए अथवा नेशनल स्कूल की ओर अथवा आपकी सम्मति में हम इस समय लड़कों को गुरुकुल में दाखिल करें या नेशनल स्कूल में?"। जैसा मैंने कहा यह दोनों प्रश्न स्वाभाविक प्रतीत होते हैं किन्तु इनका उत्तर भी स्पष्ट है। यह प्रश्न तब सम्भव होसकते हैं जबकि गुरुकुलों की स्थापना का उद्देश केवल वर्तमान गवर्न्मैण्ट से पृथक् रह कर शिक्षा देना तथा अपनी प्राचीनता के प्रति श्रद्धा उत्पन्न करना मात्र हो। क्यों कि असहयोग की लहर में जो नेशनल स्कूल या कालिज खुल रहे हैं उन में केवल यही दो विशेषताएं हैं और उनके स्थापित करने के यही दो प्रधान उद्देश्य हैं।

हमारा कहना है कि गुरुकुलों का उद्देश्य इस से कहीं बड़ा, उदार तथा विस्तृत है। गुरुकुल के ऊपर जो एक बड़ा दोष राजनैतिक कार्यकर्त्ता आरोपण किया करते हैं और जिस दोष से यह कभी २ इस संस्था को जन साधारण की आंखों में गिराना चाहते हैं वह यह है कि 'गुरुकुल एक साम्प्रदायिक (Sectarian) संस्था है। इस लिए इस विषय पर दो चार शब्दों में कुछ विचार करता हूं।

वर्तमान राजनैतिक कार्यकर्त्ताओं में से कुछ एक आर्य समाज को एक साम्प्रदायिक अतएव दूषित बतलाते हैं—क्यों कि वे लोग धार्मिक आन्दोलन से परे रहना चाहते हैं—किन्तु आर्यसमाज के सुधार उन लोगों ने एक २ करके स्वीकार किये हैं यह निर्विवाद है। हम ऐसे महानुभावों से पूछना चाहते हैं कि जिस समाज का इतना उदार सिद्धान्त हो 'सत्य के ग्रहण करने असत्य के त्यागने में सदा उद्यत रहना चाहिए' उस समाज को एक संकीर्ण सम्प्रदाय कहना कहां तक उचित है? इस लिए गुरुकुल पर साम्प्रदायिकता का दोष आरोपण करना निरर्थक है। 'हम सब धर्मों की समानता से शिक्षा देते हैं—और न किसी का खण्डन और न मण्डन करते हैं, यह कहना केवल आडम्बर मात्र है। इस की आड़ में धार्मिक शिक्षा सर्वथा विलुप्त होजाती है और विद्यार्थियों में सत्य को ग्रहण करने के लिए कभी प्रीति का भाव उत्पन्न नहीं होसकता। और वस्तुतः वर्त्तमान में जिस नेशनल संस्था में लेखक कार्य करता है वहां धर्म शिक्षा का सर्वथा अभाव है—भविष्यत में, कहा जाता है कि प्रबन्ध होगा। किन्तु क्या प्रबन्ध होगा इसको जानने के लिए वह अभी उत्सुक है। दो संस्थाओं का उसे अनुभव है जो कि इसी सिद्धान्त पर आश्रित हैं और उन दोनों में उसने धार्मिक शिक्षा का सर्वथा अभाव ही देखा, क्यों कि कहावत है—A man Cannot please every body.' एक आदमी सबको प्रसन्न नहीं कर सकता। इस लिए गुरुकुल पर इस प्रकार का कोई दोष नहीं दिया जा सकता।

अब देखना है कि गुरुकुल की विशेषता क्या है जो कि नेशनल स्कूलों या कालिजों में नहीं हो सकती। वह मुख्य विशेषता—गुरु शिष्य सहवास—(residential System)—है जिससे कि विद्यार्थी के दैनिक सदाचार के जीवन की उत्तरदायिता संस्था या आचार्य ले सकते हैं। इस प्रकार के सदाचार की उन्नति नेशनल कालिजों में नहीं हो सकती क्यों कि उन में प्रत्येक विद्यार्थी का छात्रालय (boardinghouse) में रहना आवश्यक नहीं—दूसरे नेशनल स्कूल शहरों के अन्दर या अत्यन्त समीप हैं। गुरुकुल में एक बालक उस समय प्रवेश करता है जब कि उसका आत्मा नवीन संस्कार लेने के लिये तय्यार होता है। लेखक का अपने थोड़े बहुत अनुभव के आधार पर विश्वास है, सम्भव है उसका यह विश्वास अशुद्ध हो, कि धर्म सम्बन्धी क्रियात्मक शिक्षा यदि सम्भव है तो 'गुरुकुल शिक्षाप्रणाली' द्वारा ही सम्भव है। किन्तु इस लेख से लेखक का तात्पर्य या आशय यह न समझा जावे कि वह नेशनल कालिजों तथा स्कूलों के महत्व को घटा रहा है। नेशनल स्कूल या कालिज गुरुकुलों के एक अंश में (compliments) पूरक कहलाये जा सकते हैं। आदर्श तो गुरुकुल शिक्षा प्रणाली ही है—अर्थात् ८ वर्ष की आयु में बालक को घर से पृथक् आचार्य के चरणों में रहकर विद्याभ्यास करना चाहिये। किन्तु कौलीन दृश्यकी अवस्थाओं के कारण या आर्थिक हीनता या अन्य ऐसे ही किन्हीं कारणों से लड़कों को अपने से पृथक् करके नहीं भेजसकते और इस प्रकार से आदर्श शिक्षा प्रणाली से वञ्चित रहने के लिये बाधित हैं उनके लिये उक्त नेशनल स्कूलों या कालिजों की आवश्यकता है ही। गुरुकुलों की आवश्यकता त्रिकाल में है। वर्तमान में जब कि हम पराधीन हैं गुरुकुल चाहे ऐसे उत्तम परिणाम न दिखा सकें जैसे कि प्राचीनकाल में उन्होंने दिखाये जब कि राज्यसत्ता उनकी सहायक होती थी तो भी भविष्यत् में हमें और भी अधिक आशा है जब कि फिर शीघ्र ही भारत का भाग्यभानु उदय होगा और राज्य अपना होगा गुरुकुलों की आवश्यकता उस समय और भी अधिक बढ़ती दिखाई देगी।

यह भी एक ध्यान देने योग्य बात है कि नेशनल कालिजों और स्कूलों के साथ २ महात्मन् महात्मा गान्धी जी 'सत्याग्रहाश्रमों' की भी स्थान २ पर स्थापना कर रहे हैं—जैसे कि 'वर्धा' तथा बम्बई में अभी हाल में स्थापित हुए हैं। महात्मा जी ऐसे आश्रमों की भी आवश्यकता को पूर्ण रूपेण अनुभव करते हैं जो कि गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के ढंग पर हों। इस लिए नेशनल स्कूलों और कालिजों के स्थान २ पर खुलने से गुरुकुलों की आवश्यकता किसी प्रकार भी न्यून नहीं होजाती।

विचार-तरंग

तेरी धोखे बाज़ी !!!

संसार के रचने हारे ! आज मैं तुझे जी भर के धोखेबाज़ कहना चाहता हूं। तुझे धोखेबाज़ कह कर पुकारना आज मुझे बड़ा ही प्यारा लग रहा है। मेरे मन का प्रेमभाव प्रकट करने के लिये इस से अधिक भाव पूर्ण शब्द इस समय मुझे ढूंढे नहीं मिला। इस तेरे संसार में धोखे पर धोखे देखकर मैं बड़ा व्याकुल हुआ करता था किन्तु आज सब ठीक ही ठीक दीखता है और तुझे धोखे बाज़ कह कर आनन्द मगन हूं।

हे मेरे प्यारे धोखे बाज़ ! मेरे धोखों के रक्षक धोखेबाज़ ! परमदयालु और दुष्टों के दलन करने वाले धोखेबाज़ ! तेरे धोखों का पार इस संसार में किसी ने न पाया। बड़े २ ज्ञान का अभिमान करने वाले अन्त तक यही कहते गये कि "अभी तक हम धोखे में थे"।

(२)

इस संसार में धोखा देने वाले लोग (अपने साथी का रुपया मार कर या कोई वस्तु ठगकर) कैसे आनन्दित होते हैं। किन्तु हे धोखेबाज़ों के धोखेबाज़ ! वह से पहिले से तेरे धोखों में आगये होते हैं। तेरे सर्वत्र फैले (अदृष्ट) सूत्रों को न देख कर धोखा खा जाते हैं कि धोखा देने से मेरा क्या बिगड़ेगा। किन्तु धोखे का मन में संकल्प होते ही मनुष्य इस जाल की तरह फैले सूत्रों के किसी छोर में तत्क्षण बंध जाता है जो कि यद्यपि कुछ भी मालूम नहीं होता किन्तु समय आने पर दण्ड भूमि पर ला खड़ा करता है—इसे कोई भी नहीं रोक सकता।

हम चोरी करते, झूठ बोलते और नाना धोखे करते हुवे ऐसे निशंक फिरते हैं कि मानो कुछ भी नहीं हुवा। किन्तु एक एक बात पर जो तेरा अदृष्ट ठप्पा हम पर लगता जाता है उसे कोई भी नहीं देख सकता जिस के अनुसार तेरे दूत देख कर हमें पीछा दे आते और सब कुछ भुगा जाते हैं। बहुत विरले ही आते हैं जो कि तेरे इस धोखे में नहीं पड़ते—जो कि इन सूक्ष्म तन्तुओं को देखते हैं और किसी को धोखा नहीं दे सकते। ऐ सांसारिक जनो ! तुम्हें भी जब कोई धोखा देवे तो उस पर केवल तरस खाओ—उस परम धोखेबाज़ को याद करो जिस के धोखे में वह बिचारा आया हुवा है, क्यों कि इस संसार में जो जितना बड़ा धोखेबाज है वह दयनीय उस के धोखे में उतना ही गहरा फंसा हुवा है। उस पर तरस खाओ, बैसा ही बदला लेने में अपने आप धोखा मत खाओ।

३

तुम हर एक चीज़ के पीछे बैठे हो पर कुछ भी मालूम नहीं होता। लोग ताल ठोक २ कर तुझे आह्वान करते हैं कि यदि कोई ईश्वर है तो हमारे सामने आवे किन्तु तुम अपने अगाध मौन में चुप बैठे रहते हो—उनके जीवन और हृदय में परिपूर्ण रमे हुवे भी चूं तक नहीं करते उनके सदा 'सामने आये' हुवे भी नहीं दिखा देते कि मैं यह हूं।

तुम सब जगह सब कुछ हो, संसार के एक मात्र सार हो, किन्तु सब जगह अभाव की तरह होकर बैठे हुवे हो। हम सदा यही समझते हैं कि तुम कहीं भी कहीं पर भी नहीं हो। तुमने आंख कान वाला अपना शरीर न धारण कर हमें बड़ा धोखा दे रखा है। तुम हमारा एक एक काम चुपके२ देख रहे हो—गुप्त से गुप्त, अन्धेरी से अन्धेरी जगह पर तुम पहिले आसन लगाये बैठे हो- हमारे हृदय में घुसे हुवे हमारा मन अब जिस के विषय में जो कुछ मनन करता है सब बैठे हुवे सुन रहे हो, किन्तु हे धोखे-बाज़ ! कभी भी मालूम नहीं होता कभी आशंका तक नहीं होती। कभी स्वप्नेव बोल भी नहीं पड़ते कि "मैंने देख लिया" "मैं यहां बैठा हूं"। 'मैं अभी यहां नहीं निकला' 'अभी बिलकुल एकांत नहीं हुआ' इत्यादि

हे परमपूजयनीय धोखेबाज मनुष्य किस प्रकार तेरे दर्शन करें।

[४]

तेरे इस संसार में पापी लोग मौज उड़ा रहे हैं—धन, मान संपत्ति सभी चले आरहे हैं। दूसरी तरफ पुण्यात्मा लोग आपत्तियां झेल रहे हैं—एक के पार उतरते ही दूसरी पहाड़ की तरह आखड़ी होती है। जो लोग अन्याय से दीनों को खा रहे हैं, हे धोखेबाज़ !, तू उन्हें मन माना दे रहा है, उन्हें बल सामर्थ्य बढ़ा कर और पाप करवा रहा है; कुछ भी नहीं विचार करता कि देखने वाला संसार क्या परिणाम निकालेगा। और जो सज्जन लोग यम नियमों के कठिन मार्ग पर चलने लगते हैं, हे धोखेबाज़ ! तू न जाने कब के पुराने रजिस्टर निकाल कर उनके पुराने से पुराने हिसाब किताब चुकाने शुरू करता है, कुछ भी तरस नहीं खाता कि दुखों से घबरा कर फिर उसी प्रेयमार्ग पर चले जायेंगे। तूने संसार को यह ऐसा धोखा दे रखा है कि सब मुंह बाये खड़े हैं, कुछ समझ नहीं आता क्या करें। वह दिन जब कि पाप का घड़ा भर कर फूटेगा, वह दिन जब कि क्षणभर में तख्ता पलटेगा और जहां उजाड़ है वहां उद्यान खड़े होंगे, वह दिन तूने भविष्य के गर्भ में ऐसे छिपा कर रखे हुए है कि कोई भी नहीं देख पाता। सब चकराये फिरते हैं।

लोग देखते हैं कि अन्यायी पुरुष मुकदमें जीत रहे हैं, लड़ाइयों में जीत रहे हैं-विजय पर विजय पा रहे हैं। हे 'सत्यमेवजयते नानृतं' के आदि उपदेष्टा धोखेबाज़ ! तब यही मालूम पड़ता है कि यह गीत किसी महर्षि ने हो चलकलाया होगा जब कभी लड़ाई में उस को कोई गाय वापिस मिल गई होगी। दूसरी तरफ लोग देखते हैं कि सदाचारी पुरुष अनथक परिश्रम करते हुए भी पेट भर नहीं पाते और मुफ्त का खाते हुए विरोधी लोग उनको तरफ उंगली उठा २ कर उनके सच्चेपन को हंसते हैं। हे परम न्यायकारी धोखेबाज़ ! तब यही मालूम पड़ता है कि इस विश्व में कोई न्याय नहीं, नियम नहीं, नियम चलाने वाला नहीं।

(शेष पृ० ५ पर देखो)

ओ३म्

Registered No A. 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि ।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्नकाल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः ।
(ऋ० मं० १० सू० १५१, म० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है { ८ फाल्गुण सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३८ } ता० १८ फरवरी सन् १९२१ ई० } संख्या ४६ भाग १

हृदयोद्गार

ईश प्रार्थना

ग़ज़ल ताल कव्वाली

घन श्याम! अब तो बरसो भारत में प्रेम जल को।
करुणानिधे? दुखे दो स्वाधीनता के फल को ॥ ध्रुव ॥

*

जो दीन हो चुका है, सर्वस्व खो चुका है।
अब एकता से धोदो इस भीरुता के मल को ॥ १ ॥

*

गोरे विदेशियों, के दुर्दान्त पापियों के।
पापाचरण से पीड़ित, देखो पवित्र थल को ॥ २ ॥

*

भारत के जो दुलारे फिरते हैं मारे मारे।
गोरे मजा उड़ाते ले धाम ग्राम बल को ॥ ३ ॥

*

आतप शशीत पावस सहते कृषक हैं परवश।
पर अब धन सभी कुछ होता विदेशि दल को ॥ ४ ॥

*

दुःख दैन्य बढ़ चले हैं, जाते न जो कहे हैं।
इन शासकों के शासन में कुछ नहीं है पल को ॥ ५ ॥

हो धीर वीर भारत, दे छोड़ नाद भारत।
"ओ हरि" स्वबाहु बल से पाले स्वराज्य फल को ॥ ६ ॥

पं० गयाप्रसाद [श्रीहरि]

मौजी तानें

नदिया अमृत तो फिर जहर ही दे।
न लिया खुद में तो फिर मिटा ही दे ॥ १ ॥

× × × ×

किधर था! किधर है! किधर जायगा!!!।
अभी वक्त है फिर चला जायगा ॥ २ ॥

× × × ×

देख हंसते हमें, हो तुम हंसते।
याद रक्खो तुम्हीं पे हम हंसते ॥ ३ ॥

× × × ×

एक जाती है दूसरी आती।
क्या मुसीबत का कुछ ठिकाना है ॥ ४ ॥

× × × ×

तंग हुए दुनिया से गए दर पे खुदा के।
हाय! खुला दर तो खुदा ही न मिला ॥ ५ ॥

शान्ति सदन गुरुकुल कांगड़ी { —:०:— } आनन्द

कर्म का धर्म से सम्बन्ध

(ले० श्री पं० देवराज जी सिद्धान्तालंकार)

सम्पूर्ण उत्पत्ति स्थिति और संहार का कार्य कर्म के द्वारा हो रहा है। क्या सूक्ष्म और क्या स्थूल सम्पूर्ण जीवन छोटे से छोटा और बड़े से बड़ा, उन्नत से उन्नत और अवनत से अवनत, तृण से पृथिवी तक, जीव से ब्रह्म तक, सब कर्म का खेल है। कर्म दिव्य शक्ति है। वस्तुतः ईश्वर भी कर्म के आधीन है। यह सर्वशक्ति सम्पन्न कर्म क्या है? कैसे इसका प्रकाश होता है? उस कर्म की शक्ति पर विजय लाभ करके किस प्रकार आत्माएं स्वतन्त्रता या मोक्ष लाभ करती हैं?

वेदों ने कर्म को ब्रह्म के ही रूप में बताया है। वस्तुतः ईश्वरीय शक्ति में और कर्म में कुछ भेद नहीं है। प्रत्येक पदार्थ, एक परमाणु, से लेकर इस विश्व ब्रह्माण्ड तक जितनी भी द्वन्द्वात्मक सत्ता है वह सब कर्म के ही आधीन है अव्यक्त रूप से व्यक्त रूप लाने में कर्म ही कारण है। कर्म ही धर्म और अधर्म को, जो सत्व और तम की पहिचान हैं, व्यावहारिक बनाता है। जिन अटल, नित्य, ईश्वरीय नियमों के अनुसार कर्म गति प्रकट हो रही है, जिन से विपरीत कर्म की गति हो नहीं सकती, अर्थात् कर्म में वही होता है जो होना है, या जो ईश्वरीय नियम है जिसे पहिले धर्म और अधर्म के नाम से बता आये हैं, तो जो कुछ धर्म और अधर्म का मार्ग ईश्वरीय सत्ता में वर्तमान है वही कर्म का भी मार्ग है। इस प्रकार धर्म और अधर्म से कर्म कुछ भिन्न नहीं है प्रत्युत एक ही ईश्वरीय सत्ता के अव्यक्त रूप का नाम धर्म अधर्म है और व्यक्त रूप का नाम कर्म है। यह ठीक है कि जो कुछ अव्यक्त में होता है वही व्यक्त में आता है अतः धर्माधर्म के अनुसार जैसा होना है वैसा ही होता है, परन्तु जो कुछ होना है वह तभी मालूम होता है जब कि वह होता है या कर्म रूप में आ जाता है, अतः धर्माधर्म का स्वरूप कर्म से निश्चय होता है अन्यथा नहीं। कोई मनुष्य धार्मिक है या अधार्मिक यह उसके कर्म से प्रकट होता है, क्योंकि धर्माधर्म के अनुसार कर्म के भी दो भेद हैं एक धार्मिक कर्म और दूसरे अधार्मिक कर्म, अतः यदि कोई मनुष्य धार्मिक कर्म करता है तो वह धार्मिक है, उन्नतिशील है, समृद्ध है, प्रसन्न है, दृढ़ है, भाग्यवान है और जो मनुष्य अधार्मिक कर्म करता है वह अधार्मिक है, अवनतिशील है, दरिद्री है आलसी है, घृणा का स्थान है, अभागा है, असहाय है। जहां धर्म है वहां अवश्य स्वतन्त्रता है समृद्धि है, दरिद्रता का नाश है, प्रसन्नता है, सन्तोष है, दृढ़ता है और जहां परतन्त्रता, है दरिद्रता है, दुःख है, घृणा है, वहां अधर्म समझना चाहिए। दरिद्रता और सन्तोष इकट्ठे नहीं रह सकते। दरिद्रता का सम्बन्ध दुःख से है और समृद्धि का सम्बन्ध सुख से है। समृद्धि होते हुए यदि दुःख है तो समृद्धि नहीं है दरिद्रता है और दरिद्रता होते हुए यदि सुख है, सन्तोष है, पूर्णता है, प्रसन्नता है तो वहां दरिद्रता नहीं समझनी चाहिए, वहां समृद्धि है यही जानना चाहिए। ज्यूं २ मनुष्य समृद्ध होता जाता है त्यूं २ उस के पीछे दुःख की मात्रा भी बढ़ती जाती है परन्तु उसके मुकाबले के लिए उसके अन्दर धार्मिक बल भी बढ़ता जाता है। जो दरिद्र पुरुष है या दरिद्र हो रहा है उसके लिए मुकाबला करने को दुःख की मात्रा उतनी अधिक नहीं है, परन्तु उस में धार्मिक बल न होने के कारण थोड़े दुःख से भी वह मुकाबला नहीं कर सकता वह उसे खूब सताता है और मार डालता है। कर्म के अन्दर बल धर्म से आता है अधर्म से नहीं। कर्म करने में जितनी दृढ़ इच्छा होगी उतना ही कर्म बलवान होगा और उतना ही प्रभाव दृढ़ होगा। किसी पदार्थ की इच्छा उसकी प्रवृत्ति या कर्म से जानी जाती है जिस पदार्थ का जो विकास का मार्ग अव्यक्त सत्ता में जिस रूप से वर्तमान है उसीके अनुसार उसकी प्रवृत्ति या कर्म होता है। अतः किसी पदार्थ की इच्छा वही है जो उस पदार्थ का विकास का मार्ग अव्यक्त सत्ता में जिस रूप से है। यदि विकास का मार्ग धर्म रूप से है तो धार्मिक इच्छा के होने से धार्मिक प्रवृत्ति या धार्मिक कर्म होंगे, सुख बढ़ेगा, आनन्द मङ्गल होगा, और यदि विकास का मार्ग अधर्म रूप से है तो अधार्मिक इच्छा के होने से अधार्मिक प्रवृत्ति या अधार्मिक कर्म होंगे, कलह विद्वेष और दुःख दारिद्र्य बढ़ेगा। इस प्रकार इच्छा को भी कर्म का अव्यक्त रूप होने से धर्म और अधर्म के ही स्वरूप में समझना चाहिए पृथक् नहीं। इस प्रकार यद्यपि मनुष्य जो कुछ करता है वह अपनी इच्छा के अनुकूल करता है और उसकी, इच्छा जो कुछ होना है उसके अनुकूल धर्म रूप में या अधर्म रूप में, पहले ही नियत है; तो भी जो कुछ होना है उसका पता चूं कि उसके कर्म से ही लगता है अतः जो कुछ होना है वह हो ही जायगा यह समझ कर पुरुषार्थ नहीं त्यागना चाहिए और इस समय सत् प्रवृत्ति या सत्कर्म करते हुए आगे के लिए सत् मार्ग तय्यार करना चाहिए।

(पृ० ८ का शेष)

२० प्राचीन जैनसाहित्य में हिन्दी का स्थान।

२१ विदेशीय एक्सचेञ्ज का भारतीय व्यापार पर प्रभाव।

२२ हिन्दू काव्य

२३ प्राचीन भारतीय इतिहास सम्बन्धी खोज और उसका फल।

२४ प्राचीन भारत में [illegible]।

२५ बौद्धकाल की भाषा।

२६ भारतीय और पश्चिमीय नाटक (प्राचीन और अर्वाचीन)

२७ दार्शनिक जीववाद और डाक्टर बोस के आविष्कार।

२८ भारतवर्ष में कपड़ा बुनाने का काम और उसकी प्राचीनता।

२९ राष्ट्र लिपि।

३० हिन्दी में व्यापारिक और औद्योगिक साहित्य।

३१ भारत की प्राचीन राष्ट्र भाषाएं।

३२ हिन्दी विद्यापीठ का स्वरूप।

कृष्णबलदेव वर्मा
मन्त्री, स्वागत-समिति।

श्रद्धा

गुरुकुल और आर्यसमाज

(ले०—पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति स० मुख्याधिष्ठाता)

क्या गुरुकुल ने आर्यसमाज का कुछ नहीं बनाया?

एक अन्धा भी देख सकता है कि गुरुकुल ने आर्यसमाज की बहुत सेवा की है, आर्यसमाज ने गुरुकुल की जड़ को अपने पसीने से सींचा है, तो गुरुकुल ने भी अपनी शाखाओं से और हरे हरे पत्तों से उस पर छाया की है, फूलों से शोभा बढ़ाई है और सुगन्ध फैलाया है। फल, जो अभी पक रहे हैं, आशा दिला रहे हैं कि किसी समय गुरुकुल आर्यसमाज के जीवन का आधार हो जायगा।

गुरुकुल ने एक ऐसा केन्द्र उत्पन्न किया है, जहां जाकर हरेक विदेशी और विधर्मी वैदिक सिद्धान्तों को प्रत्यक्ष रूप से व्यवहार में आते हुए देख सकता है। मैं इसे गुरुकुल का सब से बड़ा लाभ समझता हूं। किसी सिद्धान्त के आदर्श रूप का वर्णन करते जाइये—साधारण आदमी उसे जान जायगा पर समझ नहीं सकता। समझने के लिये वह सिद्धांत स्थूल रूप से दिखाई देना चाहिये। 'प्रेम' 'प्रेम' सब पुकारते हैं पर उस के महत्त्व को समझने के लिये बुद्ध ईसा या गान्धी के जीवनों को पढ़ना पड़ता है। जब तक प्रेम सूक्ष्म रूप में रहता है, तब तक केवल बहुत विद्वानों के शुग़ल की वस्तु रहता है, परन्तु जब वह एक प्रत्यक्ष दृष्टान्त में पाया जाय तब उसे राह जाता भी देख कर समझ जाता है। 'ब्रह्मचर्य' की महिमा बहुत सुनी है, पर उसे आर्य जाति ने समझा है तो श्रद्धानन्द का जीवन देख कर। इसी प्रकार शुद्ध आहार विहार, नित्य कर्म, धार्मिक जलवायु, सादगी, आदि गुण जिनका शास्त्र इतना प्रतिपादन करते हैं, जाने जा सकते हैं, पर समझे नहीं जा सकते जब तक कि उन्हें कहीं प्रत्यक्ष रूप से न देख लिया जाय। लोग व्यापार सम्बन्धी प्रदर्शिनियां करते हैं, और उन पर लाखों रुपया व्यय करते हैं, ताकि साधारण लोग उन में अद्भुत वस्तुओं को देखें और बनाने के लिये उत्साहित हों। वेद में कहे गये कर्तव्य कर्मों की प्रयोगशाला बनाने का यही उद्देश्य है कि लोग वहां आयें, वेदोक्त धर्मों को व्यवहार में आता हुआ देखें, और स्वयं उन्हें जीवनों में ढालने के लिये उत्साहित हों। यह दावा दुरुस्त है कि गुरुकुल वेदों में प्रतिपादित कर्तव्य धर्मों की प्रयोगशाला और प्रदर्शिनी है, जहां विदेशी और विधर्मी लोग आकर वैदिक धर्म के क्रियात्मक महत्त्व को स्वीकार करने के लिये बाधित होते हैं।

गुरुकुल में वेदोक्त जिन २ कर्तव्य-धर्मों को प्रयोग में लाया जाता है, उनको परिगणना कठिन है, पर उन सन्देह शीलों के सन्तोष के लिये, जो गुरुकुल को आर्यसमाज के लिये उपयोगी नहीं समझते कुछ परिणाम परिगणना करा देना ही अच्छा है। नित्य प्रति नियम पूर्वक देव यज्ञ ब्रह्मयज्ञ आदि गुरुकुल में किये जाते हैं। बिना किसी मादक या हानिकारक वस्तु का व्यवहार किये पुष्टि कारक भोजन दिया जाता है। नियमों का बड़ा बन्धन होते हुए भी मानसिक स्वतन्त्र विकास के लिये पूरा अवसर मिलता है। ब्राह्मणों के और उन लोगों के बालकों को जो भारत के दुर्भाग्य से अछूत कहे जाते हैं इकट्ठे रहने यज्ञादि करने और भोजन में बैठने का अभ्यास होने से गुण कर्मानुसार वर्ण-व्यवस्था की तय्यारी का और गन्दे जात पात के बन्धनों के टूटने का वास्तविक यत्न किया जाता है। अभ्यागत विधर्मियों के साथ निसंकोच प्रेम पूर्वक व्यवहार द्वारा यह सूचित किया जाता है कि वैदिक धर्म प्रेममय और विशाल है। ब्रह्मचर्य को मुख्यता देकर यह दिखाया जाता है कि कलियुग में भी ब्रह्मचारी बनने का यत्न करना सम्भव है। सारांश यह कि विश्वास विवेक और सदाचार का जलवायु उत्पन्न कर के यह प्रत्यक्ष रीति से सिद्ध किया जाता है कि वैदिक धर्म एक सपना या भ्रम नहीं है एक असली धर्म है, जिसे प्रयोग में लाया जा सकता है। गुरुकुल में वैदिक धर्म का कर्तव्योजितना का व्यवहार मे लोकर प्रत्यक्ष दिखाया जाता है उतना और कहीं नहीं। क्या यह कुछ कम लाभ है? मैं जब इस दृष्टि से विचारता हूं तो आर्यसमाज के वास्तविक प्रचार का साधन गुरुकुल से बढ़ कर किसी को नहीं पाता। हम वैदिक धर्म को लोगों के सामने पेश करते हुए कहते हैं कि यह सब कठिनाइयों का हल है। हम से प्रश्न होता है इस में क्या प्रमाण है कि सदियों पुराना वैदिक धर्म इस समय प्रयोग में लाया जा सकता है। हम अंगुली उठा कर गुरुकुल की ओर दिखा देते हैं और कहते हैं कि वह देखो गंगा के किनारे वैदिक धर्म की प्रयोगशाला और प्रदर्शिनी बनी हुई है। वहां जाओ और देखो कि वैदिक धर्म प्रयोग में आकर कितना सुन्दर कितना ऊंचा और कितना मधुर है। आंख देखी बात से बढ़ कर विश्वास योग्य बात क्या हो सकती है?

गुरुकुल ने आर्यसमाज को दूसरा लाभ यह पहुंचाया है कि भारत की जागृति का अनुशासन आर्यसमाज के हाथ में दे दिया है। यह सम्भव है कि यदि आर्यसमाज ठीक समय पर इस बात का अनुभव न करे, या अनुभव कर के भी इसकी उपेक्षा करे तो वह हाथ में आये हुए अनुशासन को खो बैठेगा, परन्तु उस में गुरुकुल का दोष न होगा। देश में 'अदीनाः स्याम शरदः शतम्' 'यतेमहि स्वराज्ये' इत्यादि वैदिक प्रार्थनाओं को सार्थक करने के लिये एक अपूर्व उत्साह उत्पन्न हो गया है। उत्साह तो उत्पन्न हुआ है पर देश आश्चर्य और खेद से देखता है कि वह ज़ंजीर को तोड़ना चाहता है पर तोड़ नहीं सकता, वह अपने पांव खड़ा होना चाहता है पर खड़ा हो नहीं सकता। वह इस घटना के कारण पर विचार करता है तो इस परिणाम पर पहुंचता है कि

जब तक भारत की सन्तान को स्वतन्त्र जातीय शिक्षा न दी जायगी तब तक देश का उद्धार नहीं हो सकता। पर स्वतन्त्र शिक्षा दी कैसे जाय? क्या यह सम्भव है कि भारत के पुत्र अपनी मातृभाषा द्वारा अपने धर्म और देश के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करते हुए शिक्षित हों? क्या अंग्रेज़ी राज्य में एक स्वतन्त्र विश्वविद्यालय स्थापित करना सम्भव है? यह प्रश्न भारत के विचार शील लोगों के हृदय में उत्पन्न होते हैं तब एक आर्य्यसमाज है जो सच्चे अभिमान से खड़ा हो कर कह सकता है कि भारत में स्वाधीन शिक्षणालय खोल कर भारत पुत्रों को सच्ची भारतीय शिक्षा देना सम्भव है। आर्य्यसमाजी अपने कथन की पुष्टि में गुरुकुल की ओर निर्देश कर सकता है और कह सकता है कि इस संस्था में १६ साल से भारत माता के पुत्र मातृ भूमि की सेवा का पाठ कर रहे हैं। वह यह भी बता सकता है कि इस संस्था ने कभी सरकार से १ कौड़ी की सहायता नहीं ली यद्यपि उस के सन्मुख देश के बड़े २ शासकों ने लाखों का प्रलोभन रक्खे उसे यह कहने में भी संकोच न होगा कि इस संस्था की चट्टान पर आकर सरकार के बीसों प्रलोभनों और अत्याचारों का सिर फूट चुका है। गुरुकुल का दृष्टान्त दिखा कर आर्यसमाज देशको स्वराज्य के सच्चे मार्ग का रास्ता दिखा सकता है, और अपने अनुभव से लाभ उठा कर स्वाधीन सच्ची शिक्षा के प्रचार के लिये गुरुकुल विश्वविद्यालय का विस्तार कर के देश का भविष्य अपने हाथ में ले सकता है।

यह दो लाभ गुरुकुल की उपयोगिता को समाप्त नहीं कर देते केवल भूमिका बांधते है। आर्य्यसमाज के अन्दरूनी काम में जो लाभ हुए हैं, वह भी कुछ कम नहीं है। गुरुकुल में आर्य्यसमाज के विद्वान् बहुत साहित्य उत्पन्न कर सकते हैं। गुरुकुल में वेदों के अध्ययन किये ऐसे योग्य स्नातक हैं जो अर्थो की अपेक्षा वेद की कठिनाइयां दूर करने में अधिक समर्थ हैं। यह ठीक है कि चारों वेदों के ज्ञाता ऋषि गुरुकुल ने उत्पन्न नहीं किये पर यह न भूलना चाहिये कि या तो पूर्वजन्म के अपूर्व संस्कारों से कोई ऋषि उत्पन्न हो सकता है, और या ऋषि के चरणों में जन्म बिताकर। साधारण शिक्षणालयों में ऋषि नहीं बना करते। सदाचारी योग्य पुरुष बन सकते हैं। यह बिना किसी संकोच के कहा जा सकता है कि गुरुकुल के पास इस समय वेदों का ज्ञान रखने वाले जितने स्नातक विद्वान् है उतने अन्यत्र नहीं हैं। इस में आर्य्यसमाज के किसी सम्माननीय पण्डित का अपमान नहीं है। वे लोग हमारी पूजा के योग्य हैं—उन्हीं की कृपा है कि गुरुकुल कुछ ऐसे नवयुवकों को तय्यार करसका है जो वेदों के विषय में निरन्तर अनुशीलन और यत्न करते रहते हैं। परमात्मा की कृपा रही तो किसी दिन उस यत्न का भारी परिणाम भी जनता के दृष्टिगोचर होंगे।

गुरुकुल ने आर्य्यसमाज को योग्य प्रचारक दिये हैं। शायद कोई महाशय इस वाक्य को पढ़ कर चौंक उठेंगे। परन्तु मेरा निवेदन है कि समाचार पत्रों में किये हुए कच्चे हितैषियों के व्यंग्यों और विरोधियों के आक्षेपों को भुला कर न्याय की दृष्टि से विचार कीजिये तो आपको ज्ञात होगा कि गुरुकुल ने आर्य्यसमाज को कई योग्य प्रचारक दिये हैं। स्नातक बुद्धदेव और युधिष्ठिर पंजाबप्रतिनिधि सभा के आधीन कार्य कर रहे हैं। स्नातक सत्यव्रत और देवेश्वर सार्वदेशिक सभा की आज्ञानुसार मद्रास में वैदिक धर्म का सन्देश सुना रहे हैं। स्नातक ईश्वरदत्त ने अफ्रीका में वैदिक धर्म के प्रचार का जो अद्भुत कार्य किया है उसे कौन नहीं जानता? यह तो स्नातक केवल प्रचारक कार्य में लगे हुए हैं। इनके अतिरिक्त पं० ब्रह्मदत्त जी आदि कई स्नातक समय २ आर्य्यसमाज के प्रचार कार्य में सहायता देते रहते हैं! तुलना करना बहुत कठिन होता है, और कुछ मधुर कार्य भी नहीं है। परन्तु इतना कह देने में संकोच करने का कारण नहीं प्रतीत होता कि ऊपर कहे हुए स्नातक प्रचारकों की योग्यता या उपयोगिता अन्य किसी भी उपदेशक से कम नहीं।

यह सब लाभ हैं जो गुरुकुल ने आर्यसमाज को पहुंचाये हैं, और आगे के लिये उन लोगों के प्रतिदिन बढ़ने की ही आशा है—कम होने की नहीं। इस पर भी कई लोग जनता को यह बहकाना चाहते हैं, अथवा भूल से समझते हैं कि गुरुकुल ने आर्य्यसमाज को कोई लाभ नहीं पहुंचा ईश्वर उन्हें सुमिति दे॥

गुरुकुल कांगड़ी

को उत्सवसंबंधी सूचनायें

१. आर्यसम्मेलन--

कई समाचार पत्रों में प्रस्ताव किया गया था कि गुरुकुल के इस उत्सव पर एक आर्यसम्मेलन किया जाय जिस में आर्यसमाज की वर्तमान स्थिति पर विचार किया जाय। उस प्रस्ताव को स्वीकार कर के २३ मार्च के प्रातः काल आर्यसम्मेलन का अधिवेशन रखागया है। इस प्रस्ताव में आर्यसमाज की संस्थाओं के परस्पर सम्बन्ध को मजबूत करने के साधन पर विचार किया जायगा। जो आर्यपुरुष आर्यसमाज के भावीकार्य क्रम के सम्बन्ध में कोई विशेष प्रस्ताव रखना चाहें वह अभी से लिखछोड़ें। उत्सव के समय विषयनिर्धारिणी सभा में उन प्रश्नों पर विचार होजायगा।

राष्ट्र—शिक्षा—सम्मेलन

दूसरा बहुत आवश्यक सम्मेलन राष्ट्र शिक्षा-सम्मेलन होगा, जिस के सभापति देशभक्त पं० मोतीलाल नहरू होंगे। इस सम्मेलन में देश के बहुत से बड़े २ नेता भाग लेंगे। आर्यसमाज ने गुरुकुल बना कर राष्ट्रीय शिक्षा का बीड़ा उठाया है—वही उसके भविष्य को निश्चित कर सकता है। इस सम्मेलन में राष्ट्रीयता के भिन्न २ अंगों पर विचार होगा और यत्न होगा कि भविष्य के लिये कोई उपयोगी कर्तव्य निश्चित किये जायं।

३—गाड़ियों की कठिनाई

रेलगाड़ियों की कठिनाई की ओर फिर ध्यान खिचवाना आवश्यक है। यदि सब लोग इस भरोसे पर रहेंगे कि ठीक दिन पहुंच जाय तो बड़ा कष्ट होगा, और सम्भव है कि बहुत से लोग न आसकेंगे। उचित है कि लोग पांच सात दिन पहले ही आने की तय्यारी रखें। कुछ पहले से आजाने से बहुत आराम रहेगा।

४—उत्सव की तय्यारी

उत्सव की तय्यारी इस बार विशेष समारोह से हो रही है। क्या गुरुकुल के प्रेमी भी इस वर्ष कुछ विशेष तय्यारी के साथ आयंगे।

इन्द्र
स० मुख्याधिष्ठाता

परीक्षण का क्या हुआ ?

(लेखक श्रीयुत चक्रवर्ती)

(गतांक से आगे)

एवं बहुत समय व्यतीत नहीं हुआ जब कि एक आवाज़ यह भी उठा करती थी कि गुरुकुल से निकले विद्यार्थी क्या करेंगे ? । यह आवाज़ सुनते २ हमारे कान पक गये थे और इस बात का उत्तर देते २ मुंह थक गये थे परन्तु आज समय की लहर स्वयं इस का उत्तर दे रही है। वह उलटा जाति से पूछ रही है कि गुरुकुल के विद्यार्थी क्या नहीं कर सकते ? परन्तु जनता चुप है अर्थात् दूसरे शब्दों में "मौनमर्धस्वीकारे" के अनुसार वह दबे शब्दों में स्वीकार कर रही है कि स्वतन्त्रता के परम पावन वायु मण्डल में स्वच्छन्द विहार करता हुआ एक विद्यार्थी कोई कर्तव्य कर्म ऐसा नहीं है जिसे वह नहीं कर सकता। माना कि उसने अपने पीछे लम्बी २ डिगरियों के पुछल्ले नहीं लगाये, यह भी माना कि उसे बैठने के लिये वर्तमान कौंसिलों में कुर्सीयां नहीं मिलीं किन्तु यदि सच पूछो तो उस के हृदय में देश भक्ति और जाति प्रेम का अपार समुद्र लहरें मार रहा है। बड़ी प्रसन्नता की बात है कि जातिने आज फिरसे अपने स्वरूप को पहिचाना है और उसने समझ लिया है कि लम्बी २ डिगरियें लेलेना ही शिक्षा प्राप्ती की अन्तिमनिशानी नहीं है। शिक्षा प्राप्ती का अन्तिम उद्देश्य सच्चे अर्थों में सदाचार पूर्वक परोपकार मय जीवन व्यतीत करना ही है। गुरुकुल ने इसी उद्देश्य को रख के ही सरकारी पदवियों और राजकीय कृपाओं पर भी लात मारी। गुरुकुल के संस्थापक का प्रारम्भ से ही यह दृढ़ विश्वास था कि एक ही पुरुष ईश्वर की और धन के देवता को इकट्ठी उपासना नहीं कर सकता। या तो देश भक्त धर्म भक्त और जाति से स्नेह करने वाले युवकों को ही पैदा करलो और या लम्बी २ डिगरियों से युक्त शून्य हृदय और गुलामी की खुराक खाने वाले गुलाम मनों का ही पैदा करलो। एक ही स्थान में उपरोक्त दो बातें इकट्ठी नहीं हो सकती। शिक्षा के इस गूढ़ रहस्य को अच्छी प्रकार समझने वाले संस्थापक ने इस लिए शहर से दूर भाग कर जंगल में खाक छानना भी स्वीकार किया परन्तु बिना परिश्रम से घर बैठे २ प्राप्त गुलामी के अन्न से दासता मय-जीवन व्यतीत करवाना नहीं। समय की लहर ने अब इस बात को भली प्रकार दर्शा दिया है कि गुलामी का अन्न खाने वाले मनों की क्या अवस्था होती है।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि परिस्थिति का रुख अब बदल रहा है और जाति की आवाज़ भी उसके साथ ही साथ बदल रही है। इस परिवर्तन से हमें यह निश्चय होता है कि गुरुकुल की जड़ अब प्रतिदिन सुदृढ़ होती चली जारही गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के सिद्धान्त परीक्षण की पूर्वावस्था में से कहीं दूर निकल गए हैं। इनका इस अवस्था से दूर निकल जाना ही इस बात को सिद्ध कर रहा है कि यह परिक्षण बहुत बड़े अंश में सफल हो गया है। परन्तु इस के साथ ही साथ अब हमारे निश्चेष्ट हो बैठ रहने का भी समय नहीं रहा। ज्यों २ हमें परीक्षण में सफलता होती जाती है त्यों २ हमारा उसके प्रति उत्तर दायित्व और कर्तव्य भी बढ़ता जाता है। क्षेत्र की विस्तृति के साथ २ उसका बाह्य जीव जन्तुओं से अधिक रक्षा करना स्वाभाविक ही है। यह समय ऐसा है कि यदि तो हम इस समय क्रिया रहित होकर सुस्त बैठे रहे तब तो इस दौड़ में हम पीछे रह जायेंगे और यदि हमने कुछ भी प्रयत्न किया और समय के साथ २ अपनी दौड़ भी जारी रक्खी तब तो उन्नति ही उन्नति है। इस लिए हमारा और स्वतन्त्र शिक्षा के प्रेमियों का यह कर्तव्य होना चाहिए कि वे इसकी जड़ों को और भी दृढ़ करने में कमर कस कर लग जावें। बहुत ही विचित्र समय आने वाला है जब कि सब ओर से आंधियां चलेंगी। उस समय छोटे २ मन कमजोर वृक्षलता आदि टूट कर गिर पड़ेंगी। इस लिए उन आंधियों से भावी में रक्षा के लिए हमें गुरुकुल रूपी वृक्ष की जड़ों को सभी प्रकार से और भी सुदृढ़ करने की आवश्यकता है।

—:०:—

दो शोक जनक मृत्यु—:

१. आर्य्यसमाज के प्रसिद्ध विद्वान् मास्टर दुर्गा प्रसाद जी का; फिलेडेल्फिया, स्वर्गवास हो गया। आप सब प्रकार के सांसारिक झंझटों से अलग हो, कई वर्षों से केवल वैदिक-स्वाध्याय में ही सारा समय देते थे। इस के अतिरिक्त, आपने वैदिक धर्म पर कई उत्तम २ पुस्तकें लिखकर भी समाज की अकथनीय सेवा की है। आपकी इस असामयिक मृत्यु से समाज के कार्य्य को बहुत धक्का लगा है। आजकल वैसे ही दृढ़ कार्य्यकर्त्ताओं की कमी है, फिरउस पर आप जैसे कुछ इने गिनों का उठ जाना वस्तुतः, अत्यन्त खेद जनक है। अस्तु ! हम आप के परिवार के साथ हार्दिक सहानुभूति प्रकट करते हैं। परमात्मा, आपकी आत्मा को सद्गति दें।

२. हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि पीर मुहम्मद मूनिस का इस सप्ताह, अचानक, शरीरपात हो गया। आप बेतिया (बिहार) के रहने वाले थे। मुसलमान होकर भी आप को हिन्दी से विशेष प्रेम था। आपकी कविता पढ़ने का जिन्हें सौभाग्य प्राप्त हुआ है, वे जानते हैं कि उसमें कैसा रस और सौन्दर्य्य होता था। आपने कुछ एक खण्ड काव्यों की रचना भी की है। हम आपके परिवार के साथ हार्दिक सहानुभूति प्रकट करते हुए परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि वह आपकी आत्मा को शान्ति प्रदान करें।

—:०:—

विचार-तरंग

मेरी यात्रा

यात्री को विश्राम कहां है ?

(१)

मैं अपनी राह पर चलता २ हार [illegible]हीं गया हूं—मेरी टांगें कोई एसी थक [illegible]हीं गयी हैं। किन्तु जब मेरे प्रिय [illegible]हितकारी मुझ पर तरस खाकर बड़े क-[illegible]ला भरे शब्दों में मुझे विश्राम लेने की [illegible]लाह देते हुवे कहते हैं कि "तेरा जिस्म [illegible]बलकुल बेहाल हो चुका है और तेरे [illegible]र एक अंग से थकावट (फैटिग) के निशाना [illegible]ज़र आते हैं" तब मैं भ्रम में पड़ जाता और क्षण भर के लिये अपनी दशा [illegible]सी ही समझने लगता हूं। किन्तु स्व-[illegible]स्थ होकर जब ज़रासा भी विचारता हूं [illegible] सचमुच मुझे अपने (जिस्म) पर [illegible]ाई कष्ट नहीं आती, किन्तु मुझे तो [illegible] उनके इन करुणा भरे वाक्यों पर [illegible]दया और रहम आने लगता है। और चुपचाप अपनी राह पर चल पड़-[illegible]ता हूं।

ऐसी घबराहट में आना कभी २ अ-[illegible] को भूल जाने से ही होजाता है, पर [illegible]र विचार होते ही अपने में चलने की [illegible]नन्त शक्ति अनुभव होने लगती है [illegible]र तब मेरा उत्साह कोई भी वस्तु [illegible] नहीं कर सकती।

(२)

भाई! मैं कैसे विश्राम लूं—कहां विश्राम [illegible]! । मैं तो एक ऐसा अनवरत पथिक [illegible]जिस बिचारे को अनन्त कालों से ल-[illegible]गातार बटोही बने रहने पर भी अपनी [illegible] का अन्तिम छोर कभी भी सुझाई [illegible]हीं दिया है। फिर मैं कैसे कहीं बीच [illegible] सुस्ताने के लिये बैठ जाऊं ?। बिना [illegible]क के अन्त को पाये मुझे कैसे कल [illegible]? । मुझे तो प्रायः संदेह होजाता [illegible]कि यह विस्तृत मार्ग कभी समाप्त होगा (या नहीं), जब कि मैं नि-[illegible] ही ठिकाने पर सुख चैन से बै-[illegible]।

[illegible]बीच में आराम लेने का ध्यान आते [illegible]भी क्यों न घबड़ाने लगे जब कि या-मने देखता हूं कि मेरे चलने के लिये स-दैव ही एक न समाप्त होने वाला मार्ग पड़ा हुवा है—विशेष कर जब कि युक्ति और तर्क की दूरबीनों से भी इस सीधे मार्ग की सुदूरवर्ती रेखा कहीं भी ख़तम होती नहीं दिखायी पड़ती है।

(३)

मेरी चाल तो पहिले ही बड़ी मन्द है। मैं इस अनन्त मार्ग पर कीड़ी की तरह रेंग रहा हूं। वह तीर्थसरोवर तो जहां कि दिल की प्यास बुझेगी को: अभी न जाने कितनी कितनी दूर पड़ा है और मैं अनेक प्रकार की निर्बलताओं से युक्त बार २ फिसलता हुवा पैर उठा रहा हूं। फिर भला तुम्हारी बात मैं क्यों कर मानलूं—किस आशा में तुम्हारे साथ किसी सुन्दर वृक्ष के नीचे आराम लेने बैठजाऊं और अपनी तृषा बुझाने में और भी विलंब कर लूं ?। मैं तो पिपा-सा के मारे अधिक २ व्याकुल होता जारहा हूं, इस लिये मुझे क्षमा करो और किसी प्रकार से एक बार उस अज्ञात स्रोत के पवित्र तट पर पहुंच लेने दो जहां पर कि दिव्यतरुओं की शान्ति दायिनी सघन छाया के बीच में एक परम-पुनीत निर्मल जल धारा मुझ जैसे तप्त-हृदयों को शीतलता पहुंचाती हुई सदैव के लिये स्वच्छन्दता से बह रही है।

(४)

मेरे भाई कभी २ कहने लगते हैं, "आज तो आराम करलो—विश्राम करलो। व्रत और नियम पालन करते २ बहुत देर होगयी। अब तो यहीं पर लेटने का मज़ा लूटो—आज तो स्वादु भोजन भी भर के उड़ालो—मज़ेदार गप्पें लगालो कमनीय वस्त्रों से सज लो। तुम ने कभी मोहनभोग नहीं खाया एकबार इसे तो ठहर कर चख लो। एकबार आनन्द मौज लगालेने में क्या बिगड़ जायगा। बहुत नियम पालना भी तो ठीक नहीं है। आज [illegible] हर दिन तो ज़रूर एक बार आनन्द भोगलो—कुछ क्षणों के लिये यह सूखा रास्ता छोड़ यहां छाया में विश्राम करने आबैठो और इस रंगीली गोष्ठी का मज़ा लूटो"। परन्तु जब अपने ठिकाने पर पहुंचने की याद आ-जाती है ये मीठी २ बातें भली नहीं लगती—इन में कोई रस नहीं आता। तब मैं अपने प्यारे भाइयों को कुछ उत्तर न दे धीरे धीरे आगे पग धरता जाता हूं।

(५)

तुम मुझे बेशक रूखा कहलो, बेसुरा कहलो, 'ठूंठ' पुकारलो। पर मैं क्या करूं ?। मैं इस वास्तविक चिन्ता को किसी प्रकार टाल नहीं सकता। फिर मैं किस विधि से अपने को भ्रम में डाललूं। यह सब कुछ कैसे भूल जाऊं ?। क्या समझ कर राह छोड़दूं और किसी रम-णीयच्छाया में निश्चिन्त होकर सो रहूं ?।

मैं तो ऐसा बेसुरा ही अच्छा हूं। मैं जानता हूं कि तुम्हारे इस बेसुरे सुर में सुर मिला ने से निः संदेह मेरा कुछ नहीं बनेगा। मुझे तुम नीरस ही बने रहने दो। तुम्हारे एसे सूखे रसीलेपन में मुझे स्वाद नहीं आयगा। मैं तो अपने इसी राह पर जैसे तैसे गिरता पड़ता हुवा भी चलता ही चलूंगा।

(६)

त्योहार व ख़ुशी का अवसर बड़ी सजधज और महान् समारोह के साथ आता है। सब और बड़ी चहल पहल है—शानदार चमक दमक है। वह आनन्द उत्साह का दिन आ पहुंचा है जिसकी घने दिनों से तय्यारी और प्रतीक्षा हो रही थी। सब तरफ़ आनन्द प्रमोद का सामान और सब सजी हुई वस्तुयें यही कहती हुई दिखाई देती हैं 'आओ आज आनन्द मौज में लगजाओ, सब इन्द्रियों को इस में खुला छोड़दो। और सब कुछ भूलजाओ, बस आनन्द"।

पर हा! आज तो यह काम और भी कठिन है। आज हम इसी तरह व्यर्थ समय कैसे गवां सकेंगे ?। आज के अपने पूज्य नायक का व उच्चसिद्धान्तों का (जिस संबन्ध में कि यह दिन हम मना-ने लगे हैं) याद आकर क्या हमें एसे काम करते हुवे बड़ा संकोच और भय न उत्पन्न होगा ?। वह हमारा दिवंगत पुरुषा अपनी संतति की यह अवस्था देख रहा होगा। तब तो यह दिन इस प्रकार समय क्षीण और शिथिल होने की जगह और भी संभल कर चलने का बन जाता है।

यदि यह विजयादशमी का उत्सव दिन है तो हमारे प्रभुरविजेता मर्यादा-पुरुषोत्तम का गंभीर और दीप्यमान यात्रावृत्तान्त स्मरण आ आकर हमें उस दिन के कृत्रिम 'हाहा हूहू' में सम्मिलित होने से बार २ रोकता है-उस प्रतापी दिव्य जीवन का क्रियात्मक उपदेश अन्दर कहीं से सुनाई देदेकर अपनी जघन्य दशा के लिये हृदय में पुनः २ एक सच्ची व्याकुलता का अनुभव होता, है। तब उस दिन का खराब अट्ट सट्ट भोजन मुख से किसी प्रकार 'स्वादु' व 'उत्सव भोजन' नहीं स्वीकार होता, उस दिन का व्यर्थ समय खोना व्यर्थ समय खोना ही प्रतीत होता है, उसे 'आवश्यक कर्तव्यता' का चोला पहिना कर अपने को धोखा नहीं दिया जाता। न जाने कहां से बार २ अंकुश लगता है जो आगे चलने को प्रेरित करता है और सचमुच विश्राम लेने की जगह उसदिन मैं अन्यदिनों की अपेक्षा एक आध पग अधिक ही चल लेता हूं।

७

हे भुवनपति! हे मेरे प्रभु! तुम बड़े दीनवत्सल हो। तुमने अपनी इस प्रजा की इस तीर्थ यात्रा के लिये बड़ा उत्तम प्रबन्ध कर रखा है। लोग मुझे यूहीं डराते हैं कि तेरा रथ थोथा है, और यह टूट कर थोड़ी देर में यहीं ढेर हो जावेगा। परन्तु, हे करुणासागर, मुझे तो खबर मिलचुकी है कि जब कभी यह रथ चलता २ भग्न होकर गिर जायगा, तब मैं कोई निस्साधन नहीं रहजाऊंगा, अपने को उस समय असहाय नहीं पाऊंगा, किन्तु इस ब्रह्माण्डकला के संचालक तेरे! अदृश्य हाथ तत्क्षण ही मुझे एक नवीन तथा उत्तम रथ से समन्वित करदेंगे और इसी प्रकार मुझे रथ पर रथ मिलते चले जांयगें जब तक मैं अपनी यात्रा समाप्त कर अपने तीर्थ पर न पहुंच जाऊंगा। फिर मुझे चिन्ता करने की क्या जरूरत है? मैं क्यों यात्रा छोड़ इस रथ की फिकर में लगजाऊं? कहीं ठहर कर इसे व्यर्थ सजाना या इस पर तीमार करना शुरु करदूं? यह तो यात्रा करने के लिये दिये हुये तुम्हारे ही रथ हैं। इनका तुम जो चाहो सो करो, तुम ही इन मालिक और प्रेरक हो। तुम ही इनके संकुद हो।

(८)

मेरे स्नेही संबन्धियो! तुम नाहक ही मेरे पल्ले में पूरी पकवान बांध रहे हो। यह आशा मुझे बेफायदा ही ढोना पड़ेगा। जरा देखो! स्वामी में अविश्वास मत करो, जिसने निःसंदेह मेरे ही लिये मेरी यात्रा पथ के दोनों ओर सर्वत्र फलों से लदे हुये वृक्ष पहिले से ही स्वयं लगा रखे हैं। यह मान लिया कि आप मुझ से बड़ा स्नेह करते हैं किन्तु क्या इसही के बदले में आप मुझे रेशमी कपड़ों में लपेटे डालते हैं और यत्नों और बंधनों (टाई) से मुझे जकड़ देते हैं?

यह तो आपने मेरे हाथों और पैरों में गहने फंसादिये हैं। क्या आप को विदित नहीं कि ये मुझे बोझल बनादेंगे और मेरे राह चलने में बहुत ही बाधक होंगे?

प्रिय बन्धुओ! मैंने जिस राह पर जाना है वहां के लोग तो मेरे इस स्वांग को देख मुझ पर हंसी ही करेंगे, मेरी प्रशंसा नहीं करेंगे। इस आरोप से मेरे रूप में कोई सौन्दर्य नहीं आयेगा। कृपया, इन चीजों को मुझ पर मढ़ कर मेरी शकल मत छिपाइये; मुझे अपने ही स्वरूप में रहने दीजये। मैंने जिस तीर्थ पर पहुंचना है उसको पवित्र वेदी पर तो इन अमेध्य वस्तुओं को किसी प्रकार भी नहीं लेजाया जा सकता है। अतः मुझे खाली हाथ ही वहां जाने की आज्ञा दो, विश्वशासकप्रभु के प्रबन्ध का अपमान मत करो। बिना आवरण ही मुझे स्वतन्त्रता से यात्रा करने दो, और निज स्वरूप में ही अपने अभीष्ट तीर्थ पर पहुंचने दो।

(९)

मैंने निश्चय कर लिया है कि मैं अब राह में चलता २ पक्षिओं के मधुर संगीत को सुनने के लिये कहीं नहीं ठहरूंगा। सुनूंगा पर इनके लिये ठहरूंगा नहीं। मैं रास्ते के मनोहर दृश्यों को यद्यपि बड़े ही आनन्द से देखूंगा, किन्तु इनके सौन्दर्य पर मुग्ध होकर कहीं पर खड़ा ही नहीं रहजाऊंगा। मैं फूलों की प्रिय सुगन्ध के लिये सदैव ही अपनी नाक खुली रखूंगा, किन्तु उन सौरभमय फूलों को अपने लिये तोड़ लाने को कभी भी सड़क से नीचे कदम नहीं रखूंगा।

मैं इन दूर फैले हुये मैदानों की हरियाली देख बहुत ही प्रमुदित होजाऊंगा, किन्तु किसी सौन्दर्य का पीछा करने के लिये इनकी पगडंडियों के कांटों में भटकने का कभी नहीं ललचूंगा।

मैंने निश्चय कर लिया है कि यदि कोई मेरा परिचित स्नेही राह में मिलेगा और मुझे कुछ प्रेमालाप करने के लिये ठहरने को कहेगा, तो मैं यह निवेदन करके कि 'मुझे घर पहुंचने में अबेर होरही है' छोड़ कर आगे चल दूंगा।

हे मेरे प्रिय जनो (जिन्हों ने मुझे अपने प्रेम बन्धन से बांध लिया है), तुम मुझे आगे चलाते चलो या कम से कम मेरे साथ रेंगते चलो, नहीं तो मेरे चलने में जरासी भी बाधा पड़ने पर मैं इस प्यारे बन्धन को, तुम्हारा कुछ भी ध्यान न करके, बेरहमी से तोड़ डालूंगा और अकेला ही आगे सरकने लगूंगा। मेरा बन्धु व सखा वही है जो कि मुझे आगे चलाने में सहायक है।

१०

भाइओ! जीवन पथ के यात्री को चैन कहां है?। बिना अपने असल घर पहुंचे हम भटके हुये बालकों को शान्ति कैसे मिले?। आओ दिन रात, उठते बैठते, चलते फिरते सोते जागते हर समय कमर कसे रहें, हर समय जागते रहें, आगे बढ़ने को सदा सावधान रहें। यहां विश्राम और शान्ति ढूंढना व्यर्थ है। पथिक को मार्ग में मजा और आनन्द कहां है?। आआओ, बहुत देर हो चुकी, अब इन खिलौनों से खेलना छोड़दें और अपने घर की तलाश में अनवरत, अनथक परिश्रम करते हुये आगे ही चलते चलें, जब तक कि हम अपने घर की पावनी ज्योतिर्मयी दिव्य भूमि पर न पहुंचजाय, जहां अनन्त तेज, अगाध शान्ति, अखण्ड वैभव और असीम आनन्द हमारा स्वागत करने के लिये अनादि काल से हमारी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

●

श्रमण

आर्य्य सामाजिक जगत्

मद्रास में प्रचार का कार्य्य

बेंगलौर में ईसाईयों से आर्यसमाज का वाद विवाद

(निज सम्वाददाता द्वारा)

दक्षिण भारत में ईसाईयों का बहुत ज़ोर है। पंजाब और यू० पी० के आर्य इस के प्रभाव का अनुभव नहीं कर सके। यहां के एक २ शहर में चार २ पांच २ चर्चों की तरफ से काम हो रहा है। कितने ही मिशनरी एक २ शहर में प्रचार कर रहे हैं। कितने स्कूल कालिज तथा अन्य दीन बालकों की संस्थायें इन के हाथ में हैं। साथ ही चिकित्सा के कार्य्य द्वारा भी ईसाईयों को बहुत सफलता हो रही है। बेंगलोर शहर के दृष्टान्त को ही लीजिए।

यहां वेस्लियन चर्च, लन्दन मिशन अमेरिकन मिशन और कैथोलिक्स का जुदा काम जारी है। इन के यहां कई हस्पताल तथा स्कूल हैं और छावनी में एक बड़ाभारी थ्यूयोलोजिकल कालेज है। अभी कुछ दिन हुए यहां के ईसाईयों की ओर से शहर में सिटी इन्स्टीट्यूट नामक संस्था के पास प्रचार का प्रबन्ध हुआ था और शोलापुर के प्रसिद्ध अमरिकन पादरी मि० स्टेनले जोन्स के ५ दिन लगातार व्याख्यान ईसाई धर्म के भिन्न २ विषयों पर होते रहे। व्याख्यानों के पश्चात प्रश्न पूछने का भी समय रक्खा गया था। अन्य सज्जन भी प्रश्न पूछते रहे किन्तु आर्यसमाज की ओर से समय २ पर जब प्रश्न पूछे जाते थे लोग विशेष ध्यान से सुनते थे। आर्यसमाज की तरफ से छाप कर ३०,३५ प्रश्नों का एक पेम्फलेट बांटा गया जिस का प्रभाव यह हुआ कि पादरी महाशय को उन के उत्तर के लिए एक अगला दिन नियत करना पड़ा और साथ ही यह सूचना भी देनी पड़ी कि उस दिन सभा खुले मैदान में न हो कर वाई एम. सी. के बन्द कमरे में व्याख्यानों के प्रथम मैदान से तीन मील दूरी पर होगी। इस बात के लिखने की कुछ आवश्यकता नहीं कि प्रश्नों के सन्तोष जनक उत्तर देने में हमारे पादरी महाशय सर्वथा असमर्थ रहे। और जनता को यह पता लग गया कि प्रश्नों के उत्तर देने में वह कितनी आना कानी करते हैं। इन प्रश्नों से लोगों को ईसाई धर्म की असलीयत का पता लग गया और पादरी महाशयों को मालूम हो गया कि अब भोले लोगों को ईसाई बना लेना सुगम बात नहीं रही : सब लोग चारों तरफ से प्रश्न पूछने लगे। इन प्रश्नों का पूरा २ व्योरा हम पाठकों की भेंट अगली बार करेंगे॥ (सेवक)

सामाजिक समाचार

१ आर्य्य गजट लाहौर के सम्पादक सूचित करते हैं कि शिवरात्रि के अवसर पर इस पत्र का "ऋषिबोधांक" निकलेगा। पहिली मार्च तक प्रकाशित हो जावेगा। उत्तम २ लेख और कवितायें होगी। श्री० स्वामी जी का सुन्दर चित्र भी होगा। एक अंक का दाम ।।।) होगा।

२ महाविद्यालय ज्वालापुर का वार्षिकोत्सव १४ १५,१६,१७ चैत्र (२२ २३,२४,२५, मार्च) को होगा। प्रसिद्ध २ व्याख्याता और उपदेशकों के पधारने की आशा है।

३ आर्य्यसमाज रोपड़ का चुनाव इस प्रकार हुआ—

हकीम शिवराम जी—प्रधान,
डा० मदनगोपाल भारद्वाजो—मन्त्री
ला० छोटूराम जी—कोषाध्यक्ष
ब्र० भीष्मदेव जी—पुस्तकाध्यक्ष

४. म० शंकरदास मोहनलाल जी आर्य्य सम्मेलन की आवश्यकता बतलाते हैं।

एकादश हिन्दी साहित्य-संमेलन कलकत्ता।

(स्वागतसमिति-कार्यालय नम्बर १८१ हरिसन रोड, कलकत्ता)

एकादश हिन्दी साहित्य-सम्मेलनका अधिवेशन तारीख २६,२७,२८ मार्च सन् १९२१ को कलकत्ते में होना निश्चित हुआ है। इसकी निबन्धमालाके लेखों के लिये निम्नलिखित विषयोंसूची की प्रस्तुत हुई है। आशा है कि हिन्दी भाषा के अनुभवी विद्वान् जिस विषय पर वह लेख लिखना चाहें लिखकर २५ फरवरी सन् १९२१ ई० तक एकादश हिन्दी साहित्य-सम्मेलनके स्वा० स० के मन्त्रीके पास नम्बर १८१ हरिसन रोड कलकत्तेके पतेपर भेज दें जिससे वह सम्मेलनके अधिवेशन से पहले ही प्रकाशित की जा सके।

द्वितीय निवेदन यह है कि सभा समाज तथा अन्य मातृभाषा के प्रेमी अपने स्थानों से प्रतिनिधि निर्वाचित कर उनकी सूची स्वागतसमिति को भेजनेकी कृपा करें।

मातृभाषा के प्रेमियों से सविनय निवेदन है कि वे सम्मेलनके अधिवेशन के अवसरपर पधारने की विशेष कृपा करके सम्मेलन के उद्देश्यों की सफलता में सहायक हो।

एकादश हिन्दी साहित्य सम्मेलन कलकत्ता की निबन्धमाला के लिये

लिखे जानेवाले लेखोंकी सूची।

१ बङ्गाल में हिन्दी की अवस्था।
२ बङ्गलाका हिन्दी से प्राचीन और नवीन सम्बन्ध।
३ बङ्गाल में हिन्दी प्रचार के उपाय।
४ हिन्दी में राजनीतिक साहित्य।
५ हिन्दीमे समालोचना की आवश्यकता
६ कविता की भाषा।
७ आधुनिक हिन्दी में अलङ्कारादिकी पुस्तकों की आवश्यकता।
८ हिन्दी उर्दू का सम्बन्ध।
९ सम्पादन कला।
१० केशव दास।
११ नानक और कबीर।
१२ दादूदयाल और चरनदास।
१३ सिक्ख धर्म्मग्रन्थों में हिन्दी।
१४ हिन्दी साहित्य सम्मेलन के उद्देश्यों
१५ हिन्दी में मौलिक उपन्यास।
१६ हिन्दी में मौलिक नाटकों की आवश्यकता।
१७ हिन्दी लेखकों तथा प्रकाशकों की सहकारिता।
१८ हिन्दी लेखकों की निरंकुशता।
१९ हिन्दी साहित्य में हास्य रस।"

(शेष पृ० २ पर देखो)

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिसर शादीराम के लिए छपा।

ओ३म्

Registered No A 875

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि ।
"हम प्रात काल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्नकाल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निमुचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः ।
(ऋ० म० ३ सू० १० सू० १५१, म० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे ! यहां (इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | १५ फाल्गुन स० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३८ } ता० २५ फरवरी सन् १९२१ ई० | संख्या ४५ भाग १

हृदयोद्गार

राष्ट्रीय गीत

जै जै ! जै ! भारत सुखदाता ॥

पावन दिव्य ज्ञान का दाता—मातु पिता गुरु बन्धु विधाता,
तूही अखिल विश्वका त्राता, हम सबका तुझसे है नाता,
जै ! जै !! जै ! भारत सुखदाता ॥

धर्म कर्म बल बुद्धि विधायी, रक्षा और न दूजा [illegible]
स्वच्छ स्वादुमयी जिसका पानी, जो है तीनो ताप नशाता
जै ! जै !! जै !! भारत सुखदाता ॥

सिन्धु हिमालय रक्षाकारी, है प्यारा सबका हितकारी ।
प्रकृतिदत्त शोभा मनहारी, तुझसा अन्य नही दिखलाता ।
जै ! जै ! जै !! भारत सुख दाता ॥

अखिल ज्ञान का सुखद पिटारा, हम सबके आंखो का तारा ।
बहती गंग जमुन जलधारा, जहां देखि हिय हर्ष समाता ॥
जै ! जै !! जै !!! भारत सुखदाता ॥

दूर देश वासी सुख पाते, नर, ना, कर के नहीं अघाते ।
दिव्य दिखाते भी ललचाते, तेरा सौरभ न किसे न लुभाता ?
जै ! जै ! जै !! भारत सुखदाता ॥

है तुझसे कंचन उजियारा, तेरे बिना न कही गुज़ारा,
तूही दुनिया का सहारा, यह हमको इतिहास बताता ॥
जै ! जै !! जै !!! भारत सुखदाता ॥

तेरे वीर धीर मनमाना, तुझमें अर्जुन भीम समाना ।
[illegible], न्याय निपुण कीरति विख्याता ॥
जै ! जै !! जै !!! भारत सुखदाता ॥

करता सबकी सदा भलाई, क्या हिन्दू मुस्लिम ईसाई ।
जैनी और पारसी भाई, सबसे अचलनेह सरसाता ॥
तेरे हित मे जिये मरेंगे, नहीं किसी से कभी डरेंगे ।
हम सब तेरे दुक्ख हरेंगे, तेरा दुख है हमें रुलाता ॥
जै जै ! जै ! भारत सुखदाता ॥

तू भारत सर्वस्व हमारा, तन मन धन सब तुझपर वारा,
हो सतत तेरी पौबारा, रहे सदाही तू सुख पाता ॥
जै ! जै !! जै !!! भारत सुखदाता ॥

प्रो० हरिश्चन्द्र देवशर्मा

— —

श्रद्धा के नियम

१ वार्षिक मूल्य भारत में ३॥), विदेश में ४॥), ६ मास का २) ।

२. ग्राहक महाशय पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखें ।

३. तीन मास से कम समय के लिए यदि पता बदलना हो तो अपने डाकखाने से ही प्रबन्ध करना चाहिए ।

४. वी. पी भेजने का नियम नहीं है ।

प्रबन्धकर्त्ता श्रद्धा
डाक० गुरुकुल कांगडी (जिला बिजनौर)

वैदिक संस्कारों की जय

(ईस्ट आफ्रीका मे)

(प्रधान आर्य समाज-जन्जीबार द्वारा प्राप्त)

प्रियपाठक गण ! आप अबतक तो समाचार पत्रों में नामकरण चूड़ा कर्म तथा उपनयन संस्कारों का ही वृत्तान्त पढ़ते रहे होंगे परंतु हमें आज आपको यह शुभ समाचार देते हुए प्रसन्नता होती है कि जिन्जीबार आर्यसमाज के मन्त्री महाशय केशवलाल जी हिम्मतपुर के गृह में रविवार २३ जनवरी १९२१ के दिन गुरुकुल कांगड़ी के सुयोग्य स्नातक प० ईश्वरदत्त जी विद्यालंकार द्वारा आर्य पुरुषों तथा अन्य इष्ट मित्रों की एक पर्याप्त उपस्थिति में गर्भाधान संस्कार विधिपूर्वक मनाया गया।

संस्कार की समाप्ति पर ठाकुर प्रवीणसिंह जी का एक मनोहर भजन हुआ जिसके पश्चात् लोगों के आग्रह करने पर हमारे माननीय ब्रह्मचारी जी ने गर्भाधान संस्कार की विशेषता पर एक अति मनोहर तथा विद्वत्ता पूर्ण व्याख्यान दिया जो कि पाठकों के लाभ के लिए हम संक्षेप से नीचे देते हैं।

"पूज्यमाताओ ! बहिनो ! और भद्र पुरुषो ! एक समय ऐसा था जब कि भारत वर्ष में ब्राह्मणों से लेकर शूद्रतक षोडश संस्कारों के न केवल अधिकारी ही गिने जाते थे प्रत्युत वह उन्हें विधि पूर्वक किया भी करते थे। आज भी हम भारतीय आर्य जाति की पहिचान [illegible] प्राचीन वैदिक संस्कारों के बचे खुचे [illegible] द्वारा [illegible] वर्त्तमान समय में भी भारत में पाए जाते हैं कर सकते हैं।

चोटी भी [illegible] संस्कार का एक [illegible] है आज भारतवर्ष में ब्राह्मण से [illegible] यज्ञोपवीत [illegible] है। ब्रह्मचारी, गृहस्थी [illegible], तथा वानप्रस्थ, [illegible] की स्त्रियों में केश [illegible] की प्रथा पाई जाती हैं [illegible] दूसरा चिह्न [illegible] करण [illegible]

यज्ञोपवीत का होना उपनयन वा वेदारम्भ की यादगार है। अग्नि में विवाह न करना, फिरकर फेरेलेना वा प्रतिज्ञा करना विवाह संस्कार की स्मृति कराता है।

गुजरात और महाराष्ट्र के भंगी चमार आदि अछूत हिन्दुओं तक में भी सीमन्तोन्नयन संस्कार पाया जाता है। जिस को वह श्रीमान संस्कार कहते हैं इसी प्रकार पंजाब में पुंसवन "छोटी रीतें करना" और सीमन्तोन्नयन का "बड़ी रीतें करना" बोलते हैं। अपने मुर्दों को जलाना अन्त्येष्टि संस्कार है।

कई मुसलमान वा ईसाई भाई आज हिन्दू का यह लक्षण करते हैं कि हिन्दू वह है जिसके सिर पर चोटी वा केश हों अथवा जो अपने मुर्दों का जलावे।

यह बातें सिद्ध कर रही हैं कि अभी तक प्राचीन वैदिक संस्कारों को भारतसन्तान किसी न किसी रूप में कुछ हद तक कर रही है यद्यपि वह उनके वास्तविक स्वरूप और प्रयोजन से अनभिज्ञ है।

जब मुसलमान शासक भारत में अपनी सभ्यता लाए तो उसके साथ ही साथ वह कितनी ही ऐसी कुरीतिएं लेआए जोकि नकेवल उन्हीं के लिए हानिकारक थीं बल्कि वह समस्त आर्य जाति की अवनति का कारण बनीं।

इनकी सभ्यता में गर्भाधान आदि के नियमों का वर्णन करना फोहश अर्थात् अश्लील गिना जाता था। इसका परिणाम यह हुआ कि भारत वर्ष में विवाह और गर्भाधान सम्बन्धी नियमों को दर्शानेवाली पुस्तकें विद्वानों की ओर से लिखी जानी बन्द हो गईं बल्कि इनका नाम लेने में भी लोग शरम खाने लगे।

महर्षि दयानन्द का हम जितना धन्यवाद करसकें थोड़ा है जिसने शरम लज्जा और अश्लीलता के झूठे ढकोसलों को उठाकर घूंघट की कुरीति का खण्डन करते हुए संस्कारविधि जैसा अमूल्य ग्रन्थ रचा और अतिप्राचीन गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि पर्यन्त १६ वैदिक संस्कारों का वास्तविक स्वरूप लोगों के सामने रखा और ऋषिसन्तान में उनका फिर से प्रचार कर दिया कर दिया।

अब आर्यपुरुष जिनको ऋषि के वचन में पूर्ण श्रद्धा थी उन्हों ने महर्षि के बताए हुए संस्कारों को सन्तान की मानसिक आत्मिक और शारीरिक उन्नति का एक मात्र आधार समझा और उन्हें कुछ हद तक अपनाया।

किन्तु बिरादरी के झगड़ों को बंजीर बड़ी जबरदस्त थी। लोकलाज का पाश भी स्वार्थी पुरुषों ने चारों ओर फैलारखा था जिनके चंगुल से आर्यपुरुष भी अपना पल्ला न छुड़ासके। छुड़ाने का कभी २ यत्न भी होता था परन्तु आत्मिक बल का दिवाला निकल चुका था। निदान एक तदबीर समझ में आहीगई। संस्कार आरम्भ तो करदिए परन्तु उनकी जब गिनती करने लगे तो वही 'बिस की !! मुर्गी" वाला मसला याद आ गया और संस्कारों का नाम लेते हुए गर्भाधान पुंसवन सीमन्तोन्नयन और जात कर्म इन संस्कारों को तो मन में ही जपलिया परन्तु नाम करण से लेकर आगे गिनती ऐसी ऊंची ध्वनि से होने लगी कि सुनने वालों के भी कान फटने लगे।

नाम करण से तो फिर सब संस्कार ऐसी धूमधाम से मनाए जाने लगे कि मानो एन्टवर्प का किला ही फतह कर लिया हो।

भद्रपुरुषो ! अब ईश्वर की कृपा से ईस्ट आफ्रीका में कोई २ भाई जात कर्म भी करने लगे हैं तथा सीमन्तोन्नयन और पुंसवन के आरम्भ करदेने की भी आशा दिलाई जारही है परन्तु—गर्भाधान के लिए अब तक सब यही कहते थे कि "अजी महाराज ! यह तो बड़ा कठिन है इसे तो गुरुकुल के स्नातक ही [illegible] गृहस्थ में आवेंगे तब करेंगे" परन्तु हम बेचारों को यह क्या [illegible] था कि गुरुकुल के स्नातक यह [illegible] [illegible] से शुरू करवायेंगे।

[illegible]

श्रद्धा

गुरुकुल का काया पलट

उचित परिवर्तनो का प्रभाव

गुरुकुलकी प्रबन्धकारिणी, आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब की अन्तरंग सभाने गुरुकुल कांगड़ी के सम्बन्ध मे निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकार किया है—

(१) आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब ने गुरुकुल की स्थापना धर्म प्रचार के लिये, मानसिक और आत्मिक शक्तियों से युक्त वेदों के विद्वान् तैयार करने के लिये, जो वेदों की सच्चाइयों को फैलाने वाले हों, और प्राचीन वर्णाश्रम व्यवस्था के पुनरुद्धार के लिये की है।

इस के पीछे संस्था में विस्तार हुआ और शिक्षा सम्बन्धी आवश्यकता के बढ़ने से अनेक परिवर्तन किये गये।

शिक्षा सम्बन्धी क्षमता को बढ़ाने के लिये यह आवश्यक प्रतीत होता है कि गुरुकुल को ऐसे विश्वविद्यालय के रूप में परिणत किया जावे जिस के साथ मिलते जुलते विषयों के भिन्न २ महाविद्यालय सम्बन्ध हों।

इस लिये निश्चित हुआ कि गुरुकुल को वर्तमान महाविद्यालय एक ऐसे वेद महाविद्यालय के रूप में परिणत किया जावे, जिस का मुख्य उद्देश्य वेदों के विद्वान् और प्रचारक बनाना है। उस महाविद्यालय पर सब तरह का स्वत्व और उत्तरदायित्व आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का रहेगा।

एक "विद्या सभा" नाम की एक नई सभा बनाई जावे, जो अन्य महाविद्यालयों को चलावे, और विश्वविद्यालय के समस्त कार्यों का प्रबन्ध करे। जब तक यह सभा ही कार्यों में बनाई जावे, तब तक आर्य प्रतिनिधि सभा ही विश्वविद्यालय के कार्यों का प्रबन्ध करें।

(६) निम्न लिखित सज्जनों की एक उप सभा उपर्युक्त प्रस्तावों के अनुसार इसके नियम, उपनियम, पाठ विधि आदि पर विचार करने के लिये बनाई जावे। यह उप सभा एक मास के अन्दर २ अपनी रिपोर्ट अन्तरङ्ग सभा के सामने पेश करे (१) प्रधान राम कृष्ण जी (२) विश्वम्भर नाथ जी मन्त्री (३) प्रो० रामदेव जी (४) महात्मा कृष्ण जी, (५) प्रो० शिवदयाल जी (६) प० इन्द्र जी।

(३) जब तक पूरी स्कीम बने, तब तक गुरुकुल के अधिकारियों को अधिकार दिया जावे कि वह एक ऐसी प्रवेशिका परीक्षा के नियम बनाए कि जिसमें सफलता पाकर वर्तमान अन्य शिक्षालयों के विद्यार्थी गुरुकुल में प्रविष्ट हो सकें। नियम आदि बनकर स्वीकृत हो जाने पर अन्तरङ्ग सभा बहुत शीघ्र निश्चय की सार्वजनिक घोषणा देदेगी॥

इस प्रस्ताव में गुरुकुल के सम्बन्ध में निम्नलिखित बाते निश्चित की गई हैं—

(१) गुरुकुल को एक विश्वविद्यालय का रूप दे दिया जाय।

(२) उस का प्रबन्ध एक आर्यविद्या सभा करेगी, जो दो वर्ष के अन्दर २ बनादी जायगी।

(३) जब तक वह विद्या सभा न बनेगी तब तक आर्य प्रतिनिधि सभा ही विश्वविद्यालय को चलायगी।

(४) उस विश्वविद्यालय के साथ भिन्न २ कालिज सम्बद्ध होंगे उन में एक वेद विद्यालय पृथक् होगा—जो उसी विश्वविद्यालय से सम्बन्ध होगा, परन्तु उसका आर्थिक स्वामित्व प्रतिनिधि सभा अपने पास रखेगी। शेष सब कालिज विद्या सभा के सुपुर्द कर दिये जायगे।

(५) बाहिर के विश्वविद्यालयों के विद्यार्थी भी गुरुकुल की प्रवेशिका परीक्षा देकर वर्तमान गुरुकुल महाविद्यालय मे प्रविष्ट हो सकेंगे।

यह परिवर्तन देखने में सामान्य प्रतीत होते है, परन्तु वस्तुत इन से गुरुकुल का रूप ही बदल जायगा। इस से परिणाम उत्पन्न होंगे। [illegible] कि गुरुकुल [illegible] उपयोगी हो सकेगा, और दूसरा यह कि विश्वविद्यालय के जुदा होने से वैदिक अनुशीलन और आर्य सिद्धान्त की ओर विशेष ध्यान दिया जा सकेगा। इस से दोनो प्रकार की सम्मतिया रखने वाले लोगो का उद्देश्य सिद्ध हो जायगा। गुरुकुल के मौलिक दोनों उद्देश्य भिन्न २ प्रबन्ध में परन्तु एक ही विद्या सभा के निरीक्षण में पूर्ण होते जायंगे। यह जान कर आर्य जनता को और भी सन्तोष होगी कि अन्तरंग सभा का यह भी विचार ज्ञात हुआ है कि प्रस्तावित विश्वविद्यालय का केन्द्र कांगड़ी में ही रहेगा।

इस प्रस्ताव को स्वीकार करने में अन्तरंग सभा ने बड़ी बुद्धिमत्ता से कार्य लिया है। इस प्रस्ताव ने एक और भी विवाद को शान्त कर दिया है। प्रायः उद्देश्य के सम्बन्ध में विवाद उठा करता था। सभा का प्रस्ताव इस विषय में कहता है—

"आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने गुरुकुल की स्थापना धर्म के प्रचार के लिये मानसिक और आत्मिक शक्तियो से युक्त वेदों के ऐसे विद्वान् तैय्यार करने के लिये जो वेदों की सचाईयों के फैलाने वाले हो और प्राचीन वर्णाश्रम व्यवस्था के पुनरुद्धार के लिये की है।" इस घोषणा मे गुरुकुल के उद्देश्य समूह रूप में आगये है (१) वर्ण व्यवस्था का उद्धार (२) आश्रम व्यवस्था का उद्धार (३) वेदो के विद्वान् उत्पन्न करना (४) और उपदेशक तय्यार करना यह चार गुरुकुल के उद्देश्य थे। हर्ष की बात है कि बीच में अनेक परिवर्तनो के होते हुए भी गुरुकुल भी इन चार उद्देश्यो से विचलित नहीं हुआ।

अब [illegible] प्रस्तुत किया है, आशा है कि गुरुकुल कांगड़ी के उत्सव के समय उस पर आर्यप्रतिनिधि सभा में अन्तिम विचार हो जायगा और नया विक्रमी सम्वत्सर अपने साथ गुरुकुल के [illegible] हो [illegible]

अब सम्भालने का यत्न कीजिये

भारत की अंग्रेजी सरकार के पिछले दुर्व्यवहारों के विरुद्ध प्रतिवाद करने के लिये भारतवासियों ने जो असहयोग को आन्दोलन उठाया था, वह अब तक एक विशेष अवस्था तक पहुंच गया है। वह अवस्था यह है कि देश भर में असहयोग का शब्द गूंज गया है। प्रजा के अशिक्षित से अशिक्षित भाग में भी सरकार के अन्याय के विरुद्ध सात्विक क्रोध और उसे दूर करने का दृढ़ संकल्प पाया जाता है। लोगों के हृदयों से सरकारी नौकरी का महत्व उतर गया है वह उसे स्वर्ग का द्वार मानते थे। अब प्रजा को ज्ञात हो गया है कि वह स्वर्ग का नहीं नरक का ही द्वार है। वकीलों का पहिले अबाधित राज्य था अब वकील अपनी विकालत पर शर्मिन्दा है और उसे जारी रखने के लिये बहाने ढूंढते हैं। बहुत लोग देश के लिये कष्ट सहने को उद्यत हैं जो सहने से घबराते हैं, वह भी मानते है कि यह उनकी निर्बलता है। असहयोग की तह में जो धार्मिक सिद्धान्त है वह इतना उच्च है कि उसके शत्रु भी यह नहीं कह सकते कि असहयोग बुरा है।

सारांश यह कि असहयोग का सामान्य भारत पर उत्तम ही प्रभाव हुआ है।

इस सामान्य प्रभाव के अतिरिक्त जो विशेष परिणाम हैं वह यह है। लोगों का ध्यान सरकारी कचहरियों से हट कर पचायतों की ओर गया है। लोगों ने सरकारी स्कूलों और कालिजों की शिक्षा की निकृष्टता समझ कर राष्ट्रीय शिक्षा की ओर ध्यान दिया है। बहुत से लोग जो अब तक सरकारी नौकरी को ही अपना एकमात्र लक्ष्य समझते थे, किसी स्वतन्त्र पेशे की चिन्ता में हैं। यह तो परिणाम हैं, जिन पर असहयोग के नेता उचित अभिमान कर सकते हैं। इस आन्दोलन से पूर्व पहुंचे तो सरकारी नौकरी सरकारी स्कूल और सरकारी कचहरी को माया का असली रूप समझाने वाले कम थे, अगर कुछ थे भी तो उनकी बात किसी की समझ में नहीं आती थी। लोग उन्हें बेवकूफ समझते थे, या पागल। आज हरेक वेदी पर राष्ट्रीय न्यायालय, राष्ट्रीय सेवा के गीत सुनाई देते हैं। यह असहयोग के आन्दोलन का उत्तम परिणाम है। इस से कोई भी समझदार आदमी इन्कार नहीं कर सकता।

यह सब कुछ हो गया है—इसे शत्रु भी स्वीकार करेंगे। अब मैं हुए सरकारी शिक्षणालयों के द्वेष उत्पन्न का जो उद्देश्य था वह पूरा हो चुका है अब समय आ गया है कि देश के नेता इस आन्दोलन से उत्पन्न हुए जोश को स्थिर कार्य के रूप मे परिणत करें, सरकारी अदालतों के प्रतिकूल उत्पन्न हो गई अब समय है कि उनके स्थान में पंचायतें कार्य करने लगे। सरकारी स्कूलों से विद्यार्थी निकल आये, अब उनके पढाने के लिए राष्ट्रीय शिक्षणालय बनने चाहियें। जिस भाव को असहयोग के आन्दोलन ने उत्पन्न किया है समय आ गया है कि उसे पूरा करने का यत्न किया जाय।

यह समझना ठीक नहीं है कि यह समझा देने से काम बन जायगा कि मुकद्दमें करना अच्छा नहीं या बच्चा कालिजों से जो शिक्षा होती है वह सरकारी शिक्षा से कहीं अच्छी है। यह समझाने की तो बात अच्छी है, पर व्यवहार मे इस से कुछ नहीं हो सकता, मनुष्य प्रकृति कल्पना विशुद्ध तर्कना से सन्तुष्ट नहीं हो सकती उसकी भाग किसी स्थूल वस्तु से ही पूरी हो सकती है।

केवल वर्तमान व्यवस्था को तोड़ने का यत्न तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक पीछे २ उसके के पीछे हम प्रारम्भ किए हुए परिणामों को दृढ़ न करते जाय चतुर सेनापति वही कहा सकता है जो जीते हुए देश के शासन का प्रबन्ध करके तब आगे बढ़ने का साहस करे। असहयोग ने जितना मैदान जीत लिया है, आवश्यक है कि उसे पक्का कर के तब आगे पग उठाया जाय। इस कारण हमारी देश के नेताओं से आग्रह पूर्वक प्रार्थना है कि वह अब कुछ समय राष्ट्रीय अदालतों और राष्ट्रीय विद्यालयों की दृढता और पुष्टि के लिये दें। ऐसा न हो कि आन्दोलन ही आन्दोलन करने में आगे बढ़ते हुए शिक्षणालय नाम मात्र रह जाय। यदि अब आन्दोलन को जोर देकर उस कार्य को पक्का न किया गया जो कुछ अब तक हो चुका है उसे से आगे के आन्दोलन में बहुत कठिनता होने की सम्भावना है।

गुरुकुल कांगड़ी के उत्सव के सम्बन्ध में सूचनायें

क्या कार्य हो रहा है?

गुरुकुल का उत्सव सिर पर है। अभी तक दो एक स्वामी को छोड़ कर कहीं से भी यह पता नहीं लगा कि क्या कार्य हो रहा है? लुधयाने में गुरुकुल के अनन्यप्रेमी श्री म० लब्भूराम जी लगाये हुए हैं। गुजरात के सज्जन पं० युधिष्ठिर जी और म० मथुराप्रसाद अफगीक की सहायता से खूब चन्दा एकत्र कर रहे हैं। शेष सब जगह चुप प्रतीत होती है। क्या इस प्रकार बैठे बिठाये ही गुरुकुल का उत्सव सफल हो जायगा? अब समय है कि आप पुरुष उठे और कार्य तत्पर हो।

गुरुकुल मे तय्यारी

इधर गुरुकुल में उत्सव की तय्यारी अपूर्व उत्साह से हो रही है। श्री मुख्याधिष्ठाता जी रोगी है—परन्तु उनके आत्म बल से ही सब कार्य पूरे हो रहे हैं। उत्सव के बहुत मनोरंजक होने की आशा है। निमन्त्रण पत्रों का सब ओर से उत्साह जनक ही उत्तर मिल रहा है। तैयारें आदि का प्रबन्ध लग भग पूरा हो गया है। इस बार होलियों में उत्सव होने से ऋतु के भी अनुकूल रहने की आशा है।

पुस्तकों की दूकाने

पुस्तकों के दूकानदार प्रायः ठीक उत्सव के समय आकर अच्छी दूकान के लिये आग्रह किया करते हैं। पहिले कभी प्रार्थना पत्र नहीं भेजते। इस से प्रबन्ध में बहुत कठिनाई रहती है। जिस क्रम से प्रार्थना पत्र आयगे, दुकाने उसी क्रम से दी जावगी। यह सूचना आवश्यक है ताकि पीछे से किसी को शिकायत का अवसर न रहे।

सभापति

इस वर्ष होने वाले सम्मेलनों के सभापतियों की तीन चौथाई अनुमति आ गई है। जिन विशेष महानुभावों के सभापति होने की अधिक सम्भावना है वह निम्नलिखित हैं—

(१) शिक्षा सम्मेलन—पं० मोतीलाल नेहरू।

(२) सरस्वतिसम्मेलन जगद्गुरू श्री शंकराचार्य करवीर मठ

(३) आर्यसम्मेलन डा० श्यामस्वरूप रायबरेली

इन्द्र

स० मुख्याधिष्ठाता

हमारी डाक

"गोंडा में नवयुग"

इस जातीय जागृति के नवयुग में, हमारा गोंडा भी जाग उठा। हर्ष का अवसर है कि इस नगर में भी जीवन के नये चिन्ह, नया उत्साह, नया बल, नया नये आत्म सम्मान के भाव का उदय हुआ है।

गोंडा के कहार, धोबी, भंगी इत्यादि सभी छोटी २ अशिक्षित जातियों ने अपने अपने यहां पञ्चायत प्रणाली के अनुसार यह उद्घोषणा कर दी है कि उन का कोई भाई भी शराब नहीं पियेगा। और यदि कोई व्यक्ति शराब पीते पकड़ा जायगा तो उसे न केवल जाती से बहिष्कृत करदिया जायगा अपितु कुछ न कुछ अधिक दण्ड भी दिया जायगा।"

उपरोक्त पञ्चायतों की घोषणा के अनुसार, एक बेलदार शराब पिये हुए पकड़ा गया। उस के जातीय भाइयों ने उसका काला मुख करके जूतों की माला पहिना कर सारे शहर में उसे घुमाया। और अन्य शराबियों के सन्मुख एक उदाहरण रख दिया कि जो कोई भी व्यक्ति शराब पियेगा उस की ऐसी ही दुर्दशा होगी। गोंडा के एक ब्राह्मण देवता की भी शराब पीने के कारण यही दुर्दशा की गई॥—गत १० फर्वरी तारीख को यहां शराब के ठेके का नीलाम था। प्रथम दिन तो किसी ने ठेका लेने के लिये बोली ही नहीं बोली। बल्कि कहार भाइयों ने उसदिन "महात्मा गान्धी की जय" की ध्वनि से महादेव जी के मन्दिर पर लौट कर, अपने भाइयों को शराब के बहिष्कार के उपलक्ष्य में मिठाई बांटी। दूसरे दिन की नीलामी, में एक कायस्थ महाशय ने शराब के ठेके की बोली बोलदी। परिणाम यह हुआ कि इस नीच कार्य से कायस्थों की सोई हुई जाती ने भी करवट बदली, कल ११ फर्वरी को एक "कायस्थ सभा" हुई जिसमें उक्त बोली बोलने वाले महाशय को छह मास के लिये "कायस्थ पञ्चायत" ने अपनी जाती से बहिष्कृत करदिया। और उन के इस पतित आचरण की सम्पूर्ण "जाती पञ्चायत" ने घोर निन्दा की। और भंगी भाई कहते हैं कि ऐसे व्यक्ति के यहां हम भी कार्य नहीं करेंगे जोकि देश और जाती के हितकारी कार्यों की अवहेलना करता है। इसी प्रकार नाई भाइयों ने भी आशा दिलाई है कि वह भी ऐसे व्यक्ति का स्पर्श नहीं करेंगे। हम अपने पाठकों की सेवा में नम्र निवेदन करते हैं कि वह यहां की इस शिक्षा पूर्ण घटना से अवश्य लाभ उठावेंगे। और अपने २ यहां भी "पञ्चायत प्रणाली" स्थापित कर के शराब का पूरा २ बहिष्कार करेंगे। और फिर भी शराब पीने वालों के लिये "जातीय बहिष्कार" का दण्ड देकर उन्हें बाधित करेंगे कि वह शराब छोड़ दें। भंगी भाई यदि शराब छोड़ने और छुड़ाने का व्रत धारण करलें तो यह काम अत्यन्त शीघ्र सफल हो जाय !!! अन्त में हम गोंडा के भंगी धोबी, बेलदार, तथा कायस्थ भाइयों को उनकी अपूर्व जागृति के लिये बधाई देते हैं॥

एक दर्शक

गोंडा के एक दस वर्ष के बालक का "आत्म सम्मान"

गत १० तारीख को यहां के गवर्नमेंट हाईस्कूल में ड्यूक ऑफ कैनाट के पधारने के उपलक्ष्य में इन्सपेक्टर साहब छोटे २ तमग़े बांटने पधारे थे। यद्यपि वह "गुलामी के तौक" स्कूल के किसी भी विद्यार्थी के छाती पर लगना पाप था तथापि इंस्पेक्टर के सामने सारे स्कूल में एक भी लड़का ऐसा न निकला जो कि उसे लेने से इन्कार करने का साहस करता। परन्तु पांचवी श्रेणी के एक "बी" विभाग पढ़ने वाले १० वर्ष के बच्चे ने—जिस का नाम "जगेश्वरदयाल" है और जो श्री बनवारी लाल जी वकील का सुपुत्र है, उसने उसे लेने से इन्कार कर दिया। इंस्पेक्टर ने पूछा कि "क्या तुम एक के स्थान में दो तमग़े चाहते हो ?" बालक ने निर्भयता से उत्तर दिया—"नहीं मुझे एक भी नहीं चाहिये" इस घटना ने बच्चे के प्रति गोंडा निवासियों के हृदय में एक सम्मान का भाव पैदा कर दिया है। १२ तरीख को स्कूल के छात्रों ने भी इस घटना को सम्मान की दृष्टि से देखा और अपनी कायरता पर शोक प्रकट किया। इन सब स्कूल के छात्रों ने उक्त वीर बालक का एक जुलूस निकाला उसे फूलों की माला पहिना कर बग्घी पर चढ़ा कर बाजों के साथ सारे शहर में उसकी वीरता की घोषणा की।

इस जुलूस में "महात्मा गान्धी की जय" "मौलाना शौकत अली मोहम्मद अली की जय" "भारत माता की जय" की गर्जना करते हुये हिन्दू मुसल्मान सभी सम्मिलित थे। चौक में लौटते समय बालक की आरती उतारी गई और कुछ पैसे भी निछावर कर के लुटाये गये। इस के बाद जुलूस बालक के घर पर गया जहां ऐसे बालकों को जन्म देने के उपलक्ष्य में बालक के माता पिता को बधाई दी गई। इस इतने बड़े जुलूस का सब का सब प्रबन्ध "कौमी फौज" के जनरल जो कि एक मुसल्मान सज्जन हैं अपने सभी स्वयं सेवकों के साथ कर रहे थे। उनको इस सेवा के लिये गोंडा निवासी उनको हृदय से धन्यवाद देते हैं। और इस वीर बालक का हृदय से स्वागत करते हैं जिसने हमारा और अपना दोनों का मस्तक सम्मान से ऊंचा किया है !!

"एक दर्शक"

(पृ० ७ वें का शेष)

७

किन्तु ज्यों २ इस प्रकार पहिले २ आत्मभूत खोल के लिये उस पर अगला अगला खोल चढ़ता जाता है, त्यों २ निर्बलता बढ़ती जाती है और हम वि नष्ट होते जाते हैं अन्दर का वासी असली

६

आत्मा ममता से बद्ध हो इन अस ख्यों खोलों मे दबता मुंदता और घुटता जाता है। उसका शब्द इन पाच बड़ी २ गुफाओं को पार करहम तक नहीं पहुंच सकता। उसकी स्वाभाविक ज्योति इन पर्दों में मन्द होती हुई समाप्त हो जाती है और हम इस अन्धेरे में अपने आपको ही गुम कर देते हैं —हम नहीं जान सकते कि हम कौन है। इस प्रकार चारों तरफ प्रतिदिन खड़ी की जाती हुई हमारी इस अहंकार की घनी २ अभी दीवारों के भीतर वह रोज घोर २ कैद में डूबता जाता है।

क्या इस कठिन कारागार से उसे मुक्त करने में कोई लज्जा की बात है। क्या हम सब अबरणों को फाड़ कर अ पने स्वरूप में आ जाना असभ्यता का काम है।

ये सब अज्ञान और निर्बलतायें दूर हो जायगी, जब हम सब आवरणमलों से नग्न अपने निमल रूप में आजायगे, जब इन सबों में से अहंकारात्मा को निकाल अपने असली आत्मा में केन्द्रित हो जायगें।

७

हम सब से नग्न कैसे हों ? । स्पष्ट है कि किसी प्रकार निचले निचले खोल को पूर्ण (पुष्ट) कर के ऊपरले की अ पेक्षा न रख उसे २ शामत छोड़ते जाय तो नि सदेह अन्त में हम सर्व-निरपेक्ष, स्वय समर्थ, स्वयं ज्योति तथा निराव रण स्वरूप निकल आयगे। तब हमें कोई आवरण ढाप नहीं सकेगा।

अब आवृत दशा में हम अवश्य कभी कभी माता को स्मरण कर रोने लगते हैं। किन्तु माता को कहा से पावे ? माता तो निज विनिन्द्र प्रेम पूर्ण आखो से अपने पुत्रों को हर समय ढूंढ रही है, किन्तु हम ही निर्बलताओं के मारे अपने आप को इन खोलों और चोलों में छिपाये फिरते हैं। माता के दर्शन कैसे हो ? जब कभी हम [illegible] माता के [illegible] सब खोलों से बाहर निकालेंगे तो तत्क्षण अपने को माता के अंक में पहुंचा पायगें, जो कि अपने लाल को पहिचान कर मुख चूम वह परम सन्तोष देगीं जिसे कहीं न पाकर हम व्याकुल भटक रहे थे।

शर्मन

---

(१) करणीय, कर्त्तव्य (२) यह एक औरत को नाम है जो कि माता की परिचारिका है (३) पीला सफेद लाल हरा विश्वाव रगों के ये सूत्र हैं (४) तत्वविज्ञ लोग इ हें ८४ लाख प्रकार का बताते है (५) मिथ्यात्मा या गौणात्मा (६ मुख्यात्मा।

(पृ० २ का शेष)

भद्रपुरुषों गर्भाधान सस्कार को भी नाम करण सस्कार की ही तरह अपने इष्ट [illegible] को निमन्त्रित करके मनाने में ऋषियो का एक विशेष तात्पर्य था और वह यह कि इस प्रकार सूचना दे-कर इस सस्कार को करने से गृहस्थी पुरुष ऋतुगामी बनना सीख सकेंगे। स माज तथा इसके उपदेशक गृहस्थियों को ऋतुगामी होने की शिक्षा उपदेशों द्वारा यदि सौ वर्षों तक भी इसी तरह देते रहें तब भी सफलता की कम आशा है परन्तु साथ ही साथ यदि उन २ प्राचीन तरीको से भी फिर से जारी कराया जावे तो वह दिन दूर नहीं जब कि लोग गृहस्थ में भी राजा जनक की तरह ब्रह्म चारी रहना सीख सकेंगे।

गर्भाधान सस्कार १६ सस्कारों में प्रथम परन्तु सबसे अधिक महत्व का है। सन्तान का बनाना तथा बिगड़ना इसीपर निर्भर है। यह फोटो का सा मसला है। फोटोग्राफर कैमरे के शीशे को जब खोलता है उस समय यदि मनुष्य हिल जावे तो फोटो बिलकुल खराब हो जावेगा। यदि वह नियम पूर्वक निश्चल होकर जैसे फोटोग्राफर कहे वैसे ही बैठेगा तो फोटो अत्युत्तम आवेगा। तात्पर्य कहने का यह कि उस समय मनुष्य की जैसी भी स्थिति होगी फोटो में उसी प्रकार का प्रतिबिम्ब आवेगा।

इस ही प्रकार यदि गर्भाधान विधि पूर्वक होगा तो सन्तान सर्वाङ्ग सम्पूर्ण होगी। उसकी मानसिक शारीरिक तथा आत्मिक शक्तिया पूर्णतया विकसित होंगी अन्यथा कम विपरीत होगा। अब यह आप के हाथ में है चाहे [illegible] [illegible] टा [illegible] [illegible] चाहे सुधारें [illegible]

सज्जनो! मुझे आज इस सस्कार को कराकर अपूर्व आनन्द प्राप्त हुआ है। मैं मन्त्री जी के इस कार्य की प्रशं सा किए-बिना नहीं रह सकता। ईश्वर आपकी आशाओं को पूर्ण करे और अन्य निर्मल आत्मा भी आपके इस दृष्टान्त से बल प्राप्त करें। शम्।"

इस शुभ अवसर पर मन्त्री जी ने ७५) का दान भिन्न २ स्थानो के लिए दिया। सस्कार का प्रभाव जनता पर अत्युत्तम पड़ा। हम आशा करते हैं कि अन्य भद्र पुरुष भी इसकाय का अनुकरण करेंगे

जौनपुर और प्रतापगढ़ के जिलो में लूट।

काशी सेवा समिति की जांच।

श्रीयुत बाबू बांके बिहारीलाल' उप मन्त्री, काशी सेवा समिति लिखते हैं—

प्राय ३ सप्ताह हुए कि जौनपुर और प्रतापगढ़ जिले के कुछ गावों में भीषण लूटका हृदय विदारक समाचार अंग्रेजी तथा हिन्दी के कई समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ था। यह लूट गत २० नवम्बर शनिवार को हुई थी। दैनिक पत्र "आज" के विशेष संवाददाता ने लिखा कि 'स्त्रियों को जमीन पर गिरा कर उनके गहने उतारे गए हैं। उनकी धोतियां तक छीन ली गई हैं, चिथड़े लपेट हुए वे घरों में पड़ी हैं। पानी के लिए लोटा भी नहीं रहा है।" इस दुःखद समाचार को पा कर तथा कुछ मित्रो के अनुरोध पर काशी सेवा स-मिति ने लुटे हुए गावों की वास्तविक अवस्था की जाच करने के लिए गत २ दिसम्बर को अपने २ स्वय सेवक उन स्थानो पर भेजा। उन्होंने ने देखा कि लुटे हुए घरों की अवस्था जो कुछ समा-चार पत्रों में छापी गई है अक्षरशः सत्य है। यद्यपि लूट होने के दो सप्ताह बाद ये लोग वहां पहुंचे थे, फिर भी उन गावों में कहीं से किसी प्रकार की स-हायता नहीं पहुंची थी। वे स्त्रियां जो गहने से लदी रहती थीं, चिथड़े लपेटे हुए किसी भांति अपनी लज्जा को ढाक रही थीं, यह दृश्य अपने नेत्रों से देख वे कौरन वापिस आए।

(शेष फिर)

ओ३म्

Registered No A 875

श्रद्धां सूर्यस्य निमुचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः॥
(ऋ० मं० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! श्रद्धा
(इसी समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक —श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | २२ फाल्गुण सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३८ } ता० ४ मार्च सन् १९२१ ई० | संख्या ४६ भाग १

हृदयोद्गार

'अभागा कृषक'

जीवन खेत में हार बोया, बोया न अमृत फल!
प्रयास तोरा विफल भाई प्रयास तोरा विफल!

के बरखा के शरद बीती?
जानें कितनी फसल बीती?
रजनि बीती तिथिया बीती

बीती रे हा! सकल।
प्रयास तोरा विफल भाई! प्रयास तोरा विफल
बोया न 'अमृत-फल'!

मधुर रूप में, हृदय बांधा!
विषय स्पर्श प्रमद साधा!
कृषक नीच! तू, कपट दाधा

बोया रे 'काम गरल'
प्रयास तोरा विफल भाई! प्रयास तोरा विफल
बोया न 'अमृत फल'

दुनियादारी सब के आगा
कुमन हाय! रे [illegible]
हृदय बीत ना कठिन [illegible]

लेके रे 'भजन हल'!!!
प्रयास तोरा विफल भाई! प्रयास तोरा विफल
बोया न 'अमृत फल'

जनम पाय के; मरण आया
मरण आय के; जनम आया

'मर' में "अमर" [illegible]
[illegible] न '[illegible]'
प्रयास तोरा विफल भाई [illegible] तोरा विफल!
बोया न अमृत फल!

विफल आय के, करुणागार
प्रभु रे गये फेंट सौंवार!
'आत्म धाम' के एकहु बार
न खोले द्वार युगल
प्रयास तोरा विफल भाई प्रयास तोरा विफल!
बोया न 'अमृत-फल'!

श्री शारदेश कैलाश"

— —

श्रद्धा के नियम

१ वार्षिक मूल्य भारत में ३॥), विदेश में ५॥, ६ मास का २)।
२ ग्राहक महाशय पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।
३. तीन मास से कम समय के लिए यदि पता बदलना हो तो अपने डाकखाने से ही प्रबन्ध करना चाहिए
४. वी. पी भेजने का नियम नहीं है।

प्रबन्धकर्त्ता श्रद्धा
डाक० गुरुकुल कांगड़ी (जिला बिजनौर

कर्म की त्रिविध गति

(ले० श्री० पण्डित देवराज जी सिद्धान्तालङ्कार)

इस ब्रह्माण्ड में तीन प्रकार की कर्म की गति है। एक प्रकृति सम्बन्धी सहज कर्म जो प्रकृति के नित्य नियत रूप से होने वाले परिणाम के अनुसार उस में स्वभाव से ही वर्तमान हैं। दूसरे ऐश कर्म ईश्वर सम्बन्धी हैं और तीसरे जैव कर्म जीव की उपाधि से सम्बन्ध रखने वाले हैं। प्राकृतिक सहज कर्म, अनन्त रचनामय ब्रह्माण्ड की धाराधरात्मक सृष्टि का आधार भूत हैं। जीव के कर्मों से कार्मिक जगत् की सृष्टि होती है, अर्थात् सुख-दुःखात्मक स्वर्ग नरक लोकों के साथ मनुष्य की भिन्न २ प्रकार की उत्तम नीच अवस्थाओं का सृष्टि होती है, और इसी कर्म के आधार पर मनुष्य के अन्दर दैवी और आसुरी वा धार्मिक और अधार्मिक शक्तियों की वृद्धि होती है।

प्राकृतिक विकास रूपी सहज कर्म ईश्वर की इच्छा के आधीन है। जैसे हम संसार में देखते हैं कि मनुष्य के प्रत्येक कर्म के आधार में उस का भाव रहता है, ऐसा कोई कर्म नहीं हो सकता जिस के आधार में उस कर्म का भाव (आइडिया) न हो, इसी प्रकार यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड जो कि प्रकृति का विकास है उसके आधार में भी उस विकास का कोई न कोई भाव (आइडिया) अवश्य होना चाहिए। जो जिसका भाव होता है उसकी इच्छा उसके भाव से विपरीत नहीं होती, अतः इस ब्रह्माण्ड का जो भाव अव्यक्त सत्ता में वर्तमान है उस अव्यक्त सत्ता की इच्छा उस से विपरीत नहीं हो सकती किन्तु वही होती है। इस प्रकार ईश्वर की इच्छा के आधीन यह प्राकृतिक विकास रूप से सहज कर्म है। जो कुछ भाव है वह इस ब्रह्माण्ड का आधार (मौडल) है। वह भाव ही इस ब्रह्माण्ड में चित्रित (नक्शा) हो जाता है। वह भाव ही इस ब्रह्माण्ड का स्थिर ज्ञान है, जिस ज्ञान के आधार पर विकास रूपी कर्म हो रहा है। ईश्वरीय सत्ता ज्ञानमयी है और उस भाव से भिन्न नहीं है, जिस के आधार पर विकास हो रहा है, किन्तु वही है। इस प्रकार ईश्वरीय सत्ता के आधार पर ही यह सब बन बिगड़ रहा है, उस ईश्वरीय सत्ता का ही इस ब्रह्माण्ड में प्रकाश हो रहा है अथवा वह ईश्वरीय सत्ता ही प्रकृति में प्रति बिम्बित हो कर अपने आप को विकास के द्वारा प्रकट कर रही है, इस प्रकार किसी प्रकार से भी कहें सबका एक ही अर्थ है।

जीव सम्बन्धी जितना भी कर्म है वह जीव के आधीन है। प्राकृतिक विकास रूपी सहज कर्म पर जीव का कुछ वश नहीं है। जिस क्रम से और जिस रूप से विकास होता है जीव उसको अन्यथा नहीं कर सकता। जीव के आधीन, प्राकृतिक कर्म से व्यवहार करने में, जो कुछ है वह यही है कि जीव उस कर्म की दिशा विशेष का अनुसरण कर सकता है। दिशा विशेष के अनुसरण में जीव स्वतन्त्र है और जिस दिशा का अनुसरण किया उस दिशा में होने वाला, प्राकृतिक परिवर्तन रूपी, फल जीव को लेना ही पड़ता है जीव उससे छूट नहीं सकता। जीव की बुद्धिमत्ता इसी में है कि जीव अपनी प्रकृति को तथा देश काल और अवस्था को विचार कर ऐसे मार्ग का अनुसरण करे जिस में उसे अन्ततः हानि वा घाटा न उठाना पड़े किन्तु सब लाभ में ही रहे। जो जीव इस प्रकार अपने आपको, ईश्वरीय प्रेरणा के अनुसार होते हुए प्राकृतिक परिवर्तन के आधीन रखता है और जिस प्रकार अपनी उन्नति समृद्धि हो सके उस प्रकार उस परिवर्तन चक्र की दिशा का अनुसरण करता है और जिस प्रकार अपनी हानि हो घाटा हो अवनति हो, कष्ट हो उस मार्ग का त्याग करता है वही जीव धर्मात्मा है पुण्यात्मा है, सुखी है यशस्वी है और जो इससे विपरीत आचरण करता है वह अधर्मात्मा है, पापबुद्धि है, दुःखी है और अभागा है। इस प्रकार जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है और फल भोगने में परतन्त्र है इस प्रचलित उक्ति का अर्थ समझना चाहिए।

प्रकृति सम्बन्धी, ईश्वर सम्बन्धी और जीव सम्बन्धी जितना भी कर्म भेद बताया है यह सब अपेक्षिक दृष्टि से कहा है वस्तुतः कर्म एक ही है। एक ही कर्म समष्टि व्यष्टि भेद से ऐश और जैव कर्म कहाता है और वही अव्यक्त कर्म और व्यक्त भेद से ऐश और सहज वा प्राकृतिक कहाता है, तथा वही कर्म स्वाभाविक और आगन्तुक भेद से प्राकृतिक और जैव कहाता है। जीव का कर्म प्रकृति के साथ सम्बद्ध होकर ही प्रकट होता है। प्रकृति के साथ बिना सम्बद्ध हुए जीव के कर्म का वही स्वरूप है जो ऐश कर्म का है जब कि ईश्वर का कर्म प्रकृति के साथ बिना सम्बद्ध हुए ज्ञान रूप में वर्तमान है। जिस प्रकार काल के सम्बन्ध से जैव कर्म के तीन भेद हैं एक वह कर्म जो फल रूप में आरहा है दूसरा जो जाने को है और तीसरा जो कालान्तर में आयेगा इसी प्रकार ऐश कर्म के भी तीन भेद हैं एक तो वह जिस के अनुसार प्राकृतिक कर्म हो रहा है दूसरा वह जिस के अनुसार प्राकृतिक परिवर्तन रूप कर्म होने वाला है और तीसरा वह जिस के अनुसार प्राकृतिक परिवर्तन कालान्तर में होगा।

इस प्रकार किसी प्रकार से भी विचारते जाएं कर्म का स्वरूप परिवर्तनात्मक वा गति रूप एक ही है और आपेक्षिक भेद से अनेक भेदों में विभक्त है।

—:o:—

ननकाना साहब का झगड़ा:—

ननकाना साहब पंजाब में सिक्खों का एक धर्म तीर्थ है। गुरुनानक का यह जन्म स्थान है। इस की गद्दी के विषय में अभी महन्तों और तीर्थ यात्रियों के बीच जो झगड़ा हो गया था उसकी ख़बर समाचार पत्रों द्वारा जनता तक पहुंच चुकी है। नये सुधारों की करतूत लैजिस्लेटिव कौन्सिल में बख्शी सोहनलाल ने इस विषय पर विवाद करने के लिए कौन्सिल को स्थगित करने का प्रस्ताव किया इस पर सभापति म० दूवासट्ट को चिन्ता लगी और उन्होंने झट से कहा कि यदि प्रस्ताव पास हो गया तो सरकार पर वोटआफ़ सेन्सर पास हो जायगा। चारों ओर से बख्शी जी के विरोध में धूआंधार स्पीचें झड़ने लगीं और प्रस्ताव लौटा लिया गया। क्यों न हो सब सभ्य ऐसे विषय पर विचार करके राजभक्ति की शपथ को झूठा थोड़ा ही कर सकते थे !! क्या कौन्सिलों का उद्देश्य इसी प्रकार सरकार की इज्जत बचाना ही है ?

श्रद्धा

जाति और देश की जिम्मेवारी

"श्रद्धा" के पिछले अङ्क में अन्तरङ्ग सभा (आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब) ने गुरुकुल के विषय में जो प्रस्ताव स्वीकार किया है वह प्रकाशित किया जा चुका है। उसके पढ़ने पर यह पता लग जावेगा कि गुरुकुल अभी तक जाति और देश को जितना लाभ पहुंचा सका था अब उस से कहीं बढ़ कर पहुंचा सकेगा। इस प्रकार के परिवर्तन से गुरुकुल का उद्देश्य विस्तृत ही हो गया है घटा नहीं। पहिले वेद और शास्त्रों के ही विद्वान् तैयार करना उद्देश्य था परन्तु अब गुरुकुल अन्य विद्याओं की शिक्षा के साथ साथ आयुर्वेद, कृषि और शिल्प की भी शिक्षा देगा। केवल इतना ही नहीं जो विद्यार्थी प्रारम्भ से ही गुरुकुल में शिक्षा पा रहे हैं उनके सिवाय अन्य विद्यार्थी भी प्रवेशिका परीक्षा में उत्तीर्ण हो कर कालिज विभाग में प्रविष्ट हो सकेंगे। अब विश्वविद्यालय कई कालिजों में विभक्त हो जायगा इन सब परिवर्तनों से कार्य कर्ताओं का ऊपर दायित्व कितना बढ़ जावेगा उसका अनुमान लगाना कुछ विशेष कठिन नहीं है। कार्य कर्ता अपने कार्यभार और जवाबदेही को तभी निबाह सकेंगे जब आर्य जनता भी उनको हर तरह सहायता करने को तैयार हो। इस समय बढ़ती हुई जिम्मेवारी सिर्फ गुरुकुल के कार्यकर्त्ताओं की ही नहीं है परन्तु आर्य्य जाति पर भी उसका बहुत भार है। ये परिवर्तन देश और जाति की वर्तमान मांग और दशा को ध्यान में रख कर किये जा रहे हैं अतः प्रत्येक देश वासी का कर्त्तव्य है कि वह अपनी जिम्मेवारी को समझता हुआ विश्वविद्यालय की तन मन और धन से सहायता करे।

गुरुकुल के वार्षिकोत्सव की सूचना पहिले ही विज्ञापनों और समाचार पत्रों द्वारा प्रत्येक सज्जन को दी जा चुकी है। प्रति वर्ष कुलवासियों को अपना सन्देश उत्सव के समीप जनता को सुनाना पड़ता है। इस वर्ष भी हम तो अपनी ओर से प्रत्येक जातीय भाई को यह सन्देश सुनाने में कुछ उठा नहीं रक्खेंगे परन्तु जब तक जाति अपनी वस्तु को आप ढूंढ न लेगी तब तक कुछ नहीं बन सकता। आज एक कोने से दूसरे कोने तक जातीय शिक्षा की पुकार सुनाई दे रही है। अब जातीय शिक्षा का महत्व समझाने और इस के नाम पर अपील करने की आवश्यकता नहीं रही। प्रत्येक बाल और वृद्ध, स्त्री और पु[illegible] की जरूरत को स्वयं अनुभव कर रहा है। इस आवश्यकता को पूरा करने वाला एक मात्र गुरुकुल ही सब से पुराना शिक्षणालय है। बार बार दोहराना व्यर्थ है कि इस का कार्यक्षेत्र अब कितना बढ़ गया है। अपनी बहुत सी शाखाओं के साथ साथ कई कालिजों को सम्भालना भी गुरुकुल का काम हो जायगा। ये सब बिना पर्याप्त धन संग्रह के हो नहीं सकता।

वर्ष के बीच में गुरुकुल के आचार्य्य और मुख्याधिष्ठाता श्री स्वामी जी २० लाख की आवश्यकता जतला चुके हैं। अभी तक देश ने उसकी ओर भी ध्यान नहीं दिया प्रतीत होता। हम अब तक केवल आर्य्यसामाजिक जगत् से अपील किया करते थे परन्तु अब गुरुकुल सारे देश का है। जो अन्य विज्ञानों की शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं उनकी मांग पूरी करने का भार गुरुकुल ने अपने ऊपर लिया है। अब आर्य्यसमाज से बाहिर के जगत का भी गुरुकुल का पालन पोषण करना कर्त्तव्य हो गया है। हमें आशा और विश्वास है कि हमारी अपील बहिरे कानों पर न पड़ेगी।

दानी और धनी सज्जनों को नाम कमाने और देश सेवा करने का इस से अच्छा अवसर मिलना दुर्लभ है। कोई भी धनी सज्जन ३० सहस्र इकट्ठा देकर अपने नाम से किसी एक विषय की चौर नियत करा सकते हैं। नये कालिजों के लिये कई नये भवन बनवाने का प्रयोजन होगा। उन भवनों को बनवाने वाले सज्जनों का नाम पत्थर पर खुदवा कर लगवा दिया जावेगा। हमें याद है कि कई धनी महाशय आयुर्वेद या शिल्प के लिये दान करने की अपनी अभिलाषाएं उत्सवादि के समय प्रकट कर चुके हैं। अब उन को अपनी अभिलाषा पूरी करके दिखाने का समय आ गया है। उन का कर्तव्य अब दिल खोल कर द्वारा सहायता करना ही है।

इस वर्ष उत्सव पर बहुत से मुसलमान सज्जनों के भी पधारने की सम्भावना है। वह भी यथा शक्ति गुरुकुल की सहायता करेंगे। यदि अपने मुसलमान भाइयों से इस काम में पीछे रह गये तो हिन्दू जाति के लिये यह बहुत लज्जा की बात होगी। अब उत्सव में बहुत देर नहीं है। उत्सव तक हम पाठकों से केवल दो बार भेंट कर सकेंगे। उन्हें स्वयं अब तय्यार हो जाना चाहिये। जब आपके बालक अशिक्षित हैं या दासता की शिक्षा पा रहे हैं तो आप का किसी प्रकार भी सुख में व्यय करना पाप है। कम से कम उत्सव तक यथा शक्ति अपने प्रत्येक व्यय में गुरुकुल को सुध न भूलिये। आप जब गुरुकुल पधारें तो सङ्कल्प कर के चलें कि इतना धन हम जाति शिक्षा के लिये व्यय करेंगे। यदि गुरुकुल जातीय मांग को पूर्ण करने में धनाभाव के कारण असमर्थ रहा तो इस का दोष जाति और देश पर ही होगा। अब दूसरों की ओर न देख कर हरेक व्यक्ति को अपनी शक्ति के अनुसार कुछ न कुछ इकट्ठा करना शुरू कर देना चाहिये। हमें आशा है कि उत्सव पर आए सज्जनों में से कोई भी इस जातीय यज्ञ में कुछ न कुछ आहुति दिये बिना नहीं लौटेंगे।

आर्यसमाज और राजनीति

तीन नई पुस्तिकायें

१. आर्यसमाज की स्थिति—लेखक, म० ज्ञानचन्द्र आर्य, दिल्ली—

२. आर्यसमाज और असहयोग लेखक, कुंअर चांदकरण शारदा।

३. असहयोग लेखक, चांदकरण शारदा।

यह हर्ष की बात है कि आर्यसमाज के विचारक आर्यसमाज की वर्त्तमान स्थिति के बारे में गम्भीरता से लेख बद्ध विचार करने के लिये उद्यत हुए हैं। जो विषय समाज के जीवन मरण से सम्बन्ध रखते हैं, जिन पर घर २ में चर्चा होती है, उनके बारे में चुप रहने से कोई लाभ नहीं हो सकता और न ही एक दूसरे पर आक्षेपों की बौछार करने से ही कोई लाभ हो सकता है। इन विषयों पर खुला परन्तु गम्भीर विचार करना समाज की स्थिति को पहिचानने के लिये आवश्यक है।

म० ज्ञानचन्द्र जी ने 'आर्यसमाज की स्थिति' नाम की पुस्तिका में जिस युक्ति शृंखला को लेकर समाज की वर्तमान स्थिति को समझाया है, मैं उसकी प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता। सब विचारों को एक दार्शनिक लड़ी में बांध कर पेश करने का यत्न किया गया है। हर्ष है कि लेखक ने केवल जोशीले वाक्यों या जज़बात भड़काने वाली उक्तियों पर कहीं भी भरोसा नहीं किया प्रत्युत सब सिद्धान्त खड़े आधार पर स्थापित किये हैं। भाषा कुछ कठिन है यदि वह सरल होती तो अच्छा होता परन्तु शायद गम्भीर विषय के लिये कभी २ दुर्गम भाषा का प्रयोग करना आवश्यक हो जाता है। एक इस गौण बात को छोड़ कर लेख प्रणाली के अन्य सब भागों में आर्यसमाज के लेखक यदि म० ज्ञानचन्द्र का अनुकरण करें तो ठीक परिणाम पर पहुंचने में सहायता मिले।

लेखक ने अपनी पुस्तिका में जो सिद्धान्त स्थापित किये हैं उन के प्रायः अधिकांश से आर्यसमाज के विचारशील सज्जन सहमत होंगे। आपने बम्बई आर्यसमाज के प्रारम्भिक नियमों की साक्षी देकर बहुत अच्छी प्रकार से यह सिद्ध किया है कि ऋषि दयानन्द धर्म और राजनीति को एक दूसरे से सर्वथा असंबन्धित नहीं समझता था। जिन आर्यपुरुषों के धर्माचार ऋषि में राजनीति पर कोई मूक हैं, जिनमें आचार्य ऋषि दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश और ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में राजनीति और देशभक्ति के गौड़ अनुच्छेद भी पाये जाते हैं, वह कभी राजनीति से सम्बन्धविच्छेद नहीं कर सकती। आर्य शब्द अपने अन्दर चारों वर्णों को समाविष्ट करता है। चारों वर्णों के प्रबन्ध के लिये वेद में तीन सभाओं का विधान है। उन तीनों में से एक राजार्यसभा है। लेखक ने इस बात को दर्शा कर उन लोगों का भली प्रकार उत्तर दे दिया है जो आर्यसमाज को केवल ब्राह्मणों की सभा बनाने का यत्न करते हैं। इस पुस्तिका के पढ़ जाने पर इस विषय पर पहुंच जाना कठिन नहीं है कि हरेक आर्यसमाजी जहां अन्य आचार सम्बन्धी मन्तव्यों पर अपनी विशेष सम्मतियां रखेगा, वहां राजनीति सम्बन्धी, उनों पर विशेष सम्मतियां रखे बिना नहीं रह सकता।

कुंअर चांद करण जी के ट्रैक्ट हमें गम्भीर सिद्धान्त विवेचन के मैदान से उतार कर क्रियात्मक मैदान में ले आते हैं। यदि म० ज्ञानचन्द्र जी की पुस्तिका में स्थापित सिद्धान्त सत्य हैं तो कुंअर जी के ट्रैक्टों में की हुई अपील भी सत्य है। यदि प्रत्येक आर्यसमाजी वेद की राजनीतिक आज्ञाओं को मानता है, यदि वह ऋषि दयानन्द के राजनीतिक उपदेशों को स्वीकार करता है तो वह अवश्य सच्चे आर्यस्वराज्य को पाने का यत्न करेगा; और एक ऐसी शक्ति से कभी सहयोग न कर सकेगा, जिसने 'वैदिक आज्ञाओं' का बार बार भंग किया हो। म० ज्ञानचन्द्र जी की पुस्तिका में बताये हुए आर्यसमाज की स्थिति मान लेने पर कुंअर चांद करण जी की अपील को सुनना ही पड़ेगा। वे एक दूसरे का आवश्यक परिणाम है। मैं तो कभी सोच भी नहीं सकता कि एक आर्यसमाजी ऋषि दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश में बताए हुए शिक्षा सम्बन्धी आदर्शों को मानता हुआ किसप्रकार सरकारी स्कूल में अपने बालक को भेज सकता है? सत्यधर्म का पालन करता हुआ किसप्रकार आजकल की अदालत की कमाई से पेट भर सकता है? कोई आर्य नवयुवक अपने आचार्य के जीवन और उपदेश को स्वीकार करता हुआ किस प्रकार देश रक्षा के लिये उपस्थित किये गये प्रोग्राम की अवहेलना कर सकता है?

आज के समालोचनीय तीसरे ट्रैक्ट 'असहयोग' में उन सब युक्तियों का संग्रह किया गया है, जो आर्य पुरुषों को असहयोग के लिए प्रेरित करने के पक्ष में दी जासकती हैं। कुंअर जी का यह ट्रैक्ट विवादात्मक है। विवाद में ऐसी युक्तियां प्रयुक्त होसकती हैं, जिन में से किसी से वे लोग भी सहमत न हों जो परिणाम को स्वीकार करते हों। मैं कुंवर जी की दी हुई सब युक्तियों से पूर्णांश में सहमत नहीं हूं तो भी इस परिणाम से पूर्णतया सहमत हूं कि एक आर्यसमाजी अपने धर्म पर पूरा विश्वास रखता हुआ भारत की वर्त्तमान सरकार से बहुत से अंशों में असहयोग करने पर बाधित होगा।

इन ट्रैक्टों को देख कर बहुत से भद्र पुरुषों को यह खतरा होगया है कि आर्यसमाज एक राजनीतिक संस्था बन गया। और सरकार उसका नाश कर देगी। उनका खतरा निर्मूल है। आर्यसमाज वेद को मानता है। वेद में अत्याचारी को दण्ड देना लिखा है, और स्वराज्य को उपादेय लिखा है। इस पर ही सरकार ने आर्यसमाज का ध्वंस क्यों नहीं कर दिया। हमारा निर्बल मन ही है जो हमारे समाज का ध्वंस कर सकता है, वैदिक सिद्धान्तों का प्रयोग में लाना कभी समाज को खतरे में नहीं डाल सकता।

शेष रही यह बात कि आर्यसमाज की वेदी पर वर्त्तमान राजनीति के सम्बन्ध में व्याख्यान हों या नहीं? इस विषय में आर्यप्रतिनिधि सभायें और सार्वदेशिक सभायें अन्तिम प्रमाण हैं। समाजों के मन्दिर तथा कोष इन सभाओं के

आश्रम में है। इन सभाओं में इस समय तक अपने आर्य क्षेत्र में राजनीति को स्थान नहीं दिया इस लिए आर्य समाज से ऐद्रो और कोथ का वर्तमान राजनीति से इस समय असहयोग ही है। आर्यसमाजी व्यक्तियों को वैदिक धर्म के सब सिद्धान्तों को प्रयोग में लाने की पूरी स्वतन्त्रता है—इस लिए कुंवर जी की अपील आर्य पुरुषों से है। जिस आर्य की छाती में आर्य हृदय है—वह शायद ही कुंवर जी की अपील की अवज्ञा कर सके।

जौनपुर और प्रतापगढ़ के जिलों में लूट

काशी सेवासमिति की जांच

(गतांक से आगे)

समिति ने काशी के उदार सज्जनों से धोती के लिए मारकीन, कम्बल, टाट, और लोटे जितने आवश्यक थे एकत्रित कर ८ स्वयं सेवकों के एक दल के साथ अपने विशेष अवसर विभाग के सहायक मुखिया और उपमंत्री के अन्तर्गत ५ दिसम्बर के रात्रि को रवाना किया।

वे लोग ६ दिसम्बर को प्रातःकाल ५ बजे जौनपुर पहुंचे। वहां से १८ मील इक्के पर और ६ मील पैदल चल कर करीब ४ बजे सन्ध्या को यह दल घटना स्थल पर पहुंचा। उस समय अहुआपुर नाम के गांव के मदरसे में ठाकुर शेषराजसिंह जौनपुर के डिप्टी कलक्टर अबलकपुरा की लूटी हुई कुछ स्त्रियों का बयान लिख रहे थे। समिति के दल ने अपने ३ स्वयं सेवक उस स्थान पर छोड़ना निश्चय किया और बाकी लोग दूसरे गांवों को चले गये। ऊपर लिखे ३ स्वयं सेवक डिप्टी साहब से आज्ञा ले कर उन स्त्रियों का बयान खुद भी लिखते जाते थे। बयान पूरा हो जाने पर डिप्टी साहब बयान के प्रति पर जिसे वे स्वयं लिखते थे, अंगूठे का निशान करा लेते थे।

यह इजलास लगभग ४ बजे रात तक चलता रहा। बिचारी स्त्रियां १ धोती पहिने अंगूठा देने के लिए जाड़े में ठिठुर रही थीं। बड़े शोक की बात यह थी कि ऐसा मालूम होता था कि डिप्टी साहब को कि जिलाधीश की ओर से इस लूट की जांच के लिए भेजे गये थे, उनको विश्वास था कि लूटी गई स्त्रियों का इरादा है पहिले से पुलिस को दिक करने का था। वे इजहार के बीच बीच में काशी सेवा समिति के स्वयं सेवकों से उन किसानों की जो लूटे गए थे, बुराइयां करते थे, और कहते थे कि ये सब के सब बदमाश हैं। एकबार एक स्वयं सेवक ने उन से यह निवेदन किया कि आप इस समय इन की आपत्ति की जांच कर रहे हैं, इस लिये आपको आवश्यक है कि अपने दिमाग से ऐसी बातें जो पहिले से इन के सम्बन्ध में बैठी हैं, निकाल दें नहीं तो निष्पक्ष भाव से आप का जांच करने और रिपोर्ट देने में कठिनाई होगी। इस पर उन्हों ने कोई यथोचित उत्तर न दे कहा कि आप इस सम्बन्ध में जमींदारों से [illegible]। दूसरे दिन इनकी जांचके साथ समितिके सदस्यों के उपस्थित रहने के सम्बन्ध में आपने कहा कि मुझे तो कुछ विशेष आपत्ति नहीं है परन्तु थानेदार साहब को जिनके हलके में इन गांवों को लूट हुई है, यह बात कुछ नागवार लगती है। पाठकवृन्द विचारें कि ऐसे डिप्टीसाहब जिन के दिमाग में लूटे गये लोगों की बाबत पहिले से ही ऐसे विचार भरे हों और जिन्हें थानेदार के नागवार होने का इतना ख्याल हो वह कहां तक स्वतन्त्र और निष्पक्ष रिपोर्ट दे सकते हैं। तमाशा तो यह है कि इस लूटकी आगे की कार्रवाई बहुत कुछ इस रिपोर्ट के ऊपर निर्भर है। खैर, डिप्टी साहब ने दूसरे दिन सुबह से ही अपना इजलास शुरू करने की सूचना इस गांवों को दी। उस दिन समितिका बाकी दल [illegible] कुछ अन्य गांवों में घूम कर लूट से सम्बन्ध में आवश्यक बातें [illegible] बजे रात्रिको इकट्ठा होगया।

लूटके सम्बन्ध में जांच करने पर पता लगा कि तारीख २० नवम्बर को [illegible] कुछ विशेष जुर्म के कारण गिरफ्तार किये गये और उसी दिन जौनपुर और परतापगढ़ जिलों के कुछ गांवों के प्रायः २५ अन्य व्यक्ति भी गिरफ्तार किये गये इन में किसान सभा के मुख्य मुख्य कार्य कर्त्ता प्रायः सभी शामिल थे। इनके आदमियों के गिरफ्तार होने पर गांव में ऐसा भय फैल गया कि अभी और बहुत से लोग पकड़े जाने वाले हैं। इस से किसान सभा से कुछ भी सम्बन्ध रखने वाले प्रायः सभी अपना अपना घर छोड़ कहीं दूर जा छिपे। अस्तु इन गिरफ्तार किये हुए लोगों के तथा भागे हुए लोगों के घरों को अकेला पा बदमाशों ने उन में मनमानी लूट की। इस लूट में परतापगढ़ जिले के, कुटिया नाम के गांव में भारी अत्याचार हुआ। और वहीं पर स्त्रियों के तन पर तक के कपड़े भी सभों ने उतरवा लिये। लूटी गई प्रायः सभी स्त्रियां लूटने वालों का नाम और पता बताती हैं। उनका कहना है कि ये लोग वहीं के जमींदार और उनके आदमी थे परन्तु वे जमींदार अभी तक स्वच्छन्द विचर रहे हैं। लूट के प्रायः २ सप्ताह बाद तो जांच शुरू हुई फिर उसके बाद जब यह सिद्ध हो लेगा कि वास्तव में लूट हुई तभी तो मुलजिमों के गिरफ्तारी की फिकर होगी। अभी तो केवल लूटे गए लोगों ने ही लूटने वालों का नाम बताया है। जब अड़ोस पड़ोस के लोग भी वही बात बतावेंगे तभी तो गिरफ्तारी हो सकती है। डिप्टी साहब का कहना है कि जब तक मुद्दई के अतिरिक्त दूसरे लोग भी वही बात न कहें तब तक मुलजिमों की गिरफ्तारी नहीं हो सकती।

गांव के लोग हम लोगों के पास आ आ कर कहा करते थे कि वे जमींदारों के आदमियों के जरिये गवाही न देने के लिये धमकाये और फुसलाये जा रहे हैं। एक बुड्ढे ने कुछ स्त्रियों के साथ जो परतापगढ़ के कलक्टर के यहां इसी लूट की रिपोर्ट के सम्बन्ध में जा रही थीं पहुंचाने जाने की हिम्मत की। [illegible] उसका बोया हुआ खेत उजाड़ दिया [illegible] उसको जान तक धमकी पहुंचाई [illegible] कि अगर तुम अब और कुछ [illegible] सहायता करने की हिम्मत करोगे [illegible] जाओगे। बिचारा लाचार हो चुप हो बैठा।

अन्य किसान जो कि पकड़े जाने के भय से छिपे फिरते थे अगर जिमींदारों के आदमी अथवा पुलिस के किसी कर्मचारी को [illegible] और कुछ धन देकर [illegible] उन बिचारों का छुटकारा नहीं [illegible]।

बाराव, स्त्रियां अपने पति, भाई, लड़के इत्यादि के गिरफ्तार हो जाने और अपनी पूंजी लुट जाने के कारण

बिलख रही थीं। छोड़े हुए खेत पानी बगैर सूख रहे थे और कहीं कहीं जानवर दाना और पानी बगैर तड़प रहे थे। और इतनेपर भी मरविशाधीशोंद्वारा सीधे, सादे किसान धमका और डरवा कर अलग लूटे जा रहे थे।

इन बातों को देख दूसरे दिन प्रातःकाल समिति के स्वयं सेवकों ने अपने को तीन दलों में बांटा। एक तो डिप्टी लेफ्टनेंटसिंह की जांच के साथ रहने के लिये दूसरा लुटे हुए गांवों में कपड़े बर्तन इत्यादि आवश्यक वस्तुएं बांटने को और तीसरा अफसरों से मिल किसानों का भय दूर कराने और बदमाशों द्वारा होते हुए अत्याचारों को रोकने की चेष्टा के लिये।

डिप्टी साहब ने तो एक जगह बैठकर अपना इजलास करना ही बन्द कर दिया। हम लोगों से उन्हों ने सुबह से ही इजलास शुरू करने को सूचना दी थी पर शायद रातों रात उन्हों ने अपना इरादा बदल दिया और सुबह जब से हमारे स्वयं सेवक उनके निवास स्थान पर पहुंचे, उनके पहिले ही वह घोड़े पर सवार हो घटना स्थल को रवाना हो गये। जब तक उनका पता लगा कर समिति के सदस्य वहां पहुंचे तब तक उनकी जांच वहां की समाप्त हो चुकती और वह दूसरी जगह जाने को तैयार पाये जाते। फिर इस के बाद उन्हों ने अपना कार्यक्रम ठीक ठीक नहीं बताया और न साफ यही कह देने की कृपा की कि आपलोग मेरे साथ न आइये। लाचार स्वयं सेवक परेशान हो उनके जांचके साथ न रह सके। अगर डिप्टी साहब स्पष्ट रीतिसे कोई काम किये होते तो बहुतसी शङ्काएं जो हम लोगों के मन में उन के प्रति हैं उत्पन्न न होतीं। और उनको भी सरकारी रिपोर्टको जनता के सामने निष्पक्ष सिद्ध करनेका एक अच्छा प्रमाण मिल जाता।

दूसरे दलने लुटे हुए गांवों में घूम घूम कर यथावाश्यक कपड़े इत्यादि बांटा और उन स्त्रियों का इज़हार लिया जो लूटी गई थीं। और ऐसे लोगो से पूछतांछ की जिन्हों ने कि लूट होते हुए देखी थी परन्तु विशेष भयके कारण अदालत में गवाही देने के लिये तैयार नहीं थे। इस दल के प्रत्येक गांवों में घूम आने से एक और अच्छा प्रभाव पड़ा। वे लोग जिनसे कि गिरफ्तारी की धमकी देकर पैसा तहसील जाता था उनका जो भागे भागे फिरते थे फिरसे अपने अपने घर लौट आये। उन में एक प्रकार की हिम्मत और उत्साह उत्पन्न हो गया। यह दल गांवों के कुछ उन ज़िमींदारों से भी मिला जिन के बारे में इस लूटके मूल कारण होने का सन्देह है और इस बात का प्रयत्न किया कि इन के और किसानों के बीच पुनः मित्रता स्थापित करा दें। ये जमींदार हमलोगों के सम्मुख बड़ी नम्रता पूर्वक बातें करते थे। और हम लोगों के प्रस्तावों को स्वीकार करने के लिये भी अपनी रज़ामन्दी दिखाते थे। एक ने जो इस प्रान्त के बहुत बड़े जमींदार हैं, यहां तक कहा कि देखिये मेरी इज्जत अब आपही लोगों के हाथ में है। परन्तु हम लोगों के पीछे वे हम लोगों की बुराइ ही कहते थे। और किसानों से यही कहलाते थे कि, वे यदि किसी प्रकार सेवासमितिवालों से सम्बन्ध रक्खेंगे अथवा लूट होने की गवाही देंगे तो उनकी बुरी दशा की जायगी और यह भी कहलाते थे कि देखें समिति के आदमी कितने दिन तक तुम लोगों की मदद करते हैं। अस्तु ये लोग यद्यपि बातों में बहुत प्रीति दिखाते थे पर काम करने के लिये तैयार नहीं होते थे। इस दलने इन कामोंको सात दिन में समाप्त किया।

तीसरे दलने अफसरों से मिल इस बातका निर्णय किया कि ता० २० नवम्बर को जितने आदमी पकड़े गये हैं उन सभों पर कोई ऐसा जुर्म नहीं है कि जिस से वह जमानत पर न छूट सकें। आवश्यकता इस बात की थी कि इन की तरफ से उचित पैरवी का प्रबन्ध किया जाय। गिरफ्तार लोगों में से एक की स्त्री ने यह प्रण कर लिया है कि जब तक वह अपने पतिका पुनः दर्शन न कर लेगी तब तक वह अन्न न खायगी। हम लोगों के बहुत अनुरोध करने भी यद्यपि उसे दो सप्ताह से अधिक बग़ैर अन्न के हो चुके थे वह अपने प्रण पर दृढ़ बनी रही।

प्रतापगढ़ के डिप्टी कमिश्नर से मालूम हुआ कि उनके जिले से अब किसी और व्यक्ति की गिरफ्तारी का वारंट जो २० नवम्बर को निकला था, बाकी नहीं है और जो लोग धमका कर पैसे ले रहे हैं बिलकुल झूठे और बदमाश हैं। जौनपुर के पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट ने यह कहा कि उन वारंटों के सम्बन्ध में जिन को पकड़ना होगा उनको हम स्वयं उपस्थित हो पकड़ेंगे। वारंट चौकीदार या कान्सटेबिलों के हाथ में नहीं है। पस उनसे भी यही मालूम हुआ कि गिरफ्तारी की धमकी देने वाले झूठे हैं। इन बातों को जान भागे और डरे हुए लोगों को आश्वासन देने में बड़ी सहायता मिली। हम लोग उपर्युक्त दोनों अफसरों के इन सूचनाओं के लिये कृतज्ञ हैं।

इस लूट का मुकद्मा अब कुछ अंशों में आरम्भ हो गया है इस से हम लोग इसके सम्बन्ध में अभी अपनी राय नहीं दे सकते इस समय सब से आवश्यक बात यह है कि, उन निःसहाय स्त्रियों को, उनके सम्बन्धियों को छुड़वाने और उनके लुटनेवालों को गिरफ्तार कराने में सहायता की जाय। सेवासमिति ने उनकी सहायता कपड़े लोटे इत्यादि से की पर यह पर्याप्त नहीं कही जा सकती इस से इस ओर भी अभी अधिक ध्यान देनेकी ज़रूरत है। परन्तु इन सबसे अधिक आवश्यक उन पर न्याय करवाने का प्रयत्न करना है। आशा है कि प्रत्येक व्यक्ति इस विवरण को पढ़ अपना यह धर्म समझेगा कि यथाशक्ति धनसे अथवा शरीरसे उन की सहायता करे। इस सम्बन्ध में विशेष सूचना के लिये अथवा सहायता देने के लिये कृपया मंत्री काशी सेवासमिति से पत्र व्यवहार कीजिये।

अन्त में मैं लूटे हुए गांवों की सूची दे इस विवरण को समाप्त करता हूं। और पुनः एक बार प्रार्थना करता हूं कि, आप यथाशक्ति लूटी गई स्त्रियों की अवश्य सहायता करें।

लूटे हुए गांवों के नाम—

जौनपुर जिलामें-कोल्ह, बलईकापुरा, अचलका पुरा और इमेरका पुरा।

प्रतापगढ़ के जिले में-कोटिया और मझुली।

इन में से इमेरका पुरा और मझुली में पीछे लूट हुई है।

गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी के वार्षिकोत्सव

का

समय विभाग

५ चैत्र १९७७ तदनुसार १८ मार्च १९२१

शनिवार

प्रातः

७ से ८ तक बृहद् हवन

८ से १० तक—कविता सम्मेलन सभापति श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार

६ चैत्र १९७७ तदनुसार १९ मार्च १९२१

रविवार

प्रातः	मध्याह्नोत्तर
६ ३० से ७-३० हवन तथा भजन	२ से २—३० तक भजन
७ ३० से ९-३० सरस्वतीसम्मेलन प्रो० वंशीधर का निबन्ध, 'संस्कृत साहित्य' पर।	२-३० से ३-१५ तक व्याख्यान पं० पूर्णानन्द जी
९-३० से १०-३० तक व्याख्यान कुंअर चांदकरण शारदा	३-१५ से ५-३० तक सरस्वती सम्मेलन, विविध निबन्ध

रात्रि

७ ३० से ८ तक भजन

८ से ८ ३० तक व्याख्यान (संस्कृत) स्नातक धर्मदेव सिद्धान्तालंकार।

८-३० से ९—३० तक व्याख्यान, श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज।

७ चैत्र १९७७ तदनुसार २१ मार्च १९२१

सोमवार

प्रातः काल	सायं काल
६ ३० से ७-३० हवन तथा भजन	१-३० से २ तक भजन
७-३० से ९-३० सरस्वती सम्मेलन मि० शाहमुहम्मदी का निबन्ध 'हिन्दुस्तानी' पर	२ से ५-३० तक राष्ट्रीय शिक्षासम्मेलन सभापति पं० मोतीलाल नेहरू होंगे
९-३० से १०-३० व्याख्यान पं० धर्मेन्द्रनाथ तर्कशिरोमणि	

रात्रि

७-३० से ८ तक भजन

८ से ९ तक व्याख्यान प्रो० रामदेव जी

९ से १० तक व्याख्यान, श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज

८ चैत्र १९७७ तदनुसार २२ मार्च १९२१

मंगलवार

प्रातः काल	सायं काल
७ से १० तक दीक्षान्त संस्कार	१-३० से २ तक भजन
	२ से ३ तक व्याख्यान पं० ब्रह्मदत्त जी विद्यालंकार
	३ से ४ तक व्याख्यान, पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार
	४ से ४-३० तक अपील मुख्याधिष्ठाता और धन संग्रह

रात्रि

७-३० से ८ तक भजन

८ से ८-३० व्याख्यान (संस्कृत) स्नातक भीमसेन

८ ३० से ९-३० तक व्याख्यान, श्री स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज

विचार-तरंग

विदाई

मेरे एक गुरु हमारी अन्तिम परीक्षा के दिन गिना करते थे। यह कह किस लिये? उन्होंने बतलाया कि तब आप लोगों की विदाई होगी। मैं तब से सोच में हूं कि क्या मैं भी विदा होऊंगा। विदाई कैसे होगी। विदाई तो सदा शुभागमन पूर्वक होती है। जब मेरा यहां कभी समागमन ही नहीं हुवा, तो विदाई कैसी। क्या आपने मुझे कभी जोड़ा था जो मेरे अलग होने की आशंका है। जैसे आगया था वैसे ही मैं चुपचाप चला जाऊंगा; यह कुछ भी बात नहीं है किन्तु मैं असल में (चाहे पहिले न समझता था) हमेशा से आप से जुड़ा हुवा हूं, इस लिये सदा ही जुड़ा रहूंगा। विदाई कैसी?

क्या सचमुच मुझे विदा होना होगा। मैं पूछूंगा, भला किस स्थान पर। विदा होकर कहां जाऊंगा। मुझे ब्रह्माण्ड में कोई दूसरा स्थान ही नहीं दृष्टि गोचर होता। जहां कहीं जाऊंगा वहां उसी का दिव्य एक शासन है, जिसका यहां हैं। वहां पर भी वही, उसके अटल राज नियम चल रहे हैं। अतएव मेरा भूत (मेरा प्राक्तन कर्म समुदाय, अपना फल उपस्थित करता हुवा) हर जगह मेरे साथ है। इस भूत से बचने को मैं दूसरे स्थान पर नहीं पहुंच सकता। तो कहां विदा होऊंगा। और कौन विदा करेगा। जो अब तक मेरे जानते हुवे या न जानते हुवे सदा मेरे साथ रहा है, वही कभी विदाई न देने वाला साथी अब भी निःसंदेह सदा साथ रहेगा। जिस प्रकार उसने दुःखों सुखों के चक्कर में से गुज़ारते हुवे मुझे यहां तक बड़ी सावधानी से विकसित किया है, वही एक साथी उन्हीं अपने आनन्दमय दुःखों और सुखों की बहार में मुझे आगे भी हर जगह दिन दिन पोषित करता जायगा। उस से विदाई नहीं हो सकती। और जब वही मुझे विदा नहीं कर सकता तो उस के

हरा विचार करना आवश्यक है। ह-
ारा क्या उद्देश्य था और उसे हमने
हां तक पूरा किया, हमारा रुख इस
मय किधर है और हमारी आन्तरिक
स्थिति क्या है—इन प्रश्नों पर समालो-
चनात्मक दृष्टि से विचार करना प्रत्येक
ार्य नर-नारी का कर्त्तव्य है। फिर,
ार्यसमाज का राजनिति से क्या सम्बन्ध
—यह प्रश्न भी इस समय जोरों पर हैं।
त्येक विचारक अपनी २ दृष्टि से ही
विचार करता है। ये सब अवस्थायें एक
ुले "आर्यसम्मेलन" की आवश्यकता
ो बतलाती है। आर्य भाई यह सुन
र प्रसन्न होंगे कि इस उत्सव पर इसी
मी को पूरा किया जावेगा। एक "आ-
सम्मेलन" होगा जिस में इन सब प्रश्नों
र, गम्भीर दृष्टि से, विचार किया जा-
ेगा। प्रत्येक आर्य भाई के उपस्थित
ो इस में अवश्य भाग लेना चाहिये।

५. असहयोग और स्वराज्य के वर्त-
ान आन्दोलन ने जातीय शिक्षा की
ोर भारतीय जनता का ध्यान बड़े
ोर से आकर्षित किया है। लोग इसके
हत्त्व को आज समझने लगे हैं। गुरुकु
ल सचाइयों २० साल तक केवल
ाणी से नहीं अपितु क्रिया से भी जनता
े सम्मुख रखता रहा, भारतीय नेता उन्हें
ाज स्वीकार करने लगे हैं। परन्तु जा-
तीय शिक्षा क्या है, उसका स्वरूप और
प्रकार क्या है—इत्यादि आवश्यक बातें
अभी तक कई महानुभावों की विचार
दृष्टि से दूर हैं। फिर गुरुकुल ही जातीय
शिक्षा का नेता अभी तक रहा है। यही
एक संस्था है जिसने, इस विषय में, सर-
ार के साथ क्रियात्मक असहयोग किया
है। भविष्य में भी, गुरुकुल ही इस आ-
न्दोलन का अगुवा रहेगा। परन्तु वह
किस रूप में हो, देश की मांगों को दृष्टि
में रखते हुवे अब उस में किस प्रकार के
परिवर्तन की आवश्यकता है तथा जातीय
शिक्षा का क्या स्वरूप और प्रकार है—
इत्यादि भिन्न २ अंगों पर विचार करने
के लिए ही इस उत्सव पर [illegible]
सम्मेलन होगा जिस [illegible]
के प्रसिद्ध नेता कर्मवीर पं० [illegible]
नेतृत्व होंगे। इस में प्रत्येक शिक्षा प्रेमी
और असहयोग वादी को उपस्थित होना
चाहिये।

ये कुछ मुख्य विशेषतायें हैं। और भी
बहुतेरी हैं परन्तु इस समय उन पर वि-
चार करना अनावश्यक प्रतीत होता है।
इन सब अनुपेक्षणीय विचारों को दृष्टि
में रखते हुए हम न केवल प्रत्येक आर्य
नर नारी और कुल प्रेमी से ही अ-
पितु प्रत्येक स्वराज्य वादी, असहयोगी,
जातीय शिक्षा प्रेमी और गुरुकुल वि-
रोधी से भी यह प्रार्थना करेंगे कि वह
अपने इष्ट मित्रों सहित इस उत्सव में
अवश्य सम्मिलित हों। संक्षेपतः, हम भारत
जनता से बल पूर्वक यह अनुनय करेंगे कि
वह तन, मन, धन से इस उत्सव की स-
फलता में सहायक होवें।

डा० रासबिहारी घोष का स्वर्ग वास !

भारत का एक और रत्न उठ गया।
डा० घोष ने कई प्रकार से अपना नाम
चिरस्मरणीय कर दिया है। कलकत्ता
विश्वविद्यालय को कई लाख रुपया दान
देकर उसे दान वीर और शिक्षा प्रेमी
[illegible] | वकालत में जो उसने
सिक्का जमाया है, वह आने वाली
कई सन्ततियों के लिए एक स्पृहणीय
आदर्श ही रहेगा। लोग आपको "हाई-
कोर्ट का घी" कहा करते थे। इस क्षेत्र
में उनका प्रभुत्व न केवल भारत-
वासी अपितु इङ्गलैंड और अमेरिका के
प्रसिद्ध वकील और जजों को भी मनना
पड़ा है। साहित्य क्षेत्र में भी आप का
ज्ञान अगाध था। उन्नत भाषाओं की
प्रायः सभी प्रसिद्ध पुस्तकें आप की नजरों
से निकल चुकी थीं। राजनैतिक क्षेत्र में भी
आप का सिर ऊंचा था। यद्यपि आप
नरम दल के थे तथापि आप थे पूरे देशभक्त।
सूरत की कांग्रेस के आप सभापति भी
चुने गये थे। कहते हैं कि यदि आप
[illegible] में होते तो आज राष्ट्रपति
[illegible] इंगलैंड में होते तो प्रधान मन्त्री
होते। परन्तु भारतीया के हृदय में भी
[illegible] कम नहीं
है। वृद्धावस्था में आप इस बात का बहुत
पछतावा करते थे कि युवा काल में आप
रुपया कमाने में ही लगे रहे और देश
सेवा का कोई महत्व पूर्ण कार्य नहीं
कर सके। इसी कलंक को धोने के लिए,
कहते हैं, आपने अपनी अन्तिमावस्था
में दान का अक्षुण्ण स्रोत खोल दिया
था। आज से जब कोई युवक उपदेश
लेने जाता था तब आप उसे यही कहते
थे कि, "धन कमाना छोड़कर देश सेवा में
ही अपना तन मन लगा दो।"

आपका जन्म साधारण घर में ही
हुआ था। आप अपने बाहुबल से ही
इस उच्च दशा तक पहुंचे थे। भाग्य पर
भरोसा रखने वाले भारतीय युवकों के
लिए डा० घोष का जीवन एक आदर्श
हो सकता है।

कार्य्य के सभी क्षेत्रों में आपके अगाध
ज्ञान और देदीप्यमान प्रतिभा को देख
कर ही सर आशुतोष मुकुर्जी ने एक
बार कहा था कि रासबिहारी घोष जैसे
ऊंचे आदमी सदी में केवल एक बार ही
पैदा हुआ करते हैं।"

रासबिहारी घोष की मृत्यु से इस
सदी ने एक प्रकाण्ड विद्वान् ही नहीं
अपितु एक कट्टर देशभक्त भी खो दिया
है।

दयालु (मर्सीफुल) मैक लेगन ?

नाभा के महाराज ने, पिछले दिनों, व्या-
ख्यान देते हुए मैक लेगन को 'दयालु'
(मर्सीफुल) की पदवी से विभूषित किया
था। मैक लेगन की दयालुता का इस से
बढ़कर और प्रमाण क्या हो सकता है
कि उसने लाहौर, अमृतसर और जाल-
न्धर में सभाबन्दी का कानून लगादिया,
ला० लाजपतराय को पेशावर नहीं जाने
दिया; पं० रामभजदत्त चौधरी, सादार
शार्दूलसिंह और डा० किचलू का मुंहबन्द
कर दिया और निरपराध अकाली के
सम्पादक को जेल में ठूंस दिया। राजा
महाराज की सम्मति में भारतवासी मूर्ख
हैं जो मैक लेगन जैसे महामनस्क की
दयालुता में सन्देह करते हैं। ईश्वर ऐसे
'दयालु' पुरुष नाभा महाराज ही को दे।
हमें तो उनकी 'दयालुता' की कोई
आवश्यकता नहीं है।

लादू बैलपर और बोझ !

भारतवासी पहिले ही मेंहगी, बिमारी, सरकारी टैक्सों और कर्जों से लदे हुए हैं। पिछली कौन्सिल में अर्थसदस्य मि० हेली ने नये वर्ष के बजट को पेश करते हुए जो भाषण दिया है उस से ज्ञात होता है कि गत वर्ष के १८ ॥ करोड़ रुपये के घाटे को पूरा करने के लिए सरकार इन लादू बैलों पर टैक्स वगैरह का और बोझ लादना चाहती है। सरकार की इस आर्थिक गड़बड़ी की निन्दा गोरे अखबारों तकने की है। इस संकट का प्रधान कारण सरकारी विनिमय की दर में गड़ बड़ है जिसके कारण भारत को कई करोड़ों की क्षति सहनी पड़ी है। फिर, हम नहीं समझते कि सेना पर ६० करोड़ रुपये खर्च करने की क्या आवश्यकता है? किस कोने से भारत पर सेनायें उमड़ रही हैं जिन के नाश के लिए इतना रुपया स्वाहा किया जावेगा। संसार की किस दिशा से लड़ाई के हिमालयस्वरूप नौकरशाही के दिलों को कम्पा रहे हैं? सरकार की इस संकुचित नीतिकी जितनी निन्दा की जावे उतनी ही थोड़ी है।

ड्यूक गया—दमन आया

बम्बई के बन्दर गाह से ड्यूक के निकलते मद्रास के बन्दर गाह से दमननीतिने, बड़े जोरशोर के साथ, प्रवेश किया। न जाने इस में क्या रहस्य है कि जिस प्रान्त ने ड्यूक की सब से पहिले आगावाई की, उसी ने दमन नीतिका भी सब से पूर्व स्वागत किया। मि० याकूबहुसैन तथा उनके अन्य तीन साथियों को पकड़ कर कालीकट डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट ने दमन दावानल में पहिली आहुति डाली। देखते २, सभी प्रान्तीय सरकारों ने इस का अनुकरण किया। सर्व भक्षक १४४ धाराकी आड़ में यह सब प्रकाबड रचा जा रहा है। राजद्रोह और सार्वजनिक शान्ति भंग से लेकर शराब पीना मना करने तक—सारे भारी (?) जुर्म इसी धारा में, नौकरशाही की स्वेच्छा चरिता के कारण, समा जाते हैं। संसार स्वतंत्रता की [illegible] आ रहा है, भारत के भावी शासनराय लखनऊ की सभाओं में बैठ स्वाधीनता और न्याय के गुनगान कर रहे हैं परन्तु इधर नौकरशाही की चांदनी में भी घोर दौड़ रहा है, असहयोगात्मक आन्दोलन में भी बगावत की बू आरही है।

भारत सरकार के शिखण्डी लार्डसिंह

परन्तु यह सौभाग्य शायद बिहार के एक देशी गवर्नर के ही हिस्से में पड़ा था कि वह अपने आधीनस्थ कर्मचारियों के नाम एक गश्ती चिट्ठी द्वारा दमन नीति की खुल्लम खुल्ला उद्घोषणा करे। वस्तुतः, लार्ड सिंह को शिखण्डी बनाकर भारत सरकार ने [illegible] ता के कसे तीरकमान से दमन का जो यह तीर छोड़ा है, उसका उत्तर हमें तीर से ही न देते हुये अपनी सहन शक्ति और शान्ति से ही देना चाहिये। परन्तु, इस घटना से उन्हें शिक्षा लेनी चाहिये जो यह समझते हैं कि गोरी नौकरशाही की अपेक्षा काली नौकरशाही कुछ अधिक भलेमानस और नेकनीयत होती है। वस्तुतः, दोनों एक ही थाली के हैं।

रेशमी दस्ताने में छिपा बाघ

नख—

सुधार स्कीम को देकर सरकार यह दिखलाने चाहती है कि उसने हम पर बड़ी भारी मेहरबानी की है। इस के बदले में वह हम से सहयोग की आशा करती है। परन्तु, इस रेशमी दस्ताने के पीछे सरकारी कर्मचारी जो ज्यादतियां करते हैं वह अभी तक पहिले की तरह जारी है। इस के ये ताजे उदाहरण लीजिए—

१. इस समाचार के लिए "बाम्बे क्रानिकल" उत्तर दाता है कि झांसी के जिला मैजीस्ट्रेट ने 'चिरगांव' नामक गांव के निवासियों के बेगार देने से इन्कार करने पर वहां के स्थानीय नेताओं को बुला कर धमकाया। इन में से एक का नाम नारायणदास है। उसे धमकाते और डराते हुए उसे बागी ठहराया गया और कहा कि जब तुम कभी बन्दूक वगैरह के लिए लाईसेन्स लेने आओगे तो मैं इन्कार कर दूंगा, कानून के फंदे में जब कभी तुम फंसोगे, तुम्हें झट कैद कर लिया जावेगा, जब कभी कुली चमार वगैरह कोई अर्जी लावेंगे तो वह मैं तुम्हारे पास भेजदूंगा" इत्यादि। नारायणदास पर जो यह महत्व पूर्ण उपदेश दिया गया था, उसका परिणाम दूसरे दिन इस रूप में हुआ कि उस से बन्दूक का लाईसेन्स छीन लिया गया।

२. पूर्निया (बिहार) के डिप्टीकमिश्नर को बार-लाईब्रेरी से राजविद्रोह की बू आने लगी है। उसके सदस्यों को उसने चेतावनी दी है कि चूंकि वे उस में बैठकर राजविद्रोहात्मक बातचीत करते हैं, इस लिए वह जब्त करली जावेगी। अमृतबाजार पत्रिका का एक संवाददाता कहता है कि यह डिप्टीकमिश्नर रायपुर के लार्डसिंह महोदय का रिश्तेदार है।

क्या ऐसी बाघ नखवाली सरकार के साथ हम सहयोग कर सकते हैं?

टोपी के विरुद्ध महायुद्ध !

एक छोटी सी गान्धी टोपी के विरुद्ध सरकार ने न जाने क्यों इतना महायुद्ध रच रक्खा है? अभी मेरठ के एक अंग्रेज हैडमास्टरने के इस कार्य पर सभी ओर से कड़ी समालोचना की गई थी पर अब समाचार आये हैं कि फर्रुखाबाद के एक अमेरिकन हैडमास्टर ने फिर इसी तरह का कार्य किया है! सरकार के शिक्षा विभाग को चाहिए कि दो पैसे की इस छोटी टोपी से अपनी दीठीनजरें हटा कर किसी बड़ी वस्तु को अपना निशाना बनावें।

ननकाना—काण्ड में पुलिस का हाथ—.

सर्वथा नहीं है—यह कहना अत्यन्त कठिन है। ज्यों २ इस मामले की गुत्थियां खुलती जाती हैं त्यों २ जनता का पुलिस पर सन्देह बढ़ना ही जाता है। यद्यपि पंजाब सरकार ने पहिले दिन ही एक लम्बर कम्यूनिक प्रकाशित कर अपने को निर्दोष सिद्ध करना चाहा था

परन्तु उस से संशय की मात्रा और भी बढ़ गई। महन्त कई महीनों से इस की तैयारी कर रहा था, पठानों को अपने साथ मिलाता हुआ शहर में छुरे तैयार करवा रहा था परन्तु उसकी इन सब करतूतों से पुलिस के कान पर जू तक न रेंगी—यह बात साधारण बुद्धि नहीं मान सकती। फिर प्रातः ८ बजे से लेकर शाम के ४ बजे तक खुल्लम खुल्ला हत्या काण्ड होता रहा, महन्त लछमनसिंह के कटे सिर को सारे शहर मे घुमाया गया और पुलिस तब भी चादर पसारे सोयी रही—यह कहना अपनी मूर्खता का परिचय देना है। यदि साधारण पुलिस को नहीं मालूम था तो भारत सरकार की सर्वान्तर्यामी सी. आई. डी. भी क्या इस से अनजान रही? भारत में बोल्शवीजम आ रहा है; भारतवासी, सरकार के विरुद्ध, अफगानिस्तान और रूस के साथ मिल कर बगावत की तैयारी में है, बंगाल में राजविद्रोही सभाओं की भरमार है—इत्यादि सब सूक्ष्म घटनाओं की सूंघ सी. आई. डी. को आ सकती है पर १ मास से जिस हत्या काण्ड के लिए खुले बाज़ार तैयारी हो रही थी उस से सी. आई. डी. सर्वथा अछूत रही। यदि यह सच है तो इस विभाग पर जो लाखों रुपये खर्च किये जाते हैं वह एक दम बन्द कर देने चाहिये। यद्यपि यह मामला विचाराधीन है तथापि हम यह कहने पर बाधित हैं कि पुलिस का इस मामले में अवश्य कुछ हाथ है।

फारस इङ्गलैण्ड चगुंल से निकला—

प्रतीत होता है। इस सप्ताह के समाचारों से ज्ञात होता है कि वहां पर नया मन्त्री मण्डल बन गया है और उसने ऐंग्लोपरशियन सन्धि को रद्दी की टोकरी में फेंकते हुए रूस के साथ नई सन्धि स्थापित की है। यह सन्धि कैसी है—यह अभी तक अज्ञात है पर इतना तो निश्चित है कि फारस अपना निर्णय अपने आप करने पर उतारू है। वह इङ्गलैण्ड की दोस्ती से तंग आकर अब रूस की बोल्शवीजम के साथ मिल अपनी किस्मत परखना चाहता है।

मित्र लड़ाई पर उतारू

प्रतीत होते हैं। उन्हों ने निश्चय कर लिया है कि यदि जर्मनी उनकी अभिवाञ्छित क्षतिपूर्ति नहीं करेगा तो वे उसके कुछ एक प्रदेशों पर कब्ज़ा कर लेंगे। इस से पूर्व मित्रों को अपने गिरेबान में मुंह डाल कर यह देखना चाहिये कि क्या यह आत्म निर्णय और स्वाधीनता के उन सिद्धान्तों के अनुकूल है जिनका वे, पिछले सालों से, शोर मचा रहे हैं। विल्सन साहब अब कहां मुंह छिपाये बैठे हैं? क्या अमरिका अब भी मित्रों का साथ देगा? जर्मनी के साथ व्यापारिक सन्धि कर लेने से इसमें ... स्पष्ट है?

पुस्तक समालोचना

निहलिस्ट रहस्य कथा रोचक और हृदय ग्राही है। भाषा सरल है। रूस और नीचे के अधिकारियों की स्वेच्छा चारीता और अत्याचार का वर्णन हृदय को हिला देने वाला है। निहिलिस्ट नामक राजनैतिक सम्प्रदाय के विषय मे इस पुस्तक को पढ़ने से काफ़ी ज्ञान मिल सकता है। पुस्तक का अभी एक ही भाग प्रकाशित हुआ है। पुस्तक उपादेय है और रामचन्द्र शर्मा सरस्वती पुस्तक माला कार्यालय पो० कनखल (सहारनपुर) से मिल सकती है 'प'

राजनैतिक सिद्धान्त लेखक, पंडित माता सेवक पाठक प्रकाशक, भारतीय पुस्तक एजन्सी, ११ नारायणप्रसाद बाबूलेन कलकत्ता। मूल्य १॥)

अभी तक हिन्दी में राजनीति के सिद्धान्तों पर किसी मूल पुस्तक का अभाव सा ही था। पाठक महाशय इस कमी को दूर कर सारे हिन्दी संसार के धन्यवाद पात्र बने हैं। छपाई आदि सब उत्तम है। विषय विवेचन की प्रणाली सरल है। नये राजनीतिक सिद्धान्तों का भी समावेश किया गया है। समयानुकूलता की दृष्टि से उपयोगिता और भी बढ़ गई है। राजनीति का पाठ प्रारम्भ करने वालों के लिये विशेषतः लाभ पहुंचाने वाली है। मूल्य कुछ अधिक जंचता है। समर्पण लोकमान्य तिलक की अमर आत्मा को किया गया है। 'द'

जातीय—कविता दाम—१॥)
प्रकाशक—नारायणदत्त सहगल एण्डसन्स
फोटोग्राफर-आर्ट बुकडिपो—
लोहारी गेट लाहौर

इस पुस्तक में उन कविताओं का संग्रह है जिन्हें लेखक ने अपनी समझ के अनुसार उत्तम जातीय कविता समझी है। अच्छा होता—यदि संग्रह कर्ता संग्रह करने में इतनी शीघ्रता न करते क्यों कि जिस प्रकार उत्तम कविता बनाना कठिन है वैसे ही उनका संग्रह करना भी कोई सुगम कार्य नहीं है॥ 'व'

नवीन सहयोगी

वैभव! दिल्ली से इस नाम का एक नया साप्ताहिक पत्र निकलने लगा है। आकार लगभग मथुरा के बराबर है। पत्र राष्ट्रीय है। टिप्पणियां अच्छी होती है। 'विजय' और 'हिन्दी समाचार' के बन्द हो जाने से दिल्ली से एक उत्तम हिन्दी पत्र निकलने की अत्यन्त आवश्यकता थी जिस की कमी यह पूरी करेगा। हम सहयोगी का हार्दिक स्वागत करते हैं। पृ० १६ के लगभग, वार्षिक मूल्य ४) है। 'द'

कवि सम्पादक त्रिशूल। बरहरी पो० पीपीगञ्ज जि० गोरखपुर से इस नाम का एक नया मासिक पत्र निकलने लगा है।

भाद्रपद का विशेषाङ्क (श्री कृष्णाङ्क) हमारे सम्मुख समालोचनार्थ प्रस्तुत है। कविता पढ़ने से आशा होती है कि यदि अब की कवितायें अच्छी नहीं भी है तो आगे धीरे धीरे अवश्य अच्छी होजायंगी। हमें पूर्ण विश्वास है कि त्रिशूल जी उत्तम कविताओं के चुनने में ज़रा विशेष ख्याल रक्खेंगे।

हिन्दी में यह एकदम नवीन उद्योग है जिस के लिए त्रिशूलजी अकेले कवि नहीं अपितु सारे हिन्दी संसार के धन्यवाद के पात्र हैं। पत्र होनहार है। हम इस का सहर्ष स्वागत करते हुए प्रत्येक साहित्य प्रेमी से अनुरोध करेंगे कि वह इसका ग्राहक बन प्रकाशकों का उत्साह बढ़ावें बा० मू० ३॥)

'शिशु-भावना'

(यह कविता गुरुकुल जन्मोत्सव में पढ़ी गई थी)

जननी !!! ; मोरी तो तुम वोई ! ; जननी !"; पुरातनी !"
तुम्हार चरन तले; झूली खेले !! ; खिलाइहे ! बालक जीवनी !!!
"जीवन-माली; अब मोरी; रही निधन !"
आंचल तोरी ; लुकोपाई !!! रक्षा धन !!
तुम्हार चरन धूल, जननी ! हमार तन; तुम्हार अमृत दूध; 'पीकर पायातम
तुम्हार बचन अनुकरन है ! मोर बचन; तुम्हार विमल ज्ञान, जननी ! हमार धन !
तुम्हार परम दान; — ये मोर जीवन !
नाहीं भुलाय सकै — जननी ! आ-मरन!!!
माता ! हमार जदि;— लागैं सहस जीवन !
तुम्हार महान ज्ञान;— कर न पावें उऋन ! !
जासों पाया यह अमर दान दयालुनी !!! जननी०

मलय- अनिल आज, सजीला फाल्गुन —कौन उपहार हाय ! लाऊं मैं अधम !
हमार पराग हीन, और तन मन —चाहे जब लेऊ मा ! [illegible] ।
शरम जलाये तन, हाय ! मैं अधम ! —कौन उपहार हाय; लाऊं मैं चरना
" श्रद्धा विनय भावे; गुरु के चरन —सेवा करब नित; करि व्रतपालन"
ये प्रन जननि ! नाहीं ; कोउ उपहार —प्रति हम सकल; ये करम हमार
हमार नयन कोथे; युगल, मुक्ताफल —श्रद्धा विनय प्रेम; 'जोति ले' झलमल
आज कुल-माता; तुम्हार चरन कमल — धर्म उपहार माता !; मोह दो मुक्ताफल
"जननि ! हमार दीन यहि उपहार —अधम की भिक्षा; यहि सब सार ।
लज्जा से नत शीश; प्रेम अवतार —युगल नयन जल करो स्वीकार ।
फेरो, मोरा न "शिशु —उपहार" कृपालुनी ॥ जननी० ॥
दयामय ! गुरुवर !; चरन तुम्हार —क्या मैं अरपन धरूं; निज उपहार ।
युगल चरन शुभ ज्ञान के भंडार — जिनकि परम गुरु, मिला आधार ।
श्रद्धा विनय-मय, मोर उपहार —एकठो कृपालु गुरु, यह नमस्कार
करो स्वीकार गुरु ! करो स्वीकार —शिष्य अधम दीन, हीन है विचार !!
"जय हो !!" " पावें जहां; —शिष्य आशीर्वादी !!! ॥ जननी० ॥
ऐ ! वात्सल्यमूर्ति ! मोरे प्रेमसेचन माली, —दीन सुदाम ये, लाया है प्रेमप्याली
"चाहूं न कनक के; भवन विशाल भाई !!!—चाहूं न रतन के धन, निधि शुभज्ञान भाई
चाहूं न विपति में; तुमार सहाय भाई !!! —चाहूं न भाग देवो; सुख का लाय भाई
मांगूं किन्तु इक, —'हृदय कुटीर'
प्रणय, स्मरण की —जहं नित भीर !!!
बन्धु ! आऊं जब, तुमरे दुआर —बन्द करो न भाई !!! - 'हृदय किवार'
येहि ! भीख देओ !! येहि इकरार —प्रणय, स्मरन का, तोड़ो मति तार !!
जासों पाये; ये सब भाई !! प्रेम—धनी !!! ॥ जननी० ॥
जननी !!! मोरी तो तुम वोई !!! जननी !! पुरातनी !!!

कुलपति ! पिता ! मोरे — आनन्दवितरणवासी !!!
कुल के, कर्णधार !!! — सुना है ! संन्यासी !!!
याद तो करो पिता !, — दिन जो कि दूर गये !!
आये थे जब हम !! — गोदी में नये नये !!"
नन्हि हथेली पर — हम थे "कौन" किए !!
संसार सागर इक — कर में आप लिए !!"
जिन को पिलाया दूध-प्रेम का हाय ! पिता !!
उनमें रहे हैं कैसे; कितनों का; कौन; पता ??
याद तो करो पिता !! तुमने किया था प्रन !!!

गुरुकुल समाचार

श्री आचार्य जी

गुरुकुलाचार्य श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी इलाज के लिये लाहौर चले गये हैं। १२ दिनों तक ज्वर न आने से उनका स्वास्थ्य कुछ अच्छा हो गया था। वह [illegible] था कि वह सफर कर सकें। डा० सुखदेव जी गुरुकुल में आये थे, और उन्हीं की प्रेरणा से स्वामी जी लाहौर गये हैं। वहां वह अमृत धारा भवन में ठहरेंगे।

गुरुकुल जन्मोत्सव

गुरुकुल जन्मोत्सव ४ मार्च को हुआ। श्री आचार्य जी के गुरुकुल में न होने से म० मुख्याधिष्ठाता ने सभापति का आसन ग्रहण किया। गीतियें हुईं—और ब्रह्मचारियों के भाषण हुए। सहभोज और धनुष बाण के कर्तबों ने उत्सव की सफलता में सहायता दी।

परीक्षायें

१४ वीं श्रेणी की परीक्षायें हो चुकीं परीक्षोत्तीर्ण ब्रह्मचारी गुरुकुल के कार्य पर इधर उधर फैल गये हैं। स्नातक धर्मदेव स्नातक रामगोपाल तथा विद्यानिधि आदि गुरुकुल के कार्य पर चले गये हैं। आशा है कि इसवार उत्सव से पूर्व ही नवस्नातक कुल सेवा के व्रत में व्रती हो कर अपनी योग्यता का परिचय देंगे।

महाविद्यालय की परीक्षायें भी समाप्त हो चुकी हैं और विद्यालय की परीक्षा में हो रही हैं। आशा है १२ मार्च तक सब गुरु [illegible] परीक्षाओं के झंझट से निपट कर उत्सव की तय्यारी में लग जायेंगे।

श्री पं० सातवलेकर जी

आज कल आर्य जनता के विदित श्री पं० सातवलेकर जी वेद सम्बन्धी व्याख्यान देने के लिये गुरुकुल आये हुए हैं। प्रतिदिन प्रातः काल ७ से ८-३० तक आपका व्याख्यान होता है। महाविद्यालय के सब ब्रह्मचारी उपस्थित होते हैं। आप के व्याख्यानों से जो अद्भुत लाभ हो रहा है, वह अवर्णनीय है। गुरुकुल वासी पण्डित जी के बहुत कृतज्ञ हैं कि

कूके हृदय मेरा!!! मन से मिलाया मन !!!
कहा है शिशु सोई !!!—कहा है ! आप ! पिता !!!
(किन्तु) भावना, प्रनय, सोई !!!—सोइ है ममता !!
आज जो तुम्हारी गोद —शिशु समुदाय !!!
आशीष पावेंगे पद —सिर नाय नाय !!!
किन्तु विगत शिशु, —दोष से भुलाओ ना !!!
सकल आशासथानि —हम से फिराओ ना !!!
शिशु जो हीन पिता !!! गोद से छूट गये !!!
वे फूल जो, अधखिले असमय टूट गए ॥
उनसे पिता जी ! निज —करुना हटाओ ना !!!
तुमरे अभागे शिशु —उनको भुलाओ ना !!!
पाऊं ! पिता कि अहा सफल आशीर्वानी !!!
जननी मोरी हो तुम सोई !! जननी पुरातनी।

ब्रा० शारदेश कैलाश

आपने औध से यहां आकर अपने ज्ञान से ब्रह्मचारियों को लाभ पहुंचाया है।

उत्सव

उत्सव के सम्बन्ध में बहुत प्रश्न आते हैं। स्पेशल ट्रेनों के लिये लिखा तो गया है पर आशा नहीं कि कोई सुनाई होगी। गुरुकुल प्रेमियों को पांच चार दिन पूर्व ही चलने के लिये तय्यार होना चाहिये। देरमें चलने से सैंकड़ों तरह की रुकावटें पैदा होने की सम्भावना है। आने वाले महानुभावों की चिट्ठियां प्रति दिन आ रही हैं। उन के ठहराने के लिये यथा-शक्ति प्रबन्ध किया जायगा।

इन्द्र
स० मुख्याधिष्ठाता

गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक।

प्राय: आर्य्य भाई पूछा करते हैं कि गुरुकुल से इस समय तक कितने स्नातक निकले हैं और वह क्या कार्य्य करते हैं। उनकी सूचनार्थ निवेदन है कि इस समय १९६८ से १९७६ तक ९ वर्ष में ६९ स्नातक निकले हैं जिनका ब्योरा निम्न प्रकार है:—

सम्वत १९६८ में २ स्नातक निकले
" १९६९ में ... .
" १९७० में ५ स्नातक निकले
" १९७१ में ६ " "
" १९७२ में ११ " "
" १९७३ में २ " "
" १९७४ में ११ " "
" १९७५ में १८ " "
" १९७६ में ८ " "

यह ६९ स्नातक निम्न प्रकार कार्य्य करते हैं:—

१ स्नातक विदेश गये हैं
३ " इंगलिस्तान गये हैं
४ " गुरुकुल कांगड़ी में अध्यापक हैं
१ " गुरुकुल कांगड़ी में सहायक मुख्याधिष्ठाता हैं
१ " गुरुकुल कांगड़ी में अध्यापक हैं
१ " गुरुकुल में "श्रद्धा" के उपसम्पादक हैं
१ " गुरुकुल में वेद तथा अंग्रेजी का स्वाध्याय करते हैं
१ " गुरुकुल में चिकित्सक का कार्य्य सीखते हैं
३ " गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ में कार्य करते हैं
३ " गुरुकुल कुरुक्षेत्र में कार्य्य करते हैं
१ " गुरुकुल मुलतान में हैं
१ " गुरुकुल मटिन्डु में हैं
३ " [illegible] में हैं
१ " [illegible] देश में आर्य्य धर्म का प्रचार [illegible]
२ " [illegible] देश में प्रचार करते हैं
१ " हिन्दु विश्वविद्यालय काशी में अध्यापक हैं
१ " देहली में गुरुकुल की ओर से शार्टहैंड (shorthand) सीखते हैं
३ " देहली कलकत्ते तथा मद्रास में वैद्यक पढ़ते हैं
१ " नेशनल कालेज अहमदाबाद में उपाध्याय का कार्य्य करते हैं।
कलकत्ते में प्राइवेट अध्यापक है
१ " [illegible] में अध्यापक है
१ " देहली में आयुर्वेद के उपाध्याय हैं
१ स्नातक विज्ञान कार्य्यालय काशी में कार्य्य करते हैं।
१९ " अपना निज व्यापार वैद्यादि का कार्य्य करते हैं।
२ " आर्य्य प्रतिनिधि सभा में उपदेशक हैं।
११ " इन का पता नहीं कहां हैं।

इस ब्योरा से आप को पता लग गया होगा कि अधिक स्नातक अपने धर्म तथा जाति की सेवा का कार्य्य करते हैं। पं० हरिश्चन्द्र जी तो कई वर्षों से विदेश में हैं। पिछले वर्ष उन के स्वदेश लौटने का समाचार मिला था परन्तु वह ठीक निकला। आजकल पता नहीं कहां हैं। पं० इन्द्र जी पूर्व गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ तथा विजय पत्र के सम्पादक रहे हैं अब वह कांगड़ी में उपाध्याय तथा सहायक मुख्याधिष्ठाता हैं।

पं० युधिष्ठिर जी जो पूर्व लाहौर में वैद्यक का कार्य्य करते थे आज कल सभा में बड़ी लगन से उपदेशक का कार्य्य करते हैं। पं० बुद्धदेव जी जो पूर्व बरेली में थे वह भी सभा में उपदेशक हैं। पं० ईश्वरदत्त जी अफ्रीका में प्रचार करते हैं जिन के कार्य्य के हर्षदायक समाचार पत्रों में प्रकाशित होते रहते हैं। पं० देवेश्वर जी तथा पं० सत्यव्रत जी मद्रास में प्रचार करते हैं। अन्य स्नातक भी अपने २ स्थान पर सफलता से कार्य्य कर रहे हैं।

(आर्य्य लाहौर)

वाग्वर्धिनी सभा के मन्त्री ब्र० सत्यपाल जी कवियों के नाम निम्न निमन्त्रण भेजते हैं:—

५ चैत्र १९७८ वि० (१९ मार्च १९२१) को महाविद्यालय वाग्वर्धिनी सभा की ओर से एक कविता सम्मेलन बड़ी धूमधाम से किया जावेगा। गुरुकुल वार्षिकोत्सव का समारोह भी इसी अवसर पर होगा जिस में बहुत से गण्यमान्य नेता भी पधारने वाले हैं।

इस सम्मेलन में अनेक रसिक एवं प्रसिद्ध २ कवियों के आने की आशा है। आप भी हिन्दी भाषा के एक मार्मिक रसज्ञ तथा सुकवि हैं। हम आप को इस शुभ अवसर पर सादर निमन्त्रित करते हैं। हमें पूर्ण विश्वास है कि आप अपने शुभागमन से हमें अवश्य ही कृतार्थ करेंगे। यदि किसी कारण वश आप ऐसा न कर सकें तो कम से कम अपनी रस भरी कृति से तो हमें कभी वञ्चित न रक्खेंगे।

विषय (१) देश भक्ति, (५) लो० मा० तिलक
(२) पञ्जाब का हत्याकांड, (६) बसन्त
(३) स्वामी दयानन्द (७) होली
(४) महात्मा गान्धी और स्वदेश

समस्या पूर्ति (१) एक घड़ी (२) प्रीति छिपे नहीं लाख छिपावे (३) मोतीलाल, (४) हिन्दु हिन्दी हिन्दुस्तान (५) बदलना है रंग आसमां कैसे कैसे (६) देवी पूजा (७) न मकल ही मिली न शकल ही मिली।

ओ३म्

Registered No A 875

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | ६ चैत्र सं० १९७७ वि० दयानन्दाब्द ३८ ता० १८ मार्च सन् १९२१ ई० | संख्या ४८ भाग १

हृदयोद्गार

"नाथ-उद्बोधन"

'अम्बर-व्यापिनी'
'करुणा रागिनी'—
उठाओ हृदय आज ॥
'अन्तर-द्राविनी'—
'निद्रिया हारिनी'—
जगावे भुवन राज' ।
चरन चरन गूँथो; 'करुना-राग-नूपुर' ।
चपल अनिल थामो; ऐसी उठाओ सुर ॥
मरन सदय होवे; गुंजाओ 'महान पुर' ।
बधिर श्रवन होवे; सुनाओ महान सुर ॥
"संसार-विकट—
अपार-कोलाहल" ।
डूबे तव रागिनी-
पावे न तल ॥
'पाषान कठिन मलि—
होवें सुतरल' ।
पावक सदृश करे—
होवे सब जल ॥
'कामना-वाचनी'—
'निद्रिया-हारिनी'—
हिलावे 'अचलराज' ॥
'अन्तर द्राविनी'—
'करुणा-रागिनी'—
जगावे 'हृदय-राज' ॥
जनम जनम बीन, यातना तार बाजे ।
सजल नयन तार मञ्जीर साज साजे ॥
चपल करन दान—अर्चना भाव' राजे ।
जागें भुवन पति,—भावना देख लाजे ॥
रागिनि करुन से—
करो उद्बोधन ।
'अनन्य नेह भाव'
नाथ के चरन—
विहाय कपट, क्रम—
देह और मन—
करो अर्पन ! बस
जाओ रे ! शरन ॥
'भ वना व्यापिनी —
क[illegible] ।[illegible]—
बनावे सकल काज ॥
अन्तर द्राविनी-
करुना रागिनी'
जगावे 'हृदय राज ॥

श्री शारदेश केशव

अद्वैत और द्वैत तत्वों की योजना

(ले०–श्री पं० देवराज जी सिद्धान्तालंकार)

इस विश्व में प्रत्येक पदार्थ अपनी अन्तर्हित शक्ति से अव्यक्त से व्यक्त और व्यक्त से अव्यक्त रूप धारण करता हुआ प्रतीत हो रहा है। इस सृष्टि चक्र के नियम से अव्यक्त सत्ता में जिस समय अपना भाव सृष्टि रचना के निमित्त व्यक्त हुआ तो उसकी भावात्मक एक सत्ता में विक्षोभ उत्पन्न होने के कारण उस अद्वैत में द्वैत अभिव्यक्त हुआ। जो जागृत भाव है वही चेतन सत्ता है और जो सुप्त भाव है वही जड़ सत्ता है ये जागृत भाव या सुप्त भाव अथवा चेतन और जड़ सत्ताएं अपने २ अभिप्रायों को प्रयोजनों को या अर्थों का सिद्ध करने के लिए एक दूसरे के साधक बाधक रूप से होती हुई अपना सम्बन्ध परस्पर करती हैं। पारस्परिक सम्बन्धों के बार बार बनने और बिगड़ने से अलग २ देश में या छोटे रूपों में उभय सत्ताओं का विभाग होता जाता है। जितना २ सत्ताओं का विभाग होता जाता है उतना उतना जड़ सत्ता संकुचित होती चली जाती है और चेतन महा सत्ता भी अनन्त भावों में विभक्त होती २ जड़ सत्ता के अनन्त छोटे २ क्षुद्र अंशों के साथ सम्बद्ध होती २ जड़ सत्ता के अति स्थूल रूपों से ऐसी अन्तर्हित होती है जैसी अव्यक्त महा सत्ता आदि अविक्षुब्ध अवस्था में अप्रतर्क्य अविज्ञेय सर्वत्र प्रसुप्त समान थी। इस प्रकार जड़ सत्ता और चेतन सत्ता जितना ही जितना अपना २ प्रयोजन सिद्ध करने को एक दूसरे से सम्बन्ध करती हैं उतना ही उतना अधिक स्थूलता को और सूक्ष्मता को प्राप्त होती जाती हैं और ऐसे ही होते २ उसी अव्यक्त महासत्ता के स्वरूप में, अद्वैत में हो जाती हैं।

इसी अद्वैत, अव्यक्त, महा सत्ता को परब्रह्म कहते हैं। इसी अद्वैत अव्यक्त महा सत्ता में उभय सत्ताएं, जिनसे यह विश्व रचना प्रसूत होती है, एक भाव से रहती हैं अतएव इस महा सत्ता में निमित्त और उपादान कारणों के एक ही रूप से रहने से यह अभिन्न निमित्तोपादान कारण है।

अद्वैत सत्ता से प्रकट हुई २ चेतन सत्ता और जड़ सत्ता जिनको शक्ति और प्रकृति या इनर्जी और मैटर भी कहते हैं, इन की एकता की ओर आधुनिक विज्ञान की प्रगति बढ़ती ही जाती है जिनकी एकता हमारे भारतीय वैज्ञानिक प्राचीन काल में किसी समय प्रमाणित कर चुके थे। प्रकृति या मैटर यदि शक्ति के रूप में परिवर्तित हो जाता है या [illegible] परिवर्तित होकर प्रकृति या मैटर के रूप में प्रकट होती जाती है तो इस [illegible] यह मानना पड़ेगा कि शक्ति या [illegible] प्रकृति या मैटर के बिना उससे पृथक् अनिरपेक्ष स्वसत्ता से रह सकती है। इसके विषय में १९०१ ईस्वी सन् के जनवरी मास के "विज्ञान" पत्र के १६१ पृ० पर से कुछ उद्धरण देना पर्याप्त होगा, जिससे स्पष्ट हो जायगा कि शक्ति प्रकृति से अलग होकर भी रह सकती है और विज्ञान इन दोनों की एकता को प्रमाणित करने के लिए बढ़ रहा है। लिखा है:—

"प्रसिद्ध क्यूरी युगल रेडियम को प्राप्त करते ही मानो नए ही युग का आविर्भाव होगया। तुरन्त ही (कौन्जरवेशन औफ इनर्जी) "शक्ति का अमरत्व" और (कौन्जरवेशन औफ मैटर) "पदार्थ का अमरत्व" नामक सिद्धान्तों के सम्बन्ध में भय उत्पन्न होने लगा कि ये दोनों कहीं लीन न हो जायं। प्रचुर विचार और प्रायोगिक खोज के अनन्तर अब यह निश्चय सा जान पड़ता है कि विद्युत् और प्रकृति (मैटर) में कुछ भेद नहीं है और सभी पदार्थ एक ही वस्तु से बने हैं। परमाणु के विषय में भी यही जान पड़ता है कि परमाणु एक केन्द्र (न्यूक्लियस) पर बना है जो पदार्थमय (मैटीरियल) है, और एक या अधिक (इलैक्ट्रोण) विद्युत्कण भी उसके साथ सम्मिलित हैं जो विद्युत् रूप हैं। रेडियम की क्रिया को ध्यान कर सहज ही में समझ सकते हैं कि विद्युत् कण पदार्थ से अलग होकर विशेष अवस्था में स्वतन्त्रतः आ जा सकते हैं।"

अद्वैत अवस्था से द्वैत अवस्था में प्रकट हुए शक्ति और प्रकृति में शक्ति का नाम ईश्वर है और प्रकृति उसका कार्य क्षेत्र है। शक्ति का प्रकृति पर प्रभुत्व है इसी लिए शक्ति को ईश्वर कहा है। शक्ति और प्रकृति की अद्वैत अवस्था को, उसमें भेद भाव न होने से, शक्तिमान कहते हैं। शक्तिमान् [illegible] अवस्था भी है जब शक्ति प्रकृति के साथ कार्य क्षेत्र में उतर कर सहयोग देती है, परन्तु अद्वैत अवस्था में आंशिक भेद न होने से यह सर्वशक्तिमान् है। अद्वैत अवस्था के एक तत्व का और द्वैत अवस्था के दोनों तत्वों का पृथक् २ ब्रह्म नाम भी है क्योंकि उनमें आगे बढ़ने को, विकसित होने को, अव्यक्त से व्यक्त रूप में होने की ओर झुकाव है।

इस प्रकार अद्वैत अवस्था का विचार करके अब द्वैत तत्वों में से प्रकृति तत्व का परिणाम कैसे होता है और उस प्रकृति तत्व की क्या अवस्था होती है यह पश्चात् दिखाया जायगा।

श्रद्धा के नियम

१. वार्षिक मूल्य भारत में ३॥), विदेश में ६॥), ६ मास का २)।

२. ग्राहक महाशय पत्रव्यवहार करते समय ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।

३. तीन मास से कम समय के यदि पता बदलना हो तो अपने डाकखाने से ही प्रबन्ध करना चाहिए।

४. वी. पी भेजने का नियम नहीं है।

प्रबन्धकर्ता श्रद्धा
डाक० गुरुकुल कांगड़ी (जिला बिजनौर)

श्रद्धा

क्या हार जाओगे ?

करनल हस्वर्ड ने हिमालय की सब से ऊंची चोटी पर चढ़ने और उसकी खोज करने के लिए एक खोजने वालों का दल तय्यार किया है जो शीघ्रता से भारत में आकर कार्य प्रारम्भ करेगा। उसके लिए हजारों रुपया विलायत में एकत्र किया गया है, कार्य है भारत के एक पर्वत की ऊंचाई और स्थिति जानना और कार्य चलाती है एक विदेशी सभा। वहीं के लोग हजारों रुपया व्यय करते हैं और कई कीमती जीवन कार्य के अर्पण करते हैं। यह दशा है, उन लोगों की, जिन्होंने अपने उत्साह साहस और धैर्य से भूमि के अधिकांश पर अपना राज्य फैलाया हुआ है, जिनकी आज्ञा का शब्द हरेक समुद्र के किनारे पर सुनाई दे रहा है।

दूसरी ओर हमारी हालत देखिये। विदेशी पहाड़ को नहीं अपने पहाड़ की ऊंचाई जानने का भी कौन यत्न करता है। यह तो एक बहुत साधारण कार्य है—जब इस में यह दशा है तो फिर भारी परिश्रमों का क्या कहना है जहां जड़ पत्थरों की ऊंचाई नहीं नापनी, अपितु चेतन आत्माओं की दशा से वास्ता है। भारत के जड़ पदार्थों के विषय में ज्ञान प्राप्त करने और परीक्षण करने के लिए विदेशी लोग लाखों रुपया व्यय करने को तय्यार होते हैं, परन्तु धन्य हैं हम लोग जो चेतन आत्माओं के सम्बन्ध में खोज करने का परीक्षण कर के कार्य में दो चार लाख रुपया व्यय करके सोचते हैं कि हमने असाधारण यत्न कर दिया है। आवश्यक है कि सफलता की देवी हमारे सम्मुख हाथ जोड़ कर खड़ी हो जाय। यदि सफलता की देवी विलम्ब करे, या हमें भ्रम हो कि विलम्ब कर रही है तो हम हाथ पाँव छोड़ कर मातम मनाने के लिए बैठ जाते हैं।

गुरुकुल की स्थापना आर्य्यसमाज ने इस हेतु से की थी कि वह शास्त्रों में विहित प्राचीन शिक्षा प्रणाली को समयोचित स्थिति के अनुसार प्रयोग में लाकर देखे और परीक्षण करके संसार को दिखावे कि वह कितनी उत्कृष्ट है। आर्य्यसमाज ब्रह्मचर्य की महिमा गाता है, और चारों आश्रमों का आधार उसी को बताता है। संसार तब तक उसके उपदेश पर विश्वास नहीं कर सकता जब तक वह उसका परीक्षण कर के न दिखा दे। आर्य समाज वेद के सदाचार सम्बन्धी सिद्धान्तों का गौरव संसार को सुनाता है—[illegible] को [illegible] स्वीकार कर सकती हैं, जब उन्हें कहीं व्यवहार में आता देखलें। गुरुकुल एक प्रयोग शाला, और एक परीक्षण शाला है, जिसमें जीवित जागृत आत्माओं को विशेष नियमों के प्रयोगों में डालकर देखा जाता है कि परिणाम कैसा उत्पन्न होता है। वेद का आदेश है और आचार्यों का कथन है कि वह नियम जिनके प्रयोग में उन ही आत्माओं को लाया जाता है संसार का उद्धार करने वाले हैं। जिस संसार ने सदियों तक गिरावट ही गिरावट देखी है, उसके सुधार का परीक्षण एक दो दिन या दस बीस सालों में नहीं हो सकता उसके लिए सदी भर भी परीक्षण करना पड़े, तो आश्चर्य नहीं; परन्तु हम अधीर हैं। हम चाहते हैं कि जिस जाति का सदियों तक अधःपात हुआ है, बीस साल में उसका नया संस्करण निकल आय, जो बीमार सालों से खटिया पर पड़ा क्षीण हो रहा है, वह एक घण्टे में उठ कर भागने लगे।

यह बात निश्चित हो चुकी है कि भारत की भविष्य सन्तान का पुनर्जीवन यदि किसी शिक्षा प्रणालि से सम्भव है तो वह गुरुकुल शिक्षा प्रणाली ही है। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की विशेषताओं की जिन सचाइयों को आज से पूर्व भारत के बुद्धिमान और नीतिमान् उपहास या उपेक्षा की दृष्टि से देखते थे, आज वह उनके सामने सिर झुका रहे हैं। समय सिद्ध कर रहा है कि गुरुकुल के संचालकों ने भारत सन्तान को भारतीय मनुष्य बनाने का जो उपाय सोचा था, वह सर्वोत्तम उपाय है। उपाय यही है—साधन यही है—सफलता देर में हो या शीघ्रता से यह कुछ दशाओं पर निर्भर रखता है, और कुछ उस यत्न की स्थिरता पर निर्भर रखता है जो हम कर रहे हैं।

प्रश्न यह है कि एक ऐसे भारी परीक्षण को आरम्भ करके हम शीघ्र ही उत्साह हीन हो जायंगे ? क्या संसार के उद्धार का बोझा उठाकर हमारी गर्दनें थोड़ी ही देर में झुक जायंगी ? क्या उतने बड़े २ दावेभर के दो चार चोटों में ही हमारे हृदय मुर्दा हो जायंगे ? यदि इन प्रश्नों का उत्तर हां में है तो भारत के भविष्य से निराशा हो जाना चाहिये। और यदि नहीं में है तो गुरुकुलोत्सव पर आर्य्य पुरुषों का उत्साह उसमें साक्षी होगा।

—:o:—

गुरुकुल में क्या देखें ?

हरिद्वार के स्टेशन पर आपको स्वयंसेवक मिलेंगे, वे आपको गुरुकुल पहुंचने के लिये बहुत सहायता देंगे।

(२) स्टेशन से कुछ फासले पर, नहर के पक्के पुल को पार करने के बाद कुछ कदम रखते ही गुरुकुल की मायापुरवाटिका का प्रारम्भ होता है। मायापुरवाटिका में आप आकर के गुरुकुल के विषय में बहुत कुछ पूछ सकते हैं वहां से आप [illegible] का प्रबन्ध कर के उस पर [illegible] रख कर चल दीजिये

[illegible] पुर से सीधी सड़क चलते [illegible] दक्ष के मन्दिर पहुंचेंगे। [illegible] छोटा सा पुल है, उस पर [illegible], सड़क पर चलते हुए कुछ [illegible] पुल पार करके [illegible] आगे चल कर [illegible] के एक पुल [illegible] पुल है। यहां से [illegible] बढ़िये और [illegible] सीधी सड़क

दिखाई देगी। इस पर चलते हुए आगे जहां दो मार्ग होते हैं। "गुरुकुल मार्ग" लिखा हुआ है उसे देख कर आप दाहिने हाथ के रास्ते चले आइये। इस मार्ग पर चलते हुए आपको सब से पूर्व पूछताछ कार्यालय मिलेगा। जो कुछ आपको पूछना हो, वह आप यहां पूछ सकते हैं।

(४) यहां से आगे बढ़ते हुए आपको कैम्प मिलेंगे, जिन में दर्शकों के लिये प्रांत के अनुसार ठहरने का प्रबन्ध किया गया है। आगे बढ़ कर बड़े फाटक के पास कैम्प मैनेजर का स्थान है, और पास ही चटाई, लकड़ी घड़े आदि का स्टोर है जहांसे आप खरीद सकते हैं। यहां से बाईं ओर दूकाने हैं-और इन दूकानों के पास विशेष टिनशेड हैं।

(५) साधारण टिनशेड समाजों की ओर से बनवाये हुए हैं, अतः इनमें उन २ स्थानों के व्यक्ति चाहें अनुसार ठहर सकते हैं, स्त्रियों के लिये दूसरे छप्पर हैं।

(६) दूकानों के पास के रास्ते से अन्दर आने पर मण्डप है-जहां पर उत्सव की सारी कार्यवाही होती है।

(७) मण्डप के पास एक कृषिवाटिका है, जो कि कृषि के ब्रह्मचारियों द्वारा बनाई गई है। इस के अन्दर एक पक्की धर्मशाला देहली के एक दानी महाशय ने बनवाई हुई है। इस में उत्सव के समय मौलाना शौकतअली, मौलाना मुहम्मद-अली हकीम अजमलखां तथा मिस्टर आसफअली आदि के ठहरने का प्रबन्ध है।

(८) इस वाटिका में ही धर्मशाला की पूर्व दिशा में यात्रियों के लिये औषधालय है इस वाटिका के द्वार से निकल कर गोशाला है। जिस में साथ ही वृषभशाला, अश्वशाला है। सामने

(९) संरक्षक कैम्प है। इस में संरक्षक गण ठहरते हैं। आगे चल कर।

(१०) परिवार गृह हैं—जिन में उपाध्याय, अध्यापक तथा अन्य कर्मचारियों के परिवार रहते हैं। परिवार गृह से निकलने के बाद आप सीधे

(११) प्रेस के पास पहुंचेंगे-जिस में कि 'श्रद्धा' छपती है, तथा गुरुकुल का अन्य कार्य होता है। यहां से आगे बढ़ कर

(१२) मुंशीअमनसिंह जी का स्थान हैं। ये वे दानी सज्जन हैं-जिन्हीं ने कि गुरुकुल के लिये भूमि दान दी है, और अपना सर्वस्व ही कुल के लिये अर्पण किया है। ये आज कल शान्तिपूर्वक, जीवन बिताते हैं।

(१३) इस स्थान से दक्षिण की ओर मिस्तरी खाना है, जिसे आप रास्ते से देख सकते हैं। उसे यहां से देखते हुए जब आ ... ओर बढ़ेंगे तो सामने

(१४) लम्बी बैरक दिखाई देगी यह विद्यालय आश्रम है। विद्यालय आश्रम बड़े फाटक से, जो कि प्रति दिन १२ बजे से २ बजे तक खुला मिलेगा—

प्रवेश करके पूर्व की ओर बढ़िये। आपको पास में पूर्व की तरफ एक "भारतवर्ष" का चित्र पृथिवी पर बना हुआ दिखाई देगा।

(१५) आश्रम के मध्य में एक यज्ञशाला है। तथा पूर्व की ओर बढ़ने पर भारत वर्ष का एक चित्र पृथवी पर बना हुआ दीखेगा। यह यथा सम्भव बिल्कुल भौगोलिक स्थिति के अनुसार ही बनाया गया है। सब से प्रथम कार्यालय मिलेगा यहां पर आप हिसाब के सम्बन्ध में सब कुछ पूछ सकते हैं। सारा पत्र व्यवहार यहां से ही होता है। और गुरुकुल का कोष भी यहां ही रखा हुआ है जो दानी महाशय कुछ कृपा करना चाहें, वे यहां पर बड़े प्रेम से दे सकते हैं। कार्यालय के अध्यक्ष तथा हिसाब की देख रेख के अद्वितीय योग्य अधिष्ठाता लाला मुरारीलाल जी यहीं पर मिलेंगे।

(१६) इसके बाद सहायक मुख्याधिष्ठाता जी का कमरा है, जिसमें प्रो० पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति उक्त कार्य करते हैं यहां से गुरुकुल के सम्बन्ध में जो पूछना हो, पूछ सकते हैं।

(१७) यहां से आगे आपको "श्रद्धा" का कार्यालय मिलेगा, जिसमें श्री पं० दीनानाथ जी सिद्धान्तालंकार सम्पादन का कार्य करते हैं।

(१८) यहां से चलकर पोस्ट आफिस गोदाम होते हुए अष्टम श्रेणी को देखते हुए आप भोजन भण्डार में पहुंचेंगे। इसका प्रबन्ध देखकर आप वस्तु भण्डार को देखेंगे इसी के सामने षष्ठ श्रेणी है—तथा साथ में नवम और दशम श्रेणियां हैं।

(१९) वस्तु भण्डार के पास वाले बड़े द्वार में से निकलने पर आप चिकित्सालय में प्रविष्ट होंगे। यहां पर आयुर्वेदिक औषधियां और डाक्टरी दवाइयां दोनों प्रकार की आपको मिलेंगी। दक्षिण की तरफ "रोगी गृह" हैं।

स्थायी चिकित्सक श्री डा० सुखदेव जी हैं; जिनकी योग्यता तथा अनथक लगन से किए हुए कार्य के विषय में इतना ही जानना पर्याप्त होगा कि सैंकड़ों की संख्या में ब्रह्मचारियों के होते हुये २० वर्ष के दीर्घकाल में रोग जन्य मृत्यु दो से अधिक नहीं हो पाईं।

(२०) चिकित्सालय के साथ महाविद्यालय है। महाविद्यालय में प्रवेश करते ही—

क. कृषि के उपाध्याय जी का कमरा है। वर्तमान उपाध्याय श्री प्रो० देवराज जी हैं—जो कि सारे दिन भर बड़ी ही योग्यता से कार्य करते हुये क्रियात्मक उपयोगिता से सहायता पहुंचा रहे हैं। आप बहुत विद्वान् योग्य परिश्रमी तथा उत्साही हैं।

ख. इसके पास ही गुरुकुल का पुस्तकालय है। जिसमें हजारों की संख्या में उत्तमोत्तम ग्रन्थ हैं। निचला विभाग पश्चिमीय साहित्य का है। तथा ऊपर का संस्कृतादि पूर्वीय साहित्य का है।

इसमें भी ऊपर बड़े उत्तम-आकर्षक और अनुपम चित्र टंगे हुए हैं। आर्यसमाज के

पूजित नेताओं के साथ २ दूसरी ओर भारत के शासनकर्ताओं के चित्र हैं। ये चित्र अद्वितीय चित्रकार, वेद्यावगाही, श्री पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर जी के बनाये हुये हैं।

(ग) पुस्तकालय के बाद विद्यालय विभाग का पदार्थ विद्या भवन है। इस में पाश्चात्य विज्ञान की शिक्षोपयोगी आवश्यक सामग्री है। यह रसायन भवन का १ भाग है। रसायन भवन में प्रवेश करते ही जब आप शीशियों पर दृष्टि डालेंगे तो विदित होगा कि उच्च से उच्च विज्ञान की शिक्षा 'हिन्दी भाषा' में कैसे दी जाती है। रसायन के उपाध्याय श्री प्रो० रामशरणदास सक्सेना हैं। यही उपाचार्य का काम करते हैं। इनकी योग्यता प्रयत्न शीलता, विद्वत्ता के विषय में कुछ लिखने की आवश्यकता नहीं है। आप के विषय में यह आशंसा पर्याप्त है कि आपने "हवन" की वैज्ञानिक उपयोगिता परीक्षणों से पता लगाई है, जो कि बड़ा अपूर्व कार्य है। और आर्य्य भाषा में उच्च विज्ञान की पुस्तकें लिखी है।

(२१) यहां गलीमें से गुजरने के बाद विद्यालय के ९ व श्रेणी के कमरे में "शिक्षाप्रदर्शनी" है। इसमें गुरुकुल से प्रकाशित पुस्तकें स्नातकों के लिखे हुए ग्रन्थों के नमूने, स्नातकों द्वारा सम्पादित समाचार पत्रों के नमूने, सुलेख तथा आलेख्य के नमूने भाषा में विज्ञान की शिक्षा के नमूने, विद्यालय तथा महाविद्यालय की पत्रिकाओं के नमूने, गुरुकुल की रिपोर्टें परीक्षाओं के प्रश्न पत्र, तथा उनके उत्तर पत्र हॉकी के साम्मुख्य में जीती हुई विजय ढाल (Shield) आदि वस्तुएं देखने का अवसर मिलेगा।

(२२) यहां से विद्यालय के कमरे देखते हुए आप दक्षिण पार्श्ववर्ती सीढ़ी से ऊपर जाकर दूसरी मञ्जिल में "प्रदर्शिनी" देखेंगे। इस में ब्रह्मचारियों द्वारा सीखे हुए सिलाई के नवीन ढंग, हाथ के बनाये हुए बहुत से समान, डायनेमो आदि पदार्थ हैं। ब्रह्मचारियों की साथ २ वस्तुएं भिक्षापात्र आदि हैं। अन्दर दूसरे कमरे में प्रविष्ट होने पर दीवार पर टंगी हुई चीते की तथा अजगर सांप की खाल है। यह वह चीता है, जो कि हॉकी द्वारा निर्मित किया गया था। मेजों पर आप टेलीफोन, विद्युद्घण्टी, दियासलाई बनाने की प्रक्रिया सब देखेंगे ये टेलीफोन श्री महेश चरणसिंह जी ने जो यहां पर उपाध्याय थे, ब्रह्मचारियों से बनवाये थे उसी के नमूने हैं। बेतार की तारवर्की भी यहां बनाई गई थी। इसका श्रेय भी उक्त योग्य प्रोफेसर जी को है।

भारत हितैषी महामना

श्रीयुत [illegible]

(यह आपने गुरुकुल जन्मोत्सव के शुभावसर पर ब्रह्मचारियों के नाम भेजा था)

"मैं इस समय कार्य में लगे होने के कारण आपके शुभ उत्सव में सम्मलित नहीं हो सकता फिर भी -

"मैं अपनी प्रार्थना, अपने ध्यान, अपने हृदय और अपने प्रेम से इस अवसर पर आपके साथ होऊंगा। परमात्मा सब ब्रह्मचारियों का कल्याण करें।"

—:०:—

यहां से आप ऊपर चढ़कर प्राकृतिक शोभा देखिये। पूर्व की तरफ चण्डी का पहाड़ है—दक्षिण की तरफ गुरुकुल की भूमि की हद तारों से दिखाई देगी, पश्चिम की ओर कला भवन, श्री स्वामी जी महाराज का बंगला, भण्डार, महाविद्यालयाश्रम है। इस सारी अपूर्व शोभा का आनन्द उठा कर आप नीचे आइये—और पश्चिम की ओर बढ़ते हुए सब से पूर्व आपको

(२३) कला भवन मिलेगा।

इसके प्रथम कमरे में ब्रह्मचारियों के द्वारा बनाये हुए चित्र हैं, तथा अन्य सामान है। उसके सामने के कमरे में करघे रखे हुये हैं, जिन पर अभी ही ब्र० हंसराज ने कार्य प्रारम्भ किया है। शेष हुक ऽथ लेथ मशीन पंखा भट्टी, पॉलिश करने की मशीन, छेद करने की मशीन तथा बटन की मशीन है।

(२४) इसे देख कर आप जब आगे बढ़ेंगे तो श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का स्थान है। इसके आहाते में पास २ कमरे हैं, जिन में क्रमशः श्री मोतीलाल जी नेहरू, तथा श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज ठहरेंगे।

(२५) आगे महाविद्यालय भण्डार है उससे होते हुए उत्तर दिग्वर्ती महाविद्यालयाश्रम को पावेंगे। इसे देख कर जब आप उत्तर दिशा के दर्वाजे से बाहिर जावेंगे, तो पूर्व की ओर बाग है जिसके पास व्यायाम शाला है। व्यायाम शाला के पास महाविद्यालय के क्रीड़ा क्षेत्र हैं। ब्रह्मचारियों की खेल में भी इतनी प्रवीणता है कि इसी वर्ष मेरठ की टूर्नामेण्ट में सब को हरा कर वहां से शील्ड (ढाल) लाये हैं। जो कि प्रदर्शनी में रखी है।

क्रीड़ाक्षेत्र को देख कर मुख्यद्वार से आप वाटिका में प्रवेश करेंगे। इस में १ बड़ा कूप है, तथा साथ में ही स्नानागार है, जिसमें सर्व ब्रह्मचारी स्नान करते है। दूसरी तरफ २ टंकियां हैं। जिनमें पानी भरा जाता है, और नलद्वारा भण्डारों में पहुंचाया जाता है।

(२६) वाटिका देख कर आप सन्तोष से यह कह सकते हैं कि आपने सामान्य दृष्टि से गुरुकुल को देख लिया है। आप उत्सवके जितने दिन गुरुकुल में रहिये, पण्डाल में व्याख्यान सुनने के अतिरिक्त शिक्षा प्रदर्शनी, प्रदर्शनी पुस्तकालय आदि का विशेष निरीक्षण करते रहिये।

—:०:—

साहित्य परिचय—

धर्म चरितावली:—अर्थात धर्म संस्थापक रत्नावली—ले० बा० भवानी प्रसाद गुप्त और श्री० सिद्ध गोपाल काव्य तीर्थ। आकार मझोला पृ० सं० १३३, मूल्य १) मात्र हल्दौर जिला बिजनौर के पते से ग्रन्थकर्त्ता से ही प्राप्य।

यह पुस्तक संस्कृत में है जिसमें बुद्ध शंकर, ईसा, मुहम्मद, कबीर, गुरु नानक और स्वामी दयानन्द—इन ७ धर्म संस्थापकों के जीवन चरित्र बड़ी उत्तम, सरल और शुद्ध संस्कृत में लिखे गये हैं। बीच २ में चित्र और सुमधुर श्लोक रचना से पुस्तक का महत्त्व और भी बढ़ गया है। लोग समझते हैं कि संस्कृत मृत प्राय और निर्जीव भाषा है। परन्तु वर्तमान पुस्तक को पढ़ने से इस भ्रम का शीघ्र ही खण्डन हो जाता है। पुस्तक पढ़ने से पता लगता है कि ग्रन्थ प्रणेता ने इसकी रचना में बहुत परिश्रम और खोज से काम लिया है। इस पुस्तक की दूसरी बड़ी विशेषता यह है कि इसमें, साम्प्रदायिक और संकुचित विचारों को अलग रखते हुए, निष्पक्षपात और उदार दृष्टि से काम लिया गया है। वस्तुतः, संस्कृत के पुनरुज्जीवन के लिए नवीन शैली पर रची गई इस प्रकार की पुस्तकों की अत्यन्त आवश्यकता है। ग्रन्थकर्त्ता इस कमी को पूरा करते हुए सब संस्कृत प्रेमियों के धन्यवाद के पात्र बने हैं। ग्रन्थकर्ता ने भूमिका में यह आश्वासन दिलाया है कि वे शीघ्र ही इसी पुस्तक के ढंग पर अष्टाध्यायी, इत्यादि अन्य ग्रन्थ भी शीघ्र ही प्रकाशित करेंगे। वर्तमान पुस्तक गुरुकुलों तथा अन्य जातीय शिक्षणालयों और अंग्रेज़ी स्कूलों में भी पाठ्य पुस्तक के रूप में बहुत उपयोगी हो सकती है। संस्कृत प्रेमियों तथा अन्य सज्जनों को भी इसे खरीद ग्रन्थकर्त्ता का उत्साह बढ़ाना चाहिए।

(पृ० ७ का शेष)

बड़ा सुन्दर उसका साधा। ऐसे ही बहुत से अक्षरों में भिन्नता है। अतः यह आश्रम अलग होने चाहिए। मेरे विचार में २०वीं सदी की बड़ी भारी भूल इन दोनों आश्रमों को मिश्रित रखना है। मेरे विचार में शहर के झगड़ों से बाहिर रहकर प्रकृति के साधन उपलब्ध करना मनुष्य के प्रत्येक बच्चे का अधिकार है।

जातीय शिक्षा की जो लहर इस समय चल रही है वह अधूरी रहेगी यदि इस "जन्माधिकार" पर ध्यान नहीं दिया जावेगा। गुरुकुल इस शिक्षा का सर्वथा पथदर्शक रहेगा, और सबको इससे प्रकाश लेना पड़ेगा। वह दिन कैसा शुभ होगा जबकि हिन्दू मुसलमान इस अद्वितीय नियम को समझ कर इन दोनों आश्रमों के [illegible] में बढ़ने का अवसर देंगे।

भारत के विज्ञान रत्न श्री
जगदीश चन्द्र वसु का
सन्देश—

(यह आपने गुरुकुल जन्मोत्सव के शुभवसर पर ब्रह्मचारियों के नाम भेजा था)

'अपने आपको कठोर नियन्त्रण के जीवन में डालना चाहिए जिस से कर्त्तव्यपालन के समय पीछे कदम न रखना पड़े।

अभिमान और गर्व को छोड़ नम्र तथा सुशील बनो, धार्मिक हो ओ। जैसा कहो वैसा हो कर के दिखाओ निष्कपट जीवन व्यतीत करो। जिस सिद्धान्त को सत्य समझो उसे बाहर भी प्रकट करो।'

७—असभ्यता का लक्षण निर्णय करना अत्यन्त कठिन हो रहा है। यह सभ्य जाति है, यह वचन नानार्थ में प्रयुक्त हो सकता है। आदमियों को पशुवत् शिकार कर के और उनका विध्वंस कर के भी सभ्यता की उपाधि लगाई जा सकती है। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली पुरानी वैदिक सभ्यता के पुनर्जीवित करने का एक मात्र साधन है। वही सभ्यता है जिसका शिरोमणी नियम अहिंसा है।

आइए इस अपूर्व यज्ञ में हम भी यथा शक्ति आहुति डालें जो भारतवर्ष नहीं किन्तु संसार भर के शिशु उद्धार के लिए एक मात्र मार्ग है' नान्यः पन्था विद्यते अयनाय' यही एक मार्ग है अन्य नहीं आईए इस यज्ञ में आहुति डालकर हम पुण्य के भागी बनें।

सार-सूचना

पाठशाला रायकोट का उत्सव सानन्द समाप्त हो गया। १८००) के लगभग एकत्रित हुआ और कुछ जमीन भी दान में मिली। १४ ब्रह्मचारी नये प्रविष्ट किये गए.—

गंगागिरी

२. आगरा से "तिलक" नाम का एक राष्ट्रीय साप्ताहिक पत्र चैत्र १९७८ से निकलना प्रारम्भ होगा। सम्पादक पं० नारायणदत्त शर्मा काश्यप होंगे। वार्षिक मूल्य ३॥) है।

३. "कपामुक्ति" के व्यवस्थापक महोदय सूचना देते हैं कि उनके यहां से प्रकाशित होने वाली "गान्धी रहस्य" नामक पुस्तक महा शिवरात्रि के बदले अब श्री राम नवमी पर प्रकाशित होगी। सर्व साधारण के लिए दाम १) होगा।

४. आर्यसमाज शाहाबाद ज़िला करनाल को पुत्री-पाठशाला के लिए एक योग्य अध्यापिका की आवश्यकता है वेतन योग्यतानुसार दिया जावेगा।

नत्थूलाल वर्मा
मंत्री

५. आगरा में १५ अप्रैल से १८ अप्रैल तक यू० पी० पञ्जाब सनातन धर्म कुमार-सम्मेलन होगा। जिसकी स्वागत समिति का, श्री० बा० कन्नोमल एम० ए० की अध्यक्षता में, संगठन हो चुका है। प्रतिनिधि फीस १) है। सर्व सनातन धर्मावलम्बी युवकों से पधारने की प्रार्थना की गई है।

---

६. गनेशगंज कालपी में फाल्गुन १० शुक्रवार (४ मार्च) को श्री बा० दौलत राम जी के गृह पर ब्र० हरिदत्त जी अध्यापक गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) के उद्योग से गु० कु० जन्मोत्सव मनाया गया। हवन इत्यादि के अनन्तर पं० शिवचरणलाल जी आर्य पुरोहित का व्याख्यान हुआ कुछ धन संग्रह भी हुआ। ब्रह्मचारी जी अन्य स्थानों पर भी गुरुकुल के लिए व्याख्यान दे रहे हैं—

[illegible] शर्मा

गुरुकुल शिक्षा प्रणाली

(ले०-श्री मास्टर सुन्दरसिंह जी बी.ए.बी.टी.)
हैडमास्टर दयानन्द-विद्यालय-दिल्ली)

(१) दार्शनिक विचारों का शिक्षा से गूढ़ सम्बन्ध है, क्यों कि शिक्षा पहले एक आदर्श को निश्चय कर के उसके समीप जाने का यत्न करना है, परन्तु आदर्श का निश्चय दार्शनिक विचारों से होता है,

दो रीति के मनुष्यों के विचार प्राचीन काल से चले आए हैं, उपनिषद् का यह वचन इस बात का साक्षी है "येयम्प्रेते विचिकित्सा मनुष्ये अस्तीत्येके नायमस्तीति चैके एतद् विद्यामनुशिष्टस्त्वया हं वराणामेष वरस्तृतीयः"

गुरुकुल शिक्षाप्रणाली का आधार आस्तिकता है। आत्मा और परमात्मा इस शिक्षाप्रणाली के केन्द्र हैं। प्रकृति की विद्या इन दोनों के साक्षात करने के लिये हैं। वेद, बाईबिल, कुरान इस अंश में इस के साथ मानों इस की पुष्टि के लिये खड़े हैं।

आजकल की उच्च शिक्षा ने नास्तिकता के दार्शनिक विचारों से पूरित इस केन्द्र को हिला दिया है। नास्तिकता की प्रबल लहर यूरुप से उमड़ कर भारत के युवकों के हृदयों में पहुँची। यह वहीं से यहां शान्ति युग के विद्वानों के संपर्क से भारत वर्ष को हुई है। इस संसर्ग ने आस्तिकता जीवन के विश्वास को थोड़ा कर दिया।

[illegible] कृत्रिम वस्तु है। हमारी चेतन शक्ति इस भौतिक शरीर के साथ ही नष्ट हो जाएगी। जीवन का ऐसा क्षण भङ्गुर और उदासीन दृश्य अंकित कर धर्म और शिष्टाचार की जड़ पर ही कुल्हाड़ा मार दिया।

"सत्यमेव जयते नानृतम्"। बहुतेरे पदार्थ विद्या के जानने वालों को मृत्यु के पीछे जीवन दृष्टि गोचर होने लग गया है।

ऋषिदयानन्द ने अपने तपोबल से इसी नास्तिकता का खण्डन किया और मनुष्य के जीवात्मा को संस्कृत करने के लिये वेद में दर्शायी इस शिक्षाप्रणाली का प्रादुर्भाव किया

(२) यह शिक्षाप्रणाली द्विज बनाने का साधन है।

यह और विस्तृत संसार के मध्य में स्कूल का स्थान बताया जाता है। मनुष्य के हृदय का विकास धीरे २ होता है—गृह के संकुचित बन्धनों से निकाल शिशु के हृदय को विशाल बनाना चाहिये। संकुचता ही शूद्रता है। इसको संस्कारों से ही दूर किया जा सकता है। "संस्कारात् द्विज उच्यते"। इस शिक्षा प्रणाली से जातक एक कुल में वास करते हैं, इसमें राजा प्रजा, ऊँच नीच की विभिन्नता दूर हो सकती है, भ्रातृ भाव की पूर्ण लहर चल सकती है, कृष्ण और सुदामा की मित्रता स्थापन की जा सकती है, अभाव की जाति विभिन्नता की समाप्ति हो सकती है, गुरुकुल शिक्षा प्रणाली इस रीति से संसार और विस्तृत संसार के [illegible] मिलाने वाले हैं।

(३) यही शिक्षा प्रणाली है जो शेष सारे आश्रमों को उत्तम बनाती और उनमें पवित्रता का कारण हो सकती है। यदि इस शिक्षा प्रणाली का अध्यापक और विद्यार्थी गण ठीक उपयोग करेंगे तो एकान्त जीवन का आनन्द और संग दोष पूरी रीति से शिशु के हृदय पर अंकित कर दिये जावेंगे। गृहस्थ के कीच में पड़कर भी ब्रह्मचर्याश्रम के विषयरहित आनन्द का स्मरण अवश्य आता रहेगा।

कालिदास ने रघुवंश की प्रशंसा करते हुए कहा था "शैशवेऽभ्यस्त विद्यानां यौवने विषयैषिणां। वार्द्धक्ये मुनिवृत्तीनां योगेनान्ते तनुत्यजाम्"।

आज लोग चकित होते हैं कि वानप्रस्थ और सन्यास की शैली क्यों नहीं चलती। हमारे वृद्ध लोग गृह की चार दीवारी में ही मरते हैं। मुनि वृत्ति भी उत्पन्न नहीं होती, तो योग से तनुत्यज कहाँ से उत्पन्न हों।

"यथा नदी नदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम्। तथैवाश्रमिणः सर्वे गृहस्थे यान्ति संस्थितिम्" इस आश्रम को ज्येष्ठाश्रम कहा गया है और ऋषि दयानन्द ने बाल ब्रह्मचारी सन्यासी होते हुए भी इसकी श्लाघा की है। गृहस्थाश्रम बड़ा किन्तु गिराने वाला आश्रम भी है। यदि पहले के ब्रह्मचर्याश्रम में विषय रहित आनन्द का स्मरण न आवे तो इस कीच में फंसे आत्मा के लिये निकलना असम्भव होगा।

लाहौर में शराब न पीने पर एक प्रसिद्ध टैम्प्रेंस डाक्टर व्याख्यान दे रहा था। वहां प्रबल युक्ति और चित्रों से शराब के नुकसानों को दिखा रहा था कि एक लम्बा युवक खड़ा होगया और कहा कि क्या लैक्चर दे रहे हो, शराब के घूंटे का बदला बताओ"।

क्या "समाधि निर्धूतमलस्य चेतसो निवेशितस्यात्मनि यत् सुखं भवेत्। न शक्यते वर्णयितुं गिरा तदा स्वयं तदन्तः करणेन गृह्यते।

यही सच्चा शराब था जिसका जिक्र बाबा नानक जी ने बाबर से किया था।

यदि इसे सच्चे शराब के घूंटे को सच्चे सहर की सम्भावना है तो गुरुकुल प्रणाली ही में सम्भव है अन्य से नहीं

क्योंकि

४ इनमें सर्वाङ्ग उन्नति की सम्भावना है। भरसक उन्नति को इसमें लक्ष्य रक्खा जाता है। मौजूदा शिक्षा प्रणाली ने इस विषय में बड़ी हानि पहुंचाई है। यह प्रसिद्ध है कि मौजूदा शिक्षा का परिणाम शरीर की हानि है। कहां वह पान जिसको कहीं भी दाग नहीं और कहां वह पान जो [illegible] और से दागी हैं। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली में कुदरती रहने सहने की विधि का अवलम्बन करने के कारण शारीरिक मानसिक सामाजिक और आत्मिकोन्नति का साधन है।

५—शिक्षा का लक्ष्य आचरण बनाना है यदि इस प्रणाली को ठीक बर्ता जावे तो बच्चों में पवित्र रीति से जीने का स्वभाव बन सकता है। शिशु सादा जीवन और उच्च विचार पूर्ण प्रेमी बन सकता है।

६—यह शिक्षा प्रणाली गृहस्थ और ब्रह्मचर्याश्रम को पृथक् कर देती है। गृहस्थ और ब्रह्मचर्याश्रम बहुत से विषयों में विपरीत हैं।

गृहस्थ का भोजन उत्तेजक होना चाहिए, ब्रह्मचारी का शान्तिप्रद। उनका

(शेष पृ० ६ के दूसरे कालम पर)

श्रद्धा
सब के काम की चीज है !!
प्रत्येक भारतीय को पढ़नी चाहिये—
देखिये, हिन्दी के प्रसिद्ध २ पत्र इस पर कैसी राय देते हैं—

गुरुकुल विश्वविद्यालय की मुख पत्रिका 'श्रद्धा' की प्रशंसा प्रायः सभी प्रसिद्ध २ अखबारों ने की है। नमूने के रूप में हम कुछ यहां देते हैं—

प्रभा (कानपुर)—इस में देश प्रसिद्ध स्वामी श्रद्धानन्द जी के विचारों का प्रतिबिम्ब रहता है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि इसका सम्पादन योग्यता पूर्वक होता है और इसकी नीति निर्भीक उदार और सुस्पष्ट है। विशेष बात यह है कि 'श्रद्धा' में विज्ञापन नहीं रहते।

प्रताप (कानपुर) यह साप्ताहिक पत्रिका उनकी (श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी) इस दिल चस्पी का सबूत है। जैसे कि आशा की जा सकती है, आप के सम्पादकीय विचार बड़े गम्भीर होते हैं। जिस तरह आपके सद्धर्मप्रचारक ने हिन्दी संसार में एक अच्छा स्थान प्राप्त किया था, हमें आशा है कि 'श्रद्धा' भी शीघ्र ही उसी तरह अपने प्रेमियों को प्रिय हो जायगी।

चित्रमय जगत् (पूना)— यद्यपि पत्रिका में गुरुकुल शिक्षा पद्धति और आर्यसमाज सम्बन्धी ही विशेष बातें रहती हैं किन्तु साथ ही राजनैतिक चर्चा की भी इस में कमी नहीं। यथार्थ में यही इसकी विशेषता है। इस में 'हण्टर कमेटी' की एवीडेन्स नामक क्रोड पत्र बड़े काम का होता है।

हिन्दी केसरी (...) इस के लेख विचार पूर्वक होते हैं और ... में नई भावना मिलती है। श्रद्धा को पढ़ कर इस बात का सन्तोष होता है कि हमने कुछ नवीनता पाई। सम्पादक की लेखनी में बल है। उनकी भाषा जोरदार और रोचक होती है और पाठकों पर प्रभाव डालने का सामर्थ्य रखती है।

... (कानपुर) इस पत्रिका के लेख बड़े ही भाव पूर्ण तथा धार्मिक होते हैं। जो लोग महात्मा जी के मौलिक विचारों का रसास्वादन करने के इच्छुक हों, उन्हें यह पत्रिका अवश्य पढ़नी चाहिये।

प्रेम (वृन्दावन) इस के सम्पादक गुरुकुल जगत् में अच्छा काम करने वाले तथा पंजाब आन्दोलन में उत्तम भाग लेने वाले श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी सन्यासी हैं। आर्यसिद्धान्तों के विवेचन के अतिरिक्त इस में अन्य सामयिक विषयों पर भी अच्छा प्रकाश और धार्मिक टिप्पणियां छपती हैं।

विश्वमित्र (कलकत्ता) यदि थोड़े में कहना चाहें तो हम कह सकते हैं कि 'श्रद्धा' स्वामी श्रद्धानन्द के धर्मप्रधान राजनीतिक विचारों का प्रचार करने वाली है। मुख्य कर इस में आर्यसमाज के सिद्धान्तों और गुरुकुल शिक्षाप्रणालि के पक्ष की बातें होती हैं, किन्तु उस में राजनीतिक प्रश्नों पर भी धार्मिक और सामाजिक दृष्टि से विचार प्रकट किये जाते हैं।

आर्यसामाजिक क्षेत्र में एक ऐसे पत्र की बड़ी आवश्यकता थी जो राजनीति का "हौआ" समझ उस से दूर न रहे। हम हिन्दी भाषा भाषियों विशेष कर अपने आर्यसमाजी भाइयों से इसे अपनाने का अनुरोध करते हैं।

आर्यमित्र (आगरा) ऐसे समय में जब शुष्क तर्कवाद ने मनुष्यों के हृदय को खोखला बना रक्खा हो 'श्रद्धा' एक महान् उद्देश्य को लेकर हमारे सामने आई है। इस पत्र के द्वारा प्रति सप्ताह श्रद्धा के उपासक सन्यासी का सन्देश मिलता रहेगा। पत्रिका का दूसरा उद्देश्य गुरुकुल शिक्षाप्रणालि का समर्थन तथा मातृभूमि की सेवा होगा।

धर्माभ्युदय (आगरा)— प्रारम्भ में ही फड़कती हुई जोशीली कवितायें रहती हैं। उसके पश्चात् श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी का सामाजिक लेख होता है। फिर अन्याय लेख व सम्पादकीय नोट लिखे हुए रहते हैं। इस में यह बड़ी विशेषता है कि पंजाब की नौकरशाही जिसने निहत्थे भारतियों पर गोलियां चलाई थी, उसकी खूब पोल खोली जाती है। प्रत्येक स्वराज्यवादी को चाहिये कि इस पत्रिका को मंगावे।

भारती (जालन्धर कन्या महाविद्यालय का मुख पत्र)— स्वामी जी धर्म युक्त राजनीति मानने वाले हैं। इस लिए 'श्रद्धा' के लेख और टिप्पणियां सब इसी रंग में रंगी होती हैं। इस में धर्म और राजनीति की चर्चा रहती है। कवितायें बड़ी अच्छी होती हैं।

वैदिक धर्म (औंध) गुरुकुल से 'श्रद्धा' का ही प्रवाह निकलना चाहिये क्यों कि श्रद्धा का विस्तार करने के लिए ही गुरुकुल है। श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी का जीवन श्रद्धा पूर्ण जीवन है, इस लिए "श्रद्धा" निःसन्देह पाठकों को उच्च मार्ग बतलावेगी।

जायजी प्रताप (ग्वालियर):— स्वामी श्रद्धानन्द जी के त्याग और योग्यता को प्रायः सारा देश जानता है। अतएव ऐसे गम्भीर और योग्य व्यक्ति द्वारा सम्पादित पत्र कैसा होना चाहिये—यह बात पाठकों को बताने की आवश्यकता नहीं है। पत्र में धार्मिक लेखों के साथ २ राजनैतिक लेख और समायिक विषयों पर टिप्पणियां भी प्रकाशित होती हैं।

इस लिए यदि आप—श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी के ओजस्वी और भावपूर्ण लेखों का आनन्द लेना चाहते हैं:—

यदि आपः—शिक्षा के केन्द्र गुरुकुल विश्वविद्यालय और इससे सम्बद्ध अन्य शाखाओं के नये से नये और ताज़े से ताज़े समाचार जानना चाहते हैं—

यदि आप—आर्य्य समाज और वैदिक धर्म पर गम्भीर और खोज से लिखे हुए लेख पढ़ना चाहते हैं।

यदि आप—राजनीतिक और समाजिक विषय पर निर्भीक, मार्मिक, नौकरशाही की पोल खोलने वाली और असहयोग को पुष्ट करने वाली टिप्पणी पढ़ना चाहते हैं:—

यदि आप—भड़कीली चटकीली, देशभक्ति पूर्ण कविताओं का रसास्वादन करना चाहते हैं।

तो आप—इस पत्रिका के ग्राहक अवश्य बनिये। अपने आप पढ़िये और अपने इष्ट मित्रों को पढ़ाइये।

इसमें विज्ञापन नहीं लिये जाते। निवेदक

ओ३म्

Registered No A 85

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | २० चैत्र सं० १९७७ वि० / दयानन्दाब्द ३८ | ता० १ अप्रैल सन १९२१ ई० | संख्या ५० भाग १

श्रद्धा

उत्सव पर एक दृष्टि

गुरुकुल का वार्षिकोत्सव आया और बड़ी धूम धाम से मनाया जाकर समाप्त हुआ। गुरुकुल प्रेमी इसकी सफलता को देख प्रसन्न हुए और विरोधियों को अवश्य ही दुख हुआ होगा। हम अगले पृष्ठों पर उत्सव का विस्तृत वर्णन देते हैं जिसे पढ़ कर प्रत्येक सज्जन हमारे इस कथन के साथ पूर्ण सहमत होगा कि यह अपने ढंग का एक ही था।

परन्तु, इस उत्सव की कुछ एक ऐसी असाधारण विशेषतायें थीं जिन पर पृथक् विचार आवश्यक प्रतीत होता है। इन में से कुछ एक का यहां उल्लेख किया जाता है।

(१) उपस्थिति—पिछले दो साल से गुरुकुल में यात्री पर्याप्त संख्या में नहीं आ रहे थे। एक बार तो मार्शल ला के कारण ऐसा हुआ था और दूसरी बार रेलों की कमी के कारण। रेलों का कष्ट तो इस बार भी था और भय भी था कि कहीं उपस्थिति कम न हो। परन्तु यह घटना गुरुकुल प्रेमियों के उत्कृष्ट प्रेम को ही सूचक है कि इतना कष्ट होने पर भी यात्रियों की संख्या आशा से अधिक थी। हिसाब लगाया गया है कि पण्डाल में बैठे हुए १० १२ हजार और इस से बाहर ५। ६ हजार जन संख्या अवश्य थी। सरकार की ओर से अड़चनें उपस्थित किए जाने पर भी इतनी जनता का इकट्ठा होना सिद्ध करता है कि भारतवासी इस शिक्षणालय से कितना अधिक प्रेम करते हैं।

(२) धन—जनता के सहायता से चलने वाले जातीय शिक्षणालयों की बढ़ती संख्या को देख गुरुकुल के अधिकारी, कभी २ चिन्ता में पड़ जाते थे कि गुरुकुल की आर्थिक दशा पर कहीं इसका अनुचित प्रभाव न पड़े। परन्तु इस उत्सव पर इकट्ठी की गई धन राशि ने इसका प्रबल खण्डन कर दिया। इस वर्ष कुल चन्दा १ लाख ६२ हजार हुआ है जिस में से ६० हजार करीब के वायदे भी शामिल हैं। भारत की वर्तमान दशा को दृष्टि में रखते हुए इस धन राशि पर सन्तोष प्रकट किया जा सकता है—

(३) ऋतु—इस उत्सव को सफल बनाने में ऋतु ने बहुत सहायता दी। गत वर्षों की न्याईं इस वर्ष न आंधी आई और नाही वर्षा पड़ी। गुरुकुल के यात्री जानते ही हैं कि उन दिनों यहां पर कितनी जबरदस्त आंधी आती थी जिस से उत्सव में पर्याप्त विघ्न पड़ता था। इस वर्ष इस दैवीय विघ्न का उपस्थित न होना वस्तुतः एक उल्लेखनीय घटना है—

(४) रोग—इस बात का बहुत भय था कि प्लेग वा हैजे का कोई यात्री शिकार न हो जाय क्यों कि पिछले सालों में कई बार यह दुर्घटना हो चुकी थी। गुरुकुल प्रेमी यह सुनकर प्रसन्न होंगे कि इस वर्ष मृत्यु तो क्या ऐसे भयंकर रोग से कोई ग्रस्त भी नहीं हुआ। गुरुकुल के सुयोग्य, अनुभवी और परिश्रमी चिकित्सक श्री डा० सुखदेव जी इस श्रेय के पात्र हैं।

(५) प्रतिष्ठित अतिथि—इस वर्ष जैसे और जितने प्रतिष्ठित अतिथि आये उतने गुरुकुल में कई सालों से नहीं आये थे। लोग कहते हुए प्राय सुने गये कि "इस

हारों में बड़े आदमियों का नाम तो दे देते हैं पर आता कोई नहीं है।" इस शिकायत को दूर करने के लिए ही इस वर्ष इश्तिहारों में बड़े आदमियों में से उन्हीं कुछ एक के नाम दिये गये थे जिनके आने का पक्का निश्चय था। पूना के श्रीयुत केलकर और दिल्ली के हकीम अजमलखां विशेष कारण से और श्री मुहम्मदअली रुग्ण होने के कारण यद्यपि न आसके पर जगद्गुरु १०८ श्री शंकराचार्य जी, त्यागमूर्ति प० मोतीलाल नेहरू, वीर लाजपतराय, उत्साही कुंवर चांदकरण शारदा, साहसी ख० आसफअली, देशभक्त भाई परमानन्द इत्यादि नेताओं के आने और, दूसरी ओर, पंजाब और संयुक्तप्रान्त के प्रसिद्ध २ आर्यसमाजिक नेताओं के आगमन से जनता को इस प्रकार की शिकायत करने का कोई मौका न मिल सका। निःसन्देह इन महानुभावों के हम अत्यन्त अनुगृहीत हैं कि उन्होंने अपने अमूल्य समय में से कुछ समय नष्ट कर यहां आने का कष्ट किया और उत्सव को सफल बनाते हुए हमें कृतार्थ किया।

(६) प्रबन्ध—ब्रह्मचारियों तथा अन्य कार्यकर्ताओं को सिरतोड़ कोशिश के बाद भी गंगा में पानी न आ सका। प्रति वर्ष की न्याईं, इस वर्ष यद्यपि जल की न्यूनता के कारण यात्रियों को कष्ट पहुंचने की सम्भावना थी पर प्रबन्ध की उत्तमता और उत्कृष्टता के कारण यात्री इस का विशेष अनुभव न कर सके। पानी भरी चलती गाड़ियों और कहारों की पर्याप्त संख्या होने के कारण इस कष्ट की मात्रा बहुत कम हो गई थी। यात्रियों के ठहरने के लिए कैम्प पर्याप्त संख्या में बनाये गए थे। बाजार का निरीक्षण भी कुशलता पूर्वक किया गया। प्रबन्ध की इस स्थिरता का श्रेय गुरुकुल प्रेमी और वयो वृद्ध श्री ला० ज्ञानचन्द्र जी महता और प० उमादत्त जी कसूर निवासी को है जिन्होंने अनथक परिश्रम करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। गुरुकुलवासी इन दोनों सज्जनों के अत्यन्त कृतज्ञ हैं।

(७) तालियां नहीं बजीं—

अपने हर्ष और उल्लास को प्रकट करने के लिए श्रोता लोग प्रायः तालियां बजाया करते हैं परन्तु, वस्तुतः; यह पाश्चात्य रिवाज है। हमारे प्राचीन भारत में तालियों के स्थान में "जयध्वनि" हुआ करती थी। गुरुकुल में भी अब तक तालियां ही पीटी जाया करती थीं पर हमारे देश भाई यह सुन प्रसन्न होंगे कि इस रिवाज को तोड़ने के लिए भी गुरुकुल ने ही सब से पहिले कदम उठाया। इस उत्सव की विशेषताओं में यह एक बड़ी महत्व पूर्ण विशेषता है कि तालियों के स्थान में "जयध्वनि" की गई। हम आशा करते हैं कि गुरुकुल से [illegible] इस रिवाज को अपने २ नगरों और ग्रामों में [illegible] का प्रयत्न करेंगे।

(८) बिच्छु का हौआ:—पिछले कई वर्षों से गुरुकुल यात्रियों को तंग कर रहा था। यह हौआ प्रायः रात को उसी समय जनता पर सवार होता था जब कि सब श्रोता शान्ति से किसी भाषण को सुन रहे होते थे। निःसन्देह, यह कुछ एक दिल चलों का करतूत होती थी जो उत्सव को बिगाड़ने के ख्याल से ही आया करते थे। प्रसन्नता का अवसर है कि इस वर्ष बिच्छु का भूत हमारे आर्य भाइयों को तंग नहीं कर सका।

(९) श्री स्वामी जी—निर्बल और अस्वस्थ होने के कारण यद्यपि उत्सव की सारी कार्यवाही में शामिल नहीं हो सके तथापि गुरुकुल में उनकी उपस्थिति मात्र ही यहां के कार्यकर्ताओं को पर्याप्त उत्साहित करती रही। उत्सव के बीच २ में आप दर्शन देते रहते थे जिस से सब को अत्यन्त हर्ष होता था।

इस प्रकार, हम देखते हैं कि यह उत्सव, सब दृष्टि से सफल रहा। गुरुकुल का महत्वपूर्ण यह वार्षिकोत्सव जाता हुआ यहां के कार्य कर्ताओं के उत्साह को द्विगुणित कर गया है और देश भाइयों को आशा करनी चाहिये कि अगला वार्षिकोत्सव इससे भी अधिक सफलता और उत्साह के साथ मनाया जावेगा। ईश्वर ऐसी ही कृपा करें—यही हमारी प्रार्थना है।

गुरुकुल विश्वविद्यालय
का
१९ वां वार्षिकोत्सव
प्रथम दिवस
२० मार्च १९२१

प्रातः काल हवन और भजनों के पश्चात् सरस्वती सम्मेलन की प्रथम बैठक प्रारम्भ हुई। जगद्गुरु श्री शङ्कराचार्य जी ने सभापति के आसन को अलंकृत किया। ब्रह्मचारी वंशधर चतुर्दश श्रेणी ने संस्कृत में एक निबन्ध "कालिदास" विषय पर पढ़ा। निबन्ध में कालिदास संबन्धी प्रायः सब ही प्रश्नों पर प्रकाश डाला गया था। कालिदास कब हुए, इस पर खोजपूर्ण विचार था। निबन्धकर्त्ता ने यह दिखलाने में पूरी सफलता प्राप्त की कि कालिदास ने यद्यपि गृहस्थ सम्बन्धी तथा शृङ्गार पूर्ण वर्णन बहुत किये हैं पर सब वर्णनों में उक्त महाकवि का अभिप्राय मातृशक्ति के लिए उच्चतम सम्मान और श्रद्धामय पूजा का ही है। रघुवंश कुमारसम्भव मेघदूत प्रभृति काव्यों में अनेक श्लोक पूर्वलिखित भाव को दृढ़ करते हैं, जैसे,

"यदुच्यते पार्वति पापवृत्तये, न रूपमित्यव्यभिचारि तद्वचः"

"कालेप्ययं संक्रमितुं द्वितीयं सर्वोपकारक्षममाश्रमं ते"

"महाकवि कालिदास ने अश्वघोष कवि के काव्य से कोई नकल नहीं की है" "कालिदास और भारवि में कविता की दृष्टि से कालिदास का ही स्थान ऊंचा है" इत्यादि बातों को बहुत योग्यता पूर्वक दिखाया गया था।

निबन्ध पढ़े जाने के बाद उस पर विवाद प्रारम्भ हुआ। विवाद में ब्र० धर्मदेव, ब्र० भीमसेन, ब्र० विद्यानिधि, पं० धर्मेन्द्रनाथ तर्कशिरोमणि, पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार पं० कन्हैयालाल जी, कविराज श्री ताराचरण चक्रवर्ती प्रभृति महानुभावों ने अच्छा भाग लिया। तदनन्तर सभापति श्री शंकराचार्य जी ने अपनी वक्तृता प्रारम्भ की, आपने एक घण्टे तक धाराप्रवाह संस्कृत भाषण द्वारा

ओ३म्

Registered No A 8o7

श्रद्धां प्रातर्हवामहे, श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्नकाल में श्रद्धा को बुलाते हैं।"

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि, श्रद्धे श्रद्धापयेह नः।
(ऋ० म० १० सू० १५१, म० ५)
"सूर्य के अस्त समय में श्रद्धा को बुलाते हैं। हे श्रद्धे! (इस समय) हमको श्रद्धामय करो।"

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

प्रति शुक्रवार को प्रकाशित होता है | २० चैत्र सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३८ } ता० १ अप्रैल सन् १९२१ ई० | संख्या ५० भाग १

श्रद्धा

उत्सव पर एक दृष्टि

गुरुकुल का वार्षिकोत्सव आया और बड़ी धूम धाम से मनाया जाकर समाप्त हुआ। गुरुकुल प्रेमी इसकी सफलता को देख प्रसन्न हुए और विरोधियों को अवश्य ही दुख हुआ होगा। हम अगले पृष्ठों पर उत्सव का विस्तृत वर्णन देते हैं जिसे पढ़ कर प्रत्येक सज्जन हमारे इस कथन के साथ पूर्ण सहमत होगा कि यह अपने ढंग का एक ही था।

परन्तु, इस उत्सव की कुछ एक ऐसी असाधारण विशेषतायें थीं जिन पर पृथक् विचार आवश्यक प्रतीत होता है। उन में से कुछ एक का यहां उल्लेख किया जाता है।

(१) उपस्थिति—पिछले दो साल से गुरुकुल में यात्री पर्याप्त संख्या में नहीं आरहे थे। एक बार तो मार्शल ला के कारण ऐसा हुआ था और दूसरी बार रेलों की कमी के कारण। रेलों का कष्ट तो इस बार भी था और भय भी था कि कहीं उपस्थिति कम न हो। परन्तु यह घटना गुरुकुल प्रेमियों के उत्कृष्ट प्रेम की ही सूचक है कि इतना कष्ट होने पर भी यात्रियों की संख्या आशा से अधिक थी। हिसाब लगाया गया है कि पण्डाल में बैठी हुई १०-१२ हजार और उस से बाहर ५।६ हजार जन संख्या अवश्य थी। सरकार की ओर से अड़चनें उपस्थित किए जाने पर भी इतनी जनता का इकट्ठा होना सिद्ध करता है कि भारतवासी इस शिक्षणालय से कितना अधिक प्रेम करते हैं।

(२) धन—जनता के सहायता से चलने वाले जातीय विद्यालयों की बढ़ती संख्या को देख गुरुकुल के अधिकारी, कभी२ चिन्ता में पड़जाते थे कि गुरुकुल की आर्थिक दशा पर कहीं इसका अनुचित प्रभाव न पड़े। परन्तु इस उत्सव पर इकट्ठी की गई धन राशि ने इसका प्रबल खण्डन कर दिया। इस वर्ष कुल चन्दा १ लाख ६२ हजार हुआ है जिस में से ६० हजार करीब के वायदे भी शामिल हैं। भारत की वर्तमान दशा को दृष्टि में रखते हुए इस धन राशि पर सन्तोष प्रकट किया जा सकता है—

(३) ऋतु—इस उत्सव को सफल बनाने में ऋतु ने बहुत सहायता दी। गत वर्षों की न्याईं इस वर्ष न आंधी आई और नाही वर्षा पड़ी। गुरुकुल के यात्री जानते ही हैं कि उन दिनों यहां पर कितनी जबरदस्त आंधी आती थी जिस से उत्सव में पर्याप्त विघ्न पड़ता था। इस वर्ष इस दैवीय विघ्न का उपस्थित न होना वस्तुतः एक उल्लेखनीय घटना है—

(४) रोग—इस बात का बहुत भय था कि प्लेग या हैजे का कोई यात्री शिकार न हो जावे क्यों कि पिछले सालों में कई बार यह दुर्घटना हो चुकी थी। गुरुकुल प्रेमी यह सुनकर प्रसन्न होंगे कि इस वर्ष मृत्यु तो क्या ऐसे भयंकर रोग से कोई ग्रस्त भी नहीं हुआ। गुरुकुल के सुयोग्य अनुभवी और परिश्रमी चिकित्सक श्री डा० सुखदेव जी इस श्रेय के पात्र हैं।

(५) प्रतिष्ठित अतिथि इस वर्ष जैसे और जितने प्रतिष्ठित अतिथि आवे, उतने गुरुकुल में कई सालों से नहीं आवे थे। लोग कहते हुए पाए गये कि "इ[illegible]

द्वारों में कई आदमियों का नाम तो दे देते हैं पर आता कोई नहीं है।" इस शिकायत को दूर करने के लिए ही इस वर्ष इश्तिहारों में बड़े आदमियों में से उन्हीं कुछ एक के नाम दिये गये थे जिनके आने का पक्का निश्चय था। पूना के श्रीयुत केलकर और दिल्ली के हकीम अजमलखां विशेष कारण से और श्री मुहम्मदअली रुग्ण होने के कारण यद्यपि न आसके पर जगद्गुरु १०८ श्री शंकराचार्य जी, त्यागमूर्ति प० मोतीलाल नेहरू, वीर लाजपतराय, उत्साही कुंवर चांदकरण शारदा, साहसी म० आसफअली, देशभक्त भाई परमानन्द इत्यादि नेताओं के आने और, दूसरी ओर, पंजाब और संयुक्तप्रान्त के प्रसिद्ध २ आर्यसमाजिक नेताओं के आगमन से जनता को इस प्रकार की शिकायत करने का कोई मौका न मिल सका। निःसन्देह इन महानुभावों के हम अत्यन्त अनुगृहीत हैं कि उन्होंने अपने अमूल्य समय में से कुछ समय नष्ट कर यहां आने का कष्ट किया और उत्सव को सफल बनाते हुए हमें कृतार्थ किया।

(६) प्रबन्ध—ब्रह्मचारियों तथा अन्य कार्य्यकर्त्ताओं को सिरतोड़ कोशिश के बाद भी गंगा में पानी न आ सका। प्रति वर्ष की न्याई, इस वर्ष यद्यपि जलकी न्यूनता के कारण यात्रियों को कष्ट पहुंचने की सम्भावना थी पर प्रबन्ध की उत्तमता और उत्कृष्टता के कारण यात्री इस का विशेष अनुभव न कर सके। पानी भरी चलती गाड़ियों और कहारों की पर्याप्त संख्या होने के कारण इस कष्ट की मात्रा बहुत कम हो गई थी। यात्रियों के ठहरने के लिए कैम्प पर्याप्त संख्या में बनाये गए थे। बाजार का निरीक्षण भी कुशलता पूर्वक किया गया। प्रबन्ध की इस स्थिरता का श्रेय गुरुकुल प्रेमी और वयोवृद्ध श्री ला० ज्ञानचन्द्र जी महता और प० रामदत्त जी कसूर निवासी को है जिन्होंने अनथक परिश्रम करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। गुरुकुलवासी इन दोनों सज्जनों के अत्यन्त कृतज्ञ हैं।

(७) तालियां नहीं बजीं:—

अपने हर्ष और उल्लास को प्रकट करने के लिए श्रोता लोग प्रायः तालियां बजाया करते हैं परन्तु, वस्तुतः; यह पाश्चात्य रिवाज है। हमारे प्राचीन भारत में तालियों के स्थान में "जय ध्वनि" हुआ करती थी। गुरुकुल में भी अब तक तालियां ही पीटी जाया करती थीं पर हमारे देश भाई यह सुन प्रसन्न होंगे कि इस रिवाज को तोड़ने के लिए भी गुरुकुल ने ही सब से पहिले कदम उठाया। इस उत्सव की विशेषताओं में यह एक बड़ी महत्व पूर्ण विशेषता है कि तालियों के स्थान में "जयध्वनि" की गई। हम आशा करते हैं कि गुरुकुल से लौटे भाई इस रिवाज को अपने २ नगरों और ग्रामों में चलाने का प्रयत्न करेंगे।

(८) बिच्छु का हौआ—पिछले कई वर्षों से गुरुकुल यात्रियों को तंग कर रहा था। यह हौआ प्रायः रात को उसी समय जनता पर सवार होता था जब कि सब श्रोता शान्ति से किसी भाषण को सुन रहे होते थे। निःसन्देह, यह कुछ एक दिल चलों की करतूत होती थी जो उत्सव को बिगाड़ने के ख्याल से ही आया करते थे। प्रसन्नता का अवसर है कि इस वर्ष बिच्छु का भूत हमारे आर्य भाइयों को तंग नहीं कर सका।

(९) श्री स्वामी जी—निर्बल और अस्वस्थ होने के कारण यद्यपि उत्सव की सारी कार्यवाही में शामिल नहीं हो सके तथापि गुरुकुल में उनकी उपस्थिति मात्र ही यहां के कार्य्यकर्त्ताओं को पर्याप्त उत्साहित करती रही। उत्सव के बीच २ में आप दर्शन देते रहते थे जिस से सब को अत्यन्त हर्ष होता था।

इस प्रकार, हम देखते हैं कि यह उत्सव, सब दृष्टि से सफल रहा। गुरुकुल का महत्वपूर्ण यह वार्षिकोत्सव जाता हुआ यहां के कार्य कर्त्ताओं के उत्साह को द्विगुणित कर गया है और देश भाइयों को आशा करनी चाहिये कि अगला वार्षिकोत्सव इससे भी अधिक सफलता और उत्साह के साथ मनाया जावेगा। ईश्वर ऐसी ही कृपा करें—यही हमारी प्रार्थना है।

गुरुकुल विश्वविद्यालय

का

१९वां वार्षिकोत्सव

प्रथम दिवस

२० मार्च १९२१

प्रातः काल हवन और भजनों के पश्चात् सरस्वती सम्मेलन की प्रथम बैठक प्रारम्भ हुई। जगद्गुरु श्री शङ्कराचार्य जी ने सभापति के आसन को अलंकृत किया। ब्रह्मचारी वंशधर चतुर्वेदश्रेणी ने संस्कृत में पूर्ण निबन्ध "कालिदास" विषय पर पढ़ा। निबन्ध में कालिदास संबन्धी प्रायः सब ही प्रश्नों पर प्रकाश डाला गया था। कालिदास कब हुए, इस पर खोजपूर्ण विचार था। निबन्धकर्त्ता ने यह दिखलाने में पूरी सफलता प्राप्त की कि कालिदास ने यद्यपि गृहस्थ सम्बन्धी तथा शृङ्गार पूर्ण वर्णन बहुत किये हैं पर सबवर्णनों में उक्त महाकवि का अभिप्राय मातृशक्ति के लिए उच्चतम सन्मान और श्रद्धामय पूजा का ही है। रघुवंश कुमारसम्भव मेघदूत प्रभृति काव्यों में अनेक श्लोक पूर्वलिखित भाव को पुष्ट करते हैं, जैसे,

"यदुच्यते पार्वति पापवृत्तये, न रूपमित्यव्यभिचारितद्वचः"

"कालेष्वपि संक्रमितुं द्वितीयं सर्वोपकारक्षममाश्रमं ते"

"महाकवि कालिदास ने अश्वघोष कवि के काव्य से कोई नकल नहीं की है।" "कालिदास और भारवि में कविता की दृष्टि से कालिदास का ही स्थान ऊंचा है" इत्यादि बातों को बहुत योग्यता पूर्वक दिखाया गया था।

निबन्ध पढ़े जाने के बाद उस पर विवाद प्रारम्भ हुआ। विवाद में ब्र० धर्मदेव, ब्र० भीमसेन, ब्र० विद्यानिधि, प० धर्मेन्द्रनाथ तर्कशिरोमणि, पं० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार पं० कन्हैयालाल जी, कविराज श्री ताराचरण चक्रवर्ती प्रभृति महानुभावों ने अच्छा भाग लिया। तदनन्तर सभापति श्री शंकराचार्य जी ने अपनी वक्तृता आरम्भ की, आपने एक घण्टे तक धाराप्रवाह संस्कृत भाषण द्वारा

श्रोताओं को विस्मित और चकित किए रक्खा। काव्यशास्त्र के विषय में आपने अपूर्व भावनाएं प्रकाशित कीं। आपके व्याख्यान को सुनकर प्रत्येक श्रोता यही कहता था कि प्रत्येक शास्त्र में गुरुकुल जी की अद्भुत गति है।

"मध्याह्न"

भजनों के अनन्तर श्री पं० पूर्णानन्द जी का व्याख्यान प्रारम्भ हुआ आपने कहा कि संसार को साधारणतया और भारतवर्ष को विशेषतया जितनी हानि वेदान्तवाद से हुई है उतनी अन्य किसी भी मत या सम्प्रदाय से नहीं हुई। वेदान्तवाद ने भारत को बिलकुल अकर्मण्य और भीरु बना दिया है। आपने "विद्याञ्चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह" और "सम्भूतिं च विनाशं च" इन मन्त्रों की व्याख्या जो शंकराचार्य जी ने कर्मनिषेधपरक की है उसकी भली प्रकार आलोचना की और सिद्ध किया कि उपनिषदों से नैष्कर्म्यवाद कदापि प्रतिपादित नहीं होता है।

"ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्—तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः मा गृधः कस्यस्विद्धनम्" इस मन्त्र में तथा "कुर्वन्नेवेह कर्माणि" इस मन्त्र में, वेद में कर्मभर कार्य करने और उन्नति करने की आज्ञा दी है वेद का आदेश है कि अत्याचार मत करो पर अत्याचारी से डरो भी मत। वेद की वास्तव में यह आज्ञा है कि संसार में फलो फूलो, सुखी रहो, बलवान् होओ, शक्तिशाली तथा धनशाली बनो और चक्रवर्ती राज्य को धर्म के साथ उपभोग करो—वेद में कहीं भी कमजोर पराजित और अकर्मण्य होने की आज्ञा नहीं है। अन्त में आपने शंकराचार्य जी की विद्वत्ता को हर प्रकार का सम्मान देते हुए यह घोषणा की कि यदि किसी को इस प्रकार के अकर्मण्यता विधायक मन्त्र कहीं भी वेदों में दिखाई दें—तो वे जब चाहें मुझसे मिलकर विचार कर सकते हैं।

आपके अनन्तर सरस्वती सम्मेलन की दूसरी बैठक प्रारम्भ हुई। इसमें वैदिक सिद्धान्तों पर दो ब्रह्मचारियों ने अपने निबन्ध पढ़े। सभापति के आसन को श्री पण्डित सातवलेकर जी ने ग्रहण किया प्रथम निबन्ध ब्रह्मचारी धर्मदेव जी का "ईसाईमत तथा वैदिकधर्म की तुलना" इस विषय पर था। निबन्ध में निम्न तीन बातों पर प्रकाश डाला गया था। "१) ईसाईमत और वैदिक धर्म की समानताएं "२) ईसाईमत और वैदिक धर्म की भिन्नतायें। "३) दोनों मतों में किस धर्म की बात हेय और किसकी उपादेय है और क्यों। प्रत्येक विषय पर बोलते हुए ब्रह्मचारी जी ने वेद तथा बाइबिल के प्रमाण उपस्थित किये और सिद्ध किया कि ईसाईमत प्राचीन वैदिक धर्म का ही एक बिगड़ा हुआ [illegible] है।

द्वितीय निबन्ध ब्रह्मचारी [illegible] दत्त जी का "पुनर्जन्म" विषय पर हुआ था। आपने कहा कि आत्मा की नित्यता को स्वीकार करते हुए पुनर्जन्म का स्वीकार करना आवश्यक है।

आपने पाश्चात्य विद्वानों के विचारों को दिखलाते हुए, यह सिद्ध किया कि पाश्चात्य विचारक और वैज्ञानिक लोग अब इसी सिद्धान्त को मानने लगे हैं। पुनर्जन्म सिद्ध करने के लिए आपने अनेक वेदमन्त्रों को उद्धृत किया।

तदनन्तर सभापति जी ने अपने छोटे से भाषण में बतलाया कि वेद ही सब मतों और सम्प्रदायों का मूल है आपने कहा कि ईसाईमत की अन्तिम प्रार्थनायें जिनके भाव बहुत उच्च हैं वेदमन्त्रों के अनुवाद मात्र हैं मुसलमानों की नमाज का पहिला कलमा जो कि बहुत ही पवित्र समझा जाता है, वेद के, "अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्" इस मन्त्र का अक्षरशः अनुवाद मात्र है।

इसके पश्चात् ५½ बजे से गुरुकुल की हॉकी के प्रथमदल और साहनपुर स्टेट की हॉकी पार्टी का सामुख्य हुआ। क्रीडाक्षेत्र के चारों ओर दर्शकों की बड़ी भीड़ थी सामुख्य में दर्शकों और खिलाड़ियों दोनों ने ही बहुत आनन्द प्राप्त किया--गुरुकुलदल ने साहनपुरदल पर एक गोल से जय प्राप्त की।

रात्री भजनों के पश्चात् श्री कुंवर चान्दकरण शारदा का व्याख्यान हुआ। आपके उठते ही हर्षध्वनि हुई। श्रोताओं ने "वैदिक धर्म की जय" "महात्मा गान्धी की जय" "स्वामी श्रद्धानन्द की जय" आदि से पण्डाल को गुंजा दिया। आपके व्याख्यान का सार यह था कि,

प्राचीन समय महाराज अश्वपति ने अभिमान कहा था कि मेरे राज्य में कोई भी चोर, निर्धनी, शराबी, हवन न करने वाला, अपढ़, व्यभिचारी नहीं है शोक की बात है कि आज उसी भारत के निवासी हम लोगों में ये सभी बुराइयां मौजूद हैं।

यहां पर रोगों का घर है लाखों और करोड़ों मनुष्य प्रतिवर्ष यहां मरते हैं हैजा, इन्फ्लुएंजा, प्लेग दुर्भिक्ष के मारे प्रजा का सत्यानाश हो रहा है। गवर्नमेंट के नियम इस तरह के हैं कि पूर्ण रीति से सत्य बोला ही नहीं जा सकता है। रौलट एक्ट, प्रेस ऐक्ट, इत्यादि अनेक कानून सत्य के विरोधी हैं, मनुष्य का जो अधिकार है वेदानुकूल जो मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है उसकी प्राप्ति में बाधक है, ऐसी अवस्था में प्रत्येक व्यक्ति का काम है कि वह इस गवर्नमेंट की आज्ञा के सामने सबसे बड़े सम्राट परमेश्वर की आज्ञाओं का तिरस्कार न करे। किसी भी व्यक्ति या सरकार की वह आज्ञा न माननी चाहिए जो कि धर्म के विरुद्ध हैं, वेद के तात्पर्य के विरुद्ध हैं। दुनियावी सरकार की आज्ञा न मानने के कारण आपको अनेक शारीरिक कष्ट देवें उनका आप स्वागत कीजिए पर किसी भी प्रेस एक्ट रौलट एक्ट या अन्य किसी एक्ट के डर से सत्य का तिरस्कार न कीजिए। प्राचीन समय में देश में हवन न करने वाले न मिलते थे, पर आजकल मंहगी है हवन कौन करे। खाने को नहीं मिलता हवन कैसे हो। हमारे देश में खेती हुई, अनाज हुआ पर वह सब बाहर भेज दिया गया, मेहनत हमने की पर पाया कुछ भी नहीं। यह हम पर अत्याचार है, वेद की आज्ञा है कि किसी पर अत्याचार मत करो, पर किसी के भी अन्याय को सहन मत करो, किसी को मत ठगो पर ठगे भी मत जाओ। यह वैदिकधर्म नहीं है कि आप का प

गुज़र रहा हो, आप का देश तबाह होरहा हो, आपके सामने और आप पर हो अनेक अत्याचार होरहे हों और आप उस से नीचे गुज़रता और हवन में ही लगे रहें। यह पाप है कायरता है बेदखिन्दू है। अन्त में आपने देश के नवयुवकों को सम्बोधन करके कहा कि देश की आशायें एकमात्र आप पर ही लगी हुई हैं। स्वराज्य प्राप्त होना तो आपके ही पुरुषार्थ और तप से होगा, किसी की कृपा से नहीं -आप अपने देश के प्रति अपनी जिम्मेदारी को समझिये, अपने को निरे छोकरे मत समझिये, संसार के सभी देशों में नवयुवकों ने ही स्वतन्त्रता को उत्पन्न किया है आप लोग अपनी जन्मभूमि को पूर्ण स्वतन्त्रता और स्वराज्य दिलाने का यत्न तन मन धन से कीजिए। परमेश्वर अवश्यमेव आपको सहायता करेंगे।"

आपके अनन्तर श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज का मनोहर उपदेश हुआ जिसे जनता ने दत्तचित्त से सुना। उपदेश के अनन्तर चन्द्र कवि जी की ओजस्विनी कविता तथा गतियाँ हुई जिन्हें जनता ने बहुत पसन्द किया।

द्वितीयदिन

प्रात:—

हवन और भजनों से कार्यवाही प्रारम्भ हुई। दिल्ली ट्राम की हड़ताल के कारण इस समय के निश्चित व्याख्याता मि० आसफअली साहब में अवतक सम्मिलित न हो सके थे, अतः इस समय की कार्यवाही इस प्रकार हुई।

अलीगढ़ नेशनल कालिज के प्रिंसिपल मौलाना मुहम्मदअली ने ४ मुसलमान स्वयं सेवक गुरुकुल में सेवा का काम करने को उत्सव पर भेजे थे। आज का प्रथम व्याख्यान उन्हीं स्वयं सेवकों में से एक महाशय का हुआ। व्याख्यान को जनता ने बहुत पसन्द किया।

द्वितीय व्याख्यान कलकत्ते के प्रसिद्ध कविराज श्री ताराचन्द्र चक्रवर्ती का "आयुर्वेद" इस विषय पर हुआ। व्याख्याता महोदय ने बतलाया कि आज कल, अनेक कारणों से आयुर्वेद की अवनति हो गई है—जिन कारणों में राज्य की सहायता और सहानुभूति का अभाव ही मुख्य हैं। आपने अनेक उदाहरणों के साथ सिद्ध किया कि जहां डाक्टरी चिकित्सा असफल हो जाती है वैद्यक चिकित्सा प्राण लाभ कर सिद्ध होती है, मृत्यु का मुनियम्मक अब तक पता नहीं है यद्यपि डाक्टर बहुत यत्न कर चुके हैं। आपने आयुर्वेद की अवनति के कारणों पर उत्तम प्रकाश डाला और उसके निराकरण की विधियों का उत्तम अनुसन्धान किया और बतलाया कि डाक्टरी की भी उत्तम बातें हम लेने को तैयार हैं यदि वे हमारे यहां न हों। कविराज जी की भाषा अत्यन्त सरल और हार्दिक भाव का जनता पर अत्युत्तम प्रभाव पड़ा।

तृतीय व्याख्यान देहली के सुप्रसिद्ध महाशय ज्ञानचन्द्र जी का "आर्यसमाज की स्थिति" इस पर हुआ। आपने इस नाम की एक पुस्तक लिखी है, उसी को आपने पढ़ सुनाया।

चतुर्थ व्याख्यान पं० धर्मेन्द्रनाथ जी तर्क शिरोमणि का था आपका विषय था "कुरान बाइबिल के रत्न"। आपकी उच्च भाषा ओजस्वी शब्द और व्याख्यानशैली ने जनता को आनन्दित कर दिया—

मध्याह्न —

आज इस समय तीन व्याख्यान सुप्रसिद्ध वक्ताओं के हुये। प्रथम व्याख्यान श्री स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज का हुआ, इसका विषय था- "मनुष्य तथा पशु में भेद"। आपके उपदेश को जनता ने बड़े ध्यान से सुना—आप के ओजस्वी भाषण का श्रोताओं पर अत्युत्तम प्रभाव हुआ हम आगामी अंक में उस व्याख्यान को वैसा का वैसा ही पाठकों की भेंट करने का यत्न करेंगे। द्वितीय व्याख्यान श्री प्रोफेसर रामदेव जी का था, आपने निम्नलिखित भाषण किया।

"हिन्दु धर्म बिलकुल नया नहीं है, शुद्ध वैदिक धर्म का बिगड़ा स्वरूप तो यह है ही, पर इस में समय समय पर भिन्न २ मतों के प्रभाव पड़ते रहे हैं, बौद्धों के प्रभाव इस धर्म पर पड़े हैं, जैनी वालों ने यह प्रमाणित है—भिन्न सम्प्रदाय के एकत्रित रहने के कारण एक धर्म का दूसरे पर प्रभाव स्वाभाविक रीति से पड़ता ही है—जो धर्म प्रबल होता है निर्बल पर उसका असर स्पष्ट दिखाई देता है। ऋषिदयानन्द ने आर्यसमाज का पुनरुद्धार करते हुए इस वैदिक धर्म को प्रबल धर्म बनाया है उनके थोड़े से काल में ही संसार पर वैदिक धर्म का अद्भुत प्रभाव हुआ है—हिन्दुओं पर जो असर आर्यसमाज का हुआ है वह स्पष्ट ही दीखता है। आज हिन्दु विश्वविद्यालय में वह किताबें धर्म ग्रन्थ के तौर पर पढ़ाई जाती हैं जिन में कहा है कि सब मतों के मानने वाले शुद्ध हो सकते हैं और उन्हें अपने में न मिलाने से पाप होता है।

मुसलमानों के नेता सर सैयद अहमद-खां ने ऋषिदयानन्द के उपदेशों को सुन कर मुसलमानों को यह शिक्षा दी कि दोज़ख और बहिश्त आसमां या नीचे आसमान पर नहीं है पर अपने ही दिल में है।

तमाम वेद के स्वाध्याय करने वाले लोग आज स्वामी दयानन्द और आर्यसमाज का लोहा मान रहे हैं। मैक्समूलर ने पहिले स्वामी जी कृत वेदभाष्य की निन्दा योरोप में हुई थी पर आज कई योरोपीय विद्वान् वेद मन्त्रों की व्याख्या करते हुए उन में उन्नत विज्ञान को प्रकाशित दिखाते हैं। अभी मि० [illegible] ने एक वेद मन्त्र की व्याख्या की है और लिखा है कि वेद कहता है कि ($H_2+O=H_2O$ = water) हाइड्रोजन और ऑक्सिजन दो गैसों को मिलाने से पानी बनता है।

आर्कबिशप और पादरियों तक ऋषिदयानन्द की स्तुति और आर्यसमाज पर -ऋषि के वेदभाष्य को आर्कबिशप अन्य सब व्याख्याताओं की अपेक्षा अधिक प्रामाणिक मानते हैं, सारांश यह है कि ऋषिदयानन्द और आर्यसमाज की स्तुति करने को संसार के सभी बड़े पुरुष तय्यार हैं।

देवियो और सज्जनो ! अब प्रश्न है कि ऐसा होते हुये भी फिर क्यों वैदिक धर्म फैलता नहीं, क्यों वैदिक धर्म संकुचित

और संयुक्त प्रांत के हिन्दुओं तक ही सीमित है क्यों इसके अनुयायी करोड़ों की संख्या में नहीं हैं। उत्तर यह है कि आर्यसमाजी लोग प्रचार का काम बहुत ही थोड़ा करते है। वर्तमान राजनैतिक लहर ने बहुत से आर्यभाइयों की सब शक्तियों को धर्म प्रचार से पृथक् कर दिया है। मैं अपने इन भाइयों से पूछता हूं कि क्यों व धर्म प्रचार के काम में ढील करते हैं, उत्तर मिलता है कि जब तक पूर्ण स्वराज्य नहीं मिलता है, तब तक धर्म प्रचार ठीक हो नहीं सकता, अतः पहिले स्वराज्य मिलना चाहिए। यह युक्ति बिलकुल निराधार, है इतिहास इसका साक्षी नहीं है। ईसा एक दास जाति का व्यक्ति था, उसने पराधीनता में ही धर्म प्रचार किया और धर्म प्रचार की वृद्धि के कारण ही उन्हें स्वतन्त्रता प्राप्त हुई। ईसाई धर्म का बल यहां तक बढ़ा कि कोन्सटैन्टाइन को भी ईसाई बनना पड़ा। शिवाजी के समय हिन्दु जाति पराधीन थी, हिन्दु धर्म का जोश फूंक कर धर्म के सहारे ही शिवाजी ने महाराष्ट्र में हिन्दुराज्य स्थापित किया। गुरुगोविन्दसिंह ने सिक्ख धर्म के सहारे ही पंजाब में स्वराज्य की स्थापना की। वास्तविक बात तो इतिहास से यह सिद्ध होती है कि पहिले धर्म प्रचार फिर देश की स्वतन्त्रता, न कि पहिले स्वराज्य और फिर धर्म प्रचार। इस लिए आवश्यकता है कि आर्यभाई अपनी कुल शक्तियां धर्म प्रचार में लगावें।

अभी तक आर्यसमाज केवल एक सम्प्रदाय के रूप में रहा है—वह देश का प्राकृत भाग है, उसको एक Political body बनाना कदापि ठीक नहीं। मैं मानता हूं कि वैदिक धर्म में राजनीति सम्मिलित है यदि आपको राजनैतिक लहर में काम करना ही है तो पहिले विद्यार्य सभा, धर्मार्य सभा, राजार्य सभा, का निर्माण कर दीजिए। फिर आर्यों की राजार्य सभा बड़ी सफलता से राजनैतिक आन्दोलन करे उस में कोई बुराई नहीं है। अन्यथा जैसे सिक्ख जाति एक अपूर्ण जाति है आर्यसमाज भी वैसा ही केश कृपाण रखने वाला एक सिक्ख बन जावेगा। इस लिए प्रत्येक समाजी का कर्तव्य धर्म प्रचार करना है। आप लोग पहिले आर्यसमाजी बनें, फिर भारतीय हूजिये। आप मौलाना मोहम्मदअली की जय पुकारते हैं वे मोहम्मदअली कहते हैं कि मैं पहले मुसल्मान हूं फिर भारतीय हूं। इस लिए समाज का अपना प्रचार का काम फिर से आज से प्रारम्भ करना चाहिए, इसी में भलाई है।

आपके पश्चात् जगद्गुरु श्री शंकराचार्य जी ने निम्नलिखित व्याख्यान संस्कृत में दिया। आपका विषय था "भारतीय शिक्षा"। आपने कहाः—

आजकल हमारी शिक्षा को सरकार ने एक "भारतीय शिक्षा विभाग" के आधीन किया हुआ है। उसके द्वारा स्कूलों कालिजों में हमें जो इल्म मिलता है वह न तो भारतीय है और न उस में शिक्षा ही है।

जिस शिक्षा द्वारा जान बूझ कर हिन्दु मुसल्मानों को लड़ाया जावे, जिस में प्राचीन महापुरुषों को असभ्य बर्बर कहा जावे और जिस में हमारे दिमागों को अंग्रेजों का दास बना दिया जावे वह कभी भी भारतीय नहीं हो सकती है। हैदराबाद मैसूर काश्मीर में कभी हिन्दु मुसल्मानों का झगड़ा होता ही नहीं है, अतः यह ठीक है कि हिन्दु मुसल्मानों की लड़ाई सरकार की अभीष्ट है। और उनका इस लड़ाई से सदा सम्बन्ध रहता है।

यह तालीम शिक्षा भी नहीं है। इस में गुरुशिष्य का सम्बन्ध कुछ भी नहीं है। दुकानें खुली हैं। रुपया दे जाओ और प्रोफेसर साहब का लेक्चर सुन जाओ। गुरु का शिष्य की उन्नति का ख्याल स्वप्न में भी नहीं हो सकता है उसे अपना महावारी तनख्वाह चाहिए, मैं कहता हूं कि इन स्कूलों के गुरु गुरु नहीं हैं ठग हैं।

(वे Teacher नहीं हैं cheater हैं। इस पढ़ाई में बालक की शक्तियों को (Develop) नहीं किया जाता है, उसके अन्दर कैसी प्रकृति है इस का कुछ भी ध्यान नहीं रखा जाता; पर उसे एक इंगलिश इतिहास की किताब घोट कर पिला दी जाती है—उन्हें शेक्सपीयर की कविता पढ़ाई जाती है जो उसके दिमाग के लिए भारतीय न होने के कारण एक बाह्यपदार्थ (Foreign matter) होती हैं। इस बाह्यपदार्थ या foreign matter को जबरदस्ती विद्यार्थी के दिमाग में भर दिया जाता है। इसी लिए मैं प्रायः कहा करता हूं कि यह शिक्षा Education नहीं किन्तु Injection है। इन कालिजों में Injection के दो प्रकार हैं एक तो परीक्षायें; जिनको मैं अनावश्यक तथा हानिकारी मानता हूं। दूसरे बेन्त लगाना जिसका समर्थक मुश्किल से कोई होगा।

इस लिए आप इस बात पर विचार कीजिए कि प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली ही सर्वोत्तम तथा आदर्श है। विद्या का दान करने वाले गुरु में न तो धन की लालसा हो न किसी से राग व द्वेष तब ही शिक्षा का ठीक प्रचार हो सकता है। जहां शिक्षणालय गुरुकुल शिक्षा पद्धति पर चल रहे हैं, जहां आदर्श गुरु तथा सद्गुणी शिष्य हों, जहां "धर्म" ही एक मात्र शासक हो, वहां ही उत्तम आदर्श वेद पुनोदित शिक्षा दी जा सकती है और कहीं नहीं। मुझे इस गुरुकुल विश्वविद्यालय को देख कर बड़ी प्रसन्नता हुई है। जो लोग इसके प्रबन्धक संचालक और सच्चे सेवक हैं वे निश्चय ही इस लोक और स्वर्गलोक में परमेश्वर के अनन्त आशीर्वादों के पात्र बनेंगे।

"रात्रि"

रात्रि को प्रथम व्याख्यान श्री गंगाप्रसाद जी M. A. का हुआ। व्याख्यान अपूर्व था।

तदनन्तर श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज का धर्मोपदेश हुआ। आपने अपने $1\frac{3}{4}$ घण्टे के व्याख्यान में जनता को निश्चल कर दिया था। आपके मुख से निकले ओजस्वी शब्दों में एक अद्भुत चमत्कार था—आपने "उत्तिष्ठत जाग्रत" इस भाव से अपने उपदेश को यों प्रारम्भ किया,—

'क्रिया में जीवन और अकर्मण्यता में मृत्यु है—क्रिया से ज्ञान और अक्रिया से अज्ञान और अहत्व की प्राप्ति होती हैं—माया में पड़े हुए जीव दुःख में सुख और परमानन्द को दुःख समझे हुए हैं। भारतीय ऋषि सन्तान भी माया के उसी चक्कर में फंस गई है और अपने महत्व को न समझकर उन प्रकृतिवादियों से डर रही है जो कमजोर हैं जो भोगों के कीड़े हैं। अपने महत्व को न

और मथुरा प्रान्त के हिन्दुओं तक ही सीमित है क्यों इसके अनुयायी करोड़ों की संख्या में नहीं हैं। उत्तर यह है कि आर्यसमाजी लोग प्रचार का काम बहुत ही थोड़ा करते हैं। वर्तमान राजनैतिक लहर ने बहुत से आर्यसमाजियों की सब शक्तियों को धर्म प्रचार से पृथक् कर दिया है। मैं आगे इन भाइयों से पूछता हूं कि क्यों वे धर्म प्रचार के काम में ढील करते हैं, उत्तर मिलता है कि जब तक पूर्ण स्वराज्य नहीं मिलता है, तब तक धर्म प्रचार ठीक हो नहीं सकता, अतः पहिले स्वराज्य मिलना चाहिए। यह युक्ति बिलकुल निराधार है, इतिहास इसका साक्षी नहीं है। ईसा एक दास जाति का व्यक्ति था, उसने पराधीनता में ही धर्म प्रचार किया और धर्म प्रचार की वृद्धि के कारण ही उन्हें स्वतन्त्रता प्राप्त हुई। ईसाई धर्म का बल यहां तक बढ़ा कि कौन्सटेन्टाइन को भी ईसाई बनना पड़ा। शिवाजी के समय हिन्दु जाति पराधीन थी, हिन्दु धर्म का जोश फूंक कर धर्म के सहारे ही शिवाजी ने महाराष्ट्र में हिन्दुराज्य स्थापित किया। गुरुगोविन्दसिंह ने सिक्ख धर्म के सहारे ही पंजाब में स्वराज्य की स्थापना की। वास्तविक बात तो इतिहास से यह सिद्ध होती है कि पहिले धर्म प्रचार फिर देश की स्वतन्त्रता, न कि पहिले स्वराज्य और फिर धर्म प्रचार। इस लिए आवश्यकता है कि आर्यभाई अपनी कुल शक्तियां धर्म प्रचार में लगावें।

अभी तक आर्यसमाज केवल एक सम्प्रदाय के रूप में रहा है—यह देश का दुर्भाग्य मानिये, इसको एक Political body बनाना कदापि ठीक नहीं। मैं मानता हूं कि वैदिक धर्म में राजनीति सम्मिलित है यदि आपको राजनैतिक लहर में काम करना ही है तो पहिले विद्यार्य सभा, धर्मार्य सभा, राजार्य सभा, का निर्माण कर दीजिए। फिर आर्यों की राजार्य सभा बड़ी प्रसन्नता से राजनैतिक आन्दोलन करे इस में कोई बुराई नहीं है। अन्यथा जैसे सिक्ख जाति एक अपूर्व जाति है आर्यसमाज भी वैसा ही [illegible] इसकी आशा एकमित्रता का अन्त जावेगा। इस लिए आर्यसमाजों का कर्त्तव्य धर्म प्रचार करना है। आप लोग पहिले आर्यसमाजी बनें, फिर भारतीय हूजिये। आप मौलाना शौकतअली की जय पुकारते हैं वे शौकतअली कहते हैं कि मैं पहले मुसल्मान हूं फिर भारतीय हूं। इस लिए समाज का धर्मप्रचार का काम फिर से आप से आरम्भ करना चाहिए, इसी में भलाई है।

आपके पश्चात् जगद्गुरु श्री शंकराचार्य जी ने निम्नलिखित व्याख्यान संस्कृत में दिया। आपका विषय था "भारतीय शिक्षा"। आपने कहा:—

आजकल हमारी शिक्षा को सरकार ने एक "भारतीय शिक्षा विभाग" के आधीन किया हुआ है। उसके द्वारा स्कूलों कालिजों में हमें जो ज्ञान मिलता है वह न तो भारतीय [illegible] और न शिक्षा ही है।

जिस शिक्षा द्वारा जान बूझ कर हिन्दु मुसल्मानों को लड़ाया जावे, जिस में प्राचीन महापुरुषों को असभ्य बर्बर कहा जावे और जिस में हमारे दिमागों को अंग्रेज़ों का दास बना दिया जावे वह कभी भी भारतीय नहीं हो सकती है। हैदराबाद मैसूर काश्मीर में कभी हिन्दु मुसल्मानों का झगड़ा होता ही नहीं है, अतः यह ठीक है कि हिन्दु मुसल्मानों की लड़ाई सरकार की अभीष्ट है। और उसका इस लड़ाई से सदा सम्बन्ध रहता है।

यह तालीम शिक्षा भी नहीं है। इस में गुरुशिष्य का सम्बन्ध कुछ भी नहीं है। दुकानें खुली हैं। रुपया दे जाओ और प्रोफेसर साहब का लैक्चर सुन जाओ। गुरु को शिष्य की उन्नति का ख्याल स्वप्न में भी नहीं हो सकता है उसे अपनी महावारी तनख्वाह चाहिए, मैं कहता हूं कि इन स्कूलों के गुरु गुरु नहीं हैं ठग हैं।

(वे Teacher नहीं हैं cheater हैं। इस पढ़ाई में बालक की शक्तियों को (Develop) नहीं किया जाता है, उसके अन्दर कैसी प्रकृति है इस का कुछ भी ध्यान नहीं रखा जाता; पर उसे एक इंगलिश इतिहास की किताब घोट कर पिला दी जाती है—उन्हें शेक्सपीयर की कविता पढ़ाई जाती है जो उनके दिमाग़ के लिए भारतीय न होने के कारण एक बाह्यपदार्थ (Foreign matter) होती है। इस बाह्यपदार्थ या foreign matter को ज़बरदस्ती विद्यार्थी के दिमाग़ में भर दिया जाता है। इसी लिए मैं प्रायः कहा करता हूं कि यह शिक्षा Education नहीं किन्तु Injection है। इन कालिजों में Injection के दो प्रकार हैं एक तो परीक्षायें; जिनको मैं अनावश्यक तथा हानिकारी मानता हूं। दूसरे बेत लगाना जिसका समर्थक मुश्किल से कोई होगा।

इस लिए आप इस बात पर विश्वास कीजिए कि प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली ही सर्वोत्तम तथा आदर्श है। विद्या का दान करने वाले गुरु में न तो धन की लालसा हो न किसी से राग न द्वेष तब ही शिक्षा का ठीक प्रचार हो सकता है। जहां शिक्षणालय गुरुकुल शिक्षा पद्धति पर चल रहे हों, जहां आदर्श गुरु तथा सद्गुणी शिष्य हों, जहां "धर्म" ही एक मात्र शासक हो, वहां ही उसका आदर्श वेदानुमोदित शिक्षा दी जा सकती है और कहीं नहीं। मुझे इस गुरुकुल विश्वविद्यालय को देख कर बड़ी प्रसन्नता हुई है। जो लोग इसके प्रवर्तक संचालक और सच्चे सेवक हैं वे निश्चय ही इस लोक और स्वर्गलोक में परमेश्वर के अनन्त आशीर्वादों के पात्र बनेंगे।

"रात्रि"

रात्रि को प्रथम व्याख्यान श्री गंगाप्रसाद जी M. A. का हुआ। व्याख्यान अपूर्व था।

तदनन्तर श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज का धर्मोपदेश हुआ। आपने अपने १$\frac{3}{4}$ घण्टे के व्याख्यान में जनता को विस्मित कर दिया था। आपके मुख से निकले ओजस्वी शब्दों में एक अद्भुत चमत्कार था—आपने "उत्तिष्ठत जाग्रत" इस वाक्य से अपने उपदेश को यों प्रारम्भ किया,—

"क्रिया में जीवन और अकर्मण्यता में मृत्यु है—क्रिया से ज्ञान और अक्रिया से अज्ञान और अहत्व की प्राप्ति होती है—माया में पड़े हुए जीव दुःख में सुख और परमानन्द को दुःख समझे हुए हैं। भारतीय ऋषि सन्तान भी माया के इसी चक्कर में फंस गई है और अपने महत्व को न समझकर उन प्रकृतिवादियों से डर रही है जो कमज़ोर हैं जो भीमों के कीड़े हैं। अपने महत्व को न

समझ कर ही लोग माया के शिकार हो रहे हैं। संसार भर के राजनीतिज्ञ इस माया में फंसे हुये हैं और भीरु हैं। इसी कारण से लगातार झूठ बोलते हैं और सत्य को छुपाते हैं। इसी माया के कारण स्वार्थ में लीन महात्माओं ने राजा धृतराष्ट्र को तरह तरह से दम्भ करने की शिक्षायें दी थीं।

यही माया है कि अपने शरीर को नित्य मानकर उसके सुखों के लिए पारमार्थिक धर्मों को भुला देना और येन केन प्रकारेण लौकिकमात्र सुख को पाना। इसी माया के कारण तुम मनुष्य होते हुए भी दूसरे मनुष्य से डरते हो, अपने प्राणों की भीख मांगते हो, अपमान सहते हो, और अपने महत्व को नहीं समझते।

इस महा माया ने आपको नहीं पकड़ रक्खा है, आपने ही इसे पकड़ रक्खा है, कौन आप से कहता है कि आप डरिए या आप अपने को दीन हीन तुच्छ प्राणि मानिए, यह सब कुछ आप स्वयं किए हुए हैं, माया को आपने लिपेटा हुआ है आप स्वतन्त्रता से स्वेच्छा से इसे छोड़दीजिए फिर संसार आपका है आप किसी के दास नहीं हैं। आप तो ईश्वर का लाडला पुत्र समझिए तुच्छ कीट नहीं। फिर आपको न डरने की जरूरत है न झूठ बोलने की और न सत्य को छुपाने की। अपने अन्दर जीवन धारण कीजिए, क्रियावान् बनिए। अकर्मण्यता को छोड़िए यही मनुष्यत्व है यही आर्यत्व है, यही ज्ञान है और यही माया से छूटना है। मैं पञ्जाब प्रदेश के एक कोने से दूसरे कोने तक भ्रमण करता हूं—संयुक्तप्रान्त का पश्चिमोत्तर प्रान्त मैंने अच्छी तरह देखा है, मैं प्रसन्नता पूर्वक और आनन्द से कह सकता हूं कि वहां पर मैंने आर्यसमाज की अवनति नहीं देखी। कहीं एक दो मत भेद हुए तो इस से आर्यों के उत्साह में कमी नहीं आई है बल्कि मैं कह सकता हूं कि तीन चार साल पहिले की अपेक्षा आज आर्यसमाज में अधिक तप और इसी लिए अधिक जीवन है। आर्यसमाज के धर्म महोत्सवों में जनसमुदाय अब भी उसी संख्या में एकत्र होता है जिस में पहले होता था। मैं बड़ी खुशी से कहता हूं कि आर्यसमाज उन्नति कर रहा है [illegible] नहीं। वह आगे १०० वर्षों में [illegible] आगे बढ़ रहा है।

बड़ी कठिनता से मुझे एक कसौटी दिखाई दी है जिसे इस महान् जनसमुदाय के सामने रखता हूं। जीवन के लिए आवश्यक है कि बढ़, संख्या में बढ़ो, संस्था में बढ़ो और विजय प्राप्त करो। कई आर्य समाज के शत्रु और कई आर्य समाज के अतीव प्रतिष्ठित सज्जनों की यह सम्मति है कि अब खण्डन का काम बन्द करो, केवल मण्डन करो।

मैं यह आग्रह से कहूंगा कि आर्यसमाज के लिए यह प्रस्ताव घातक है, आर्यसमाज घट जायेगा, मर जाएगा। जीवन के लिए कर्म की और क्रिया शीलता की आवश्यकता है मिथ्याकर्मवाद की नहीं। वेद की आज्ञा काम करने के लिए है। इस लिए वैदिक धर्म के अनुयायी न केवल भारत में ही प्रत्युत देश देशान्तर तथा द्वीप द्वीपान्तर में बनाओ। आर्य युवकों को इस काम में आना चाहिए। मैं परमेश्वर से बारम्बार यही मांगता हूं कि आर्यसमाज खूब फले और फूले, प्रतिवर्ष इस की संख्या दुगनी और चौगुनी हो और प्रत्येक मनुष्य माया से पृथक् होकर अपने महत्व को समझकर १०० वर्ष तक काम करता हुआ जीवित रहे और मृत्यु के पश्चात् परमानन्द मुक्तिधाम में विश्राम पावें।

नवस्नातकों के प्रति

आचार्य का उपदेश

आज तुम सब, अपने बड़े व्रत का एक भाग पूर्ण करके, कुलमाता की गोद से अलग होने लगे हो। बाहर से तुम्हारे स्वागत के लिए सहस्रों देवियां और सज्जन पुरुष विद्यमान हैं। इस समय प्राचीन ऋषियों की सनातन आज्ञा के अनुसार, मैं तुम्हें अन्तिम बार तुम्हारी जिम्मेवारियों की याद दिलाता हूं। और इस के आरम्भ करने से पहिले यह आशा करता हूं कि, जहां तुमने विद्यास्नातक बनकर अपने अधिकारों के प्रमाण-पत्र तथा चोले प्राप्त किये हैं वहां, तुम २५ वर्ष की अमुक्त विवाह का विचार भी न करते हुये उस व्रत को भी पूर्ण करोगे जो गुरुकुल में प्रविष्ट कराते समय तुम्हारे पहिले जन्म देने वालों ने तुम्हें धारण कराया था।

[illegible] गोद से जुदा होते [illegible] सदा सत्य ही बोलना [illegible] है—सत्य ही सदा तुम्हारा सहारा हो—

धर्म मार्ग को कभी नहीं छोड़ना—यह छुरे की धार की तरह दुर्गम है परन्तु कल्याण भी इसी में है। दूसरे प्रलोभनों से भरे हुए मार्ग तुम्हारे बिना जाने हुए नरक का द्वार सिद्ध होंगे।

स्वाध्याय का नित्य साधन रखना—इस से तुम सत्य जानोगे और धर्म मार्ग में दृढ़ रहने में कृतकार्य हो सकोगे। धर्म ग्रन्थों का पाठ और स्मरण तुम कर चुके, उस को दृढ़ रखने के लिए नित्य उसका अभ्यास किया करो जिस का आश्रय लेकर इस कुल में तुम नित्य पाठ आरम्भ करते रहे हो। क्या, १४ वर्षों तक यह गाने के पीछे,—

"पितु, मातु, सहायक, स्वामी, सखा तुम ही एक नाथ हमारे हो।"

तुम्हें फिर भी बतलाने की आवश्यकता है कि सर्वान्तर्यामी वही है जो तुम्हें नित्य सत्य मार्ग दिखा कर अनुभव कराता है जिसके पुत्रकारी बनाकर आचार्य ने उपनीत करके तुम्हें इस पवित्र कुल में सौंपा था।

आचार्य तुम से यही मांगता है कि जो ब्रह्मचर्य व्रत पालन की शिक्षा तुम को दी गई है उसको क्रिया में लाकर शुद्ध उत्तम सन्तान उत्पन्न करना, इसके विपरीत कभी भी शक्ति को अपवित्र नहीं करना। सत्य के पालन में धर्म के पालन में कभी भी प्रमाद नहीं करना। संसार के कुशल के लिए तुम बाहर जा रहे हो इस में कभी भी त्रुटि नहीं होनी चाहिये।

देवपूजा तुम्हारा एक बड़ा धर्म है, माता देवी की श्रद्धा से नित्य सेवा करना, पिता देव की सदैव धर्मानुकूल आज्ञा पालन करना, आचार्य की सेवा को कभी नहीं भूलना। और अतिथि सेवा का स्मरण रखना यह भी तुम्हारा नैत्यिक धर्म है।

अपने गुरु जनों में जो उत्तम गुण तुमने देखे हैं, उनका सदा सेवन करना, उनमें यदि कोई अवगुण देखे हों तो उन को नहीं ग्रहण करना, हमारे अच्छे आचरणों का ही अनुकरण करना, हमारी

विपरीत बुद्धियों का मूल जाना । संसार में तुम्हें जहां कहीं उत्तम ब्राह्मण दीखें (केवल जन्म के नाम मात्र ब्राह्मण नहीं, प्रत्युत बुद्धि स्वभाव द्वारा) उन का हृदय से मान करना ।

दान शील होना स्नातक का बड़ा भारी कर्त्तव्य है । शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक बल जो कुछ तुमने यहां लाभ किया है उसका दान देने में कभी न हिचकिचाना । आशा तो यह है कि श्रद्धा से ही दान दिया करोगे, परन्तु यदि कभी आदर्श तक पहुंचने में त्रुटि हो तो अश्रद्धा से भी दो । यशलालसा से भी दो, भय से भी दो । किसी प्रकार से भी हो, दान देने में संकोच नहीं करना ।

सब से बढ़ कर तुम उस मातृ भूमि के ऋणी हो जिस के उच्च शिखर वाले हिमालय की छाया में, जिसकी शीतलता प्रदायिनी पवित्र पुत्री भागीरथी गंगा के तट पर तुमने संसार की उपाधियों से सुरक्षित फल लाभ किया है; उस मातृ भूमि की सेवा के योग्य बना कर तुम्हें इस कुल से भेजा जा रहा है । तुम नित्य पाठ आरम्भ करने से पहले प्रतिज्ञा करते रहे हो कि—

"माता के दुःख हरने के हित-
न्योछावर निज प्राण करें हम ।"

आज से वह समय आ गया है कि तुम इस प्रतिज्ञा को पूर्ण करो । संसार क्षेत्र में जाकर जिस निःस्वार्थ उच्च ब्राह्मण को माता का सर्वोत्तम सेवक पाओ वह चाहे वेगी हो या अयोगी, उसी के चरण चिन्ह पर चलकर मातृभूमि की सेवा में लग जाओ । यदि उस सेवा की सुगन्ध इस पवित्र कुल में आएगी तो तुम्हारे आचार्य को बड़ी शान्ति मिलेगी । परन्तु यह सब तभी हो सकेगा जब कि तुम वेद की सार्वभौम सरल सीधी शिक्षा के ऊपर प्रतिदिन अमल करोगे । यही आदेश है, यही उपदेश है, यही वेद उपनिषद् का अनुशासन है । परमेश्वर तुम को इस के पालन करने का बल दें यह आचार्य का आशीर्वाद है ।

तृतीय दिवस

प्रातः काल—हरसाल की तरह इस वर्ष भी आज नये स्नातकों का दीक्षान्त संस्कार हुआ । इस वर्ष १२ ब्रह्मचारियों को स्नातक पदवी से विभूषित किया गया । जिनमें से १० विद्यालङ्कार तथा दो सिद्धान्तालंकार हैं । १४ वर्ष गुरुकुल में निवास के पीछे आज संसार क्षेत्र में उतरते हुए नवस्नातकों को श्री आचार्य जी ने जो उपदेश दिया उसे पाठकगण पृ० ६ पर देखेंगे ।

दीक्षान्त संस्कार की समाप्ति के साथ प्रातः काल की कार्यवाही समाप्त हुई ।

मध्याह्न:—

मध्याह्न में प्रथम व्याख्यान श्री पंडित ब्रह्मदत्त जी विद्यालंकार का तथा द्वितीय श्री पण्डित बुद्धदेव जी विद्यालंकार का हुआ । दोनों व्याख्यान ओजस्वी तथा अत्युत्तम थे । व्याख्यानों के अनन्तर धन संग्रह का कार्य एक घण्टे तक होता रहा । कार्यालय से अन्तिम सूचना मिली है कि इस वर्ष भर में कुल एक लाख साठ हजार रुपया गुरुकुल को दान में मिला । जिस में ब्रह्मदेश से श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी ६५ हजार लाये और अफ्रीका से पण्डित ईश्वरदत्त जी विद्यालंकार ने २५ हजार रुपये इकट्ठे कर के भेजे । अन्य भी कई उत्साही पुरुषों ने अच्छी २ धनराशियां दान में दीं ।

चतुर्थ दिवस

प्रातः काल—हवन और भजनों के पीछे श्री भाई परमानन्द जी का व्याख्यान हुआ—आपका विषय था, "राजनीति भी धर्म का अंग है" । व्याख्यान का सार यह है । "राजनीति को धर्म से पृथक् करना अनुचित है और ऋषि दयानन्द की आज्ञा के विरुद्ध है । ऋषि दयानन्द ने बम्बई में आर्य समाज के २८ नियम बनाये और वहां स्पष्ट रूप से राजनीति को भी धर्म का अंग स्वीकार किया है । वर्तमान १० नियमों में कहीं भी ऋषि ने राजनीति में भाग न लेना नहीं लिखा है । उन २८ नियमों में ऋषि ने साफ कहा है कि अपने देश की रक्षा तथा वृद्धि करना भी हमारा कर्त्तव्य है । धर्म का राजनीति से स्वाभाविक ही सम्बन्ध है इसे कोई भी जोड़ या तोड़ नहीं सकता है, ईसा को सूली पर चढ़ाया गया, इस लिए नहीं कि वह ईसाई मत का प्रचार करता था किन्तु इस लिये कि उसे सब यहूदी अपना उपास्यदेव और राजा मानते थे ।

मुसलमानों के खलीफा लोग धर्माचार्य थे, पर खलीफा के अतिरिक्त किस में शक्ति थी कि वह मुसलमानों का शासन करता, खलीफा ही धर्माचार्य थे वेही शासक होते थे ।

इसी प्रकार सिक्ख लोग भी सिक्ख-मत से राजनीति को पृथक् नहीं करसके । गुरुगोविन्दसिंह की आज्ञा के विरुद्ध कौन सिक्ख औरंगजेब की आज्ञा मानने को तैयार था । गुरु लोग ही उनके धर्माचार्य और वे ही उनके शासक थे ।

संसार का इतिहास स्पष्ट बतलाता है कि धर्म और राजनीति परस्पर विरुद्ध दो चीजें नहीं हैं वे अभिन्न हैं । आर्य धर्म भी कदापि राजनीति से शून्य नहीं हो सकता ।

धर्म का वह अर्थ नहीं है जो religion का है । धर्म को इंगलिश में यों कह सकते हैं "the law of life" वैदिक धर्म जीवन सम्बन्धी सब समस्याओं को हल करता है वह अपूर्ण नहीं है । राजनीति वैदिक धर्म से पृथक् है ऐसा वही कह सकते हैं जिन्हें वैदिक धर्म का कुछ भी ज्ञान नहीं है ।

इस व्याख्यान के अनन्तर राष्ट्रीय शिक्षा सम्मेलन प्रारम्भ हुआ । सभापति का आसन देशरत्न श्री पण्डित मोतीलाल जी नेहरू ने ग्रहण किया । आपने नीचे ही बैठकर सभापति की सब कार्यवाही की । क्योंकि कुर्सी मेज पर सभा आदि करना विदेशी ढंग है भारतीय नहीं । आपने सम्मेलन के आरम्भ तथा अन्त में जो उत्तम व्याख्यान दिया वह छोटा होने पर भी अत्यन्त उदात्त, प्रसन्न गम्भीर, मनोहर तथा ओजस्वी था, आपने कहा ।

उपस्थित भाइयो और बहनो ! इस राष्ट्रीय शिक्षासम्मेलन की सिदारत मुझे देकर जो सम्मान आप ने मुझे दिया है मैं उसके लिए आपको बहुत धन्यवाद देता हूं । समाज सेवा और लोक सेवा के क्षेत्रों में आर्यसमाज की कोशिशें जगद्विख्यात हैं पर मैं कह सकता हूं कि राजनीति के क्षेत्र में भी हमें जो सहायता आर्यसमाज से मिली है वह और किसी संस्था से नहीं मिली—मुझे इस बात की बड़ी प्रसन्नता है कि जिस बात को हम लोगों ने आज समझा है, मेरे भाई स्वामी श्रद्धानन्द जी ने उसे १९ वर्ष पहिले ही न केवल समझा था पर कर दिखाया था । मेरा नाम आर्यसमाज के किसी रजि-

ष्टर में नहीं लिखा है, मैं इस लिए आर्यसमाजी नहीं हूं। किन्तु मैं ऐसा हिन्दू नहीं हूं जो मुसलमान न हो, मैं ऐसा मुसल्मान नहीं हूं जो हिन्दु न हो, मैं ऐसा ईसाई नहीं हूं जो हिन्दु या मुसल्मान न हो—मैं उस धर्म को मानता हूं मैं उन सिद्धान्तों को मानता हूं जिन के मानने में हिन्दू मुसल्मान ईसाई आदि सभी धर्म वाले एक मत हैं, यदि उसी पवित्र धर्म को आप आर्यसमाज कहें तो मैं जरूर आर्यसमाजी हूं।

भाईयो और बहिनो! इतने वर्षों तक हम लोग उन्हीं सरकारी स्कूलों में पढ़ते रहे जो हमारी कौम को बर्बाद करने के लिए खोले गये थे।

राष्ट्रीय शिक्षा के अभाव से हमारे देश में वे ही सब बुराइयां पैदा होगई हैं जिन्हें कि सरकारी स्कूल खोलने वाले पैदा करना चाहते थे, वे लोग ऐसे आदमी पैदा करना चाहते थे जिन्हें अपनी सभ्यता, अपने लिबास, और अपने बड़ों से नफरत हो। जो अंग्रेजों को ही अपना सब कुछ समझते हों। यदि यह सरकारी शिक्षा हमें न दी गई होती तो स्वराज्य हासिल करने में हमें वो तकलीफें न झेलनी पड़तीं जो अब झेलनी पड़ रही हैं। भाइयो और बहनो! हमारे देश में इस समय बुरी दशा आ पड़ी है। सरकार कहती है कि तुम दिन और रात, सर्दी और गरमी की परवाह न करके खेती पैदा करो, उसे अपने आप काटो, खुद उसे पीसो, और खुद उसका भोजन पका कर तैयार करो, उस सब भोजन को सरकार के सामने पेश करो। सरकार और उसके साथी खूब पेट भर उसे खालेते हैं, और जब जूठी पत्तल में कुछ बचता है तो एक दो टुकड़े हमारे आगे भी फेंक दिये जाते हैं—ये वही टुकड़े हैं जिन्हें आप रायबहादुरी या जजी वगैरः कह सकते हैं। सुना थे ये जूठे टुकड़े कुछ काल तक मेरे भी हिस्से में पड़े। कितने ही जूठे खिताताब मुझे भी अपने नाम के साथ लगाने पड़े, मुझ से कहागया कि हिन्दुस्तान में मेरे मुकाबले की अकल रखने वाला तो आज तक पैदा ही नहीं हुआ है। किन्तु बहनो और भाइयो मैं अब कभी भी इन टुकड़ों को लेना पसन्द नहीं करूंगा।

जब लोगों में समझ आई तो उन्हों ने अपने पूरे हक़ को मांगा और जूठे टुकड़े लेने से जिन्हों आदमियों ने इनकार किया, तब सरकार ने टुकड़ों पर सुनहली परत चढ़ा दी और किसी को मिनिष्टर बनाया किसी को नियामक बनाया, किसी को लार्ड बना दिया। आप लोग याद रखिये कि इन पर सोने की परत चढ़ी है लेकिन ये हैं वही जूठी पत्तल के टुकड़े। कौन हिन्दुस्तानी इन जूठे टुकड़ों को खाना पसन्द कर सकता है। (कोई नहीं कोई नहीं की आवाज़ें) माताओ और भाइयो, हमारे देश में इस समय आग लगी हुई है—जो हमारे दुश्मन हैं उन्होंने आग के आस पास मिट्टी के तेल के पीपे भर भर के धर दिये हैं। लोग समझते हैं कि इन पीपों में पानी है और इन से आग बुझ जावेगी—देश में दुःख दरिद्रता दासता निर्धनता और कमज़ोरी की आग लगी है, इन सब का कारण यही सरकारी शिक्षा है। सरकार ने ही आग के पास मिट्टी का तेल इकट्ठा कर दिया है, ये तरह तरह के खिताब मिनिस्टरी, कौन्सिल की मैम्बरी आदि हैं। कम समझ वाले इन्हीं से आग बुझाना चाहते हैं और आग पर इन को उंडेल दे रहे हैं। परन्तु मिट्टी के तेल से तो आग दसगुना बढ़ती है मुल्क में अमन कैसे हो सकता है।

प्यारे ब्रह्मचारियो! यह आपका काम है कि पानी और मिट्टी के तेल में भेद समझिये और पानी से आग बुझाइये।

इसके पीछे देश के प्रत्येक रहने वाले का फ़र्ज़ है कि यदि वह पानी से आग को बुझा नहीं सकता है तो कम से कम मिट्टी का तेल तो आग पर न डाले कम से कम इन खिताबों ओहदों और दरबारों से तो अपना ताल्लुक तोड़ देवे। ता कि यह शैतानी आग और बढ़ने न पावे।

[illegible] और भाइयो! पंजाब की सरकार ने [illegible] पुराने साथी [illegible] लाल को मिनिस्टर बनाया [illegible] निहायत अफसोस और रंज है [illegible] किशनलाल ने मुल्क को ऐसा धोखा [illegible] है। आज मिनिस्टरी की कुर्सी [illegible] वह कह रहा है कि "मैं एक [illegible]ble व्यक्ति हूं और ये देश के [illegible] लोग बिलकुल irresponsible agitators [illegible] मैं भी पहिले ऐसा ही irresponsible ag[illegible] था [illegible] मैंने उन्नति करली और एक [illegible]ble officer हूं"

लानत है ऐसे आदमी को जो कल हममें हो या पर आज हमसे अलग होकर हमसे यह ऐसा व्यवहार कर रहा है। आप जानते हैं कि गान्धी जी कितने बड़े नेता हैं। और उन पर कितनी बड़ी जिम्मेवारी है लाखों और करोड़ों आदमियों को उनके एक इशारे की जरूरत है कि देश में न मालुम एकदम क्या होजावे, उन्हें ये मिनिस्टर साहब irresponsible agitator कहते हैं। भाइयो! मैं आपसे पूछता हूं कि क्या हरकिशनलाल (शोक! लानत है लानत है। शेम शेम! की आवाजें चारों ओर से) Responsible व्यक्ति हैं। (हरगिज़ नहीं हरगिज नहीं की आवाज़ें) क्या महात्मा गान्धी Responsible leader नहीं हैं (हैं हैं, बेशक हैं, गान्धी जी की जय, वैदिकधर्म की जय की आवाज़ें)।

हरकिशनलाल का यह कहना इस बात का दृष्टान्त है कि आदमी कहां तक गिर सकता है और कितना ज़लील होसकता है। (शोक शोक की आवाज़ें) भाइयो और बहिनों! अब मैं आपका अधिक समय नहीं लूंगा। जो सम्मान आपने मुझे दिया है उसके लिए मैं फिर आप सबको एकबार धन्यवाद देता हूं। (वैदिकधर्म की जय महात्मा गान्धी की जय, वन्दे मातरम् और तालियों की ध्वनि)

तदनन्तर श्री लाजपतराय जी का व्याख्यान हुआ, पण्डित मोतीलाल जी के व्याख्यान के समय श्रोताओं की संख्या २० हज़ार थी। अब भी २० हजार लोग व्याख्यान सुनरहे थे।

आपका भाषण अत्यन्त ओजस्वी था व्याख्यान क्या था भारत केसरी का सिंहनाद था। एक घण्टे के लिए २० हज़ार आदमी यह भूल गए कि हम गुरुकुल के पण्डाल में बैठे हैं कि नागपुर में कांग्रेस के पण्डाल में।

हम आगामी अंक में उस व्याख्यान को अक्षरशः अपने पाठकों की भेंट करेंगे

मध्यान्ह—श्री महाशय [illegible] [illegible] एक अत्युत्तम व्याख्यान "हिन्दु [illegible]" इस विषय पर हुआ। लोगों पर प्रभाव बहुत ही अच्छा पड़ा।

रात्रि—पं॰ युधिष्ठिर जी का ओजस्वी भाषण हुआ। व्याख्यान के अनन्तर धन्यवाद और शान्ति पाठ के साथ कार्यवाही समाप्त हुई।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लि[illegible] [illegible]राम के लिए छपा।

विपरीत वृत्तियों का भूल जाना। संसार में तुम्हें जहां कहीं उत्तम ब्राह्मण दीखें (केवल नाम के नाम मात्र ब्राह्मण नहीं, प्रत्युत गुण कर्म से ब्राह्मण) उन का हृदय से मान करना।

दान शील होना स्नातक का बड़ा भारी कर्तव्य है। शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक बल जो कुछ तुमने यहां लाभ किया है उसका दान देने में कभी न हिचकिचाना। आशा तो यह है कि श्रद्धा से ही दान दिया करोगे, परन्तु यदि कभी आदर्श तक पहुंचने में त्रुटि हो तो अश्रद्धा से भी दो। लज्जा से भी दो, भय से भी दो। किसी प्रकार से भी हो, दान देने में संकोच नहीं करना।

सब से बढ़ कर तुम उस मातृ भूमि के ऋणी हो जिस के उच्च शिखर वाले हिमालय की छाया में, जिसकी शीतलता प्रदायिनी पवित्र पुत्री भागीरथी गंगा के तट पर तुमने संसार की उपाधियों से सुरक्षित फल लाभ किया है; उस मातृ भूमि की सेवा के योग्य बना कर तुम्हें इस कुल से भेजा जा रहा है। तुम नित्य पाठ आरम्भ करने से पहले प्रतिज्ञा करते रहे हो कि—

"माता के दुःख हरने के हित-
न्योछावर निज प्राण करें हम।"

आज से वह समय आ गया है कि तुम इस प्रतिज्ञा को पूर्ण करो। संसार क्षेत्र में जाकर जिस निःस्वार्थ सच्चे ब्राह्मण को माता का सर्वोत्तम सेवक पाओ वह चाहे योगी हो या अयोगी, उसी के चरण चिन्ह पर चलकर मातृभूमि की सेवा में लग जाओ। यदि उस सेवा की सुगन्ध इस पवित्र कुल में आएगी तो तुम्हारे आचार्य को बड़ी शान्ति मिलेगी। परन्तु यह सब तभी हो सकेगा जब कि तुम वेद की सार्वभौम सरल सीधी शिक्षा के अनुसार प्रतिदिन अमल करोगे। यही आदेश है, यही उपदेश है, यही वेद उपनिषद् का अनुशासन है। परमेश्वर तुम को इस के पालन करने की शक्ति दें यह आचार्य का आशीर्वाद है।

तृतीय दिवस

प्रातः काल—हड़ताल को तोड़ कर इस वर्ष भी आज नये स्नातकों का दीक्षान्त संस्कार हुआ। इस वर्ष १२ ब्रह्मचारियों को स्नातक पदवी से विभूषित किया गया। जिनमें से १० विद्यालङ्कार तथा दो सिद्धान्तालंकार हैं। १४ वर्ष गुरुकुल में निवास कर के आज संसार क्षेत्र में उतरते हुवे नवस्नातकों को श्री आचार्य जी ने जो उपदेश दिया उसे पाठकगण पृ० ६ पर देखेंगे।

दीक्षान्त संस्कार की समाप्ति के साथ प्रातः काल की कार्यवाही समाप्त हुई।

मध्यान्ह:—

मध्यान्ह में प्रथम व्याख्यान श्री पंडित ब्रह्मदत्त जी विद्यालंकार का तथा द्वितीय श्री पण्डित बुद्धदेव जी विद्यालंकार का हुआ। दोनों व्याख्यान ओजस्वी तथा अत्युत्तम थे। व्याख्यानों के अनन्तर धन संग्रह का कार्य एक घण्टे तक होता रहा। कार्यालय से अन्तिम सूचना मिली है कि इस वर्ष भर में कुल एक लाख साठ हजार रुपया गुरुकुल को दान में मिला। जिस में ब्रह्मदेश से श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी ६५ हजार लाये और अफ्रीका से पण्डित ईश्वरदत्त जी विद्यालंकार ने २५ हजार रुपये इकट्ठे कर के भेजे। अन्य भी कई उत्साही पुरुषों ने अच्छी २ धनराशियां दान में दीं।

चतुर्थ दिवस

प्रातः काल—हवन और भजनों के पीछे श्री भाई परमानन्द जी का व्याख्यान हुआ—आपका विषय था, "राजनीति भी धर्म का अंग है"। व्याख्यान का सार यह है। "राजनीति को धर्म से पृथक् करना अनुचित है और ऋषि दयानन्द की आज्ञा के विरुद्ध है। ऋषि दयानन्द ने बम्बई में आर्य समाज के २८ नियम बनाये और वहां स्पष्ट रूप से राजनीति को भी धर्म का भाग स्वीकार किया है। वर्तमान १० नियमों में कहीं भी ऋषि ने राजनीति में भाग न लेना नहीं लिखा है, उन २८ नियमों में ऋषि ने साफ़ कहा है कि अपने देश की रक्षा तथा वृद्धि करना भी हमारा कर्तव्य है। धर्म का राजनीति से स्वाभाविक ही सम्बन्ध है इसे कोई भी जोड़ या तोड़ नहीं सकता है, ईसा को सूली पर चढ़ाया गया, इस लिए नहीं कि वह ईसाई मत का प्रचार करता था किन्तु इस लिये कि उसे सब यहूदी अपना उपास्यदेव और राजा मानते थे।

मुसलमानों के ख़लीफ़ा लोग धर्माचार्य थे, पर ख़लीफ़ा के अतिरिक्त किस में शक्ति थी कि वह मुसलमानों का शासन करता, ख़लीफ़ा ही धर्माचार्य थे वेही शासक होते थे।

इसी प्रकार सिक्ख लोग भी सिक्खमत से राजनीति को पृथक नहीं करसके। गुरुगोविन्दसिंह की आज्ञा के विरुद्ध कौन सिक्ख औरंगज़ेब की आज्ञा मानने को तैयार था। गुरु लोग ही उनके धर्माचार्य और वे ही उनके शासक थे।

संसार का इतिहास स्पष्ट बतलाता है कि धर्म और राजनीति परस्पर विरुद्ध दो चीज़ें नहीं हैं वे अभिन्न हैं। आर्य धर्म भी कदापि राजनीति से शून्य नहीं हो सकता।

धर्म का वह अर्थ नहीं है जो religion का है। धर्म को इंगलिश में यों कह सकते हैं "the law of life" वैदिक धर्म जीवन सम्बन्धी सब समस्याओं को हल करता है वह अपूर्ण नहीं है। राजनीति वैदिक धर्म से पृथक् है ऐसा वही कह सकते हैं जिन्हें वैदिक धर्म का कुछ भी ज्ञान नहीं है।

इस व्याख्यान के अनन्तर राष्ट्रीय शिक्षा सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। सभापति का आसन देशरत्न श्री पण्डित मोतीलाल जी नेहरू ने ग्रहण किया। आपने नीचे ही बैठकर सभापति की सब कार्यवाही की। क्योंकि कुर्सी मेज़ पर सभा आदि करना विदेशी ढंग है भारतीय नहीं। आपने सम्मेलन के आरम्भ तथा अन्त में जो उत्तम व्याख्यान दिया वह छोटा होने पर भी अत्यन्त उदात्त, प्रसन्न गम्भीर, मनोहर तथा ओजस्वी था, आपने कहा।

उपस्थित भाइयों और बहनो! इस राष्ट्रीय शिक्षासम्मेलन की सिदारत मुझे देकर जो सन्मान आप ने मुझे दिया है मैं उसके लिए आपको बहुत धन्यवाद देता हूं। समाज सेवा और लोक सेवा के क्षेत्रों में आर्यसमाज की कोशिशें जगद्विख्यात हैं पर मैं कह सकता हूं कि राजनीति के क्षेत्र में भी हमें जो सहायता आर्यसमाज से मिली है वह और किसी संस्था से नहीं मिली—मुझे इस बात की बड़ी प्रसन्नता है कि जिस बात को हम लोगों ने आज समझा है, मेरे भाई स्वामी श्रद्धानन्द जी ने उसे १९ वर्ष पहिले ही न केवल समझा था पर कर दिखाया था! मेरा नाम आर्यसमाज के किसी रजि-

स्टर में नहीं लिखा है, मैं इस लिए आर्यसमाजी नहीं हूं। किन्तु मैं ऐसा हिन्दू नहीं हूं जो मुसलमान न हो, मैं ऐसा मुसल्मान नहीं हूं जो हिन्दु न हो, मैं ऐसा ईसाई नहीं हूं जो हिन्दु या मुसल्मान न हो—मैं उस धर्म को मानता हूं मैं उन सिद्धान्तों को मानता हूं जिन के मानने में हिन्दू मुसल्मान ईसाई आदि सभी धर्म वाले एक मत हैं, यदि उसी पवित्र धर्म को आप आर्यसमाज कहें तो मैं जरूर आर्यसमाजी हूं।

भाईयो और बहिनो! इतने वर्षों तक हम लोग उन्हीं सरकारी स्कूलों में पढ़ते रहे जो हमारी कौम को बर्बाद करने के लिए खोले गये थे।

राष्ट्रीय शिक्षा के अभाव से हमारे देश में वे ही सब बुराइयां पैदा होगई हैं जिन्हें कि सरकारी स्कूल खोलने वाले पैदा करना चाहते थे, वे लोग ऐसे आदमी पैदा करना चाहते थे जिन्हें अपनी सभ्यता, अपने लिबास, और अपने बड़ों से नफरत हो। जो अंग्रेज़ों को ही अपना सब कुछ समझते हों। यदि यह सरकारी शिक्षा हमें न दी गई होती तो स्वराज्य हासिल करने में हमें वो तकलीफें न झेलनी पड़तीं जो अब झेलनी पड़ रही हैं। भाइयो और बहनो! हमारे देश में इस समय बुरी दशा आ पड़ी है। सरकार कहती है कि तुम दिन और रात, सर्दी और गरमी की परवाह न करके खेती पैदा करो, उसे अपने आप काटो, खुद उसे पीसो, और खुद उसका भोजन पका कर तैयार करो, उस सब भोजन को सरकार के सामने पेश करो। सरकार और उसके साथी खूब पेट भर उसे खालेते हैं, और जब जूठी पत्तल में कुछ बचता है तो एक दो टुकड़े हमारे आगे भी फेंक दिये जाते हैं—ये वही टुकड़े हैं जिन्हें आप रायबहादुरी या अन्य नाम कह सक्ते हैं। सुना थे ये जूठे टुकड़े कुछ काल तक मेरे भी हिस्से में पड़े। कितने ही जूठे खिताब मुझे भी अपने नाम के साथ लगाने पड़े, मुझ से कहागया कि हिन्दुस्तान में मेरे मुकाबले की अकल रखने वाला तो आज तक पैदा ही नहीं हुआ है। किन्तु बहनो और भाइयो मैं अब कभी भी इन टुकड़ों को लेना पसन्द नहीं करूंगा।

जब लोगों में समझ आई तो उन्हों ने अपने पूरे हक़ को मांगा और जूठे टुकड़े लेने से सैकड़ों आदमियों ने इनकार किया, तब सरकार ने टुकड़ों पर सुनहली परत चढ़ा दी और किसी को मिनिस्टर बनाया किसी को नियामक बनाया, किसी को लौर्ड बना दिया। आप लोग याद रखिये कि इन पर सोने की परत चढ़ी है लेकिन ये हैं वही जूठी पत्तल के टुकड़े। कौन हिन्दुस्तानी इन जूठे टुकड़ों को खाना पसन्द कर सकता है। (कोई नहीं कोई नहीं की आवाज़ें) माताओ और भाइयो, हमारे देश में इस समय आग लगी हुई है—जो हमारे दुश्मन हैं उन्होंने आग के आस पास मिट्टी के तेल के पीपे भर भर के धर दिये हैं। लोग समझते हैं कि इन पीपों में पानी है और इन से आग बुझ जावेगी—देश में दुःख दरिद्रता दासता निर्धनता और कमज़ोरी की आग लगी है, इन सब का कारण यही सरकारी शिक्षा है। सरकार ने ही आग के पास मिट्टी का तेल इकट्ठा कर दिया है, ये तरह तरह के खिताब मिनिस्टरी, कौन्सिल की मैम्बरी आदि हैं। कम समझ वाले इन्हीं से आग बुझाना चाहते हैं और आग पर इन को उड़ेल दे रहे हैं। परन्तु मिट्टी के तेल से तो आग दसगुना बढ़ती है मुल्क में अमन कैसे हो सकता है।

प्यारे ब्रह्मचारियो! यह आपका काम है कि पानी और मिट्टी के तेल में भेद समझिये और पानी से आग बुझाइये।

इसके पीछे देश के प्रत्येक रहने वाले का फ़र्ज़ है कि यदि वह पानी से आग को बुझा नहीं सकता है तो कम से कम मिट्टी का तेल तो आग पर न डाले—कम से कम इन खिताबों ओहदों और दरबारों से तो अपना ताल्लुक तोड़ देवे। ता कि यह शैतानी आग और बढ़ने न पावे।

बहनो और भाइयो! पंजाब की सरकार ने अपने पुराने बागी लाला हरकिशन लाल को मिनिस्टर बनाया है। मुझे निहायत अफसोस और रंज है कि हरकिशनलाल ने मुल्क को ऐसा धोखा दिया है। आज मिनिस्टरी की कुर्सी पर बैठ कर वह कह रहा है कि "मैं एक Responsible व्यक्ति हूं और ये देश के नेता लोग बिलकुल irresponsible agitators हैं, मैं भी पहिले ऐसा ही irresponsible agitator था पर अब मैंने उन्नति करली और एक Responsible officer हूं"

लानत है ऐसे आदमी को जो कल हममें ही था पर आज हमसे अलग होकर हमसे यह ऐसा व्यवहार कर रहा है। आप जानते हैं कि गान्धी जी कितने बड़े नेता हैं। और उन पर कितनी बड़ी जिम्मेवारी है लाखों और करोड़ों आदमियों को उनके एक इशारे की जरूरत है कि देश में न मालुम एकदम क्या होजावे, उन्हें ये मिनिस्टर साहब irresponsible agitator कहते हैं। भाइयो! मैं आपसे पूछता हूं कि क्या हरकिशनलाल (शोक! लानत है लानत है। शेम शेम! की आवाजें चारों ओर से) Responsible व्यक्ति है। (हरगिज़ नहीं हरगिज नहीं की आवाजें) क्या महात्मा गान्धी Responsible leader नहीं हैं (हैं हैं, बेशक हैं, गान्धी जी की जय, वैदिकधर्म की जय की आवाज़ें)।

हरकिशनलाल का यह कहना इस बात का दृष्टान्त है कि आदमी कहां तक गिर सकता है और कितना ज़लील होसकता है। (शोक शोक की आवाज़ें) भाइयो और बहिनों! अब मैं आपका अधिक समय नहीं लूंगा। जो सन्मान आपने मुझे दिया है उसके लिए मैं फिर आप सबको एकबार धन्यवाद देता हूं। (वैदिकधर्म की जय महात्मा गान्धी की जय, वन्दे मातरम् और तालियों की ध्वनि)

तदनन्तर श्री लाजपतराय जी का व्याख्यान हुआ, पण्डित मोतीलाल जी के व्याख्यान के समय श्रोताओं की संख्या २० हज़ार थी। अब भी २० हज़ार लोग व्याख्यान सुनरहे थे।

आपका भाषण अत्यन्त ओजस्वी था व्याख्यान क्या था भारत केसरी का सिंह नाद था। एक घण्टे के लिए २० हज़ार आदमी यह भूल गए कि हम गुरुकुल के पण्डाल में बैठे हैं कि नागपुर में कांग्रेस के पण्डाल में।

हम आगामी अंक में इस व्याख्यान को अक्षरशः अपने पाठकों की भेंट करेंगे।

मध्याह्न—श्री महाशय आसफअली जी का एक उत्तम व्याख्यान "हिन्दुस्तानी" इस विषय पर हुआ। लोगों पर प्रभाव बहुत ही अच्छा पड़ा।

रात्रि—पं० युधिष्ठिर जी का ओजस्वी भाषण हुआ। व्याख्यान के अनन्तर धन्यवाद और शान्ति पाठ के साथ कार्यवाही समाप्त हुई।

गुरुकुल यन्त्रालय कांगड़ी में नन्दलाल के प्रबन्ध से श्रद्धा के प्रिन्टर और पब्लिशर शालिग्राम के लिए छपा।

श्रद्धा

आर्यसमाज की भावी नीति

भारत वर्ष में जिस समय आर्य समाज की नींव रक्खी गई थी, उस समय देश की जो स्थिति थी वह बहुत कुछ बदल गई है। क्या उस परिवर्तन के साथ आर्य समाज की कार्य नीति में कोई परिवर्तन करना आवश्यक है? एक प्रबल पक्ष है कि स्थिति के परिवर्तन के साथ कार्य नीति में परिवर्तन न होना चाहिए। बहुत से विचारशील लोग यह समझते हैं कि और सब संस्थायें अस्थिर और चंचल हैं। आर्यसमाज वैदिक धर्म का प्रचार करने वाला है। और वैदिक धर्म स्थिर है। स्थिर को अस्थिर के लिए बदलने की आवश्यकता नहीं। आर्यसमाज को एक चट्टान की भांति दृढ़ होना चाहिए जिस पर लहरें आवें तो टकरा कर वापिस चली जाय।

परन्तु हम समझते हैं कि जो लोग कुछ गहरी नजर से देखते हैं वह जान सकते हैं कि जो लोग स्थिति में परिवर्तन आने के कारण कार्य नीति में परिवर्तन चाहते हैं वह वैदिक धर्म को अस्थिर नहीं बनाना चाहते हैं और न आर्यसमाज के मूल सिद्धान्तों को ही परिवर्तनशील बनाना चाहते हैं। उनका अभिप्राय यह है। गत चालीस सालों में भारतवर्ष की स्थिति में बहुत परिवर्तन आया है, उस परिवर्तन के अनेक कारणों में से एक आर्यसमाज का कार्य भी है। आर्यसमाज के कार्य तथा अन्य अनेक कारणों से भारत का काया पलट होगया है। चालीस वर्ष पहले जिसे घोर नास्तिकता समझा जाता था आज उसे सामान्य तौर पर आस्तिकता कह कर वर्णन किया जाता है। आधी सदी पूर्व के साधु आज के गंवार और उस रोज के गवांर आज के साधु बने हुए हैं। जाति जिन बातों को सुनने में पाप मानती थी, आज घर घर में उनका जाप सुनाई देता है।

देश की स्थिति में भारी परिवर्तन होगया है। साथ ही साथ धर्मों की हालत भी बहुत कुछ बदल गई है। अब वह मतमतान्तर, जिनका खण्डन करके वैदिक धर्म की फिर से स्थापना का विचार महर्षि दयानन्द ने किया था, अपना रूप बदल रहे हैं। और तर्क और विवेक का चोला पहिन कर जनता के हृदय को जीतने का यत्न कर रहे हैं। भारत के और संसार के रोगों की दशा में परिवर्तन आगया है। क्या आवश्यक नहीं है कि रोग की दशा बदलने के साथ २ नुसखा बदल दिया जाय? मतमतान्तरों ने अपनी तर्क शैली और स्थिति बहुत कुछ बदल दी है क्या यह बुद्धिमत्ता नहीं है कि हम उसकी ओर ध्यान देते हुए कार्य प्रणाली को भी बदलें? दुश्मन ने दूसरा रास्ता पकड़ लिया है, क्या हमें कोई अक्लमन्द कहेगा यदि हम उस समय पुराने सीधे रास्ते पर भागे जाँय और दिल में समझें कि हम शत्रु को पकड़ पायेंगे।

इसका यह अभिप्राय नहीं है कि हम आर्य्यसमाज के सिद्धान्तों में परिवर्तन की स्कीम पेश कर रहे हैं। नहीं। हम तो केवल इस बात पर जोर दे रहे हैं कि सिद्धान्त एक बात है, कार्यनीति दूसरी बात है। यह सत्य है कि दो और दो चार होते हैं। इसे बदलने की जरूरत नहीं है, परन्तु दूसरे को यह सचाई बताने के कई उपाय होसकते हैं। दो पत्थर और दो पत्थर इकट्ठे रख कर सिद्ध किया जासकता है, केवल शब्द से याद कराया जासकता है या यह सिद्ध करने का यत्न होसकता है कि २+२ तीन या चार नहीं होते। बताने के उपाय अनेक हैं—पर सचाई एक है। वैदिक धर्म की सचाइयां स्थिर हैं—पर इस समय यह विचार करना है कि उनके प्रचार करने का जो उपाय अब तक हमने अवलम्बन किया है, उसे रखना ठीक है या उसमें कोई भेद लाना चाहिये। स्थिति बदल जाने पर भी जो मनुष्य कार्यनीति को बदलने का यत्न नहीं करता वह नाकामयाब होता है, क्यों कि कामयाबी बु का नाम है कि लोगों की दशा पर स्थिति से अधिक असर डाला जा जब वर्तमान दशा की ही परवाह न की, तब उस पर असर क्या डाला जायगा। कार्य एक बात है-कार्य नीति दूसरी बात है। दोनों को एक दूसरे से न मिला देना चाहिये। सिद्धान्तों को म जबूती से पकड़े रहो, पर उनके विस के सर्वोत्तम उपायों पर सदा विचार क रते रहो—यह बुद्धिमत्ता का बहुत आव श्यक पाठ है। जो सज्जन यह विचा पेश करते हैं कि आर्यसमाज अप कार्य नीति में कुछ परिवर्तन न क वह आर्य्यसमाज के सिद्धान्तों को आर्य समाज के संगठन और उसके क्रम उलझा देते हैं। लहर में बह जाना सि द्धान्तों की दृष्टि से बुरा है परन्तु ग र्मियों में केवल इस लिये रुई का को पहने रहना कि सर्दियों में पहिना थ और सर्दियों में केवल इस लिए जाल दार कुर्ती पहने फिरना कि वह गर्मि के लिए लाया था, कहीं की बुद्धिमा नहीं है।

साधुओं में स्वराज्य की लह

हरिद्वारपुरी आजकल धन्य होरही है कुम्भ के मेले पर हजारों नरनारी आ हुये हैं। उद्देश्य कुम्भ का स्नान परन्तु चर्चा एक ही है और वह भार के लिये स्वराज्य की है। नरनारी, ब्रह्मचारी गृहस्थ और वृद्ध युवा का हृ इस बात पर तुला हुआ प्रतीत होता कि भारत का स्वराज्य प्राप्त हो। हा की हर की पौड़ी पर जाकर देखिये, जग जगह पर स्वराज्य का झंडा, और स्व राज्य का प्रचार दृष्टि गोचर होगा। की पौड़ी पर स्वराज्य सम्बन्धी व्य ख्यान तो पहले से ही हो रहे थे, पर अप्रैल से एक नवीनता हुई है। हरिद्व में आए हुए देश भक्त साधुओं ने मिल एक साधु स्वराज्य सभा की स्थापना है और उसकी ओर से व्याख्यानादि प्रबन्ध किया गया है। उस सभा के स सभासदों ने प्रतिज्ञा की है कि अप जीवन भारत के लिए स्वराज्य प्राप्त रने के अर्पण करेंगे।